सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

३३

(जनवरी-जून १९२७)

God is Truth
The way to Truth
lies through ahimsa
(non-violence)
Sabarmati
13 3
Gandhi

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

३३

(जनवरी-जून १९२७)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

सितम्बर १९६९ (भाद्र १८९१)

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली-१ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

इस खण्डमें २१ जनवरीसे १५ जून, १९२७के बीच तककी सामग्री संगृहीत है। खण्डके प्रारम्भमें ही गांधीजी भारतमें १० वर्ष पहले प्रारम्भ किये गये अपने प्रथम सत्याग्रह संघर्षका उल्लेख करते है। मीराबहनको अपने पत्रमें उन्होने लिखा है: "सारा ही [चम्पारनका] दौरा स्फूर्तिदायक है। मेरे लिए चम्पारन पवित्र स्मृतियोंसे जुड़ा ही है। दरअसल चम्पारनने ही हिन्दुस्तानसे मेरा परिचय कराया।" (पृष्ठ ५) इन दिनो चम्पारन और दूसरी जगहोमें गाधीजी खादीसे सम्बन्धित दौरा कर रहे थे। इस दरम्यान वे कई बार भावुक हो उठे हैं। आश्रमकी बहनोंको उसी दिन पत्र लिखते हुए उन्होंने लिखा: "जान पड़ता है इस वर्ष मैं बहुत दिनोंतक आश्रममें नही रह सकूंगा। इसका मुझे दुःख है; किन्तु हमें तो दुःखमें ही सुख मानना है। खादीके कामके लिए मुझे भ्रमण करना ही पड़ेगा। लाखो लोगोंको खादीका मन्त्र इसी तरह घूम-घूमकर दिया जा सकता है।" (पृष्ठ ७) गांधीजीने खादीके विषयमें घूम-घूमकर लोगोको जो-कुछ बताया, उसका लोगोंपर बड़ा प्रभाव पडा। जनताकी स्वतन्त्र होनेकी इच्छा इन भाषणोंसे "शक्ति एवं स्फूर्तिमें बदल गई।" (पृष्ठ १९२)

गांधीजी लगातार बिहार, मध्य प्रदेश और बरार, महाराष्ट्र तथा उत्तर प्रदेशमें दौरा करते रहे। लगता है, उन्होंने जरूरतसे ज्यादा श्रम किया; फल यह हुआ कि २५ मार्चको उनका स्वास्थ्य एकाएक बहुत बिगड़ गया और उन्हें किसी पहाड़ी स्थानपर विश्राम करनेकी सलाह दी गई। (परिशिष्ट ३) इसे मानकर वे १९ अप्रैलसे ५ जूनतक मैसूरकी नन्दी पहाडीपर रहे। यह बीमारी बहुत ज्यादा शारीरिक श्रम और देशमें व्याप्त परिस्थितियोंके परिणामस्वरूप थी। गांधीजीने एक मित्रको लिखा: "मैंने अपने सहयोगियोको यह सोचनेकी गुंजाइश दी और स्वयं भी मेरा यही खयाल था कि मेरा शरीर लादे गये भारको किसी तरह सहन कर लेगा . . . क्योंकि महाराष्ट्रका दौरा समाप्त करनेके बाद मेरा विचार नया अध्याय आरम्भ करनेका था; और मैंने उपयुक्त सूचना राजगोपालाचारीको दे रखी थी कि मैं अब वैसी उतावली नही करूँगा . . .।" (पृष्ठ ४०२) ऐसा लगता था कि मनोवैज्ञानिक कारणोंपर नियन्त्रण रखना और भी कठिन है। डा० अन्सारीको लिखते हुए गांधीजीने स्पष्टीकरण दिया: "मेरी मुख्य कठिनाई है कि जबतक मैं पागलपनकी हालतमें न आ जाऊँ, तबतक अपने मनपर कैसे नियन्त्रण करूँ और उसे सोचनेसे कैसे रोकूँ। . . . परन्तु मैं नही समझता कि जो हिन्दू और मुसलमान इस तरहके काम कर रहे है, जिसके कारण मुझे बहुत जोर देकर सोचना पड़ता है, उसे कैसे रोक सकता हूँ। मैं यह भी नही जानता कि लाखों लोगोकी जो भुखमरी बढ रही है, और जिसका मेरे मनपर असर हो रहा है, उसे कैसे रोकूँ।" (पृष्ठ २९४-९५)। बहरहाल उन्हें बीमारीसे जो आध्यात्मिक शिक्षा मिली उसे उन्होंने उसी प्रकार विनम्रतापूर्वक स्वीकार कर लिया जैसे कि उन्होने एक बार पहले भी, अगस्त १९१८से जनवरी १९१९

तककी लम्बी बीमारीके दौरान किया था। (खण्ड १५) दक्षिण आफ्रिका संघर्षके दौरान एक जर्मन सहयोगी कैलेनवेकको लिखते हुए उन्होंने कहा: "मुझे आशा है कि मैं इस दण्डको उचित विनम्रतासे स्वीकार कर रहा हूँ और यदि वह मुझे बीमारीसे फिर उठने दे, तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अपने आचरणको सुधार लूँगा, उसकी इच्छा जाननेका और अधिक प्रयत्न करूँगा और उसके अनुकूल कार्य करूँगा।" (पृष्ठ ३४०)

जैसा कि डा० वेन्लेस (पृष्ठ २०९-१०) और जीवराज मेहता (पृष्ठ २२६-२७) से हुई बातचीतसे स्पष्ट है — गांधीजी काम करते रहनेके लिए अत्यन्त उत्सुक थे, परन्तु उन्होंने काफी हदतक तटस्थता अपना ली थी और सेवाके लिए भी जीवनके मोहसे चिपके रहना नहीं चाहते थे। इस वक्त लिखे गये एकके बाद दूसरे पत्रमें गांधीजीने अत्यन्त शान्त मानसिक अवस्थामें अपनी जीवन-समाप्तिकी सम्भावनाका जिक्र किया है। "मैं १३ अप्रैल, १९२८ से आगे किसी तरह भी चल सकनेकी आशा नहीं रखता। मुझे और कुछ नई बात कहने या लिखनेको नहीं है। हाँ, यह सम्भव है कि मैं कुछ और इकट्ठा कर लूँ, कुछ और अधिक सुझाव बता दूँ या एक पैबन्द वहाँ लगा दूँ और एक यहाँ लगा दूँ। परन्तु वास्तवमें मेरा समय आ गया है।" (पृष्ठ २११) उसी पत्रलेखकको लिखे गये दूसरे पत्रमें उन्होंने कहा: "और तब सारी असाधारण सतर्कताके बावजूद वह [प्रकृति] एक दिन अपना दूत भेज देगी; जो रातमें चोरकी तरह चुपकेसे सबकी नजर बचाकर ऐसी खुराक देगा जो मुझे चिर-निद्रामें सुला देगी। (पृष्ठ ४३२)

इस वक्त गांधीजीका मुख्य काम खादीका रहा; और उन्होने कांग्रेसके राजनीतिक कार्यक्रमको पूरी तरह मोतीलाल नेहरूके नेतृत्वमें चलनेवाली स्वराज्य पार्टीकी देख-रेखमें छोड़ दिया था। यद्यपि कांग्रेसने खादी कार्यक्रम सार्वजनिक रूपमें स्वीकार कर लिया था और खादीकार्यका संगठन करनेके लिए अखिल भारतीय चरखा संघ नामकी नई संस्था स्थापित हो गई थी तो भी बड़ी संख्यामें कांग्रेसियोंने इस कार्यक्रमके समर्थनमें उत्साह नहीं दिखाया। वे गौहाटी कांग्रेसमें स्वीकार की गई खादी सदस्यताके विरोधी बने रहे। ऐसा लगता है कि गांधीजीने इस परिस्थितिसे समझौता कर लिया था। कांग्रेस अध्यक्ष श्री एस० श्रीनिवास आयंगार द्वारा सदस्यताके मामलेपर झुक जानेके लिए दिये गये तर्कपर टिप्पणी करते हुए गांधीजीने कहा: "जहाँ बहुसंख्यक [समुदाय] अल्पसंख्यकों द्वारा गहराईसे महसूस की जानेवाली किसी रायकी अपनी संख्याके बलपर पूर्ण अवहेलना करता हुआ आगे बढ़ता है वहाँ हिंसाकी गंध आने लगती है। . . . इसलिए मुझे अध्यक्ष महोदयसे यह साफ-साफ कह देनेमें कोई झिझक नहीं हुई कि यदि अल्पसंख्यक सदस्य इस शर्तका पालन करनेको राजी न हों तो उन्हें उस शर्तको हटा देनेमें मदद करनी चाहिए।" (पृष्ठ ४८९) उन्होंने आगे कहा कि उन्हें [गांधीजीको] इस धाराके बारेमें अपनी राय बनाये रखने देनी चाहिए — यद्यपि इस रायका महत्त्व किसी भी दूसरे कांग्रेसी सदस्यकी रायसे ज्यादा नहीं होगा।

५ फरवरीको श्री सकलातवाला गांधीजीसे यवतमालमें मिले और दूसरे महीनेमें उन्होंने गांधीजीको एक खुली चिट्ठी लिखी। (परिशिष्ट १) इस पत्रमें उन्होंने कहा कि गाधीजीको मजदूर और किसानोंके संगठनमें कम्युनिस्टोंका हाथ बँटाना चाहिए और महात्मा होनेका स्वाँग छोड देना चाहिए। गांधीजीने उत्तरमें कहा कि श्री सकलातवालाके मनमें देशभक्ति और मानवताके प्रति प्रेम है; किन्तु जिसे श्री सकलातवाला मेरी गलती बताते हैं, वह स्वयं मेरी समझमें गलती नही है; मै तो उसे अपने मनको सान्त्वना देते रहनेवाली एक संरक्षक शक्ति ही समझता हूँ। उन्होंने कहा: "मै पूंजीपतियोको मजदूरोंका शत्रु नही मानता। मेरी समझमें तो उन दोनोंके बीच निश्चय ही पारस्परिक सहयोग सम्भव है।" (पृष्ठ १८०) 'बॉम्बे क्रॉनिकल'को भेंट देते हुए गांधीजीने इसी विचारको और भी स्पष्ट करते हुए कहा: "मैं चाहता हूँ कि पूंजी और श्रमके बीच सच्चा सहयोग हो।. . . राजनीतिक आन्दोलनकी तरह मै मजदूरोंके आन्दोलनमें भी आन्तरिक सुधारपर अर्थात् उनमें आत्मसन्तोषकी भावना भरनेपर विश्वास करता हूँ।. . . मजदूरोंको आत्मबलका विकास करना चाहिए। तब पूंजी सचमुच श्रमकी दासी बन जायेगी।" (पृष्ठ २०४) गांधीजीको जिस तरह सिद्धान्तके रूपमें संघर्ष उचित नहीं लगता था, उसी तरह उन्हें बड़े पैमानेपर की गई चीजें भी पसन्द नही आती थीं। अखिल भारतीय मजदूर सघसे अहमदाबादके मजदूरोंको अलग रखनेके रुखका समर्थन करते हुए गांधीजीने अपनी श्रम-नीतिको इस तरह स्पष्ट किया: "उद्देश्य मजदूरोंके लिए पूंजीका उचित भाग लिया जाना ही है।. . . श्रमिकोंको इस प्रकार शिक्षित किया जाये कि वे अपने नेतृत्वका विकास स्वयं करें।. . . इसका (आन्दोलनका) स्पष्ट उद्देश्य है, आन्तरिक सुधार एवं आन्तरिक शक्तिका विकास।. . . मजदूरोंको राजनीतिज्ञोंके दांव-पेचके मुहरे कभी नहीं बनना चाहिए।" (पृष्ठ ३२५) गांधीजी जब श्रमिकों द्वारा पूंजीमें से "उचित भाग" लेनेकी बात करते थे, तब निश्चय ही वे "धनिकों और मजदूरोंके रहन-सहनमें हम जो अन्यायपूर्ण अन्तर देखते हैं" (पृष्ठ २९२) उसका विरोध कर रहे होते थे। गरीबकी झोंपड़ी और धनवानके महलका 'भयंकर अन्तर' भी उन्हें सह्य नही था। सकलातवालाके साथ गांधीजीकी इस विषयपर जो चर्चा हुई, उसमें उन्होने अपने मानवतावादी सूत्रको इस प्रकार प्रस्तुत किया: "हम सबकी धारणाएँ बिलकुल एक नहीं हो सकती। फिर भी अपने साथियोंके कामो और मतोंके प्रति हम वही आदरभाव रख सकते हैं, जिस प्रकारके आदरभावकी आशा हम अपने कामों और मतोंके प्रति दूसरोंसे रखते है।" (पृष्ठ ३२६)

गोरक्षासे सम्बन्धित अपने लेखोंमें गांधीजीने उसकी सफलताके आधारोंको बड़ी स्पष्टतासे रखा और उसमें यथार्थ परिस्थितियोको कदापि आँखोंसे ओझल नही होने दिया। "गाय और भैंस दोनोंको एक-साथ बचा सकना असम्भव है।" (पृष्ठ २१४) उन्होने कहा: "गोशालाओंको शास्त्रीय ढंगसे चलाया जाना चाहिए और साथ ही आदर्श दुग्धालय और आदर्श चर्मालय भी खोले और चलाये जाने चाहिए। उनके संचालनका आधार होना चाहिए: न लाभ न हानि। "जो धर्म आर्थिक दृष्टिसे

मेल नहीं खाता, वह धर्म नहीं है।" (पृष्ठ ४२१) इसी सन्दर्भमें गांधीजीने प्रत्येक युगमें समाजके विचारों और जीवनमें परिवर्तनकी आवश्यकतापर जोर दिया और हमारी भयंकर मानसिक जड़ता तथा सामाजिक गतिरोध और सिद्धान्तोंको आँख मूँदकर अपना लेनेकी प्रवृत्तिकी आलोचना की। स्वदेशी विचार तकको बिना सोचे-समझे पकड़कर बैठ जाना उन्हें पसन्द नहीं था। "... अगर हम कपड़ा सीनेकी सुई गाँवमें न बना सकते हों और आस्ट्रियाकी बनी सुई सस्ती मिलती हो, तो उसके प्रति हमारे मनमें कोई विरोध-भाव नहीं होना चाहिए। मैं अच्छी ... और अपनाई जा सकनेवाली चीज लेनेमें कोई दोष नहीं देखता। ... भले ही वह चीज बाहरकी ही क्यों न हो।" (पृष्ठ ३८०)

गांधीजी किसी भी प्रकारकी कट्टरताके खिलाफ थे, यह बात सतीशचन्द्र दासगुप्तको लिखे गये एक पत्रसे भी स्पष्ट होती है; जिसमें उन्होंने सतीशबाबूके बिगड़ते हुए स्वास्थ्यको देखते हुए उन्हें पुनः मांसाहार प्रारम्भ कर देनेकी सलाह दी थी। (पृष्ठ ३६१-६२) व्यक्तिको आदर्श और उपलब्धिके बीच थोड़ी-बहुत गुंजाइश तो छोड़नी ही पड़ती है। बकरीका दूध भी तो आखिरकार पशुसे प्राप्त होनेवाला खाद्य पदार्थ है। इसे लेना वे एक कमजोरी मानते थे; (पृष्ठ २८०) किन्तु वे यह भी कहते थे कि आदर्शसे इस प्रकार हटनेकी बात अपवादस्वरूप ही होनी चाहिए, नियमस्वरूप नहीं। मीराबहनके नाम पत्रमें उन्होंने इसे स्पष्ट किया है। "व्रतोंके बारेमें नियम यह है कि जब शंका हो, तब अपने विपक्षमें पड़नेवाला अर्थ लगाओ अर्थात् अपने ऊपर और अधिक प्रतिबन्ध रखो।" (पृष्ठ २९८)

यदि कोई अपने मान्य-धर्मके अनुसार आचरण करना चाहता है, तो केवल उस विषयमें बातचीत करना या उसका उपदेश करना पर्याप्त नहीं है। उसके लिए आवश्यक है कि हम निरन्तर आत्मनिरीक्षण करते रहें, अपनी असफलताओंको देखते, समझते और प्रगट करते रहें — इसके बिना निश्चित आदर्शोंको प्राप्त करना सम्भव नहीं है। प्राणपणसे प्रयत्न करना ही उनतक पहुँचनेका मार्ग है। आदमी एक विकास-शील प्राणी है। वह अपनी सत्ताको तभी चरितार्थ कर सकता है जब वह अपनी हृदयगत शक्तियोंका नित्य प्रस्फुटन करता चला जाये। "मनुष्यको सच्चा मनुष्य बननेके लिए अपना संस्कार करना चाहिए। हिन्दू इस संस्कारको द्विज बनना कहते हैं और ईसाई इसीको दुबारा पैदा होना कहते हैं।" (पृष्ठ २६७) डा० मुंजेने हिन्दू-धर्मके विषयमें शास्त्रोंका शाब्दिक अर्थ लेकर जो रूप समझा था, उसे उन्होंने 'विकृत' कहा। गांधीजी कहते हैं: "मैं बड़ी नम्रतासे यह दावा करता हूँ कि मैंने सदा हिन्दू धर्मका पालन किया है।" (पृष्ठ ३४८)

धर्म किन्हीं बाहरी जमी-जमाई मान्यताओं अथवा निश्चित विधि-निषेधोंसे प्राप्त होनेवाली वस्तु नहीं है; वह तो हमारे अन्तरका एक *अनुक्षण* होनेवाला विकास है। "वेद कागजपर लिखे हुए अक्षरोंका नाम नहीं है।" (पृष्ठ ९९-१००) जब हम अपने ज्ञानके अनुसार आचरण करते हैं, तभी हममें ज्ञानके अंकुर फूटते हैं। "बगैर अमलके अध्ययन निरर्थक हो जाता है और वह मनुष्यमें घमंड पैदा करता है। इसलिए

जो-कुछ भी पढा जाये, उसपर जल्दीसे-जल्दी अमल शुरू कर देना चाहिए।" (पृष्ठ ४५८) यदि हम वेद अथवा अन्य शास्त्रोंका पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहते हैं, तो "आधुनिक अनुभवके साथ मिलाकर खूब सात्त्विक निरीक्षण करके, शुद्ध दोहन करना आवश्यक है।" (पृष्ठ ४६०)

यदि कोई व्यक्ति अपने अनुभवके आधारपर शास्त्रोकी पुनर्व्याख्या करता है तो कई बार ऐसा भी होता है कि समकालीन सत्यान्वेषकोमें अप्रत्याशित रूपसे उन्ही निर्णयोंपर पहुँचनेवाले लोग मिल जाते हैं। उदाहरणके लिए 'सेंट मैथ्यु', अध्याय ५-२२के अधिकृत संस्करणमें "अकारण" (विदाउट ए काज) शब्दोको गांधीजीने सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तसे बेमेल पाया और इसीलिए उन्हें स्वीकार नही किया। बादमें उन्होंने देखा कि परवर्ती अनुवादकोंने उन शब्दोंको छोड़ दिया है। (पृष्ठ ३८४) "मनुष्यको अपने पूर्वजों द्वारा अपनाये गये धर्ममें आत्ममुक्तिका उपाय स्वयं खोजना चाहिए, क्योकि सत्यकी खोज करनेवाला इस निष्कर्षपर पहुँचता है कि सारे धर्म घुल-मिलकर ईश्वरमें समा जाते हैं, उस ईश्वरमें जो एक है और अपने बनाये सभी जीवधारियोंके लिए समान है।" (पृष्ठ ३८१) यदि कोई व्यक्ति इस बातको ध्यानमें रखकर प्राचीन धर्मोंकी नवीन व्याख्या करनेकी स्वतन्त्रता ले तो उसमें लगभग कोई खतरा नही बचता और न किसी प्रकारकी हानि ही होती है।

गांधीजी पुराणोंकी सारगर्भित और काव्यपूर्ण प्रेरणासे भली-भाँति अवगत थे। वे यह भी जानते थे कि उनके आधारपर धर्मके प्रति प्रेम जगाया जा सकता है। (पृष्ठ २५७) उन्होंने कहा कि स्त्रियोकी स्वतन्त्रता, शुद्धि और मुक्तिके लिए सीता और द्रौपदीके उदाहरण हमारे आजकी परदा आदि प्रथाओंके विरोधमें प्रमाण हैं। इनसे स्त्रियोकी उन्नति हो सकती है और परदा आदि प्रथाएँ तो नष्ट कर देनेके योग्य ही हैं। (पृष्ठ ५०) प्राचीन महाकाव्य हमारे सामने जिस धर्मको प्रस्तुत करते हैं, वह समाजको नीतिवान बनाये रख सकता है; उसे भली-भाँति समझा जाना चाहिए और तदनुसार आचरण किया जाना चाहिए। हमारी परम्परा एक जीवन्त परम्परा है और इसमें प्रत्येक व्यक्तिको आत्मनिरीक्षणके द्वारा विकास करते रहना चाहिए। कर्म-सिद्धान्तका वास्तविक अर्थ सारे दुष्कर्मोंको निकाल फेंकना है। "जो अपने सब दुष्कर्मोंका हिसाब नही रखता, वह मानव-जातिमें गिने जाने योग्य नही है।" (पृष्ठ ४२६)

शास्त्रीय अथवा वैज्ञानिक विचारकी तरह नैतिक विचार भी एक पुंजीभूत सम्पत्ति है। इसमें सिद्धान्त और आचरण दोनों शामिल है और इसका विकास अमलके बाद आये हुए परिणामोंको एक-दूसरेसे मिलाकर फैलाते रहनेपर ही होता है। "मैं एक नम्र किन्तु दृढ़ सत्यान्वेषी हूँ और अपने सत्यान्वेषणके दौरान सभी सत्यान्वेषियोंके सामने अपनी सारी बातें साफ तौरपर रखता रहता हूँ ताकि अपनी गलतियाँ समझ सकूँ और उन्हें सुधार लूँ।" (पृष्ठ २६५) यह समझना आसान नही है और कदाचित् यह निर्णय लेना भी आवश्यक नहीं है कि हमारे समकालीन सत्यान्वेषियोमें से हम किसे अपने प्रयोगोसे अवगत करें और उनके विषयमें किससे सलाह लें। "हम

अपना हृदय तो वहीं उँडेल सकते हैं जहाँ ऐसा करना हमारे लिए सम्भव है किन्तु (उँडेल देनेके बाद) पानी चाहे जहाँ बह सकता है।" (पृष्ठ ६)

इस खण्डमें शामिल किये गये पत्रोंमें, मणिलाल और उनकी पत्नी सुशीला, आश्रमकी बहनों और मीराबहनको लिखे गये पत्र खास दिलचस्प हैं। उनमें गांधीजी ऐसे शिक्षकके रूपमें सामने आते हैं जिसके लिए, व्यक्तिके लिए भी "वैसे ही संरक्षण और देखरेखकी जरूरत है जैसी कि स्वराज्यके पूरे मसलेके लिए . . . "। (पृष्ठ ४८१) वह आदर्शपर जमे रहनेके लिए दृढ़ प्रतीत होते थे परन्तु मानव व्यक्तित्वके प्रति सदा आदर-भाव रखते थे। उन्होंने अत्यन्त स्पष्टता और बिना रत्तीभर संकोचके मणिलाल और सुशीला गांधीको विवाहित अवस्थामें आत्मसंयमकी आवश्यकता समझाई (पृष्ठ ६०-६१, १४२-४३) आश्रमकी बहनोंको, जिनमें से बहुत-सी महिलाओंने औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, लिखे गये अपने पत्रोंमें गांधीजीने राष्ट्रीय पुनरुत्थानमें महिलाओंका महत्त्व समझाया और उन्हें दिलचस्प लगनेवाले समाचार सुनाये; आश्रमके मामलोंकी चर्चा की और उनसे अनुरोध किया कि वे अपनी हृदयकी दुर्बलताको छोड़ दें और अपने-आपको देशकी सेवाके लिए तैयार रखें। जब इनमें से बहुत-सी महिलाएँ १९३०-३२ के सत्याग्रह आन्दोलनमें जेल गईं और उन्होंने पुलिसके अत्याचारोंका भी सामना किया तब धैर्यपूर्वक किये गये इस प्रयत्नका फल पर्याप्त रूपमें सामने आया।

परन्तु गांधीजीके इस स्वभावका सबसे अच्छा रूप मीराबहनको लिखे गये पत्रोंमें ही दिखाई देता है कि वे अपने प्रति स्नेहके बन्धनमें बँधे लोगोंसे किस तरह समयके अनुरूप कठोर या कोमल व्यवहार करते थे। मीराबहन १९२५ के अन्तमें आश्रममें आईं थीं। मीराबहनने गांधीजीसे मुलाकात होनेसे पहले ही अपना जीवन उन्हें समर्पित कर दिया था। (परिशिष्ट ५) उन्हें निजी तौर पर गांधीजीसे बहुत ज्यादा लगाव था और उनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके लिए वह सदा उनके पास रहना चाहती थीं। परन्तु गांधीजी चाहते थे कि मीराबहनकी उनके प्रति श्रद्धा उनके कामके प्रति श्रद्धामें बदल जाये। "तुम मेरे कामको अपना ही समझकर करनेसे रोज मेरे सम्पर्कमें आती हो . . .। तुम मेरे पास मेरी खातिर नहीं, बल्कि मेरे उन आदर्शोंकी खातिर, जिस हदतक मैं उनका पालन करता हूँ, आई हो। . . . काम करते हुए भगवान हमें निकट ला दे तो अच्छा ही है, लेकिन समान उद्देश्यकी पूर्तिमें वह हमें अलग-अलग रखे तो भी ठीक है।" (पृष्ठ ३२०) वह चाहते थे कि मीराबहन सब प्रकारसे एक कुशल महिला बने परन्तु उन्होंने उनसे कहा "तुम्हें अपने ही ढंगसे विकास करना चाहिए। . . . चाहे कुछ भी हो तुम्हें अपना व्यक्तित्व अवश्य कायम रखना चाहिए। जहाँ आवश्यक हो, मेरी बात तुम्हें नहीं माननी चाहिए।" (पृष्ठ १९४-९५) गांधीजीके अचानक बीमार पड़ जानेकी खबरसे मीराबहन घबरा गईं और यह स्वाभाविक ही था कि वह उनके पास रहनेके लिए उत्सुक होतीं। गांधीजीने उनकी मनःस्थितिके परिवर्तनोंको तत्काल समझ लिया और मानवताके नाते उन्हें सान्त्वना देनेकी भरसक कोशिश की परन्तु उन्हें स्वेच्छासे काम करनेके लिए स्वतन्त्र रखा।

'वर्ल्डस यूथ' के सम्पादकके सन्देश माँगनेपर उन्होंने लिखा : "सत्य और प्रेम संयुक्त रूपसे मेरे जीवनके पथ-प्रदर्शक सिद्धान्त रहे हैं। जिस परमेश्वरकी व्याख्या नहीं की जा सकती, यदि कदाचित् उसका कुछ भी निरूपण किया जा सकता हो, तो मैं यही कहूँगा कि ईश्वर सत्य है। सिवाय प्रेमके उसतक पहुँच पाना असम्भव है। प्रेम पूर्णरूपेण अभिव्यक्त तभी हो सकता है, जब मनुष्य अपनी खुदीको शून्य कर डाले, शून्यवत् होनेकी यह प्रक्रिया ही किसी स्त्री या पुरुष द्वारा किया जा सकनेवाला सर्वोत्तम प्रयत्न है। यही एकमात्र एक ऐसा प्रयत्न है जो करणीय है और यह केवल उत्तरोत्तर वर्द्धमान आत्मसंयम द्वारा ही सम्भव हो सकता है।" (पृष्ठ ४८३)

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐंड मेमोरियल ट्रस्ट) और संग्रहालय; नवजीवन ट्रस्ट; गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि व संग्रहालय, नई दिल्ली; नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया, नई दिल्ली; म्युनिसिपल म्यूजियम, इलाहाबाद; श्री लालचन्द वोरा, बगसरा; श्रीमती मीराबहन, गाडेन, ऑस्ट्रिया; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासन; श्रीमती राधाबहन चौधरी, कलकत्ता; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्रीमती हरिइच्छाबहन कामदार, बड़ौदा; श्रीमती सुशीलाबहन गांधी, फीनिक्स, डर्बन; श्रीमती शारदाबहन शाह, सुरेन्द्रनगर; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्रीमती लक्ष्मीबहन खरे, अहमदाबाद; श्री पुरुषोत्तम डी० सरैया, बम्बई; श्री चन्द त्यागी, जसपुर, जिला नैनीताल; श्री के० पी० एस० मलानी, वाराणसी; श्री नारायण देसाई, बारडोली; श्री वालजीभाई देसाई, पूना; श्री जमनादास गांधी; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्रीमती कार्लाइल बमलेट, बैक्सहिल, ससेक्स; श्री रमणीकलाल मोदी, अहमदाबाद; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्री गुलजारीलाल नन्दा, नई दिल्ली; 'द इम्मॉर्टल महात्मा', 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो — ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो — २ : सरदार वल्लभभाई पटेलने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'माई डियर चाइल्ड', 'लाला लाजपतराय — एक जीवनी', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा निम्नलिखित पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं : 'अमृतबाजार पत्रिका', 'आज', 'नवजीवन', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'मॉडर्न रिव्यू', 'यंग इंडिया', 'लीडर', 'सर्चलाइट', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान व सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐंड रेफरेंस डिविजन), नई दिल्ली; और श्री प्यारेलाल नैयर हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देनेके लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधार दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोंकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजीके कहे हुए नहीं है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषणों और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अशोंमें जो गाधीजीके नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है, वहाँ दायें कोनेमे ऊपर दे दी गई हैं; परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संग्रहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालका तारीखवार जीवन-वृत्तान्त दिया गया है।

विषय-सूची

१. पत्र : लालचन्द जयचन्द वोराको

[२१ जनवरी, १९२७][1]

भाईश्री लालचन्द,

आपका पत्र मिला। जमा और खर्च बराबर रखनेकी बात जैसे गोरक्षाके कार्यमें आवश्यक है वैसे ही खादीकी प्रवृत्तिमें भी है। आरम्भमें तो हम भारी लाभकी आशा करते हैं; फिर भी थोड़ा-बहुत नुकसान हो ही जाता है। यह नुकसान हमेशा पूंजी खाते नामे लिखा जाता है। गोरक्षाके कार्यमें भी फिलहाल नुकसान तो होगा ही। लेकिन नींव मजबूत हो जानेपर उसमें नुकसान नहीं होना चाहिए और किसी धार्मिक प्रवृत्तिकी नींव पक्की हो गई या नहीं, इसकी जाँच करनी हो तो पिछले दस वर्षोंमें उसकी कितनी प्रगति हुई है यह देखना चाहिए। यदि उसमें नुकसान उत्तरोत्तर बढ़ता जाये तो इसका अर्थ यह है कि उसकी नींव अभी पक्की नहीं हुई है और उसमें सुधारकी आवश्यकता है। इस दृष्टिसे देखें तो खादी प्रवृत्ति अभी केवल छः वर्षकी है; फिर भी मैं देखता हूँ कि नुकसान वर्ष प्रतिवर्ष कम होता जाता है और कुछ स्थानोंपर उसका जमा और खर्च भी बराबरीपर आ गया है। काठियावाड़से भी यही आशा करता हूँ। इस मुद्देपर विचार करके आपको जो दोष दिखाई दें आप उनके बारेमें मुझे अवश्य लिखें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्रीयुत लालचन्द जयचन्द वोरा
वगसरा, भायाणी
काठियावाड़, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७५३) की नकलसे।
सौजन्य : लालचन्द वोरा

१. डाककी मुहरसे।

२. भाषण : मोतीहारीमें[1]

२२ जनवरी, १९२७

सभापति महोदय, सदस्यगण और भाइयो,

मोतीहारीमें आनेपर मुझे पुरानी बातें[2] स्मरण हो आती हैं। वे स्मरण पावन हैं। यह प्रदेश मेरे लिए ऐसा ही है जैसा साबरमती। यहाँ मुझे केवल एक घंटे ठहरना है। यह समय काफी नहीं है। किन्तु यह सब ईश्वरके हाथमें है — १ घंटे तक रहूँ या अधिक। मुझे ३ बजे या ३। बजेकी ट्रेनसे जाना है। इसलिए मैं कोई लम्बा उत्तर नहीं दे सकता। आप लोगोंने मुझे मानपत्र[3] दिया है उसके लिए मैं आभारी हूँ। आपका मानपत्र स्मरण योग्य है ऐसा मैं समझता हूँ। आपने अपने मानपत्रमें अपनी कार्रवाईका जो विवरण दिया है, उसके लिए मैं धन्यवाद देता हूँ। आपने जिस भाषामें यह मानपत्र दिया है उसके लिए मैं आपका एहसान मानता हूँ।

आज, २-२-१९२७

३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

रेलमें

रविवार, २३ जनवरी, १९२७

भाईश्री वल्लभभाई,

भाई अमृतलाल ठक्कर शायद काठियावाड़ राजनीतिक परिषदके अध्यक्ष बननेसे इनकार कर दें। वहाँ उन्हें राजनीतिके बारेमें कुछ भी नहीं कहना पड़ेगा; फिर भी राजनीतिक परिषद नाम ही उन्हें अटपटा लगता है। मेरे खयालसे देशी राज्योंकी परिषदोंमें राजनीतिको अभी कोई स्थान नहीं है। वहाँ अभी लोगोंने मिलकर काम करना ही नहीं सीखा है। इसलिए मुझे तो वहांका मध्यबिन्दु चरखा ही लगता है। अगर अमृतलाल इनकार करें, तो आप अध्यक्ष बन जायेंगे न? मैंने मान लिया है कि आपके विचार मेरे विचारोंसे मिलते हैं। परन्तु यदि इस सम्बन्धमें आपके विचार मेरे विचारोंसे भिन्न हों, तो आप जरूर इनकार कर सकते हैं। कामका बोझ सिर पर आ पड़नेके डरसे इनकार न करें। इसे तो हम उठा लेंगे। जवाब तार द्वारा दीजिये। यह पत्र आपको गुरुवारको मिलेगा। जवाब जमुई (बिहार) भेजें। वहाँ हम

१. गांधीजीने यह भाषण जिला बोर्ड कार्यालयके सामने हुई एक सभामें दिया था।

२. १९१७का चम्पारन आन्दोलन, देखिए खण्ड १३।

३. मानपत्र हिन्दीमें खद्दरपर छपा था और चाँदीकी अशोक-स्तम्भनुमा पेटीमें रख कर दिया गया था।

लोग दिनमें कुछ समय ठहरेंगे। वैसे उस दिन तीन गाँव निपटाने हैं। शुक्रवारके दिन आरामें रहूँगा। रविवारको पटना पहुँचूंगा। सोमवारकी रातको पटनासे चल दूंगा और मंगलवारको कलकत्ता होकर गोंदिया जाऊँगा। बुधवारको गोंदिया।

मणिलाल कहते थे कि मणिबहनका विचार मन ही मन विवाह करनेका हो रहा है। मैंने खूब जाँच कर ली है, अभी तो यही निश्चय है कि वह विवाह नही करेगी। हम उसे प्रोत्साहन दें। आप उसकी चिन्ता छोड़ ही दीजिये। उसकी चिन्ता मैं कर ही रहा हूँ और आगे भी करूँगा। उसे कराची भेजनेकी बात सोच रहा हूँ। वहाँ जानेको वह राजी भी है। वहांकी आबहवा उसे अनुकूल आयेगी और वह अच्छा काम कर सकेगी।

अन्य बातें तो महादेव या देवदास लिखेंगे तो मालूम हो जायेंगी। मेरी तबीयत ठीक रहती है।

बापू

श्रीयुत वल्लभभाई पटेल
कचरापट्टीके प्रमुख महोदय[1]
खमासा गेट, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने

४. भाषण: बेतियामें[2]

२३ जनवरी, १९२७

महात्माजीने सभी अभिनन्दनपत्रोंका उत्तर संयुक्तरूपसे दिया। उन्होंने कहा कि काफी लम्बे समयके बाद बेतियाके लोगोंसे मिलकर मुझे खुशी हुई है। चम्पारन और उसमें भी मोतीहारी और बेतिया मेरे लिए पवित्र स्थान हैं। चम्पारनके अपने अनुभवोंसे मैं आधुनिक भारतकी गरीबीसे कुछ हदतक परिचित हुआ; वहाँ मैंने खुद अपनी आँखोंसे देखा कि आम तौरपर गाँवोंके लोग कितनी दयनीय दशामें रहते हैं। मुझे खुशी है कि नगरपालिकाने इतना काम किया है और मैं आशा करता हूँ कि आप लोगोंके सामने पानीकी जो समस्या है वह भी शीघ्र ही लोगोंके दृढ़ निश्चय और लगनसे हल हो जायेगी। अगर शहरी लोगोंको शुद्ध जल, शुद्ध दूध और शुद्ध वायु मुहैया नहीं की जा सकती तो नगरपालिकाके अस्तित्वका कोई औचित्य ही नहीं है। नगरपालिकाका उद्देश्य ही नागरिक जीवनको शुद्ध बनाना है और मैं आशा करता हूँ कि आप उस उद्देश्यको प्राप्त करनेमें सफल होंगे।

१. गांधीजीका आशय नगरपालिकाके अध्यक्षसे है।

२. यह भाषण बेतिया नगरपालिका, हिन्दूसभा, गोशाला तथा स्थानीय अन्त्यजों द्वारा हिन्दीमें दिये गये अभिनन्दनपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

प्राथमिक शिक्षाकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि भारतमें, विशेष करके चम्पारनमें प्राथमिक शिक्षाके निर्धारित विषयोंमें कताई जरूर रहनी चाहिए। उन्होंने कहा कि अक्षरज्ञान बेशक जरूरी है, बिलकुल जरूरी है, लेकिन यह ज्ञान किसी पेशेके प्रशिक्षणके बिना भारतके गरीब लोगोंके लिए बिलकुल बेकार होगा। प्रारम्भिक अवस्थामें जबतक विद्यार्थियोंको किसी तरहका व्यवसाय सम्बन्धी प्रशिक्षण नहीं दिया जाता, तबतक वे अपने बादके जीवनमें आत्मनिर्भरताका पाठ नहीं सीखेंगे। मैं आशा करता हूँ कि बेतिया नगरपालिकाके सदस्य कताईकी तरफ जितना जरूरी है, उतना ध्यान देंगे।

गोशालाकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि यदि आपको सचमुच ही गायोंसे कुछ प्यार है तो आपको वही रास्ता अपनाना चाहिए, जो मैंने सुझाया है। हर गोशालामें काफी संख्यामें अच्छी गायें होनी चाहिए और उनको इस तरह रखना चाहिए कि वे अच्छा दूध दें। यह शुद्ध दूध शहरी लोगोंको दिया जाना चाहिए। अगर इन गोशालाओंका ठीकसे संचालन किया जाये तो वहाँका दूध बाजारमें कहीं और मिलनेवाले दूधसे जरूर सस्ता रहेगा। ऐसे दुग्धालयोंके साथ-साथ चमड़ा कमानेके कारखाने भी चलाए जाने चाहिए और इस तरह होनेवाली आमदनीको गायोंके पालन-पोषणपर खर्च किया जाना चाहिए। भारतमें गायोंकी शोचनीय दशाके लिए मुख्य रूपसे खुद हिन्दू ही जिम्मेदार हैं। मैं आशा करता हूँ कि गोशालाएँ सही और वैज्ञानिक ढंगसे चलाई जायेंगी। तभी ऐसी संस्थाओंके सच्चे उद्देश्यकी पूर्ति हो सकेगी।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि गोरक्षा, स्त्रियोंकी रक्षा और अछूतोद्धार ये सब नगरपालिकाके कर्त्तव्योंमें शामिल हैं। जबतक एक भी स्त्रीको रोजमर्रा अपने पेटकी रोटीके लिए गलत रास्ता अपनाना पड़ता है, तबतक पुरुषोंको जीनेका कोई हक नहीं है; जबतक एक भी गाय आजकी तरह शोचनीय दशामें रहती है, तबतक आपको जीनेका कोई हक नहीं है; और यदि अस्पृश्यताकी दूषित प्रथा चलती रही, तो निकट भविष्यमें भारतसे हिन्दुओंका नामोनिशान मिट जायेगा।

हिन्दूसभाको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि यदि सचमुच वह म्रियमाण हिन्दू जातिको बचाना चाहती है, तो उसे अब भी चरखेकी ओर उन्मुख हो जाना चाहिए। उस लक्ष्यकी प्राप्तिके चाहे जो भी अन्य उपाय सुझाये जायें, चरखा उन सबका केन्द्र-बिन्दु अवश्य बना रहना चाहिए।

भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने श्रोताओंसे भारतके गरीब लोगों और ईश्वरके नामपर हृदयद्रावक अपील की कि वे महान [खद्दर] कार्यको चलानेके लिए उन्हें धनकी सहायता दें और अन्य सभी तरहके कपड़ोंके मुकाबलेमें खद्दरको तरजीह देकर उसे इस्तेमाल करें। उन्होंने जनतासे खादी, जो हमेशाकी भाँति सभामें रखी गई थी, खरीदनेको कहा।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ३०-१-१९२७

५. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

बेतिया
२४ जनवरी, १९२७

चि० मीरा,[1]

कांगड़ीसे तुम्हारी [भेजी] दिलचस्प पुस्तिका मिल गई। मैंने उसे पूरी रफ्तारसे भागती हुई मोटरमें पढ़ डाला। आराम बिलकुल नहीं मिल रहा है। लेकिन तुम्हारा यह खयाल ठीक है कि सारा ही दौरा स्फूर्तिदायक है। मेरे लिए चम्पारन पवित्र स्मृतियोंसे जुड़ा हुआ है। दरअसल चम्पारनने ही हिन्दुस्तानसे मेरा परिचय कराया। मुझे इन हजारों लोगोंके बालकों जैसे भोलेभाले चेहरोंको किसी अवर्णनीय आशासे चमकते हुए देखकर अपार हर्ष होता है। वे रुपया और पैसा एकदम दे देते हैं, परन्तु वे अपने आलस्यको, जो उनके स्वभावका भाग बन गया है आसानीसे नहीं छोड़ते। मगर ऐसा मालूम होता है कि अब तो वह भी छूटता जा रहा है।

तुलसी मेहर[2] मेरे साथ हैं। तुम्हें मालूम ही होगा कि इस समय हम नेपालके बहुत नजदीक हैं। जिन जगहोंसे मैं गुजरता हूँ, उन्हें अपने नक्शोंमें तुम्हें जरूर देख लेना चाहिए। तुलसी मेहर पहाड़पर जानेसे पहले तुमसे मिलनेके लिए बहुत उत्सुक हैं। लेकिन उनका खयाल है कि तुम दूर बहुत हो।

राजभवनमें इक्केपर जाना तुम्हारे लिए बिलकुल उपयुक्त ही था। तुमने मित्रोंके[3] प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा किया है।

तुम वहाँके नौजवानोंके साथ आसपासके जंगलोंमें तो घूमोगी ही। उन्होंने तुम्हें जरूर बता दिया होगा कि [गुरुकुलके लिए] वह स्थान श्रद्धानन्दजीने पसन्द किया था। गुरुकुलकी सारी कल्पना उन्हींकी थी।

आज हम बेतियामें हैं। यह वही जगह है जहाँ मैं लोगोंकी सेवा करते हुए अन्य स्थानोंकी अपेक्षा सबसे ज्यादा ठहरा था।

शायद तुम्हें मालूम होगा कि मैं तुम्हारे अधिकांश पत्र, आश्रमवासियोंको पढ़कर सुना देनेके लिए वहाँ भेज देता हूँ। वे बहुत ही सुन्दर होते हैं। जिन पत्रोंमें तुमने कन्या गुरुकुलके रवैयेकी आलोचना की है, वे मैंने नहीं भेजे हैं। वे मैंने फाड़ डाले हैं। गुरुकुलके संचालनके सम्बन्धमें तुम्हारा अन्तिम सुविचारित मत मैंने वहाँ भेज दिया है। मेरा मतलब उस पत्रसे है जिसका उद्धरण मैंने रामदेवजीको भेजा था। अगर

१. मीराके इस पत्र और अन्य अंग्रेजी पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरीमें है।

२. नेपालके तुलसी मेहर जो साबरमतीमें मीराबहनके सबसे पहले पिंजाई-शिक्षक थे।

३. मीराके बापूज लैटर्स टू मीरामें लिखा है "मैं दो मुसलमान मित्रोंके सम्बन्धमें गृह-सदस्यसे मिलने गई थी। इन लोगोंसे मेरा परिचय बर्लिनमें हुआ था; ये उस समय निर्वासित थे।"

तुम चाहो कि आगे ऐसा न किया जाये तो मुझे लिख देना। मैं यह नही चाहता कि तुम यह सोचकर कि तुम्हारे पत्रोंको कोई दूसरा देख सकता है, लिखनेमें बाधा मानो। हमारा रुख ऐसा होना चाहिए कि हम अपना हृदय तो वही उँडेल सकते है, जहाँ हमारे लिए ऐसा करना सम्भव है; परन्तु पानी चाहे जहाँ वह सकता है। मगर सभी लोग इस रुखको आसानीसे अंगीकार या पसन्द भी नही कर सकते। इस वारेमें तुम्हारा क्या खयाल है सो जरूर लिखना।

क्या तुम पहलेसे ज्यादा मजबूत हो रही हो?

तुम्हें चिंता न हो, इसलिए बता रहा हूँ कि मै तुम्हें कमसे-कम हर सोमवारको तो पत्र लिखा ही करूँगा। डाक तुम्हारे पास कब पहुँचेगी, यह इसपर निर्भर है कि मैं कहाँ हूँ। खानदेश जानेके लिए जल्दीसे-जल्दी पहुँचनेका रास्ता कलकत्ता होकर है। इसलिए मैं पहली तारीखको खादी प्रतिष्ठान १७०, बहू बाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें होऊँगा। हम गोंदिया, (बंगाल नागपुर रेलवे) दो तारीखको पहुँचेंगे। उसके बादके कार्यक्रमका मुझे पता नहीं है; लेकिन मैं ३ को नागपुर और वर्धामें होऊँगा। तुम मुझे वहाँ पत्र लिख सकती हो। उसके बाद तो जबतक मैं कार्यक्रमकी तारीखें न भेजूँ तबतक मेरा पता वर्धाका ही होगा। अतः वहींके पतेपर पत्र भेजना।

'आत्मकथा' के अध्याय[1] जैसे-जैसे तुम्हारे पास पहुँचते हैं, तुम उनमें सुधार करती जाती हो? जब दौरा समाप्त हो जायेगा, तब तुम्हारे किए हुए सुधारोंको देखनेमें आनन्द आयेगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२००) से।
सौजन्य : मीराबहन

६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

बेतिया
पौष वदी ६, १९८३ [२४ जनवरी, १९२७]

बहनो,

आज हम बेतियामें हैं। यही वह शहर है जहाँ मै १९१७ में[2] चम्पारनके कामके लिए ज्यादातर रहा था। इस इलाकेमें आमके अनेक बाग हैं। वे बहुत सुहावने लगते हैं। आसपासके प्रायः सभी स्थानोंमें राम-सीताके बारेमें कोई न कोई दंतकथा तो होती ही है। लेकिन मेरे लिए इन बातोंके वर्णनमें समय देना सम्भव नही है।

१. ये यंग इंडियामें धारावाहिक रूपमें प्रकाशित हो रहे थे।
२. मूलमें १९१६ है।

देखता हूँ कि तुम्हारा वर्ग बढ़ रहा है। काकासाहबकी बात मुझे तो पसन्द आई। सच्ची सेवा करनेवाली बहनें आश्रममें तैयार नही होंगी, तो कहाँ होंगी? इसका जवाब तुम्हीको देना है। हम लोगोंका स्वास्थ्य इस लायक नहीं है, न हममें इतनी आत्मशक्ति या अक्षरज्ञान ही है। परन्तु हममें शुद्ध भक्ति हो, तो यह सब अपने आप आ जायेगा। भक्तिका अर्थ है श्रद्धा, ईश्वरके प्रति और अपने प्रति। यह श्रद्धा ही हमसे सारे त्याग कराती है। त्यागके लिए त्याग करना मुश्किल होता है, परन्तु सेवाके निमित्त त्याग आसान हो जाता है। कोई माता यों ही जान-बूझकर गीलेमें नहीं सोती, मगर अपने बच्चेको सूखेमें सुलानेके लिए खुश होकर गीलेमें सो रहती है।

मैं देख रहा हूँ कि इस वर्ष लम्बे समयतक मैं आश्रममें नहीं रह सकूँगा। इसका मुझे दु:ख है, किन्तु हमें तो दु:खमें ही सुख मानना है। खादीके कामके लिए मुझे भ्रमण करना ही पड़ेगा। लाखों लोगोंको खादीका मन्त्र इसी तरह घूमकर ही दिया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६३६) की फोटो-नकलसे।

७. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

मौनवार, पौष वदी ६ [२४ जनवरी, १९२७][1]

चि० गंगाबहन,

इस बार तुम्हारी साप्ताहिक चिट्ठी अभीतक नहीं मिली है।

तुम्हें अधीर तो होना ही नही चाहिए, लोभ भी नहीं करना चाहिए। बहुत काम करनेका लोभ कुछ भी नही करने देता। अतः थोड़ा किन्तु यथाशक्ति पूरा काम करनेकी वृत्ति रखनी चाहिए। यह इसलिए लिख रहा हूँ कि काकासाहब तुम सभी बहनोंको खूब प्रोत्साहित कर रहे हैं। उनका प्रोत्साहन देना मुझे अच्छा लगता है। ऐसा लगता है कि इस प्रोत्साहनके परिणामस्वरूप यदि हम फौरन कुछ करके दिखा सकें तो अच्छा होगा। किन्तु काम जल्दी तो तभी करके दिखाया जा सकता है जब हम पहले अपनी सामर्थ्यको आँककर, जितना हमारे बूतेका है, उतना ही काम अपने जिम्मे लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७०२) से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. गंगाबहनकी साप्ताहिक चिट्ठीके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र १९२७में लिखा गया होगा, क्योंकि गंगाबहन दिसम्बर, १९२६ में आश्रमकी महिलाओंकी प्रधान चुनी गई थीं।

८. पत्र : मगनलाल गांधीको

बेतिया
सोमवार [२४ जनवरी, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

बालकृष्णका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। उसके उत्तरमें लिखा गया मेरा पत्र भी संलग्न है। पत्र उसके पतेपर भेज देना।

रुखीके बारेमें मैंने डाक्टरको लिखा है।

ऐसा लगता है कि हमें आश्रममें 'वाटरवर्क्स' का प्रबन्ध करना पड़ेगा। नदीमें काफी गहरी खुदाई करके पानीको ऊपर लाना पड़ेगा। किसी विशेषज्ञको बुलाकर तखमीना लगवाना। वल्लभभाईसे मिलना। [आश्रममें] इतनी अधिक बीमारी रहती है, उसका कारण पानी ही हो सकता है न? यदि हम बहुत अधिक सावधानी बरतकर ही स्वस्थ रह सकते हों तो वह भी तो ठीक नहीं है। इस सम्बन्धमें विचार करना। श्री और श्रीमती लॉरेंसके वहाँ पहुँचनेपर तुमने उनकी अच्छी तरह देखभाल की होगी। मेरे विशेष आग्रहपर ही वे लोग वहाँ पहुँचे थे। ऐसा लगता है कि सकलातवाला भी वहाँ पहुँचे थे। मैंने सुब्बैयासे मीराबहनका आखरी पत्र तुम्हें भेज देनेके लिए कह दिया था। पत्र तुम्हें मिल गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

अब तुलसी मेहर वहाँ पहुँचेगा। फिलहाल तो वह मेरे साथ ही घूम रहा है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८६९३) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. पत्रके बेतियासे लिखे जाने और रुखीकी बीमारीके उल्लेखसे लगता है कि पत्र इसी वर्ष लिखा गया होगा।

९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

बेतिया

सोमवार, पौष कृष्ण ६ [२४ जनवरी, १९२७]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मीला है।

रु० ८००० जमनालालजीको भेजे हैं। वह चर्खासंघके लिये समजता हुं।

शुद्धिके बारेमें मैं खूब विचार कर रहा हुं। जिस ढंगसे आज शुद्धि की जाती है वह धार्मिक नही है। जो बलात्कारसे या अनजानपनमें विधर्मी हो जाते हैं उनकी शुद्धि क्या करनी थी? वे तो शुद्ध हि हैं? केवल हिंदु धर्मीकी उदारताका प्रश्न है। हमारा आंदोलन ख्रीस्ती, इस्लामी शुद्धिके विरोधमें होना चाहिये। इसमें विचार परिवर्तनकी हि आवश्यकता है। यदि हम मानें कि शुद्धिकी प्रणाली दोषित है तो हम क्यों उसकी नकल करे? हमपर आक्रमण हो जाय उसको दूर करनेके लिये शुद्ध इलाज ढूंढ़कर हमारे उसको ही उपयोगमें लाना चाहीये। शुद्धिके आंदोलनसे हम गंदगीकी वृद्धि करते हैं, और हिंदुधर्मीओमें जो सुधारणा होनी चाहिये उसको रोकते है। आजकलके आंदोलनमें मैं विचारका अत्यंताभाव देख रहा हुं। जब आपको कुछ स्थिरता मीले तब इस बारेमें हम शांतिसे विचार कर सकते हैं। मैं यह नही चाहता कि मेरे हि कहनेसे एक भी कार्य रोक दीया जावे। उससे हमको फायदा नहिं हो सकता है। जो मैं सोच रहा हुं वह स्वतंत्रतया यथार्थ है ऐसा प्रतीत हो जाय तब हि और उतना हि परिवर्तन होना उचित है। इसलीये मैं धैर्य और खामोशी धारण कर रहा हुं। मेरी सलाह है कि जब आपको धारासभाओंमें से फुरसत मीले तब मेरे भ्रमणमें मेरे साथ चंद दिनोके लीये हो जाय। फेरवरवारी पहली तारीखको मैं गोंदीया जाते हुए कलकत्तेमें हुंगा।

आपका,

मोहनदास

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४३) से।

सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१०. प्रश्नोंके उत्तर

[२४ जनवरी, १९२७ के पश्चात्][1]

प्रश्न: (१) भारतीय सेनाकी टुकड़ियाँ चीन भेजनेकी भारत सरकारकी नीतिके बारेमें आपके क्या विचार हैं?

उत्तर: आम जनताकी राय जाननेवाले नेताओंसे सलाह लिये बिना सरकारका भारतीय सेनाको चीन भेज देना अनुचित और बहुत ही आपत्तिजनक काम है।

(२) एसेम्बलीमें वाइसरायके हालमें दिये गये भाषणके सम्बन्धमें आपकी क्या राय है?

वह बेहद निराशाजनक था।

(३) आप संवैधानिक स्वायत्त शासनमें विश्वास करते हैं या स्वतन्त्र स्वराज्यमें?

मैं ऐसे स्वराज्यमें विश्वास करता हूँ, जिसमें यदि भारत चाहे तो कभी भी स्वाधीन हो सकता हो।

(४) बनारसके अपने हालके भाषणमें[2] स्वराज्यकी परिभाषा रामराज्य कहकर करनेमें आपका क्या उद्देश्य था?

मैंने स्वराज्यको, जैसा कि मैं बहुधा कहता हूँ रामराज्यके जैसा कहा, क्योंकि वह सत्य और अहिंसा, दूसरे शब्दोंमें विश्व धर्मपर आधारित एक नैतिक राज्यकी सचित्र व्याख्या है।

(५) श्रद्धानन्द कोषके लिए १० लाख रुपये एकत्रित करनेकी आपकी अपीलसे मुसलमानोंके मनमें चिन्ता और सन्देह पैदा हो गया है।

जो लोग शुद्धि, तबलीग या धर्म-परिवर्तनमें विश्वास रखते हैं, वे ऐसे प्रचार-कार्यके लिए तबतक कोषकी अपील करनेका हक रखते हैं, जबतक उनका प्रचार कार्य सच्चा और विशुद्ध है। कोषके लिए अपील करनेमें मेरे साथ देनेका प्रयोजन अस्पृश्यता-निवारण कार्यतक सीमित था, और उन कारणोंसे जो अपीलपर 'यंग इंडिया' में लिखे अपने लेखमें[3] मैंने व्यक्त किये हैं; कृपया उन्हें देखिए।

सैयद जहीरुल हक
बाढ़ (जिला पटना)

अंग्रेजी (एस० एन० ११८२६) की फोटो-नकलसे।

१. २४ जनवरी, १९२७को विधानसभाका उद्घाटन करते समय वाइसराय द्वारा दिए गए भाषणके उल्लेखसे; वाइसरायने कहा था कि भारत-सरकार भारतीय सेनाकी टुकड़ियाँ चीन भेजनेको राजी हो गई है। देखिए "हमारी बेबसी", ३-२-१९२७ भी।

२. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५३६।

३. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५१२-१३।

११. पत्र: मगनलाल गांधीको

मंगलवार [२५ जनवरी, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारे दो पत्र एक साथ मिले। चि० रुखीका ऑपरेशन हो जानेपर तार देना। क्या गोविन्दभाई आ गये हैं? हालमें उनका कोई पत्र नहीं आया है। ऐसा लगता है कि भाई प्रागजी नहीं आयेंगे। उनका मन फिर दक्षिण आफ्रिका जानेका है। यदि वे न आयें तो भी फिलहाल मैं कोई अन्य प्रबन्ध न करूँगा। यों, चर्मालय अथवा दुग्धालयके कार्यके लिए हमें किसीको नियुक्त करना पड़े, तो इसके लिए कार्य समितिकी अनुमति लेनेकी आवश्यकता नहीं है। फिर भी हर मामलेमें सबके साथ चर्चा कर लेना अच्छा ही है। नवीनको जिस विभागमें रखना उचित जान पड़े उसमें रखना। उसे प्रोत्साहित करना आवश्यक है। बजटमें मंजूर रकमोंके खर्चके बारेमें कार्य समितिसे सलाह करनी होगी; लेकिन चर्मालय, दुग्धालय और 'लिफ्ट'के[2] मामले तखमीनेसे बाहरकी बात है और उनके लिए खर्चकी व्यवस्था भी अलग करनी होगी। इसलिए हमें इनपर आर्थिक दृष्टिसे नहीं, बल्कि आश्रमके आध्यात्मिक और सामाजिक लाभकी दृष्टिसे विचार करना चाहिए। ये सब संस्थाएँ आश्रमकी भूमिपर चलाई जायें इस आशयका प्रस्ताव पास हो ही गया है। जहाँतक मुझे याद है, शिवाभाई हरिभाईके वेतनकी बात तो तय हो गई थी। उन्हें ५० रुपयेतक देनेका निश्चय किया गया था; फिर भी उसपर मंजूरी दुबारा ले लें तो कोई हर्ज नहीं। रसोईघरोंकी बात मैं समझ गया। उनकी ओर जितना ध्यान दे सको उतना देना। मणिलाल वहाँ पहुँच जायेगा। उससे काम लेना। रतिलाल बहुत अव्यवस्थित-चित्त है। उसने परसों वहाँ जानेका हठ किया था, किन्तु वह अब फिर शान्त हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७२) से।
सौजन्य: राधाबहन चौधरी

१. पत्रमें रुखीके ऑपरेशनके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र ३१-१-१९२७ के पत्रसे पहले और २४-१-१९२७ के पत्रके बाद लिखा गया था।

२. कुएँसे पानी निकालनेके लिए रामचन्द्रन् द्वारा बनाई गई विशेष रहट; देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ (६०-६१)।

१२. भेंट: 'फ्री प्रेस ऑफ इंडिया'के प्रतिनिधिसे

मुजफ्फरपुर
२५ जनवरी, १९२७

फ्री प्रेसके प्रतिनिधि द्वारा भेंट किये जानेपर महात्मा गांधीने अमेरिका यात्राके लिए मिले निमन्त्रणोंके बारेमें अपनी राय व्यक्त की। महात्माजीने सीधे-सादे ढंगसे कहा कि इन ललचानेवाले निमन्त्रणोंको स्वीकार करनेमें मुझे कुछ असमंजस हो रहा है। लेकिन मैं अभी अपने जीवनकार्यका वांछित लक्ष्य प्राप्त करनेमें सफल नहीं हो पाया हूँ। जबतक मेरी उपलब्धियाँ एक निश्चित ठोस रूप धारण नहीं कर लेतीं तबतक मैं उन विदेशोंकी यात्रा नहीं करना चाहता जो सौजन्य पूर्वक मुझे आमन्त्रित कर रहे हैं। महात्माजीने आगे कहा कि भारतीयोंकी सेवाके लिए मुझे अमेरिकामें एक बड़ी थैली दी जानेवाली है; लेकिन मुझे लगता है कि उससे हमारी आत्म-निर्भरता और आत्मसम्मानको क्षति पहुँचेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-१-१९२७

१३. भाषण: मुजफ्फरपुरके मिशन स्कूलमें

२५ जनवरी, १९२७

[नगरपालिका आयुर्वेदिक] औषधालय देखनेके बाद गांधीजी रामकृष्ण मिशन देखने गये और संन्यासियों तथा कार्यकर्त्ताओंने उनका स्वागत किया। उन्हें आश्रम और उससे संलग्न अस्पताल दिखलाया गया। इसके बाद वे भारतीय ईसाई लड़कियोंका मिशन स्कूल देखने गये। कई लड़कियाँ चरखा चलाती दिखलाई पड़ीं। वे सब नौसिखिया मालूम देती थीं। महात्माजीने देखरेख करनेवाली यूरोपीय महिलासे कहा कि छात्राओंसे चरखा सीखनेकी अपेक्षा करनेसे पहले आप खुद चरखा चलाना सीखें। सभा भवनमें मेजपोश विदेशी कपड़ेका था; और सभी लड़कियाँ तथा उनके शिक्षक विदेशी कपड़े पहने थे। इसपर महात्माजीने कहा कि कताईमें विश्वास करनेसे पहले आप लोगोंको खद्दरमें आस्था होनी चाहिए। अध्यक्ष द्वारा कुछ कहनेका अनुरोध किये जाने पर महात्माजीने कहा कि मेरे पास आपके लिए खादीके अलावा दूसरा सन्देश नहीं है। आप जिस धर्मको मानना चाहें, मानते रहें, लेकिन अगर गरीबोंके प्रति आपके मनमें प्यार नहीं है, तो आपकी प्रार्थना ईश्वर द्वारा सुनी जानेकी कोई सम्भावना नहीं है। भारतकी विशिष्ट परिस्थितियोंमें गरीबोंके प्रति प्यारकी अभिव्यक्ति खादी पहननेके

अलावा और किसी ढंगसे ज्यादा अच्छी नहीं हो सकती। उन्होंने लड़कियोंसे खादी, केवल खादी ही पहननेका अनुरोध किया।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ३०-१-१९२७

१४. भाषण : मुजफ्फरपुरके तिलक-मैदानमें[1]

२५ जनवरी, १९२७

महात्माजीने सारे अभिनन्दनपत्रोंका एक साथ जवाब देते हुए सभी सार्वजनिक संस्थाओंको अभिनन्दनपत्र भेंट करनेके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने सेवा समितिको विशेष रूपसे इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि उसने सभामें अभिनन्दनपत्र न पढ़नेके लिए उनका अनुरोध स्वीकार किया। उन्होंने कहा कि मैंने स्वयं उस अभिनन्दनपत्रको पढ़ लिया है और मैं उसका जवाब शुरूमें ही देना चाहता हूँ। उस अभिनन्दनपत्रमें मुझसे यह सवाल पूछा गया है कि क्या सभी मामलोंमें और सभी परिस्थितियोंमें हमें अहिंसात्मक रहना चाहिए? इसके जवाबमें मेरा दृढ़तापूर्वक कहना है 'हाँ'। मनुष्यकी सच्ची वकतका तभी पता लगता है जब उसे कसौटीपर कसा जाता है। एक व्यक्ति अपनी भलाईके लिए सच बोल सकता है, लेकिन वह उसकी सत्यवादिताकी कसौटी नहीं है; एक व्यक्ति किसी जरूरतसे अहिंसात्मक रह सकता है, लेकिन अहिंसामें उसकी आस्थाकी वह कोई कसौटी नहीं है। बार-बार उत्तेजित किये जानेपर भी कोई व्यक्ति अहिंसात्मक रह सके, तभी समझना चाहिए कि उसकी अहिंसामें आस्थाकी सचाई और बलकी परीक्षा हुई। मैं वेदोंसे, 'गीता', 'कुरान' और 'बाइबिल' से अहिंसाके पक्षमें असंख्य तर्क प्रस्तुत कर सकता हूँ। किन्तु मेरे पास ऐसा करनेका समय बिलकुल नहीं है। फिर भी मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सभी धर्मोंका मूल उपदेश अहिंसा है।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि अभिनन्दनपत्रमें स्वामी श्रद्धानन्दकी हत्याका[2] उल्लेख किया गया है। उस सिलसिलेमें प्रयुक्त की गई भाषा अनुचित है, लेकिन लेखकके हृदयके क्षोभ और दुःखका ध्यान रखते हुए मैं उस भाषाके प्रयोगके लिए उसे दोष नहीं दूँगा। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि स्वामीजीकी हत्यापर मुझे सेवा समितिके किसी भी सदस्यसे कुछ कम दुःख नहीं हुआ है। मैं तो यह कहना चाहूँगा कि मेरा दुःख उनके दुःखसे अधिक और ज्यादा तीव्र है। लेकिन फिर भी

१. यह भाषण नगरपालिका, जिलाबोर्ड, जिला कांग्रेस कमेटी और अन्य सार्वजनिक संस्थाओंकी ओरसे भेंट किये गये अभिनन्दनपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२. स्वामी श्रद्धानन्दकी हत्या २३ दिसम्बर, १९२६ को की गई थी।

मैंने जो कुछ पहले कहा है मैं उन्हीं बातोंपर अडिग हूँ। उन्होंने कहा कि इस तरहके काम समूची हिन्दू-जातिकी हत्या नहीं कर सकते। आपमें हताशाका भाव या हत्याके बदलेकी भावना जगना अविवेकपूर्ण और अनुचित है। स्वामी श्रद्धानन्दकी हत्यासे कुछ सीखा जा सकता है। इससे आपको, हिन्दू-मुसलमानोंको यह शिक्षा मिलनी चाहिए कि अन्य लोगोंको भी अपने मनकी बात कहने और अपनी अंतरात्माके निर्देश माननेका उतना ही अधिकार है जितना कि खुद आपको है। इससे आपको यह शिक्षा भी लेनी चाहिए कि आप उनके अमूल्य रक्तसे अपने हृदय स्वच्छ कर लें। उनकी मृत्युपर शोक मनानेकी तो कोई बात ही नहीं है; आपको उनकी मृत्युपर गर्व होना चाहिए।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि कोई कारण नहीं कि कुछ लोग इस तरहकी मनोवृत्तिके हैं, इसलिए दूसरे भी पागल हो उठें। धर्मके संरक्षणके लिए हिंसाकी कोई जरूरत हो ही नहीं सकती। उन्होंने कहा कि जब भी आप ऐसा कोई काम करें, आपको ऐसा अनुभव होना चाहिए कि हम अपना पाँव धर्मके रास्तेसे बाहर रख रहे हैं। सच्चा धर्म अपने शत्रुओं तकसे मित्रताका नाता बनाना है। लेकिन ऐसी विनम्रता, ऐसी अहिंसा कायरता नहीं है। दूसरोंको मारनेके बजाय आपको खुद मरनेके लिए तैयार रहना चाहिए; किसी दूसरेका खून करनेके बजाय खुद अपना खून बहानेके लिए तैयार रहना चाहिए। जो व्यक्ति न्याय-धर्मके लिए प्राण देनेसे नहीं झिझकता है, वह अपराजेय है। सारा संसार भले ही हिंसाका समर्थन करनेको राजी हो जाये, तो भी अहिंसामें मेरी आस्था अविचल और अपरिवर्तनीय रहेगी। मैं बराबर यह मानता रहूँगा कि अहिंसा सभी धर्मोका साररूप सत्य है और इस्लाम भी निश्चय ही इसका अपवाद नहीं है। मैं जितना भी जोर देकर कह सकता हूँ, उतने जोरसे आपसे कहना चाहूँगा कि अपने धर्ममें आपके विश्वासको इसी बातसे आँका जायेगा कि किस हदतक आप उसके लिए आत्म-बलिदान करनेको तैयार हैं। उन्होंने कहा कि मैं हिन्दू-धर्मका उतना ही कट्टर अनुयायी हूँ, जितना कि आपमें से कोई है, लेकिन मैं कहता हूँ कि यदि आप अपने धर्मके प्रति सच्चे रहना चाहते हैं, तो आपको सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्यका पालन करना तथा विश्वकी कुल सम्पत्तिसे विरतिका पाठ सीखना चाहिए। हिन्दू-धर्म कभी हिंसा या बेईमानीको स्वीकृति प्रदान नहीं करता। आप अपने कार्योंका औचित्य सिद्ध करनेके लिए अपने धर्मशास्त्रोंका गलत अर्थ निकालते हैं। युधिष्ठिर भले ही एक बार झूठ बोले हों, लेकिन आपको याद रखना चाहिए कि उन्हें इस पापके लिए तुरन्त दुःख झेलना पड़ा था और बादमें भी। यदि आप धर्मकी सेवा करना चाहते हैं, तो आपके पास सत्य और अहिंसाके सिवाय दूसरा कोई विकल्प नहीं है।

आगे बोलते हुए उन्होंने नगरपालिका, जिला-बोर्ड, स्थानीय बोर्ड तथा कांग्रेस कमेटीको खद्दर-कार्यकी तरफ ध्यान देनेके लिए धन्यवाद दिया। जो लोग देशकी पुकार

पर स्कूलों-कालेजोंसे बाहर आ गये थे, और जिन्होंने अपनी अच्छी चलती हुई वकालतकी अच्छी आमदनीको छोड़ दिया था, उन्होंने उन लोगोंको, धन्यवाद दिया और कांग्रेस कमेटीको इन देशभक्त नौजवानोंकी चर्चा करनेके लिए विशेष रूपसे धन्यवाद दिया। कांग्रेस कमेटीके अभिनन्दनपत्रमें राष्ट्रीय इतिहासके एक बहुत पुराने और अल्प कालकी चर्चा की गई है। वह काल बहुत ही भव्य था और उसकी स्मृति मेरे लिए कितनी पुनीत है; किन्तु मैं कांग्रेसकी किसी अन्य गतिविधिके विषयमें कुछ नहीं कहना चाहूँगा। निश्चय ही वे महत्त्वपूर्ण हैं, लेकिन मेरे लिए देशकी वर्तमान परिस्थितियोंमें खद्दर-कार्य सबसे अधिक महत्त्वका कार्य है।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि यदि आप खद्दर-कार्यको ही सफल बना सकें तो [देखेंगे] केवल खद्दर ही आपकी अक्षुण्ण शक्तिका स्रोत है। स्वराज्य आपके द्वारपर होगा। जबतक आप भारतके गरीब लोगोंकी हालतपर सहानुभूतिपूर्वक ध्यान देना नहीं सीख लेते हैं, तबतक आपको स्वराज्यकी माँग करनेका कोई हक नहीं है और जबतक आप उनसे सहानुभूतिका भाव नहीं रखने लगते, तबतक आप स्वराज्यके सच्चे पक्षपोषी भी नहीं हैं। जबतक देशमें एक भी गरीब ऐसा है जो भूखा रहता हो, तबतक भारतके स्वराज्यका मेरे लिए कोई अर्थ नहीं है। भूखोंको भोजन देना, प्यासोंको पानी देना हर प्राणीका धार्मिक कर्त्तव्य है और उन्होंने कहा कि जबतक हर व्यक्तिमें ऐसी उदात्त भावना नहीं भर जाती, धर्मराज्य नहीं मिल सकता। इस धर्मका आचरण आप कैसे कर सकते हैं? खद्दर, केवल खद्दर हीके द्वारा। मुझे और कोई दूसरा बेहतर उपाय किसीने नहीं सुझाया है और मेरा विश्वास है कि कोई दूसरा बेहतर तरीका है भी नहीं।

इसके बाद उन्होंने खद्दरका आर्थिक पहलू विस्तारसे समझाया और बिलकुल साफ करके बताया कि किस तरह खद्दरपर खर्च की गई प्रत्येक पाई गरीबोंकी जेबमें जाती है। क्या आपको उन गरीब गाँववालोंकी इतनी भी मदद नहीं करनी चाहिए, जो आपको रोजमर्राकी रोटी मुहैया करते हैं? गरीब और जरूरतमंद लोगोंकी मदद करना हर प्राणीका धार्मिक कर्त्तव्य है। क्या आप अपने इस कर्त्तव्यसे चूकेंगे? खादी भले ही खुरदरी हो, महँगी हो, फिर भी वह आपकी माँका दिया हुआ उपहार है। क्या आपको वह अमूल्य उपहार उठाकर अलग फेंक देना चाहिए? आपको तो चाहिए कि आप विदेशी वस्त्रको खुरदरा और मंहगा समझें और खादीके टुकड़ोंको बड़े आदरसे सिर-माथे रखें।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट ३०-१-१९२७

१५. भाषण : मुजफ्फरपुरके विद्यार्थियोंकी सभामें[1]

२५ जनवरी, १९२७

गांधीजीने कहा कि मुझसे जब मुजफ्फरपुरमें विद्यार्थियोंकी एक सभामें भाषण देनेको कहा गया तो मैं किसी भी अन्य प्रलोभनके बिना राजी हो गया; क्योंकि मुझे याद है कि जब मैं अपना चम्पारनका कार्य शुरू करने आया था तो पहले दिन मुजफ्फरपुरके विद्यार्थियोंने ही मुझे आश्रय दिया था। वह घटना, मैं भुला नहीं सकता। और यहाँके विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण देनेका सुअवसर मैंने तत्काल यह सोचकर स्वीकार कर लिया कि इस समय जब मुझे भारतके विद्यार्थी समुदायसे बहुत ज्यादा मददकी जरूरत है, यहाँके विद्यार्थी शायद मुझे मदद पहुँचायेंगे। उन्होंने कहा कि आप मुझे १९२० की याद दिला देते हैं। निश्चय ही वे बड़े शानदार दिन थे, निश्चय ही उन दिनों देशमें राष्ट्रीय चेतनाका जो प्रखर उभार दिखाई देता था वह अब दब गया है, लेकिन उस आन्दोलनका असर अब भी बाकी है। यदि आप उस जोशके उभारको बनाये नहीं रख सके हैं, तो केवल आप ही उसके लिए दोषी नहीं हैं। स्वाभाविक ही है कि मैं देशकी बदली हुई परिस्थितियोंमें आप लोगोंसे वही काम करनेको नहीं कहूँगा; पर मैंने तब स्वतंत्रता संघर्षका जो रास्ता सुझाया था, वही अब भी भारतीयों द्वारा अपनाने योग्य सर्वोत्तम रास्ता है। यदि आप उस रास्तेपर बहुत लम्बे समयतक नहीं चल सके, तो उसके लिए शर्मिन्दा होनेकी जरूरत नहीं है। मुझे इस बातपर आश्चर्य नहीं है कि आप आगे कूच करते हुए रुक क्यों गये, बल्कि देशकी हालत देखते हुए मुझे इस बातपर आश्चर्य होता है कि उन दिनों आप इतना आगे बढ़ ही कैसे सके थे। जो कार्यक्रम मैंने बताया था, यदि वह अमलमें लाया जा सकता तो सफलता मिलनेमें सन्देह ही नहीं था, लेकिन अब मैं तबतक उस कार्यक्रमके अनुसार काम करनेके लिए आपसे नहीं कहूँगा जबतक कि उसके लिए उपयुक्त अवसर नहीं आ जाता। लेकिन इस बीच मुझे आपसे एक काम करनेको कहना है और वह है खद्दरका काम। बड़े-छोटे, अमीर-गरीब, विद्वान-मूर्ख, विद्यार्थी या सरकारी कर्मचारी सभी लोग आसानीसे इस काममें जुटकर इसे सफल बना सकते हैं। विद्यार्थी समुदाय इस कामके लिए विशेष रूपसे उपयुक्त है। पंडित मालवीयने हिन्दू विश्वविद्यालयमें दृष्टांत प्रस्तुत करके आपका मार्गदर्शन कर दिया है। कल ही हिन्दू विश्वविद्यालयके विद्यार्थियोंने मुझे एक हजार रुपयेकी थैली भेंट की है। आपने जो थैली भेंट की है वह मुजफ्फरपुरके विद्यार्थियोंकी संख्याको देखते

१. यह सभा शामके ६ बजे टाउन हॉलमें हुई थी।

हुए उससे बहुत कम है। मैं विद्यार्थियोंसे आशा रखता हूँ कि वे अपनी सारी आर्थिक और शारीरिक शक्तिसे खद्दर आन्दोलनकी सहायता करेंगे। मुझे आशा है कि मुजफ्फरपुरके विद्यार्थी देशके अन्य भागोंके विद्यार्थियोंसे पीछे नहीं रहेंगे। आप न सिर्फ आजके दिन ही धनसे सहायता करेंगे अपितु मुझे आशा है कि आप अपने जेब-खर्चसे कुछ बचाते ही रहेंगे और नियमित रूपसे आन्दोलनकी सहायता करते रहेंगे। आप लोग प्रान्तीय खादी संगठनके मुख्यालयमें रह रहे ह; इसलिए आपको खद्दरके कामके सभी पहलुओंको सीख लेना चाहिए और अपने अवकाशका समय भी इस काममें लगाना चाहिए। मैं तो आपसे कहूँगा कि आप प्रतिदिन कमसे-कम आधा घंटा सूत भी कातें। आप अपने लिये पैसा कमानेके लिए नहीं बल्कि गरीब और बेकार ग्रामीणोंके लिए उदाहरण प्रस्तुत करनेके लिए सूत कातें। परन्तु यह सब कुछ आप तभी करें जब आपकी खादीमें श्रद्धा हो। वैसी श्रद्धा प्राप्त करनेके लिए आप मुझसे या अन्य किसी व्यक्तिसे खादीका अर्थशास्त्र समझ लें।

भाषण जारी रखते हुए गांधीजीने खद्दरके आर्थिक पहलूपर विस्तारसे प्रकाश डाला और कहा कि यदि आप मानव है तो आपमें अपने आसपासके मनुष्योंके प्रति सहानुभूति अवश्य होनी चाहिए। यदि आपमें भाईचारेकी इतनी भी भावना नहीं है, तो आप स्वराज्य पानेकी आशा कैसे कर सकते है? भारतके सच्चे सपूत होनेके नाते आपका यह कर्त्तव्य है कि आप उन सब वस्तुओंको अस्वीकार कर दें जो प्रत्येक भारतीयको उपभोगके लिए सुलभ नहीं हो पातीं। पर मैं आपको ऐसा करनेके लिए नहीं कह रहा हूँ। मैं तो यह चाहता हूँ कि आप खादी खरीदें और इस तरह हजारों बेकार देशवासियों और महिलाओंको काम और भोजन दें। विद्यार्थियोंपर खादी पहननेका प्रतिबन्ध नहीं है। उन्होंने विस्तारसे बताया कि जब राजगोपालाचारीको मद्रासके एक सरकारी कालिजमें खद्दरपर बोलनेके लिए आमन्त्रित किया गया तब वे किस तरह प्राध्यापकों एवं विद्यार्थियोंकी सहायतासे उस कालिजमें खादी संघ चलानेमें सफल हुए। उन्होंने आशा प्रकट की कि मुजफ्फरपुरमें भी उस कालिजके दृष्टांतका अनुसरण किया जाएगा। खद्दरकी अर्थ-व्यवस्थाके सिद्धान्तको समझनेके लिए पुरस्कृत निबन्धका[1] पढ़ना आपके लिए लाभदायक होगा। मुझे आशा है कि पुस्तकको पढ़ चुकनेके उपरान्त खादीमें आपकी आस्था हो जाएगी। उन्होंने कहा: खद्दर पहननेके विरोधमें केवल एक आपत्ति रह जाती है और वह है फैशन और आरामके प्रति मोह। मैं आपसे पूछता हूँ कि यदि आप देशके लिए इतना छोटा-सा त्याग भी नहीं कर सकते, तो स्वराज्य पानेकी आशा कैसे कर सकते हैं? उन्होंने विद्यार्थियोंसे उसी स्थानपर निष्ठापूर्वक यह प्रतिज्ञा करनेका आग्रह किया कि वे आजके बाद कभी सिवाय खादीके

१. अभिप्राय वरदाचारी और पुणताम्बेकरके निबन्धके आधारपर प्रस्तुत पुस्तिकासे है; पुस्तकके संक्षिप्त विवरणके लिए देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५१४।

और कुछ इस्तेमाल नहीं करेंगे और यदि सम्भव हुआ तो अपने विदेशी कपड़ोंको जला डालेंगे।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि चूंकि यह विद्यार्थियोंकी सभा है, मैं एक और विषयके प्रति संकेत किये बिना इस भाषणको समाप्त नहीं कर सकता। वह विषय है ब्रह्मचर्य। उन्होंने कहा कि मेरा विद्यार्थियोंके साथ काफी सम्पर्क एवं सम्बन्ध रहा है। और मुझे इस बातका पता चला है कि विद्यार्थी समाजको चारित्रिक अधः पतनने घेर रखा है। मैं इस सम्बन्धमें अपने विचार 'यंग इंडिया', 'नवजीवन' और 'आत्मकथा' में प्रकट करता रहता हूँ। परन्तु मैं आपका आगे और पतन न हो, इसलिए चेतावनी दे रहा हूँ। आप लोगोंके चरित्रमें विकारका आ जाना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। सारे देशका वातावरण भ्रष्ट विचारोंसे इतना भर गया है कि आप लोगोंके लिए इसके प्रभावसे बचे रहना लगभग असम्भव है। पाठ्य-पुस्तकें, सिनेमा, रंगमंच सब अनैतिकताके प्रभावको फैला रहे हैं। यदि विद्यार्थियोंको समय रहते चेतावनी न दी जाए, और आवश्यक सावधानी न बरती जाए, तो सारा देश नष्ट हो जायेगा। विद्यार्थियोंको बचानेके लिए वीर स्वामी श्रद्धानन्दने आधुनिक शहरी जीवनके आकर्षणोंसे बहुत दूर हिमालयकी तलहटीमें गुरुकुलकी स्थापनाकी थी। सम्भव है उनके द्वारा स्थापित संस्थाओंमें दोष रहे हों, परन्तु आदर्श ठीक है और इस आदर्शको नष्ट नहीं होने देना चाहिए।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि कुछ एक बमों और कारतूसोंकी मददसे स्वराज्य प्राप्तिका प्रयत्न केवल पागलपनसे भरा एक विचार है। इन साधनोंसे जो स्वराज्य प्राप्त किया जायेगा, वह देशके गरीब लोगोंके लिये नहीं होगा। गरीबोंके लिये स्वराज्य लेनेका प्रभावपूर्ण साधन केवल खादी है। इसीलिए मैं आपसे इस आन्दोलनको सफल बनानेके लिये कहता आ रहा हूँ। आपको ब्रह्मचर्यका दृढ़तासे पालन करना चाहिये — जो सारी शक्तिका स्रोत है। केवल इस तरह आप अपने आपको इस महान् संघर्षके लिये तैयार करनेकी आशा कर सकते हैं। उन्होंने कहा कि भारत कर्मभूमि, धर्मभूमि और त्यागभूमि है। हिमालय इस तथ्यके साक्षीके रूपमें खड़ा है। परन्तु सब कुछ ब्रह्मचर्यके दृढ़ पालनपर निर्भर करता है। यदि आप एक बार फिर भारतमें धर्म-राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं तो आपको सचाई, न्याय-परायणता और ब्रह्मचर्यकी राहपर चलना होगा। ईश्वरके सिवाय अन्य किसीसे डरना नहीं होगा और उसे अपना मित्र और पथ-प्रदर्शक समझकर आगे बढ़ना होगा।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ३०-१-१९२७

१६. भाषण: बेगुसरायकी सार्वजनिक सभामें[1]

२६ जनवरी, १९२७

महात्माजीने तीनों मानपत्रोंका एक साथ उत्तर देते हुए मानपत्र भेंट करनेके लिए तीनों संस्थाओंको धन्यवाद दिया। उन्होंने उनसे इसपर सहमति प्रकट की कि भारत एक बड़े ही कठिन और संकटमय दौरसे गुजर रहा है। उन्होंने कहा कि वह देश जहाँ हजारों लोग काम न मिलनेकी वजहसे भूखों मर रहे हों, निश्चित ही विनाशोन्मुख है। परन्तु अपने देशकी इस दुर्दशाके लिए अधिक सीमातक तो लोग स्वयं जिम्मेदार हैं। शास्त्रोंमें लिखा है कि आदमी जैसा बोता है, वैसा काटता है। जबतक भारतके भूखे लोगोंको भोजन देनेके कारगर प्रयत्न नहीं किये जाते, तबतक भारतकी दशा नहीं बदलेगी। जन समुदायकी उपेक्षा करके ही आपने देशकी यह दुर्दशा की है और यदि आप गौरवपूर्ण पुरातन युगको फिरसे लानेका प्रयत्न करना चाहते हैं तो आपको जनसमुदायकी अवस्थामें सुधार करना ही चाहिए।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि देशके शिक्षित वर्गका प्रथम कर्त्तव्य है कि वह अपने आपको जनसमुदायका अभिन्न अंग समझे और उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करे। शिक्षित वर्गने जनसमुदायकी उपेक्षा की है और उसके साधनोंका अपने स्वार्थके लिए उपयोग किया है। शिक्षित वर्गने अबतक गरीब खेतिहरोंकी मेहनतसे कमाये धनपर अपना जीवन निर्वाह किया है। अब शिक्षित लोगोंको अपने इन सब पापोंका प्रायश्चित्त करना चाहिए। यदि वे वास्तवमें धर्म-राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं, तो उन्हें उन गरीब लोगोंकी सेवा करनी चाहिए, जिन्होंने अबतक उनकी सेवा की है। उन्हें अपनी सारी जीवन-पद्धति और दृष्टिकोण बदल लेना चाहिए और चीजोंको सही रूपमें देखना चाहिए। शायद सभी शिक्षित लोग उतना महान त्याग न कर सकें जितना इस कार्यके लिए अपेक्षित है; तो भी वे सब अपने कर्त्तव्यका पालन कर सकें इसी दृष्टिसे मैंने एक सरल धर्म सामने रखा है और वह धर्म है चरखा। भारतकी गरीबी चरखेके खत्म होनेके साथ शुरू हुई और जैसे-जैसे समय गुजरता जा रहा है वह बढ़ती जा रही है। यह स्वतः सिद्ध सत्य है कि चरखेके पुनरुद्धारसे भारतके प्राचीन गौरवका पुनरुत्थान होगा। उन्होंने जोरदार शब्दोंमें घोषणा की कि चरखा ऐसी वस्तु है जिसको सब जगह प्रयोगमें लाया जा सकता है और जिससे हजारों बेकार पुरुषों और स्त्रियोंको काम मिल सकता है। उन्होंने इस बातपर दुःख प्रकट किया कि जहाँ खादीने देशके अन्य भागोंमें बहुत अधिक उन्नतिकी है,

१. यह भाषण स्थानीय बोर्ड, गोशाला और जनता द्वारा दिये गये तीन मानपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था। सभी मानपत्र हिन्दीमें थे और खद्दरपर छपे थे।

बेगुसरायमें इसकी अवनति हुई है। उन्होंने कहा इसका कारण केवल यही हो सकता है कि या तो कार्यकर्त्ताओंका चरखेपरसे विश्वास उठ गया है या उन्होंने इसके लिए काम करना छोड़ दिया है। उन्होंने कार्यकर्त्ताओंसे अपील की कि वे अपने समयका कुछ भाग कमसे-कम खद्दरके काममें भी लगायें।

गोशालाका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि इस गोशालामें चालीस वर्षोंकी लम्बी अवधिमें जितना काम हुआ है, उससे काफी अधिक काम होना चाहिये था। परन्तु यह बात नहीं कि केवल बेगुसरायकी गोशालामें ही ये त्रुटियाँ हैं। भारतकी प्रायः सभी गोशालाएँ लगभग गलत पद्धतियोंपर चलाई जा रही हैं। गोशालाओंका सर्वोत्तम उपयोग हो सकनेके लिए उन्हें उपयुक्त वैज्ञानिक पद्धतिपर चलाया जाना चाहिए। उन्होंने बादमें गोरक्षाके आर्थिक और धार्मिक पहलुओंको विस्तारपूर्वक समझाया और कहा कि कोई कारण नहीं कि गोरक्षा हिन्दुओं एवं मुसलमानोंके बीच संघर्षका विषय बने। उन्होंने इस बातपर बल दिया कि प्रत्येक गोशालाके साथ डेरीफार्म और चर्मालय लगे होने चाहिए और उनसे होनेवाली आमदनी पशुओंके कल्याणके लिए खर्च की जानी चाहिए। उन्होंने इस बातपर दुःख प्रकट किया कि जो लोग गोरक्षाको धार्मिक कर्त्तव्य नहीं मानते, या गायको पूज्य नहीं मानते, वे भी गायपर गायकी पूजा करनेवाले हिन्दुओंसे अधिक ध्यान देते हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दुओंकी गोरक्षाके प्रति उदासीनता ही भारतकी गौओंकी दुर्दशाका एकमात्र कारण है और गौओंकी दशा सुधारनेके लिए हिन्दुओंको अपने कर्त्तव्यका पूरा ध्यान होना चाहिए।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजीने एक बार फिर धनके लिए अपील की और इस बातपर दुःख प्रकट किया कि सभामें बिक्रीके लिए खद्दर नहीं रखा गया है। उन्होंने श्रोताओंसे अनुरोध किया कि वे अभी भाग कर शहरमें खद्दरकी दुकानपर जायें और शुद्ध खादीके कपड़े पहनें।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ४-२-१९२७

१७. राष्ट्रीय शालाएँ

बिहारके दौरेमें मैंने ऐसी कई राष्ट्रीय शालाएँ देखी है जो विघ्न-बाधाओंके होते हुए भी प्रगति कर रही हैं। मगर मैंने इन शालाओंके आधारपर यह समझ लिया है कि असहयोगके शिक्षा कार्यक्रमकी जो असफलता दिखाई देती है, उसका कारण क्या है कमसे-कम मुझे तो इन्हें देखकर इसमें कोई शक नही रह जाता कि जिन हजारों लड़कोंने सरकारी स्कूल छोड़े, उनके फिरसे उन्हींमें लौट जानेकी वजह उनकी अपनी या उनके माता-पिताओंकी निर्बलता नही थी, बल्कि इसकी वजह थी उन शालाओंके अध्यापकों या प्राध्यापकोंमें अपने कार्यक्रमके प्रति अपेक्षित सक्रिय विश्वासकी कमी। मगर जैसा कि मैंने कहा है, इसके लिए उन्हे भी बहुत दोष नही दिया जा सकता। वे खुद भी तो उसी दूषित शिक्षा-प्रणालीकी उपज थे और उनसे यह आशा नही की जा सकती थी कि वे अपनी परिस्थितियोंके सारे प्रभावोसे एकबारगी ही मुक्त हो सकेंगे। आश्चर्य तो यह है कि भारी विघ्न-बाधाओके बावजूद कुछ लोग अभीतक अपने आदर्शपर डटे है और अपार कठिनाइयोंमें किसी तरह निर्वाह कर रहे हैं। मगर जो थोड़ेसे लोग अभीतक डटे हुए है उनसे मैं बिलकुल सच्चा रहनेकी हार्दिक अपील करता हूँ। असहयोगकी हर शाखाके ध्वंसात्मक और रचनात्मक दोनो ही पहलू हैं। रचनात्मक पहलू ही वास्तवमें अधिक स्थायी है। इसके बिना ध्वंसात्मक पहलू निरर्थक ही है। अगर सरकारी स्कूलोंको छोड़नेके साथ-साथ शिक्षाका कोई अन्य रचनात्मक कार्यक्रम नही होता तो सरकारी स्कूलोंको केवल छोड़ देनेका तो कोई अर्थ ही नही है। प्रत्येक शाला केवल इस कारण कि वह सरकारसे सम्बद्ध नही है और सरकारी सहायता नही लेती, राष्ट्रीय नही हो जाती। अगर केवल सरकारसे सम्बद्ध न होना और सहायता न पाना ही एकमात्र कसौटी हो तो फिर हजारो मिशन स्कूलोको राष्ट्रीय शाला माना जा सकता है। हमारे सामने कांग्रेसकी राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाओंकी परिभाषा मौजूद है। उस परिभाषामें अन्य मुख्य बातोके साथ-साथ कताई एक अनिवार्य विषय है। बिहारकी एक राष्ट्रीय शालामें मैंने देखा कि चरखे वहाँ केवल दिखावेके लिए ही रखे गये है और उनपर जब-तब लापरवाहीसे कुछ सूत काता जाता है; शिक्षक खुद भी लापरवाह कतैये हैं। धुनना वे जानते ही नही। अच्छे और बुरे चरखेकी उन्हें पहचान नही थी। सीधे तकुएके गुण भी उन्हें मालूम न थे। उन्हे इसका पता ही नही था कि अगर महीन और अधिक सूत कातना हो तो अच्छे तकुएकी आवश्यकता होती है। मैंने जितने चरखे देखे करीब-करीब उन सभीसे एक अजीब-सी कर्कश ध्वनि निकलती थी। मैंने एक शालाके प्रधानाध्यापकसे बारीकीके साथ सवाल किये और उन्होने सारे दोष साहस-पूर्वक स्वीकार किये तथा उन्हे दूर करनेका वचन दिया। इस ज्ञानवर्धक अनुभवसे मैं यह शिक्षा लेना चाहता हूँ कि अगर राष्ट्रीय शालाओंके शिक्षकोंको अपना दुहरा हक साबित करना है तो उन्हे अपने कथनके अनुसार चलना होगा; यानी सच्चा

बनना होगा। अगर उन्हें चरखेमें विश्वास न हो तो उन्हें साफ कह देना चाहिए और अपने मालिकोंको छोड़ देना चाहिए। अगर वे माता-पिता, जो लड़कोंको शालाओंमें भेजते हैं, चरखेमें विश्वास नहीं रखते और लड़कोंका सूत कातना, उसे सीखना या उसका अभ्यास करना पसन्द नहीं करते तो शिक्षक ऐसे लड़कोंको शालाओंमें लेनेसे इनकार कर दें। किन्तु यदि वे सूत कताईको राष्ट्रीय शिक्षाका एक आवश्यक अंग समझते हों तो वे चरखा-विज्ञान और कताई-कलाको खुद अच्छी तरह सीख लें और लड़कोंको भी इसे उसी प्रकार सिखायें जिस प्रकार वे अन्य दूसरे विषय सिखाते हैं। उन्हें यह कहनेका हक नहीं है कि शिष्य कातना नापसन्द करते हैं। पाठ्य-विषयको रोचक बनाना शिक्षकका काम है। मैं रसायनशास्त्रसे घृणा करता था; क्योंकि मेरे शिक्षकको ही वह विषय इतना न आता था कि वे उसे रोचक बना सकें। बादमें मैंने उसे सीखा और देखा कि वह बहुत ही रोचक विषय है। रेखागणित-जैसे बहुत ही मनोरंजक विषयको सैकड़ों लड़के सिर्फ इसलिए हस्तगत नहीं कर पाते कि स्वयं शिक्षकोंको अपने काममें रुचि नहीं है, और उन्होंने इस विषयमें अपनी रुचि यथेष्ट रूपसे नहीं बढ़ाई है। कताईके बारेमें भी यही बात है। मैंने कोई भी चतुर कतैया ऐसा नहीं देखा है जो मनबहलावके तौरपर भी सूत कातनेको रुचिकर और ऊँचा उठानेवाला विषय न मानता हो। पियानोपर सिर्फ पैंपां करनेसे तो पियानो सुननेमें अत्यन्त रुचि रखनेवाले मनुष्यके सिरमें भी दर्द हो सकता है; और जिसे उसमें कुछ भी रुचि नहीं है, कुशल वादकका पियानो बजाना उसे भी अपनी ओर खींच लेगा। चरखेके सम्बन्धमें भी ऐसी ही बात है। यहाँ मेरा मतलब चरखेका मनबहलाव करनेकी शक्ति दिखाना नहीं है; बल्कि इस सच्चाईको प्रकाशमें लाना है कि अगर राष्ट्रीय शालाओंमें चरखा चलाना सिखाना है तो इसके लिए ऐसे ही शिक्षक चाहिए जो चरखा चलाना बहुत अच्छी तरह जानते हों और जो अपने शिष्योंको यह कला धैर्यपूर्वक सिखा सकें। हम अपने ही अज्ञान या उदासीनतासे अपने छात्रोंमें ऐसी एक कलाके प्रति घृणा पैदा न कर दें, जो राष्ट्रके लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

ईमानदारीका तकाजा है कि जिन शिक्षकोंको कातना न आता हो या जिनका उसमें विश्वास न हो, वे नौकरी भले ही छूट जाये मगर साफ-साफ कह दें कि वे अपने स्कूलोंमें चरखेका कोई काम नहीं करेंगे। अगर हम सच्चे हैं तो अन्तमें यह हमारे लिए लाभदायक ही सिद्ध होगा। किन्तु अगर हम सच्चे नहीं हैं तो फिर हमारा कल्याण असम्भव है। हाथ कताई जैसे इस महान आन्दोलनकी सफलता एकमात्र कार्यकर्त्ताओंके चारित्र्यपर ही निर्भर है; किन्तु अगर कार्यकर्त्तागण ढोंग करनेपर तुल जायेंगे तो वह सफल नहीं हो सकता। मैं लगे हाथों राष्ट्रीय शालाओंके प्रबन्धकोंको यह भी याद दिला दूँ कि अन्तमें तकली चरखेसे अधिक लाभदायक और अच्छी साबित होगी। अच्छा सूत कातनेवाले लड़कोंको अच्छे चरखे दिये जा सकते हैं, बशर्ते कि वे हर महीने कमसे-कम कुछ सूत ऐसा कातनेका जिम्मा लें, जो एक-सा और मजबूत हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २७-१-१९२७

१८. टिप्पणियाँ

एक भली अंग्रेज महिला

उन थोड़ेसे लोगोंके अलावा जो कुमारी फ्लोरेन्स विंटरबॉटमसे निजी तौरपर सम्पर्कमें आये, भारतमें अन्य लोग इस भली अंग्रेज महिलाके बारेमें कुछ नही जानते। एक मित्रने इंग्लैंडसे सूचना भेजी है कि उनका अभी-अभी देहावसान हो गया है। जो स्त्री और पुरुष केवल सेवाके भावसे सेवा करते हैं वे उनमें से एक थी। वे अंग्रेजोंके उस वर्गके लोगोंमें से थी जो तिरस्कार, उपहास और विरोधके बावजूद उपेक्षित सेवा-क्षेत्रोंकी तलाश करके उन्हे अपना लेते हैं। वे एथिकल मूवमेन्ट (नैतिक-आन्दोलन) के मार्गदर्शनके लिए प्रकाशरूप थी और कुछ समयतक यूनियन ऑफ एथिकल सोसायटीकी अध्यक्ष भी रही थी। वे एमर्सन क्लबकी सचिव थी। मुझे सन् १९०६ में उनके सम्पर्कमें आनेका सौभाग्य उस समय प्राप्त हुआ था जब मै दक्षिण आफ्रिकाके प्रथम भारतीय शिष्टमण्डलको लेकर इंग्लैंड गया था। मैं उनके बारेमें कुछ नही जानता था, किन्तु उन्होंने लन्दनके प्रमुख दैनिकोंके किन्ही महत्त्वहीन कोनोंमें पड़ी हुई शिष्ट-मण्डलकी कार्रवाईसे सम्बन्धित खबरें पढ़कर हमें ढूँढ़ लिया। उन्होने मेरे भाषण करानेके लिए सभाएँ की; उक्त समस्याका अध्ययन किया और उन्होंने कई तरहसे हमारे पक्षका समर्थन किया। यह उस समयकी बात है जब इंग्लैंडमें हमारा समर्थन करनेवाले लोग गिने-चुने थे। फिर तो वे दक्षिण-आफ्रिकाके हमारे मामलेमें लगातार कष्ट उठाकर हमारे हितोंका ध्यान रखनेवाली पक्षपोषिका बन गईं। उनके सम्पर्कमें आनेवाले सभी लोगोने देखा होगा कि वे कितनी निर्भय थी और सत्यका पालन केवल नीतिके रूपमें नही, बल्कि सत्यके खातिर ही करती थी। वे सब बातोंपर असाधारण रूपसे निष्पक्ष होकर विचार कर सकती थी। यद्यपि इंग्लैंडके प्रति उनकी भक्ति अडिग थी, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंके प्रति भी उनकी भक्ति उतनी ही पक्की थी। उनकी देशभक्ति ऐसी तो थी ही नही कि वे इंग्लैंडकी हर अच्छी बुरी चाहे जैसी बातको उचित ही कहें। जब लोग मुझसे यह कहते है कि अंग्रेज लोगोंपर अहिंसाका कोई प्रभाव नही पड़ा है तब कुमारी फ्लोरेन्स विंटरबॉटम और उनके जैसे अन्य व्यक्तियोंके उदाहरणोंका खयाल करके अहिंसामें, अंग्रेजोके स्वभावमें — अथवा उसे मानवका स्वभाव कहें तो और भी अच्छा — मेरी श्रद्धा और भी बढ़ जाती है। परमात्मा उनकी आत्माको शान्ति दे।

अस्पतालोंमें खादी

अखिल भारतीय चरखा संघके बम्बईके खादी भण्डारने खादीके सम्बन्धमें अत्यन्त मनोरंजक जानकारीसे भरी हुई एक बहुत ही सादा और सुन्दर गुजराती पुस्तिका प्रकाशित की है। इस पुस्तिकाके ६२ वें और ६३ वें पृष्ठोंपर इस बातका उल्लेख

है कि बम्बईनिगमने ११,००० रुपयेकी खादी खरीदी और वह किंग एडवर्ड मेमोरियल अस्पतालमे काममे लाई गई। इस विवरणमें खरीदी हुई चीजोंकी सूची दी गई है। इन चीजोंमें गद्दे, खोल, काँचोके झाड़न, पैरोंकी पट्टियाँ, मुँह पोंछनेके तौलिये, आड़ पर्दे, खिड़कियोंके पर्दे, पायजामे, घाघरे, लबादे, मेजपोश, सफेद कम्बल, पलंगकी चद्दरे बड़े तौलिये, सर्जनोंके जूते, सर्जनोंके चोगे, सर्जनोंके कपड़े आदि हैं। यदि सब सरकारी अथवा निजी अस्पतालोंमें एवं इसी प्रकारकी अन्य सहयोगी संस्थाओमें खादीके ही कपड़े खरीदे जायें तो इस समय भारतमें वर्ष-भरमें जितनी खादी बनती है, वह सबकी सब सिर्फ इन्हींमें खप जायेगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि इससे फिर [पहननेके लिए] खादी बचेगी ही नही। जब खादीकी माँग स्वाभाविक हो जायेगी और घीकी तरह खादी आम जरूरतकी चीज बन जायेगी तब खादीकी बिक्रीका इन्तजाम करनेके लिए खादी-कार्यकर्त्ताओंकी जरूरत नहीं रहेगी। तब सब खादी-कार्यकर्त्ता केवल उत्पादनके कार्यमें ही लगा दिये जायेंगे; इससे खादीका असीमित उत्पादन होने लगेगा और हमारी खादीकी माँग पूरी होती रहेगी। सरकारी संस्थाएँ भी पूरे हृदयसे खादीका प्रयोग न करें इसका तो कोई कारण नहीं है; किन्तु मेरी सम्मतिमें यह इस बातका सूचक होगा कि सरकारका हृदय परिवर्तन हो रहा है। स्वराज्यवादी कौंसिल-सदस्य इस बारेमें कमसे-कम सरकारकी परीक्षा तो कर ही सकते हैं।

खादी-कार्यकर्त्ताओंसे

श्रीयुत विठ्ठलदास जेराजाणीने आम तौरपर मिलनेवाली खादीकी धोतियोंकी इस खराबीकी ओर ध्यान खींचा है कि उनकी किनारियाँ फट जाती हैं। धोतियों और साड़ियोंमें सबसे ज्यादा जोर तो किनारियोंपर ही पड़ता है। इसलिए उनका सुझाव है कि किनारियोंकी बुनावटपर थोड़ा ध्यान देनेसे यह दोष दूर किया जा सकता है। इसके लिए किनारी आधा इंच या पौन इंच, बटदार दुहरे धागेसे बुनी जानी चाहिए। किनारीका सूत खास तौरसे मजबूत चुना जाना चाहिए और इस चुने हुए सूतका बटा हुआ धागा लेकर ऊपर बताइ विधिसे किनारी बुनी जानी चाहिए। यदि किनारीका धागा खास तौरसे तैयार करा लिया जाये और जिस तरह मामूली सूत बुनकरोंको दिया जाता है उसी तरहसे वह भी दिया जाने लगे तो इस काममें आसानी रहेगी और खर्च भी कम पड़ेगा। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए प्रत्येक कताईकेन्द्रको किनारीका सूत जमा रखना पड़ेगा। कई केन्द्रोंमें ऐसा किया भी जा रहा है, किन्तु सभी जगह ऐसा नही हो रहा है। खादीका कार्य बढ़नेके साथ-साथ यदि बिना किसी अपवादके सभी धोतियाँ और साड़ियाँ मजबूत किनारीकी नही बनाई जायेंगी तो हमारे पास शिकायतोंकी भरमार हो जायेगी। जो लोग खादीके विशेष प्रेमी है वे तो जैसी खादी मिले वैसीमें सन्तोष कर लेते हैं; किन्तु जो अन्य लोग अब खादी खरीदने लगे हैं और जिनकी संख्या तेजीसे बढ रही है, वे किसी घटिया चीजसे सन्तुष्ट नही होंगे। वे तो यह आग्रह करेंगे कि खादीमें मजबूती, खूबसूरती, तरह-तरहके नमूने और सस्तापन सभी बातें हों। हमें लोकरुचि और जनताकी माँगको ध्यानमें रखकर यथासम्भव ऐसी व्यवस्था करनी ही पड़ेगी।

'बिना ज्ञानके समझना'

एक मित्रने मुझे अपने मौनवारपर उपयोग करनेके लिए कुछ उद्धरण भेजे हैं। मैं यहाँ इनमें से एक उद्धरण, जो हीरोथियसकी रचनामें से लिया गया है, पाठकोंके उपयोगके लिए दे रहा हूँ :

> जो शब्द और ज्ञानसे परे है उसे बिना शब्दोंके कहना और बिना ज्ञानके समझना ही मुझे ठीक लगता है। मैं समझता हूँ कि रहस्यपूर्ण नीरवता और रहस्यमयी शान्तिमें ही समस्त रूपोंका विलय होता है; अतः तू मौन रहकर रहस्यमय ढंगसे उस महाप्रभुसे पूर्ण और पुरातन सम्बन्ध स्थापित कर।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २७-१-१९२७

१९. भाषण : खड़गपुरमें[1]

२७ जनवरी, १९२७

महात्माजीने मानपत्र भेंट करनेके लिए संस्थाओंको धन्यवाद दिया, परन्तु समयकी कमीके कारण सभीको अलग-अलग उत्तर देनेमें असमर्थता प्रकट की। उन्होंने कहा कि मानपत्रोंमें उल्लिखित विषयोंपर अपने विचार मैं अन्य भाषणोंमें व्यक्त कर चुका हूँ। उन्होंने श्रोताओंसे उन भाषणोंको समाचारपत्रोंमें से पढ़ लेनेका अनुरोध किया।

महात्माजीने राष्ट्रीय पाठशालाको सुव्यवस्थित ढंगसे चलानेके लिए खड़गपुरके लोगोंको धन्यवाद दिया और कहा कि मुझे आशा है कि आप इसको इसी तरह चलाते रहेंगे। मुझे खेद है कि आज प्रातःकाल खड़गपुरके कुछ लोगोंने मेरे पास आवेदन भेजा है, जिसमें प्रार्थना की गई है कि इस पाठशालाको सरकारी विश्वविद्यालयके साथ फिरसे सम्बद्ध करनेकी अनुमति दी जाए। परन्तु पूछताछ करनेपर संस्थाके विरोध में कोई भी मुझे कुछ नहीं बता सका। केवल एक यही दलील वे दे पाए कि बहिष्कार-मात्र असफल रहे हैं। और जब वकील और परिषदके सदस्य अदालतों और कौन्सिलोंमें वापस चले गये हैं, तब विद्यार्थियोंको भी [सरकारी विद्यालयोंमें] वापस जानेकी अनुमति मिल जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति अपनी अन्तरात्माके आदेशको न मानकर दूसरे गलत लोगोंका अनुसरण इसलिए क्यों करे कि वे गिनतीमें ज्यादा हैं। मनुष्यका यह कर्त्तव्य है कि सार्वभौम विरोधके बावजूद वह सचाईपर दृढ़ रहे। उन्होंने उन विद्यार्थियों और अध्यापकोंको बधाई दी, जो अब भी राष्ट्रीय-शिक्षाके आदर्शको ग्रहण किये हुए हैं। कोई मानवीय संस्था ऐसी

१. यह भाषण यूनियन कमेटी, सन्थाल, हिन्दूसभा, गोशाला और आर्य समाज द्वारा दिये गये मानपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

नहीं, जो बिलकुल दोषरहित हो। उन्होंने आलोचकोंसे कहा कि वे लोग आयें और यदि राष्ट्रीय पाठशालामें कोई त्रुटियाँ हों तो उन्हें सुधारें। उन्होंने कहा कि मैंने १९२० में प्रत्येक भारतीयके लिए धार्मिक कर्त्तव्यके रूपमें असहयोगका विधान किया था। लोगोंकी कमजोरीकी वजहसे यह कार्यक्रम पर्याप्त अवधितक नहीं चल सका। परन्तु यदि उस आन्दोलनसे कुछ [अच्छी] चीजें अस्तित्वमें आईं, तो अन्दोलनकी समाप्तिके साथ ही उन्हें भी नष्ट कर देनेका कोई कारण नहीं है। उन्होंने कार्य-कर्त्ताओंसे हर हालतमें पाठशालाको चलाते रहनेकी अपील की।

आगे बोलते हुए महात्माजीने कहा कि मेरे दौरेका प्रयोजन सारे देशमें खद्दरका सन्देश देना है। मैं आपके पास उसी कामके लिये पैसा माँगने आया हूँ। उन्होंने कहा यह स्वयंसिद्ध सत्य है कि देशमें चरखा समाप्त हो जानेपर ही भारतकी घातक गरीबी शुरू हुई। भारतके प्राचीन वैभवको फिरसे लानेके लिये चरखेका पुनरुत्थान नितान्त आवश्यक है। उन्होंने कहा कि लोग प्रायः धार्मिक दृष्टिसे व्रत रखते हैं। परन्तु हजारों गरीब भारतीय आज केवल अन्नके अभावमें भूखे रह रहे हैं, व्रत नहीं रख रहे हैं। अन्नके अभावका कारण है कामका अभाव। उन्होंने कहा कि चरखा ऐसी चीज है जो भूखों रहनेवाले गरीब लोगोंको थोड़ा-बहुत काम दे सकता है। उन्होंने श्रोताओंसे अपील की कि वे इस आन्दोलनकी सफलताके लिए कार्य करना अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझें। एक समय था जब भारतमें चरखा घरके चूल्हे जैसा ही आवश्यक समझा जाता था। उन्होंने लोगोंसे अनुरोध किया कि वे इस छोटे परन्तु शक्तिशाली साधनको एक बार फिर वही महत्त्वपूर्ण स्थान दें। उन्होंने श्रोताओंसे अपील की कि सब लोगोंको विदेशी कपड़ोंका परित्याग करना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझना चाहिए और वही शुद्ध खादी उन्हें पहननी चाहिए जिसे उनके भाइयोंने बुना हो और जिसका सूत उनकी भूखी बहनोंने काता हो।

भाषण जारी रखते हुए महात्माजीने अस्पृश्यतापर कुछ शब्द कहे। उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता निश्चित ही धर्मकी आड़में चली आ रही एक कुरीति ही है। अतः यह और भी अधिक तिरस्करणीय है। उन्होंने हिन्दुओंसे स्वामी श्रद्धानन्दके नामपर अपील की कि वे इस विनाशकारी परम्पराको समाप्त कर दें। उस महान सन्तके नामकी स्मृति बनाये रखनेका सर्वश्रेष्ठ तरीका यही है कि इस बुराईको दूर कर दिया जाए। उन्होंने आशा प्रकट की कि हिन्दू और मुसलमान स्वामी श्रद्धानन्दके बहे इस रक्तसे अपना हृदय धोकर शुद्ध बना लेंगे और उन्हींकी तरह निर्भीक होकर हाथमें हाथ मिलाकर अपेक्षित उद्देश्यकी ओर बढ़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ४-२-१९२७

२०. भाषण : जमुईमें

२७ जनवरी, १९२७

महात्माजीने थैली भेंट करनेके लिए अखिल भारतीय चरखा संघकी ओरसे लोगोंको धन्यवाद दिया और कहा कि यह पैसा अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक कोषके हिसाबमें जमा कर दिया जायेगा। उन्होंने उन परिस्थितियोंका हवाला दिया, जिनमें इस कोषको आरम्भ किया गया था और कहा कि इस कोषको उस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए काममें लाया जायेगा जो मृत्युके समय देशबन्धुके हृदयको सबसे ज्यादा प्रिय था और वह है — खद्दरका काम। उन्होंने कहा कि कोषके लिए धन-संग्रहका कार्य एक वर्षके लिए बन्द कर दिया गया था, क्योंकि मैंने एक वर्षतक दौरा न करनेकी प्रतिज्ञा ली थी। परन्तु अब मेरी प्रतिज्ञाकी अवधि पूरी हो चुकी है। मुझे आशा है कि मैं कोषके लिए धन-संग्रहकी दृष्टिसे सारे देशका दौरा करूँगा।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि यदि आप देहातोंकी उन्नति चाहते हैं, यदि आप गरीबोंकी सहायता करना चाहते हैं, यदि आप ग्रामवासियोंसे अपना शुद्ध सम्बन्ध चाहते हैं तो आप उसके लिए केवल एक ही रास्ता अपना सकते हैं — और वह है चरखा। आपने चिरकालतक गरीबोंकी उपेक्षा करके पाप किया है। आप गरीब खेतिहरोंकी मेहनतकी कमाईपर निर्वाह करते रहे हैं। आपने उनका वैसा ही शोषण किया है जैसा यूरोप एशियाका शोषण कर रहा है। पापोंके दण्डस्वरूप आप लोग इस वर्तमान दुर्दशाको प्राप्त हुए हैं। आपको प्रायश्चित्त करके इन सब पापोंका निराकरण करना चाहिए और इसके लिए उन लोगोंकी सेवा करनी चाहिए, जो इतने समयसे आपकी सेवा करते आये हैं। यह सब कैसे सम्भव होगा। उन्होंने कहा कि सब लोगोंके लिए गाँवोंमें जाना और व्यक्तिगत रूपमें मजदूरों और खेतिहरोंकी सेवा करना सम्भव नहीं है। परन्तु आप किसी रूपमें उन्हें आर्थिक सहायता पहुँचा कर उनकी सेवा कर सकते हैं और यह सेवा उन्हें काम देकर की जा सकती है।

भाषण जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि केवल कताई ही एक ऐसा उद्योग है जो प्रत्येक कुटीरमें पनप सकता है। इस काममें बड़े-छोटे, अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, पढ़े-बेपढ़े सभी लोग भाग ले सकते हैं। उन्होंने कहा कि चरखेपर काम करना महायज्ञ है। उन्होंने सबको इसमें भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किया। उन्होंने श्रोताओंसे आग्रह किया कि खद्दरको सभी किस्मके कपड़ोंपर तरजीह देते हुए प्रयोगमें लायें। उन्होंने कहा कि खादी पहननेके विरोधमें यह निराधार तर्क दिया जा सकता है कि वह खुरदरी और मँहगी होती है। परन्तु क्या आप इसलिए कि आपकी माताका दिया भोजन अपेक्षतः घटिया किस्मका है उसे अस्वीकार कर घर-घर अच्छा खाना माँगते

फिरेंगे। खद्दर धीरे-धीरे अधिक बढ़िया और अधिक सस्ता बनता जा रहा है। यदि आप इसे पर्याप्त संरक्षण दें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यह और भी बढ़िया और सस्ता हो जायेगा। उन्होंने कहा, इस समय खद्दर पहननेमें कितना ही त्याग क्यों न करना पड़े, अपने पिछले पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिए उसे पहनना ही चाहिए।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता हिन्दूसमाज-व्यवस्थापर कलंक है। हिन्दू यदि जातिके रूपमें जीवित रहना चाहते हैं, तो उन्हें जितनी जल्दी हो सके यह कलंक मिटा देना चाहिए। उन्होंने कहा कि जिस रूपमें छुआछूतका आज प्रचलन है, उसका शिक्षण न तो मनुने दिया है और न उपनिषदोंने ही। उन्होंने हिन्दुओंसे स्वामी श्रद्धानन्दके नामपर अपील की कि वे इस विनाशकारी परम्पराको समाप्त कर दें। उन्होंने आशा प्रकट की कि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही कायरताको छोड़ कर, यथासम्भव हर तरीकेसे अपने आपको स्वराज्यके लिए तैयार करके, उस महान संन्यासीकी हत्यासे सबक लेकर अच्छे कामोंमें जुट जायेंगे।

भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने कहा कि जो थैली मुझे भेंट की गई है, उसमें सभामें उपस्थित सभी लोगोंका दान शामिल नहीं हुआ है। उन्होंने अपील की कि जिन्होंने पहलेसे कुछ नहीं दे रखा है, वे शक्ति-भर खादीकार्यके इस कोषमें अपना हिस्सा दें और इस प्रकार महान देशबन्धुकी स्मृतिका समादर करें। उन्होंने श्रोताओंसे प्रार्थना की कि वे सभामें भी बिक्रीके लिए रखा गया खद्दर खरीदें।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ४-२-१९२७

२१. सम्मति: वनिता विश्राम, शाहबादकी दर्शक पुस्तिकामें

पौष कृष्ण १०, १९८३ [२८ जनवरी, १९२७]

इस वनिता विश्राम[को] देखकर मुझे जितना आनंद हुआ इतना हि दुःख हुआ। दाताके लीये मनमें आदर पैदा हुआ और मकानकी शांति इत्यादि देखकर आनंद हुआ परंतु सात वर्षकी विधवाको देखकर मुझे दुःख हुआ। संचालकोंसे मेरी प्रार्थना है कि ऐसी बालाओंको वे विधवा न समझें। ऐसा समझनेमें धर्म नहि परंतु अधर्म है। ऐसी बालिका कुमारिका मानी जायं।

मोहनदास करमचंद गांधी

मूल (जी० एन० ८०४४) की फोटो-नकलसे।

२२. दीक्षांत भाषण : बिहार विद्यापीठ, पटनामें[1]

३० जनवरी, १९२७

गांधीजीने भाषणके आरंभमें आशा व्यक्तकी कि स्नातकोंने आज यथाविधि जो पवित्र संकल्प किये हैं वे उनका जीवनमें पालन करेंगे और कहा: मैंने यही बात गुजरात विद्यापीठके दीक्षांत समारोहमें कही थी कि यदि विद्यापीठ द्वारा एक भी आदर्श विद्यार्थी और आदर्श अध्यापक प्रस्तुत हो सके तो उसे अपने अस्तित्वकी सार्थकता सिद्ध करनेके लिए इससे अधिक कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि इन संस्थाओंका प्रयोजन क्या है? मणियोंकी खोज! इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि मणियाँ कम हैं या ज्यादा। अवश्य ही वे 'निर्मलतम एवं सौम्य प्रकाश फैलानेवाले'[2] हों। आगे बोलते हुए गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकाके संस्मरण सुनाये:

मैं दक्षिण आफ्रिकामें बीस वर्ष रहा। लेकिन मेरे मनमें हीरेकी खानें देखनेका विचार कभी नही आया। इसका एक कारण तो यह था कि मुझे आशंका थी कि शायद एक 'अछूत' को वहाँ प्रवेश न करने दिया जाए और उसका अपमान किया जाए। परन्तु जब गोखले वहाँ थे, तब मैंने इसे अपना कर्त्तव्य समझा कि वहाँका मुख्य उद्योग उन्हें दिखाया जाए। उनका अपमान होनेकी आशंका नही थी। इसलिए हम वहाँकी सबसे बड़ी खान देखने गये। वहाँ हमने जो दृश्य देखे उन्हें मैं अभी भूला नही हूँ। खोदी हुई मिट्टी एवं पत्थरोके पहाड़ों जैसे कितने ही ढेर तो थे परन्तु हीरा एक भी नही। जब लाखों टन मिट्टी और पत्थर खोदते हुए कई लाख लोग भूगर्भमें समा जाते थे तब कहीं मुट्ठीभर कीमती पत्थर मिल पाते थे। जब कुल्लिनानने, जो इस हीरेकी खानका स्वामी था, वर्षोंकी मेहनत और लाखो पौंड खर्च करनेके बाद एक पत्थर पाया, जो जारके मुकुटकी शोभा बढ़ानेवाले हीरे एवं कोहनूर हीरेसे बड़ा था, और जब उसका नामकरण स्वामीके नामपर किया गया, तब आप उसके हर्षकी कल्पना कर सकते हैं। उसे लगा कि उसके जीवनका उद्देश्य पूरा हो गया है। यदि हम किसी ऐसी वस्तुपर जिसका महत्त्व केवल कृत्रिम है, चाहे जितना श्रम और धन लगानेमें संकोच नही करते तो मानवीय खानसे हीरे निकालनेमें हमें कितना खर्च करना चाहिए? हमें इसी भावनासे शिक्षणका काम जारी रखना चाहिए। हीरेकी यह उपमा उपयुक्त है। यह रस्किन द्वारा 'आत्माओंका निर्माण' वाक्यांशमें प्रयुक्त उपमासे अधिक उपयुक्त है। वह निर्माण केवल ईश्वरके हाथमें है। हम मरणधर्मा मनुष्योंको ईश्वरने हमारे भीतर जो कुछ पहले ही से छिपाकर रखा है, उसकी खोज भर करनी है।

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
२. "ऑफ दि प्योरेस्ट रे सिरीन" ग्रे का प्रसिद्ध वाक्यांश।

उसके बाद उन्होंने सभी असहयोगी संस्थाओंके भावात्मक तथा निषेधात्मक पहलुओंका ब्यौरा दिया। निषेधात्मक पहलू जिसमें सरकारसे सब तरहका सम्बन्ध-विच्छेद भी शामिल है — सभी वर्तमान संस्थाओं द्वारा निष्पन्न हो चुका है। जिन विद्यार्थियों एवं अध्यापकोंने मेरी पुकार सुनी, जब मैं उनकी संख्या देखता हूँ तो मुझे रत्तीभर भी खेद नहीं होता। इस बातका भी मुझे पश्चात्ताप नहीं है कि उनमेंसे बहुतसे वापस चले गये हैं और बहुतसे असन्तुष्ट एवं नाराज हैं। मुझे उनके लिए दुःख तो होता है, मुझे उनके प्रति गहरी सहानुभूति है — परन्तु मुझे इसपर कोई खेद या पश्चात्ताप नहीं है।

ये परेशानियाँ और दुःख नित्य ही हमारे भाग्यमें है — इन्हें हमारे भाग्यमें नित्य होना ही चाहिए। यदि सत्यका पालन सुखकी अवस्थाका द्योतक हो, यदि सत्यकी कोई कीमत न चुकानी पड़े, और यदि सत्यपालनसे केवल सुख और आराम मिले, तो उसकी शोभा ही समाप्त हो जाये। आकाश भले ही सिरपर टूट पड़े, हमें सत्यका पालन करना नहीं छोड़ना चाहिए। सत्यका पालन करनेमें यदि हमें भारत-समेत सारे संसारसे हाथ धोना पड़े तो भी कोई बात नहीं। मृत्युपर्यन्त सत्यका पालन करते रहनेपर ही हम सत्यके सच्चे उपासक बनेंगे। हमें यह दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि हम ईश्वरके शासनमें, भारत तथा उन सब वस्तुओंको, जो हमें प्रिय हैं, फिरसे प्राप्त कर लेंगे। मैं जानता हूँ कि हमारे अध्यापकों एवं प्रोफेसरोंमेंसे बहुतसे परेशान हैं, कुछएक भूखों भर रहे हैं। राष्ट्रीय वातावरणकी उपयुक्त शुद्धिके लिए इस तरहकी सच्ची तपस्या अनिवार्य है।

यह इन संस्थाओंका नकारात्मक पहलू है। मुझे प्रसन्नता है कि इसे निभाया गया है और तपस्याका अधिकांश भाग पूरा हो चुका है। परन्तु इस द्विविधात्मक संसारका दूसरा भावात्मक पहलू भी है। यह ज्यादा स्थायी तो है; किन्तु साथ ही यह ज्यादा कठिन भी है। यह पहलू विद्यापीठ जैसी संस्थाओंको छोड़कर अन्यत्र कहाँ निष्पन्न किया जा सकता है? फिर गांधीजीने यूरोप एवं भारतमें अपनाई गई शिक्षा पद्धतिकी विषमताकी ओर ध्यान दिलाया। उन्होंने कहा :

यूरोपमें व्यक्तिकी विशेष प्रतिभाको ध्यानमें रखकर शिक्षा दी जाती है। एक ही बात तीन विभिन्न देशोंमें अपने-अपने देशकी संस्कृति एवं प्रतिभाको ध्यानमें रखकर तीन विभिन्न तरीकोंसे सिखाई जाती है। केवल हम लोग ही अंग्रेजोंकी पद्धतिका अन्धाधुन्ध अनुकरण करनेमें आनन्द मानते हैं। वर्तमान प्रणालीका उद्देश्य ही इतना है कि हम पश्चिमकी हू-ब-हू नकल करें। इसमें अजीब भी कुछ नहीं है। हमने अपने मामले उन अंग्रेजोंके सुपुर्द कर रखे है, जिन्होंने कभी हमें जाननेकी कोशिश नहीं की; यह उसका स्वाभाविक परिणाम है। बेचारा मैकॉले! वह क्या कर सकता था! वह हृदयसे विश्वास करता था कि हमारा संस्कृत-साहित्य अन्धविश्वासोंसे भरा है। वह वास्तवमें यही सोचता था कि पश्चिमी संस्कृतिके रूपमें वह हमें कुछ पथ्य दे रहा है। इस तरह मैकॉलेने अनजाने जो हमारा विनाश किया, उसके लिए हम उसे भला-

बुरा न कहूँ। शिक्षाका माध्यम अंग्रेजी होनेके कारण हम सारी मौलिकता खो बैठे हैं। हमारी स्थिति बिना पंखोके पक्षियों जैसी है। हमारी उच्चतम अभिलाषा यह रहती है कि हम कही क्लर्क या सम्पादक बन जायें। वर्तमान शिक्षा-पद्धतिमें हममेंसे कोई एक भलेही लॉर्ड सिन्हा बन जाये परन्तु हममेंसे प्रत्येकको बहुत हुआ तो भारी भरकम विदेशी शासनतन्त्रका एक पुर्जा बनानेके लिए ही तैयार किया जा रहा है। मुजफ्फरपुरमें एक लड़का मेरे पास आया और पूछने लगा — क्या मैं राष्ट्रीय पाठशालामें जाकर किसी दिन लाट साहब बन सकता हूँ? मैंने कहा नही, तुम अपने गाँवके लाट साहब बन सकते हो; लॉर्ड सिन्हा नही बन सकते। यह तो केवल लॉर्ड बर्कनहेडके हाथकी बात है।

लोगोंके मनपर गरीबोंके पैसेसे अधिकाधिक संख्यामें महलों जैसे शिक्षा भवन बनानेकी जो सनक सवार है, गांधीजीने उस बातका उल्लेख किया और कहा कि ये भवन ऐसी शिक्षा देनेके लिए बनाये जा रहे है, जिससे गरीबोंको वंचित रखा जाता है।

मुझे एक बार इलाहाबादमें अर्थशास्त्र प्रतिष्ठान (इकोनोमिक इंस्टीटयूट) देखनेका मौका मिला। प्रो० जेवन्सने मुझे यह भवन दिखाया (यदि मुझे ठीक याद है) और जैसे ही उन्होने यह कहा कि इसके बनानेमें ३० लाख रुपये लगे हैं; वैसे ही मैं काँप उठा। लाखोंको भूखों मारे बिना आप ऐसे महल नही बना सकते। नई दिल्लीको देखें, वह भी यही कहानी सुनाती है। रेलोके प्रथम और द्वितीय श्रेणीके डिब्बोमें जो शानदार सुधार हो रहे हैं, उन्हें देखिये। पूरी प्रवृत्ति विशेषाधिकार प्राप्त बहुत थोड़े लोगोके बारेमें सोचने एवं गरीबोंकी उपेक्षा करनेकी है। यदि यह शैतानका कार्य नही तो क्या है? यदि मुझे सत्य कहना ही है, तो मैं इससे कम कुछ नही कह सकता। मुझे उनपर कोई रोष नहीं, जिन्होंने इस पद्धतिको जन्म दिया है। वे इसके अलावा और कुछ कर ही नही सकते थे। एक हाथी चीटीके बारेमें कैसे सोच सकता है? जैसे कि सर लैपेल ग्रिफिनने दक्षिण आफ्रिकी प्रतिनिधि मंडलके सदस्यके रूपमें भाषण देते हुए कहा था "जिसपर पड़ती है, केवल वही जानता है।"[1] हमारे हर मामलेका प्रबन्ध उनके हाथोमें है और संसारमें अच्छीसे-अच्छी नीयत रहनेपर भी उनमेंसे अच्छेसे-अच्छा व्यक्ति भी हमारे विषयमें इतना अच्छा प्रबन्ध नही कर सकता, जितना हम स्वयं कर सकते हैं, क्योंकि उनकी विचारधारा हमारी विचारधारासे नितान्त भिन्न है। वे विशेषाधिकार प्राप्त थोड़ेसे लोगोंके सम्बन्धमें सोचते हैं। हमें लाखो करोड़ोके विषयमें सोचना है . . .।

स्नातक डिग्रियाँ ले लें, जो चाहें सीख लें, परन्तु उनका सारा ज्ञान चरखेपर केन्द्रित हो। उनका अर्थशास्त्र और उनका विज्ञान चरखेका उद्देश्य पूर्ण करनेमें सहायक हो। चरखेको ताकपर उठा कर न रख दें। चरखा हमारी गतिविधियोके सौर-मण्डलका सूर्य है। इसके बिना हमारे विद्यापीठ केवल नामके विद्यापीठ हैं। लॉर्ड इर्विनने ऐसा कहते समय

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १२२।

मानो वेदवाक्य ही कहा कि हमें कौंसिलों द्वारा किसी भी प्रकारकी प्रगतिके लिए ब्रिटिश संसदकी ओर देखना चाहिए। हमें उनके प्रति रोष नहीं करना चाहिए। वह केवल संसद ही की बात सोच सकते हैं। उनके सौर-मंडलका सूर्य लंदन है, हमारे सौर-मंडलका है चरखा। हो सकता है, मैं इस सम्बन्धमें गलतीपर होऊँ; परन्तु जबतक इसे गलत सिद्ध करके नहीं दिखाया जाता, मैं इस विश्वासको सँजोकर रखूँगा। चरखा किसी भी दशामें किसी भी व्यक्तिको हानि नहीं पहुँचा सकता और इसके बिना हम, और यदि मैं कहूँ, तो यह भी कह सकता हूँ कि संसार भी नष्ट हो जायेगा। हम जानते हैं कि युद्धके दौरान असत्यका श्रेष्ठ धर्मके रूपमें प्रचार किया जाता था। उसके बादसे यूरोपको कैसे-कैसे अनुभव हो रहे हैं। संसार युद्धके परिणामोंसे थक चुका है। जैसे चरखा आज भारतको शांति दे सकता है, सम्भव है वह कल संसारको शांति दे सके, क्योंकि चरखेका उद्देश्य यह नहीं है कि अधिकतम संख्यामें लोगोंकी भलाई हो, अपितु यह है कि सबकी भलाई हो। जब कभी मैं किसी व्यक्तिको गलती करते देखता हूँ, मैं अपने मनमें कहता हूँ, गलती मैंने भी की है। जब मैं किसी विषयासक्त व्यक्तिको देखता हूँ, मैं सोचता हूँ कि मैं भी कभी ऐसा ही था। इस तरह मैं संसारमें हर व्यक्तिके साथ अपना नाता महसूस करता हूँ और मुझे लगता है कि जबतक हममें से मामूलीसे-मामूली व्यक्ति भी सुखी नहीं हो जाता मैं सुखी नहीं हो सकता। मैं चाहता हूँ कि आप इसी प्रयोजनके लिए चरखेको अपने अध्ययनका केन्द्र बनायें। जैसे प्रह्लादको सब जगह राम ही दिखाई देते थे और तुलसीदासको कृष्णकी मूर्तिमें भी राम ही दिखाई दिये, उसी तरह आप अपने सारे अध्ययनको चरखेकी सम्भावनाएँ समझनेमें लगायें। हमारा विज्ञान, हमारी बढ़ईगीरी, हमारा अर्थशास्त्र इन सबको इस तरह प्रयोगमें लाया जाये कि चरखा हमारे गरीबसे-गरीब लोगोंके लिए मुख्य आधार और स्तम्भ बन जाये। मैं जानता हूँ कि हम गुजरात विद्यापीठमें यह सब नहीं कर सके हैं, आप भी यह कुछ नहीं कर रहे हैं। मैं यह बात शिकायतकी भावनासे नहीं कह रहा हूँ। मैं केवल अपने हृदयकी पीड़ा बाहर उँडेल रहा हूँ, ताकि आप इस पीड़ाको समझ सकें।

भाषणके शेष अंशमें विद्यापीठकी सहायताके लिए अपील की गई। उसकी सभी उपस्थित जनोंपर बड़ी अच्छी प्रतिक्रिया हुई। २,००० रुपये देनेका वायदा किया गया और ६०० से ऊपर रुपये उसी जगह इकट्ठे किये गये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-२-१९२७

२३. भाषण: पटनामें, खादी प्रदर्शनीके उद्घाटनपर

३० जनवरी, १९२७

महात्मा गांधीने प्रदर्शनीका[1] उद्घाटन करते हुए कहा कि बड़े खेदका विषय है कि खादी-प्रदर्शनीके आयोजनकी आवश्यकता महसूस की गई। यह कदापि बधाई देनेका विषय नहीं है, क्योंकि आम तौरपर प्रदर्शनियां ऐसी वस्तुओंकी लगाई जाती हैं, जो लोकप्रिय न हों। आम किस्मके चावल अथवा गेहूँ या विदेशी तथा मिलमें बने कपड़ेकी प्रदर्शनी लगानेकी कभी आवश्यकता अनुभव नहीं की गई। क्योंकि देशका कोई भी कोना ऐसा नहीं होगा, जहां ये वस्तुएँ पर्याप्त मात्रामें उपलब्ध न हों। आयात किये हुए विदेशी कपड़े अथवा मिलमें बने हुए देशी कपड़ेमें कोई विशेष अन्तर नहीं है। मेरी नजरोंमें दोनों ही बराबर हैं। क्योंकि दोनों ही दशाओंमें पैसेका बहुत बड़ा भाग अमीर एवं बड़े-बड़े मिल-मालिकोंके पास चला जाता है। गरीब मजदूरोंको बहुत ही कम, वस्तुतः बहुत ही थोड़ा पैसा मिलता है। जब मैंने खद्दरका काम शुरू किया था तो अहमदाबादके बहुतसे मिल-मालिकोंने, जिनमेंसे बहुतोंको मैं अपना मित्र समझता था, कहा कि यह सब व्यर्थ है। उससे आपकी इच्छाके विपरीत लोगोंके बजाय हम मिल-मालिकोंको बहुत अधिक लाभ होगा, क्योंकि खादी कभी हमारा मुकाबला नहीं कर सकेगी। मिल-मालिकोंने सचमुच ही प्रतियोगितामें खादीको खत्म करनेके लिए कपासके बचे हुए कचरेसे एक नई किस्मका कपड़ा तैयार कर दिखाया। इन मिल-मालिकोंने ही अपने कपड़ेकी कीमतें बढ़ाकर और इसके अलावा बहुधा विदेशी उत्पादनको स्वदेशीके नामपर धोखेसे लोगोंके गले मढ़ कर बंगालमें स्वदेशीको खत्म कर दिया। उन्होंने मुझे इस बातकी याद दिलाई और ठीक ही दिलाई कि उनके मिल उद्योगका आधार देश-भक्ति अथवा जनताके प्रति प्रेम नहीं है; वरन् वह उनके लिए केवल व्यापार और उद्यमके रूपमें ही है; और उसका उद्देश्य अपने हिस्सेदारोंको ज्यादासे-ज्यादा लाभांश देना है। परन्तु जब बादमें उन्हें पता चला कि स्वदेशी आन्दोलनके दिनोंमें जो कुछ किये जानेकी कोशिश की जा रही थी, मैं उससे बिलकुल भिन्न दिशामें प्रयत्न कर रहा हूँ तो वे मेरे प्रयासोंकी सराहना करने लगे। आगे बोलते हुए गांधीजीने लोगोंसे आग्रह करते हुए कहा कि आप विदेशी अथवा मिलमें बने हुए कपड़ेको उपयोगमें न लायें। यह आपका धर्म है कि आप खादी, केवल खादी ही खरीदें। जैसे केवल पचास वर्ष पूर्व आपके वस्त्र केवल गाँवोंमें बनते थे उसी तरह अब फिर होना चाहिए। मैं चरखा, हाथ-कताई और हाथ-बुनाईके उन्हीं पुराने खुशहाल दिनोंको फिरसे

१. अखिल भारतीय चरखा संघकी बिहार-शाखा द्वारा श्रीमती राधिका सिन्हा इन्स्टीट्यूट हॉलमें आयोजित।

लाना चाहता हूँ। अर्थशास्त्रियोंका कहना है कि मैं असम्भव कार्य करना चाहता हूँ। कुछ लोग मजाकके रूपमें टीका-टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि जब मेरा देहान्त होगा तो मेरे मृत शरीरको जलानेके लिए लकड़ीकी कोई कमी नहीं पड़ेगी, क्योंकि मैंने चरखे बनवा रखे हैं; इस रूपमें मानो मैंने लकड़ीकी पर्याप्त व्यवस्था पहलेसे ही कर ली है। कुछ भी हो यह तथ्य है कि मिल-उद्योगमें गरीब मजदूरोंको एक रुपया उत्पादन मूल्यकी वस्तुमें कठिनाईसे एक पैसा मिलता है — रुपयेपर एक आना भी उन्हें कभी नहीं मिलता। महात्माजीने आगे बोलते हुए कुछ आँकड़ोंका हवाला देते हुए लोगोंकी आर्थिक स्थितिका विस्तारसे विवरण दिया। उन्होंने लोगोंकी आमदनीके दादाभाई नौरोजी, लॉर्ड कर्जन और आर० सी० दत्त द्वारा तैयार किये गये अनुमानको सामने रखा और कहा:

भारतकी प्रति-व्यक्ति आमदनीको बताने वाले छोटेसे निशानकी तुलनामें यह लम्बी लाल पट्टी[1] देखिए जो अमेरिकाकी प्रति-व्यक्ति आमदनीको बता रही है। वहाँ एक व्यक्तिकी प्रतिदिनकी आमदनी १४ रुपयेसे ऊपर है और यहाँ प्रतिदिन १।। आना है। अन्य देशोंकी आमदनीकी तुलना कीजिए क्रमशः इंग्लैंड, फ्रांस, जापानकी प्रतिदिनकी आमदनी ७, ६, और ५ रुपये है और यहाँ प्रतिदिन १।। आना औसत आमदनी है। यदि आप वेतन पानेवाले मन्त्रियों, कार्यकारी पार्षदों और कुछ एक वकीलों तथा उनसे कुछ कम लखपतियोंकी आमदनीको इस हिसाबसे अलग कर दें तो हमारे बहुसंख्यक गरीब लोगोंकी आमदनी इससे भी कम होगी। मैं आपसे बड़ी विनम्रतासे पूछता हूँ कि आप कोई उपाय बतायें जिससे इस स्वल्प आमदनीको बढ़ाया जा सके। मैं सभीसे यह पूछता रहा हूँ परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। गहन चिन्तन एवं हालके वर्षोंके दौरान लाखों लोगोंसे सजीव सम्पर्कके परिणामस्वरूप मैंने यह सुझाव दिया है कि इस आमदनी को बढ़ानेके लिए केवल चरखेको ही साधनके रूपमें अपनाया जा सकता है। . . .

इस[2] उत्पादनका अर्थ है ३०,००० रुपयोंका बिहारकी ३,००० गरीब महिलाओंमें वितरण। मेरे साथ दरभंगाके खादी केन्द्रोंमें आइये और देखिये कि वहाँकी हिन्दू एवं मुसलमान महिलाओंको चरखेने कितना उल्लास और कितनी प्रसन्नता दी है। यदि मैं इससे अधिक महिलाओंको काम नहीं दे सकता, तो यह मेरा नहीं, आपका दोष है। यदि आप उनके हाथों द्वारा बनाई गई वस्तुएँ खरीदनेकी चिन्ता नहीं करते, तो काम आगे नहीं बढ़ सकता। आपके द्वारा प्रत्येक गज खद्दर खरीदनेका मतलब उन महिलाओंके हाथमें कुछ पैसे रखना होगा। वे कुछ-एक पैसे ही होंगे, अधिक नहीं। परन्तु जहाँ पहले एक पैसेकी भी कमाई नहीं थी, वहाँ कुछ पैसोंका भी महत्त्व होगा। मैंने राजमहेन्द्र और बारीसालमें[3] पतित महिलाओंको देखा था। एक जवान

१. पटना विद्यापीठके विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न देशोंकी प्रति-व्यक्ति आय दर्शानेवाली तालिका।

२. यहाँ गांधीजीका इशारा खादीकी उत्पादन और बिक्री तालिकाकी ओर है।

३. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ९३-९६।

लड़कीने मुझसे पूछा "आपका चरखा हमें क्या दे सकता है?" उसने कहा, "जो आदमी हमारे पास आते हैं उनसे हमें कुछ-एक मिनटोंके ५ या १० रुपये मिल जाते हैं।" मैंने उसे बताया कि चरखेसे आपको उतना तो नही मिल सकता; परन्तु यदि आप लज्जास्पद जीवन जीना छोड़ दें, तो मैं आपको कातना और बुनना सिखानेका प्रबन्ध कर सकता हूँ और इनसे आपको समुचित जीविका कमानेमें सहायता मिल सकती है। उस लड़कीकी बात सुनकर मेरा दिल अन्दर ही अन्दर बैठ गया और मैंने ईश्वरसे पूछा कि मेरा भी जन्म स्त्रीके रूपमें क्यों नही हुआ। मेरा जन्म स्त्रीके रूपमें न होनेपर भी मैं स्त्री बन सकता हूँ और भारतकी उन स्त्रियोंके लिए ही, जिनमें अधिकाशको प्रतिदिन एक आना भी नही मिलता, मैं चरखा एवं अपना भिक्षापात्र लिये हुए देशभरमें चक्कर काट रहा हूँ।[1]

मैं आपसे यह विनती उन बहनोंके लिए करता हूँ। मैं सरकारसे विनती करनेमें भी कोई शर्म नही मानता। मैं खादी और चरखेके कार्यक्रमके लिए वाइसराय और मन्त्रियोंका सहयोग चाहता हूँ। आप, आपको जो विभाग सौंपे गये हैं उनसे मुझे पैसा दीजिए। अपने कर्मचमरियोंको खादी पहनाइये। अपने स्कूलोमें चरखे शुरू करवाइए। अपने आप खादी पहनिए।

उन्होंने कहा कि देशका यह मेरा तीसरा दौरा है। मेरा यह विचार है कि शिक्षित बिहारियोंमें से कुछ ही लोग प्रान्तके गाँवोंमें रहनेवाले गरीब लोगोंके उतने निकट सम्पर्कमें आये हैं, जितना मैं स्वयं आया हूँ। उनकी दुर्दशाका व्यक्तिगत रूपसे अध्ययन करनेके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि उनकी गरीबीको दूर करनेका एक-मात्र साधन चरखा है। कई लोगोंका कहना है कि असहयोग आन्दोलनके साथ खद्दर भी समाप्त हो गया है। परन्तु ऐसी बात नहीं है। इसके विपरीत खादीने बड़ी उन्नति की है। परन्तु मुझे उसकी प्रगतिसे सन्तोष नहीं है। करोड़ोंके लिए भोजन एवं कामकी व्यवस्था करना मेरा उद्देश्य है। परन्तु यह काम अभी लाखोंकी गिनतीतक भी नहीं पहुँचा है।...

मैंने खादीको सरकारी गैर-सरकारी और हिन्दू तथा मुसलमान दोनोंके लिए संयुक्त मंचके रूपमें पेश किया है। यदि हिन्दू यह सोचें कि इससे अधिकतर मुसलमानोंको लाभ होगा क्योंकि बुनकर [ज्यादातर] मुसलमान ही हैं या मुसलमान यह सोचें कि इसका लाभ हिन्दुओंको होगा क्योंकि अधिकतर हिन्दू महिलाएँ ही कताई करती हैं -- तो इसमें मेरा कोई बस नहीं है। वास्तवमें इससे दोनों जातियोंको लाभ होगा, क्योंकि बुनकर और कतैये हिन्दू और मुसलमान दोनों हैं। लोगोंकी यह भी शिकायत है कि खादी खुरदरी और घटिया किस्मकी होती है। परन्तु मैं पूछता हूँ कि क्या आप माताकी बनाई हुई रोटीको इस कारणसे अस्वीकार कर देंगे कि दिल्लीके बढ़िया

१. यह और इससे पिछला अनुच्छेद यंग इंडिया १०-२-१९२७ से और इससे आगेका एक अनुच्छेद नवजीवन ६-२-१९२७ से लिया गया है।

बिस्कुटोंके मुकाबलेमें वह घटिया है। मुझे ऐसी आशा नहीं है। गांधीजीने प्रो० एस० वी० पुणताम्बेकर एवं श्रीयुत वरदाचारी द्वारा लिखित पुरस्कृत "हाथ कताई और हाथ बुनाई" नामक निबन्धको ध्यानपूर्वक पढ़नेकी सलाह दी। उन्होंने भाषण समाप्त करते हुए सभी लोगोंसे, विशेषकर शिक्षित और धनी लोगोंसे, हार्दिक अपील की कि वे चरखा और खादीको अपनाकर देशमें उसके लिए वातावरण बनायें और कहा कि यदि एक बार ऐसा हो जाये तो उस प्रकारकी प्रदर्शनी, जिसका मैं इस शामको उद्घाटन करने जा रहा हूँ, फिर कभी लगानेकी कोई आवश्यकता नहीं होगी। आप गाँवोंमें बसनेवाले उन गरीब लोगोंके लिए कुछ करें जिनकी कीमतपर आप कस्बों और शहरोंमें चिरकालसे फलफूल रहे हैं? यह आपके योग्य काम है।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २-२-१९२७

२४. पत्र : मीराबहनको

३१ जनवरी, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे सभी पत्र मुझे समयपर मिल गये हैं। डाककी व्यवस्था बहुत ही अच्छी है। इस लगातार सफरके बावजूद कोई पत्र इधर-उधर नहीं हुआ है।

हम आज रातको बिहार छोड़ रहे हैं। इसका दुःख न हो, यह बात नहीं है। बिहारका मेरे लिए एक अपना अलग आकर्षण है।

मैं संक्षिप्त पत्र ही लिखूँगा, क्योंकि जितना समय मेरे पास है, उसमें मुझे बहुत लिखना है।

वहाँके प्रमुख मित्रोंको जमा करके तुम नीचे लिखा व्रत ले सकती हो, ताकि वे घबरायें नहीं। केवल तीन बार ही खाना खाओ और आखिरी खाना शामके सात बजेके बाद नहीं होना चाहिए। भाखरीपर[1] घी न चुपड़ा जाये। सब्जी नमक सहित या नमकके बिना साधारण उबली हुई हो। दूध बिना चीनीका हो, एक बारमें दो से ज्यादा सब्जियाँ न हों और तीनसे अधिक फल न हों। नीबू, शहद, शक्कर, नमक और सोडा डालकर पानी जितना चाहो पी सकती हो। फिलहाल यह व्रत २० मार्चतक रहे। दवाके तौरपर ली जानेवाली कोई चीज अलग न मानी जाये। बीमारीकी हालतमें इन चीजोंमें फेर-फार किया जा सकता है।

१. साधारणतया ज्वारकी मोटी रोटी।

मेरे खयालसे उपरोक्त प्रतिवन्धोंसे सारा काम चल जायेगा। इस मीयादको वढ़ाने न वढ़ानेके वारेमें जव हम मिलेंगे तव चर्चा करेंगे ही।[1]

जवतक तुम फुर्तीसे काम न कर सकने लायक मोटी न हो जाओ तवतक यह माननेका कोई कारण नही है कि तुम जरूरतसे ज्यादा मोटी हो। ऐसा होनेका कोई खतरा नही है। किसी भी सूरतमें, व्रतसे तो ऐसा कोई खतरा है ही नही।

मैंने तुम्हारी गुरुकुल-विरोधी रायको ध्यानमें रख लिया था; किन्तु मैंने उसके सम्वन्धमें कुछ कहना नही चाहा था। जो हमें पसन्द न हो ऐसी हर चीजकी आलोचनासे स्वतन्त्र निर्णय करने या उसे प्रकट करनेकी शक्ति मारी जाती है; खास तौरपर जव वह आलोचना प्रियजनोंकी तरफसे होती है। फिर भी मुझे खुशी है कि तुमने अपने-आप भूल सुधार ली है। इतनी ही वात है कि तुम्हे इन वातोंके वारेमें व्यर्थ परेशान नही होना चाहिए। आत्म-सुधारसे प्रफुल्लता आनी चाहिए।

अव इससे ज्यादा लिखना सम्भव नही है, क्योंकि मुझे तीन मील पैदल चलकर स्टेशन पहुँचना है। अव इतना ही वक्त है कि गाड़ी आरामसे पकड़ सकूँ।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

यात्राके मुख्य स्थान ये है। एक दिनमें तीन-तीन जगह जाना है।

२ गोंदिया

३ वर्धा

४ वणी

५ यवतमाल, वरार

६–७ अकोला

दूसरे स्थानोंकी तारीखें अभी निश्चित नही है। हाँ, ७ के वाद मुझे मिल सकें, इसके लिए पत्र खादी भण्डार जलगाँव (जी० आई० पी० रेलवे)के पतेसे भेजे जाने चाहिए।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०१) से।

सौजन्य : मीरावहन

१. मीरावहनने अपनी पुस्तकमें इस सम्वन्धमें लिखा है, "जहाँतक मुझे याद है मैंने इस भोजन सम्वन्धी व्रतको वापूकी इजाजतसे एक सालतक जारी रखा था और उसके वाद मुझे सादे भोजनकी आदत ही हो गई थी।"

२५. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सोमवार, पौष वदी १३ [३१ जनवरी, १९२७][1]

प्रिय बहनो,

फिर सोमवार आ पहुँचा। इस बार अभीतक तुम्हारा पत्र मुझे नहीं मिला। आज हम पटनामें हैं। यहाँ बहुत शान्ति है। इसी जगह राजेन्द्रबाबूका प्यारा विद्यापीठ है। यह स्थान ठेठ गंगाके किनारे खेतोंमें है। आसपास अन्य मकान नहीं हैं। दृश्य अच्छा कहा जा सकता है। विद्यापीठका वार्षिकोत्सव होनेके कारण विद्यार्थी और शिक्षक हर स्थानसे आये हैं। इसलिए आश्रमके तमाम मकान लोगोंसे भर गये हैं।

तुम्हारे लिए और आश्रमके लिए मैं कुछ काम बढ़ा रहा हूँ। यहांके कार्यकर्त्ताओंकी स्त्रियाँ हमारी स्त्रियोंसे ज्यादा असहायावस्थामें हैं। इनमेंसे कुछ थोड़े दिनोंके लिए वहाँ आना चाहती हैं। उन्हें मैं रोकना नहीं चाहता, बल्कि उलटे प्रोत्साहन दे रहा हूँ। अगर इनमेंसे कुछ बहनें आयें तो मैं मानता हूँ कि तुम उनका स्वागत करोगी और जो बोझ बढ़ेगा उसे उठा लोगी। इन्हें वहाँ भेजनेका उद्देश्य यह है कि इनकी झिझक खुल जाये और वे कातना-पींजना सीख लें। उसके बाद मैं चाहता हूँ कि वे आकर यहाँकी बहनोंमें काम करें।

अगर तुममेंसे कोई इस मामलेमें कुछ कहना चाहे, तो जरूर कहे। यदि मुझसे जल्दबाजी हो रही हो तो मुझे रोकना। दुखीको शर्म नहीं होती। मुझे तुम दुखी समझना। मुझसे इन बहनोंकी विवशताका दुःख सहा नहीं जाता। वहाँ हम भी कुछ कम असहाय नहीं हैं। मगर ये हमसे भी ज्यादा असहाय हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६३७) की फोटो-नकलसे।

१. जनवरी १९२७के अन्तिम दिनोंमें गांधीजी पटनामें थे।

२६. पत्र : मगनलाल गांधीको

मौनवार [३१ जनवरी, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

जब रुखीका ऑपरेशन हो तब मुझे समाचार तारसे देना। डाक्टरको रुखीकी घबराहटकी बात भी बता देना।

मीराबहनके अन्य पत्र भेज रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७१) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

२७. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

पटना
सोमवार [३१ जनवरी, १९२७]

भाईश्री ५ विट्ठलदास,

तुम्हारा पत्र मिला। बिक्रीके बारेमें 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' में मैं अप्रैलमें लिखूंगा। अहमदनगर जिलेके लिए १६ तारीख नियत की है, इसलिए मैं मानता हूँ कि मुझे उससे पहले ही बम्बई पहुँचना होगा। अभी मुझे कार्यक्रमका तारीखवार ब्यौरा नही मिला है।

बापूके आशीर्वाद

[दौरेकी तारीखें][2]

गुजराती (एस० एन० ९७६२) की फोटो-नकलसे।

२८. सन्देश : 'रिव्यू ऑफ नेशन्स' को[3]

[१ फरवरी, १९२७ से पूर्व]

मैं आपको यह बतानेके सिवाय क्या सन्देश भेजूं कि मेरी राष्ट्रीयता तीव्र अन्तर्राष्ट्रीयता है? मैं राष्ट्रों अथवा धर्मोके बीच होनेवाले संघर्षसे ऊब गया हूँ।

[अंग्रेजीसे]
मॉडर्न रिव्यू, फरवरी, १९२७

१. देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", २५-१-१९२७।
२. यहाँ नहीं दी जा रही है देखिए "पत्र: मीराबहनको", ३१-१-१९२७।
३. ६, रूई डी हॉलंडी, जेनेवा, स्विट्जरलैंडके फेलिक्स वाल्वी द्वारा संस्थापित।

२९. पत्र : मगनलाल गांधीको

मंगलवार [१ फरवरी, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

मीराबहनका पत्र इसके साथ है। बीजापुरका प्रबन्ध तुम कर ही रहे होगे।

तुम्हें सर गंगारामको आश्रमके खेती-सम्बन्धी कार्यक्रमका और हिसावका एक विवरण भेजना है, जिससे वे सलाह दे सकें। इस विवरणमें जमीनका क्षेत्रफल, उसका नक्शा, उसकी किस्म, उसमें अवतक ली गई फसलोंका विवरण, अवतक किये गये अन्य उपयोग तथा पानीकी व्यवस्थाकी जानकारी होनी चाहिए।

अवतक दुग्धालय विशेषज्ञ आ गया होगा।

कपास-संग्रहके लिए जयसुखलाल जो हुण्डी भेजे उसे सकार देना अथवा वह जो-कुछ मँगवाए, सो भेज देना। कितनी रकम दी जा सकती है, सो नारणदास जानता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७५९) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

३०. तार : जमनालाल बजाजको

कलकत्ता
१ फरवरी, १९२७

जमनालाल बजाज
वर्धा

केवल जरूरी लोग ही गोंदिया रहेंगे, बाकी वर्धा।

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद

१. सर गंगाराम द्वारा दिये गये आश्रमके कृषि-कार्यक्रम सम्बन्धी विवरणकी याद मगनलालको सोमवार, ७-२-१९२७ के पत्रमें दिलाई गई है। उससे पहले मंगलवार १ फरवरीको था।

३१. पत्र : प्रभावतीको

[२ फरवरी, १९२७ से पूर्व][1]

चि० प्रभावती,

तुमको एक खत मैंने लीखा था वह मीला होगा। आश्रममें भेजनेके लिये पिताजी और में खूब प्रयत्न कर रहे है। सफलता मीलनेकी आशा है। मैंने तुमारे श्वसुरको खत भी लिखा है। दरम्यान सासुजीको प्रसन्नचित्त रखो और उनकी हार्दिक सेवा कीजीयो। सास भी माताके समान है ऐसा धर्म सीखाता है। सच बात तो यह है कि सुश्रूषा किसीको भी हो हमेशह आत्माकी उन्नति करती है। सुसरालमें भी अवसर मीलनेपर अभ्यास करना। मुझको नित्य लीखो।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ३३३७) की फोटो-नकलसे।

३२. पत्र : व्रजकिशोरप्रसादको

बुधवार [२ फरवरी, १९२७][2]

भाई व्रजकिशोरप्रसाद,

प्रभावतीको रोक ली [या] उससे मुझको कुछ दुःख हुआ। हम जो थोड़े आदमी धर्म और देशकी सेवा करना चाहते हैं उनको सरकार और समाज दोनोंका डर छोडना होगा। मेरा अभिप्राय है कि चि० प्रभावती अच्छी सेविका बन सकती है। हुशियार है, उद्यमी है और शीलवती है सेवा करनेकी इच्छा है। ऐसी लड़कीको जितनी उत्तेजना दीई जाय कम है।

उनके श्वसुरसे मेरी बात हो गई।[3] उन्होने कहा यदी प्रभावतीको मैं आरेमें ले जाता तो उनको कोई उजुर नहि होता। प्रभावतीकी सासका स्वास्थ्य अच्छा होनेसे प्रभाको आश्रम भेजनेके लिये भी वे तैयार है। अब मेरी सलाह है कि प्रभावतीको शीघ्रतासे आश्रम भेज दी [या] जाय। सासके लीये जबतक आवश्यक है उनकी सश्रूषाके लीये रहना चाहिये।

१. देखिए "पत्र: प्रभावतीको", २-२-१९२७।

२. २८ जनवरीको गांधीजी आरामें थे और यह पत्र उसके बाद ही लिखा गया प्रतीत होता है।

३. देखिए अगला शीर्षक।

यदि मुंबई नहिं तो कलकत्ते जाकर किसी डाकतरको क्यों तबीयत न बनाई जाय? तुमारे शरीर अच्छा बना लेना चाहिये। यह क्या बात है हर रोज बीमार हो जाना?

आपका,
मोहनदास

मूल (जी० एन० ३३१६) की फोटो-नकलसे।

३३. पत्र: प्रभावतीको

[२ फरवरी, १९२७][1]

चि० प्रभावती,

मैंने श्वसुरके साथ खूब बातें की। वे तो तुमारे आरा मेरे साथ आनेमें अनुकुल थे और तुमारे आश्रम जानेमें भी अनुकुल है। अब पिताजीसे बात करना। मानकी तबीयत दुरस्त होनेसे आश्रम चले जाना यदि पिताजी आज्ञा दें तो। विद्यावती और चन्द्रमुखीको साथ लेनेकी कोशीष कीजियो।

तुमारी आशा वहोत करता हुं।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ३३०४) की फोटो-नकलसे।

३४. पत्र: मगनलाल गांधीको

गोंदिया जाते हुए गाड़ीमें
बुधवार [२ फरवरी, १९२७][2]

चि० मगनलाल,

मैंने तुम्हें मीराबहनके पत्रोंसे ठसाठस भरा एक लिफाफा भेजा था; मिल गया होगा। आज अन्य पत्र भेज रहा हूँ। इन पत्रोंको सँभालकर रखते हो न? इन्हें काका साहबको पढ़नेके लिए देते हो या नहीं? न देते हो तो अब देना।

रुखीका ऑपरेशन होनेका तार पटनासे रवाना होनेके बाद मिला। ऑपरेशन हो गया, यह बहुत अच्छा हुआ। मैं वर्धामें ब्यौरेवार समाचार पानेकी आशा रखता हूँ।

१. पिछले शीर्षकमें व्रजकिशोरप्रसादका पत्र और यह पत्र दोनों एक दिन ही लिखे गये प्रतीत होते हैं।

२. रुखीके ऑपरेशन और गोंदिया-यात्राके उल्लेखसे।

जॉनसे कहना कि वह मुझे पत्र लिखे। उसका भारतीय नाम क्या है? वह भारतीय नामसे पुकारा जाना पसन्द करता है या अंग्रेजी नामसे? गिरिराज कुछ कह गया है क्या?

मणिवहनके पत्रसे लगता है कि रसोई वहुत अच्छी तरह नही चलाई जा रही है और सब्जियाँ भी दो-तीन दिनकी सूखी हुई होती हैं। यह वात उसने अपने अनुभवसे नही, सुनकर लिखी है। इसलिए तथा चूँकि शंकरपर मुझे विश्वास है, इस कारण भी यह खबर मुझे सही नही लगती। लेकिन भोजनालयकी व्यवस्था पूरी तरह ठीक रहनी चाहिए, इस लोभसे मैं यह उड़ती खबर तुम्हें लिखे दे रहा हूँ।

जल्दी ही गाड़ी गोंदिया पहुँचेगी। इस समय उससे पहलेके स्टेशनपर खड़ी है, इसी वीच मैंने यह पत्र लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

चम्पासे कहना कि उसके गहने वम्वई पहुँच गये हैं और वहाँसे अव सावरमती पहुँच जायेंगे। मीरावहनके जिन पत्रोंमें आलोचना की गई है, उन्हे सवको पढ़वाना शायद तुम ठीक न समझो; इसलिए इस वारेमें अपनी समझसे काम लेना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : राधावहन चौधरी

३५. पत्र : मगनलाल गांधीको[1]

गोंदिया
बुधवार [२ फरवरी, १९२७]

. . . उसे सन्तोष हुआ तो, ऐसा नही लगा। लेकिन उसका वहाँ आना धर्म था। रुखीकी गम्भीर रुग्णावस्थाके समय वह तुम्हारे समीप हो, उसके लिए यही शोभनीय था। मुझे यह भी लगा है कि अव वह यहाँ किसी भी कारखानेमें काम नही कर सकता। कारखानेसे उसे जो मिल सकता है, सो उसके पास है। उसे तो अपने वलपर ही तरक्की करनी है। मैंने तो उसे सुझाव दिया है कि वह तुम्हारा सचिव वनकर तुम्हारे कामकी देखभाल करने लग जाये। रुखीकी वीमारीमें सेवा करना एक वात है और अपने लिए स्थायी रूपसे कोई काम चुनना दूसरी वात। इस दूसरी वातपर तुम विचार करना और जैसा ठीक लगे सो लिखना।

७[2] विक्रमको छः महीनेतक पढ़ना नही है; केवल शरीरश्रम करना है। उसे कातने और वुननेका काम करना है। इसलिए तुम्हे जो उचित लगे तुम वह काम

१. पत्रका प्रारम्भिक अंश उपलब्ध नहीं है।
२. साधन-सूत्रके अनुसार।

उससे लेना। मेरी नजर उसपर है। वह वसुमती बहनका सम्बन्धी भी है, किन्तु हमारे पास तो वह सीधा आया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ८६९४) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

३६. भाषण : तुमसरमें[1]

२ फरवरी, १९२७

मेरा काम ही मेरी वाणी है। . . . मैं गोंदियामें कुछ नहीं बोला। मैंने ५०० रु० की खादी-भर बेची और इतनेसे ही खुश रहा। यह जानते हुए भी कि इस देशमें करोड़ोंका कपड़ा विदेशोंसे लाकर जुटाया जाता है, उसके मुकाबलेमें ५०० रु० की खादी तो समुद्रमें एक बूँदके बराबर है, मैं खुश क्यों हूँ? मैं जानता हूँ कि मेरा खुद खादी बेचकर, रसीदोंपर दस्तखत करके लोगोंको ललचाना कितनी लज्जाकी बात है। मगर जब आप खादी-जैसी स्पष्ट बातका भी महत्त्व नहीं समझते, तो मैं क्या करूँ?

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-२-१९२७

३७. अ० भा० च० संघके समाचार

अखिल भारतीय चरखा संघने सालकी शुरुआत बहुत अच्छी की है। २० जनवरी, १९२६ को इसकी सदस्य-सूचीमें प्रथम श्रेणीके २,३३४ और द्वितीय श्रेणीके ४१५ सदस्य थे। इस वर्ष उसी दिन सदस्योंकी संख्या इस तरह थी : पहली श्रेणीमें १,४५८ दूसरीमें ११५ और बाल श्रेणीमें १५९। प्रथम श्रेणीके इन १,४५८ सदस्योंमें १,२१२ सदस्य तो पुराने हैं और २४६ नये। गत वर्ष नियमित रूपसे सूत भेजनेवाले १,०७७ सदस्य थे, यानी इस वर्ष प्रारम्भमें ही नये सदस्योंके अलावा १३५ और ऐसे सदस्य मिल चुके हैं जो सूतके रूपमें अपने हिस्सेका नियमित चन्दा भेजनेवाले सदस्य हैं। जो गत वर्ष अपना चन्दा नहीं भेज सके थे, वे तीन महीनेका चन्दा भेजकर अब इस सालके नये सदस्य बन जायें।

तकनीकी विभागने सदस्योंकी सूतकी मुस्तैदीसे जाँच करनी शुरू कर दी है। अबतक कमसे-कम ४६४ सदस्योंके सूतकी जाँच की जा चुकी है और उसका परिणाम उन्हें सूचित कर दिया गया है। अब सूतकी रसीदके फार्ममें तकनीकी विभाग द्वारा

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

दिये गये सूतके परीक्षणके, समानताके, बारीकीके और मजबूतीके अंकोके खाने भी रहा करेंगे, जिनमें सदस्योके सूतके पिछले परीक्षणके परिणाम भरे जायेंगे।

तकनीकी विभाग द्वारा जाँचे गए सूतके अच्छे नमूनोंकी जाँचके कुछ परिणाम नीचे दिये जाते हैं :

	परीक्षण	समानता	बारीकीके अंक
श्रीयुत बी० एस० दांडेकर, बनारस	९४	९४	३०
„ वेलजी लखमसी नप्पू, माटुंगा बम्बई	९४	९६	२५
„ विट्ठलदास जेराजाणी, बम्बई	८७	९६	१३
„ गोविन्दभाई पटेल, गुजरात	८७	९३	१४
„ भाईलाल बाजीभाई, गुजरात	८६	९२	१०
„ प्रभुदास सरैया, गुजरात	१००	७९	२१

सूतको बुरेसे अच्छा, अच्छेसे अधिक अच्छा और अधिक अच्छेके बाद अधिकसे अधिक अच्छा बनाना ही हम सबका उद्देश्य होना चाहिए। चरखा संघके सभी एजेंटोको अ० भा० च० संघ परिषदने परिपत्र द्वारा सूचित कर दिया है कि वे अपने यहाँके सभी किस्मोंके कपड़ोंके ४-४ वर्ग गजके नमूने और जिस सूतसे वे बुने गये हो, उसकी एक-एक लच्छी तकनीकी विभागको भेजें, जिससे कपड़ेकी विशेषताकी जाँच की जा सके और देशमें बननेवाले भिन्न-भिन्न प्रकारके कपड़ोंकी सूची बनाई जा सके। अभीतक सिर्फ ५ केन्द्रोंने ही इसकी तामील की है और उन्होंने भी सूचना बड़ी लापरवाहीसे भरकर भेजी है और सभी सवालोका ठीक तरहसे जवाब नहीं दिया है। मैं आशा करता हूँ कि शेष लोग और अधिक देर नही करेंगे और साथ ही जिन्होंने अधूरा उत्तर भेजा है, वे उसे पूरा कर देंगे। हरएक टुकड़ेके साथ एक पुर्जी भी होगी, जिसमें निम्न बातें लिखी रहनी चाहिए :

१. पूरे थानकी लम्बाई
२. पना
३. ताने और बानेमें तारोंकी संख्या
४. एक वर्ग गजका भार
५. लागत खर्च और बिक्रीकी दर

बहुतेरे लोग "हाथ-कताई और हाथ-बुनाई" पर लिखे गये पुरस्कृत लेख मूल्य-देय पार्सल (वी० पी० पी०) से मँगाना चाहते हैं। इसमें रजिस्ट्रीके अतिरिक्त खर्च इत्यादिके अलावा असुविधा और देरी भी बहुत होती है। ऐसा एक मूल्य-देय पार्सल न लिये जाने-पर लौट भी आया है। अत. भविष्यमें वी० पी० पी० नही भेजी जायेगी। जिन्हें पुस्तक लेनी हो वे उसका मूल्य एक रुपया और डाक टिकटके लिए ढाई आना मनीआर्डरसे भेजें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-२-१९२७

३८. हमारी बेबसी

शाही फरमान निकला है कि भारत अपनी सेनाएँ चीन भेजे। दिखानेके लिए तो ये सेनाएँ वहाँ विदेशियोंकी रक्षा करने जा रही हैं; किन्तु वस्तुतः तो वे जायेंगी वहाँ चीनियोंके स्वतन्त्रता-प्राप्तिके प्रयत्नको कुचलनेके लिए। इस मामलेमें केन्द्रीय विधानसभाका क्या विचार है, सो नहीं पूछा गया। उसे तो अपना कोई सामान्य सैद्धान्तिक मत व्यक्त करनेका भी अधिकार नहीं है। वाइसरायके विचारसे केन्द्रीय विधान-सभा द्वारा इसपर किसी मतका व्यक्त किया जाना अनुपयुक्त है। केन्द्रीय विधान-सभाको अपनी भावनाएँ व्यक्त करनेसे रोकनेके लिए इतना ही पर्याप्त था।

केन्द्रीय विधान-सभाके सदस्योंके लिए भारतकी विदेश-नीतिपर विचार करना ही नहीं, बल्कि उसका नियन्त्रण करना भी बहुत आवश्यक विषय है—यहाँतक कि उससे अधिक महत्त्वपूर्ण विषयकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। हमारी बेबसी सबसे अधिक तभी प्रकट होती है जब भारतीय सिपाहियोंको बेशर्मीसे दूसरोंकी स्वतन्त्रताको कुचलनेके लिए इस्तेमाल किया जाता है। दरअसल भारत संसारमें एशियाई तथा दूसरे गैर-यूरोपीय कौमोंके शोषणका प्रधान उपकरण है। उसे न केवल उसके स्वयंके शोषणके लिए वरन् नजदीक या दूरके उसके दूसरे पड़ोसी देशोंके शोषणके लिए भी दासताके बन्धनमें बाँध कर रखा गया है।

कोई ताज्जुब नहीं कि वाइसरायने दृढ़ और स्पष्ट शब्दोंमें अपनी घोषणामें कहा है कि इस तथाकथित सुधारमें और कुछ भी वृद्धि करानेके लिए भारतको ब्रिटिश संसदके आगे घुटने टेककर भीख माँगनी पड़ेगी। उसे अधिकारकी तरह कुछ भी पाने की आशा नहीं करनी चाहिए। ऐतिहासिक घटनाओंके संयोगसे इंग्लैंडको भारतपर प्रभुत्व मिला है। वह उसे जबतक कायम रख सके, रखना चाहता है। हर सुधार इसी सबसे बड़ी बातको ध्यानमें रखकर ही होगा।

यह एक ऐसा दृष्टिकोण है, जिसे कोई भी स्वाभिमानी भारतीय स्वीकार नहीं कर सकता। अंग्रेजोंका प्रभुत्व ही एक ऐसी बात है, जिसे भारत बर्दाश्त नहीं कर सकता। इसी बातको बिलकुल स्पष्ट करनेके लिए स्वतन्त्रावादियोंने देशके पूर्ण स्वातन्त्र्यके लिए गोहाटी [कांग्रेस अधिवेशन]में इतना संघर्ष किया था। उस समय उनकी मुराद पूरी न हो सकी; किन्तु इसकी उन्हें कुछ परवाह नहीं है। वे तो यही चाहते थे कि राष्ट्र यह भली-भाँति जान ले कि उसका एक यही ध्येय है, दूसरा नहीं।

मेरे जैसे कुछ लोग मनुष्य जातिके स्वभावमें अपने विश्वासपर अटल बने हुए हैं और यहाँतक कि उद्धत अंग्रेजोंके भी दर्पको ढीला करनेकी आशा रखते हैं, फिर आज इसके विपरीत चाहे जितने लक्षण क्यों न दिखाई पड़ते हों। चाहे औपनिवेशिक स्वराज्य मिले चाहे किसी और दर्जेका मगर हम अंग्रेज सरकारके अधीन रहना नहीं चाहते। हम तो पूर्ण समानता चाहते हैं। यह निश्चय करनेका अधिकार कि हमारे सैनिक क्या करें और कहाँ जायें, हमारा होना चाहिए, अंग्रेजोंका नहीं।

यह वास्तविक महत्त्वपूर्ण शक्ति अभी सुधारोंको कार्यान्वित करनेसे नही मिलेगी। यह शक्ति तो भीतरसे और नीचेसे ही प्राप्त करनी होगी। और तभी हम निश्चित किये गये संविधानको चला सकेंगे। आज तो किसी भी संविधानको कारगर तौरपर चला पाना असम्भव है। हममें आन्तरिक सामर्थ्य नही है। लोगोंके ऊपर जितना चाहिए हमारा उतना प्रभाव भी नही है। वह प्रभाव तो सच्ची और नि.स्वार्थ सेवा करनेसे ही मिलेगा। हम जबतक इस मूल तथ्यको नही समझ लेते तबतक हमारे सभी कार्योंका परिणाम 'शून्य' ही रहेगा।

यदि मैं इस सिलसिलेमें चरखेका उल्लेख करूँ, तो अधीर पाठक हँसे नही। मैं कहता हूँ कि जनताके साथ जीवन्त सम्पर्क स्थापित कर पाना हमारे लिये तबतक असम्भव है जबतक हम उनके बीचमें जाकर और उनमें मिलकर, उनके संरक्षक बनकर नही, अपितु उनके सेवक बनकर काम नही करते।

अधीर पाठक समझ लें कि जिस जनताके हितार्थ उन्हें काम करनेके लिए कहा जाता है, जिनके नामपर वे बोलना चाहते हैं वह अधनंगे रहती है, आधापेट खाती है और सालभरमें उसका अधिकतर समय आरोपित बेकारीमें बीतता है। वाइसरायकी चीन-सम्बन्धी प्रस्तावपर लगाई गई बन्दिशसे और सुधारोंके विषयोंमें उनकी स्पष्ट घोषणासे हमारी आँखें खुल जानी चाहिए और हमें दिख जाना चाहिए कि वस्तुस्थिति कितनी बुरी है।

निकट भविष्यमें चीनको हिन्दुस्तानी सेनाका भेजा जाना एक अनीतिमय काम होगा। यह अच्छा हुआ कि कांग्रेस-कार्य-समितिने इससे अपने हाथ धो लिये। स्वातन्त्र्य संग्राममें लड़नेवाले चीनी जान लें कि हिन्दुस्तानी सेना उनके देशमें आयेगी तो सिर्फ इस कारण कि सम्भवतया, हम उनसे भी अधिक बेबस हैं। हिन्दुस्तानी सैनिक चीनियोंकी स्वतन्त्रताको कुचलनेके लिए पहली बार ही चीन नही भेजे जा रहे हैं। लार्ड डिकिन्सनने[1] अपने अमर, 'जॉन चाईनामैनके पत्रों' में बताया है कि हिन्दुस्तानी सैनिक चीनपर अफीम लादनेके लिए किस प्रकार काममें लाये गये थे। हम जानते हैं कि ईसाई कही जानेवाली ताकतोंने चीनमें क्या किया है। मगर जो जाति अपनी स्वाधीनताकी कीमत देनेके लिए तैयार है वह सदा स्वतन्त्रतासे वंचित नही रखी जा सकती। चीनके बारेमें यह एक शुभ बात है कि वह उसके लिए आवश्यक कीमत देनेके लिए तैयार मालूम पड़ता है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-२-१९२७

१. (१८६२-१९३२) अंग्रेज निबन्धकार, मौर्निंग ऑफ गुड, जस्टिस एंड लिबर्टी, यूरोपियन एनार्की (१९१६); वार: इट्स नेचर, कॉज़ एंड क्योर (१९२०) इत्यादिके लेखक।

३९. गयामें गन्दगी

हिन्दुओंके तीर्थराज गयाकी गन्दगीका विज्ञापन करनेकी मुझे कोई इच्छा नहीं है। गया शहरकी एक मुख्य गलीमें मैलेसे भरे दुर्गन्धयुक्त गड्ढोंको देखकर मेरी हिन्दू-आत्मा विद्रोह कर उठी, और इसी कारण मुझे लाचार होकर गया नगरपालिका द्वारा दिये गये मानपत्रका[1] उत्तर देते हुए उसका ध्यान इस ओर विशेष रूपसे आकर्षित करनेके लिए बाध्य होना पड़ा। मै जानता हूँ कि दूसरे बहुत-से तीर्थ-स्थानोंमें भी बहुत गन्दगी है; मगर मैंने गयामें जैसा देखा, वैसा कही अन्यत्र देखनेकी बात मुझे याद नही आती। यह सम्भव है कि लोग मुझे दूसरे तीर्थोंमें गन्दे हिस्सोमे न ले गये हों। मगर गन्दगीको तोलनेके लिए सोनेके तराजू नही लगते। गयाका नाम तो मै केवल उदाहरणार्थ लेता हूँ ताकि दूसरी नगरपालिकाओंका ध्यान इस बात की ओर आकर्षित कर सकूँ कि उनका पहला कर्त्तव्य अपने नगरोंकी सफाई होना चाहिए। यह एक काम तो नगरपालिकाकी राजनीति, दलबन्दी और षड्यंत्रों आदिसे अधिक परे होना चाहिए। जैसे नगरपालिकाकी आय-व्ययका हिसाब खरा और असन्दिग्ध रखना सभी दलोंका कर्त्तव्य होना चाहिए उसी तरह शहरकी सफाई भी बिलकुल व्यवस्थित और असन्दिग्ध रखना नगरपालिकाके हरएक दलका नैष्ठिक कर्त्तव्य होना चाहिए। हरएक नगरपालिकाको सफाई विज्ञान सिखानेके लिए एक आदर्श शाला स्थापित करनी चाहिए। हमें अभी शहरोंकी सफाईका पूरा ज्ञान नही है। जबतक हमारे घर ठीक हालतमें रहते हैं, तबतक हम इस बातकी परवाह नही करते कि हमारे पड़ौसियोंका क्या हो रहा है। हम शहरकी टट्टियोंको काममें लेना नही जानते। हम अपनी नालियाँ भी काममें लेना नही जानते। अतः हमें यह मानना ही पड़ेगा कि इस बड़े और महत्त्वपूर्ण प्रश्नको हल करनेके कठिन कामकी जिम्मेदारी हमारी नगर-पालिकाओंपर है। मुश्किलें चाहे जो हों, यह काम करना ही होगा। तीर्थ स्थानोंमें, जहाँ हर साल लाखों आदमी यात्रा करने आते हैं, यह काम और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। गयामें मैंने गन्दगीसे भरे जो गड्ढे देखे, उनके होनेका कोई कारण न था। लोगोंको नदियोंके किनारे गन्दे करनेकी इजाजत देनेका कोई सबब नही है। यदि नगरपालिकाओंके सदस्य केवल यह निश्चय कर लें कि वे अपनी जिम्मेदारीके अन्तर्गत शहरोंका वैसा ही खयाल रखेंगे जैसा कि वे अपने घरोंका रखते हैं, तो वे नगर निवासियोंकी ओरसे किसी कठिनाई और अड़चनके बिना बहुतसे काम कर सकेंगे।

मगर कठिनाई तो अपने ही बीचसे पैदा होती है। नगरपालिकाओंके सदस्य प्रायः उदासीन होते हैं और कभी-कभी अपने ही चुने हुए अध्यक्षके रास्तेमें रोड़े अटकाते हैं। वे कभी-कभी आपसी झगड़ोंमें उलझे रहते हैं और सफाईकी ओर ध्यान नहीं देते। अब तो हमें अपने नागरिक कर्त्तव्यका पूरा भान होना ही चाहिए। इस बारेमें हमें

१. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५६३-६५।

पश्चिमसे अभी बहुत कुछ सीखना है। पश्चिमी लोगोंने बड़े-बड़े शहरोंका निर्माण किया है। वे ताजी हवा, स्वच्छ पानी और अपने चारों तरफकी सफाईका महत्त्व जानते है। जो शहर अपनी सफाईकी ओर उचित रीतिसे ध्यान देगा, उसके निवासियोंके स्वास्थ्य और समृद्धि दोनोंकी उन्नति होगी। इस बारेमें तीर्थस्थानोंको दिशा-दर्शन करना चाहिए। इन शहरोंको जो अवसर प्राप्त हैं वे दूसरे शहरोंको प्राप्त नहीं हैं। इस अंग्रेजी कहावतमें कि 'स्वच्छता देवत्वके निकटतम है' बहुत सार है। इस उक्तिमें बहुत समझदारी भरी हुई है। मनु, मूसा और मुहम्मद सभी अपने-अपने युगोंके लिए उपयुक्त स्वच्छताके नियम बना गये हैं। हमें वर्तमान आवश्यकताओंके अनुसार इनमें वृद्धि करनी होगी। इन प्राचीन शास्त्रकारोंसे इतना ही जान लेना काफी है कि वे स्वच्छताको सच्चे धार्मिक जीवनका एक अंग मानते थे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३-२-१९२७

४०. पर्देको समाप्त कीजिए

मैं जब कभी बंगाल, बिहार या संयुक्तप्रान्तमें गया हूँ, मैंने देखा है कि वहाँ पर्देकी प्रथाका और प्रान्तोंकी अपेक्षा अधिक कड़ाईसे पालन होता है। मगर मैंने दरभंगामें काफी रात बीते ऐसे शान्त वातावरणमें जहाँ शोरगुल और जबरदस्त भीड़की धक्कामुक्की नहीं थी, भाषण देते समय देखा कि मेरे सामने पुरुष बैठे है और मेरे पीछे पर्देकी आड़में स्त्रियाँ बैठी हुई हैं। किन्तु मेरे पीछे स्त्रियाँ बैठी हैं, इसका पता मुझे यह बताये जानेपर ही चला। यह सभा हुई तो थी एक अनाथालयके शिला-न्यासके सिलसिलेमें, परन्तु मुझसे पर्देके भीतर बैठी महिलाओंके प्रति कुछ शब्द कहनेके लिए कहा गया। सभामें आई हुई बहनोंकी संख्याका तो मुझे अनुमान नहीं हुआ, किन्तु जिस पर्देके पीछे वे बैठी थीं, उसे देखकर मेरा मन खिन्न हो गया। इससे मुझे बहुत दुःख और अपमानका अनुभव हुआ। मैंने सोचा कि पुरुषोंके द्वारा पर्देकी बर्बर प्रथाको आग्रहके साथ कायम रखकर हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंके प्रति कैसा अत्याचार किया जा रहा है। जिस जमानेमें यह प्रथा शुरू की गई थी, उस समय इसका थोड़ा-बहुत कोई उपयोग भले ही रहा हो, मगर अब तो यह बिलकुल बेकार हो चुकी है और इससे देशको असीम हानि पहुँच रही है। लगता है कि हमने पिछले १०० वर्षोंमें जो शिक्षा पाई है, उसका हमपर रत्ती-भर भी असर नहीं पड़ा है; क्योंकि मैं देखता हूँ कि शिक्षित परिवारोंमें भी पर्दा कायम है और उसका कारण यह नहीं है कि शिक्षित पुरुष इसमें विश्वास रखते हैं, बल्कि इसलिए है कि वे इस बर्बर प्रथाका मर्दानगीसे विरोध करने और उसका एकदम खात्मा करनेको तैयार नहीं हैं। मुझे स्त्रियोंकी ऐसी सैकड़ों सभाओंमें, जिनमें हजारों स्त्रियोंने भाग लिया हो, बोलनेका शुभ सुअवसर मिला है; मगर मैंने यह देखा है कि इन सभाओंमें आनेवाली स्त्रियोंके प्रति मैं जो विचार व्यक्त करता रहा हूँ, उनका उनके शोरगुलके कारण उनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ सका है। जबतक वे अपने घरोंकी छोटी-सी चारदीवारीके भीतर या उन

पिंजरोंमें बन्द हैं, तबतक उनसे और किसी बातकी आशा कैसे की जा सकती है? इसलिए जब वे किसी बड़े कमरेमें इकट्ठी होती हैं और उनसे एकाएक यह आशा की जाती है कि वे किसी वक्ताका भाषण सुनें, तब उनकी समझमें नहीं आता कि उन्हें स्वयं अपने या वक्ताके ख्यालसे क्या करना चाहिए और शान्ति स्थापित हो जानेके बाद भी उनके मनमें रोज घटनेवाली साधारण घटनाओं तथा विषयोंके प्रति रुचि पैदा करना वक्ताको कठिन मालूम पड़ता है, क्योंकि उन्हें कभी स्वतन्त्रताकी शुद्ध वायुमें साँस लेनेका अवसर ही नहीं दिया गया है और इसलिए वे उन विषयोंसे नितान्त अपरिचित रही हैं। मैं जानता हूँ कि यह चित्रण कुछ अतिरंजित है। मैं इन हजारों बहनोंकी, जिनके सम्मुख मुझे बोलनेका अवसर मिलता है, उच्च संस्कृतिको भली-भाँति जानता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि वे पुरुषोंके बराबर ही ऊँचा उठ सकती हैं। उन्हें बाहर आनेका अवसर भी मिलता है। मगर इसका श्रेय शिक्षित वर्गको नहीं दिया जा सकता। सवाल यह है कि वे इससे भी आगे क्यों नहीं बढ़ी हैं, हमारी स्त्रियोंको भी वह स्वतन्त्रता क्यों नहीं प्राप्त है जो पुरुषोंको प्राप्त है और वे घरके बाहर निकलने तथा शुद्ध वायुका सेवन करनेसे वंचित क्यों रखी जाती हैं।

सतीत्व कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे पालके आमोंकी तरह दाबदूबकर रखनेसे परिपक्व किया जा सकता हो। उसे ऊपरसे नहीं लादा जा सकता। उसकी रक्षा पर्देकी दीवारसे नहीं की जा सकती। उसका विकास तो भीतरसे ही होना चाहिए और अवश्य ही उसका मूल्य तभी कुछ माना जायेगा जब वह सभी प्रकारके अवांछित आकर्षणोंका सामना करने योग्य बन जाये। वह तो सीताजीके सतीत्वकी भाँति अडिग और अजेय होगा। जो पवित्रता पुरुषोंकी ताक-झाँकका सामना न कर सके वह अवश्य ही कोई बहुत निकम्मी-सी चीज होगी। अगर मर्दोंको मर्द होना है तो उन्हें इस लायक बनना होगा कि वे स्त्रियोंका वैसा ही विश्वास कर सकें, जैसा स्त्रियोंको मजबूरन उनका करना पड़ता है। ऐसा नहीं होने देना चाहिए कि जीवनमें हमारा एक अंग पूर्णतः या अंशतः निकम्मा बना रहे, अगर सीता भी राम जैसी स्वतन्त्र और स्वाधीन न होती, तो रामकी क्या स्थिति होती? मगर निर्भीक स्वातन्त्र्यके लिहाजसे द्रौपदीका उदाहरण शायद ज्यादा माकूल होगा। सीता विनम्रताकी मूर्ति थीं। वे मंजु सुकोमल सुमन थीं। द्रौपदी विशाल विटप जैसी थी। उनकी अदम्य इच्छा-शक्तिके आगे शक्तिशाली भीम भी झुक गये थे। भीम सबके लिए व्याघ्र थे, परन्तु द्रौपदीके लिए मेमनेथे। द्रौपदीको किसी पाण्डवके संरक्षणकी जरूरत न थी। हम आज भारतकी नारियोंके निर्विघ्न विकासका विरोध करके भारतमें स्वतन्त्रताप्रिय और स्वाधीन वृत्तिके पुरुषोंके विकासको रोक रहे हैं। हम अपनी स्त्रियों और अछूतोंके प्रति जैसा व्यवहार करते हैं, वह हजार गुना होकर हमारे सिरपर वापस आता है। हमारी निर्बलता, अनिश्चितता, संकीर्णता और बेबसीका अंशतः यही कारण है। इसलिए आइए हम एक महान प्रयत्न करके इस पर्देको समाप्त कर दें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-२-१९२७

४१. भाषण : चाँदामें[1]

४ फरवरी, १९२७

भला इन मालाओंका मैं क्या करूँ? यह समय मालाएँ पहन कर निकलनेका नही है। यह समय दूध वगैरा ऐसी चीजें खानेका भी नही है जो गरीबोको नसीब नही होती। मैंने कितनी ही बार सोचा है कि मैं देशकी गरीब और भूखों मरनेवाली स्त्रियोंके खातिर दूध पीना भी छोड़ दूँ। मगर मैंने ऐसा नही किया, क्योकि ऐसा करना आत्महत्या करना ही होता। अनिच्छापूर्वक ही क्यों न हो मुझे दूध पीना पड़ रहा है, क्योंकि जबतक ईश्वरको अभीष्ट है, मुझे उनकी यथाशक्ति सेवा करनेके लिए जिन्दा रहना है। इसलिए आप कृपया मालाएँ खरीदनेमें रुपया बरबाद न करें। क्योकि माला न खरीदकर बचाये गये हर रुपयेसे आप १६ स्त्रियोंको एक वक्तका भोजन दे सकते हैं। क्या हमें उन गरीबोंका रोदन सुनकर लज्जाका अनुभव नही होता जिनकी मेहनत-मशक्कत की बदौलत हम जीते है और जिनकी जोती-बोई धरतीसे हमें भोजन प्राप्त होता है? अगर आप उनकी बनाई खादी न भी पहन सकें तो यही बेहतर होगा कि आप 'लोकमान्यकी जय' के नारे लगाना बन्द कर दें। उनका नाम लेनेके पहले उनकी जैसी निष्ठा प्रदर्शित करे, उनका कुछ काम करे, उनके दिलमें गरीबोके प्रति जो अथाह प्रेम था, उस प्रेमका शतांश ही आप अपने कार्यों द्वारा व्यक्त करके दिखायें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १७-२-१९२७

४२. भेंट : शापुरजी सकलातवालासे[2]

यवतमाल
[५ फरवरी, १९२७][3]

साम्राज्यवाद समाप्त ही किया जाना चाहिए। जब चीन, रूस, मैक्सिको और अन्य देश सफलता पा रहे हैं, तो हमें क्यों नहीं सफलता मिलेगी? अगर हम भी उनके साथ सहयोग करें, तो हमारी आवाज भी सुनी जायेगी। अगर हमारे पास दस लाख कार्यकर्ताओंका एक संगठन हो, तो हम जो भी चाहें, कर सकेंगे। मतभेद तो होंगे। हिन्दुओं और मुसलमानोंको भी झगड़नेका हक है। अन्य देश भी स्वतन्त्रताका सुख

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

२. इस भेंटका विवरण नवजीवन, १३-२-१९२७ में भी छपा था, और उसी दिन अहमदाबादसे फ्री प्रेस द्वारा प्रकाशित किया गया था।

३. इस तारीखको गांधीजी यवतमालमें थे।

भोग रहे हैं, यद्यपि वहाँ भी अन्दरूनी झगड़े होते रहते हैं। हमें यह घोषित करना ही चाहिए कि हम स्वतन्त्रता चाहते हैं। यह है यवतमालमें गांधीजीसे हुई विधानसभाके सदस्य शापुरजी सकलातवालाकी बातचीतका सारांश...

साम्यवादी संसद सदस्यका ऐसा विश्वास है कि खादी अहिंसात्मक नहीं है, क्योंकि वह लंकाशायरके श्रमिकोंकी आजीविका समाप्त करती है। खद्दरमें कोई एकता निहित नहीं है। घरोंके कोनोंमें कताई करके हम एकता कैसे हासिल कर सकते हैं? एकता कारखानोंमें साथ-साथ काम करके हासिल की जा सकती है।

गांधीजीने जवाब दिया कि जो आपने कहा है किया वही जा रहा है। उन्होंने कहा कि यदि आप यहाँ रुककर देखें तो रास्तेमें आनेवाली कठिनाइयोंको समझ सकेंगे। गांधीजीने इस बातका दावा किया कि विधानसभाके सदस्य महोदय जिस सम्मिलित शक्तिकी चर्चा करते हैं, वह खद्दर द्वारा जुटाई जा रही है। गांधीजीने उनसे कहा कि कुछ दिनोंके लिए आप मेरे साथ यात्रा करें और मैं आपको दिखाऊँगा कि खद्दरसे क्या परिणाम हासिल किया जा रहा है। बुनकर, कताई करनेवाले और रंगरेज आदि खादी द्वारा एकताके सूत्रमें बाँधे जा रहे हैं।

अन्तमें श्री सकलातवालाने विनोदपूर्वक कहा कि लोगोंके लिए उन्हें (गांधीजीको) एक सीमामें रोककर रखना पड़ेगा जैसे कि सिनफेन आन्दोलन चलानेवाले लोग अपने नेताओंको रखते हैं और उन्हें उनसे कहना पड़ेगा कि "हमारा नेतृत्व जिस तरह हम आपको बतलायें उस तरह कीजिए।"

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १४-२-१९२७

४३. पत्र: मणिबहन पटेलको

अकोला जाते हुए

रविवार, ६ फरवरी, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें अक्षर सुधारनेकी जरूरत है। अक्षर बड़े और साफ लिखनेकी आदत डालो। किसी खास मौकेपर ही अच्छे अक्षर लिख देना काफी नहीं। जैसे महादेवके अक्षर हमेशा सुन्दर होते हैं उसी तरह हमें भी सदा सुन्दर अक्षर ही लिखने चाहिए।

फिलहाल हरिहरभाईकी कक्षामें जाती रह सकती हो। अगर हिन्दीमें बातचीत करनेकी आदत डाल लो तो हिन्दी सीख जाओगी। उसके प्रति रुचि होगी तो उसका ज्ञान अपने-आप आ जायेगा।

कराचीसे जवाब आनेपर लिखूँगा।

कातनेसे सम्बन्धित सारी क्रियाओंमें पूरी निपुणता प्राप्त कर लेना। एक भी क्रिया बाकी न रहे। मैं अपने सफरमें नित्य यह अनुभव करता हूँ कि चरित्रवान स्त्रियोंकी बड़ी जरूरत है।

मणिलाल कोठारीके नाम लिखित पत्र पढ़नेका तुम्हें अधिकार तो नहीं था, परन्तु पढ़ लिया तो कोई बात नहीं। भारतीय युवती ब्रह्मचर्य-पालनकी शक्ति रखती है, इसे आज कोई भी माननेको तैयार नहीं है। तुम और आश्रमकी दूसरी कुमारियाँ लोगोंके इस अविश्वासको झूठा साबित कर दिखायें; वह दिन देखनेके लिए मैं तो तरस रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने

४४. पत्र : आनन्दी, मणि, तारा, चन्दनको

रविवार [६ फरवरी, १९२७][1]

चि० आनन्दी, मणि, तारा, चन्दन,

तुम सबको अलग-अलग पत्र लिखनेका समय तो मुझे नहीं है। तुम्हारे पत्र पढ़कर मुझे आनन्द हुआ। तुम सब लड़कियाँ लिखावट सुधारो और स्याहीसे लिखनेकी आदत डालो।

यह रेशम जैसा कागज नेपालमें हाथसे बनाया जाता है। यह मुझे तुलसी मेहरजीने भेजा था। ये कागज तो बड़े आकारके होते हैं। मैंने उन्हें काटकर उनके छोटे-छोटे टुकड़े बना लिये हैं।

तुम सब लड़कियोंको जल्दी उठनेकी आदत डाल लेनी चाहिए। अब ठंड नहीं है। हरिइच्छासे कहना कि वह मुझे पत्र लिखे और मेरे पत्रकी राह न देखे।

आज मैं गोमतीबहनसे मिलूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४९२२) से।
सौजन्य : हरिइच्छाबहन कामदार

१. पत्रमें गोमतीबहनसे मिलनेकी बात है, गोमतीबहन अकोलामें रहती थीं और गांधीजी अकोला ६-२-१९२७ को गये थे।

४५. पत्र : मगनलाल गांधीको[1]

[६ फरवरी, १९२७][2]

. . . आ गई है। किन्तु धर्मके मामलेमें भला कहीं जोर-जबरदस्ती चलती है? धर्मका बन्धन उसीके लिए है जो उसे समझता है। हम तो दूसरेको समझाकर ही अपना कर्त्तव्य पूरा हुआ समझें।

रामचन्द्रने लिफ्टके बारेमें रेवाशंकर भाईको लिखा है। तुम पाँच हजार रुपये मँगा लेना और बाकी रकम आश्रमके खातेमें से निकाल लेना। यदि लिफ्ट हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हुई तो उससे हमारी लागत निकल आयेगी। पेटेन्टके बारेमें क्या हुआ? क्या तुमने उन्हें उत्तर दे दिया? . . .

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७४-ए) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

४६. भाषण : अस्पृश्यतापर, अकोलामें[3]

६ फरवरी, १९२७

अस्पृश्यता-विषयक मेरे विचार, मेरी पाश्चात्य शिक्षाकी देन नहीं है। मेरे ये विचार इंग्लैंड जानेसे बहुत दिन पूर्व, शास्त्रोंका अध्ययन करनेसे भी बहुत पहले, एक ऐसे वातावरणमें बन चुके थे जो इनके लिए अनुकूल न था; क्योंकि मेरा जन्म एक कट्टर वैष्णव परिवारमें हुआ था। फिर भी बालिग होनेके समयसे ही उस सम्बन्धमें मैं अपने इन पक्के विचारोंपर दृढ़ रहा हूँ। बादमें हिन्दू धर्मग्रन्थोंके तुलनात्मक अध्ययन तथा अनुभवसे उत्पन्न मेरे ये विचार और भी दृढ़ हो गये हैं। मेरी समझमें नहीं आता कि जब शास्त्रोंमें पंचम वर्णका कहीं भी उल्लेख नहीं है और 'गीता' में ब्राह्मण और भंगीको समान माननेकी स्पष्ट आज्ञा है, तब भी हम हिन्दू धर्मके मस्तकपर लगे इस कलंकको कायम रखनेकी जिद क्यों पकड़े हुए हैं? भंगी और ब्राह्मणको एक समान माननेका अर्थ यह नहीं है कि सच्चे ब्राह्मणके प्रति हम यथोचित श्रद्धा न रखें, उसका तो यह अर्थ है कि भंगीको भी अन्य हिन्दुओंकी भाँति हमसे वही सेवा पानेका हक है जो ब्राह्मणको है, वह भी सार्वजनिक शालाओंमें अपने लड़के

१. पत्रका प्रारम्भिक तथा अन्तिम अंश उपलब्ध नहीं है।

२. मूल पत्र हाथसे बने रेशमी कागजपर है; गांधीजीने तुलसी मेहरसे यह कागज प्राप्त होनेकी बात कही है। देखिए पिछला शीर्षक।

३. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

उसी तरह भेज सकता है, सार्वजनिक कुओंसे उसी तरह पानी भर सकता है और मन्दिरोंमें जाकर उसी तरह देव-दर्शन कर सकता है जैसे कोई भी अन्य हिन्दू। श्रद्धानन्दजीने अछूतोंकी ही सेवामें अपनी जिन्दगीका सबसे ज्यादा हिस्सा गुजारा। इन्ही दलितोंकी सेवामें उनका मन बसा था और वे इन्हीके बीच रहते और काम करते थे। जो वृत्ति एक बिलकुल अधार्मिक प्रथाको अब भी धार्मिक ही मानती चली जा रही है, मैं उसके बारेमें क्या कहूँ? इसलिए आइये, हम अपने हृदयोंको टटोलें और उनमेंसे संकीर्णताको पूर्णतः निकाल दें। हम समझ लें कि दक्षिण आफ्रिकामें हम भारतीयोंको जो सजा भोगनी पड़ रही है, वह हमारे ही पापोका उचित प्रतिफल है, और दक्षिण आफ्रिकाके गोरे हमारे भाइयोके साथ जो व्यवहार करते हैं उससे अपने भाइयोके साथ किया जानेवाला हमारा व्यवहार कुछ कम बुरा नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-२-१९२७

४७. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नही पढ़ा

७ फरवरी, १९२७

चि० मीरा,

यह पत्र नेपालसे तुलसी मेहर द्वारा भेजे गये हाथके बने कागजपर लिखा है। वह फिर हम लोगोके साथ यहाँ है। यह घर किशोरलालके भाईका है। उनकी पत्नी इन दिनो बीमार है। वह अब भी बिस्तरपर ही है, लेकिन अब कोई खतरेकी बात नही है। यहाँपर मैं कई पुराने परिचित लोगोको देख रहा हूँ। कल सुबह हम यहाँसे रवाना हो रहे है। [दौरेकी] तारीखें इस प्रकार हैं:

९ भुसावल	१२ अमलनेर
१० जलगाँव	१३–१४ धूलिया
११ चोपड़ा	

इसके आगेका अभी कुछ मालूम नही है।

शपथके[1] बारेमें तुम्हारा पत्र मिला है। सब्जियो और फलोके बारेमें तुम जो अर्थ निकालती हो, उसपर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। स्मरण रहे कि शपथको केवल कमसे-कम सीमातक नही बल्कि अधिकसे-अधिक सीमातक निवाहना चाहिए। व्यक्ति सदैव सीमा रेखाके करीब रहनेका नही वरन् सीमा रेखासे काफी अन्दर रहनेका प्रयत्न करेगा। खैर, शपथकी अवधि कम है, इसलिए इस सबसे कुछ खास फर्क नहीं पड़ता।

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको" ३१-१-१९२७।

मुझे प्रो० रामदेवका पत्र मिला है, लेकिन आज मेरे पास विस्तारसे कुछ लिखनेका समय नहीं रह गया है।

हाँ, अब मैं पहलेसे सशक्त हूँ। ऐसा कबतक रहेगा कुछ पता नहीं।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०२) से।
सौजन्य : मीराबहन

४८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

अकोला
७ फरवरी, १९२७

प्रिय भुर्र्रर्र,[1]

आपका पत्र पाकर बड़ी खुशी हुई। निश्चय ही काठियावाड़में आपको बहुत सफलता मिली। रामदासने उसके बारेमें मुझे सब कुछ बताया।

सुहैलाको[2] बेशक मेरी दुआएँ मिलेंगी; बशर्ते कि वे दोनों अच्छी तरह रहें और खादी पहनें।

आप डा० मेहताके लिए जो पत्र चाहते हैं, सो इसके साथ रख रहा हूँ। लेकिन क्या रकमकी खातिर आपका रंगून जाना जरूरी ही है? आप जो कुछ भी यहीं इकट्ठा कर सकते हों, क्यों न कर लें; बाकीका आपके रंगून जाये बिना इस बातपर ध्यान देते हुए इकट्ठा किया जा सकता है कि आप हिन्दुओंको चन्दा देनेमें शरीक होनेकी इजाजत दे देंगे। निस्सन्देह यदि आप रंगून जायें, तो जिस छोटी रकम-का आपने उल्लेख किया है, उसे आप चन्द दिनोंमें ही इकट्ठा कर लेंगे।

सस्नेह,

आपका,
भुर्र्रर्र

अंग्रेजी (एस० एन० ९५५७) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी और अब्बास तैयबजी एक दूसरेका स्वागत इसी तरह किया करते थे।
२. अब्बास तैयबजीकी पुत्री; उन्हीं दिनों अलीगढ़के मुहम्मद हबीबसे उसका विवाह निश्चित हुआ था।

४९. पत्र : मगनलाल गांधीको

अकोला

मौनवार, [७ फरवरी, १९२७]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र, राधाका पत्र और दूसरे पत्र मिले। उनसे रुखीके समाचार जाने। अब उसकी चिन्ता करनेकी कोई जरूरत ही नही रहती। हम लोग डाक्टर और अन्य लोगोंकी सेवाओंके जबर्दस्त बोझसे दबे हुए हैं। इसका बदला हम पैसा देकर नही चुका सकते। फूल नही तो पखुरी, यदि इस दृष्टिसे भी हम कुछ देनेका विचार करें तो वह भी पाप ही होगा। इसका बदला तो हम सब तभी चुका सकते हैं जब हम सबमें धार्मिक चेतना प्रबुद्ध हो। यह बात हम अपने नवयुवकों और नवयुवतियोंको किस तरह समझा सकते हैं? यदि हम गृहस्थ होते तो सन्तोककी सारी जमा-पूँजी ऐसी एक ही बीमारीमें खर्च हो जाती। लेकिन हमारे यहाँ तो बीमारोंका ढेर लगा रहता है। सन्तोक जिन्हे अपना मानती है उनमें भी क्या कम लोग बीमार हैं . . . ।[1]

मुझे उम्मीद है कि इन सब बातोंका ठीक-ठीक अलग-अलग हिसाब रखा जाता होगा, रखा जाना चाहिए। यदि भाड़ा आदि सारी मदें बिलकुल ठीक-ठीक चढाई जाती हो तो मैं कहूँगा कि हिसाब बराबर रखा जाता है। देखता हूँ कि तुम बहुत बोझ उठा रहे हो। यह किस तरह हल्का किया जाये अथवा किया जा सकता है, यह तो तुम ही जानो। बीजापुरका क्या है? हमारे यहाँ कितनी खादी पड़ी है? सर गंगारामके लिए खेतीके बारेमें टिप्पणी तुरन्त तैयार करना। उनका एक और पत्र आया है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

राधाको अभी मुझसे अलग पत्रकी उम्मीद नही रखनी चाहिए; फिर भी उसे खुद तो लिखते ही रहना चाहिए।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७७४) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ छूटा हुआ है।

५०. पत्र : मगनलाल गांधीको

[७ फरवरी, १९२७][1]

. . .[2] सेवा करें, दूसरे हमारी सार-सँभाल करें, इसके लिए हमारी योग्यता क्या है? तुम इस बातपर विचार करना। संसारकी सेवा तो जब करेंगे तब करेंगे, लेकिन इस समय तो हम, संसार हमें सेवक और सेविका मानकर जो कुछ प्रदान करता है उसे लेते चले जा रहे हैं। हमें चाहिए कि हम, दुनिया हमसे जो आशाएँ रखती है उन्हें पूरा करें। ऐसा करनेमें तुम अपना अंश तो पूरा दोगे न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८३९) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

५१. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

अकोला
मौनवार [७ फरवरी, १९२७]

बहनो,

आज तो मैं आश्रमके कुटुम्बीजनोंके बीच ही मौन रखे हूँ। किशोरलालभाई, गोमतीबहन, नाथजी, तुलसी मेहर और तारा तो आश्रमके ही माने जायेंगे न? और नानाभाई, उनकी धर्मपत्नी और सुशीलाको कौन आश्रमके बाहरका गिनेगा? इसलिए इस सप्ताह मुझसे दूसरे समाचारोंके बजाय तुम्हें इन्हीं कुटुम्बीजनोंका समाचार सुननेकी उम्मीद रखनी चाहिए।

गोमतीबहनको अभीतक हल्का-हल्का बुखार आ जाता है; वह बिस्तरमें पड़ी है। परन्तु प्रसन्न है। चेहरेसे कोई नहीं कह सकता कि वह अभी किसी बड़ी बीमारीसे उठी हैं। इस प्रसन्नताका कारण उसकी श्रद्धा है। हम सबमें ऐसी श्रद्धा पैदा हो।

किशोरलालभाईकी गाड़ी तो वैसी ही चल रही है। यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें पहलेसे कुछ ज्यादा शक्ति आई है। कल रातको तो उन्हें बुखार भी आ गया था। जाड़ा भी लग रहा था। बुखार थोड़ी देरके बाद उतर गया था।

जहाँ स्नेहीजनोंमें बीमारी हो वहाँ नाथजी न हों, यह तो हो ही कैसे सकता है?

१. पत्रमें दूसरोंकी सेवा स्वीकार करनेकी जो चर्चा मिलती है उससे मालूम होता है कि यह पत्र पिछले पत्रके साथ-साथ ही लिखा गया होगा।

२. पत्रका प्रारम्भका भाग उपलब्ध नहीं है।

नानाभाई तो सदाके रोगी हैं। दमेकी बीमारीमें गिरफ्तार हैं। इतनेपर भी उनके मुखपर तो शान्ति ही विराज रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६३८) की फोटो-नकलसे।

५२. पत्र : रामदास गांधीको

अकोला
मौनवार [७ फरवरी, १९२७]

चि० रामदास,

तुम्हारे पत्र मिल रहे हैं। तुम अपना स्वास्थ्य खूब अच्छा कर लेना। यहाँ आज हम गोमतीबहन, किशोरलाल भाई तथा तुलसी मेहरजीके पास हैं। नाथजी भी यहीं हैं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]
दौरेकी तारीखें[१]
इसके बादका कार्यक्रम मैं नहीं जानता।

गुजराती (जी० एन० ६८५३) की फोटो-नकलसे।

५३. पत्र : वी० ए० सुन्दरम्को

८ फरवरी, १९२७

प्रिय सुन्दरम्,

मुझे खुशी है कि आप देवदासके पास हैं। वहाँ रहनेसे उसे अवश्य लाभ होगा। सावित्रीके गलेके कौवोंका ऑपरेशन आपको बिना देर-दार किये करवा देना चाहिए। आप प्रति सप्ताह कविताएँ भेजनेमें अनियमित हो गये थे। मुझे खुशी है कि अब आपने फिर उसे शुरू कर दिया है।

आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ३१९८) की फोटो नकलसे।

१. यहाँ नहीं दी जा रही हैं; इसके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको", ७-२-१९२७।

५४. पत्र : मणिलाल गांधीको

गाड़ीमें जाते हुए
मंगलवार [८ फरवरी, १९२७][1]

चि० मणिलाल,

अब तुम्हें कुछ समाचार दे सकता हूँ। मैं तो सगाई लगभग तय कर चुका हूँ; किन्तु यद्यपि तुमने मुझे सगाई करनेका अधिकार दे दिया है, फिर भी मैं उनका उपयोग नहीं करना चाहता।

इसके साथ सुशीलाका पत्र है। सुशीला ताराबहनकी बड़ी बहन है। वह १९ वर्षकी है। स्वास्थ्य अच्छा है, किन्तु कुछ ऊँचा सुनती है। गुजराती और मराठी जानती है। हिन्दी भी समझ लेती है। बहुत थोड़ी अंग्रेजी भी समझती है। चौथी कक्षातक पढ़ी है। उसका फोटो भी भेज रहा हूँ। वह किशोरलालभाईकी भतीजी है। उसके माता-पिता जीवित हैं। उसे चित्रकला अच्छी आती है और कुछ संगीत भी आता है। हारमोनियम बजा लेती है और गृहकार्यमें कुशल है। उसने अपना यह पत्र किसीकी सहायताके बिना स्वयं लिखा है। तुम दक्षिण आफ्रिकामें विवाह करनेके लिए तैयार हो गये थे यह बात भी मैंने बता दी है। इससे अधिक शुद्ध सम्बन्ध मैं ढूँढ़कर भी नहीं ढूँढ़ सकता था। पहले-पहल यह सुझाव जमनालालजीने ही दिया था। सुशीलाके भाईका[2] ऑपरेशन होनेवाला है। वह स्वस्थ हो जाये तो उसके बाद विवाह ११ मार्चको हो सकता है। उस हालतमें तुम तुरन्त ही रवाना हो सकते हो। किन्तु यदि ऑपरेशन खतरनाक सिद्ध हो तो शोकके कारण विवाह रुक जायेगा।

अब रही तुम्हारी बात। तुम्हारे सम्बन्धमें मैंने यह माना है कि...[3] तुम्हें गर्मी अथवा प्रमेह जैसा कोई रोग नहीं है। मैंने सुशीलासे यह भी कहा है कि...[4] यदि तुम किसी दिन अनीतिके मार्गपर चलने लगो तो वह तुम्हें रोके, और तुम तब भी न रुको तो वह तुम्हें त्याग दे।

अब मुझे तुमसे तुम्हारी सहमतिके साथ यह प्रतिज्ञा चाहिए कि...[5] तुम सुशीलाकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करोगे। उसे अपनी सहचरी मानोगे, दासी कदापि नहीं। अपने शरीरके समान ही उसके शरीरकी भी रक्षा करोगे। उसकी इच्छाके विरुद्ध अपनी विषय-वासनाकी पूर्ति नहीं करोगे; अपितु उसकी सहमतिसे ही विषयोपभोग करोगे। मैं तो यही सलाह दूँगा कि तुम अपने विषयभोगको मर्यादित रखना।

तुम्हारे गुणोंका वर्णन करते हुए मैंने उसे बताया है कि तुम सरल, उदार और प्रेमालु हो तथा तुम्हारा हृदय सेवाभाव और देशप्रेमसे परिपूर्ण है।

१. गांधीजी अकोलासे ८ फरवरीको रवाना हुए थे। देखिए "पत्र: मीराबहनको", ७-२-१९२७।

२. शान्तिलाल मशरूवाला।

३, ४ व ५. यहाँ कुछ पंक्तियाँ छोड़ दी गई हैं।

मेरे ऊपर बहुत बड़ी जवाबदेही है। यह एक भगवत्प्रेमी परिवार है। इनके साथ सम्बन्ध करना मुझे प्रिय है। इन्होंने सब-कुछ मुझे सौंप दिया है। आशा है, तुम मुझे धोखा बिलकुल नही दोगे, क्योंकि यदि सुशीलाका बाल भी बाँका होगा तो मुझे गहरा आघात पहुँचेगा। यह बालिका मुझे अपने नामके अनुरूप ही गुणवती[1] और भोली-भाली लगी है।

स्त्रियोंके सम्बन्धमें मेरी भावना तुम अच्छी तरह जानते हो। उनके साथ पुरुष ठीक व्यवहार नही करते। तुम मेरे आदर्शका पालन कर सकते हो, ऐसा मानकर मैंने यह सम्बन्ध कराना स्वीकार किया है।

अब यदि तुम इस सम्बन्धके लिए तैयार हो तो तार देना और ब्यौरेवार पत्र लिखना। यदि तुम्हें यह सम्बन्ध पसन्द न हो अथवा तुम उपर्युक्त शर्तोंका पालन न कर सको तो मुझे 'स्वीकार करनेमें असमर्थ'—यह[2] तार देना, अन्यथा 'सम्बन्ध स्वीकार, आपकी कसौटी पूरी कर सकूँगा'[3]—यह तार देना।

मुझे विस्तृत पत्र लिखना। मेरा मुकाम १० को जलगाँव. ११ को जलगाँव, १२ को चोपड़ा, १३, १४ और १५ को धूलिया रहेगा।

ईश्वरसे डरना और मुझे शुद्ध सत्य ही लिखना। प्रभु तुम्हारा कल्याण करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१२४) से।
सौजन्य: सुशीलाबहन गांधी

५५. भाषण: राष्ट्रीय पाठशाला, खामगाँवमें

८ फरवरी, १९२७

मैंने यह जो इतनी परीक्षा[4] ली इसका कारण यह है कि आपकी प्रशंसा मैंने बहुत सुनी थी और अब मैं जो-कुछ कहने जा रहा हूँ वह आलोचनाके रूपमें नहीं बल्कि आपकी कोशिशोंकी कद्र करते हुए आपकी मदद करनेके खयालसे कह रहा हूँ। मुझे आपसे यह कहना ही चाहिए कि यदि आपका सबसे तेजस्वी बालक ऐसा है, तो मुझे सन्तोष नही हुआ। उसके [संस्कृत शब्दोंके] उच्चारणसे मुझे सन्तोष नही हुआ और अनुवादसे भी नही। अंग्रेजी उच्चारण भी खराब था। संस्कृत हो या अंग्रेजी—हमें ऐसे ही शिक्षक रखने चाहिए जो इन भाषाओंको ठीक-ठीक सिखा सकें। यदि ऐसा शिक्षक उपलब्ध न हो तो विषय सिखाना ही नही चाहिए। परन्तु

१. मूल पत्रमें यहां अंग्रेजी 'गुडनेचर्ड' शब्द है
२ व ३. मूलमें क्रमशः 'अनेबल एक्सेप्ट' और 'एप्रूव मैच कैन सेटिसफाई योर टेस्ट' है।
४. गांधीजीने अंग्रेजी, संस्कृत और कताई इन तीन विषयोंमें उस संस्थाके सबसे कुशाग्रबुद्धि विद्यार्थीकी परीक्षा ली थी।

हमने तो सत्याग्रह छोड़ दिया है, इसलिए हम जनताको येन-केन रिझानेकी दृष्टिसे अपने कार्यक्रम बना लेते हैं। हमें अपनी शिक्षा प्रणालीमें सत्यका ही अनुसरण करना चाहिए। अब मैं चरखेके बारेमें आप लोगोंकी जो धारणा है उसमें किंचित् परिवर्तन करनेका सुझाव देना चाहता हूँ। आप लोग अनेक उद्योगोंकी तालीम देते हैं। आपने चरखे-को अपने उन अनेक उद्योगोंमें से एकके रूपमें स्थान दिया है। परन्तु चरखा तो एक अद्वितीय उद्योग है। इसलिए उसको अनेक चीजोंमें से एक मान लेना न तो शोभाजनक है और न व्यवहारिक। चरखा अन्य उद्योगोंका सजातीय उद्योग नहीं है — चरखेका तो अपना अनोखा स्थान है। उद्योग तो आजीविकाके निमित्त सिखाए जाते हैं। यदि चरखा जीविकाके लिए सिखाया जा रहा है तो उसका स्थान कनिष्ठ हो जायेगा। तब वह दूसरे धन्धों जैसा ही एक धन्धा बन जाता है। और उस हालतमें उसकी तालीम न दी जाये तो भी काम चल सकता है। मुझे एक अनाथाश्रममें ले जाया गया था। वहाँ मुझे बताया गया कि वे लोग कताईका काम भी शुरू करनेका इरादा रखते हैं। मैंने कहा कि आपसे यह न होगा। क्योंकि आप तो अनेक उद्योग सिखानेके इच्छुक हैं। मैं इस मनोवृत्तिको व्यभिचार मानता हूँ। हमारे जीवनमें से एकनिष्ठता विदा हो गई है। सच्चा ब्रह्मचारी तो वही है जो एकनिष्ठ हो और ब्रह्मनिष्ठ हो। आप यदि चरखेको स्थान देना ही चाहते हैं तो उसका स्थान निराला ही होना चाहिए। हमारी राष्ट्रीय संस्थाओंकी विशेषता यह होनी चाहिए कि हम चरखा चलानेको महायज्ञ मानें और जिस प्रकार महायज्ञकी तैयारी करते हैं उसी तरह इसकी भी तैयारी करें। चरखेके प्रचारके लिए अंग्रेजीके ज्ञानकी आवश्यकता कहाँ पड़ती है, चरखेको 'गीता' से कितना समर्थन मिलता है, बढ़ई और लुहारका काम सीख लेनेपर चरखेमें कितना सुधार किया जा सकता है — इन सब बातोंपर आपको विचार करना चाहिए। क्या आप जानते हैं कि हमारे यहाँ आज एक भी ऐसी संस्था नहीं है जिसमें हमारी जरूरतके योग्य तकुए पर्याप्त संख्यामें मिल सकते हों। एक भी संस्थामें चरखेका अध्ययन शास्त्रीय पद्धतिसे नहीं किया जा रहा है। आप यह विशेषता प्राप्त कीजिये। आपका कारीगर यह सोचे कि वह आदर्श चरखा कैसे बना सकता है। उसे आदर्श चरखेके पहियेकी परिधि, वजन, रफ्तार, चमरखोंकी स्थिति इत्यादि बातें पूर्ण रूपसे जाननेका प्रयत्न करना चाहिए। आपका बढ़ई अच्छे किवाड़ या सन्दूक बनानेकी बात न सोचे; उसे तो अच्छेसे-अच्छे चरखे बनानेका इरादा रखना चाहिए। आपके अध्ययनका केन्द्र चरखा ही हो। आप चरखेको धार्मिक और पारमार्थिक दृष्टिसे देखें, इसके शास्त्रको जानकर इसका प्रचार करनेके लिए तैयार हो जायें। क्योंकि आप लोग यहाँ समाजके सेवक बननेकी तैयारी कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-२-१९२७

५६. भाषण : अस्पृश्यतापर, खामगाँवमें[1]

८ फरवरी, १९२७

अगर मैं किसी वस्तुको अस्पृश्य मान सकता हूँ, तो वह वस्तु है विलायती कपड़ा। जो भी वस्तु राष्ट्रके लिए अहितकर है वह अस्पृश्य है। जिस किसी वस्तुसे राष्ट्रको हानि पहुँचनेका अदेशा हो वह अस्पृश्य है। शराब अस्पृश्य है; विलायती कपड़ा अस्पृश्य है; मगर कोई भी मनुष्य अस्पृश्य नही है। देशवासियोके पंचमाशको अस्पृश्य मानना तो मैं अत्यन्त क्रूर अथवा पैशाचिक कार्य मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-२-१९२७

५७. भाषण : पाचोरामें, तिलक स्वराज्य कोषपर

८ फरवरी, १९२७

महात्माजीने खद्दर तथा अस्पृश्यता निवारणकी जरूरतपर जोर देते हुए भाषण दिया। उनसे कुछ प्रश्न किये गये और उन्होंने उन प्रश्नोंका जवाब दिया। एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि तिलक स्वराज्य कोषके लिए इकट्ठा किया गया एक करोड़ रुपया किस तरह खर्च किया गया है।

महात्माजीने इस प्रश्नका विस्तारपूर्वक उत्तर देते हुए जिज्ञासु-जनोंको अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा प्रकाशित आय-व्ययका ब्यौरा ध्यानसे देखनेके लिए कहा। उसमें पाई-पाईका हिसाब ठीक तरहसे दिया गया था। उन्होंने पूछा कि क्या आप सेठ रेवाशंकर जगजीवन झवेरी और सेठ जमनालाल बजाज सरीखे कोषाध्यक्षोंकी ईमानदारीपर विश्वास नहीं करते? तथ्य तो यह है कि कुछ लोगोंने खास कामोंपर खर्च करनेके लिए अलगसे दान दिये है और वे आप लोगोंके लिए खर्च किये जा रहे है। उदाहरणार्थ खुद सेठ रेवाशंकर भाईने ही काठियावाड़में शैक्षणिक कार्योके लिए ४०,००० रु० दिये है। बम्बईमें एक सज्जनने अस्पृश्यता निवारणके लिए करीब दो-तीन लाख रुपये दिये है और वे सही तरहसे उपयोगमें लाये जा रहे है। दोनों कोषाध्यक्षों और अखिल भारतीय चरखा संघके सचिव श्री शंकरलाल बैंकरने भी काफी अच्छी रकम चंदेमें दी है; इसलिए ऐसी सम्भावना नहीं है कि वे लोग कोषके प्रबन्धमें लापरवाही बरतेंगे। हालाँकि उनमेंसे हरएक व्यक्ति योग्य व्यवसायी व्यक्ति है, फिर

1. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

भी मैं यह स्वीकार करनेको तैयार हूँ कि कुछ मामलोंमें नुकसान हुआ है। लेकिन किसी भी हालतमें कुल नुकसान ५०,००० रुपयेसे ज्यादाका नहीं हो सकता। वे नुकसान ऐसी अपरिहार्य जोखिम उठानेके कारण हुए हैं, जो हर व्यावसायिकको उठानी पड़ती है। उदाहरणके लिए विहारमें बहुतसे लोगोंको खादी उधार दी गई थी और वे लोग उधारी नहीं चुका सके। आन्ध्रमें कुछ लोगोंने कोंडा वेंकटप्पैयाको धोखा दिया। उन्होंने कुछ रकमें लोगोंमें बाँट दी थी और वे आसानीसे वसूल नहीं की जा सकीं। उन्होंने उन लोगोंपर जरूरतसे ज्यादा विश्वास किया और धोखा हुआ। सभी जानते हैं कि उन्होंने अपने लिये एक पाई भी नहीं ली है। फिर कुछ मामलोंमें नुकसान ही हुआ; ये ऐसे नुकसान हैं जिन्हें अतिशय सावधानी वरतनेपर भी व्यक्ति सदैव नहीं टाल पाता। अभी हालमें श्रीयुत महादेव देसाईने, जो पिछले दस वर्षोंसे सेवाकार्यमें लगे हैं, एक विश्वासपात्र 'हम्माल' (कुली) की तरह काम करते हुए भण्डारामें ४०० रु० खो दिये। क्या मैं उनसे वह रुपया चुकानेको कह सकता हूँ? हालाँकि महादेव देसाई स्वयं तो उस नुकसानकी भरपाई यथासम्भव शीघ्र ही करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, फिर भी मुझे खर्चके हिसाव-कितावमें उस रकमको खोई हुई रकमकी तरह ही दर्ज करना होगा।

ये चीजें तो सामान्य रूपसे व्यवसायके दौरमें होती ही हैं। मैं तो श्रोताओंको यहाँतक आगाह करना चाहूँगा कि एकाध बार जालसाजी भी हो सकती है। लेकिन यह सब बातें जानते हुए भी यदि आपका ऐसा खयाल हो कि कुछ अच्छा काम हो रहा है तो आप यथासम्भव जो-कुछ देना चाहें, दे सकते हैं। खुद मैं तो उन कार्य-कर्त्ताओंका विश्वास करूँगा ही जिनपर जनताका विश्वास है। उदाहरणके लिए श्री दास्ताने आपके कार्यकर्त्ता हैं। यदि वे आपके विश्वासभाजन हैं तो मैं उन्हें अविश्वासकी भावनासे क्यों देखूँ। महात्माजी ने लोगोंको आश्वस्त किया कि पाई-पाईके जमा-खर्चका हिसाब दिया जायेगा और उसमें हरएक नुकसान ठीक-ठीक साफ तौरपर दिखाया जायेगा।

ये सब जानकर यदि आप लोग देशबन्धु स्मारक कोषमें जो कि खद्दर-कोष ही है, चंदा देना चाहते हैं, तो दे सकते हैं। मैं आपको भरोसा दिलाता हूँ कि आप जो भी कुछ देंगे, सावधानीसे खर्च किया जायेगा और यथासम्भव अच्छेसे-अच्छे ढंगसे उसका हिसाब रखा जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-२-१९२७

५८. समय न चूकें

अप्रैलका अविस्मरणीय महीना[1] समीप आ रहा है और उसके साथ आ रही है राष्ट्रके उस जन्मकी स्मृति, जिसमें लाखों आदमियोंने अद्वितीय उल्लाससे भाग लिया था और यह दिखा दिया था कि अगर हम और कुछ न करे, महज एक होकर काम करे तो राष्ट्र क्या नही कर सकता। हमें इसी महीनेमें यह भी देखनेको मिला था कि दर्पपूर्ण वदला लिये विना न माननेवाला और निर्दय साम्राज्यवाद अपनी रक्षाके लिए क्या नही कर सकता। राष्ट्रके जीवनमें ६ और १३ अप्रैलके दिन कभी न भूलने लायक दिन है। तवसे कौम इसी वातका प्रयत्न करती आ रही है कि वह वुराईका जवाव वुराईसे न दे और वदला लेनेके भावसे प्रेरित होकर काम न करे, वल्कि उस संयुक्त खूनकी नदीका, जो जलियाँवालामें वही थी, उपयोग आत्मशुद्धिके लिए करे। हमारा राष्ट्र चरखा, खादी, अछूतोद्धार और भिन्न-भिन्न सम्प्रदायो और धर्मोकी एकतामें जो अहिंसाका भाव व्यक्त होता है, उसीके द्वारा आत्माभिव्यक्ति करनेका प्रयत्न करता रहा है। लेकिन यह तो स्पष्ट है कि खादी ही एकमात्र ऐसा कार्यक्रम है, जिसमें सारा राष्ट्र हाथ वँटा सकता है। अगर हमें अहिंसात्मक ढंगसे कार्य करना है, तो हमें अवश्य ही अपनी कार्यविधि रचनात्मक वनानी चाहिए। अपने आपमें तथा अपने तरीकोमें अचल विश्वास रखते हुए धैर्य और शान्तिके साथ कुछ रचनात्मक कार्य करना होगा। हमें अपने भीतर एकता, शक्ति और दृढ अनुशासन पैदा करना होगा। हमें लाख कठिनाइयाँ आनेपर भी अपने विचारोको कार्यरूपमें परिणत करना सीखना होगा। हमें समझ लेना चाहिए कि अंग्रेजोका व्यापार हमपर जवरन लादा गया है और उसके फलस्वरूप हमारे देशमें अंग्रेजी शासन है। अगर हम अंग्रेजी व्यापारको शुद्ध वना सकें तो अंग्रेजोके साथ अपने सम्वन्ध हम सहज ही विकारविहीन वना सकेंगे। अंग्रेजोसे, सच तो यह है कि सारी दुनियासे हमारा व्यापार सम्वन्ध हमारी अपनी शर्तोके अनुसार होना चाहिए; और इसलिए उसका हम दोनोंके लिए फायदेमन्द और पूर्णतया ऐच्छिक होना आवश्यक है। मगर लंकाशायरका कपड़ा हमारे शोषणका चिह्न और हमारी विवशताका परिचायक है। इसके विपरीत खादी आत्मनिर्भरता, स्वावलम्वन-वृत्ति और स्वाधीनताका चिह्न है—और वह भी दो चार व्यक्तियोके समाजो या सम्प्रदायोकी नही, वल्कि सारे राष्ट्रकी आत्मनिर्भरता, स्वावलम्वन-वृत्ति और स्वाधीनताका चिह्न है। यह ऐसा आन्दोलन है जिसमें राजा और रक, मर्द और औरत, लडके और लड़कियाँ, हिन्दू, मुसलमान और ईसाई, पारसी और यहूदी, अंग्रेज और अमेरिकी और जापानी सभी, अगर वे हिन्दुस्तानका हित चाहते हैं और इसके शोपणको रोकना चाहते हैं, तो हाथ वँटा सकते है। इस प्रकार यह आन्दोलन अपने ढंगका निराला है। इससे सिर्फ, कुछ ही लोगोका या

१. अप्रैल १९१९। अभिप्राय जलियाँवाला काण्डसे है।

अधिकांश लोगोंका ही नहीं, बल्कि सभीका भला होगा। हम लोग आगामी राष्ट्रीय सप्ताहमें चाहे जितने अन्य काम क्यों न करें मगर खादीके उत्पादन और वितरणकी व्यवस्था तो जरूर ही करें, उसके तरीके ये हैं :

१. हममेंसे प्रत्येक व्यक्ति जितनी खादी खरीद सके, उतनी खरीदे।

२. हम जितनी खादी बेच सकें, उतनी बेचें।

३. हम जितना सूत कात सकें, उतना कातें।

४. हम अपनी शक्ति-भर अ० भा० च० संघको सहायता दें और दूसरोंसे दिलायें।

५. अन्तमें, अगर हममें इच्छाबल हो और हमारे पास अवकाश हो तो हम खादीके कार्यमें तन-मनसे लग जायें।

यह लिखते हुए मेरे मनमें यह विचार उठता है कि जो सवाल आँखके सामने मौजूद है उसका क्या होगा? बंगालके उन नजरबन्दोंका क्या होगा, जो जेलोंमें सड़ रहे है, जिन्हें न उनका दोष बताया गया है, न जिनपर मुकदमा चलाया गया है और न जिन्हें इसका पता है कि वे कितने दिन कैदमें रखे जायेंगे? किन्तु मेरा उत्तर बिलकुल स्पष्ट है। यदि मै उन्हें मुक्त करानेका कोई दूसरा अच्छा बाअसर तरीका ढूंढ़ सकता, तो मैं उसे काममें लाता और जनताको आज ही बता देता; मगर वैसा कोई तरीका है नहीं। यह तरीका धीमा भले ही मालूम पड़े, मगर मेरी नम्र सम्मतिमें यही सबसे निश्चित और शीघ्र फलदायी तरीका है। इसलिए जिन्हें खादीमें विश्वास हो या खादीके सिवा और किसी दूसरी चीजमें विश्वास न हो, वे राष्ट्रीय सप्ताहमें अपनी शक्ति-भर खादीका काम करें। सच्चा सिपाही कूच करते हुए अन्तिम सफलता पानेके उपायोंपर बहस नहीं करता। वह तो यह विश्वास रखता है कि अगर वह अपना साधारण काम ठीक-ठीक करता रहेगा तो उसकी सेना किसी-न-किसी प्रकार लड़ाईमें जरूर जीतेगी। हम सबको इसी भावनाके साथ काम करना चाहिए। हमें भविष्यकी बात जाननेकी शक्ति प्राप्त नहीं है। मगर अपना-अपना काम ठीक तरहसे करनेका ज्ञान सभीको मिला है। तब हम वही काम करें, जिसके बारेमें हम जानते हैं कि इसे कर पाना हमारे लिए सम्भव है। मगर बात इतनी ही है कि इच्छाबल अवश्य हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-२-१९२७

५९. राष्ट्रभाषा

मैंने जो सीधा-सादा अनुच्छेद सार्वजनिक सभाओंमें अंग्रेजी बोलनेकी जिस बुरी आदतके बारेमें लिखा था और सौभाग्यसे जो आदत दिनपर-दिन कम होती जा रही है — उसके उत्तरमें एक पत्रलेखक लिखते हैं :[1]

> २८ जनवरीके 'हिन्दू' में आपके 'यंग इंडिया' में छपे लेखको[2] पूराका-पूरा उद्धृत किया गया है, जिसमें आपने यह सुझाव रखा है कि आपको दक्षिण भारतके प्रस्तावित दौरेमें जो भी मानपत्र दिये जायें, वे सब वहाँकी स्थानीय भाषामें होने चाहिए, और उनको आपने यह भी सुझाव दिया है कि हिन्दी भाषान्तर आपकी सहूलियतके लिए आपको दे दिया जाये। मैं यह भी देखता हूँ कि आपका ख्याल यह है कि अब वह समय आ गया है जब दक्षिण भारतमें बड़ी सार्वजनिक सभाओंमें अंग्रेजीका प्रयोग बन्द कर देना चाहिए। आपके मतानुसार तो अंग्रेजी जाननेवाले नेता ही हिन्दी न सीखनेका हठ करके जनताके बीच हमारे कामकी पर्याप्त प्रगतिमें बाधा डाल रहे हैं। लेकिन सच बात तो यह लगती है कि अगर यह अंग्रेजी भाषा न होती तो भारतमें जैसा सक्रिय राजनीतिक जीवन आज है, वह न होता।...
>
> जैसा कि आप कहते हैं, खान-मजदूरोंके बीच खड़े होकर अंग्रेजीमें व्याख्यान देना उनका अपमान करना है, उसी प्रकार मेरा मत है कि जहाँ देशके भिन्न-भिन्न भागोंसे श्रोतागण एकत्रित हुए हों, वहाँ अंग्रेजीको छोड़कर अन्य किसी भाषाका प्रयोग करना उनका अपमान करना है। आपको याद होगा कि इस साल कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्षसे[3] पहले हिन्दीमें बोलनेके लिए कहा गया था। किन्तु उन्होंने अपने असाधारण साहस और उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण असाधारण चातुर्यसे उस अत्यन्त असमंजसपूर्ण स्थितिको सँभाल लिया। यदि सभापति महोदय अपनी देशी भाषामें बोलते, तो उनका भाषण कितने लोग समझ पाते? अथवा एकत्रित प्रतिनिधियोंमें से कितने उनका पूरा भाषण सुननेके लिए बैठे रहते? इसलिए जबतक हिन्दुस्तान और बर्माके लिए उपयुक्त, सबकी सहमतिसे एक सामान्य हिन्दुस्तानी भाषा निश्चित नहीं होती, तबतक भारतीय लोगोंमें पारस्परिक व्यवहारका माध्यम अंग्रेजी भाषा ही रहनी चाहिए और रहेगी। इसलिए जबतक सारे देशके लिए एक सर्वसामान्य भाषा विकसित नहीं हो जाती, तबतक आपकी स्थितिवाले नेताको अंग्रेजी भाषाके प्रयोगका

१. केवल अंशतः उद्धृत।
२. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५८१-८२।
३. एस० श्रीनिवास आयंगार।

> विरोध नहीं करना चाहिए और लोगोंसे एक बिलकुल भिन्न भाषा पढ़नेके लिए कहकर उनकी वर्तमान कठिनाइयोंमें वृद्धि नहीं करनी चाहिए।...
>
> आपने अपने लेखमें कहा है कि अगर माध्यम अंग्रेजी रखा जायेगा तो जनसाधारणसे सम्पर्क करनेमें कठिनाई होगी। मैं इस सम्बन्धमें आपसे बिलकुल सहमत हूँ। लेकिन, पहले जनसाधारणसे सम्पर्क उनके अपने तथा उनके ही बीच रहनेवाले लोगोंको करना चाहिए। यह तो ग्रहीत ही है कि उनसे सम्पर्क करते समय [ये लोग] अपनी ही भाषाका प्रयोग करेंगे।...

मैं इस पत्रको यहाँ इसलिए प्रकाशित कर रहा हूँ कि यह एक ऐसा दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जिसपर विचार करना जरूरी है। पत्र लिखनेवालेने अपने आलसीपनका समर्थन करनेकी अपनी उत्कट अभिलाषामें कुछ मूलभूत तथ्योंको भुला दिया है, क्योंकि उनकी इस मनोवृत्तिका किसी दूसरी तरहसे चित्रण कर सकना और उसे कोई विशेष नाम दे पाना कठिन है। मूलभूत तथ्य ये हैं: देशवासियोंमें से मुश्किलसे एक फीसदी लोग अंग्रेजी भाषा जानते हैं। सर्वसाधारण जनता उसे कभी नहीं सीख सकती, और हमको सभी राजनीतिक मामलोंमें रोज-ब-रोज विचारोंके आदान-प्रदानके लिए सर्वसाधारण जनतासे अधिकाधिक सम्पर्कमें आना पड़ेगा। कांग्रेसमें आनेवाले उन प्रतिनिधियों तथा दर्शकोंकी संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जाती है, जिनमें से अधिकांश अंग्रेजी नहीं जानते और न अंग्रेजी समझते हैं और जब यह कांग्रेस पूरी तौरपर एक जनतान्त्रिक संस्था बन जायेगी और उसके प्रतिनिधि मेहतर, चमार, किसान, धोबी, दर्जी इत्यादि होंगे, तब उसमें अंग्रेजी समझनेवाले लोग बहुत ही कम हो जायेंगे। आज जब कि मुश्किलसे एक फीसदी लोग अंग्रेजी भाषाका ज्ञान रखते हैं, भारतकी आबादीके ६० फीसदीसे अधिक लोग मामूली ग्रामीण हिन्दुस्तानी भाषा समझ सकते हैं। किसी भी भारतवासीके लिए अंग्रेजीकी अपेक्षा किसी भी हालतमें हिन्दुस्तानी सीखना बहुत ही ज्यादा आसान है। ये तथ्य हैं, लेकिन पत्रलेखकने इनकी उपेक्षा कर दी है।

इसके अतिरिक्त अंग्रेजीको कांग्रेसके कामकाजकी अधिकृत भाषा बनानेकी धुनमें पत्रलेखक उस आन्दोलनको भूल गये जो कांग्रेसमें उसके प्रादुर्भाव कालसे ही हिन्दुस्तानीको अधिक मान्यता प्राप्त कराने और जनसामान्यका माध्यम बनानेके पक्षमें जारी है और उन्होंने यह भी भुला दिया है कि कांग्रेसके समक्ष यह प्रस्ताव भी है कि हिन्दुस्तानीको राष्ट्रभाषा बना दिया जाये। पत्रलेखकका शायद यह खयाल है कि मैं अंग्रेजी पढ़नातक बुरा बताता हूँ, जब कि यह बात मैंने कभी नहीं कही। इससे कोई इनकार नहीं कर सकता कि अंग्रेजी जाननेवाले हिन्दुस्तानियोंने देशकी बड़ी भारी सेवा की है, लेकिन दुर्भाग्यसे, इस बातसे भी तो कोई इनकार नहीं कर सकता कि अब आगेकी तरक्कीमें हम अंग्रेजी बोलनेवाले भारतीय ही इसलिए बाधा डाल रहे हैं कि हम सर्वसाधारणकी भाषाको सीखने तथा उनके बीचमें उन तरीकोंसे, जो उनके लिए सबसे ज्यादा उपयुक्त हैं, काम करनेसे इनकार करते हैं। लेखकने डॉ० चैनका जो उदाहरण दिया है, वह बेमौका है। मुझे यह नहीं मालूम

कि डॉ० चैन क्या कर रहे है, लेकिन इतना मैं अवश्य जानता हूँ कि वे चीनकी सर्वसाधारण जनतासे अंग्रेजी भाषामें नही बोलते। मेरे लिखनेका केवल इतना ही अभिप्राय है कि हमारी मिश्रित सभाओंमें, जहाँ प्रान्तीय भाषाको सब लोग नही समझ सकते, अगर किसी दूसरी भाषाका उपयोग करना हो तो वह हिन्दुस्तानी भाषा ही होनी चाहिए। नि सन्देह यह ऐसा सुझाव है जिसका विरोध नही किया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १०-२-१९२७

६०. सर हबीबुल्लाका शिष्टमण्डल

सर हबीबुल्लाके शिष्टमण्डलके वापस लौट आनेपर मैं उसका अत्यन्त हार्दिक स्वागत करता हूँ। शिष्टमण्डलके कार्यका क्या परिणाम[1] हुआ इस सम्बन्धमें अभी जनताको पर्याप्त जानकारी नही है, इसलिए वह अपना कोई निश्चित मत नही बना सकती। किन्तु एक बात निश्चित है कि शिष्टमण्डलके सदस्योंने अपनी व्यवहार-कुशलता, अपनी योग्यता और अपनी एकतासे गोलमेज परिषदके समय वातावरणको पूर्णत. शान्तिपूर्ण रखनेमें कम सहायता नही दी। हम यह आशा अवश्य कर सकते है कि इस वातावरणका प्रभाव उनके कार्यके परिणामपर भी पड़ा होगा। हमें दक्षिण आफ्रिकासे एक तार मिला है, जिसमें वहाँ बसे हुए कुछ भारतीयोंने अपनी राय प्रकट की है और गोलमेज परिषदके परिणामोंको उन्होंने अस्वीकार किया है। इस तारको बहुत महत्त्व देनेकी जरूरत नही है। इस विषयमें इतनी जल्दी राय नही दी जा सकती। ऐसी रायका आधार केवल अनुमान ही हो सकता है, क्योंकि बात-चीतका परिणाम क्या हुआ है, इसे कोई नही जानता। इसलिए जबतक दोनो पक्षोंके बीच जो समझौता हुआ बताते हैं उसका पूरा मसविदा हमारे सामने नही आ जाता तबतक हम अपना निर्णय रोकनेके लिए बाध्य हैं। भारतीयोंके हितोंकी पूरी निगरानी करनेके लिए सदैव सजग रहनेवाले श्री एन्ड्रयूज दक्षिण आफ्रिकामें हैं।

इस सम्बन्धमें मुझे एक भारतीय प्रवासीने परिषदकी कार्रवाईके सम्बन्धमें निम्न-लिखित विचार[2] लिख भेजे हैं; वे उचित हैं:

> रायटर समाचार एजेंसी और श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजके भेजे हुए हालके समाचारोंमें कहा गया है कि दक्षिण आफ्रिकी संघको जो उच्चतर दर्जा प्राप्त हुआ है उसके बाद उसने भारतीय प्रश्नपर अधिक उदारतासे विचार करना शुरू किया है।
>
> माननीय शास्त्रीके[3] कथनानुसार भी गोलमेज परिषद सफलतापूर्वक समाप्त हुई है। श्री शास्त्रीने संघ और भारत सरकारके प्रतिनिधियोंके बीच हुए समझौतेपर

१. देखिए "सम्मानजनक समझौता", २४-२-१९२७।
२. यहाँ उन्हें अंशतः ही उद्धृत किया जा रहा है।
३. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री।

पूरा सन्तोष प्रकट किया है। हम यही चाहते है कि उनकी आशाएँ पूरी हों। श्री शास्त्रीने भारतीय प्रवासियोंको यह सलाह भी दी है, 'यदि आप लोग, जो भारतसे यहाँ आये है उचित व्यवहार करेंगे तो आपको अपने उचित अधिकार जल्दी ही मिल जायेंगे . . . और उतने सब अधिकार जिन्हें आप पाना चाहते हैं। श्री शास्त्रीने इस प्रकार भारतीय प्रवासियोंको यह आशा बँधा दी है कि उन्हें पूर्ण नागरिक अधिकार भी दिये जा सकते है। भारतीयोंको नागरिक अधिकार चाहे दिये जायें, चाहे न दिये जायें, लेकिन यदि भारतीयोंको सतानेकी और खदेड़नेकी जो नीति इस समय काममें लाई जा रही है, वह त्याग दी जाये और उन्हें बिना छेड़छाड़ किये और सताये बिना ईमानदारीसे जीविका कमाने दी जाये तो भी परिषदमें किया गया श्रम व्यर्थ नहीं माना जायेगा।

यदि उचित व्यवहारकी सलाह संघ-सरकारको[1] दी जाती तो अच्छा होता। जिस समय हमें यह आशा बँधाई जाती है कि भारतीयोंका प्रश्न सन्तोषजनक रूपसे हल हो गया है और हमें यह कहा जाता है कि [गोरोंके] हृदयमें परिवर्तन हो गया है, उस समय भी हम देखते हैं कि प्रान्तीय सरकारें संघ सरकारकी अनुमतिसे भारतीयोंको उनके आजीविकाके साधनोंसे वंचित करने और उनको उनके स्थानोंसे उखाड़नेकी नीतिपर लगातार अमल करती जा रही हैं।

जिस क्षेत्रको पीटरमैरित्सबर्गकी नगर परिषदने यूरोपीयोंका क्षेत्र कहा है, उस क्षेत्रसे वह भारतीय व्यापारियोंके परवाने नये करनेसे इनकार करके उन्हें एक-एक करके हटाती चली जा रही है। इस प्रकार अनेक पुरानी व्यापारी पेढ़ियोंको इन स्थानोंमें अपना-अपना कार-बार बन्द कर देना पड़ा है और उन्हें उसका कोई मुआवजा भी नहीं दिया गया है। ३१ दिसम्बरके 'इंडियन ओपिनियन' में छपी एक खबरसे हमें मालूम हुआ है कि कई दर्जियों, मोचियों और नाइयोंको, जो वहाँ पिछले दस, पन्द्रह और बीस वर्षोंसे अपने-अपने धन्धे चला रहे थे, केवल भारतीय होनेके कारण परवाने देनेसे इनकार कर दिया गया है और अपील किये जानेके बाद प्रत्येक मामलेमें नगर परिषदने परवाना अधिकारीके उन फैसलोंको कायम रखा है। गोलमेज परिषदके चलते समय भी ऐसा होना बड़े आश्चर्यकी बात है और यह इस बातका एक ज्वलन्त प्रमाण है कि कौनसा पक्ष उचित व्यवहार नहीं कर रहा है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १०-२-१९२७

१. यहाँ साधन-सूत्रमें भूलसे "भारत-सरकार" छप गया है। यंग इंडिया १७-२-१९२७ में इस भूलको सुधार दिया गया है।

६१. पत्र : मणिबहन पटेलको

गुरुवार, १० फरवरी, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारे दो पत्र मिले। हिन्दी पढना शुरू कर दिया, यह अच्छा किया। जो भी करो उसके साथ स्वास्थ्यकी रक्षा करती रहो। तब मैं निश्चिन्त रह सकूंगा।

अक्षरोंको कदापि मत बिगड़ने दो। भले ही लिखनेमें देर लगे। थोड़े समयमें सुधर जायेंगे और गति बढ़ जायेगी।

पूनियाँ निस्सन्देह बहुत ही अच्छी हैं। मैं चाहता हूँ कि रुईसे सम्बन्धित प्रत्येक क्रियामें तुम्हें पहली श्रेणी मिले। तुम्हारे समयका अच्छेसे-अच्छा उपयोग कन्या-पाठशालाओंमें कताई सिखलानेमें होगा। और अन्तमें ईश्वर तुम्हारी तबीयत ठीक रखे तो तुम्हें गरीब बहनोंका कल्याण करना है। स्त्रियोंमें जो काम करना है उसका कोई अन्त नहीं है और पुरुष तो उसे सीमित रूपमें ही कर सकते हैं।

भोजनालयकी आलोचना मुझे पूरी-पूरी लिखना। और शंकरको[1] प्रेमपूर्वक बताना। एक-दो दिन खुद करके भी बताया जा सकता है। उसमें रोजाना पूरा भाग लेनेकी जरूरत नहीं। तुम्हें दूसरोंके साथ रहनेकी कला सीखनी चाहिए। मुझे प्रसन्नता तब होगी जब मैं महादेव और देवदासकी तरह तुम्हें भी चाहे जहाँ निर्भय हो कर रख सकूँ। मुझे तब संतोष होगा जब न तो तुम्हें किसीसे उद्वेगका अनुभव हो और न किसी दूसरेको तुमसे।

बापूके आशीर्वाद

चि० मणिबहन पटेल
सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१. आश्रमके संयुक्त भोजनालयकी देखभाल करनेवाले एक भाई।

६२. पत्र : जमनालाल बजाजको

गुरुवार [१० फरवरी, १९२७][1]

चि० जमनालाल,

तुलसी मेहरजी कहते हैं कि उनके बारेमें मैं तुम्हें जो लिखूँगा, तुम्हारा ज्यादा उसीके अनुसार कार्य करनेका है। मैं स्टेशन जा रहा हूँ, इसलिए इतना ही लिखता हूँ।

मेरा खयाल तो यह है कि जितना घाटा आये, वह चरखा संघसे अथवा आश्रमसे दिया जाये। यदि तुम्हें यह ठीक लगे कि चरखा संघसे देकर कौंसिलकी सम्मति बादमें ली जाये तो वैसा कर लेना। नहीं तो आश्रमके नाम लिखाकर रुई दिला देना।

उनके पास तीन सौ रुपये हैं। वे बोरोंमें बन्दकी हुई जितनी रुई रेलके एक डिब्बेमें आ जाये उतनी रुई चाहते हैं। अगर इसमें ८०० रुपयेसे अधिक खर्च न बैठे, तो उतनी रुई दिला देना। उनके ३०० रुपये [इन आठ सौ से] अलग माने जायें।

अगर कम रुई भेजनेसे रेल-किराया कम हो तो कम भेजना उचित समझता हूँ। तुलसी मेहरजी पचास बंगाली मन चाहते हैं, क्योंकि उनका खयाल है कि ५० मन या २५ मनका रक्सौलतक किराया एक ही पड़ेगा। अगर यही बात हो तो ५० मन दे देना ही उचित मालूम होता है। अगर इसमें कोई बात लिखनी रह गई हो तो जैसा ठीक लगे, वैसा कर लेना। तुम्हे जो ठीक जँचे वही मेरा भी अभिप्राय मान लेना।

बम्बई जाओ तो मेरा जो सामान, पुस्तकें, कपड़े आदि हैं, लेते जाना। वहाँ जाकर डाक्टरकी सलाह हो तो ऑपरेशन तुरन्त करा डालना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८३) की फोटो-नकलसे।

१. तुलसी मेहर ७ फरवरी, १९२७ को गांधीजीके साथ थे; देखिए "पत्र : मीराबहनको", ७-२-१९२७।

६३. भाषण : जलगाँवमें[1]

१० फरवरी, १९२७

इस दौरेकी विशेषताओंमें से एक बात यह थी कि सभाओंमें जहाँ-कहीं मानपत्र मंजूषामें रखकर दिये जाते थे, मंजूषाको नीलाम कर दिया जाता था। इस कामका प्रारम्भ जलगाँवसे हुआ और यह प्रक्रिया धूलियातक जारी रही। गांधीजीने कहा:

मित्रो, आपको मालूम होना चाहिए कि सिवाय उन वस्तुओके जिनका विशेष कलात्मक मूल्य है, और जिन्हे मै प्रो० मलकानीको[2] जो गुजरात विद्यापीठके लिए कलात्मक वस्तुओका सग्रह कर रहे है, सौप सकता हूँ, और कुछ अपने साथ नही ले जा सकता। एक तो मै अपने साथ स्टीलके ट्रंक लेकर नही चलता और फिर इन मजूषाओको आश्रममें रखनेका प्रवन्ध भी नही है। इसलिए मेरे लिए केवल इन्हें वेच देना ही एक उपाय वच जाता है। आप ऐसा न समझें कि जिस स्नेहसे वे दी जाती है, ऐसा करके मै उनकी उपेक्षा कर रहा हूँ, या उनका महत्त्व कम कर रहा हूँ। इसके विपरीत उस कार्यके लिए, जो मुझे सवसे ज्यादा प्रिय है, और जिस कार्यके लिए आप मुझपर अपनी स्नेहवर्पा कर रहे हैं इन मजूषाओंको पैसेमें वदल कर, मै उस प्रेमका यथासम्भव सवसे अच्छे ढगसे प्रतिदान देना चाहता हूँ।

इस भावनाकी सब जगह प्रशंसा की गई। इसका परिणाम यह हुआ कि शहादे जैसे गाँवमें एक मामूली सी मंजूषाके ३०० रुपये मिले और डोंडाइचमें तश्तरी और दूसरी चीजोंके २०० रुपयेसे ऊपर आये।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-२-१९२७

६४. पत्र : फूलचन्द शाहको

धूलिया
शुक्रवार [११ फरवरी, १९२७][3]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

आपका पत्र मिला। ऐसा लगता है कि परिषदके वारहवें स्थानमें राहु है। इसलिए हमें यज्ञ करना पडेगा।

मण्डपके लिए अभीतक जमीन न मिले, ऐसी परावीनता तो असह्य होनी चाहिए। क्या परिषद किसी वगीचेमें — उमर सेठके अथवा किसी अन्यके वगीचेमें —

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
२. ना० र० मलकानी।
३. ऐसा लगता है कि यह पत्र गांधीजीने १३ फरवरीको धूलिया पहुँचनेसे पहले लिखा होगा।

नहीं की जा सकती? राणावावमें क्यों न की जाये? किन्तु जैसे चीजका मालिक ढक्कनसे ढकी अपनी चीजके बारेमें भी जानता है उसी तरह आपको मुझसे ज्यादा सूझ सकता है। यदि मैं यहाँ बैठे-बैठे कोई निर्णय दूँ तो उससे क्या होगा? आप जैसा उचित जान पड़े वैसा करना। देवचन्दभाई अप्रैल अथवा मईमें कोई तारीख निश्चित कराना चाहते हैं। यह नहीं हो सकता। इस समय स्थिति तो यह है कि जो तारीख रद हो गई, वह हमेशाके लिए रद हो गई।

अप्रैलसे जुलाईतक मेरे सब दिन भरे हुए हैं। अगस्तमें कुछ तारीखें खाली हैं। बादमें तो मैं दिसम्बरमें ही खाली होऊँगा। मैं आश्रममें मार्चके आरम्भमें तो रहूँगा ही। हम तभी मिलेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

अब आप मुझे १४ तारीखतक धूलियाके पतेपर पत्र लिखें।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८३१) से।
सौजन्य: शारदाबहन शाह

६५. पत्र: जानकीदेवी बजाजको

शनिवार [१२ फरवरी, १९२७][1]

चि० जानकीबहन,

तुमने ऑपरेशन बड़ी हिम्मतसे कराया, इससे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। अगर तुम हिम्मत हार जातीं तो आश्चर्य होता। मैंने हमेशा तुममें हिम्मत ही देखी है। वह सदा कायम रहे। जल्दी अच्छी हो जाओ और फिर नियमोंका अच्छी तरह पालन करती रहो, जिससे बीमार ही न पड़ो। मुझे शरीर और मनसे मजबूत बहुत-सी बहनोंकी जरूरत है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८७) की फोटो-नकलसे।

१. जानकीदेवी बजाजका ऑपरेशन ११-२-१९२७ को हुआ था।

६६. भाषण : अमलनेरमें

१२ फरवरी, १९२७

प्रश्न किया गया है कि अमलनेर जैसे गाँवमें खादी प्रचारसे क्या होगा? यहाँ तो अच्छी-खासी मिलें चलती हैं, फिर खादी कौन पहनेगा? यह प्रश्न पूछा जा सकता है; हालांकि पाँच वर्षतक इस प्रवृत्तिको चलानेके बाद इस सवालकी गुंजाइश नहीं रहती। इसका जवाब तो मैं अनेक बार दे चुका हूँ। परन्तु शास्त्रकारोंका कथन है कि जबतक सत्यको सब लोग न समझने लगें तबतक सत्यको बार-बार कहनेमें, करोड़ों बार समझानेमें भी संकोच न करना चाहिए। यदि किसी एक मनुष्यके कहनेसे सभी सत्यको समझ लेते तब तो सभी आस्तिक होते; कोई भी नास्तिक न होता। कारण, ईश्वर एक है यह तो हम करोड़ो बार सुन चुके हैं। परन्तु जब तक कोई सत्य केवल हमारी बुद्धिमें ही उतरा हो, बुद्धिने तो उसे स्वीकार कर लिया हो किन्तु हृदयमें उसका प्रवेश न हुआ हो और हृदयने भी मान लिया हो किन्तु दुनियाने उसे स्वीकार न किया हो तबतक तो हमें उसका प्रचार करते ही रहना होगा।

यहाँ मिलें चलती हैं तब फिर यहाँ खादी प्रचारसे क्या लाभ होगा? इसके जवाबमें तो मैं इतना ही कहूँगा कि अमुक स्थानपर कोई एक वस्तु बहुत प्रचलित हो लेकिन जनतापर उसका बुरा असर होता हो तो उस अवस्थामें दूसरी वस्तुका प्रचार करना हमारा परम धर्म है। हमने भारत क्यों गवाँ दिया? हमने उसे व्यापारके कारण ही गँवाया। आज व्यापार द्वारा ही अमेरिका और इंग्लैंड दूसरे देशोंके व्यापार पर कब्जा किये बैठे हैं। हम विदेशसे [प्रतिवर्ष] ६० करोडका कपड़ा लेते हैं। उसे लेना बन्द कर दें तो उनका यह कब्जा भी समाप्त हो जायेगा। हम उनके साथ व्यापार करना बन्द न करें; दूसरी अनेक वस्तुओंका व्यापार जारी रखें। पर वे हमारे देशका जो दुरुपयोग कर रहे हैं उस दुरुपयोगकी बुराईको तो दूर करना ही है। जिस प्रवृत्तिसे किसी भी व्यक्तिको सचमुच कोई हानि न हो वह प्रवृत्ति धार्मिक प्रवृत्ति है और खादी एक ऐसी ही प्रवृत्ति है।

मुझे दी गई थैलीमें मजदूरोंने जो पैसे[1] दिये हैं वे मेरे लिये सोनेके हैं। पर यह कोई नई बात नहीं है। भारतमें मुझे ऐसा धन अनेक बार मिला है। मिल-मालिकोंने भी मुझे पैसा दिया है। सो मेरी प्रवृत्तिको समझकर ही दिया है। जो नहीं देते वे मेरे प्रति स्नेह तो रखते हैं पर मेरी प्रवृत्तिको पसन्द नहीं करते, अतः उसके लिए धन नहीं देते। मजदूर मुझे धनकी मदद देते हैं उसका कारण यही है कि मैं भी

१. यंग इंडिया, २४-२-१९२७ में प्रकाशित विवरणके अनुसार मजदूरोंने गांधीजीको ३३० रुपयेकी थैली भेंट की थी।

एक मजदूर हूँ। धर्मका पालन और उसे समझना ये दोनों अलग-अलग बातें हैं। यदि धर्मको समझना और उसका पालन, इन दोनोंका योग हो तो तुरन्त रामराज्य स्थापित हो जाये। बहुतसे भाई-बहन कहते हैं कि वे ब्रह्मचर्यके महत्त्वको समझते हैं, उसका पालन करना चाहते हैं, पर कर नहीं पाते — यही बात खादीके सम्बन्धमें है। वे खादीका महत्त्व तो समझ गये हैं किन्तु वे अपना शौक नहीं छोड़ पाते। वे कहते हैं आप हमें आशीर्वाद दीजिए कि हम उसे छोड़ सकें। मैं यह वातावरण देख रहा हूँ इसीलिए मुझे निराशा नहीं है।

परन्तु आप कहेंगे कि अमलनेरके ऊपर हमला किसलिए। मैं कहता हूँ आप लोग २,००० लोगोंको मजदूरी देते हो, पर करोड़ोंको नहीं दे सकते। इसके सिवा, आप जिन २,००० मजदूरोंको काम देते हो उन्हें भी उनकी खेतीसे हटाकर ही देते हो। वे सभी अपनी खेतीके काममें लगे रहें और फिर भी उनकी आमदनीमें वृद्धि हो जाये — इसका क्या उपाय है? यह प्रश्न भारतका हित चाहनेवाले प्रत्येक व्यक्तिके सामने है। खेती सम्बन्धी आयोगके सामने है। वाइसरायके सामने है। आज मेरा विरोध करने-वाले अर्थशास्त्री कोई ऐसी दूसरी चीज नहीं सुझा सकते जो चरखेका स्थान ले सके। और जो अर्थशास्त्री मुझसे सहमत हैं वे डा० राय[1] की तरह हमारी प्रवृत्तिमें पूर्ण योग दे रहे हैं। वे अकालके कष्टोंका निवारण चरखा लेकर कर सके हैं, मिलोंके द्वारा नहीं। इसलिए आपके गाँवमें मिल है, तो भी आपके मनमें तो यही इच्छा होनी चाहिए कि हर घरमें मिल हो जाये तो कितना अच्छा! मिलके रूपमें अनेक चरखे एक जगह इकट्ठे करनेके बजाय जितने घर हों उतनी छोटी-छोटी मिलें बना देना बेहतर है। यह कब होगा, यह प्रश्न ठीक नहीं है। सत्यका युग कब आयेगा, यह कोई नहीं पूछता। ऐसा कौन कहेगा कि यह युग पास आता दिखाई नहीं देता, इसलिए हम तो अब सत्यको छोड़ देंगे।

मिल-मालिकोंको समझना चाहिए कि हमें अपना व्यापार छोड़ना पड़े, तो भी खादीका समर्थन करना है। मुट्ठी-भर मजदूरोंको छोड़ना है पर करोड़ोंको सहायता देनेवाली खादीका समर्थन करना है। मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि मैं मिल उद्योगका नाश नहीं चाहता। जब मिलके मालपर लगाये जानेवाले उत्पादन-करके सम्बन्धमें मुझसे पूछा गया था तब मैंने उसका विरोध ही किया था।

पर देशकी हानि होनेपर इस उद्योगकी उन्नति हो, ऐसा मैं नहीं चाहता। यदि देशकी उन्नतिके लिए इस उद्योगको नष्ट करना जरूरी हो तो मैं कहूँगा कि हम इसे अवश्य नष्ट हो जाने दें। मारवाड़ी और गुजराती मिल-मालिक मेरी इस वृत्तिको जानते हैं; वे कहते हैं कि आप अपनी प्रवृत्ति चलाइए, इससे हमारा व्यापार ठप हो जाये तब भी कोई परवाह नहीं। इनमें से कुछ शायद झूठमूठ ही ऐसा कहते होंगे, पर अधिकांश सच्चे हृदयसे ऐसा कहते हैं, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं।

इसलिए मैं ऐसा भी कह सकता हूँ कि यहाँ मिलें चलती हैं इसी कारण मैं यहाँ खादी लेकर आया हूँ। मैं यह नहीं चाहता कि मिलें नष्ट हो जायें, पर मैं

१. प्र० च० राय।

यह जरूर चाहता हूँ कि हरएक घरमें चरखा चले। इसके परिणामस्वरूप यदि देशमें एक भी मिल न रहे तो भले ही न रहे।

मिलवालोंको मिलका ही कपड़ा इस्तेमाल करना चाहिए, ऐसी कोई बात नहीं। मैंचेस्टरमें बनाये गये कपड़ेका उपयोग मैंचेस्टरमें नहीं होता। वहाँके लोग तो दूसरा कपड़ा पहनते हैं। हम भी अपनी मिलें इसी तरह चलायें। जिन दूसरे देशोंमें हमारे कपड़ेकी माँग हो, वहाँ कपड़ा भेजनेके लिए चलायें। ऐसी कोई बात नहीं है कि आपको अपनी मिलका कपड़ा पहनना ही चाहिए। आप उसे न पहनें तो इससे आपकी प्रतिष्ठापर तनिक भी आँच नहीं आती। डचेस ऑफ सदरलैंडने हेब्रिडीज द्वीपके लोगोंकी गरीबी देखी तो उन्होंने उन्हें चरखे और करघे दिये और वहाँ बने हुए कपड़ेका प्रचार किया। मिलवाले इस कपड़ेको तिगुने दाम देकर खरीदते हैं और पहनते हैं, यह बात मुझे दक्षिण आफ्रिकामें मालूम हुई थी। जिस समय मैं यहाँ आया उस समय उन्होंने मुझे भेंट देनेके लिए हाथसे कती और बुनी खादीकी पोशाक बनवाई थी। यदि वे मुझे मिलके कपड़ेकी पोशाक देते तो ५ पौंडमें काम चल जाता। पर उनके मनमें तो ऊँची भावना थी इसलिए उन्होंने पाँचके बदले ९ पौंड खर्च कर दिये। यही भावना आपके मनमें भी आनी चाहिए।

मुझे धोखा देनेके लिए आप एक कौड़ीकी भी खादी खरीदें, यह मैं नहीं चाहता। क्योंकि खादीके प्रति मेरी निष्ठा इस बातपर निर्भर नहीं है कि उसे दूसरे लोग पहनें। यदि करोड़ों लोग भी मेरे ऊपर थूकें तो भी मुझमें अपने धर्मका पालन करनेकी शक्ति है। इसलिए यदि आप पैसा देते हैं तो इसे धर्म प्रवृत्ति समझ कर ही दें। मुझे तो गरीबोंकी सेवा करनी है। और गरीबोंकी सेवा द्वारा ईश्वरका दर्शन करना है। इसलिए इस धर्मकार्यमें झूठ नहीं होना चाहिए। मैं खादीके बिना जी सकता हूँ, पर अंधप्रेम और झूठ तो मुझे मार डालेगा।

आप सस्ती और महीन खादी चाहते हैं तो स्वयं कातें। एक प्रसिद्ध कातनेवाले योगेश्वर चटर्जी[1] २०० अंकका सूत कातकर उसे स्वयं बुनते थे। उनकी कामना थी कि वह ढाकाकी शबनम जैसी बढ़िया मलमल बनायें। किन्तु उनकी अकाल मृत्यु हो गई। यदि उनकी तरह आप भी प्रयत्न करें तो आपको सस्ती तथा महीन खादी मिल जाये। पर आप तो धर्म-कार्य बैठे-बैठे करना चाहते हैं और सस्ती खादी ढूंढना चाहते हैं। इस तरह भला वह कैसे मिल सकती है? स्वराज्य चाहनेवाले लोगोंके मुँहसे यह बात शोभा नहीं देती। स्वराज्यका मन्त्र बतानेवाले तिलक महाराजने कहा था कि जेलमें मरना पड़े तो भी हमें अपना रास्ता छोड़ना नहीं है। स्वराज्यके लिए चाहे फांसी चढ़ना पड़े, पिता-माता, पुत्र, स्त्री सबका त्याग करना पड़े, पर रणक्षेत्र छोड़ा नहीं जा सकता — यही शूरवीरका धर्म है। पिछली लड़ाईमें चैम्सफोर्डका पुत्र चल बसा। चैम्सफोर्डने अपना स्थान नहीं छोड़ा। रॉबर्ट्सका एक पुत्र मर गया, तो भी उसने एक दिन भी अपना काम नहीं छोड़ा। एलिजाबेथके जमानेमें लोग दस-

१. देखिए "एक बड़े कर्तव्य", १७-२-१९२७।

गुना दाम देकर भी इंग्लैंडमें बना कपड़ा ही पहनते थे। हॉलैंडकी लेसका आयात रोकनेके लिए तो इंग्लैंडमें सख्त कानून बनाया गया था। तो क्या मैं बहुत कठिन बात बता रहा हूँ? विलायतका कपड़ा मुफ्त मिले तो भी उसे त्याग कर ज्यादा दामपर खादी ही खरीदो।

आपको मालूम होगा अमेरिकामें रोजकी आमदनी दो रुपये है और अपने यहाँ सिर्फ डेढ़ आना है। और इस डेढ़ आनेमें प्रताप सेठ जैसे लखपतिकी लाखोंकी आमदनी भी शामिल है। यदि इस हिसाबमें इस आमदनीको न गिनें तो अपने यहाँ लोगोंकी औसत आय डेढ़ आनेकी भी नहीं है। इस डेढ़ आनेकी कमाईको दुगुना करनेके लिए यदि कोई मुझे चरखे जैसा दूसरा सुलभ और आसान मार्ग बता दे तो मैं चरखेको जला दूँ। आप करोड़ोंको भिखारी बनाना तो नहीं चाहते होंगे? जिसके दो हाथ दो पैर हों उसे भिखारी बना देना, इससे बढ़कर मनुष्यत्वका हनन करनेवाली और कोई वस्तु नहीं है। भिक्षा उस ब्राह्मणका अधिकार है जो ब्रह्मको जाननेवाला, उसका आचरण व उपदेश करनेवाला हो। उसकी वकालत करनेवाले या आलस्यमें दिन गँवानेवाले ब्राह्मणको उसका अधिकार नहीं है। और इसके बाद भिक्षा माँगनेका अधिकार अपंगको है। इन दोके सिवा किसी अन्यको भिक्षा देना घोर पाप है। यह घोर पाप, घोर अत्याचार जगन्नाथपुरीमें चलता है। इसे रोकनेके लिए हिन्दुस्तानके करोड़ों बेकार लोगोंके हाथमें चरखा देना जरूरी है। इससे ज्यादा मैं आज कुछ कहना नहीं चाहता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-२-१९२७

६७. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

डोंडाइच

रविवार [१३ फरवरी, १९२७][1]

चि० मीरा,

यह रविवारका सवेरा है, प्रार्थनासे पूर्वका समय। लोग अभी उठ ही रहे हैं।

दौरेका अगला कार्यक्रम संलग्न है।

मुझे तुम्हारा सबसे ताजा पत्र मिल गया है।

मैं तुम्हें यह बताना भूल गया कि चर्चके पादरी और दूसरे लोग अब तुम्हारे करीब आते जा रहे हैं, यह देखकर मुझे कितनी प्रसन्नता हुई है। क्योंकि तुम्हारा उनके प्रति केवल शुद्ध प्रेमके सिवाय, जो प्रतिदिन शुद्धतर होता जा रहा है, और

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" (यंग इंडिया, २४-२-१९२७) के अनुसार गांधीजी १२ फरवरीको डोंडाइचमें थे, परन्तु रविवार १३ फरवरीको था।

कोई भाव नही है यह इसीका स्वाभाविक परिणाम है। प्रेम जितना अधिक मोहमुक्त होता है वह उतना ही शुद्ध होता जाता है।

तुम्हारे व्रतमें जो परिवर्तन हुए हैं, उन्हे मैं समझता हूँ। वे बिलकुल ठीक हैं।

आज और कुछ लिखने योग्य नही है।

तुम्हारा,
बापू

१५ फरवरी धूलिया
१६ फरवरी नासिक
१७ फरवरी अहमदनगर
१८ फरवरी कुर्दुवाड़ी, जिला शोलापुर
१९, २०, २१ फरवरी शोलापुर
२२ फरवरी गुलबर्गा
२३ फरवरी पंढरपुर, जिला शोलापुर
२४ फरवरी सतारा
२५ फरवरी बेलगाँव
२६ फरवरी वेनगुर्ला, जिला रत्नागिरी
२७-२८ फरवरी रत्नागिरि
१ मार्च चिपलून, जिला रत्नागिरि
२ मार्च महाड़, जिला कोलाबा
३ मार्च बम्बई

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०३)से।
सौजन्य : मीराबहन

६८. पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

धूलिया
१३ फरवरी, १९२७

प्रिय क्षितीश बाबू,

मुझे आपके दो पत्र पता बदलकर भेजे जानेपर धूलियामें मिले। मुझे खुशी हुई कि अनिलकी हालत अब पहलेसे अच्छी है और वह पूरी तरह खतरेसे बाहर हो गया है। मैं आपको अपने दौरेका कार्यक्रम भेज रहा हूँ। कृपया मुझे अनिलका स्वास्थ्य सुधरनेकी सूचना देते रहियेगा।

मुझे अभी पता चला है कि तारिणीबाबू वर्धा से चले गये है। मुझे अनिलकी बीमारीसे भी स्वयं उनके बारेमें अधिक चिन्ता है। क्योंकि उनकी बीमारी शरीरमें घर कर गई है, और अनिलकी बीमारी तो एक अस्थायी संकट ही थी। इसलिये तारिणीबाबूकी यथासम्भव पूरी देख-भाल होनी चाहिए। मैं आपको सुझाव देता हूँ कि आप उन्हें डा० विधानराय या सर नीलरत्नके पास ले जायें। यदि आवश्यक हो तो सर प्र० च० रायसे चिट्ठी लेकर उनके पास जायें। यदि उन्हें बचाना है तो हमें यथासम्भव सर्वोत्तम डाक्टरी राय लेनेमें आगापीछा नही करना चाहिए।

आपके द्वारा भेजे गये नमूने अभीतक मेरे पास नही पहुँचे है। मैं जलगाँवके लोगोंको इसके बारेमें लिखूँगा।

आपने श्री योगेश्वर चटर्जीके सम्बन्धमें जो टिप्पणी भेजी है, मैं उसका महत्त्व समझता हूँ। मैं 'यंग इंडिया' में इसको काममें लानेवाला हूँ।[1] कृपया शोक सन्तप्त परिवारको मेरी सादर समवेदना पहुँचा दें।

मुझे आशा है कि आप और परिवारके अन्य सदस्य स्वस्थ होंगे और सोदपुरका काम प्रगति कर रहा होगा। मैं जानता हूँ कि अब कामका सारा भार आपके कन्धोंपर आ पड़ा है, परन्तु ईश्वरको धन्यवाद है कि आपमें उस भारको सहन कर सकनेकी शक्ति है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सहपत्र: १
श्रीयुत क्षितीश बाबू
१७०, बहू बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता

[कार्यक्रम[2]]

अंग्रेजी (जी० एन० ८९२२) की फोटो-नकलसे।

६९. पत्र: बी० एफ० मदानको

धूलिया
१३ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। उसमें आपने विषयपर[3] पूर्ण प्रकाश डाला है। आप जो भी कुछ कहते हैं, उसपर मैं जरूर ध्यान देता हूँ, क्योंकि अर्थशास्त्रियोंने जिस विषयको अनावश्यक रूपमें दुरुह बना दिया है, उस विषयका आप जैसा सीधा-सादा एवं लोकप्रिय स्पष्टीकरण करते हैं, उसे मैं पसन्द करता हूँ। मैं आपकी अनुमतिकी प्रत्याशामें आपका पत्र प्रो० वाडियाको भेजनेकी धृष्टता कर रहा हूँ, जिससे वह आपका दृष्टि-कोण समझ सकें और उसका मूल्यांकन कर सकें। मैं उस खाईको पाटना चाहूँगा, जो ऐसा प्रतीत होता है कि बिना किसी कारणके अर्थशास्त्रियोंको साधारण लोगोंसे अलग किये हुए है। इससे साधारण व्यक्तिके लिए इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषयको समझना मुश्किल हो जाता है। यदि हमारे देशके सभी अर्थशास्त्री मूलभूत सिद्धान्तोंपर सहमत हो जायें और एक संक्षिप्त तथा तर्कपूर्ण संयुक्त वक्तव्य जारी कर दें, तो यह

१. देखिए "एक बड़े कर्तव्य", १७-२-१९२७।

२. देखिए "पत्र: मीराबहनको", १३-२-१९२७।

३. रुपयेकी विनिमय-दरसे सम्बन्धित विषय; देखिए "पत्र: पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको" और "पत्र: बी० एफ० मदानको", २२-२-१९२७ भी।

मुझ जैसे विद्यार्थियोंके लिये बड़ा लाभदायक साबित होगा। जनसाधारणके मस्तिष्कको शिक्षित करनेके अवसर प्राप्त होते रहते हैं।

श्री शराफने हमारे बीच यह कैसी बिजली गिरा दी है? मैं कभी-कभी समाचार-पत्रोंपर नजर डालता हूँ। इसलिए जब कभी आपको थोड़ासा भी समय मिले, और मुझ जैसे व्यस्त आदमीके पास पहुँचानेकी कोई बात हो, तो कृपया संकोच मत कीजिएगा, क्योंकि यद्यपि मैं समाचारपत्रोंमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ, मैं पूरी तरह खुले मनसे सब कुछ देख रहा हूँ।

अंग्रेजी (एस० एन० ११७७७ ए) की फोटो-नकलसे।

७०. पत्र : पी० ए० वाडियाको

धूलिया
१३ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

मैं श्री मदानका पत्र और उसके जवाबमें अपने पत्रकी[1] एक प्रति आपको भेज रहा हूँ। इन दोनो पत्रोका विषय स्पष्ट है। इसलिए मुझे सिवाय इसके और कुछ नही कहना है कि मैं इस बातपर पूरा विश्वास कर सकता हूँ कि आप इस चर्चाको ऊँचे और नैतिक स्तरपर लानेके लिये यथासम्भव सब कुछ करेंगे।

मैं इस मासके अन्त तकका अपने दौरेका कार्यक्रम आपको भेज रहा हूँ, ताकि यदि आपको कोई बात तुरन्त कहनी हो तो आप मेरे साथ सीधा सम्पर्क स्थापित कर सकें, और मेरे स्थायी पतेके कारण उसमें कोई बाधा न हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सहपत्र-१ + १
प्रो० पी० ए० वाडिया
मलाबार हिल
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० ११७७७) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

७१. पत्र : सुशीलाबहन मशरूवालाको

रविवार [१३ फरवरी, १९२७][1]

चि० सुशीला,

मणिलालका तार आया है, उसे तुम्हें भेज रहा हूँ। मैंने उसे जो पत्र[2] लिखा था उसकी नकल रखवा ली थी। सो भी भेज रहा हूँ। इनसे तुम यह जान सकोगी कि मैं तुम दोनोंसे क्या आशा रखता हूँ। तुम भाग्यशाली हो या नहीं, यह तो भगवान जाने, लेकिन तुम्हें पाकर मणिलाल भाग्यशाली हुआ है — ऐसा मैं मानता हूँ।

स्याहीसे पत्र लिखनेकी आदत डालना। समय मिले तो अपनी गुजराती जितनी बन सके, उतनी सुधारनेका प्रयत्न करना।

मुझे पत्र लिखना। मुझे तो मुक्त भावसे लिखा जा सकता है; इसका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरी यात्राका कार्यक्रम नानाभाईके पास है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२२) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

७२. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

[१३ फरवरी, १९२७][3]

भाईश्री ५ नानाभाई[4],

आपका पत्र मुझे जलगाँवमें मिला। मणिलालका तार अमलनेरमें मिला। यह तार, मणिलालको लिखे मेरे पत्रकी नकल तथा चि० सुशीलाको लिखा पत्र[5] पढ़ जायें और चि० सुशीलाको दे दें।

अब चूँकि फिलहाल चि० शान्तिका ऑपरेशन जल्दी नहीं कराना है, इसलिए यदि विवाह जल्दी करें तो यह मुझे अनुकूल रहेगा और होलाष्टककी[6] बाधा भी नहीं

१. पत्रके पाठके आधारपर।
२. देखिए "पत्र : मणिलाल गांधीको", ८-२-१९२७।
३. पत्रके पाठके आधारपर।
४. सुशीलाबहन गांधीके पिता, मणीलाल गांधीके श्वसुर।
५. देखिए पिछला शीर्षक।
६. होलीके आठ दिन; ज्योतिषकी दृष्टिसे इन दिनोंमें विवाहका निषेध है।

आयेगी। मैं ६ तारीखको साबरमती पहुँचूँगा। उस दिन फाल्गुन सुदी ३ है। मेरी सलाह तो यह है कि हमें ज्योतिषके अनुसार शुभ दिन ढूँढ़नेकी झंझटमें नहीं पड़ना चाहिए। शुभ कार्यके लिए जल्दीसे-जल्दी जो दिन तय किया जाये वही अच्छेसे-अच्छा दिन होता है। लेकिन इस बारेमें मेरा कोई आग्रह नहीं है।

विवाह अकोलामें होना चाहिए, इस इच्छाके पीछे निहित भावनाको मैं समझ सकता हूँ। मेरा यात्रा सम्बन्धी सब कार्यक्रम तय हो चुका है। उसमें इतना ही फेरफार किया जा सकता है कि काठियावाड़ परिषद मुल्तवी हो गई है, इसलिए मुझे ४ तारीखसे लेकर ८ तारीखतक समय मिल सकता है। मैं ४ तारीखको बम्बई पहुँचूँगा। वहाँसे मणिलालको लेकर मैं सीधा अकोला आ सकता हूँ। इस तरह मैं वहाँ ६ तारीखको पहुँच जाऊँगा। आप उसी दिन विवाह कर दें। ७ तारीख सोमवार को मेरा मौनवार है; इसे वहाँ बिता कर मैं अहमदाबादके लिए रवाना हो जाऊँगा। मुझे अधिकसे-अधिक १० तारीखतक अहमदाबाद पहुँच ही जाना चाहिए। आपको कमसे-कम दिक्कतमें डालना चाहता हूँ। यदि आप ६ तारीखसे पहलेका कोई दिन चाहते हों तो ऐसा हो सकता है कि मैं उस दिन जहाँ होऊँ वहाँसे विवाह किया जाये। दूसरा रास्ता यह है कि आप मेरी अनुपस्थितिमें विवाह सम्पन्न करें। मेरी उपस्थिति तो आप सब चाहेंगे, बा चाहेगी, मणिलाल भी चाहेगा, यह मैं समझ सकता हूँ। लेकिन उसे मैं अनिवार्य नहीं मानता। यदि यह आपको स्वीकार हो तो ११ मार्चसे पहले आप जो दिन अनुकूल लगे उसे चुन लें।

मैं तो विवाहको हर हालतमें आवश्यक कार्य नहीं मानता। जब वह आवश्यक होता है तब उसका रूप धार्मिक कार्यका हो जाता है; धार्मिक कार्यमें बड़े-बूढ़े उपस्थित हों अथवा न हों। इसके सिवा, वह किसी भी समय किया जा सकता है। इसलिए मुझे उपस्थित होनेका कोई आग्रह नहीं है, विवाह जल्दी हो, यह आग्रह अवश्य है, क्योंकि मणिलालका नेटालका काम रुकता है, और उसे ज्यों ही सम्भव हो त्यों ही नेटालके लिए रवाना कर देना है।

इन सब बातोंपर विचार करके आपको जो दिन उचित लगे उसे आप निश्चित कर लें और हो सके तो मुझे तार कर दें।

मेरे दौरेकी तारीखें ये हैं:[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२३) से।

सौजन्य: सुशीलाबहन गांधी

१. यहाँ नहीं दी जा रही हैं। इनमें २५वीं तारीख तकके मुकाम दिये थे। उनके लिए देखिए "पत्र: मीराबहनको", १३-२-१९२७।

७३. भाषण: धूलियामें

१३ फरवरी, १९२७

धूलियामें कार्यक्रम बोझिल था लेकिन हर चीज इतनी व्यवस्थित ढंगसे और शान्तिके साथ हुई कि गांधीजी एक दिनमें छः सभाओंमें बोल सके और भाषण देते समय वे बराबर अपने चरखेपर कातते रहे। उन्होंने कहा:

यदि मैं आपके सामने भाषण देते समय सूत कातता रहूँ तो मुझे वेअदव न मानें। मैं इसलिए सूत कात रहा हूँ कि यहाँ इतनी अद्‌भुत शान्ति है और इसलिए भी कि मैं समझता हूँ कि मैं जिस चीजमें सबसे ज्यादा विश्वास रखता हूँ, उसका आपको वस्तुपाठ देकर मैं सबसे अच्छे ढंगसे आपके स्नेहका प्रतिदान दे सकता हूँ। कुछ साल पहले जब डा० ठाकुर[1] हमारे आश्रममें आये थे, सुबहकी प्रार्थना समाप्त हो जानेके बाद मैंने उनसे अपने आश्रमके बालकोंसे दो शब्द कहनेको कहा। उन्होंने कुछ नही कहा और न कहनेके लिए क्षमा माँगनेके रूपमें भी कुछ नही कहा, लेकिन अपने मधुरतम ढंगसे अपना एक मधुरतम गीत गाकर सुनाया और चुप हो गये। मेरे विचारसे उनका ऐसा करना उनकी शिष्टताकी पराकाष्ठा थी। वह हमें सबसे सुन्दर जो चीज दे सकते थे, उन्होंने उसीसे हमें सन्तुष्ट किया। मैं आप लोगोंके सामने चरखा चलाकर उनका अनुकरण मात्र कर रहा हूँ। चरखा तो मेरा एकमात्र गीत है, जिसके जरिये मैं समझता हूँ कि मैं भारतकी सबसे अधिक सेवा कर सकता हूँ।

हर जगहपर स्थानीय संस्थाओंकी ओरसे अभिनन्दनपत्र दिये गये हैं। अब मैं धूलियामें स्थानीयबोर्डका अभिनन्दनपत्र मिलनेपर दिये गये गांधीजीके उत्तरको संक्षेपमें दे दूँ।

पूरे देशमें सब जगह अपने भ्रमणके दौरान मैंने अबतक एक भी ऐसी स्थानीय संस्था नही देखी, जो स्वतन्त्र रूपसे अपनी ही प्रेरणासे काम करती हो और जिसका मैं एक आदर्श संस्थाके रूपमें उल्लेख कर सकूँ। श्री लिओनेल कर्टिसने भारतीय गाँव और अंग्रेजोंके गाँवके बीचके गहरे अन्तरपर टिप्पणी करते हुए कहा था कि जहाँ भारतीय गाँव आपके मनमें सामान्य तौरपर गन्दगीकी छाप छोड़ता है और कूड़ेके ढेरपर बसी किसी बस्तीकी याद मनमें जगाता है, वहाँ अंग्रेजोंका गाँव स्वच्छता, स्वास्थ्य और सर्वत्र सौन्दर्यकी एक छाप मनपर छोड़ता है। निश्चय ही उन्हे भारतीय ग्रामीणोंकी दशाके बारेमें कुछ नही मालूम था, उन्हे यह नहीं मालूम था कि उसकी प्रतिदिनकी आय अंग्रेज ग्रामीणकी आयकी तुलनामें ५ प्रतिशत है। लेकिन उनकी इस उक्तिमें जो एक ठोस सत्य है, उसकी हमें अवहेलना नही करनी चाहिए। इस तथ्यको कहनेसे कोई लाभ नही। यह स्पष्ट है कि हमारा ग्रामीण व्यक्ति गांवकी

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर १९२० में आश्रम आये थे।

सफाईसे सम्बन्धित छोटी-छोटी वातोंको भी विलकुल ही नही जानता हूँ। दक्षिण आफ्रिकी यूरोपीयोंमें जातीय पूर्वग्रहकी निन्दा की जा सकती है, लेकिन अपने शहरोंको स्वस्थ और साफ रखनेके उनके प्रयास उत्साहपूर्ण और अनुकरणीय हैं। ऐसा न कहिए कि आपका सारा समय राजनीतिमें लग जाता है और अन्य वातोंके लिए आपके पास कोई समय नही है। यह तो एक लचर वहाना है। स्वराज्य प्राप्त करनेकी हमारी सामर्थ्यमें ही अपने गाँवों और शहरोंकी सफाईपर भी पूरा ध्यान दे सकनेकी सामर्थ्य शामिल है और जव हम उस सामर्थ्यका परिचय देंगे तो हमारे और स्वराज्यके वीच संसारकी कोई भी चीज आड़े नही आ सकेगी। आप निश्चित तौरपर ऐसा तो मानते ही होंगे कि हमें उतना कायम ही रखना चाहिए जितना हमारी सामर्थ्यके वलपर प्राप्त हो चुका है। हमारी कुछ स्थानीय संस्थाएँ केवल उन्ही सड़कोंको साफ रखती हैं, जिनके सरकारी अफसरो द्वारा प्रयोगमें आनेकी सम्भावना होती है। वे उन सड़कोंकी कुछ परवाह नही करते जिनका उपयोग गरीव ग्रामीण भाइयों और उनके वैलों आदिको करना होता है। वे निरपवाद रूपसे हर जगह वुरी हालतमें पडी हुई हैं। क्या हम एक गाँवसे दूसरे गाँवको जोड़नेवाली सड़कोंको ज्यादा सुगम और वेहतर नही वना सकते और क्या इस प्रकार ग्रामीणों तथा उनके पशुओंकी तकदीर थोड़ी वहुत नही सुधार सकते।. . .

धूलियाके व्यापारियोंका आग्रह था कि वे गांधीजीको अलगसे मानपत्र और थैली भेंट करेंगे। मानपत्रमें उन्होंने कहा कि गांधीजी उनके अपने समाजके व्यक्ति हैं, क्योंकि वे भी तो वणिक ही हैं। उनके मानपत्रका उत्तर देते हुए गांधीजीने उन्हें उससे कुछ अधिक दे दिया, जितना कि वे इस सौदेमें पानेकी आशा रखते थे।[1]

आपने मुझे यह ठीक ही याद दिलाया कि मैं एक गरीव वणिक पुत्र हूँ, वैश्य हूँ और वैश्य होनेके कारण ही मैं भारतके गरीव लोगोंके लिए एक भारी व्यापार चला रहा हूँ। और चूँकि व्यापारके सिवा मुझे गोरक्षाका काम भी करना चाहिए इसलिए मैंने गोरक्षाका धन्धा भी उठा लिया है। आज शुद्ध भावसे चलाया जानेवाला व्यापार पूर्णतया नष्ट हो चुका है और इसी तरह विवेकपूर्ण गोरक्षा कही देखनेमें नही आती। मैं तो स्वयंको एक विवेकशील व्यापारी मानता हूँ, इसलिए ये दो धन्धे मैं आपके सामने रख रहा हूँ। मुझमें वणिक-वुद्धि है, क्षत्रियत्व है और थोड़ा-वहुत ब्राह्मणत्व भी है। पर इस वर्ष तो इन सभी वातोंको छोड़कर मैं एक कंजूस वनिया-भर वन जाना चाहता हूँ और जिस तरह एक लोभी वनिया पाई-पाईका हिसाव रखता है, मैं भी आपके सामने पाई-पाईका हिसाव रखना चाहता हूँ। इसलिए यद्यपि अभी आपने ४,१०० रुपये दिये हैं और शायद कलतक ५,००० पूरे कर देंगे तव भी

१. यहाँ तकका अंश अंग्रेजी साप्ताहिक यंग इंडियाके २४ फरवरी और ३ मार्चके अंकोंमें प्रकाशित महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिया गया है, लेकिन "साप्ताहिक चिट्ठी" में इससे आगे वणिकोंकी सभामें दिये गये गांधीजीके भाषणकी जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई है, उससे अधिक विस्तृत और पूर्ण रिपोर्ट २७-२-१९२७ के गुजराती नवजीवनमें छपी है। इसलिए इसका अनुवाद नवजीवनसे ही किया जा रहा है।

मेरा मन मुझसे यही कहेगा कि धूलियाके लोगोंने कुछ और ज्यादा क्यों नहीं दिया। मैं वैश्य हूँ इसलिए ज्यादा माँगता हूँ ऐसी बात नहीं है। पर मुझे लगता है कि हिन्दुस्तानको शूद्रोंने नहीं गँवाया; क्षत्रियोंने नहीं गँवाया, ब्राह्मणोंने भी नहीं गँवाया, उसे तो वैश्योंने ही गँवाया है और अब उसे कोई वापस ले सकता है तो वैश्य ही ले सकते हैं। इतिहासमें ऐसे उदाहरण हैं जब वैश्योंने अभिमानपूर्वक यह कहा है कि हमने सरकारकी मदद की, उसकी अमुक सेवा की और अब समय आया है कि सरकार हमारी मदद करे तो अच्छा हो। रमेशदत्तने भी हमें यही बताया कि हिन्दुस्तानको व्यापारियोंने ही दूसरोंके हाथमें दिया।

व्यापार करनेमें शर्मकी कोई बात नहीं है। यदि व्यापार योग्य रीतिसे किया जाये तो इसमें कोई निन्दनीय बात नहीं है। अंग्रेज यहाँ व्यापारीकी तरह आये थे; अपने इसी व्यापारकी रक्षाके लिए वे क्षत्रिय बने और इसी व्यापारके आधारपर स्थापित अपने राज्यकी रक्षाके लिए ब्राह्मण भी बने। वर्णाश्रम धर्म यह नहीं कहता कि वैश्य ब्राह्मण न बने या माँ और बहनकी रक्षाके लिए क्षत्रिय न बने। वह इतना ही कहता है कि वैश्य धर्मकी विशेषता वाणिज्यमें है — कृषि, गोरक्षा और वाणिज्यमें। अंग्रेज [मूलत:] व्यापारी थे किन्तु उन्होंने अपनी बुद्धि, ज्ञान और शौर्यका समुच्चय साधा और उनकी शक्तिसे चकित होकर अपने वर्णधर्मको भूलकर हमने होश खो दिया, हम नामर्द और देशद्रोही बने। हम वैश्यके स्वाभाविक धर्मको भूल गये। अब वकील, डाक्टर, ब्राह्मण या क्षत्रिय स्थितिको नहीं सुधार सकते, उसे तो वैश्य ही सुधार सकते हैं। यदि वे अपने स्वधर्मका पालन करें, देशके लिए कृषि, गोरक्षा और व्यापारकी साधना करें तो वह सुधर सकती है। आपके मानपत्रका यही जवाब है। आपकी काली टोपियाँ, आपकी स्त्रियोंकी साड़ियाँ, लज्जाकी, गुलामीकी पोशाकें हैं। और व्यापारी ही ये टोपियाँ और ये साड़ियाँ लोगोंको बेचते हैं। आपको तो कच्चे मालकी रक्षा करनी चाहिए थी। किन्तु आपने उसीका व्यापार शुरू कर दिया। गायकी रक्षा करनेके बदले उसका भी व्यापार करना शुरू कर दिया। इसीसे आज आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। आप लोग मिलें खड़ी करते हैं, पश्चिमकी राक्षसी सभ्यताका अनुकरण करते हैं और लोगोंकी शक्तिका शोषण करनेवाली चीजें बेचते हैं। यदि पश्चिमके लोग पूर्वके लोगोंका शोषण बन्द कर दें, तो उनकी ५० प्रतिशत मशीनें बन्द हो जायें। अब आप भी इसी रास्ते चल रहे हैं। यदि आप स्वराज्यके लायक बनना चाहते हैं, तो जिसे मैं झूठा व्यापार कहता हूँ उसे छोड़ें और सच्चा व्यापार अपनाएँ। आपका सीधा-सादा धर्म यही है। 'भगवद्गीता' का [आदर्श] वैश्य करोड़पति नहीं बनना चाहता; वह तो देशको कुटुम्ब मानकर देशके हितके लिए अपने धर्मका पालन करता है। आप अपनी बुद्धिका कुछ उपयोग करें, थोड़ा विचार करें, ब्रह्मचर्यका पालन करें, तो आपको अपना धर्म स्पष्ट समझमें आ जायेगा। यदि आपको अपना कर्त्तव्य समझमें आ जाये तो देशमें ६० करोड़का कपड़ा विदेशसे आना बन्द हो जाये और ९ लाख खालें विदेशमें न भेजी जायें। परन्तु आज मैं आप लोगोंसे आदर्श गोशाला बनानेको या आदर्श चर्मालय बनानेको कहता हूँ तो आप

लोग मुंह फेर लेते हैं। मैं साठ वर्षका हो गया हूँ इसलिए मेरी बुद्धि जाती रही है, ऐसा नहीं है। मेरे साथ तो सैकड़ों युवक काम कर रहे हैं। मैं नहीं जानता कि मैं कितने वर्ष जीऊँगा, मैं तो गंगाके किनारे बैठा हूँ इसलिए किसी चीजको बुरा समझते हुए भी उसे अच्छा मनवानेका प्रयत्न क्यों करूँगा। हाँ, यदि आप मुझे इसका विश्वास दिलाएँ कि मेरी प्रवृत्ति गलत है तो मैं आपके चरणोंमें बैठ जाऊँगा — वैसे ही जैसे परशुराम रामचन्द्रके चरणोंमें बैठ गया था। यदि मेरे हृदयको जीतनेवाला कोई व्यक्ति मिल जाये तो मैं उसे साष्टांग प्रणाम करूँ। किन्तु यदि आप बुद्धि और हृदयसे मुझे न जीत सकें तो फिर आपको मेरा खादी और गोरक्षाका काम सँभाल लेना चाहिए, उठा लेना चाहिए। इसके बिना उद्धार नहीं है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-२-१९२७

७४. पत्र : सुशीलाबहन मशरूवालाको

रविवारकी रात [१३ फरवरी, १९२७]

चि० सुशीला,

तुम्हें एक पत्र[1] लिखा था; मिल गया होगा। इसके साथ चि० मणिलालका पत्र भेज रहा हूँ। इसे और मैंने जो पत्र उसे लिखा था, दोनोंको सँभाल कर रखना। मुझे उत्तर देना। पत्र नानाभाई और दूसरोंको पढ़वा देना। ऐसे विषयोंपर अपने बड़ोंसे बातचीत करनेमें लड़के और मुख्यत. लड़कियाँ संकोच करती हैं। तुम्हें तनिक भी ऐसा न करना चाहिए। तुम एक दूसरेका नाम लेनेमें भी सकोच न करना। बादमें यह सकोच दिक्कत पैदा करता है। इसमें मुझे कोई अर्थ दिखाई नहीं देता। मणिलाल भी सकोच कर रहा है। मैं उसे भी इस संकोचको छोड़नेके लिए लिखूँगा।

गोमतीबहनकी तबीयतका हाल लिखना। चि० किशोरलालको बादमें बुखार तो नहीं आया?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२६) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

1. देखिए "पत्र : सुशीलाबहन मशरूवालाको", १३-२-१९२७।

७५. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नही पढ़ा

धूलिया
१४ फरवरी, १९२७

चि० मीरा,

कल मैंने एक संक्षिप्त पत्र लिखा था।

तुम मुझे अपना हिसाब भेजनेकी चिन्ता न करो। तुम्हें खर्चकी पाई-पाईका हिसाब तो रखना ही चाहिए और वह भी कागजके टुकड़ों पर नही, बल्कि एक बाकायदा बनाई हुई हिसाबकी वही में। यह इतना सरल काम है कि उसके उतने सरल होनेका विश्वास नही हो पाता। हिसाबमें जमा और खर्चकी रकमें लिखी जाती है। नकद रुपया जितना मिलता है, वह किसीके नाम लिखा जाता है और जितना दिया जाता है वह जमा किया जाता है। इसलिए आई हुई रकमें नामेकी की तरफ और खर्चकी जमाकी तरफ लिखी जाती हैं। इस तरह:

तारीख	नामे		तारीख	जमा	
	आश्रमसे प्राप्त	१५०)	१२-८	तांगा-भाड़ा	१॥)
				डाकखर्च	३॥)
				बाकी	१४५)
		१५०)			१५०)

अंग्रेजी ढंगसे सभी रोकड़ वहियाँ इसी तरह रखी जाती हैं। तुम्हारी वही, रोकड़ वही ही है। खाता बहीमें रोकड़ वही और रोजनामचाके अलग-अलग हिसाबों-की सूची होती है। जहाँ नकद लेन-देन नही होता, वहाँ सब कुछ रोजनामचेमें लिखा जाता है। तदनुसार उधार बिक्री हो या खरीद हो, वह रोजनामचेमें दर्ज होगी। व्यवहारमें सारा वहीखाता यही है।

यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि वहाँ तुम्हारे पास चरखा नही है। मुझे तुम्हें अपने जैसा सफरी चरखा देना पड़ेगा। मैं खादी प्रतिष्ठानसे कहकर तुम्हारे पास एक चरखा भिजवा रहा हूँ। अगर तुम इसे अपने-आप न चला सकोगी, तो मैं जब वहाँ आऊँगा तब तुम्हें चलाना अवश्य सिखा दूंगा।

धूलिया बड़ी आरामकी जगह है। हम एक कार्यकर्त्ताके घरपर ठहराये गये हैं, जिसने चम्पारनमें मेरे साथ काम किया था। यहाँ एक सज्जन रहते हैं। अगर एन्ड्रयूजसे भी सौम्य कोई चेहरा हो सकता है तो वह इन सज्जनका है। अकोला भी ऐसी ही जगह है। अकोलासे मुझे मणिलालके लिए वहू मिली है। लड़की किशोरलालकी भतीजी है, और उसकी उम्र १९ वर्ष है। उनका विवाह

अभी बहुत जल्दी ही होना है। जब मणिलाल दक्षिण आफ्रिका जायेगा, तब वह भी उसके साथ चली जायेगी। वह एक धर्मनिष्ठ घरानेकी लडकी है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

कार्यक्रमकी तारीखें[1]

यदि मैं तुम्हें दूसरा कार्यक्रम न भेजूं तो ३ तारीखतक रत्नागिरिके पतेसे पत्र लिखना।

४ तारीख बम्बई, मणिभवन, लेबर्नम रोड, गामदेवी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०४)से।
सौजन्य : मीराबहन

७६. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

धूलिया
सोमवार [१४ फरवरी, १९२७][2]

प्रिय भगिनि,

तुमारी परीक्षा भगवान ठीक ले रहा है। हरगीझ हारना नहिं। सुख दु.ख, जन्म मृत्यु, जरा व्याधि हमारे साथ है हि। मेरेसे तुमारा रूदन सोदपुरमें देखा नहिं जाता था। हमारे प्रिय जनको ईश्वर हमारे साथ रखें तो अच्छा है। परंतु ले जाय तो भी अच्छा है। अपना है और अपनी वस्तु ले जाय उसमें हमें क्या? वह तो सबको ले जायगा। सबसे बड़ा नट होनेके कारण, उसे हम नटखट कहते हैं। अपने दीलमें चाहे ऐसा हमको नचाता है। हम नाचे। जगतके नचानेसे नाचते हैं इससे तो उसके नचाये नाचे वही अच्छा है ना?

ईश्वर तुम सबको शांति दे।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० १६६३) की फोटो-नकलसे।

१. यहां नहीं दी जा रही हैं। इनके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको", १३-२-१९२७।
२. हेमप्रभादेवी दासगुप्तको लिखे १९-२-१९२७ के पत्रके अन्तर्गत उनके पुत्र अनिलकी मृत्युके उल्लेखसे।

७७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

धूलिया
सोमवार [१४ फरवरी, १९२७][1]

भाई ब्रजकिशन,

जमशेदपुरकी नौकरीके बारेमें मैं तुमारे उत्तरकी राह देखता हुं। अब चित्त शांत है?

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २३५५) की फोटो-नकलसे।

७८. पत्र : मगनलाल गांधीको

मौनवार [१४ फरवरी, १९२७][2]

चि० मगनलाल,

मणिलालके विवाहकी बात तो तुम्हें मालूम हो ही गई होगी, अगर मणिलालने तुम्हे [मेरे] पत्र न दिखाये हों तो छगनलालके पत्रसे सब जान लेना; और दूसरोको बता भी देना। मुझे मालूम नही कि नानाभाई पण्डितजीसे विधि सम्पन्न करायेंगे या किसी दूसरेसे। यह बात मैंने उन्हींपर छोड़ दी है। पण्डितजीसे कहना कि शायद उन्हें आना पड़े, इसलिए वे तैयार रहें। विवाह अकोलामें होगा।

इसके साथ मीराबहनके अन्य दो पत्र भेज रहा हूँ। परसरामके बारेमें लिखने के लिए मैंने महादेवसे कहा तो है।

बीजापुरका हाल लिखना। जॉनसे कहना कि वह मुझे पत्र लिखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६४)से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. देखिए "पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको", २२-२-१९२७।
२. मणिलालके विवाहके उल्लेखसे।

७९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

धूलिया

सोमवार, माघ सुदी १३ [१४ फरवरी, १९२७][1]

बहनो,

चि० मणिबहन द्वारा लिखित तुम्हारा पत्र मिल गया।

जो बहनें वहाँ आना चाहती हैं, उनके बारेमें तुमने जो लिखा सो ठीक है। मैं फिलहाल यह आशा नहीं कर सकता कि तुम उन्हें अपने साथ रखो। मैं तो इतना ही चाहता हूँ कि तुम उनके साथ घुलो-मिलो, उनमेंसे कोई बीमार हो जाये तो उसकी सार-सँभाल करो, उनसे दूर ही दूर न रहो, और कभी-कभी उन्हें अपने पास बुला लिया करो।

चि० ताराकी बड़ी बहन चि० सुशीलाकी सगाई चि० मणिलालके साथ कर दी है, तुम्हें यह मालूम हो गया होगा। शादी ६ मार्चको अकोलामें होगी, इसलिए मैं तो आश्रममें ८ तारीखकी शामको या ९ की सुबह पहुँचूँगा। १४ तारीखको सोमवार है। वहाँ तबतक रहनेके बाद दौरा करने निकल पड़ूँगा। इस लिए मैं आश्रममें थोड़े ही दिन रह पाऊँगा। इस प्रकार अनिवार्य परिस्थितियोंमें मैं विवाहके काममें पड़ता जरूर हूँ, फिर भी जैसे-जैसे उसमें पड़ रहा हूँ वैसे-वैसे, स्त्री-पुरुष दोनोंके लिए ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता अधिकाधिक देखता जा रहा हूँ। चि० मणिलाल केवल इन्द्रियनिग्रहकी खातिर ३२ वर्षतक कुंवारा रहा। उसने अब शादी करनेकी इच्छा प्रकट की, इसलिए मैंने उचित सम्बन्ध खोजनेका प्रयत्न किया। चूँकि यह विवाह सम्बन्ध एक भक्त कुटुम्बके साथ होने जा रहा है, इसलिए इस सम्बन्धसे भले की ही आशा किये बैठा हूँ।

विवाहकी बात करनेमें हम संकोच न करें। मगर विवाहित या कुंवारे इस बातके उठनेपर विकारवश भी न होवें। जो अपने विकारोंको न रोक सकें, वे जरूर शादी कर लें। और जो अपने विकारोंको रोक सकें, वे रोकें और इसी जन्ममें मुक्ति प्राप्त करनेकी कोशिश करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६३९) की फोटो-नकलसे।

१. मणिलालके विवाहके उल्लेखसे।

८०. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

मौनवार [१४ फरवरी, १९२७][1]

भाईश्री ५ नानाभाई,

आपका तार मिला। ६ तारीख आपको अनुकूल है, इसमें मुझे प्रसन्नता हुई है। आप विवाह-विधिके लिए वर्धासे गोपालरावको अथवा वहाँसे सहस्रबुद्धेको आनेके लिए तैयार कर लेंगे अथवा हम आश्रमसे पंडितजीको बुलाएँ; आपको कोई खास आदमी पसन्द हो तो उसे बुला लें। मेरे लिये सब बराबर है। यदि नाथ खुद ही विधि सम्पन्न करवायें तो उनसे अधिक अनुकूल मुझे और कोई नहीं लगता। यदि पण्डितजीको बुलाना हो तो मुझे तार द्वारा सूचित करना।

सिर्फ धार्मिक विधि ही करनी है। हम उसके सिवा और कुछ न करेंगे। आप मण्डपकी रचना आदिमें कोई खर्च कदापि न करें। मिठाई न बनवायें। इस नये सम्बन्धसे न तो आप मेरे समधी बनेंगे और न सुशीला मेरी पुत्रवधू। वह मेरी पुत्री ही रहेगी और आप सब मेरे भाई-बन्द ही रहेंगे।

आप सुशीलाको कन्यादानमें रत्ती-भर भी सोना न दें। उसे संस्कारके समय तो कोई आभूषण पहनने ही नहीं चाहिए। यदि बादमें उसका जी गहने पहननेको करे तो लाचारी समझूंगा, क्योंकि वह उतनी ही स्वतन्त्र है और रहेगी जितने स्वतन्त्र आप हैं या मैं हूँ।

मैं खुद तो अपनी बनाई सूतकी मालाके अलावा और कुछ नहीं लानेवाला हूँ; हाँ, तकली, 'गीताजी' और यदि उसकी प्रति उपलब्ध हुई तो 'भजनावली' अवश्य दूंगा।

मणिलाल दक्षिण आफ्रिकामें विलायती कपड़े पहनता है। इसके लिए उसने मेरी अनुमति ले ली थी; लेकिन सुशीलाको उसकी कोई जरूरत नहीं होगी। वह तो अपनी खादीकी साड़ीमें ही सती सीताकी तरह सुशोभित होगी।

आप बहुत अधिक लोगोंको इकट्ठा न करना। लेकिन जिन्हें बुलाना उचित हो उन्हें बुलानेमें संकोच भी न करना। मैं बम्बईसे मणिलालको लेकर नागपुर मेलमें ६ तारीखको सवेरे अकोला पहुँचूंगा। ७ को सोमवार है; इसलिए उस दिन तो वहाँ रहूँगा ही; किन्तु ७ की रातको कोई सुविधाजनक गाड़ी हुई तो उससे सीधा अहमदाबाद आ जाऊँगा। रामदास और देवदास मेरे साथ आयेंगे अथवा सीधे ही वहाँ पहुँचेंगे। अन्य कोई लोग आना चाहेंगे तो मैं उन्हें रोकूँगा नहीं।

बापूके आशीर्वाद

१. मणिलालके विवाह तथा गांधीजीकी यात्राके कार्यक्रमके उल्लेखसे।

[पुनश्च :]

मेरे दौरेकी तारीखें ये हैं :[1]

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२०) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

८१. पत्र : मणिलाल गांधीको

[१४ फरवरी, १९२७][2]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। विवाह अकोलामें होगा। उसके लिए ६ मार्च, रविवारका दिन तय हुआ है। मुझे बम्बईसे अकोला सीधा जाना पड़ेगा। मैं बम्बई ४ तारीखको ही पहुँच सकूंगा। ७ तारीखको सोमवार है, इसलिए वह दिन भी अकोलामें ही बीतेगा; वहाँसे हम ७ तारीखकी रातको रवाना होंगे और ८ की शामको अथवा ९ की सुबह आश्रममें पहुँचेंगे।

मैंने नानाभाईको लिख दिया है कि वे कोई आडम्बर न करें और कोई छोटा-सा भी गहना न बनवायें। मैं कुछ भी करनेवाला नहीं हूँ। तुम मेरी अनुमतिसे दक्षिण आफ्रिकामें विदेशी कपड़े पहनते हो; लेकिन सुशीलाको वह सब करनेकी कोई जरूरत नहीं। सुशीला अपनी खादीकी साड़ीमें सीताकी तरह सुशोभित होगी। यदि तुम इसमें कोई फेरबदल करना चाहो तो मुझे बताना। तुम दोनों विवाहके बाद स्वतन्त्र होगे। तब तुम अपनी इच्छाके अनुसार बरतना। लेकिन मैं यह जरूर चाहता हूँ कि तुम सुशीलाको कोई भी गहना न पहनाओ और वह खादीकी साड़ीके अलावा किसी दूसरे कपड़ेका व्यवहार न करे।

मैं जैसे-जैसे विचार करता हूँ मुझे वैसे-वैसे लगता है कि तुम्हारे पास तो एक रत्न आ रहा है। तुम उसे सँभाल कर रख सकोगे या नहीं, यही प्रश्न मेरे मनमें है।

तुम अपने विकारोंको रोकना। उसे पढ़ने-लिखने देना। यह बालिका तुम्हारे अनेक कामोंमें मदद कर सकेगी। वह कम्पोज करना भी सीख सकती है। वह मेहनत करके अपनी गुजराती सुधार सकती है। लेकिन तुम उसे गुड़िया बनाओगे या सहचरी, यह तो तुमपर ही निर्भर है। अन्तत तो वह भी बच्ची ही है। उसने दुनिया नहीं देखी है। जितने संयमका पालन तुम आज करते हो, यदि भविष्यमें उससे अधिक करने लगो तो उससे तुम दोनोंका बहुत हित होगा; यह मैं स्पष्ट देख सकता हूँ।

भगवान तुम्हें शक्ति और सद्बुद्धि दोनों ही दे।

१. यहाँ नहीं दी जा रही हैं। इनके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको", १३-२-१९२७।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

अब तुम मार्च मासमें दक्षिणी आफ्रिका बिना किसी कठिनाईके जा सकते हो और उसके लिए तुम्हें जो भी तैयारी करनी हो सो कर सकते हो।

तुम वहाँसे ४ तारीखको रवाना होना और ५ तारीखको मुझे बम्बईमें मिलना। रामदास और देवदास आना चाहते हों तो मैं उन्हें आनेके लिए लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने तुम्हारा पत्र सुशीलाको भेज दिया है। हरिलालको कुछ न लिखना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११३०) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

८२. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

[१५ फरवरी, १९२७ के पश्चात्][1]

भाईश्री ५ रामेश्वरजी,

आपके दोनों पत्र मीले है। जो हार आपने लीया वह खद्दर कार्यके लीये दीया गया था। इसलीये उसका दाम उसीमें हि जा सकता है। गोरक्षाके लीये भी हम तो जो योग्य है वही करें। मुझे अब गोरक्षाके लीये काफी पैसेकी आवश्यकता है क्योंकि अब चर्मालयका काम शुरू हो गया है परन्तु हमारे धीरज रखना होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २०६) की फोटो-नकलसे।

८३. पत्र : मणिबहन पटेलको

नासिक जाते हुए
बुधवार, [१६][2] फरवरी, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। ऐसा दीखता है कि मैं वहाँ ८ तारीखसे पहले नहीं पहुँचूंगा। अभीतक कराचीसे कोई खबर नही आई है।

१. गांधीजी खादी कार्यके लिए महाराष्ट्रका दौरा करते हुए १३ से १५ तारीखतक धूलियामें थे। रामेश्वरदास पोद्दार धूलियाके निवासी थे और सम्भवतः गांधीजीने पत्रमें उल्लिखित हारको धूलियामें ही नीलाम किया था।

२. साधन-सूत्रमें १८ तारीख है, किन्तु बुधवार १६ फरवरीको ही था।

गंगादेवी बार-बार बीमार क्यों पड़ जाया करती है? यदि वे जलवायु परिवर्तनके लिए कहीं जाना चाहें तो वैसा प्रबन्ध कर देंगे। तोताराम और गंगादेवी दोनोंसे पूछना। क्या वे खाने-पीनेमें परहेज बरतती हैं?

मैं आनेपर संस्कृतकी और धुनने-कातने इत्यादिकी परीक्षा लूँगा। तुम्हें अपने गुजराती अक्षर अभी और अच्छे करने चाहिए। गुजराती व्याकरणका और भी अध्ययन करना।

आजकल मैं संयुक्त भोजनालयको सर्वांगपूर्ण बनानेकी बात सोचता रहता हूँ। अब प्रयोग पूरा होना ही चाहिए। इसमें भरसक मदद देना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

८४. पत्र : नारणदास गांधीको

बुधवार [१६ फरवरी, १९२७][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारे सभी पत्र मिल गये हैं। मैंने महादेवसे उनका उत्तर लिख देने और जरूरी कार्रवाई करनेको कह दिया है। कुछ हदतक तो कार्रवाई हो भी चुकी है।

कातनेमें ढिलाईके बारेमें मैं अभीतक नहीं लिख पाया हूँ। समय मिलनेपर लिखूँगा। मैं यह पत्र चलती हुई गाड़ीमें लिख रहा हूँ। कार्यक्रम ही ऐसा रहा कि कुछ करनेका समय नहीं मिल पाया। किन्तु अब मैंने कह दिया है कि कार्यक्रम ऐसा बनाया जाये जिससे कुछ अधिक समय मिल सके।

दोनों भण्डारोंको एक कर देने तथा उन्हें जेराजाणीको सौंप देनेसे जो नुकसान होगा उसे यदि चरखा भण्डार पूरा नहीं करेगा तो और कौन करेगा? मैं यह बात पूरी तरहसे समझ भी नहीं पा रहा हूँ, क्योंकि बहुतसे तथ्य मेरे ध्यानसे उतर गये हैं। इसका अन्तिम निर्णय तो मैं २५ या २६ को बेलगाँवमें होनेवाली बैठकमें करूँगा। क्या तुम्हें उस बैठकमें आना है?

दक्षिण आफ्रिका दिवसपर जो सूत प्राप्त हुआ है उसे चरखा संघमें जमा कर लेना।

तुम सारे सूतके कसकी जाँच करते हो, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है। इस कार्यमें जो समय जाता है वह हमारे लिए फलप्रद सिद्ध हो सकता है, क्योंकि उससे तो हमें बहुत-कुछ सीखनेको मिलता है।

१. पत्रके 'चलती हुई गाड़ीमें' लिखे जानेके उल्लेखसे लगता है कि पिछला पत्र जिस दिन लिखा गया उसी दिन यह भी लिखा गया होगा। बेलगाँवके उल्लेखसे भी यही तिथि निश्चित होती है।

तुम्हें जो भी अनुभव हों और उनमेंसे जो जानने लायक हों उन्हें गुजरातीमें लिखकर भेजते रहो ताकि इन अनुभवोंको 'नवजीवन' में प्रकाशित किया जा सके तथा उसके आवश्यक अंशोंको 'यंग इंडिया' में भी लिया जा सके।

शेष बातोंका तो तुम्हें वहाँ पता चलता ही रहता है इसलिए उनके सम्बन्धमें कुछ नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७१२)से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

८५. पत्र : मीराबहनको

नासिक
१६ फरवरी, १९२७

चि० मीरा,

पहले मैंने सोचा था कि खादी प्रतिष्ठानके लोगोंसे कहूँ कि जो सफरी चरखा तुम्हें भेजा जायेगा उसकी कीमत आश्रमके हिसाबमें डाल दी जाये। परन्तु मैंने अपने निर्णयपर फिरसे विचार किया और मैंने देखा कि वी० पी० से चरखा मँगा लेना ज्यादा सस्ता रहेगा। इसलिए यदि तुम्हें कलकत्तासे कोई वी० पी० पार्सल मिले तो पैसे वही दे देना।

मार्चकी ६ और ७ तारीखको मैं मणिलालके विवाहके लिये अकोलामें ठहरूँगा। ८ से १४ मार्चतक आश्रममें और १५ से १७ तक बारडोलीमें रहूँगा। १७ की शामको मैं सूरतसे गुरुकुलके लिए गाड़ीसे रवाना हो जाऊँगा।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

कोई पत्र न लिखनेकी अपेक्षा बोलकर लिखाया पत्र भेजना बेहतर है।

श्रीमती मीराबहन
गुरुकुल काँगड़ी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०५) से।
सौजन्य : मीराबहन

८६. पत्र : जमनालाल बजाजको

बुधवार [१६ फरवरी, १९२७][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा कार्ड मिला, मै बम्बई चार तारीखको किसी समय या पाँचकी सुबह पहुँचूंगा। दास्ताने चाहते है कि मैं चारको पूनामें रहूँ और जयसुखलाल मेहताकी इच्छा है कि मै कुछ घंटे सान्ताक्रूजमें ठहरूँ। यदि पाँच तारीखको सुबह वहाँ ठहरनेसे उन्हे संतोष हो जाये तो चारकी शाम पूनामें बिताकर उसी दिन रातकी गाड़ीसे बम्बई रवाना होऊँगा। और वहाँसे अकोला जाऊँगा।

चि० गोमती वहाँ आ गई है, इसलिए अब उसके और किशोरलालके वापस अकोला जानेका सवाल नही रह जाता। अगर नाथजी वहाँ हों तो पूछ लेना कि वे विवाह-विधि सम्पन्न करेंगे या नही। विवाह-विधि उनके हाथसे हो और उन्हे उसमें कोई दिक्कत न हो तो मुझे यह अच्छा लगेगा।

तुम जानकीबहनका ऑपरेशन होनेके कारण अथवा किसी और कारणसे न आ सको तो मेरा खयाल है कि कोई हर्ज नही।

यहाँसे आज रातको ही संगमनेर जाना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८४) की फोटो-नकलसे।

८७. भाषण : नासिकमें

१६ फरवरी, १९२७

कुछ युवकोंने मेरे यहाँ आते ही मुझे कुछ प्रश्न दे दिये हैं। उन प्रश्नोंका जवाब ही आजका मेरा भाषण होगा।

[१] हिन्दुस्तानकी वर्तमान परिस्थितिमें क्या एक हिन्दूके नाते आपको ऐसा नहीं लगता कि आपको श्रद्धानन्द स्मारक कोषपर और अधिक जोर देना चाहिए? अगर आपको ऐसा लगता हो तो फिर इस कोषको इकट्ठा करनेमें आप हाथ क्यों नहीं बँटाते?

मैं तो एक अपूर्ण मनुष्य हूँ। सम्पूर्ण सर्वशक्तिमान तो एक ईश्वर है। मैं अर्थशास्त्र जानता हूँ। मेरे पास जो समय और जो शक्ति है, वह सब मैंने देशको

१. मणिलाल गांधीके विवाह तथा गांधीजीके संगमनेर जानेके कार्यक्रमके उल्लेखसे।

अर्पण कर रखी है। मुझे यह अभिमान नहीं कि सारा काम मैं ही करूँ। जिस काममें पण्डित मालवीयजी और लालाजीके समान अनुभवी नेता लगे हों, उसमें मुझे और अधिक क्या करना है? जिस समय कलकत्तेमें श्रद्धानन्द स्मारकके लिए ५० हजार रुपया इकट्ठा किया गया, उस समय मालवीयजीकी आज्ञासे मैं वहाँ हाजिर रहा था। इससे अधिक किसी बातकी आशा मालवीयजीने मुझसे रखी नहीं। मेरे कार्यक्षेत्रकी मर्यादा बँधी हुई है। मैं भगवान श्रीकृष्णके, 'गीता' के, उपदेशानुसार चलनेका प्रयत्न करनेवाला एक अल्प मनुष्य हूँ और मैं जानता हूँ कि वह क्या है, फिर वह कितनी ही अल्प कोटिका क्यों न हो:

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मोभयावहः॥

दूसरा धर्म चाहे जितना अच्छा लगता हो पर मेरे लिए मेरा मर्यादित धर्म ही भला, दूसरा भयावह है।

[२] आज आप जो चन्दा इकट्ठा कर रहे है, वह तो केवल खादीके लिए ही है न? अगर ऐसा ही हो तो आप उसका उपयोग किस प्रकार करेंगे?

हाँ, यह धन केवल खादीके लिए ही है; क्योंकि यह अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक कोषके लिए इकट्ठा किया जा रहा है। इस कोषके साथ देशबन्धुका नाम इसलिए लगाया गया है कि देहान्तके थोड़े ही दिनों पहले उन्होंने खादी-कार्यके द्वारा ग्राम-संगठनकी योजना तैयार की थी और खादी-कार्य उनको प्रिय था। खादीके लिए चन्दा उगाहकर उसकी व्यवस्था करनेके लिए ही अखिल भारतीय चरखा संघ बनाया गया है। इस कोषकी पाई-पाईका हिसाब रखा जाता है। जो कोई व्यक्ति चाहे उसे देख सकता है। इस संघका एक कार्यवाहक मण्डल है, हिसाब जाँचने-वाले है, निरीक्षक भी हैं। इस संघने अभी देशके सामने खादी सेवक संघकी योजना पेश की है। आप कहेंगे कि मान लिया, आपका मण्डल तीस रुपल्लियाँ देगा। उससे भला क्या होगा? हाँ, यह ठीक है; हमारा मण्डल तो भिखारियोंका मण्डल ठहरा, क्योंकि बहुतसे गरीब भिखारियोंसे पैसा लेकर यह स्थापित हुआ है। यह कोई इंडियन सिविल सर्विस नहीं है कि हजारों रुपयोंका वेतन दिया जाये। इंडियन सिविल सर्विस तो लोगोंके करकी बदौलत चल रही है। वह तो लोगोंपर राज्य करनेके लिए है और हमारा मण्डल है लोगोंकी सेवाके लिए।

[३] आप मुसलमानोंके प्रति पक्षपातकी भावना क्यों रखते है? कितने ही मुसलमान नेता आपके ऊपर व्यक्तिगत आक्षेप करते हैं। आप उसका भी जवाब नहीं देते; यह क्यों?

दूसरेके धर्मका शुद्ध पक्ष लेकर मैं अपने धर्मकी रक्षा ही करता हूँ। मैं हिन्दू धर्मका नाश नहीं चाहता। मैं उसका नाश कर ही नहीं सकता, क्योंकि मैं हिन्दू-महासागरकी एक बूंद-मात्र हूँ। मुसलमान मुझे काफिर कहें तो इससे क्या होता है? उसका जवाब क्यों देना चाहिए? [दक्षिण आफ्रिकामें] मेरा एक भानजा मेरे ही साथ रहता

था। जब दूसरोंको ऐसा लगा कि मैं उसके साथ पक्षपात कर रहा हूँ, तब कहीं उसकी समझमें आया और मैंने भी यह देखा कि मैं तो उसके साथ न्याय ही कर रहा था, उससे अधिक कुछ नहीं! मुसलमान जब मुझपर आक्षेप करते हैं तो इससे शायद यह सूचित होता है कि मैं उनके साथ अभी पूरा न्याय नहीं कर रहा हूँ। मुझे जवाब देनेकी आवश्यकता क्यों होनी चाहिए? मेरे तो चौबीसों घंटे श्रीकृष्ण भगवानको समर्पित हैं। वे ही मेरी रक्षा करते हैं और मैं दासानुदास श्रीकृष्ण भगवानसे सदा प्रार्थना करता हूँ कि, 'हे कृष्ण, मेरी ओरसे जो जवाब देना हो, सो तू ही दे आ।'

[४] आपने खिलाफतकी लड़ाई तो जी-जानसे लड़ी थी। उसी प्रकार आज आप हिन्दू संगठनके लिए क्यों नहीं जुट जाते?

खिलाफतके लिए प्राणतक अर्पण करनेकी मेरी प्रतिज्ञा थी। परधर्मीके लिए जितना हो सका मैंने किया। मैं मानता था, और अब भी मानता हूँ कि मेरी इस सेवासे गोरक्षा होगी। आप पूछेंगे कि 'क्या गोरक्षा हुई?' यदि गोरक्षण नहीं हुआ पर उससे मुझे क्या? मुझे तो प्रयत्न करनेका ही अधिकार है। फल देनेका अधिकार तो भगवान श्रीकृष्णको ही है। भगवानने मुझसे कहा कि मुहम्मद अलीसे मिलो, शौकत अलीसे मिलो, उनके साथ काम करो। मैंने वही किया। उन्हें जितनी मदद दी जा सकी, दी। इसके लिए मुझे जरा भी पछतावा नहीं है। ऐसा प्रसंग फिर आये तो मैं फिर यही करूँगा। 'गीता', 'भागवत्' आदि धर्मग्रंथ मुझे यही सिखलाते हैं। लोग मेरी निन्दा करें, मेरा अपमान करें; मैं उसके जवाबमें उनकी निन्दा या अपमान करनेवाला नहीं हूँ। मैं तो वही करूँगा जो करनेका उपदेश तुलसीदासने दिया है, यानी तपश्चर्या। मेरा स्वभाव ही ऐसा है। मुझसे दूसरी बात तो हो ही नहीं सकती? 'गीता' ने कहा है कि सब जीव अपनी-अपनी प्रकृतिके अनुसार ही चलते हैं, निग्रह क्या करेगा। इसलिए मुझे तो तपश्चर्या करनी है, मेरे लिये तो वही एक मार्ग है। लेकिन मैं भविष्यवाणी करता हूँ कि किसी दिन जब मुसलमानोंके दिलमें खुदा बसेंगे, और हिन्दुओंके समान वे भी गोरक्षा करेंगे, तब आप कहेंगे कि इस गोरक्षाका श्रेय अधिकांशत: हमसे पहले हो गये गांधी नामके एक पागलको है।

मैं नहीं मानता कि आजके जैसी तबलीग या शुद्धि या धर्म-परिवर्तनकी आज्ञा इस्लाम या हिन्दू-धर्म या ईसाई-धर्ममें है। तब मैं शुद्धिमें किस प्रकार भाग ले सकता हूँ? तुलसीदास और 'गीता' तो मुझे यह सिखाते हैं कि जब तुम्हारे ऊपर या तुम्हारे धर्मपर हमला हो तब तुम आत्मशुद्धि कर लेना। और जो पिण्डके लिए ठीक है वह ब्रह्माण्डके लिए भी ठीक है। आत्मशुद्धिका, तपश्चर्या करनेका मेरा प्रयत्न चौबीसों घंटे चल रहा है। पार्वतीके नसीबमें अशुभ लक्षणोंवाला पति ही था। ऐसे लक्षण होनेपर भी शुभ वर तो एक शिवजी ही थे। पार्वतीने उन्हें अपने तपोबलसे पाया। संकटके समयमें ऐसा ही तप हिन्दू-धर्म सिखलाता है। हिमालय धर्मकी इस आज्ञाका साक्षी है—वही हिमालय, जिसके ऊपर हिन्दू-धर्मकी रक्षाके लिए लाखों ऋषि-मुनियोंने अपने शरीरको गला डाला है। 'वेद' कागजपर लिखे अक्षरोंका

नाम नही है। 'वेद' तो हमारे हृदयमें है। और इस हृदयवासी 'वेद' ने मुझे बतलाया है कि यम-नियमादिका पालन कर और कृष्णका नाम ले। मै विनयके साथ, परन्तु सत्य कहता हूँ कि हिन्दू-धर्मकी सेवा, हिन्दू-धर्मकी रक्षाको छोड़कर, मेरी दूसरी प्रवृत्ति ही नही है। हाँ, उसे करनेकी मेरी रीति भले ही निराली हो।

[५] आज जो पैसा आपको मिलेगा उसे देनेवाले अधिकांशमें विलायती कपड़ोंके ही व्यापारी है। क्या आप यह जानते है कि आपको वे जो पैसा देते है सो आपके प्रेमके कारण देते हैं, खादीके प्रेमके कारण नहीं?

केवल प्रेमवश दिया गया मुझे एक पैसा भी नहीं चाहिए। मै चाहता हूँ कि मेरा काम समझकर लोग मुझे पैसा दें। प्रेमसे आप मुझे दूसरी वस्तु दे सकते है, प्रेमसे आप मुझे अपना विलायती कपड़ा दे सकते है, पर पैसा नही चाहिए। सच तो यह है कि व्यापारी लोग मुझे पैसा देते है तो यह समझकर कि मेरा व्यापार जमे तो उससे उनकी या देशकी हानि नही है। वे जानते है कि अन्तमें उन्हें खादीका ही व्यापार करना पड़ेगा। वे इसे खूब समझते है, परन्तु उनमें आज निश्चयका बल नहीं है। वे तो मुझे ईश्वरसे प्रार्थना करनेको कहते है कि उन्हें इसके लिए बल मिले। इस बीच वे धन देकर इस प्रवृत्तिका पोषण करते है। वे मुझे फुसलानेको धन नही देते।

[६] आप केवल खादीका ही काम करते हैं और दूसरे इतने ही या इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक कामोंकी अवहेलना क्यों करते है?

मैं कह चुका हूँ कि मेरा कार्यक्षेत्र मर्यादित है। दुर्योधनने भी अपने योद्धाओंकी मर्यादाका वर्णन किया था। 'यथाभागमवस्थिताः' — सभीको अपने-अपने स्थानपर रहनेको और अपने स्थानपर रहकर भीष्मकी रक्षा करनेको कहा था। 'गीता' का वर्णाश्रम धर्म यही कहता है। वह सबसे अपनी-अपनी मर्यादा समझनेको कहता है। हिन्दुस्तानको अगर मुझसे काम लेना है तो उसे मेरी मर्यादा जान लेनी होगी। यह सम्भव हो सकता है कि मै कोई दूसरा काम भली प्रकार कर सकूँ, पर उसे दूसरे भी करते हैं। और मेरा विश्वास है कि इसे मै जितनी अच्छी तरह कर सकता हूँ उतनी अच्छी तरह कोई और नही कर सकता। अपने इसी विश्वासके कारण मै इसे कर रहा हूँ। मुझे सत्याग्रह पसन्द है। मैं वह करना भी चाहता हूँ, परन्तु उसके लिए अनुकूल वातावरण कहाँ है? खादीके द्वारा मैं वह वातावरण पैदा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। सत्याग्रह तो मेरी प्राणवायुके समान है, परन्तु उसे खादीके बिना अशक्य मानता हूँ।

[७] जरा यह तो बतलाइएगा कि इस दौरेमें आपको मुसलमानोंसे प्रत्यक्ष कितनी सहायता मिली है?

यह बात सच है कि आज मुसलमान मुझे खादीके काममें लगभग कोई मदद नहीं दे रहे हैं। पर उससे क्या होता है? मै तो अपनी स्त्री या भाईके साथ व्यापार नही करता। घरमे उनके साथ यह कहकर सौदेबाजी नहीं करता कि तुम यह

करो तो मैं वह करूँगा। उसी प्रकार मुसलमान भाइयोंके साथ, या पण्डितजी[1] या केलकरके[2] साथ, अदला-बदलीका सौदा करना नही चाहता। मुसलमानोंसे हम किसलिए डरें? हमें तो परमेश्वरसे ही डरना चाहिए? मनुष्यसे डरना ही नही चाहिए। मनुष्यसे धोखा खानेका भय ही नही रखना चाहिए। ईश्वरपर भरोसा रखकर, लोग ठगेंगे तो भी वह देख लेगा ऐसा विश्वास रखकर, स्वधर्मका पालन करते जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-२-१९२७

८८. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

[१७ फरवरी, १९२७ से पूर्व][3]

प्रिय सतीश बाबू,

आप कुशलपूर्वक ही होंगे। अब चूँकि आप कलकत्तासे बाहर चले गये हैं, आपको काफी समयतक विश्राम अवश्य करना चाहिए और पूरी तरह स्वस्थ हो जाना चाहिए। आप प्रतिष्ठानके मामलोंकी चिन्ता न करें। जहाँतक आपके हिस्सेके कामका सम्बन्ध है, उन मामलोंको ईश्वरके भरोसे छोड़ दें। आखिरकार खादीका काम एक आदमीके बसका तो है नही और न हो सकता है। यदि ईश्वरकी दृष्टिमें यह कार्य प्रिय है, तो वह इसके लिए अपने आप निमित्त जुटायेगा और जिन्हें निमित्त रूप बनायेगा, उन्हे ठीक रखेगा। हम सबको ऐसा महसूस करना चाहिए जैसे यन्त्र कुछ भी नही है उसी तरह हम भी कुछ नही हैं। यन्त्रका चालक ही सब-कुछ है। हम 'गीता' और 'रामायण' की इस शिक्षाको व्यवहारमें लायें तो हमारी चिन्ता समाप्त हो जायेगी।

कृपया मुझे अपने सम्बन्धमें सब समाचार लिखते रहें।

[मेरे कार्यक्रमकी] तारीखें नीचे दी जा रही हैं:[4]

सस्नेह,

आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६३३) की फोटो-नकलसे।

१. मोतीलाल नेहरू। देखिए यंग इंडिया, ३-१२-१९२७।

२. नृसिंह चिन्तामणि केलकर।

३. दौरेके कार्यक्रमसे।

४. यहाँ नहीं दी जा रही हैं। इनके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको" १३-२-१९२७।

८९. शून्यमें से

जब हम चरखेकी सफलताकी विस्तृत सम्भावनाओंपर विचार करते हैं तब हमें यह सोचकर आश्चर्य होता है कि चरखेकी सीधी-सी बातको सर्वग्राह्य बनानेमें इतनी देर क्यों लग रही है। एक लैटिन कहावत है जिसका अर्थ यह है कि 'शून्यमें से शून्य ही प्राप्त होता है'। लेकिन ऐसा लगता है कि चरखा कुछ नहीं तो इस कहावतके शब्दार्थको तो गलत साबित करता ही है, क्योंकि वह किसी उपयोगी चीजको बरबाद किये या हटाये बिना ही राष्ट्रके फाजिल और बेकार जानेवाले समयका उपयोग करनेका प्रयत्न करता है।

यह बेकारी, चाहे अपने आप अख्तियार की गई हो, चाहे लादी गई हो, राष्ट्रकी आत्माकी ही हत्या कर रही है। मैं गाँवोंमें जितना अधिक प्रवेश करता जाता हूँ मेरे हृदयमें किसानोंके चेहरोंपर हवाइयाँ उड़ती देखकर उतनी ही अधिक चोट लगती है। उनके पास अपने बैलोंके साथ-साथ मशक्कत करनेके अलावा कोई दूसरा काम नहीं है। इस कारण वे लगभग उन्हींके जैसे बन गये हैं। यह एक बड़े ही दुःखकी बात है कि हमारे लाखों देशवासी अपने हाथोंको हाथोंकी तरह इस्तेमाल नहीं करते। प्रकृतिने हम इन्सानोंको जो विशेषताएँ प्रदान की हैं, उन्हें हम कतई काममें नहीं लाते, इसलिए प्रकृति हमसे हमारी इस भूलका भयंकर बदला ले रही है। हम उसके दिये हुए वरदानोंका पूरा लाभ उठानेसे इनकार करते हैं। कुछ अन्य बातोंके साथ-साथ, हाथोंके इस कुशल व्यवहारके आधारपर ही हम पशुओंसे भिन्न हैं। किन्तु हममें से लाखों तो हाथोंको पैरोंकी ही तरह इस्तेमाल करते हैं। फल यह होता है कि प्रकृति हमारे शरीर तथा मस्तिष्क — दोनोंको पूरा पोषण नहीं देती।

चरखा ही समयके इस विवेकहीन विनाशको रोक सकता है। चरखा तत्काल यह काम कर सकता है। इस कामके लिए बहुत ज्यादा दौलत या बुद्धिकी भी जरूरत नहीं है। इस बरबादीके कारण हम लोग मरे हुए-से जी रहे हैं। हममें जीवन फिर आ सकता है — लेकिन तभी, जब प्रत्येक घर फिरसे कताईका कारखाना और प्रत्येक गाँव हाथ-बुनाईका कारखाना बन जाये। इतना होते ही हमारी पुरानी ग्रामीण कला पुनः जीवित हो उठेगी और फिर लोकगीत गूँजने लगेंगे। अधभूखे राष्ट्रका न तो कोई धर्म रह जाता है, न कला, न कोई संगठन।

चरखेके खिलाफ उसके आलोचकों द्वारा केवल एक ही आपत्ति उठाई गई है, और वह यह है कि चरखेसे आमदनी नहीं होती है। लेकिन अगर चरखेसे एक पैसा रोज भी कमाया जा सकता है तो यह देखते हुए कि एक औसत अमेरिकी और अंग्रेजकी रोजाना आमदनी क्रमशः चौदह और छः रुपये है, जबकि हमारी रोजाना औसत आमदनी डेढ आना फी आदमी है, चरखा काफी आमदनी देता है। चरखा शून्यमें से भी कुछ पैदा करनेका एक प्रयास है। क्योंकि अगर हम चरखेके द्वारा

राष्ट्रके ६० करोड रुपये हर साल बचा लें, और यह अवश्य किया जा सकता है, तो इतनी वडी रकम राष्ट्रकी आमदनीमें जुड़ जाती है। ऐसा करनेसे हमारे गाँव स्वत. संगठित हो जाते हैं। और चूँकि इससे मिलनेवाली करीव-करीव पूरी ही रकम मुल्कके गरीवसे-गरीव लोगोंमें वँटेगी, यह क्रिया इतने धनके न्याययुक्त एवं समविभाजनकी योजना वन जाती है। अगर इसमें इस विभाजन क्रमका महान नैतिक मूल्य जोड़ दिया जाये तो चरखेकी वातका विरोध किया ही नही जा सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-२-१९२७

९०. एक बड़े कर्तैये

जव विहारका दौरा खत्म करके मैं मध्य-प्रान्त जा रहा था, उस समय मुझे कलकत्तेमें श्रीयुत योगेश्वर चटर्जीकी मृत्युका समाचार मिला। मुझे उन्हे एक ऐसे कर्तैयेके रूपमें जाननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था, जिनसे ढाकेकी शवनमके नामसे मशहूर मलमलकी कलाको पुनरुज्जीवित कर सकनेकी आशा की जाती थी। मैंने खादी-प्रतिष्ठानके क्षितीश वावूको तुरन्त ही लिखा[1] कि वे मुझे उनका जीवन वृत्तान्त लिख भेजें। मुझे वृत्तान्त मिल गया है और मैं उसे पाठकोंके सामने रखता हूँ[2]:

> २४ परगना जिलेके पानपुर गाँवके श्रीयुत जटिलेश्वर चटर्जीके पुत्र श्री योगेश्वर चटर्जीकी मृत्यु ३० जनवरी रविवारको सुवह हुई। अव उनके घरमें उनकी विधवा पत्नी, एक सालकी बच्ची, एक छोटा भाई और बूढ़े पिता हैं। . . .
>
> योगेश्वर वावू वी० ए० तक पढ़े थे और कुछ दिन शिक्षक रहे थे। वे उसके वाद पूर्वी वंगाल रेलवेमें नौकर हो गये और वहाँ सात साल सेवामें रहे। . . . मरनेके समय वे ३५ सालके थे।
>
> उन्होंने असहयोगके जमानेमें कातना शुरू किया था। वे वड़े उत्साही कर्तैये थे। गौहाटी प्रदर्शनीमें प्रतिष्ठानने २०० अंकके सूतकी जो मलमल रखी थी, उसका सूत योगेश्वर वावूने काता था। कानपुर प्रदर्शनी और गौहाटी प्रदर्शनीके वीच एक सालके अरसेमें ही उन्होंने उक्त मलमलके लिए २०० अंकका सूत काता और इसके साथ-साथ उन्होंने १०० अंकका इतना सूत भी काता कि उसकी दो धोतियाँ वनाई गईं। इनमेंसे एक धोती आचार्य रायके लिए और दूसरी उनके पिताके लिए थी।

१. देखिए "पत्र: क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको", १३-२-१९२७।

२. अंशतः उद्धृत।

वे बराबर खादी प्रतिष्ठानके पेटी चरखेपर ही काता करते थे। वे बड़े पक्के खादी भक्त थे और अवकाशके समय कात-कातकर ही उन्होंने कताईमें इतनी जल्दी प्रगति की थी।

मैं दिवंगतके परिवारसे संवेदना प्रकट करता हूँ और आशा करता हूँ कि योगेश्वर बाबूकी मृत्युके साथ ही पुरानी कलाको पुनरुज्जीवित करनेका प्रयास नहीं मर जायेगा। स्मरण रहे कि योगेश बाबूका इतनी मेहनत करनेका कारण केवल उनका देशप्रेम ही था। केवल स्वेच्छासे कातनेवाले ही उनके इस महान प्रयत्नका अनुकरण कर सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-२-१९२७

९१. पत्र : हैरी किंगमैनको

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती[1]
१८ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

मैं आपके पत्रके लिए जो बहुत युक्तियुक्त है, आपको धन्यवाद देता हूँ[2]। क्या आप मुझे चीनी-आन्दोलनके सम्बन्धमें विश्वसनीय साहित्य दे सकते हैं और आजकल जो घटनाएँ वहाँ हो रही हैं, उनकी सच्ची तसवीर बता सकते हैं? मैं समाचार-पत्रोंपर कभी बहुत भरोसा नहीं करता और मैं यह जाननेके लिए बहुत ही उत्सुक हूँ कि इस समय चीनमें क्या हो रहा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री हैरी किंगमैन
६८, रिक्शिएगन रोड
टियेन्टसिन
चीन

अंग्रेजी (जी० एन० ५०४३) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।
२. देखिए "हमारी बेबसी", ३-२-१९२७।

९२. भाषण : अहमदनगरमें[1]

१८ फरवरी, १९२७

मैं अभी-अभी राष्ट्रीय पाठशाला होकर आया हूँ। मैंने लगभग एक घंटेतक एक कड़े निरीक्षककी तरह संस्थाके सारे प्रबन्ध और कार्य-प्रणालीका निरीक्षण किया है और उसे सन्तोषजनक पाया है। मैंने विद्यार्थियोंसे दिल खोलकर सोत्साह बातचीत करते हुए पूरी तरहसे उनको जाँच लिया है और उन्हे कुशाग्रबुद्धि तथा हाजिर जवाब पाया है। संक्षेपमें अहमदनगर राष्ट्रीय पाठशालाके रूपमे मैंने अन्धकारसे भरे बड़े मरुस्थलके बीच एक सुन्दर छोटा-सा नखलिस्तान ही देखा है।[2]

[भाषण जारी रखते हुए] श्री गांधीने कहा कि यदि अहमदनगर जिला गरीब है, तो शेष भारत और भी गरीब है। सैकड़ों-हजारों स्त्री-पुरुषोंके पास किसी भी तरहका रोजगार नहीं है और वे लगभग भूखे रहते हैं। मेरे मनमें इसपर जरा भी सन्देह नहीं है कि केवल खादीका काम ही इन लोगोंको कुछ रोजगार और रोटी दे सकता है। उन्होंने सभी उपस्थित लोगोंसे अपील की कि आप अपनी शक्तिभर मेरे इस महान कार्यके लिए मुझे धन दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-२-१९२७

९३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

मीराजगांव

१९ फरवरी, १९२७

प्रिय सतीशबाबू,

तो आप और हेमप्रभादेवी पूरी तरहसे कसौटीपर कसे जा रहे हैं। आप इस बहुत ही कठिन परीक्षाका[3] सामना कर लेंगे और उसमें सफल होकर निकलेंगे। 'भगवद्गीता' का दूसरा अध्याय बार-बार पढ़िये और सच्चे योद्धाओंकी तरह, जैसे कि आप हैं, संघर्षका सामना कीजिए। अब आप लोगोंपर अपना ध्यान रखनेकी जिम्मेदारी दुगुनी हो गई है। ईश्वरके उद्देश्योंके लिए जो-कुछ आपके पास न्यासके

१. यह भाषण नगरपालिका, जिला बोर्ड और हिन्दूसभा द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२. अहमदनगर राष्ट्रीय पाठशालाके प्रधानाचार्य एच० बी० हिरे द्वारा १९२८ में जारी की गई एक छपी पुस्तिकाकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १४८४१) से।

३. अभिप्राय उनके पुत्र अनिलकी मृत्युसे है।

रूपमें है, उसमें आपके शरीरका महत्त्व कम नही है। यदि हमें अपने शरीरोंके प्रति आसक्त नही होना चाहिए तो विरत भी तो नही होना चाहिए।

परन्तु दर्शनकी बात बहुत हो गई। तार पानेके बादसे मैं आपके लिए प्रार्थना करता रहा हूँ। और सुबहकी प्रार्थनाके बाद पहला काम यह पत्र लिखनेका ही किया है। ईश्वर आपको शक्ति देकर आपका मंगल करे।

आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५६५) की फोटो-नकलसे।

९४. पत्र: हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

शनिवार [१९ फरवरी, १९२७][1]

प्रिय भगिनि,

तुमको मैं क्या लिखुं? तुमारा ज्ञान तुमारी श्रद्धा तुमारी भक्ति इस समय तुमको मददगार हो। क्या अनील मर सकता है? अनीलका देह गया। अनील तो है। धीरज मत छोड़ना।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० १६६१) की फोटो-नकलसे।

९५. पत्र: जमनालाल बजाजको

शनिवार [१९ फरवरी, १९२७][2]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। लालाजीकी माँग स्वीकार करनेकी तुम्हारी इच्छाको रोकनेका मेरे पास कोई कारण नही था, इसीलिए तार नही दिया।

जानकीबहनकी खबर मुझे फिलहाल रोज पोस्टकार्डसे मिलती रहे, ऐसा चाहता हूँ।

सतीशबाबूका लड़का अनिल गुजर गया है। वे गिरिडीहमें हैं। उनका पता है — होम विला, गिरिडीह। परन्तु खादी प्रतिष्ठानके पतेपर लिखना ज्यादा सुरक्षित होगा। तार आया है कि दोनोको बहुत ही सदमा पहुँचा है। मैंने समवेदनाका एक लम्बा तार भेजा है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. अनिलकी मृत्युके उल्लेखसे।

मैं बम्बई ५ तारीखको पहुँचूंगा, यह अब निश्चित हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८५) से।

९६. पत्र : प्रभुदयालको

दौरेपर
१९ फरवरी, १९२७

भाई परभुदयालजी,

आपका पत्र मेरे साथ घूम रहा है। आजहि मैं उसे पहोंच सकता हुँ।

जगत कितना भी पलटा खाय परंतु यदि आपको निश्चय है कि खद्दरमें स्वार्थके साथ परमार्थ है और अन्य वस्त्रमें केवल स्वच्छंद हि है तो आप खद्दरके हि कपड़ोंसे संतुष्ट रहें।

आपका,
मोहनदास गांधी

मूल (जी० एन० १००६३) से।

९७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

[१९ फरवरी, १९२७ के पश्चात्][1]

प्रिय सतीश बाबू,

मुझे आपका दु:ख भरा पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि यह पत्र आपने दु:खका भार हलका करनेके लिए लिखा है। कहा जाता है कि देवता जिन्हें बहुत अधिक प्यार करते हैं, उन्हें उठा लेते हैं। मानव-मनने शोकको शमित करनेके कई तरीके निकाले हैं। तथ्य वस्तुत: यह है कि शोक करना ही नहीं चाहिए। परन्तु ऐसा करना, विशेषकर हिन्दू-समाजमें, लगभग मनुष्यकी शक्तिसे परे है। कृपया हेमप्रभादेवीसे कहिए कि वह ऐसा न सोचें कि यदि अनिल जीवित रहता तो वह क्या कुछ करता। उस शरीरमें उसका कार्य समाप्त हो गया था। अनिलकी आत्मा असाधारण थी। उसे बहुत उत्कृष्ट कार्य करना था और वह शरीर छोड़ गई। हमें अपनी उस हानिपर शोक नहीं करना चाहिए, जिससे संसारका हित हो सकता हो। यह अच्छा

१. गांधीजीके १९ फरवरीको लिखे संवेदनापत्रका सतीशचन्द्र दासगुप्तने जो उत्तर दिया यह पत्र उसके प्राप्त होनेपर लिखा गया प्रतीत होता है।

ही है कि हम जीवन और मरणके रहस्योंको नहीं जानते। मैं यह चाहता हूँ कि आप दोनों इस कमजोरीसे छुटकारा पा लें। आप जबतक फिरसे पूरी तरह सँभल न जायें, कृपया वहाँसे कहीं जानेकी बात न सोचें।

सस्नेह,

आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६३४) की फोटो-नकलसे।

९८. पत्र: क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

रेलगाड़ीपर

[१९ फरवरी, १९२७ के पश्चात्][1]

प्रिय क्षितीशबाबू,

मुझे आजतक और सतीशबाबूका पत्र मिलनेतक यह नहीं मालूम था कि आपका कोई बेटा नहीं है और अनिलको आप अपने बेटेके समान मानकर अपना पूरा स्नेह उसीपर बरसा रहे हैं। अब मैं आपकी वेदना पहलेकी अपेक्षा अधिक समग्र रूपमें समझ सकता हूँ। ऐसे मौकोंपर कोई सान्त्वना दे पाना कठिन होता है। वह तो स्वयं अपने भीतरसे ही आती है। ईश्वर करे कि आपका सारा ज्ञान और विश्वास आपको हिम्मत और आशा बँधानेमें आपकी मदद करे। यदि आत्माके अमरत्वमें हमारा विश्वास-भर सच्चा हो, तो फिर मृत्युके जैसी कोई चीज कुछ महत्त्व नहीं रखती। ईश्वर आपको शान्ति और शक्ति प्रदान करे।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ८९२३) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

९९. पत्र : इकारोजको

दौरेपर
२० फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैंने खिलाफतके पक्षका समर्थन अत्याचारके आधारपर नहीं, मानवताके लिए किया था। उस छलपूर्ण प्रयत्नका, जो मैं समझता हूँ खिलाफतको नष्ट करनेके लिए किया गया था, प्रतिरोध किया ही जाना चाहिए था। मेरा प्रतिरोध अहिंसात्मक था। मेरे विचारमें, आन्दोलनके अभावमें हिंसाका जो विस्फोट अवश्यम्भावी था; उसे इस प्रतिरोधने रोका है। खिलाफत-आन्दोलनका निर्णय टर्कीपर किये जानेवाले अत्याचारोंको प्रोत्साहित करनेके लिए नहीं किया गया था। जहाँ कहीं निरंकुशताका बोलबाला हो, उसका अहिंसात्मक उपायोंसे प्रतिरोध किया जाना ही चाहिए।

हृदयसे आपका,

रेव० फा० इकारोज
हेफा, जर्मन होसपिसी ऑफ सेंट चार्ल्स
फिलस्तीन

अंग्रेजी (एस० एन० ११७८५) की फोटो-नकलसे।

१००. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको[1]

२० फरवरी, १९२७

तुम भूल जाते हो कि तुम बापूकी भानजीके बेटे हो; अर्थात् मणिलाल तो तुम्हारा मामा है। बच्चे क्या माँ-बापको भेंट देते हैं? यह तो हिन्दुओंके रिवाजको ही भूलना हुआ। फिर भी यदि तुम्हारे पास बहुत ज्यादा रुपया हो गया हो तो मैं तुमसे गोरक्षा और चर्मालयके लिए कुछ लेनेको तैयार हूँ; मैं तो ऐसा आदमी हूँ कि तुम जितना रुपया दोगे उतना ले लूँगा। इसलिए यदि तुम्हें अटपटा न लगे तो तुम मेरी सलाह मानकर चुप बैठे रहो।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

१. गांधीजीने यह पत्र बोलकर महादेव देसाईसे लिखाया था।

१०१. भाषण : शोलापुरमें[1]

२० फरवरी, १९२७

यदि लोग मुझसे करोड़ रुपयेकी खादी लें और फिर उसे समुद्रमें फेंक दें तो उससे मुझे क्या मतलब? मुझसे तो वे एक करोड़की खादी खरीदते हैं और इस तरह गरीबोंके घरोंमें एक करोड़ रुपये पहुँच जाते हैं। हमारे लिये इतना ही पर्याप्त है। परन्तु हकीकत यह है कि खादी पहननेवाले सभी लोग पाखण्डी नहीं हैं, वे बेचारे तो मेरे पास आकर स्पष्ट शब्दोंमें यह कह देते हैं कि हमें खादी अच्छी तो लगती है; परन्तु उसे हम हमेशा नहीं पहन सकते। आप ऐसा कुछ कीजिए कि हममें हमेशा खादी पहननेकी शक्ति आ जाये। तो क्या मैं उन लोगोंसे यह कहूँ कि आप लोग खादी पहनना त्याग दें। मेरा कर्त्तव्य तो सम्पूर्ण धर्म समझा देना है। परन्तु सामान्य लोग उसका जितना पालन कर सकें उतना करें। मैं तो व्यापारी ठहरा। मैं तो दरिद्रनारायणका स्वयं नियुक्त एक गुमाश्ता हूँ, उसका आढ़तिया हूँ। मेरे पास जो प्रमाणपत्र है वह मेरी सेवाका है। यदि आप मेरी बात माननेको तैयार हों तो मैं आपको बताना चाहता हूँ कि गत वर्ष चरखा संघ द्वारा गरीब लोगोंके घरोंमें नौ लाख रुपये वितरित हुए। हमने १,५०० गाँवोंमें खादीका सन्देश पहुँचाया और आज इस संस्थाके द्वारा जितना ग्राम-संगठन-कार्य हो रहा है उतना अन्य किसी भी संस्थाके द्वारा नहीं हो रहा है।

प्रत्येक मनुष्य सदोष है, अपूर्ण है। सम्पूर्ण तो केवल ईश्वर ही है। प्रत्येक व्यक्तिमें अपूर्णता है। मुझमें तो हजारों अपूर्णताएँ भरी हुई हैं, आप उन्हें दरगुजर कर दीजिए और मुझमें जो थोड़ेसे भी गुण हैं उन्हें ग्रहण कीजिए। यदि आप लोग मेरे दोषोंको त्याग कर मेरी सेवा-शक्तिका उपयोग न करेंगे तो आपके बारेमें इस युगका इतिहासकार क्या कहेगा? वह यही कहेगा कि इस जमानेमें खुदाका एक बन्दा हुआ; उसे ठीक दिखाई तो नहीं देता था लेकिन वह जन्मा था सेवा करनेके लिए। उसके हाथों बहुत सेवाकार्य हुआ परन्तु उस कालकी जनताने उसकी आँखका दोष देखकर उसके हाथकी सेवा लेनेसे इनकार कर दिया था।

आप हमारे खादी-कार्यके बीचमें शुद्धि और संगठनको क्यों लाते हैं? फिर भी मैंने इस सम्बन्धमें अपने विचार छिपाये नहीं हैं। मैं इसके बारेमें नासिकमें अपने विचार विस्तारपूर्वक व्यक्त कर चुका हूँ।[2] आज जो शुद्धि और तबलीग चलाई जा रही है, उसे समझना मेरी सामर्थ्यके बाहर है। मैं एक धर्म त्यागकर दूसरे धर्मको अंगीकार करनेकी प्रवृत्तिको समझ ही नहीं पाता हूँ। परन्तु यह तो मेरा निजी विचार

१. शोलापुर शहरके कुछ लोगोंने गांधीजीके नाम एक खुला पत्र लिखकर उनसे कई प्रश्न किये थे; गांधीजीने अपने भाषणमें इन प्रश्नों और उनमें गर्भित आलोचनाओंका उत्तर दिया था।

२. देखिए "भाषण : नासिकमें", १६-२-१९२७।

है। मेरे कहनेसे कोई भी व्यक्ति न तबलीग बन्द करनेको तैयार है और न शुद्धि रोकनेको तैयार है। मुझे तो अपना फर्ज अदा करना है, अपनी शुद्धि करनी है। यदि मैं ऐसा करता हूँ तो आसपासके सब लोग अपनी शुद्धि कर लेंगे। हिन्दू-धर्मकी रक्षाका एकमात्र साधन तपश्चर्या है, ऐसा हमारे शास्त्र पुकार-पुकार कर कहते हैं। आप संगठन चाहे जितना क्यो न करे परन्तु वह शुभ सद्‌वृत्तिका सगठन होना चाहिए, न कि दुर्वृत्तिका।

यह आरोप कि मै मुसलमानोका पक्षपात करता हूँ और हिन्दुओके दोष ही देखा करता हूँ, यदि सही भी हो तो मुझे दु.ख न होगा। परन्तु मुसलमान तो यह मानते ही नही हैं कि मै उनके साथ पक्षपात करता हूँ — यदि वे यह स्वीकार करते हो तो मेरा काम बन जाये। मैं तो मुसलमानोके साथ उचित न्याय ही करता हूँ, परन्तु न्याय करते हुए यदि मैं उन्हे वाजिबसे अधिक भी दूँ तो उसमें धर्मकी हानि कैसे हो सकती है? किसीको मुझसे कुछ पावना हो और मै उसे निर्धारित पावनेकी रकमसे चार कौड़ी अधिक दे दूँ तो ईश्वर मुझसे जवाब तलब नही करेगा। हाँ, यदि उसे उसकी रकमसे कम दूँगा तो ईश्वर मुझसे जरूर पूछेगा। इसलिए यदि मुझसे मुसलमानोके साथ अथवा अन्य किसीके साथ पक्षपात हो गया हो, तो बुरा मत मानिए। आपको तो इसपर गर्व करना चाहिए कि हिन्दुओमें एक पागल गाधी ऐसा था जो मुसलमानोको उनकी वाजिब लेनदारीसे अधिक देता था। श्रीकृष्ण पाँच गाँवोंको छोड़कर पाण्डवोसे उनका सब कुछ दिलवा देनेके लिए तैयार थे। न्यायका मार्ग ही यही है कि जितना बन सके देते जाइए। वीरका प्रथम लक्षण है क्षमा। युधिष्ठिरने कहा है कि क्षमाका अर्थ है न्यायकी अपेक्षा अधिक देना। यह भी वीरका एक लक्षण है। दया और क्षमासे हिन्दू-धर्म परिपूर्ण है, तो आप लोगोके लिए यह दु खका विषय न होकर सुखका विषय होना चाहिए कि आपके समाजमें एक हिन्दू ऐसा भी हो गया है, जिसने हिन्दू धर्मके महान् सिद्धान्तोका अपने जीवनमें यथाशक्ति पालन किया है और जिसने दूसरोको जितना हो सका उतना दे डाला है।

म तो जबतक आपके सामने खरा हिसाब पेश कर सकता हूँ उस समयतक आपसे माँगता ही रहूँगा। जबतक आपको मेरे प्रति प्रेम है और मुझमें विश्वास है तबतक आप लोग मेरे कार्यक्रममें विश्वास रखकर मेरी धनसे सहायता करते जाइये। परन्तु यदि मेरे द्वारा की जानेवाली सेवाका मूल्य आपके नजदीक कुछ न हो तो मेरा नाम भी आप भूल जायें। मुझे नामका अभिमान नही है, मुझमे असाधारण शक्ति नही है। मैं तो एक बिन्दुमात्र हूँ, मुझमें तो एक सामान्य मनुष्यकी शक्ति है। यदि आप मुझे 'महात्मा' कहे बिना नही रह सकते तो 'महात्मा' भले ही कहते रहिए; परन्तु [याद रखिए] मेरा यह महात्मापन आपकी ही शक्तिका प्रतिबिम्ब है। आज मेरा मौनवार है तो भी मै लोगोंको अपना 'दर्शन' करने ही दूँ — ऐसा मुझसे कहा गया। इससे मुझे दु.ख हुआ। मै किसीको दर्शन देना नही चाहता। मैं किस मुँहसे दर्शन दूँ? मै दर्शन देने योग्य हूँ ही नही। मुझे न तो 'दर्शन' शब्द अच्छा लगता है और न 'महात्मा' शब्द ही। दर्शन करना हो तो खादीका दर्शन कीजिए, खादीकी

शक्तिका दर्शन कीजिए; मैं तो मिट्टीका पुतला हूँ — सब दोषोंसे भरा हुआ। जिस प्रकार आपको भोजनकी और जल पीने और सोनेकी आवश्यकता होती है उसी प्रकार मुझे भी। जिस प्रकार आपमें दोष और विकार हैं उसी प्रकार मुझमें भी हैं। तो फिर मेरे दर्शनमें क्या रखा है? दर्शन ईश्वरका कीजिए, निरंजन निराकार परमात्माका कीजिए। उसका दर्शन तो हर स्थलपर हमेशा हुआ ही करता है। उस निराकारका दर्शन मन्दिरमें और शौचालयमें भी किया जा सकता है। अपना हृदय उसीके दर्शनसे भरिये। मेरे दर्शनसे क्या लाभ होगा?

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६-३-१९२७

१०२. पत्र: च० राजगोपालाचारीको

[२१ फरवरी, १९२७ से पूर्व][1]

जल्दीका काम शैतानका। मुझे बहुतसी जगहें जैसे-तैसे निबटा देनेके बजाय थोड़े स्थानोंमें जाकर वहाँ पूरी तरह कार्य सम्पन्न करने देना ज्यादा ठीक रहेगा। आपको यह ध्यानमें रखना होगा कि मुझे वर्ष-भर लगातार सफर करना पड़ता है। मेरी कार्य-क्षमता और शक्ति सीमित है। इसलिए मुझे तीन बारके भोजनके लिए ४५-४५ मिनट, स्नानादिके लिए ४५ मिनट, सवेरे-शाम शान्त वातावरणमें सैरके लिए ४५-४५ मिनट अवश्य चाहिए। मुझे रातके ९ बजे अवश्य सो जाना चाहिए। फिर पत्र-व्यवहार और सम्पादन-कार्यके लिए तीन घंटे और दिनके समय सोनेके लिए आधे घंटेका समय अवश्य मिलना चाहिए। यदि आप मुझे इतना समय दे सकें तो मुझे लगता है मैं न केवल सफरकी थकानको ही बर्दाश्त कर लूँगा, बल्कि अनिश्चित समयतक अपना कार्यक्रम जारी रख सकूँगा और मेरे स्वास्थ्यमें भी सुधार होगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-२-१९२७

१. यह पत्र फ्री प्रेस द्वारा मद्रासले इसी तारीखको प्रसारित किया गया था।

१०३. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नही पढा

शोलापुर
२१ फरवरी, १९२७

चि० मीरा,

दिल्लीसे लिखा तुम्हारा पत्र मिला। तुमने गुरुकुलोके सम्बन्धमें जो-कुछ लिखा है, उसपर मैंने ध्यान दिया है। मुझे रामचन्द्रका पत्र अभी नही मिला है। तुम्हारे गुरुकुल जानेका मुझे बिलकुल दुःख नही है। गुरुकुलोंको चलानेका प्रयत्न बड़े शुद्ध हृदयसे किया जा रहा है। मैं चाहता हूँ कि तुम इन मामलोपर रामदेवजी और अन्य लोगोसे बातचीत करो। जब तुम उनसे प्रेमपूर्वक बात करोगी, तो तुम्हारी बातका उनपर असर पड सकेगा। हमें लोगोंको उन्हीके पैमानेसे नापना चाहिए और यह देखना चाहिए कि वे उसपर किस हदतक पूरे उतरते है। तुम्हें इस चेतावनीकी जरूरत नही है; लेकिन यह देखकर कि तुमने अपने लिए एक कठोर मापदण्ड बना लिया है और तुम अजनबी वातावरणमें हो, मुझे यह चिन्ता रहती है कि तुम्हारा सन्तुलन रत्ती-भर भी न बिगड़े।

आज मुझपर कामका इतना अधिक भार है कि मैं इससे ज्यादा नही लिख सकता।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

सतीश बाबूके सबसे बड़े बेटेका देहावसान हो गया है। उन्हे खादी-प्रतिष्ठान, सोदपुर, कलकत्ताके पतेपर पत्र लिखना।

२६ बेलगाँव
५ बम्बई
६-७ अकोला (मणिलालका विवाह)
८ बम्बई
९-१४ आश्रम

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०६) से।
सौजन्य : मीराबहन

१०४. पत्र : मणिलाल गांधीको

सोमवार [२१ फरवरी, १९२७][1]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं सुशीलासे कोई प्रतिज्ञा नही कराना चाहता। उसे मैं इतना जानता भी नही हूँ। लेकिन तुम्हें इस कुटुम्बको जान लेना चाहिए। यह बड़ा सुसंस्कारी कुटुम्ब है। सभी लोग खादी पहनते हैं। तुम्हारे लिये खादी पहनना मुश्किल है, यह बात मैंने मान ली है। सुशीला यदि देशी ढंगसे साड़ी आदि पहनती रही तो उसके लिए [खादी पहनना] मुश्किल नहीं है। मामूली खर्च करके खादीकी अच्छी पोशाक बनवा ली जा सकती है। अब तो एडनबरा तकमें खादी पहननेवाले मिल जाते है।

मेरा प्रयत्न तुम्हें अथवा सुशीलाको संन्यासी बनानेका नही है। हाँ, तुम्हें मर्यादाशील गृहस्थ अवश्य बनाना चाहता हूँ। यदि तुम्हें संन्यासी बनाना मेरा उद्दिष्ट होता तो तुम्हें विवाहकी झंझटमें क्यों डालता? तुम मर्यादामें रहकर विषय-सुखका सेवन करो, मैं इसका विरोधी नही हूँ। इतना कहनेके बावजूद तुम स्वतन्त्र हो और अपनी इच्छाके अनुसार व्यवहार करो। मैं तुमपर तनिक भी दबाव न डालूँगा।

जमनालालजी संन्यासी नहीं बन गये हैं; उन्होंने बहुतसे विषय भोगोंको जरूर त्याग दिया है। तुम्हारी आयु कम नहीं है। मैं तुम्हें बालक नहीं मानता।

मैं सभी बातोंमें तुमसे पूछ-पूछकर कदम उठा रहा हूँ। विवाह-विधिके बारेमें भी तुम कोई परिवर्तन करना चाहो अथवा समारोहकी इच्छा करो तो मुझे अवश्य बताना। मैंने तो जो उचित लगा है सो तुम्हें सुझाया है और किया है। लेकिन मेरी इच्छा अपने धर्मका अनुसरण करते हुए जितनी हदतक तुम्हारे अनुकूल बन सकूँ उतनी हदतक अनुकूल बननेकी है। युवा स्त्री या पुरुषके जीवनमें विवाह एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है, यह मैं जानता हूँ। उसमें माता-पिताको बीचमें नही पड़ना चाहिए, यह भी मैं जानता हूँ। तुमपर किसी भी तरहका दबाव है, ऐसा न मानना। मैं इससे ज्यादा खुलकर और क्या लिखूँ और इससे ज्यादा अभय दान क्या दूँ?

पण्डितजीको नानाभाईने बुलाया है, इसलिए वे तुम्हारे साथ आयेंगे। तुम दोनों ताप्ती घाटीके मार्गसे आकर मेरे साथ ही चल सकते हो। इस तरह समय भी बच सकता है। लेकिन जैसा तुम दोनोंको ठीक लगे वैसा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १११९)से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

१. इस पत्रमें तथा अगले दो पत्रोंमें मणिलालके विवाहकी तथा पण्डितजीको विवाहमें आनेका सन्देश भेजे जानेकी चर्चासे लगता है कि ये सब पत्र एक ही तारीखको लिखे गये थे।

१०५. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

सोमवार [२१ फरवरी, १९२७][1]

भाई नानाभाई,

आपका पत्र मिला। विवाह [दिनको] १०-३० बजे भले ही हो। शामका समय तो मेरे लिये तनिक भी सुविधाजनक न होगा।

आप मणिलालको कपड़े किसलिए देंगे? वह जो कपड़े पहनकर आयेगा क्या वे काफी नहीं हैं? फिर भी मैं आपका जी नहीं दुखाना चाहता।

चि० सुशीलासे कहना कि उसे पत्र लिखनेकी आदत तो डालनी ही चाहिए। वह लिखने बैठेगी तो लिखनेकी बहुत सारी बातें सूझ जायेंगी।

मैंने पण्डितजीको आनेके लिए लिख दिया है।

बिस्कुट वहाँसे भेजनेकी जरूरत नहीं। रास्तेमें बहुत स्थानोंसे मिल गये हैं। वहाँ पहुँचनेपर भले ही विजयलक्ष्मी मेरा डिब्बा भरकर दे दे।

क्या उसका विचार अब भी मणिलालको कुछ दिन अपने साथ रखनेका है? यदि वह चाहे तो मणिलालको थोड़े दिन पहले भेज दूँगा। अथवा मणिलाल विवाहके बाद कुछ दिन वहाँ रह लेगा। यात्राका कार्यक्रम तो आपके पास है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२१) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

१०६. पत्र : मगनलाल गांधीको

सोमवार [२१ फरवरी, १९२७]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

परसरामसे अभी जो काम लिया जा सके सो लेना।

पण्डितजीसे कहना कि उन्हें तैयार रहना है। समय और पैसा बचानेके लिए वे ५ तारीखकी सुबह साबरमतीसे रवाना हों और ताप्ती घाटीवाली गाड़ीसे मुझे जलगांवमें आ मिलें। मणिलाल भी इसी गाड़ीसे आ सकता है। लेकिन यदि दोनोंको बम्बई होकर आना हो तो वे वैसा कर सकते हैं। क्या-क्या सामग्री तैयार रखनी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

चाहिए यह पण्डितजी नानाभाईको लिख दें। विवाह-विधि रविवारको सुबह साढ़े दस बजे सम्पन्न की जायेगी।

मुझे यह भ्रम रहा कि गणेशका अंग्रेजी नाम जॉन है। और चूँकि मैं गणेश नाम भूल गया था इसलिए मैंने जॉन लिख दिया। अब मैं गणेश नामसे नया पत्र लिख रहा हूँ। उसे यह दे देना। और यदि उसका स्वभाव ऐसा हो कि वह इस विनोदको और अपने नामके विस्मरणको सहन कर सके तो उसे जॉनके नामवाला पत्र भी दे देना। अन्यथा उसे फाड़ देना।

रुखीके बारेमें अब मुझे चिन्ता करनेकी कोई जरूरत नही है।

मुझे लगता है कि जो लोग संयुक्त रसोईसे अलग होना चाहें वे अलग भले ही हो जायें; लेकिन वह बन्द नहीं की जानी चाहिए। वैयक्तिक रसोई और संयुक्त रसोई, दोनों साथ-साथ चलनी चाहिए।

चर्मालय और 'लिफ्ट'में कमसे-कम जितना पैसा लगाना होगा उतना तो हम अवश्य लगायेंगे। चर्मालयके लिए गोरक्षा-निधिका उपयोग करना है। मुझे याद है कि इस सम्बन्धमें वर्धामें एक प्रस्ताव पास किया गया था। यदि न किया गया हो तो ११ तारीखकी बैठकमें करेंगे। जिसमें नुकसान होनेकी भी कोई सम्भावना नही है, वह काम तो हमें करना ही है।

हम 'लिफ्ट'के लिए भी आवश्यक धन जुटा ही लेंगे। लेकिन मैं जब ९ तारीख को वहाँ पहुँचूँगा तब इसका कोई हल ढूँढ़ लूँगा।

मीराबाईका पैसा तो नियमपूर्वक आता ही है। उस सारे धनका उपयोग अब आश्रमके निमित्त करना है। उसकी एक वर्षकी अवधि पूरी हो गई; इसलिए अब उसका उपयोग करनेमें कोई आपत्ति नहीं है। सिर्फ इतना याद रखना कि हिसाब की अथवा किसी अन्य प्रकारकी असावधानीसे नुकसान न हो।

क्या अब तुममें इतनी क्षमता आ गई है कि लोग जितने 'लिफ्ट' मँगवायें उतने भेज सकते हो और उन्हें वहाँ इस तरह लगा भी दे सकते हो कि वे काम देने लगें। मैंने इसके विषयमें जानबूझकर ही कुछ नही छापा है। यदि छापना ही हो तो मुझे लिखना ताकि मैं आगामी अंकके लिए लेख लिख सकूँ। क्या कुछ कहा जा सकता है, सो बताना। लिफ्ट चलानेके लिए तुम्हारे पास लोग तैयार हैं? प्रत्येकके पास कमसे-कम कितना तगड़ा पशु हो, यह भी लिखना चाहिए न? क्या बूढ़ी भैंसका उपयोग नही किया जा सकता? क्या स्वस्थ और सधा हुआ बैल काममें नही लाया जा सकता? हमारे अनुमानमें कही भूल नहीं होनी चाहिए। मुझे भय है कि प्रत्येक स्थानपर हमें पर्याप्त समयतक अपना प्रशिक्षित आदमी रखना पड़ेगा। लेकिन यदि इन सब बातोंपर तुमने विचार कर लिया हो तो इतना बहुत है।

यही बात चमड़ेके कामके बारेमें भी है। चमड़ेके कामके बारेमें मुझे पत्रिका भेजना। मैं उसे देखकर प्रकाशित करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथका पत्र विशेष रूपसे आश्रमके लिए है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६२) से।

सौजन्य : राधावहन चौधरी

१०७. पत्र : आश्रमवासियोंको

मौनवार, २१ फरवरी, १९२७

मुझे जो पत्र प्राप्त होते हैं उनसे मैं देखता हूँ कि प्रार्थनामें उपस्थिति कम और अनियमित होती है और सूत कातनेमें भी ढिलाई आती जा रही है।

प्रार्थना और कताई ये दोनों हमारे ज्योति स्तम्भ हैं। यदि हम इनपर अपनी दृष्टि न रखें तो न हम आश्रमको शोभान्वित कर सकते हैं और न अपने-आपको। दोनोंमें से किसी भी कामको हम पहलेसे ही न करनेका निश्चय करें और न करें, यह एक बात है और करनेकी प्रतिज्ञा करके फिर न करें, यह दूसरी बात है। जिसे ये दोनो काम पसन्द न हों वह आश्रममें कुछ भी नही सीख सकता, ऐसा मेरा मत है; क्योंकि हम दोनोंको ही आवश्यक धार्मिक कार्य मानते हैं। जिन्हे ये दोनो पसन्द हैं फिर भी जो शिथिलता दिखाते हैं वे दूसरी सभी वातोंमें भी शिथिल ही रहेंगे। यदि हम सत्यका आग्रह करना सीखना चाहते हैं और उससे उद्भूत शक्तिका अनुभव करना चाहते हैं तो हमें उपर्युक्त दोनो कार्योंमें कभी चूकना नही चाहिए। दोनोंमें श्रद्धाकी जरूरत है। दोनो कार्योंकी उपयुक्तता हम एक निश्चित सीमातक अपनी बुद्धिसे सिद्ध कर सकते हैं। लेकिन अन्ततः तो श्रद्धा ही हमें सन्तोप प्रदान करेगी। ऐसी बातें मनमें उठ सकती हैं कि प्रार्थनामें आनेसे मुझे तो कोई लाभ नही होता, उसमें मेरा ध्यान केन्द्रित नही होता और आलस्य आता है। इनका समाधान बुद्धिसे नही होता वह तो श्रद्धासे ही होता है। 'गीता' जब निष्काम कर्मका पाठ सिखाती है तब वह श्रद्धाका ही पाठ सिखाती है। कर्म निष्फल नही जाता। सत्यकी पराजय देखते हुए भी यही मानें कि अन्तमें सत्यकी जय होती है और निष्काम भावसे सत्यका ही सेवन करें। यह शक्ति श्रद्धासे ही आती है। यही बात प्रार्थना और चरखेके सम्बन्धमें भी सत्य है। इतना कातनेसे देशको अथवा मुझे क्या लाभ होगा? इसका हिसाब लगानेका अधिकार मुझे नही है। हमें श्रद्धापूर्वक ऐसा निश्चय कर लेना चाहिए कि कातनेसे भले ही फिलहाल कोई लाभ होता दिखाई न दे; लेकिन उसमें लाभ अवश्य है। मुख्य बात यह है कि हमें मृत्युपर्यंत अपने निश्चयपर दृढ रहनेका स्वभाव बना लेना है। और मुझे लगता है कि यह कार्य इन दो सार्वजनिक प्रवृत्तियोंके द्वारा किया जा सकता है। यदि हम इनमें ही शिथिल रहेंगे तो सत्यके आग्रही कब बनेंगे?

इससे मैं बालक और वृद्ध सब लोगोंसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इन दोनों कार्योंमें कभी न चूकें।

वापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०५३) से।
सौजन्य : रावजीभाई नाथाभाई पटेल

१०८. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

शोलापुर
सोमवार, माघ वदी ५ [२१ फरवरी, १९२७]

बहनो,

तुम्हारा पत्र मिला।

देखता हूँ कि तुम्हारा पिंजाई आदिका काम ठीक चल रहा है। इसी तरह नियमित रूपसे चलता रहेगा तो तुम सब थोड़े समयमें बहुत प्रगति कर लोगी। नियमित रूपसे किये गये कामका असर नियमपूर्वक ली गई खूराककी तरह होता है। वह आत्माका पोषण करता है। एक साथ ही ज्यादा मात्रामें ली हुई खूराक जैसे शरीरको बिगाड़ देती है, वैसे ही एक साथ अधिक काम करनेसे आत्माको तकलीफ होती है।

आज हम शोलापुरमें हैं। यह बड़ा शहर है। यहाँ पाँच मिलें हैं। उनमें सबसे बड़ी मिल मोरारजी गोकलदासकी है। उनके पोते शान्तिकुमार उम्रमें तो अभी नवयुवक हैं, परन्तु उनकी आत्मा महान है। वे खुद खादीप्रेमी हैं और खादी ही पहनते हैं। यह कोई उनका सबसे बड़ा गुण है, मैं यह नहीं कहना चाहता। उनमें दया है, उदारता है, नम्रता है, ईश्वरपरायणता है, सत्य है। यथा नाम तथा गुण हैं। शान्तिकी मूर्ति हैं। करोड़पतिके यहाँ ऐसा रत्न है, यह देखकर मुझे बहुत आनन्द होता है। उनकी धर्मपत्नीके साथ तो मेरा परिचय थोड़ा ही था। कल भोजन करते समय उन्हें पास बिठलाकर उनसे जी भरकर बातें कीं और अपने पतिकी तरह सेवाकार्यमें लग जानेको कहा। तुम सबकी मिसाल उनके सामने पेश की, क्या यह मैंने ठीक किया? ऐसा उदाहरण देनेमें कुछ अभिमान हो तो? तुम सब सेवाभावसे भरी हो, यह कहा जा सकता है या नहीं, यह तो तुम जानो। मेरे मुँहसे तो निकल ही गया। उसे सच्चा साबित करना तुम्हारे हाथमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४०) की फोटो-नकलसे।

१०९. पत्र: जमनालाल बजाजको

[२१ फरवरी, १९२७][1]

चि० जमनालाल

तुम्हारा पत्र मिला। भाई घनश्यामदासके दोनों पत्र वापस भेजता हूँ। उनकी बातपर मुझे विश्वास है, इसलिए ऐसी आशंकाका कोई कारण नही है कि वे पुनर्विवाह करेंगे।

मैं चाहता हूँ कि तुम २५-२६ को बेलगाँवमें रहो और ११ तारीखको आश्रममें। दोनों ही जगह तुम्हारे लिए बहुत काम है। आश्रममें ९ से १३ तारीखतक रहना सम्भव हो तो अवश्य रहना चाहिए। बादमें घनश्यामदास गुरुकुलके दीक्षांत समारोहमें मेरे साथ रहना चाहते हैं, उस समय भी यदि तुम साथ रहना चाहो तो रह सकते हो। यह सब ज्यादातर तो तुम्हें जो दूसरे काम हैं उनकी सुविधा-असुविधा देखकर ही तय हो सकता है।

कमला क्या करती है? उसके बारेमें मुझे चिन्ता होती है। इसका अर्थ यह नही कि तुम भी चिन्ता करने लगो। लेकिन यदि उसकी पढाईका कुछ प्रबन्ध हो सके, तो कदाचित उसका चित्त स्थिर हो जाये। वह चाहे तो जी भर कर अंग्रेजी सीखे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८२) की फोटो-नकलसे।

११०. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

शोलापुर
सोमवार [२१ फरवरी, १९२७][2]

भाई घनश्यामदास,

आपके दो पत्र मीले हैं। आपके वचनपर मेरा विश्वास है इसलीये आपके पुनर्विवाह करनेका मुझे कोई डर नहि है। एसेंबलीके बारेमें भी आपपर मेरा विश्वास है। परंतु वहाका वायु ऐसा है कि सम्पूर्णतया स्वतंत्र रहना कठिन है।

संगठनके बारेमें मेरा विचार वही है जो मैंने बताये हैं। जो केसकी हकीकत आपने भेजी हैं उसका इलाज सगठ्ठन तो है हि नहि। उसका इलाज या तो तपश्चर्या

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. गांधीजी इस तारीखको शोलापुरमें थे।

है या तो व्यक्तिगत हिम्मत है। जबतक हम भागते रहेंगे तबतक हमारी स्त्रीयों को विषयी लोग पकड़ लें उसमें कौनसा आश्चर्य है? ऐसे हिन्दु राजाका मैंने जाना है जिसके राज्यमें एक भी यूवती निर्भय न थी और पति और पिता लाचार बैठ रहते थे। परंतु यह तो गूढ़ विषय हुआ। यदि आप गुरुकुलमें आ सकें तो अवश्य आइये। मैं तो आपको पंदरह दिन साथ रखना चाहता हुं। ऐसी बातें हम एक दिनमें खतम नहिं कर सकते। दरम्यान आपका अन्तरनाद आपको कहे वहि कीजिये, भले मेरी राय कैसी भी हो।

आपके पुत्र और पुत्रवधुको मेरे आशीर्वाद।

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च :]

२२ गुलबर्गा
२३ पंढरपुर
२४-२५ सतारा जिला
२६ बेलगाँव
२७-३ मार्च रत्नागिरि
४ पूना
५ बम्बई
६-७ अकोला
८ बम्बई
९-१४ आश्रम

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४४) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१११. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

शोलापुर
[२१ फरवरी, १९२७][1]

भाई घनश्यामदासजी,

इस पत्रको[2] आप पढ़े और आपकी राय मुझे दें।

आपका
मोहनदास

मुसाफरीकी तारीखें[3]

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४५) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. गांधीजीका अभिप्राय सम्भवतः पिछले शीर्षकसे है।
३. यहां नहीं दी जा रही है। देखिए पिछला शीर्षक।

११२. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

दौरेपर
गुलबर्गा
२२ फरवरी, १९२७

प्रिय सर पुरुषोत्तमदास

ऐसा लगता है कि आपको अंग्रेजीमें लिखे पत्रसे ज्यादा सुविधा होती है, अतः मैं यह पत्र अंग्रेजीमें लिख रहा हूँ।

हालाँकि मैंने स्वयं अभीतक मुद्रा-सम्बन्धी मामलोंपर[1] कुछ नहीं लिखा है फिर भी मैंने जैसा कि शायद आप जानते ही होंगे, निरन्तर यात्रा करते रहनेके बावजूद इस आन्दोलनके साथ जितना सम्पर्क रखा जा सकता था बनाये रखा है। मैं इस प्रश्नका सावधानीसे अध्ययन करता रहा हूँ और विशेषज्ञों, खास तौरपर सर्वश्री मदान और वाडियाके साथ बराबर पत्र-व्यवहार भी करता रहा हूँ। श्री वाडियाने मुझे एक विधेयकका[2] मसविदा भी भेजा है, जिसे मैं समझता हूँ कि उन्होंने विधान-परिषदके सदस्योंमें भी प्रचारित किया है। क्या आप मुझे यह बतानेकी कृपा करेंगे कि आप इस विधेयकका समर्थन करते हैं या नहीं?

यदि शुद्ध स्वर्ण मानक स्थापित कर दिया जाये, स्वतन्त्र टकसालें खोली जायें और एक रिजर्व बैंककी स्थापना हो जाये, तब क्या अनुपातका प्रश्न ही सर्वथा दूर नहीं हो जायेगा? क्या सब मामले अपने आप नहीं सुलझ जायेंगे? और यदि १ : १५ का अनुपात तय कर दिया जाता है और स्वर्ण मुद्रा टकसालों और रिजर्व बैंक सम्बन्धी मामले एक बार को समाप्त कर दिये जाते हैं या आयोगके सुझावोंके अनुसार तय कर दिये जाते हैं, तो क्या वह वर्तमान दशासे और भी बुरा न होगा?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास
बम्बई

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८२५) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. हिल्टन यंग आयोगका सुझाव रुपयेकी दर १ शिलिंग ६ पेंस स्वर्णपर तय करनेका था। इसके सम्बन्धमें दी गई अपनी असहमति-सूचक टिप्पणीमें सर पुरुषोत्तमदासने रुपयेकी दर १ शिलिंग ४ पेंस स्वर्णपर तय करनेका सुझाव दिया था।

२. स्वर्ण मुद्रा मानक तथा रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया सम्बन्धी विधेयक जो विधान सभामें २५ जनवरी, १९२७ को पेश किया गया था।

११३. पत्र : बी० एफ० मदानको

गुलबर्गा
२२ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका हालका पत्र मिला। धन्यवाद। संलग्न पत्रके बारेमें आपका क्या कहना है, जवाब देते समय इसे वापस भेजनेकी कृपा करें।

आपने श्री शराफके बारेमें जो लिखा है, उसका मैं ध्यान रखूंगा।

क्या आपको नही लगता कि श्री वाडियाके इस कथनमें काफी बल है कि मुद्रा अनुपातका सवाल मानकके चिरस्थायी प्रश्नसे अलग करके नही देखना चाहिए। या क्या आप यह मानते हैं कि रुपयेका संविधिगत मूल्य स्वर्णके रूपमें ही है इसलिए यदि संतोषजनक ढंगसे अनुपातकी दर निश्चित हो जाये और आयोगकी अन्य सिफारिशें[1] या तो छोड़ दी जायें या उन्हें उनके वर्तमान रूपमें लागू कर दिया जाये, तो इतनेसे ही हमें पूरी तरह सन्तोष मान लेना चाहिए। दूसरे शब्दोंमें यदि आपको इन सबमें से चुनाव करना हो तो आप क्या करेंगे?

अनुपातको १ : १५ पर तय करके बाकी सभी बातें जैसीकी-तैसी रहने दी जायें;

या अनुपात १ : ५० का तय कर दिया जाये और आयोग द्वारा उल्लिखित रिजर्व बैंकके साथ स्वर्ण मुद्रा मानक स्थापित किया जाये;

या शुद्ध स्वर्ण मानक स्थापित कर दिया जाये, टकसालें पुन: खोल दी जायें; उनमें सोनेकी मुहरें बिना रोक-टोक बनें और प्रो० वाडियाके सुझावके अनुसार एक ऐसे केन्द्रीय बैंककी स्थापना कर दी जाये, जिससे अनुपातपर किसी संविधिक कार्यवाहीका प्रभाव न पड़ सके।

क्या आपने सर्वश्री वाडिया और जोशीके विधेयकका मसविदा देखा है?

अंग्रेजी (एस० एन० १२९००) की माइक्रोफिल्मसे।

१. स्वर्ण मुद्रा मानक तथा रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया विधेयकमें निहित सिफारिशें।

११४. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

गुलबर्गा
माघ वदी ६ [२२ फरवरी, १९२७][1]

ढेढों और भीलोंके पुरोहित,

आप जरूर आयें; ढेढ़ों और भंगियोंको अवश्य लायें। जुगतरामको अथवा जिसे समाचार देना ठीक हो उसे लिखें, ताकि वह समुचित व्यवस्था कर सके। रोटियाँ साथ बाँध लायें, ओढ़नेके लिए कुछ साथ रहे, भूमिको शय्या बना सके तथा एक लोटा और रस्सी रखें तो उन्हें किसी किस्मकी पूर्व सूचना देनेकी जरूरत नहीं है।

हम अभी-अभी शोलापुरसे चलकर ट्रेनसे गुलबर्गा पहुँचे हैं और मुझे अभी पत्र लिखनेका अवकाश मिल गया है; सो मैं उसमें से कुछ समय चुराकर आपके साथ यह थोड़ा-सा विनोद कर रहा हूँ और थोड़ा काम भी कर रहा हूँ।

ढेढ़ादिके पुरोहित ठक्कर बापाकी जय हो!

बापू जो चाहो सो

[पुनश्च :]

"महात्मा" से तो "बापू" ही भला है।

गुजराती (जी० एन० २७११) की फोटो-नकलसे।

११५. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

मंगलवार [२२ फरवरी, १९२७][2]

चि० ब्रजकिशन,

तुमारा खत मीला है। जमशेदपुरमें काम करनेकी योग्यताके बारेमें मैं निश्चय नहिं कर सकता हु। अंग्रेजी भाषाका तुमारा ज्ञानका मुझे कोई अनुभव नहिं है। यदि तुमको इस कार्यके लीये आत्मविश्वास है तो जमशेदपुर जाकर देख लेना और पीछे अंतीम निर्णय करना। आश्रममें तो जब आना है तब आ सकते हो। कार्य तो बहोत है। हा, जिधर उधर घूमनेके लीये तैयार होना चाहिये और चर्खा शास्त्रका अच्छा अनुभव ले लेना चाहीये। तुमारी अंग्रेजी पढ़ाई कहां तककी है?

बापुके आशीर्वाद

१. १९२७ में इस तारीखको गांधीजी गुलबर्गामें थे।
२. गांधीजीके दौरेके कार्यक्रमके आधारपर।

मुसाफरीकी तारीख[1]

[पुनश्च :]

ता० १७ की रातको सुरतसे हरद्वारकी ट्रेन लुंगा। दिल्लीमें ठहरना तो नहि है। हरद्वार जाते हुए दिल्ली बीचमें तो है हि। गुरुकुलमें तीन दिन ठहरना है।

मूल (जी० एन० २३५४) की फोटो-नकलसे।

११६. भाषण : गुलबर्गामें

२२ फरवरी, १९२७

जब मेरे पास लोग विलायती टोपी और विलायती वस्त्र पहने हुए आते हैं तब मेरे हृदयमें आग लग जाती है। उस वक्त मेरे मनमें यह सवाल उठता है कि इस युवककी समझमें यह बात क्यों नही आती कि विदेशी टोपीको खरीदनेके लिए वह जो डेढ़ रुपये खर्च करता है वे गोया पानीमें जाते हैं। इसके विपरीत, खादीकी टोपीके लिए दिये गये पाँच आने हिन्दुस्तानके गरीबोंके घरोंमें पहुँचते हैं। जो व्यक्ति अपने देशके गरीब लोगोंका खयाल छोड़कर दुनियाके गरीबोंको खोजने जाता है, वह पागल है। खुदा, उसे खुदाकी जगह लेनेके दुरभिमानका दोषी कहेगा। खुदा कहेगा कि पहले अपने मुल्कके नंगे भूखोंकी ओर देख बादमें दुनियाका खयाल कर। दुनियाके लोगोंका खयाल करनेवाला तो मैं बैठा हूँ। तू अपने पड़ोसीका ही विचार क्यों नही करता? जो व्यक्ति गरीबोंके लिए कुछ भी नही करता वह अगर. हिन्दू हो और गायत्रीका जाप करता हो तो उसका गायत्रीका जाप और यदि मुसलमान हो और दिनमें पांच बार नमाज पढ़ता हो या सिजदा करते-करते अपना माथा घिस डालता हो, तो उसका नमाज पढना या सिजदा करना व्यर्थ है। क्या आपको मालूम है कि मद्रासमें हजारों हिन्दू स्त्रियोंको और बिहार-बंगालमें हजारों मुसलमान स्त्रियोंको अधपेट खाकर रहने और लज्जाका जीवन व्यतीत करनेसे बचानेवाली वस्तु खादी है? परन्तु आपको भला उसकी खबर क्यों होगी? आप लोग तो शेर बनकर एक दूसरेकी गर्दन काटनेमें व्यस्त थे। यह अज्ञान है, जंगलीपन है। मैं आपके सामने अपने दिलकी आग उगलने आया हूँ।

इस मामलेसे तो मैंने अपने हाथ खीच लिये हैं। इसका कारण यह है कि मैं अपनी बात किसे सुनाऊँ? खुदा ही एक सुननेवाला रह गया है, उसीको सुनाता हूँ। मैं उससे यही प्रार्थना करता रहता हूँ कि तू हिन्दुस्तानको जैसे भी हो इस आफतसे बचा। लेकिन आज इतने मुसलमान यहाँ बैठे हुए हैं। और मैं उनका खैरख्वाह हूँ और एक खुदापरस्त सत्याग्रही हूँ तो फिर मैं उन्हे अपने दिलकी आवाज क्यों न सुनाऊँ? मै मन्दिरमें गया तो वहाँ सुना कि मूर्ति तोड़ डाली गई है और नन्दीको

१. यहाँ नहीं दी रही है। इनके लिए देखिए "पत्र : मीराबहनको", २१-२-१९२७।

खण्ड-खण्ड कर दिया गया है। मैं तो मूर्तिपूजक हूँ और साथ ही खुदाको सब जगह हाजिर नाजिर जाननेवाला आदमी हूँ। इसलिए मैं तो उसे हर जगह सिर झुकाता हूँ। खुदा किसी एक ही स्थानमें बँधा नहीं पड़ा है। मैंने यरवदा जेलमें मौलाना शिबलीका लिखा हुआ मुहम्मद साहबका जीवनचरित्र पढ़ा, 'अलकलाम' भी पढ़ डाला और देखा वेदान्तमें तथा 'अलकलाम' में वही एक बात कही गई है। 'सीरत' को पढ़ा, 'उस्वाए-सहाबा' को पढ़ा। इन सब ग्रन्थोंको पढ़ चुकनेके पश्चात् मैं आप लोगोंसे कहता हूँ कि आपको मूर्ति नहीं तोड़नी चाहिए थी। मूर्तिको तोड़कर मुसलमान खुदाके गुनहगार बने हैं।

इस प्रकारके झगड़ोंको देखते-देखते मैं थक गया हूँ। एक मैं ही ऐसा व्यक्ति था जो इस प्रकारके झगड़ोंको मिटानेके लिए अपनी सारी जिन्दगी खर्च कर डालनेको तैयार था। परन्तु मेरी कोशिशें बेकार गईं, इसलिए मैंने सब्र कर लिया और इस समस्याका पूरा बोझ खुदाके ऊपर छोड़कर बैठ गया। इस सम्बन्धमें मुझे इस्लामकी तवारीखका एक किस्सा याद आ रहा है। पैगम्बर साहबकी वफातके बाद जब औलियाओंने लोगोंको सत्ताके लिए झगड़ते देखा तब वे बोले कि हम इस झगड़ेमें नहीं पड़ सकते। उनमेंसे कई मिस्र, बहुतसे ईरान और कितने ही तुर्किस्तान चले गये। कितने ही गुफाओंमें जाकर बैठ गये, ठीक वैसे ही जैसे हमारे अनेक ऋषि हिमालयकी कन्दराओंमें जा बैठते थे। इन्हीं औलियाओंने इस्लामको जीवित रखा है। मुझे लगता है कि मैं भी किसी कन्दरामें जाकर बैठ जाऊँ और अपना जीवन भगवानके भजनमें बिता दूँ। परन्तु जब हिन्दू-मुस्लिम इतिहास लिखा जायेगा तब, मेरा विश्वास है, मेरे बारेमें यह लिखा जायेगा कि एक खुदाका बन्दा था जो पहाड़ जैसी बड़ी-बड़ी भूलें तो कर डालता था परन्तु तोबा करना भी जानता था। आज मैं यद्यपि इस सवालसे वास्ता तोडकर अलग बैठ गया हूँ; फिर भी आप लोगोंसे इतना तो कहने आया ही हूँ कि आप लोग अपनी-अपनी कौमके भूखे लोगोंका तो विचार कीजिए। हिन्दू कार्यकर्ता सैकड़ों-हजारों मुसलमान स्त्रियोंकी मदद कर रहे हैं। वहाँ हिन्दू-मुसलमानके झगड़ेके बारेमें सोचनेकी किसीको फुरसत ही नहीं है। जो व्यक्ति भूखसे व्याकुल हो वह झगड़ा कैसे करेगा? ६० वर्षकी एक मुसलमान स्त्रीसे जब यह पूछा गया कि इतने सूतका एक आना पाकर क्या तू निहाल हो जायेगी, तब वह बोली कि मैं तो इतना ही जानती हूँ कि इस दुनियामें खुदा जरूर है, क्योंकि यह एक आना देकर वह मेरे मुँहमें रोटी डालनेका प्रबन्ध तो करता है। इसीलिए मैं आप लोगोंसे कहता हूँ कि आपको लड़ना हो तो लड़ते रहिए, परन्तु जब आपके बीच मुझ जैसा कोई व्यक्ति आ पहुँचे तब अपना झगड़ा भूल जाइये, आपसी दुश्मनी और अदावतको भूलकर मेरा कुछ-न-कुछ काम जरूर कीजिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ६-३-१९२७

११७. पत्र : के० राजगोपालाचारीको

दीरेपर
२३ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मंसूखीके दस्तावेजकी साफ प्रति ठीकसे हस्ताक्षर करके मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सहपत्र : १

श्रीयुत के० राजगोपालाचारी
खद्दर स्टोर
गांधी स्ट्रीट
तिरुपति
(जिला चित्तूर)

अंग्रेजी (जी० एन० ५६७०) की फोटो-नकलसे।

११८. भाषण : पंढरपुरमें[1]

[२३ फरवरी, १९२७][2]

पंढरपुरके मंदिरके अधिकारियोंको किसी प्रकार यह खबर लग गई थी कि गांधीजी वहाँ किसी यूरोपीय मित्रके साथ आ रहे हैं और वे इस सोचमें पड़े थे कि अगर वे बनारसकी तरह यहाँ भी उस यूरोपीय मित्रको साथ लेकर मन्दिरमें प्रवेश करना चाहेंगे, तो हम क्या करेंगे। मण्डलीमें किसी यूरोपीय को न देखकर जरूर ही उनके दिलका बोझ उतर गया होगा। मगर गांधीजीने अपने भाषणमें इस बातकी चर्चा खास तौरपर की। उन्होंने कहा :

मुझे खेद है कि आज मेरे साथ न तो वह बौद्ध बहन है जो बनारसमें थी और न वह अछूत लड़की ही, जिसे मैंने गोद लिया है। मगर आप लोग विश्वास रखें कि अगर वे मेरे साथ होतीं, तो मैं उनके बिना अकेला मन्दिरमें न जाता। अगर मैं उन्हें

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
२. गांधीजी इस तारीखको पंढरपुरमें थे। देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", २१-२-१९२७।

बाहर छोड़ देता तो उससे मुझे स्वयं विठोबाको अपमानित करनेका पाप लगता। यदि कोई नास्तिक भी हमारे मन्दिरमें प्रवेश करे तो उसमें मुझे कोई आपत्ति नही होगी, क्योंकि मैं जानता हूँ कि प्रभु अपनी चिन्ता आप कर सकते हैं। दुनियामें ऐसा कौन है जो मूर्तिमें व्याप्त भगवान्का अपमान कर सके? मेरे साथ जो यूरोपीय महिला थी, वे बौद्ध धर्मावलम्बिनी हैं और इसलिए वे तो हिन्दू हैं। अगर उन्हे मन्दिरमें आनेका अधिकार नही है तो और किसे हो सकता है? मैं कितने ही तीर्थ स्थानोंमें गया हूँ, और वहाँ मुझे पाखण्ड और विषय-लोलुपता देखकर दुःख हुआ है। कुछ मन्दिरोंके पुजारी शराबी और भ्रष्ट हैं। हमें पहले उनका सुधार करना जरूरी है। अगर आज जैसी ही स्थिति बनी रही, अगर हमने कुछ काम न किया और आवश्यक तपश्चर्या और आत्मशुद्धि न की तो मैं कहता हूँ कि २२ करोड़ हिन्दू भी हिन्दू-धर्मको जीवित नही रख सकेंगे। हिमालयके निष्कलंक धवल होनेका कारण निर्मल महिमा सम्पन्न अगणित ऋषि-मुनियोंका उसकी गुहाओंमें तपश्चर्या करते हुए अपने प्राण-समर्पण करना ही है। आज केवल ऐसी ही तपश्चर्या हमें और हमारे धर्मको नष्ट होनेसे बचा सकती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-३-१९२७

११९. सम्मानजनक समझौता

दोनों पक्षोंके लिए सम्मानजनक समझौता करानेपर सर मुहम्मद हबीबुल्लाह और उनके साथी बधाईके पात्र हैं। यह हमारी कल्पनाका सर्वोत्तम समझौता तो नही है; फिर भी आजकी इन स्थितियोंमें यह यथासम्भव सर्वोत्तम समझौता अवश्य है। मुझे इसम शक है कि कोई दूसरा शिष्टमण्डल इससे अधिक सफलता प्राप्त कर सकता। कालों और गोरोंको अलग-अलग क्षेत्रोंमें रखनेके जिस विधेयकके कारण वहाँ संघर्ष हुआ था और जिस विधेयकके सम्बन्धमें यह परिषद बुलाई गई थी वह विधेयक अब रद हो गया है। परम माननीय श्री श्रीनिवास शास्त्री शिष्टमण्डलके दक्षिण आफ्रिकाको रवाना होनेपर हमें अन्य सदस्योंसे अधिक पत्र लिखते थे और उन्होंने हमें तभी चेतावनी दे दी थी कि परिषदसे बहुत अधिक परिणाम की आशा नही रखी जा सकती। मगर अब परिषदके समाप्त हो जानेपर उन्होंने परिषदमें किये गये प्रयत्नोंके परिणाम पर संतोष व्यक्त किया है।

मगर सभी समझौतोंकी तरह इस समझौतेमें भी खतरेकी कुछ बातें तो हैं ही। एक ओर तो वर्गक्षेत्र विधेयक वापस ले लिया जाता है, दूसरी ओर दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके प्रत्यावर्तनकी नीतिको उनके पुनः प्रवासकी नीतिमें बदलकर वही स्थिति कायम कर दी जाती है। अगर "पुनः प्रवास" नाम अधिक गौरवास्पद है, तो इनमें खतरे भी अधिक हैं। प्रत्यावर्तन तो केवल हिन्दुस्तानतक ही सीमित हो सकता है,

मगर 'पुनः प्रवास' तो किसी भी देशमें कराया जा सकता है। इसका अभिप्राय समझौतेके इस वाक्यसे स्पष्ट होता है,—"इसलिए दक्षिण आफ्रिकी संघकी सरकार, उन्हें हिन्दुस्तान लौटाने या दूसरे देशोंमें, जहाँ यूरोपीय पाश्चात्य रहन-सहनकी जरूरत नही है, पुनः प्रवासित कर देनेमें सहायता देनेकी योजना बनायेगी।" मैं 'पुनः प्रवास में सहायता देनेकी बातको खतरनाक समझता हूँ, क्योंकि हम नही जानते कि उन गरीब अबोध लोगोंकी, जो किसी अनजाने देशमें बिलकुल परदेशी बनकर पहुँचेंगे, क्या दशा होगी। केवल फीजी और ब्रिटिश गियाना ही ऐसे देश है जो उन्हे लेनेके लिए राजी होंगे। किन्तु वे दोनों ही हिन्दुस्तानमें बदनाम हैं। प्रवासियोंको दुनियामे किसी दूसरी जगह सहायता देकर भेजनेका समर्थन करना निस्सन्देह हानिकर है।

इस सहायता प्राप्त पुनः प्रवासके विषयमें अच्छी बात यही है कि जहाँ समझौतेसे पहले स्वदेश लौटे हुए लोग वहाँकी नागरिकतासे वंचित हो जाते थे, वहाँ अब वे तबतक वहाँके नागरिक बने रहेंगे जबतक कि उन्हे दक्षिण आफ्रिकासे बाहर इतने दिन न हो जायें, जिससे ऐसा लगने लगे कि उनका फिर दक्षिण आफ्रिका वापस आनेका इरादा नहीं है। यह दूसरा सवाल है कि कितने लोग प्राप्त वित्तीय सहायताको लौटाने की या अपने परिवारोंके साथ वहाँ फिर वापस लौटनेकी आशा कर सकेंगे। उनके इस हकको जब्त न किये जानेकी धाराका हेतु उनको निश्चित ठोस अधिकार देनेका उतना नहीं है जितना उनके राष्ट्रीय स्वाभिमानको चोट न पहुँचानेका।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके सवालपर गोलमेज परिषद्के निश्चयका जो संक्षिप्त विवरण संलग्न किया गया है वह भी एक अद्भुत दस्तावेज है। इसके हर अनुच्छेदसे विरोधी हितों और भावोंकी संगति बिठानेका भगीरथ प्रयत्न झलकता है। परिश्रमी पाठकको आशाप्रद अनुच्छेद ढूँढ़ निकालनेमें कोई कठिनाई नही होगी। इसलिए मैं उस अनुच्छेदका उल्लेख मात्र करूँगा जो भयानक खतरोंसे भरा है। संघ सरकार "सार्वजनिक स्वास्थ्य कानूनके अन्तर्गत डर्बनमें और उसके आसपास स्वच्छता और गृह-निर्माणकी स्थितियोंकी विशेष रूपसे जाँच करेगी; इसमें प्रतिबन्धक शर्तोंके अन्तर्गत नगरपालिकाकी जमीनोंकी बिक्रीको मर्यादित करनेका सवाल भी शामिल है।" मुझे इस अनुच्छेदका उद्देश्य नही मालूम मगर मेरे शक्की दिमागमें यही घूम रहा है कि समिति नियुक्त करनेकी और जमीनोंकी बिक्री मर्यादित करनेकी बातके परिणाम भयानक ही होंगे। मेरे शकका आधार मेरा पुराना कटु अनुभव है जिसमें मैंने देखा है कि सबल पक्ष समझौतेका उचित या अनुचित रीतिसे ऐसा अर्थ लगाता है जो निर्बल पक्षके लिए हानिकर होता है। डर्बन निगमको अभीसे ऐसे अधिकार दे दिये गये है जिनका प्रयोग उसने हिन्दुस्तानी नागरिकोंका दमन करनेमें किया है। जहाँ तक मैं जानता हूँ कोई समिति ऐसी बातें प्रकाशमें नही ला सकती जो सरकारको या निगमको मालूम न हों। भारतीय सलाहकार समितिकी नियुक्ति केवल दिखावा ही है। स्वास्थ्य समिति भावनाओं को उभारनेवाला प्रतिवेदन तैयार कर सकती है, और मैं जानता हूँ कि एक पुरानी समितिने ऐसा किया भी था। इससे भारतीयोंपर नगरपालिकाकी जमीनें खरीदनेके मामलेमें पाबन्दी लगाई जा सकती है और उससे

टर्बनके रहनेवाले भारतीयोंपर प्रतिबन्ध लग सकते हैं। मैं उस अनुच्छेदको भी पसन्द नही करता जिसका अर्थ यह प्रतीत होता है कि प्रान्तीय सरकारे केन्द्रीय सरकारसे पूछे विना किसी भी प्रवासी हिन्दुस्तानीके विरुद्ध कोई भी कार्रवाई कर सकती है।

मगर मेरे वतलाये हुए इन खतरोके रहते हुए भी यह समझौता स्वीकार करने लायक है, इसलिए नही कि समझौतेसे वस्तुतः कुछ हासिल हुआ है, वल्कि इसलिए कि इससे दक्षिण आफ्रिकामें हिन्दुस्तानियोंके प्रति निर्दयतापूर्ण दुश्मनी और नितान्त सामाजिक वहिष्कारका जो भी वातावरण था वह एकदम वदल गया है और उसकी जगह अव गोरोंमें उनके प्रति उदारतापूर्ण सहिष्णुता आ गई है और वे उन्हे सामाजिक समारोहोमें सम्मिलित करने लगे हैं। श्री एन्ड्रयूजने मेरे पास इस वातके प्रशंसासूचक विवरण भेजे है कि किस प्रकार शिष्टमण्डलके हिन्दुस्तानी सदस्योका सरकार और लोगोने हार्दिक स्वागत किया है, किस प्रकार हिन्दुस्तानियोंको केपटाउन के वड़ेसे-व्रडे शानदार होटलमें विना किसी वाधा या विरोधके आने दिया गया है, और दक्षिण आफ्रिकाके झुण्डके-झुण्ड गोरे किस प्रकार उनके पास हिन्दुस्तानियोंके प्रश्न और हिन्दुस्तानी शिष्टमण्डलके विपयमें पूछताछ करने आ रहे हैं। अगर दोस्ती और मिलनसारीका यह वातावरण कायम रखा जा सके और उसे वढावा दिया जाये तो इस समझौतेको दक्षिण आफिकावासी हिन्दुस्तानियोकी स्वतन्त्रताके भव्य मन्दिरकी पक्की नीव वनाया जा सकता है। मगर इस समझौतेकी सफलता वहुत कुछ उस व्यक्ति पर निर्भर है जिसे भारत सरकार वाणिज्य-दूत या आयुक्त वनाकर अपना प्रतिनिधित्व करनेके लिए चुनेगी। वह आदमी अत्यन्त प्रतिष्ठित, योग्य, चरित्रवान और मेरी समझमें, कोई हिन्दुस्तानी होना चाहिए। उसका हिन्दुस्तानी होना भर यूरोपीय लोगों पर असर करेगा और इससे उनके दिलोमें वहाँके हिन्दुस्तानियोंकी इज्जत वढ़ेगी। हिन्दुस्तानियोंके दिलोतक उसकी जैसी पहुँच होगी, वैसी किसी अंग्रेजकी, शायद श्री एन्ड्रयूजकी भी नही हो सकती। और अगर इस पदके लिए ऐसा व्यक्ति चुना जा सके जिसे संघ सरकारकी ओरसे भी वैसी ही इज्जत मिल सके तो भारतीयोके भविष्यके विपयमें कुछ भय नही रह जाता। मेरी नम्र सम्मतिमें ऐसे व्यक्ति श्री श्रीनिवास शास्त्री है। मैं समझौतेके इस जल्दवाजीमें लिखे गये विवेचन को यह लिखे विना समाप्त नही कर सकता कि मेरा दृढ विश्वास है कि इस सुपरिणामका कारण मुख्यतः उस ईश्वर-भक्त और आत्मत्यागी अंग्रेज चार्ली एन्ड्रयूजका सतत और विनम्र उद्योग ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया २४-२-१९२७

१२०. टिप्पणियाँ

एक सीधी-सादी सलाह

मैंने अपने दौरेमें देखा है कि कुछ सभाओंमें मेहमानके आने और मानपत्र पढ़ना शुरू होनेके बाद स्वयंसेवक तुरन्त ही बिना सोचे-समझे कागजात, जैसे मानपत्रों आदिकी प्रतियाँ वगैरा बाँटना शुरू कर देते हैं। वे यह नहीं समझते कि इससे कोलाहलपूर्ण और अशान्त सभाओंमें नये सिरेसे गड़बड़ी होने लगती है। अगर पर्चे बाँटने ही हों तो सभाओंकी कार्रवाई शुरू होनेसे पहले ही बाँट दिये जाने चाहिए। लोग यह भी नही समझते कि अगर पर्चे बाँटे जाते हों, तो फिर जो कोई भी माँगे उसे वे दिये जाने चाहिए। पर्चोंकी हजारों नकलें न छपाई जायें तो बड़ी-बड़ी सभाओंमें ऐसा सम्भव नही है। मेरी रायमें यह सार्वजनिक पैसेको बिलकुल बरबाद करना होगा। जो कुछ निहायत जरूरी बातें होंगी, उन्हे स्थानीय अखबार छापेंगे ही और जनताको अपने अखबारोंमें छपे विवरणोंसे ही सन्तोष करना चाहिए। अगर उन पर्चोंके बिना सभाओंकी कार्रवाई ठीक-ठीक समझी न जा सके, तो उन्हे बेचनेमें कुछ हर्ज नही है। उस हालतमें पक्षपातका सवाल ही नही हो सकता। इसलिए जो लोग पर्चे लेना चाहते हों, वे उन्हे नाम-मात्रका मूल्य देकर ले सकते हैं और उस पैसेसे छपाईका खर्च और सभाओंके प्रबन्धका भी कुछ खर्च, वह थोड़ा ही क्यों न हो, निकल सकता है।

राष्ट्रके निधि-रक्षक

थोड़ा ही पूर्व विचार कर लें तो बहुतसी मुसीबतें कम हो सकती हैं और बहुत-सा समय और धन बचाया जा सकता है। अक्सर इन सभाओंमें मैं सार्वजनिक धन पानीकी तरह बहाया जाता देखता हूँ। सभी सभाओंके प्रबन्धक, खासकर खादी-सम्बन्धी सभाओंके प्रबन्धक, यह बात हृदयंगम कर लें कि हमारा देश दुनियामें सबसे गरीब देश है, अगर अन्य किसी कारणसे नही तो केवल इसी कारण कि उसकी प्रति व्यक्ति आमदनी तीन पैसे रोजसे भी कम है। यहाँ लाखों आदमी अधभूखे रहते हैं। इसलिए संयोजक समझ लें कि राष्ट्रके रक्षकके नाते उनका यह कर्त्तव्य है कि वे सार्वजनिक धनका उपयोग कंजूसीसे करे और बिना सोचे और बिना जरूरत एक पाई भी खर्च न करें। यह भी समझ लें कि इकट्ठा किया गया प्रत्येक पैसा भूखों मरनेवालोंके लिए है और उस पैसेकी कीमत प्रायः किसी विधवाकी एक दिनकी कमाईके बराबर होती है। इसलिए उन्हे बिना जरूरत एक पैसा भी खर्च नही करना चाहिए। मसलन वे कागजी सजावटमें रुपया लगाते हैं, किन्तु यह जमाना सजावटका नही है। इसलिए वे सिवा उस सजावटके जो लोगोंको आकर्षित करनेके लिए बिलकुल जरूरी हो, अन्य कोई सजावट न करें और जितना पैसा बचा सकें, उतना बचायें। इस दशामें ऐसी कितनी ही कलात्मक चीजोंकी बात सोची जा सकती है, जिनमें एक पैसा भी न

लगे या बहुत कम खर्च हो। इस तरह बेकार खादीके झंडे और पताकाएँ बनवाई जा सकती हैं। अब हम खादीके साथ खादीके कपड़ोंकी सिलाईकी विस्तृत व्यवस्था भी कर रहे हैं। दर्जीकी दुकानमें हमेशा ही खादीकी बहुत-सी बेकार कतरनें पड़ी रहती हैं। वह उन्हें फेंक देता है। इन बेकार कतरनोंका इस्तेमाल झंडियों और पताकाएँ बनानेके लिए किया जा सकता है। कागजकी झंडियाँ और पताकाएँ तो दूसरे ही दिन फेंक दी जाती हैं। मगर ये तो भविष्यमें काममें लानेके लिए भी रखी जा सकती हैं।

मानपत्र हाथसे लिखें

फूलोंकी मालाएँ बिलकुल छोड़ी जा सकती हैं और सूतकी मालाएँ भेंट की जा सकती हैं। किन्तु सूतमें गाँठें लगाकर उसे खराब नहीं किया जाना चाहिए। उसे जैसा-का तैसा ही दे देना चाहिए, जिससे बादमें उसका उपयोग कपड़ा बुननेमें या इसी तरहके किसी दूसरे काममें किया जा सके। मानपत्रोंको न छपाकर भी पैसा बचाया जा सकता है। संयोजकोंमें से जो सबसे सुन्दर अक्षर लिखते हों, वे हाथके बने कागजपर मानपत्र लिख दें और वह कागज खद्दरपर सफाईसे चिपकाया जा सकता है। अगर कोई छोटा लड़का या लड़की भी सूतसे खद्दरपर ही काढ दे तो और भी अच्छा। कढाईके लिए सूत भी हाथकता होना चाहिए। ऐसी चीज कलात्मक और कीमती भी होगी। छपरा नगरपालिकाके अध्यक्ष बाबू महेन्द्रप्रसादने नगरपालिकाकी ओरसे मुझे जो मानपत्र भेंट किया था, उसे उनकी लड़की रमाने खद्दरपर बड़े अनूठे ढंगसे काढकर दिया था। मैंने यह कल्पना उसीसे ली है। इसमें नगरपालिकाको कुछ भी खर्च नहीं करना पडा और मेरे पास एक ऐसी कलात्मक वस्तु हो गई जो गुजरात राष्ट्रीय विद्यालयमें अध्यापक मलकानी द्वारा बनाए संग्रहालयकी शोभा बढायेगी।

चाँदीकी मंजूषाएँ न दें

[मानपत्रोंको] कीमती मंजूषाओं [में रखकर] देनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि ये मंजूषाएँ मेरे लिये किसी कामकी नहीं हैं। फिर उन्हें रखनेके लिए मेरे पास जगह भी नहीं है। मैं कुछ दिनोंसे उपहारमें मिली सभी कीमती मंजूषाओंको नीलाम कर देता हूँ और उनकी बिक्रीसे मिले धनको अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक कोष को दे देता हूँ। यद्यपि मुझे ऐसी नीलामीमें बहुधा मंजूषाओंकी असली कीमतसे अधिक पैसा मिल जाता है; तो भी अधिक दाम पानेके लिए ही इनका दिया जाना उचित नहीं होगा। अगर मानपत्र मंजूषामें रखकर ही देना हो, तो संयोजकोंके लिए अच्छी पद्धति यह होगी कि वे कोई सस्ती, सुन्दर और स्थानीय वस्तु ढूँढकर उसकी मंजूषा बनवायें।

सैर-सपाटा नहीं

गंगाधररावने बहुत ठीक ही कहा है कि मेरा यह दौरा सैर-सपाटेका दौरा नहीं है; बल्कि एक कामकाजी दौरा है और मैं आशा करता हूँ कि मैं इसमें अपने दरिद्रनारायणके लाभार्थ काफी ठोस कार्य कर लूँगा। इसलिए हरएक समारोह उन्हींके

अनुरूप होना चाहिए। मैंने देखा है कि कामकी जरूरतके लिहाजसे जितने आदमी साथ होने चाहिए, उससे अधिक स्थानिक आदमी मेरे साथ चल देते हैं और कारें किराये पर लेनेमें उचित मितव्ययताका खयाल नही करते। खर्चकी हरएक मदपर पहलेसे सावधानीसे विचार कर लिया जाना चाहिए। जबतक हम ऐसा नही करते, भूखों मरनेवाले लाखों लोगोंके लिए हम कोई योग्य आर्थिक संस्था स्थापित नही कर सकते और छोटे पैमानेपर ही सही, हम भी उसी फिजूलखर्चीके दोषके भागी होंगे, जिसके लिए हम सरकारको उचित रूपसे दोषी ठहराते हैं। जहाँ कही सम्भव हो, किटसन लालटेनें नही लाई जानी चाहिए। मै खाने-पीनेपर भी बहुत रुपया खर्च होता देखता हूँ। जो मेरे साथ घूमते हैं वे खातिर करवानेके लिए नही घूमते। स्वच्छ स्थान और स्वच्छ भोजनकी व्यवस्था हो, इतना ही काफी है। सचमुच कई बार मेरे मनमें आया है कि मैं और मेरे साथी अपना भोजन अपने साथ लेकर चलें और इस मामलेमें श्री भरूचाके अच्छे दृष्टान्तका अनुकरण करें, जो अपना भोजन अपने साथ ले जाने पर हमेशा जोर देते हैं। हम खाने-पीनेमें बहुत, बल्कि जरूरतसे अधिक, समय और रुपया खर्च करते हैं। मुझे लोगोंको कलकत्ते, बम्बईसे फलोंकी पार्सलें मँगाते देखकर कष्ट होता है। यह बिलकुल व्यर्थका खर्च है। बेशक कुछ फल तो मेरे आहारका आवश्यक अंग हैं और वे जब हमें अपने यहाँ न मिल सकें तो बाहरसे मँगाने ही पड़ते हैं। मगर मुझे विश्वास है कि फलोंपर जितना पैसा खर्च किया जाता है, उसका कमसे-कम तीन चौथाई तो जरूर बचाया जा सकता है। मगर कुछ अति उत्साही मित्र कहते हैं, जो लोग आपसे प्रेम करते हैं, वे यदि कुछ ऐसी सेवा करके अपना प्रेम प्रकट करना चाहें तो क्यों न करे? वे दूसरी तरह पैसा खर्च नही करेंगे और आपकी निजी सेवामें जितना खर्च करते हैं, उतना यों ही देंगे भी नही। इसलिए आप उन्हें अपनी सेवामें खर्च करनेका सुख उठाने दें। बेशक, यह दलील कानोंको तो अच्छी लगती है, मगर कायल कतई नही करती।

सेवामें परिवर्तन

जो लोग मुझसे प्रेम करते है, वे अगर मेरे सिद्धान्तसे भी प्रेम नही कर सकते तो उनका प्रेम अन्धा है और वह बहुत कीमती नही है। मै नहीं समझता कि किसीका उद्देश्य केवल मित्रोंका मनोविनोद करना हो सकता है। मित्रताका अर्थ प्रेमभरी पारस्परिक सेवा है। कभी-कभी बहुत अधिक खातिर करके मित्रोंको प्रलोभनमें फँसाना तो अवश्य ही अहितकर होता है। अगर मेरे कोई मित्र ऐसे हैं जो मेरे सुखोपभोग के लिए तो रुपया पानीकी तरह बहाना चाहते है मगर जिस उद्देश्यको मै प्यार करता हूँ, उसके लिए कुछ भी खर्च करना नहीं चाहते, तो उस सुखोपभोगसे बचना मेरा स्पष्ट कर्त्तव्य है। मित्रोंको अगर मित्रता निभानी है, तो उन्हें पहले मेरी जिन्दगीकी जरूरी चीजें जुटानी होंगी। वे उसके बाद ही मुझे सुखोपभोगकी चीजें भेजनेकी बात सोच सकते है, और खद्दरका काम मेरी जिन्दगीकी सबसे बड़ी जरूरी चीज है। वह मेरे लिए खानेसे भी ज्यादा जरूरी है। स्वागत-समितियाँ इस चीजको ध्यानमें रखें।

मालाओंकी नीलामी

ये पिछले अनुच्छेद अहमदनगर पहुँचनेके पहले जहाँ-जहाँ मैं रुका वहाँ-वहाँ लिखे गये अथवा बोलकर लिखाये गये थे। वहाँ एक बड़ी जबर्दस्त सभा हुई थी जिसमें मुझे कई मानपत्र दिये गये थे। नगरपालिकाका मानपत्र चाँदीके एक सुन्दर गोलाकार डिब्बेमें रखकर दिया गया था। हर संस्थाके प्रतिनिधि फूलोंकी कीमती मालाएँ भी लाये थे। श्रीयुत फिरोदियाने थैली देते हुए उसमें छोटी रकम होनेके लिए क्षमा माँगते हुए यह बतलाया कि अहमदनगर अकालग्रस्त प्रदेश है। इसलिए जब मैंने उसका उत्तर[1] दिया तो मैं महलोंके समान कोठियों, खर्चीले प्रबन्ध और अकालकी बातकी विसंगतिका उल्लेख किये बिना न रह सका। मैंने लोगोंसे कहा कि जो अहमदनगरकी दशा है वही सारे हिन्दुस्तानकी है। क्या सारा भारत अकाल-ग्रस्त नहीं है? मगर इससे कुछ लोगोंका धन जमा करना तो नहीं रुका है। हम नगरनिवासी अकालग्रस्त गाँववालोंका ही शोषण करके जीते हैं। खद्दर आन्दोलनका अर्थ है इस बुराईका थोडा बहुत इलाज करना और उन लाखों लोगोंका थोड़ा-सा कर्ज चुकाना जिनका हम आज शोषण कर रहे हैं। इसलिए मैंने कहा कि इस सचाईको माननेसे कि अहमदनगर अकाल-ग्रस्त प्रदेश है, वहाँके धनियोंके लिए कम चन्दा देना नहीं, और भी अधिक चन्दा देना, दुगुना, लाजिमी हो जाता है। मैंने यह भी कहा कि उपहारके रूपमें ऐसी सुन्दर पेटियाँ और कीमती मालाएँ लेना मेरे लिये शोभनीय नही होगा। मैंने यह भी कहा कि मैं पौधोंको मनुष्यके समान ही प्राणवान् मानता हूँ; इस कारण मैं एक भी फूलका यों ही तोड़ा जाना पसन्द नहीं करता। मगर अहमदनगर जैसे स्थानमें मेरी नापसन्दगी इस बातको याद करके और भी बढ जाती है कि मैं उन्ही अकाल-ग्रस्तोंका स्वयंभू प्रतिनिधि हूँ, जिनका जिक्र श्रीयुत फिरोदियाने किया है। गैरजरूरी कामोंमें एक रुपया खर्च करनेका अर्थ है, १६ भूखी स्त्रियोंकी रोजी मारना। इसलिए मैंने सुझाया कि चाँदीकी पेटी और फूल नीलाम कर दिये जायें और मेरी बातका अगर कुछ भी असर पड़े तो खरीदार लोग इनका बाजार दाम न दें, बल्कि इससे जो भावना सम्बद्ध है उसको ध्यानमें रखकर दाम दें। स्वभावत. ही नीलामका काम नगरपालिकाके अध्यक्ष खानबहादुर दोराब सेठको दिया गया। पेटी नगरके दानी सेठ मगनीरामको १००१ रु० में बेची गई और मालाएँ और गुलदस्ते उन्ही योग्य प्रबन्धकों द्वारा विभिन्न लोगोंको ५०२ रुपयेमें बेचे गये। मेरी अपीलका असर केवल सभामें ही नहीं पड़ा बल्कि मुझे लगा कि वहाँके नागरिकोंने मेरे भाषणका भाव समझ लिया है क्योंकि १७०० रु० रुपयेकी थैली, जिसके लिए श्रीयुत फिरोदियाने माफी माँगी थी, बढा कर करीब ६००० रुपयेकी कर दी गई। इसके अलावा सभामें खादी भी धड़ाधड़ बिकी। भविष्यके लिए प्रबन्धक इससे चेत जायें। मैं उन्हे सावधान करता हूँ कि उन्हें मालाएँ या कीमती पेटियाँ देनेकी जरूरत नहीं है। अगर वे देंगे तो मैं समझूँगा कि वे नीलाम करनेके लिए हैं और इसलिए हैं कि गरीबोंके कोषमें उनका हिस्सा नीलामी द्वारा काफी बड़ा हो जाये।

१. देखिए "भाषण: अहमदनगरमें", १८-२-१९२७।

तिलक स्वराज्य कोष

महाराष्ट्रके दौरेमें एक दो सभाओंमें मुझसे यह प्रश्न पूछा गया कि तिलक स्वराज्य कोषमें जो एक करोड़ रुपया इकट्ठा किया गया था उसका क्या हुआ?[१] प्रश्नकर्त्ताओंने इस कोषमें चाहे एक पाई भी न दी हो, फिर भी उन्हें यह प्रश्न पूछनेका पूरा अधिकार था। सार्वजनिक कोष सार्वजनिक सम्पत्ति हो जाता है, इसलिए जनतामेंसे हरएक मनुष्यको ऐसे कोषोंकी व्यवस्थाका पूरा-पूरा ब्यौरा पूछनेका हक हो जाता है। इसी कारण मैंने इस प्रश्नका उत्तर बहुत विस्तारसे दिया। यद्यपि इस प्रश्नका उत्तर इन पृष्ठोंमें पहले दिया जा चुका है, फिर भी मेरे उत्तरका सार यहाँ दोहराना ठीक होगा।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने इस कोषका हिसाब नियमित रूपसे प्रकाशित किया है। जाँचे हुए हिसाबकी प्रतियाँ कांग्रेसके मन्त्रियों और कोषाध्यक्षोंसे किसी भी समय मँगाई जा सकती हैं। इसमें पाई-पाईका हिसाब दिया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिन लोगोंको यह कोष सौंपा गया था, उनमेंसे कुछ लोग इस न्यासके प्रति सच्चे नहीं रहे; किन्तु इसका अर्थ इतना ही है कि मनुष्योंकी बनाई हुई सब संस्थाओंकी तरह कांग्रेस भी अपूर्ण संस्था है और उसमें सब तरहके लोग शामिल हैं। मुझे संसारकी किसी भी ऐसी संस्थाका नाम मालूम नहीं है जिसमें बेईमान कार्यकर्त्ता न हों। कांग्रेस इसका अपवाद नहीं है; किन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि जितना नुकसान एक सावधान व्यापारी उठाता है, उससे ज्यादा नुकसान हमने नहीं उठाया है। जो थोड़ा-सा नुकसान हुआ है उसका कारण लापरवाही नहीं है, बल्कि वह सावधानीसे देखरेख करने और हिसाब जाँचते रहनेपर भी हो गया है। इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि कांग्रेसके पण्डित जवाहरलाल नेहरू जैसे मन्त्री और सेठ जमनालाल बजाज जैसे कोषाध्यक्ष रहे हैं, जो किसी लालचमें पड़कर भ्रष्ट नहीं हो सकते। इसके अतिरिक्त संचित रुपयेका ७५ प्रतिशत उन्हीं स्थानोंपर वहींके ऐसे स्थानीय प्रतिनिधियोंके नियन्त्रणमें रहा है, जिन्होंने इस रुपयेको इकट्ठा करनेमें सहायता दी थी और जिनपर लोगोंने विश्वास करके रुपया दिया था। आखिरी बात यह है कि सबसे बड़ी रकमें ज्यादातर खास कामोंके लिए निश्चित कर दी गई थीं और उनके खर्चपर रुपया देनेवालोंका नियन्त्रण था। बेशक इसकी शर्त यह थी कि यह निश्चित किया हुआ रुपया असहयोगके कार्यक्रमके अन्तर्गत आनेवाले कामोंपर खर्च किया जायेगा और कांग्रेसके प्रतिनिधि उसके हिसाबकी जाँच कर सकेंगे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे इस कोषके इकट्ठा करनेपर बिलकुल अफसोस नहीं है और इसके खर्चके नियन्त्रणके बारेमें मेरा मन बिलकुल साफ है। मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है वहाँतक जालसाजी, बद-इन्तजामी या गबनसे बचनेकी पूरी सावधानी रखी गई थी। इस कोषने बहुत बड़ा राष्ट्रीय कार्य पूरा करनेमें मदद की है। इतनी विशाल संस्था, जो एकदम खड़ी हो गई, इस बहुत बड़े राष्ट्रीय

१. देखिए "भाषण: पाचोरामें, तिलक स्वराज्य कोषपर", ८-२-१९२७।

कोषके बिना, जिसमें अमीर और गरीब सबने अच्छी रकमें दी हैं, खड़ी नहीं हो सकती थी।

अखिल भारतीय गोरक्षा संघ

मन्त्रीके नीचे लिखे अनुसार और सूत मिला है?[1]

संख्या ५, ६, ८ और १० के सदस्योंने अपना जोड़ बढ़ाकर क्रमशः २४,००२, २४,०००, २२,००० और १४,९४० कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-२-१९२७

१२१. पत्र : नारणदास गांधीको

[२५ फरवरी, १९२७ से पूर्व][2]

[चि०] नारणदास,

तुम्हारा दूसरा पत्र अभी-अभी मिला।

भण्डारके बारेमें आज मैंने तुम्हें बेलगाँव पहुँचनेका तार दिया है। तुम तो २५ तारीखतक ही पहुँचोगे। मैं २६ को पहुँचूँगा।

पाँच तलावडीमें चरखोंकी आवश्यकताको पूरा करनेके बारेमें अपनी राय देना। यदि उस विभागको अमरेली [कार्यालय] की मार्फत चलाया जाये तो निश्चय ही सुविधा होगी। कोटक भण्डारसे सम्बन्धित आँकड़े क्यों नहीं भेजे गये? ये आँकड़े पिछली बार भी नहीं भेजे गये थे।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७११) से।

सौजन्य : नारणदास गांधी

१. आँकड़े यहाँ नहीं दिए जा रहे हैं, ये आँकड़े ११ से १७ तकके सदस्योंसे सम्बन्धित थे।

२. साधन-सूत्रसे।

१२२. पत्र : प्रभावतीको

[२६ फरवरी, १९२७ के पश्चात्][1]

चि० प्रभावती,

तुमारा पत्र मीला है। क्या मेरा पत्र[2] जिसमें मैंने श्वसुरके साथ की मुलाकातका वर्णन दीया है नहिं मीला है? मार्चके अंतमें तुमको, विद्यावतीको और वन पड़े तो चन्द्रमुखी को पिताजी आश्रम भेजना चाहते हैं।

'रामायण' और 'गीताजी' का अभ्यास बढ़ा दो और चर्खा हरगीज न छोड़ो। चर्खा चलाते हुए रामधुन लगाना।

तुलसी मेहरजी मुझको दुबारा मील गये।

जिस प्रदेशमें मैं अब घूम रहा हुं बड़ा रमणीय प्रदेश है। इसका नाम कोंकण है और महाराष्ट्रका एक हिस्सा है। मेरा भी इस प्रदेशमे यह पहला दौरा है।

मेरी मुसाफरीकी तारीख पिताजीके पत्रमें दी है।

बापुके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ३३२७) की फोटो-नकलसे।

१२३. एक मुमुक्षुकी महायात्रा

जब किसी आत्मार्थीका देहावसान होता है तब हम उसे महायात्रा ही कहते हैं। ज्ञानियोंने इस जगतको मुसाफिरखाना अथवा धर्मशाला माना है। हम इसमें दो दिन निवास करके चलते बनते हैं। 'गीता' ने देहको धर्मक्षेत्र कहा है। रणछोड़दास वारशी इस क्षेत्रका परित्याग करके कूच कर गये हैं। मैं उन्हें बहुत अच्छी तरह जानता था। वे आजकल कराचीमें रहा करते थे। वे श्रीमद् राजचंद्रके परमभक्त थे। रणछोड़भाईको उनके शिक्षणमें पूर्ण आस्था थी। राजचंद्रभाईके नामका उल्लेख होते ही उनके नेत्रोंसे मैंने आनन्दाश्रु बहते देखे हैं। उनके परलोकवाससे उनके परिचित जनों और सम्पर्कमें आनेवाले लोगोंको गहरा दु:ख होगा। वे स्वय तो कृतार्थ होकर चले गये। कराचीके सार्वजनिक जीवनमें वे अदृष्ट रहते हुए सदा भाग लिया करते थे। वे नामके भूखे न थे। उन्हें तो कामसे काम था। उन्हें खादीमें पूरी श्रद्धा थी और कराचीमें खादीका कार्य उत्साहसे किया करते थे। ईश्वर उनकी आत्माको शांति और उनके कुटुम्बियोंको सान्त्वना दे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २७-२-१९२७

१. गांधीजीका कोंकणका दौरा २६-२-१९२७ को आरम्भ हुआ था।
२. देखिए "पत्र : प्रभावतीको", २-२-१९२७।

१२४. पत्र : लॉरा आई० फिचको

२७ फरवरी, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मुझे साबरमतीसे यहाँ भेज दिया गया है। चूँकि मै निरन्तर यात्रा कर रहा हूँ अतः बोलकर पत्र लिखवानेके लिए आप मुझे क्षमा करे। आप और श्रीमती ब्लेयर, जिन्हे मै अच्छी तरह जानता हूँ, दोनो जब कभी आश्रम जायें आप लोगोका स्वागत होगा। मुझे आशा है कि ९ और १४ मार्चके बीच ज्यादातर मै वहाँ रहूँगा। यदि आप उस समय आयें तो मुझे स्वय आपका स्वागत करनेमे प्रसन्नता होगी।

मेरी रायमें आप और श्रीमती ब्लेयर अपने साथ मसहरी लेकर आयें। ऐसा नही कि आश्रममें मच्छर बहुत हैं, लेकिन यह देखते हुए कि आश्रममें हमारे पास मसहरियाँ नही हैं, पहलेसे ही तैयार होकर आना बुद्धिमानी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२८१५) की माइक्रोफिलमसे।

१२५. पत्र : मीराबहनको

मालवन
२८ फरवरी, १९२७

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले।

मेरे मनमें कोई सन्देह नही कि व्रतका जीवनमें वही महत्त्व है जो नौकाके लिए पतवारका। व्रत जीवनका नियामक है। जिस प्रकार पतवारके बिना नौका भटक जाती है उसी प्रकार व्रत-विहीन जीवन लक्ष्यभ्रष्ट जीवन है। क्योकि आखिरकार व्रतका अर्थ है — जानकी भी बाजी लगाकर आत्मसयमके निर्णयको निभानेका धार्मिक सकल्प। इसलिए किसी भी पुरुष या स्त्रीके लिए, जो कदाचित् सर्वोत्तम व्रत हो सकता है, ऐसे व्रतको ग्रहण करनेकी तुम्हारी इच्छाका मुझे स्वागत करना चाहिए। पर यदि व्रत लेना है तो खूब सोचविचार करनेके बाद लेना चाहिए। यदि तुम इस व्रतको लेनेकी आवश्यकता स्पष्ट रूपमें अनुभव करती हो, तो तुम्हे व्रत लेनेसे रोकना मेरे लिए ठीक नही होगा। व्रत न लेनेका अर्थ है अपने शुद्ध 'स्व' पर विश्वास करना। व्रत लेनेका अर्थ है अपने आपपर विश्वासका न होना और केवल ईश्वरपर विश्वास करना। मै जानता हूँ कि जो व्रत मैंने लिये है, यदि वे मैंने न लिये होते तो आज मेरी क्या स्थिति होती।

पर इसका एक और पहलू भी है अर्थात् एन्ड्रचूजवाला। उनका कहना है "मैं नही जानता कि अन्तरात्माकी आवाज सदैव ईश्वरकी आवाज ही होती है। जो मैं आज सही मानता हूँ, कल गलत भी साबित हो सकता है। इसलिए मुझे अपनी आत्माको ऐसा शुद्ध और मुक्त रखना चाहिए कि पल-पल जैसी ईश्वरेच्छाकी प्रतीति हो उसीके अनुकूल आचरण कर सकूँ।" इस रवैयेसे उनका काम तो चल गया है। पर मैं तो कहींका न रहूँगा। मुझे तो एन्ड्रचूजके तर्कके पीछे वाक्छल दिखाई देता है; उन्हें नही। इसलिए इस तर्कसे उन्हें सहारा मिलता है। भ्रान्ति, भूल आदि सापेक्ष शब्द हैं। यद्यपि सत्य सर्वदा एक ही रहता है, फिर भी हो सकता है कि जो बात एकके लिए अच्छी है, वह सबके लिए अच्छी न हो। अतएव कठिनाईकी बात है, सत्य विषयक हमारा निराशाजनक अज्ञान। निष्ठुर विधाताने हमें यह समझनेकी शक्ति तो दी है कि सत्य एक है, उससे परे कुछ नहीं है। परन्तु हमें इतनी शक्ति नही दी कि हम सत्यका रहस्य जान सकें।

इसलिए यदि तुम्हारी अन्तरात्मा तुम्हें व्रत लेनेकी प्रेरणा देती हो, और तुम्हें ऐसा लगता हो कि व्रत लेनेपर तुम अधिक स्वतन्त्रताका अनुभव करोगी, तो तुम्हें व्रत लेना ही चाहिए। जल्दबाजीमें कुछ भी करनेकी आवश्यकता नही।

तुम्हें अपना स्वास्थ्य सँभालकर रखना चाहिये। निश्चय ही जब कभी थोड़ासा भी भारीपन या बदहजमीका अनुभव हो, तो उपवास रखना चाहिए। बदहजमी या थोड़ा भी भारीपन महसूस हो और उसके साथ शक्ति भी मालूम दे तो ऐसी शक्ति से कमजोरी ज्यादा अच्छी।

तुम्हें अपनी हिन्दीके बारेमें चिन्ता नही करनी चाहिए। तुम जो कुछ कर सकती हो, कर रही हो। बाकी ईश्वरके हाथमें रहने देना चाहिए। जब हम मिलेंगे, तब शायद कुछ परिवर्तन करना जरूरी होगा। यह बात तो स्पष्ट है कि तुम्हे हिन्दी सीखना और चरखा सिखाना दोनों काम एक साथ नही करने चाहिए। जाहिर है कि इससे तुम थक जाती हो। तुम्हें जितनी सहायताकी जरूरत थी, उतनी सहायता नही मिल पाई है। फिर भी तुमने जो अनुभव प्राप्त किये है, वे अमूल्य हैं और मैं उनसे सन्तुष्ट हूँ।

मुझे रामचन्द्रका पत्र अभी मिला है। मुझे यह देखना है कि वहाँ आनेपर क्या किया जा सकता है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

मुझे इस महत्त्वपूर्ण पत्रको दोहरानेका भी समय नही है।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०७)से।
सौजन्य : मीराबहन

१२६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मालवन
माघ वदी ११ [२८ फरवरी, १९२७]

बहनो,

अब मुझे तुम्हारे नाम यह एक ही पत्र भेजना रह गया है। अगले सोमवारको तो मैं तुम्हारे पास आनेके लिए रवाना हो जाऊँगा।

सफरमें स्त्रियोंकी सभाएँ होती ही हैं। इसलिए नित नये अनुभव मिलते रहते हैं। मैं देख रहा हूँ कि स्वराज्यकी कुंजी स्त्रियोंके पास है, परन्तु उन्हें जाग्रत कौन करे? असंख्य स्त्रियाँ ऐसी हैं जिन्हें कोई काम नहीं है, उन्हें कौन उद्यमी बनाये? माताएँ बचपनसे ही अपने बालकोंको बिगाड़ती हैं, उन्हें कौन रोके? वे अपने बालकोंको गहनों और अनेक प्रकारके कपड़ोंसे लादे रहती हैं, छोटी-छोटी बालिकाओंका ब्याह रचा देती हैं; बालिकाएँ बूढ़ोंको ब्याह दी जाती हैं। स्त्रियोंके गहने देखकर तो मैं हैरान हो जाता हूँ। उन्हें कौन समझाये कि गहनोंमें सौन्दर्य नहीं, सौन्दर्य तो हृदयमें है? ऐसी तो कई बातें मैं लिख सकता हूँ, मगर उनका उपाय क्या है? उपाय तो तभी हो सकता है जब स्त्रियोंमें से कोई द्रौपदी-जैसी उग्र तेजवाली निकल पड़े। ऐसी शक्ति प्राप्त करनेकी कोशिश करना तुम्हारा काम है। उसे प्राप्त करनेका निश्चय करना और फिर धीरज रखना। जल्दी करनेसे काम नहीं सरता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४१) की फोटो-नकलसे।

१२७. पत्र : ना० मो० खरेको

मालवन
सोमवार [२८ फरवरी, १९२७]

भाई पण्डितजी,

नानाभाईका जो पत्र मैंने चि० मणिलालको भेजा है उसे पढ लेना। यदि समय मिल सके तो नानाभाईकी प्रसन्नताके लिए एक दिन जल्दी पहुँचना। विधि तो हमें अत्यन्त संक्षेपमें करनी है। इस क्रियामें एक घंटेसे ज्यादा समय न लगे, ऐसा निश्चित कर लेना। तथापि जरूरी सभी कुछ अवश्य करना। प्रतिज्ञाकी दो प्रतियाँ बनवाना, दोनोंको एक-एक देनेके लिए। तुम्हारे और मेरे भाग्यमें अब ऐसे विवाह कराना ही रहा है। अन्य मित्र जो चाहेंगे उससे तो हम उन्हें रोक नहीं सकते। यह क्रिया आदि सारी विधि इसी कारण है, इसपर अच्छी तरहसे विचार करके

इसे जितना अधिक धार्मिक बनाया जा सके, बनाना। काकाके साथ सलाह-मशविरा कर लेना। कुछ संशोधन-परिवर्धन करना हो तो करें।

हम विवाहका शुभारंभ प्रार्थना और भजनसे करेंगे और मुझे लगता है कि अन्तमें भी प्रार्थना और भजन रखें। इस सम्बन्धमें भी काकाके साथ विचार कर लेना। यदि भजन रखने हैं तो कौन-कौनसे भजन रखने है, प्रार्थनामें कौन-से श्लोक बोलने है, इसपर भी सोच लेना। हमारी जो नित्यकी प्रार्थना है, केवल वही नही, विवाहके लिए यदि कोई खास प्रार्थना मिल जाये तो उसे भी ले लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २५०) से।
सौजन्य : लक्ष्मीबहन खरे

१२८. पत्र : मणिलाल गांधीको

[२८ फरवरी, १९२७][1]

चि० मणिलाल,

यह पत्र तुम्हें बुधवारको मिल जाना चाहिए।

मगनलाल लिखता है कि तुम [अकोलाके लिए] गाड़ी बम्बईसे पकड़ोगे। तब तुम्हें वहाँसे शुक्रवारको चल देना होगा। मैं शनिवारकी सुबह पूनामें होऊँगा। वहाँसे १० बजे निकलकर कल्याणमें तुम्हारे साथ हो जाऊँगा। पूनामें सवेरे एक सभा है।

इसके साथ नानाभाईका और सुशीलाका पत्र है — तुम्हारी जानकारीके लिए। मुझे लगता है कि तुम थोड़े समय अकोलामें रहो, उनकी इस इच्छाका तुम्हें आदर करना चाहिए। विजयालक्ष्मी स्वभावतः तुम्हें जानना चाहेंगी; विजयालक्ष्मी तुम्हारी सास हैं।

सुशीलाने गहनों और कपड़ोंके बारेमें जो लिखा है उसपर तुम क्रोधित न होना और चिन्ता भी न करना। उसमें जो अच्छे संस्कार हैं उन्हें विकसित करनेका मैंने प्रयत्न किया है, लेकिन मैंने उसपर कोई बन्धन नहीं डाला है। तुम उसपर जैसा प्रभाव डालना चाहो वैसा डालना और तुम्हें जो छूट लेनी हो सो तुम उसकी सम्मतिसे लेना।

विवाह-विधिके समय ली जानेवाली प्रतिज्ञा [की प्रति] पण्डितजीके पास है। मैं चाहता हूँ कि तुम उसे पहलेसे ही लेकर पढ़ जाओ, उसपर विचार करो और उसे अच्छी तरहसे समझ लो। भगवान तुम्हें इतनी शक्ति दे कि तुम उस प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए सदैव तत्पर रहो।

१. पत्रमें पण्डितजी सम्बन्धी चर्चाके आधारपर; देखिए पिछला शीर्षक।

विवाह एक नया जीवन है, यह मैं जानता हूँ। इसलिए चाहे मुझे तुम्हें विस्तारपूर्वक लिखनेके लिए अधिक समय नही मिलता फिर भी मेरे मनमें तुम्हारा विचार सदा बना रहता है।

तुम अकोलामें रहोगे तो भी मुझे तो वहाँसे सोमवारको चल ही देना होगा। आश्रममें मैंने अपने लिए बहुत ज्यादा काम तैयार कर रखा है।

तुम्हें मुझसे जो कुछ कहना सुनना हो उसे ठीकसे लिख कर रख लेना क्योंकि सम्भव है कि इसके बाद हम फिर न मिलें। यह भी हो सकता है कि हम इस जीवनमें फिर न मिल पायें। तुम मार्चमें जब दक्षिण आफ्रिका जाओगे उस समय मैं न मालूम कहाँ भटक रहा होऊँगा। इसलिए मैं देखता हूँ कि तुम्हे जो-कुछ पूछना हो, उसे पूछनेका अवसर तुम्हें ज्यादातर गाड़ीमें मिलेगा। रविवारको तो हम विवाहकी धूमधाममें व्यस्त होंगे। वैसे, मैं उम्मीद तो यह करता हूँ कि धूमधाम-जैसा कुछ नही होगा, जो होगा सो केवल धार्मिक वातावरण तैयार करनेके लिए होगा और शान्ति भी काफी रहेगी। फिर भी मैं कामकाजी व्यक्ति ठहरा, इसलिए ऐसा भी हो सकता है कि हमें समय न मिले।

नानाभाईने पत्रमें पण्डितजीके एक दिन पहले आनेकी माँग की है। अगर पण्डितजी जा सकें तो जायें। यद्यपि मैंने नानाभाईको लिख दिया है कि इसकी कोई आवश्यकता नही है, लेकिन यदि वह एक दिन और दे सकें तो जरूर दें।

तुम 'गीता' की दो प्रतियाँ, दो प्रतियाँ 'भजनावलि' की तथा दो तकलियाँ लेते आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२४) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

१२९. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

[२८ फरवरी, १९२७][1]

भाईश्री ५ नानाभाई,

आपका पत्र मिला। आपने पण्डितजीके जल्दी आनेकी जो बात लिखी है सो उसकी कोई जरूरत तो नही है। फिर भी मैंने उन्हे लिख[2] दिया है कि यदि एक दिन पहले पहुँच सकें तो अवश्य पहुँचें।

उम्मीद है, आप किसी तरहका आडम्बर अथवा सजावट आदि नही करेंगे। मण्डप आदिका खर्च कमसे-कम करेंगे। विवाह-विधि खुली हवामें करना ठीक जान पड़ता है। केवल छाया हो; इतना ही काफी है।

१. पण्डितजीके उल्लेखसे; देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र : ना० मो० खरेको", २८-२-१९२७।

आपके घरमें धार्मिक वातावरण तो है ही, लेकिन मेरी इच्छा है कि इन दिनों विशेष रूपसे हो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने मणिलालको लिखा[1] है कि यदि बन सके तो वह चन्द दिन अकोलामें रहे। यदि वह वहाँ रहेगा तो कदाचित् दोनोंको अलगसे एक कमरा देनेकी आवश्यकता होगी। विवाहके तुरन्त बाद वे दोनों थोड़े दिन साथ रहें, यह शायद आवश्यक है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२९) से।

सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

१३०. पत्र : सुशीलाबहन मशरूवालाको

सोमवार [२८ फरवरी, १९२७][2]

चि० सुशीला,

तुम्हारा बहुत सोच-सोचकर लिखा हुआ पत्र इतने दिनोंके बाद आया; मगर आया तो सही। मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे निस्संकोच होकर लिखनेकी आदत डालो।

रविवारके दिन तुम्हें, मणिलालको, नानाभाईको, विजयालक्ष्मीको, मुझे तथा बा को विवाह-विधि पूरी होनेतक अर्थात् १२ बजेतक, उपवास करना होगा। वह सारा समय तुम धर्म-चिन्तन और विवाहका अर्थ समझनेमें बिताना। विवाह भोगके लिए नहीं, संयमके लिए है, इस बातको आजकल तो लोग बिलकुल ही भूल गये हैं। आदमी — स्त्री-पुरुष — जब विकारवश होते हैं तब उस विकारको नियमित रखने, उसे मर्यादामें बाँधनेके लिए विवाह-सम्बन्ध करते हैं। हममें और पशुओंमें यही भेद है। इस तरह यद्यपि विवाह विषय-भोगका अवसर देता है तथापि शास्त्रमें यह कहा गया है कि दम्पतीका धर्म है कि वे विषय-भोगको उत्तरोत्तर कम करते जायें। भोगार्थ रचे गये दाम्पत्य सम्बन्धको भी शास्त्र मोक्षार्थ उपयोग करनेका प्रयत्न करते हैं और उनका यही आदेश है। और वह भी इस हदतक कि मुमुक्षुओंने आत्मा और परमात्माके सम्बन्धको भी विवाह-रूपमें वर्णित किया है। दाम्पत्य प्रेमके विषयमें जिस शुद्ध अद्वैतकी कल्पना की गई है वही कल्पना आत्मा और परमात्माके अद्वैतके सम्बन्धमें भी की गई है। इस तरह विवाह समाज-सेवाका एक बहुत बड़ा साधन बन सकता है। भगवान करे कि तुम्हारे विवाहके सम्बन्धमें भी यही बात चरितार्थ हो।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. पत्रमें विवाह-प्रतिज्ञाकी चर्चाके आधारपर; देखिए "पत्र : मणिलाल गांधीको", २८-२-१९२७ और "पत्र : ना० मो० खरेको", २८-२-१९२७।

विवाहकी प्रतिज्ञाकी एक प्रति मैं तुम्हें जल्दी भेज देनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। यदि वह मिल जाये तो उसपर मनन करना। भगवान तुम्हें उसका पालन करनेकी शक्ति प्रदान करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११२५) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

१३१. भाषण : लांजेमें[1]

२८ फरवरी, १९२७

मैंने आपको इतनी देर बैठाये रखा[2], इसके लिए मैं नहीं जानता कि मुझे आप पर दया आनी चाहिए या अपने ऊपर। मगर हम लोगोंने आज वही किया है जो 'गीता' का योगी करता है, यानी रातमें जागरण। किन्तु आज तो योगी और भोगी दोनों देरतक जागते हैं। आप निःस्वार्थ भावसे जग रहे हैं, इसलिए योगी ही हैं। किन्तु मैं भोगी हूँ या योगी, इसका पता आज कैसे चल सकता है? मैं आपकी योग-साधनापर आपको बधाई देता हूँ। परन्तु आप सच्चे योगी हैं, यह तो तभी सिद्ध होगा जब आप, जिस परमार्थके कार्यमें मैं आपकी सहायता माँगने आया हूँ उसमें मुझे सहायता देंगे। तो आप खादीके लिए पैसा दीजिए और खादी खरीदिये।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १३-३-१९२७

१३२. भाषण : रत्नागिरिमें[3]

[१ मार्च, १९२७][4]

गांधीजीने पहले कहा कि लोकमान्यका जन्मस्थान होनेके कारण रत्नागिरि समस्त भारतके लिए एक तीर्थ है। फिर श्रीयुत वि० दा० सावरकरका मार्मिक शब्दोंमें उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा :

आप लोकमान्य तिलकके स्वराज्य मन्त्रसे तो परिचित ही हैं। मेरा खयाल है कि इस मन्त्रको सिद्ध कर दिखानेका प्रयत्न करनेवाले लोकमान्यके अनुयायियोंमें मेरा

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से। इसका मिलान यंग इंडिया १०-३-१९२७ में प्रकाशित विवरणसे भी कर लिया गया है।

२. गांधीजी लांजेमें आधी रातके बाद पहुँचे थे।

३. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

४. यंग इंडियामें १०-३-१९२७ को छपी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

स्थान सबसे ऊँचा है। हो सकता है कि दूसरे अनुयायी भी ऐसे हों, जिन्होंने मेरे समान ही प्रयत्न किया हो, परन्तु मैं यह नही मानता कि स्वराज्यके इस मन्त्रकी सिद्धिके लिए कोई अन्य व्यक्ति मुझसे अधिक प्रयत्न करनेका दावा कर सकता है, क्योंकि मैं जानता हूँ कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार मात्र ही नहीं, वरन् उसे प्राप्त करना हमारा पवित्र कर्त्तव्य है, क्योंकि हम स्वराज्यसे जितने दूर कर दिये जाते है, मनुष्यत्वसे भी उतने ही दूर पड़ जाते है। स्वराज्यके बिना, हमारी सभी शक्तियोंकी उचित अभिव्यक्ति हो पाना असम्भव है। किन्तु जो स्वराज्य लोकमान्यकी कल्पनाका स्वराज्य है, वह मात्र रत्नागिरिवासियोंका या महाराष्ट्रियोंका ही स्वराज्य नही, बल्कि सारे देशका स्वराज्य है। वह देशके अमीर और गरीब सभी लोगोंका स्वराज्य है, और गरीबोंके लिए स्वराज्य तबतक कोई माने नही रखता जबतक कि उन्हें खानेको पर्याप्त भोजन नही मिलता। किन्तु आप पूछते है कि हम अपनी मिलोंकी सेवा क्यों न करे? शोलापुर मिलके मालिक सेठ नरोत्तम मोरारजी मेरे मित्र है। मै उनके पुत्रका अतिथि था, जिसने बहुत प्रेमके साथ मेरा आतिथ्य सत्कार किया। तो क्या इससे मुझे उनकी मिलका कपड़ा इस्तेमाल करना चाहिए, 'गरीब' नरोत्तम सेठ और उनके बेटेकी सेवा करनी चाहिए? यह तो वे भी नहीं कहेंगे कि उनकी मिलोका कपड़ा इस्तेमाल करके मैं गरीबोंकी सेवा करूँगा।

हर जगह लोगोंने मुझसे कहा है कि कोंकण कंगाल है। अगर ऐसी बात हो तो आपको यह स्थिति असह्य होनी चाहिए। आप कहते है कि आपके यहाँके गरीब आदमी बम्बईमें जाकर रोजी कमाते है। क्या आप जानते है कि इस रोजीकी उन्हें क्या कीमत चुकानी पड़ती है? वहाँ वे बिना हवा और रोशनीकी कुछ वर्गफुटकी कोठरियोंमें रहते है; उन कोठरियोंकी इतनी कम जगहमें कई मर्द और औरतें भरी रहती हैं। वे वहाँ अपने शरीरकी सफाई और शिष्टताका भी ध्यान नही रख पाते। क्या आप वहाँ ऐसी स्थितिमें रहनेके लिए अपनी माँ-बहनोंको भेजनेके लिए तैयार हैं? क्या आप नहीं मानते कि जो स्त्रियाँ वहाँ जाती है, वे आपकी माँ और बहनके समान हैं और जो पुरुष वहाँ जाते है वे आपके भाई है? क्या आप चाहते है कि वे वहाँ जाकर मद्यपान और व्यभिचार सीखें? क्या आप यह सहन करनेके लिए तैयार हैं कि आपके भाई-बहन वहाँ शराबियों और दुराचारियोंका जीवन बितायें और घर लौटनेपर लोगोंमें अपनी वही गन्दी आदतें फैलायें? क्या इतनी बड़ी कीमत चुकाकर आठ आनेकी रोजी कमाना उचित है?

हिन्दुस्तानमें पशु नष्ट होते है क्योंकि हम गोरक्षा करना नहीं जानते। उसी प्रकार हमारे गाँव बरबाद हो रहे है क्योंकि हम सच्चा अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र नही जानते। हमारी इस विनाशकी प्रक्रियाको चरखा रोक सकता है। क्या आप जानते है कि हमारी दैनिक औसत राष्ट्रीय आय क्या है? हमारे अर्थशास्त्री कहते है कि वह डेढ़ आना है। हालाँकि मेरा खयाल है कि औसत आय इतनी कहना भी भ्रामक गलतबयानी है। यदि कोई व्यक्ति किसी नदीकी औसत गहराई चार फुट यह हिसाब लगाकर निकाले कि कहीपर तो वह छः फीट गहरी है और कही दो

और उसी हिसाबसे ही उसे पार करने लगे तो क्या वह डूब नही जायेगा? ठीक इसी तरह यह औसत आँकड़े गलत ढंगसे निकाले हुए है क्योंकि इस डेढ आने रोजमें वाइसरायसे लेकर दूसरे सभी सरकारी अफसरो और लखपतियोंकी कमाईका भी औसत आ जाता है। इसलिए अगर उस कमाईको इसमें से निकाल दें तो सचमुच औसत कमाई तीन पैसे रोजसे अधिक न होगी। और अगर मै इस कमाईमें तीन पैसे रोज भी बढा सकूँ तो फिर क्या मेरा चरखेको कामधेनु कहना उचित नही है? कुछ लोग कहते है कि मुझमें कुछ दैवी शक्तियाँ है, कुछका कहना है कि मुझमें असाधारण चरित्रबल है। भगवान ही जाने कि मैं क्या हूँ। मेरे सत्याग्रहकी उपयोगिताके विषयमें मतभेद रखा जा सकता है। मगर चरखेसे सम्बन्धित इन जाहिरा चीजोके बारेमें मतभेदकी गुंजाइश नही है। अगर आज कोई मुझे समझा दे कि हिन्दुस्तानके करोड़ो लोग गरीब नही है और दिनमें कुछ पैसे भी न कमा सकनेके कारण भूखे मरनेवाले लोगोकी संख्या नगण्य है, तो मैं स्वयं मान लूँगा कि मैं भूल कर रहा हूँ और चरखा तुड़वा डालूँगा।

इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि जब आप कोंकणको एक गरीब प्रान्त कहते है, तब ऐसा कहनेसे आपका अभिप्राय क्या है इसे ध्यानमें रखें। यदि आप लोग वास्तवमें गरीब है, तो चरखेके अतिरिक्त और कोई चीज ऐसी नही है जो आपकी गरीबी दूर कर सके और जिसके द्वारा आपकी स्त्रियोकी मर्यादा रक्षित रह सके। पहले चरखा चलाना शुरू करें, उससे सम्बन्धित जितने भी काम है उन्हे हाथमें ले लें, फिर बाकीकी हर चीज आपको स्वयं मिलती जायेगी। जो वस्तु इतने राष्ट्रीय और सार्वभौम महत्त्वकी है, उसकी आप अवहेलना कैसे कर सकते है? क्या तिलक महाराजके अनुयायियोंको यह शोभा देता है कि वे चरखेकी हँसी उड़ायें या उसको नितान्त अनुपयोगी वस्तु ठहरा कर त्याग दें?

हाँ, आप उस युवककी तरह जो मुझे परेशान करने आया था, यह पूछ सकते है कि यदि लोकमान्यजीको चरखा पसन्द था तो उन्होने देशवासियोंसे चरखा चलानेकी बात क्यो नही कही? मैं इस प्रश्नसे भ्रमित होनेवाला नही हूँ। लोकमान्य ने जब स्वदेशीकी परिभाषा बताई उस समय भले ही उनके दिमागमे खादी रही हो या न रही हो, मगर उनकी स्वदेशीकी परिभाषामें खादीका समावेश हुए बिना नही रह सकता। मैं तो लोकमान्यके मन्त्रका केवल उत्तराधिकारी हूँ और यदि मैं उनकी छोड़ी पैतृक निधिमे वृद्धि न करूँ तो मैं उस योग्य पिताकी योग्य सन्तान नही माना जाऊँगा। मैंने लोकमान्यके सन्देशपर ध्यानपूर्वक विचार किया है, उसमें अपने अनेक वर्षोंके अनुभवसे भी काम लिया है और मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि लोकमान्यके सन्देशका आशय खादी अवश्य था। क्या आप लोगोंको मालूम है कि वे क्या करते थे? मैं आपको उनके देहावसानके कुछ घंटे पूर्वकी एक घटना सुनाता हूँ। जब उनसे मौ० शौकत अलीने खिलाफतके विषयमें उनका मत जानना चाहा तब उन्होंने कहा, "जिसपर गांधी अपनी सही कर देंगे, उसपर मैं भी अपने हस्ताक्षर कर दूँगा, क्योंकि मेरा विश्वास है कि इस बारेमें उनका ज्ञान मेरे ज्ञानसे अधिक है।" इसलिए

यदि स्वदेशीकी बातके संदर्भमें लोकमान्यके ध्यानमें खादीकी बात न रही हो तो भी क्या हुआ? कल्पना कीजिए कि यहाँ भारतमें स्वदेशी चश्मे बनाये जाते है और कोई व्यक्ति यह शंका कर बैठता है कि चूँकि लोकमान्यने हम लोगोंको देशी चश्मे इस्तेमाल करनेकी बात नही कही है इसलिए हम उनका इस्तेमाल नही कर सकते, तो क्या यह उचित होगा? ऐसा मनुष्य वितण्डावादी ही कहा जायेगा। 'गीता' ऐसे लोगोंको 'वेदवादरत' कहती है। जिस प्रकार वेदवादरत मनुष्य 'वेद'के अनन्त अर्थोंको नही समझता, उसी प्रकार यह आदमी भी लोकमान्यके मन्त्रकी अनन्त शक्तिको नहीं समझ पाता।

मगर कुछ लोग कहते हैं कि मुसलमान हिन्दुओंका धर्म परिवर्तन करके और तबलीग करके उन्हें मुसलमान बना रहे है, ऐसी हालतमें भला आपका खादीका सन्देश कौन सुनेगा? मै पूछता हूँ कि क्या आप ऐसे नामर्द बन गये है कि चूँकि आपको कोई इस्लाम धर्म अपनानेको मजबूर करता है इसलिए आप मुसलमान बन जायेंगे। अगर आपका धर्म सच्चा हो तो उसे कोई भ्रष्ट नहीं कर सकता। पर मैं तो खादीकी मार्फत अपने धर्मकी भी रक्षा करना चाहता हूँ। खादीसे हिन्दू स्त्रियोंकी ही नहीं, मुसलमान स्त्रियोंकी भी सेवा होती है, क्योंकि मुसलमान स्त्रियाँ भी चरखा चलाती है। बंगालमें एक मौलवीने कुछ मुसलमान स्त्रियोंको चरखा छोड़ देनेको कहा, क्योंकि खादी आन्दोलन हिन्दुओंका आन्दोलन है। दो दिन तो उन्होंने चरखा बन्द रखा मगर तीसरे दिन वे रुई माँगने आ पहुँची। वे बेचारी करती ही क्या? वे लगातार भूखी नहीं मर सकती थीं और मौलवीके पास उन्हें खानेके लिए देने लायक कुछ नही था। 'महाभारत' के विद्वान लेखक व्यासजीने ऋषि विश्वामित्रके भूखकी मारसे पीड़ित होनेपर अभक्ष्य खाने और चोरी करनेको तत्पर होनेका वर्णन किया है। कोई नही कह सकता कि भूखा आदमी क्या नहीं कर गुजरेगा। इसलिए मैं आपसे कहता हूँ कि अगर आपको स्त्रियोंके धर्मकी रक्षा करनी है और गरीबीको दूर करना है, तो खादी अवश्य अपनाइये।

मुझसे कहा जाता है कि मैं शुद्धि आन्दोलनमें भाग लूँ। मै यह कैसे कर सकता हूँ, जबकि मैं यह चाहता हूँ कि मुसलमानों और ईसाइयोंको भी लोगोंको मुसलमान व ईसाई बनाना बन्द कर देना चाहिए। यह बात कि कोई व्यक्ति अपना धर्म छोड़ कर कोई विशेष धर्म हिन्दू, ईसाई या इस्लामको अपना ले, तभी वह अच्छा बनेगा या मोक्ष पायेगा, समझमें आने लायक बात नहीं है। चरित्रकी पवित्रता और मोक्ष तो हृदयकी शुद्धिपर निर्भर है। इसलिए मैं हिन्दुओंसे कहता हूँ कि तुम्हें जो करना हो वह करो, पर मेरे जैसे व्यक्तिको — जो बहुत अनुभवके बाद किन्ही निष्कर्षोंपर पहुँचनेवाला व्यक्ति हो — वह काम करनेको न कहो, जिसे वह कर ही नही सकता है। आखिरकार मनुष्यकी शक्ति सीमित है। मैं वही कर सकता हूँ जितनी मुझमें शक्ति है, उससे अधिक नही। मैं कोई शतावधानी नहीं, अष्टावधानी भी नहीं। मै तो एक समयमे एक काम भी ठीक-ठीक कर सकूँ तो अपनेको सौभाग्यशाली

मानूँगा। अगर आपको लगे कि चरखा ही सर्वोत्तम संगठनका सम्भाव्य जरिया है तो उसमें आपसे जितनी मदद बन पड़े आप मुझे दें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१३३. विनायक दामोदर सावरकरसे बातचीत[1]

१ मार्च, १९२७

श्रीयुत सावरकरने गांधीजीसे अपना अस्पृश्यता और शुद्धि सम्बन्धी रुख स्पष्ट करनेको कहा। गांधीजीने अपने रुखके सम्बन्धमें कुछ भ्रामक बातोंका स्पष्टीकरण किया और कहा :

हम आज लम्बी बातचीत नहीं कर सकते परन्तु आप जानते ही हैं कि सत्यप्रेमी तथा सत्यके लिए प्राणतक न्योछावर कर सकनेवाले व्यक्तिके रूपमें आपके लिए मेरे मनमें कितना आदर है। इसके अतिरिक्त अन्ततः हम दोनोंका ध्येय भी एक है और मैं चाहूँगा कि उन सभी बातोंके सम्बन्धमें आप मुझसे पत्र-व्यवहार करें जिनमें आपका मुझसे मतभेद है। और दूसरी बातोंके बारेमें भी लिखें। मैं जानता हूँ कि आप रत्नागिरिसे बाहर नहीं जा सकते, इसलिए यदि जरूरी हो तो इन बातोंपर जी भरकर बातचीत करनेके लिए मुझे दो तीन दिनका समय निकालकर आपके पास आकर रहना भी नहीं अखरेगा।[2]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१३४. पत्र : पी० ए० वाडियाको

दौरेपर
महाड
२ मार्च, १९२७

प्रिय मित्र,

श्री मदानके साथ मेरे पत्र-व्यवहारका परिणाम यह रहा। श्री मदानकी युक्ति काफी जोरदार प्रतीत होती है। उनको लिखे अपने पत्रकी नकल मैं आपको भेज रहा हूँ। मैं आपके उत्तरकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा करूँगा। मुझे अब लगता है कि निर्णय कर सकने योग्य पर्याप्त सामग्री मुझे मिल रही है।

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से। वि० दा० सावरकर बीमार थे। गांधीजी रत्नागिरिमें उनके निवास स्थानपर उनसे मिलने गये थे।

२. सावरकरने इसके लिए धन्यवाद देते हुए कहा : "आप स्वतन्त्र हैं और मैं बन्धनमें हूँ। मैं आपको भी अपनी जैसी हालतमें नहीं डालना चाहता। फिर भी मैं आपसे पत्र-व्यवहार अवश्य करूँगा।"

तुरन्त देखनेके लिए अपना कार्यक्रम लिखे दे रहा हूँ।

४ से ५ मार्चतक पूना, द्वारा स्वराज्य कार्यालय, ६, शुक्रवार पेठ

६ से ७ तक अकोला, द्वारा नानाभाई मशरूवाला

८ से १४ तक आश्रम, साबरमती

१५ से १७ तक वारडोली ताल्लुका

१८ से २१ गुरुकुल काँगड़ी (जिला बिजनौर)

२२ से महीनेके अन्ततक कर्नाटकमें और ४ अप्रैलतक भी कर्नाटकमें।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

सहपत्र : १

प्रो० पी० ए० वाडिया

होरमज्द विला

मलावार हिल, बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२९०३) की माइक्रोफिल्मसे।

१३५. रामचन्द्र कोस

इस पत्रके पृष्ठोंमें रामचन्द्र कोसका विज्ञापन देनेके पश्चात् मैं इन कई हफ्तों जानबूझकर इस विषयमें चुप रहा, क्योंकि इस बुद्धिमत्तापूर्ण आविष्कारका विज्ञापन करनेसे पहले कमसे-कम दामोंपर कोसोंके लगातार सुलभ होनेका प्रबन्ध करना जरूरी था। अब मुझे पाठकोंको यह बतलाते हुए बड़ी खुशी होती है कि श्रीयुत रामचन्द्र अय्यरने अपनेको सत्याग्रह आश्रमके सेवार्थ पूर्णरूपसे समर्पित कर दिया है और उन्होंने कोसका पेटेंट अधिकार आश्रमको इस शर्तपर दे दिया है कि उन्हें केवल एक हजार कोसों तककी बिक्रीमें से प्रति कोसका कुछ लाभांश मिले। अब कोस नीचे लिखी शर्तोंपर मिल सकते हैं:

साबरमतीमें कोसका मूल्य :

३० फीट तककी गहराईके लिए	१२५ रु०
३५ ,, ,, ,, ,,	१३२ रु०
४० ,, ,, ,, ,,	१३९ रु०

इस प्रकार हर ५ फीटकी अतिरिक्त गहराईके लिए ७ रु० अधिक लगेंगे। ये दाम ३२ गैलन पानीकी बाल्टीके कोसके हैं। और बड़ी बाल्टियोंके लिए अलग दाम सूचित किये जायेंगे।

(ये दाम बाजारमें बाल्टियोंके दरके मुताबिक घटाये बढ़ाये जा सकते है और इन्हें किसी पूर्व सूचनाके बिना भी घटाया या बढ़ाया जा सकता है।)

उन स्थानीय प्रशासनिक संस्थाओं, जमींदारों, देशी रियासतों, सहकारी समितियोंको जो अपने अधिकार क्षेत्रमें बड़े पैमानेपर कोस शुरू करना चाहती हैं, एक साथ ही ५० या अधिक कोसोंके क्रयके लिए उनके प्रार्थनापत्र भेजनेपर विशेष [रियायती] मूल्य सूचित किया जायेगा। कोसके बंडल एक साथ बाँधने और रेलसे भेजनेके किराये वगैरहमें होनेवाली बचतके अनुसार उनके दामोंमें और भी कमी की जा सकेगी।

कोस मँगाते समय ग्राहक कृपया कुएँकी तहसे लेकर कुएँकी जगत तककी पूरी गहराई लिख भेजें और यह भी बतलायें कि बाल्टी कितनी बड़ी चाहिए।

सभी माँगोंके साथ आधी रकम नकद पेशगी आनी चाहिए। बाकी रकमके लिए सामान वी० पी० से भेजा जायेगा। पेशगी रुपया प्राप्त हो जानेके कोई एक महीने बाद माँगोंके क्रमानुसार कोस भेजा जायेगा।

आश्रमने अपने लिए कोई नफा नही रखा है। केवल लागत दर और माल पहुँचानेका खर्च लिया जाता है। आश्रममें जो कोस अबतक चल रहा है, उससे पूरा-पूरा सन्तोष मिला है और आश्रमके सामने अब यह सवाल है कि [आश्रमके] गैरजरूरी बैलोंका क्या उपयोग किया जाये। एक सचित्र सूची पूरे ब्यौरेके साथ छाप ली गई है। जो सज्जन यह सूची लेना चाहें, आश्रमके व्यवस्थापकको एक आनेका डाक टिकट भेजकर मँगा सकते हैं। जिन लोगोंने इस कोसके बारेमें श्रीयुत रामचन्द्र अय्यरसे या मुझसे पत्र-व्यवहार किया था वे सब लोग ऊपर लिखी शर्तोंपर अपने लिए कोस अब मँगा सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-३-१९२७

१३६. क्या भारत मद्यनिषेधवादी है ?

एक अंग्रेज बहन, जो हिन्दुस्तानमें मद्यनिषेध प्रचारका काम हाथमें लेनेको उत्सुक हैं, लिखती हैं :[1]

मैं जानती हूँ कि सब लोग मुझसे यही कहेंगे कि खुद हिन्दुस्तानियोंने मद्यनिषेधके लिए कोई जबरदस्त ख्वाहिश जाहिर नहीं की है और चूँकि उन्होंने इसके लिए कोई आन्दोलन संगठित नहीं किया है, इसलिए हम लोगोंका इस मामलेमें पहल करना अनुचित हस्तक्षेप करना होगा और फिर सारी कौंसिलोंमें से भी केवल एक या दो ने ही मद्यनिषेधके पक्षमें अपनेको घोषित किया है। लोग अभीसे ही मुझसे ये बातें कह रहे हैं। मैं बराबर ही उन्हें असहयोग आन्दोलनकी याद दिलाती हूँ, जब स्वयंसेवकोंने शराबकी दुकानोंपर धरना दिया था।

१. कुमारी म्यूरियल लेस्टर; देखिए "पत्र : म्यूरिल लेस्टरको", १७-३-१९२७।

मगर जब वे कहते हैं कि वह तो पाँच साल पहलेकी बात है, उसके बाद तो उन्होंने कोई खास उत्साह नहीं दिखलाया है तो इसका क्या जवाब दिया जाये?

यह बहन मुझसे जो समस्या हल कराना चाहती है, वह कोई नई समस्या नही है। जो व्यक्ति हिन्दुस्तानमें पूर्ण मद्यनिषेधके आन्दोलनका इतिहास नही जानता, उसके मनमें यह सवाल उठेगा ही। और हमारे यहाँ आनेवाले परदेशीके मनमें यह प्रश्न उठे बिना नहीं रह सकता कि "अगर हिन्दुस्तान पूर्ण मद्यनिषेध चाहता है तो फिर जैसे वह और कितनी ही चीजोंके लिए आन्दोलन करता है, वैसे मद्यनिषेधके लिए क्यों नही करता?" यह देखनेमें आया है कि जब लोग अपनेको नितान्त बेबस महसूस करते हैं तब आन्दोलनमें नही पड़ते। यह हमारी बेबसी ही है जो हम कोई आन्दोलन नही करते, सिवाय इसके कि कुछ मद्यनिषेध सभाएँ प्रस्ताव पास कर देती हैं और कभी-कभी विधानसभाओंमें हम प्रार्थनापत्र भेज देते हैं। अपने कल्याणके अत्यन्त महत्त्वके विषयोमें हमारी बढती हुई बेबसीके एहसासके फलस्वरूप ही स्वराज्यकी पुकार शुरू हुई थी। सैनिक खर्चको लीजिए। सभी महसूस करते हैं कि यह उस धनका, जिसकी वसूली भूखे रहनेवाले करोड़ों लोगोंसे की जाती है, घोर अपराधयुक्त अपव्यय है। हम लोग सैनिक खर्चमें कमी करानेके बजाय स्वराज्यके लिए आन्दोलन करते हैं, क्योंकि स्वराज्यके बिना कुछ हो ही नही सकता। कौन कह सकता है कि इस तर्कमें बहुत कुछ सच्चाई नही है? १९२० में जब हमने अनुभव किया कि हमें स्वराज्य मिलने ही वाला है, हम कानूनके विधाता बन बैठे; शराबकी दुकानो और भट्ठियोंपर हमने सफलतापूर्वक धरना दिया और सरकार अपनी आबकारी आमदनी तत्काल कम होते देखकर डर गई। मदिरा-विक्रेताओंके दिल काँप उठे और हमें एक क्षणके लिए ऐसा मालूम हुआ कि शराबकी कुप्रथा समाप्त हो गई है। दुर्भाग्यसे अहिंसावादी दल पूरी तौरसे जनताको काबूमें नही रख पाया और हिंसा फूट पड़ी। यह पता चला कि धरना देनेवाले लोगोंने हिंसाकी धमकी या हिंसाका सहारा लिए बिना शराबबन्दी रोकनेसे सम्बन्धित हिदायतोंका हर जगह पालन नही किया था। इसलिए धरना रोक देना पड़ा।

पर १९२०-२१ का इतिहास स्पष्ट रूपसे यह प्रकट करता है कि अगर हिन्दुस्तानके पास ताकत होती, तो वह क्या करता या जब उसने अपनेको ताकतवर समझा, तब उसने क्या किया। इसके अलावा यह भी याद रखना चाहिए कि हिन्दुस्तानके करोड़ों निवासी अपने मजहबके कारण या आदतन मादक द्रव्योंसे पूरा परहेज करते हैं। इसलिए ये करोड़ों लोग शराबका परम हानिकर व्यापार चालू रखनेमें दिलचस्पी नही रख सकते। इसलिए यह जो कहा जाता है कि हिन्दुस्तानमें पूर्ण मद्यनिषेधके लिए कोई आन्दोलन नही है, उसके बारेमें यह जवाब दिया जा सकता है कि आन्दोलनके अभावका कारण यह नही है कि लोगोंमें पूर्ण मद्यनिषेध करानेकी इच्छाका अभाव है, बल्कि इसका कारण यह है कि वे जानते हैं कि वे असहाय हैं। दूसरा कारण यह है कि वे पूरी तरहसे जानते हैं कि यह आन्दोलन स्वराज्य प्राप्तिके बड़े आन्दोलनका एक अंग है।

खुद यही बात कि किसी अंग्रेजको शराबकी चुंगीसे होनेवाली आमदनीका इसलिए समर्थन करना पड़े कि हमारे बीच उसकी पूर्ण बन्दीका कोई आन्दोलन नही है, स्वराज्य प्राप्तिकी अनिवार्यताके पक्षमें एक बहुत जबर्दस्त दलील बन जाती है। क्योंकि जिन क्षेत्रोंमें यह धारणा ईमानदारीके साथ बनाई गई है कि यहाँ मद्यनिषेधका आन्दोलन नही है तो उससे केवल यही प्रकट होता है कि उन क्षेत्रोंके लोगोंको भारतकी मौजूदा परिस्थितियोंका जरा भी ज्ञान नही है। मलेरिया ज्वर या बीसो दूसरी बीमारियोंके विरुद्ध भी तो जनताकी ओरसे कोई आन्दोलन नही किया जा रहा है। तो क्या यह बात इन बीमारियोंको समूल नष्ट करनेके उपाय न करनेकी कोई दलील हो सकती है? एक जानी-मानी बुराईको दूर करनेके लिए तुरन्त उपाय करनेके लिए किसी आन्दोलनकी जरूरत नही होनी चाहिए। कई दृष्टियोसे तो शराब और विषैली दवाइयोंकी हानिकर पद्धति मलेरिया या उस जैसी दूसरी बीमारियोसे कही ज्यादा बुरी है; क्योकि मलेरियासे तो केवल शरीरको ही हानि पहुँचती है परन्तु शराब वगैरह तो शरीर तथा आत्मा दोनोको खोखला कर डालती है। शराबसे आमदनी करना, सैनिक खर्च लादना और अपने लंकाशायरके कपड़ोके जरिये भारतको शोषित करना इन्ही तीन तरीकोसे ब्रिटिश शासनने भारतपर ज्यादती की है। जब अंग्रेज लोगोके दिलमें यह बात बैठ जायेगी कि गरीब हिन्दुस्तानी मजदूरोंकी शराबकी आदतपर तिजारत करना पाप है, हिन्दुस्तानकी धरतीपर इग्लैंड या अन्य विदेशोंके कपड़ेको पाटना गुनाह है जबकि यहाँके भूखों मरनेवाले लाखों आदमी सहज ही अपनी जरूरतका काफी कपड़ा अपने खाली वक्तमें बना सकते हैं, और जब उनको यह बात सूझ जायेगी कि हिन्दुस्तानके ऊपर इतना लम्बा-चौड़ा सैनिक खर्च लादना, जो जाहिरा तौरपर तो हिन्दुस्तानकी सीमाओकी रक्षाके लिए बताया जाता है परन्तु वास्तवमें जो भारतीयोंको उनकी इच्छाके विरुद्ध गुलाम बनाये रखनेके लिए है, तब उनके हृदय-परिवर्तनका पूरा-पूरा सबूत मिल जायेगा और पूरी बराबरीके दर्जेपर भारतीयोका अंग्रेजोंके साथ पारस्परिक सहयोगका होना सचमुचमें सम्भव हो जायेगा। इसलिए एकमात्र आन्दोलन जिसे हिन्दुस्तान कर सकता है वह है उस शासन प्रणालीका ही अन्त करना, जो ऐसी बुराइयोको होने और चलने देती है। दूसरे शब्दोंमें कह सकते हैं कि स्वराज्यका आन्दोलन ही इन सभी बुराइयोको दूर करनेका आन्दोलन है। मेरे खयालसे इन बुराइयोके दूर करनेका काम अंग्रेजोके लिए उनकी भारतके प्रति नेकनीयती साबित करनेकी खरी कसौटी है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-३-१९२७

१३७. पुरातन बोध वचन

एक मित्रने, जिनका परिचय मैं पहले ही इन स्तम्भोंके पाठकोंसे करा चुका हूँ, बोध-वचन भेजे हैं :

वह जो अपूर्ण है, पूर्ण हो जाता है।
जो वक्र है, वह सरल हो जाता है।
जो खाली है, वह भर जाता है।
जो जर्जर है, वह नूतन हो जाता है।
जो संग्रही है, उसे न्यून प्राप्त होता है।
जो लुटाता है, उसे बहुत मिलता है।
इसीलिए आत्मसंयमी मनुष्य एकताका सूत्र पकड़ता है और मनुष्योंके सम्मुख उस एकताकी अभिव्यक्ति करता है।
वह स्वयं अपनेको नहीं निरखता, इसलिए उसे साफ दिखाई देता है।
वह अपना कोई आग्रह नहीं रखता, इसलिए दीप्तिमान बनता है।
वह डींगें नहीं हाँकता, इसलिए उसमें योग्यता होती है।
वह कीर्ति नहीं खोजता, इसलिए चिरस्थायी होता है।
सबका स्वामी स्वयं कोई प्रयत्न नहीं करता, फिर भी संसारमें कोई उससे होड़ नहीं कर सकता।
पूर्वजोंने निरर्थक वचन नहीं कहे।
"वह जो अपूर्ण है, पूर्ण हो जाता है।"

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३-३-१९२७

१३८. सहकारसे खादीक्रय

श्रीयुत के० ए० नैयर इस प्रकार लिखते हैं[1]:

खादी प्रेमियोंसे मैं इस बुद्धिमत्तापूर्ण उपायको अपनानेकी सिफारिश करता हूँ। इस उपायके द्वारा कोई भी व्यक्ति तुरन्त दाम चुकाये बिना खादी खरीद सकता है। मगर इस सहकारी संस्थाके, जैसा कि इसे कहा जा सकता है, उस बदनसीब

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्रलेखक अखिल भारतीय चरखा संघके सदस्य थे, उन्होंने पर्ची निकाल कर पुरस्कार देनेकी एक समिति गठित की थी जिसके १२ सदस्य थे। योजना यह थी कि वे साल-भरतक प्रतिमास २ रुपये देंगे और जीतनेवालेको २४ रुपये नकद देनेके बजाय प्रत्येक मास खादी भण्डारसे इतने रुपयेकी उसकी मनपसन्द खादी दी जायेगी।

सदस्यको जिसका नाम बारहवें महीने लाटरीमें निकलता है, सिवाय इसके कि वह सस्तेमें खादी खरीदना सीख जाता है और कोई लाभ नही मिलता। समिति उसका 'सेविंग्स बैंक' बनी रहेगी और वह सालके अन्तमें बिना किसी असुविधाके अपने पूरे चौबीस रुपयोकी खादी एक बारमें ही ले सकेगा। अगर यह प्रबन्ध १ सालसे कुछ और अवधिके लिए बढाया जा सके, और थोड़ा परिवर्तन करनेपर ऐसा किया जा सकता है, तो सबको एक-सा लाभ मिलेगा। मगर शायद इस योजनाका आकर्षण ही लाभकी अनिश्चितता और बहुत छोटी-सी हानि होनेमें ही है। इस योजनाकी सफलता सदस्योंकी ईमानदारीपर ही पूर्णतया निर्भर है, क्योंकि जिस सदस्यने २४ रुपयेका अपना कपड़ा पा लिया है वह अगर अपना हिस्सा देना बन्द कर देता है, तो दूसरे लोग घाटेमें रहेंगे। इसलिए अगर इस योजनाको बिना खर्चके और फिर भी सफलताके साथ चलाना है, तो इसके सदस्योंकी संख्या जरूर ही कम रखनी होगी और संस्थामें केवल उन्ही लोगोको लेना होगा जो दूसरेको जानते हो, और शायद एक ही दफ्तर या सस्थामें काम करते हो, जिससे किसीकी मृत्यु या बेईमानीके कारण होनेवाला खतरा कमसे-कम हो। मै आशा करता हूँ कि श्रीयुत नैयर और उनके मित्रोने जो उदाहरण प्रस्तुत किया है उसका अनुकरण और लोग भी करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ३-३-१९२७

१३९. भाषण : वैश्य विद्याश्रम, सासविनमें[1]

[३ मार्च, १९२७][2]

न केवल मेरे वरन् गरीबोके प्रति प्रेमके द्योतक इन उपहारोंको[3] पानेके लिये मै तैयार न था और फिर ये उपहार जिस रूपमें दिये गये हैं उससे मुझे बहुतही ज्यादा खुशी हुई है। ६ रुपये ३[4] आनेका यह दान मुझे स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दके उस पवित्र दानकी याद दिलाता है जो दक्षिण आफ्रिकामें किए गए मेरे कामके लिए मुझे उनसे मिला था और जो उन ब्रह्मचारियों द्वारा प्रेमवश किये गये परिश्रमका सूचक था। मेरे लिए इस दानकी कीमत लाखों रुपयोसे भी बढकर है। और इसीलिए इस कोषका सही उपयोग करनेके सम्बन्धमें मेरा दायित्व और भी बढ़ जाता है। आपका सूत भी अपने वजनके सोनेके बराबर कीमत रखता है। आखिरकार सोनेका मूल्य उसके लिए किये

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

२. यंग इंडिया, १०-३-१९२७ में छपी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

३. विद्याश्रमके वैश्य बालकोंने गांधीजीको १,६०,००० गज हाथ कता सूत, हाथसे बुने कपडेका एक टुकड़ा, वैश्य जातिकी ओरसे ५०१ रुपये तथा आसपासके गांवोंसे संग्रहीत १९० रुपये भेंट किये थे।

४. एक सप्ताहतक घी, चीनी, दूध तथा गेहूँ न लेनेके फलस्वरूप देशबन्धु स्मारक कोषके लिए एकत्र धनराशि।

गये श्रमका मूल्य ही तो है। क्या आपकी मेहनत किसी प्रकार कम है। वह तो और भी पवित्र है, क्योंकि यह सारा काम त्यागकी भावनासे प्रेरित होकर किया गया है।

उसके बाद गांधीजीने वैश्य होनेके नाते वैश्य बालकोंको यह सलाह दी:

जब ब्रह्मचर्य रूपी कवच और ढाल तुम्हारे पास हो तो तुम्हें जीवनके किसी भी क्षेत्रमें प्रवेश करते समय कोई कठिनाई नही होनी चाहिए। यदि तुम अपने स्वभाव-सिद्ध कर्म अर्थात् कृषि, गोरक्षा और वाणिज्यको ठीक ढंगसे अपनाओगे तो तुम अपनी जाति और देश दोनों ही की सेवा करोगे। पर इस बातका ध्यान रखना कि इस पेशेको अपनानेका अर्थ वैसा शोषण ही न हो जैसा कि इस समय हो रहा है। यदि तुम लोभयुक्त वाणिज्यके अनिष्टकारी स्वरूपको मिटाना चाहते हो तो वाणिज्यको चरखेके आसपास केन्द्रित करना होगा। दूसरोंका शोषण करने वाले इस पृथ्वीपर बहुत है। यदि हम भी उनका अनुकरण करना चाहते है तो हमें शोषण करने योग्य लोगोंकी तलाश पृथ्वी छोड़ दूसरे ग्रहोंमें करनी पड़ेगी। खादी ही एक मात्र ऐसा हितकर राष्ट्रीय धन्धा है जिसे हम सब अपना सकते हैं। मेरा आपसे यही अनुरोध है कि वैश्य होनेके नाते आप उसके प्रति उदासीन न हो।

फूल मालाएँ थीं... लेकिन गांधीजीने उन्हें नीलाम नहीं किया और न चन्दा देनेकी अपील ही की। उन्होंने कहा:

मैं यहाँ कामकाजी दृष्टिसे नही आया था। लेकिन आप लोगोंने मुझे जरूरतसे ज्यादा दे दिया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१४०. पत्र: मगनलाल गांधीको[1]

[४ मार्च, १९२७ से पूर्व][2]

... इसके सिवा एक तकली और उसका डिब्बा चाहिए; वर-वधूको देना है। तकली तो मणिलाल नही चलाता, इसलिए सुशीलाको ही देनी है। मणिलालसे पूछ लेना। वह चलाये तो उसे भी दूंगा, तुम दो भेजना। जब मणिलाल आये तब ये चीजें अपने साथ लेता आये।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आचार्य जुगलकिशोरकी देखभाल करना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६५) से।

सौजन्य: राधाबहन चौधरी

१. पत्रका केवल अंतिम भाग ही उपलब्ध है।

२. मणिलाल अपने विवाहके लिए ४-३-१९२७ को अकोला रवाना होनेवाले थे।

१४१. भाषण : वैश्य विद्याश्रमकी व्यायामशालामें[1]

[४ मार्च, १९२७]

प्रातःकाल गांधीजीने व्यायामशालामें हनुमानजीकी मूर्तिके प्रतिष्ठापन सम्बन्धी उत्सवका उद्घाटन किया। उन्होंने कहा:

मैं मरुतसुत हनुमानजीकी मूर्तिका प्रतिष्ठापन यहाँ केवल इसीलिए नहीं कर रहा हूँ कि वे बल और पराक्रममें बहुत बढ़े-चढ़े थे। बल और पराक्रम तो रावणमें भी था। मारुतिमें आत्मबल प्रधान था। उनका शरीरबल तो उनके आत्मबलका ही द्योतक था, और आत्मबल, उनके नैष्ठिक ब्रह्मचर्य तथा रामजीके प्रति उनके अनन्य प्रेमका सीधा प्रतिफल था। उस ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि वह आप सबमें हनुमानके अद्वितीय पराक्रमका जो आपके ब्रह्मचर्य व्रत पालनसे आ सकता है, प्रादुर्भाव हो और ईश्वर करे आपका वह पराक्रम देशसेवाके लिए अर्पित हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१४२. भाषण : पूनामें[2]

[४ मार्च, १९२७][3]

गांधीजीने अपना महाराष्ट्रका दौरा समाप्त करते हुए रे मार्केटमें एक सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। उन्होंने कहा:

हनुमानने अपनी छाती चीरकर दिखला दिया था कि उसमें रामनामके सिवा और कुछ नहीं है। मुझमें अपना हृदय चीरकर दिखानेकी हनुमान जैसी शक्ति नहीं है, मगर आपमेंसे कोई देखना ही चाहे तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपको उसमें सिवा रामके प्रेमके और कुछ नहीं मिलेगा। मुझे उस रामका साक्षात् दर्शन हिन्दुस्तानके करोड़ों भूखे लोगोंमें होता है।

गांधीजीने लगभग आधी रातके समय छात्रोंकी सभामें [भाषण दिया]। ...छात्रोंकी ओरसे 'अंग्रेजी' 'अंग्रेजी' की पुकार सुननेमें आई। उन्हें इससे बहुत दुःख हुआ; किन्तु उन्होंने छात्रोंके प्रति अगाध प्रेमके कारण अंग्रेजीमें बोलना स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा:

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
२. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
३. बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-३-१९२७ से।

यदि मैं अपनी बात पूनाके विद्यार्थियोंको न समझा सकूँ तो यह मेरा दुर्भाग्य है, मेरे देशका दुर्भाग्य है और आपका भी दुर्भाग्य है।

मगर उन्होंने छात्रोंके अंग्रेजीमें बोलनेके आग्रहको इतना ही माना कि सभामें देरसे आनेके लिए खेद अंग्रेजीमें व्यक्त किया। पीछे यह देखकर कि लोग उनका भाषण ध्यानसे सुनने लगे हैं, वे हिन्दीमें बोले। उन्होंने कहा:

सम्भव है अंग्रेजीमें अपनी बात कहनेसे मुझे आपसे कुछ अधिक मिल जाता और हो सकता है आप मेरी बात अधिक अच्छी तरह समझ पाते। मगर मैं अपने सन्देशको, स्वयं अपनेसे और अभिव्यक्तिके साधनसे भी कहीं अधिक ऊँचा मानता हूँ। इसकी खास अपनी एक निराली ताकत है और मैं आशा करता हूँ कि हिन्दुस्तानके नौजवानोंपर इसका असर पड़ेगा। मेरे जीते जी इसका असर पड़े या न पड़े— इसकी मुझे कोई परवाह नहीं। मगर मेरा विश्वास अटल है, और ज्यों-ज्यों दिन बीतते जायेंगे और जनताके कष्टोंकी अवधि बढ़ती जायेगी, यह सन्देश हरएक देशभक्त भारतीयके हृदयमें देदीप्यमान होता जायेगा। आपको समझ लेना होगा कि इस उम्रमें, जबकि मुझे जिन्दगी-भर मेहनत करनेके बाद आराम करना चाहिए था, मैं देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक बिना मतलब यों ही चक्कर नहीं काट रहा हूँ। इसका कारण यह है कि मेरे मनमें यह विश्वास अधिकाधिक दृढ़ होता जा रहा है कि मैं मरते दमतक ज्यादासे-ज्यादा, जितने लोगोंतक यह सन्देश पहुँचा सकूँ, पहुँचानेका प्रयत्न करूँ।

इसके बाद उन्होंने चरखा आन्दोलनका संक्षिप्त विवरण दिया। उन्होंने बताया कि उन्होंने उसकी कल्पना काफी पहले १९०८ में जब उन्होंने वास्तवमें चरखा देखा भी नहीं था, तभी कर ली थी। गांधीजीने विद्यार्थियोंका ध्यान उन लोगोंके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करनेकी ओर दिलाया जिनके नैतिक और आर्थिक विनाशके मूल्यपर वे शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। उन्होंने कहा:

आप चाहें तो यह शिक्षा प्राप्त करते रहें, मगर कमसे-कम उन्हें इसका कोई उपयुक्त बदला तो दें। मैं जानता हूँ कि आपने खादीको नहीं अपनाया है। इसका कारण यह नहीं है कि आपकी मनोवृत्ति उलटी है, बल्कि आपको इसका यकीन नहीं कि गरीबी और बेकारी, जिसके औचित्यके बारेमें मैं पुकार-पुकार कर कह रहा हूँ, कोई भयंकर समस्या है। श्याम देशके राजाको लॉर्ड कर्जनकी इस बातपर विश्वास नहीं हुआ था कि वे ऐसे देशसे आए हैं, जहाँ वर्षमें कुछ महीने नदियोंमें पानी जमा रहता है। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि हमारे देशमें ३० करोड़ आदमियोंको दिनमें एक वक्तका भी खाना भर-पेट नहीं मिलता; यह स्थिति मैंने अपनी आँखोंसे देखी है।

भाषणका शेष अंश ब्रह्मचर्यसे सम्बन्धित था। यह ऐसा विषय है कि जब भी गांधीजी विद्यार्थियोंके मध्य होते हैं उनकी जबानपर आ ही जाता है। उन्होंने ब्रह्मचर्यके महत्त्वको समझाते हुए कहा:

ब्रह्मचर्यका पालन जितना मुश्किल मालूम होता है, उतना ही सहज है। ब्रह्मचर्य आत्माका सहज गुण है और आपकी आत्माएँ मरी नहीं हैं, बल्कि सुषुप्त हैं। उन्हें जगा-भर लेना है। उन्हें जगाना इसलिए कठिन मालूम होता है कि हम नास्तिक हो गये हैं। आपके मनमें ज्यों ही श्रद्धा आयेगी, यह बिलकुल सहज बन जायेगा, क्योंकि परमात्माकी कृपा श्रद्धासे ही मिलती है। तब ब्रह्मचर्य पालन प्रयत्न-साध्य एवं कष्ट-साध्य नहीं रह जाता बल्कि उससे शान्ति एवं आनन्दकी प्राप्ति होती है। यह सब-कुछ इसलिए कह रहा हूँ कि मुझे इसके आनन्दका अनुभव हो चुका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१४३. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

रविवार [६ मार्च, १९२७][1]

प्रिय सतीश बाबू,

किशोरलाल मशरूवालाकी भतीजीसे मणिलालका विवाह सम्पन्न करने मैं एक दिनके लिए अकोला आया हूँ। मैं आज रातको आश्रमके लिए रवाना हो जाऊँगा। आशा है आपका स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा होगा।

आपने जो ५०,००० रुपये माँगे हैं उसमें से जितने भेजे जा सकते हैं, भेजनेका प्रबन्ध किया जा रहा है। फेरीवालोंको कमीशन देना सम्भव नहीं है। नियमोके अनुसार कमीशन लोगोंको मात्र निर्वाहके लिए दिया जाता है। पेशेवर फेरीवालोके लिए इस नियममें यदि हम थोड़ीसी भी ढिलाई करते हैं तो हमारी नाकमें दम हो जायेगा। नियम बनाये ही इस प्रकार गये हैं कि लोगोको फेरीका धन्धा आजीविकाके रूपमें अपनानेके लिए प्रोत्साहित किया जा सके।

मुझे आशा है कि अब आप सब लोग खतरेसे बाहर निकल आये होंगे।

तारिणीका क्या हाल है?

मैं ८ से १४ मार्चतक आश्रममें और उसके बाद १५ से १७ तक बारडोली, १९ से २१ तक गुरुकुल काँगड़ी, जिला बिजनौरमें रहूँगा। फिर वहाँसे कर्नाटक जाऊँगा। कर्नाटकमें पता बेलगाँवका ही ठीक रहेगा, हालाँकि मैं वहाँ इधर-उधर दौरे पर ही रहूँगा।

आप सबको स्नेह,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६३१) की फोटो-नकलसे।

१. मणिलालके विवाहके उल्लेखसे।

१४४. पत्र : मीराबहनको

७ मार्च, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्र मिले।

अभी सुबह-सवेरा ही समझो। मैं, बा, मणिलालकी पत्नी सुशीला, मणिलाल, रामदास, महादेव और पंडितजीके साथ भुसावलमें एक तीसरे दर्जेके डिब्बेमें बैठा हूँ। ये सब लोग विवाह-संस्कार कराने आये थे। विवाह बहुत ही सादगीसे किया गया। उसमें कोई भेंट नही ली गई और कोई खर्च नही किया गया।

एक दिन और मिल जाये, इस खयालसे मैंने अपने मौनवारको यात्रा करनेका निश्चय किया है। मैं तीसरे दर्जेमें यात्रा इसलिए कर रहा हूँ कि मणिलाल और उसकी बहूके लिए दूसरे दर्जेका किराया खर्च नही किया जाना चाहिए, और मैं नही चाहता कि परिवारके नये सदस्यसे परिवारमें शरीक होनेके पहले ही दिन जुदा हो जाऊँ। चूँकि मैं आगे आश्रममें आरामसे लगभग छः दिन रह सकता हूँ और तीसरे दर्जेका यह सफर बड़े आरामका है, मुझे कोई परेशानी नही लग रही है; बल्कि इसमें मुझे आनन्द आ रहा है।

आश्रम पहुँचनेपर मैं 'आत्मकथा' में तुमने जो संशोधन किए हैं उन्हें पढ़ूँगा। मैंने पहले ही समझ लिया था कि जिन अध्यायोंको तुमने पहले नही देखा है, उनमें तुम बहुत संशोधन करोगी।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०८) से।
सौजन्य : मीराबहन

१४५. पत्र: हरिइच्छा तथा अन्य लोगोंको

सोमवार [७ मार्च, १९२७][1]

चि० हरिइच्छा, चन्दन, तारा, वसन्त,

तुम्हारे पत्र मिले। तुम लोगोंको रोज लिखनेका विचार करता हूँ, लेकिन समय कहाँसे लाऊँ? किन्तु 'नवजीवन' तो मेरी ओरसे तुम सबको लिखा एक पत्र ही है। तुम्हें इससे ही सन्तोष करना होगा। यह पत्र भी आश्रम जाते हुए ट्रेनमें लिख रहा हूँ।

तुम्हे राजकोट जाना तो था ही; लेकिन तुम्हारा जाना मुझे अच्छा नही लगा। तुम यदि आश्रममें रह सकती तो बहुत अच्छा होता। अब वहाँ पढने आदिके बारेमें क्या करती हो सो लिखना।

मणिबहनने मुझे लिखा था कि चि० प्रभाने कातना शुरू किया है। यदि वह नियमपूर्वक काते-पीजे और खादी पहने तो बहुत अच्छा है।

वापस आना कब होगा? मैं आश्रममें १४ तारीखतक रहूँगा। मुझे तुम सभी बहनें पत्र लिखना। अक्षर साफ और बड़े, और स्याहीसे लिखना।

कब उठती हो, क्या पढती हो, घूमनेके लिए जाती हो या नहीं आदि सब लिखना। वसन्त क्या अब भी थक जाती है? आश्रमकी अपेक्षा तो वहाँ उसकी तबीयत ज्यादा अच्छी रहती होगी।

आश्रममें तुमने जो-कुछ अच्छी बात सीखी है उसे कभी न भूलना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४९०५) से।
सौजन्य: हरिइच्छा देसाई

१. गांधीजी ७ मार्च, १९२७ को अकोलासे अहमदाबाद गये थे, देखिए पिछला शीर्षक भी।

१४६. पर्ची : मणिलाल गांधीको[1]

[७ मार्च, १९२७][2]

अब तुम्हारा विवाह करा दिया; तुम दोनोंकी जान-पहचान भी करवा दी है। अब अपना घर तो तुम्हें ही चलाना पड़ेगा। सुशीलाके पास जाकर बैठो। उसके पास क्या-क्या कपड़े हैं इसकी जानकारी करो, उसकी इच्छाको जानो और बादमें जो चीजें बनवानी हों उन्हें नोट कर लो। इस तरह झिझक निकल जायेगी और एक काम भी हो जायेगा। या चाहो तो कुछ और बात कर सकते हो। या जहाँ तुम हो वहाँ सुशीलाको बुलवाकर अन्य लोगोंको वहाँसे . . .[3] विदा करा दूँ।

गुजराती (जी० एन० ४७१८) से।

१४७. अस्पृश्यता, स्त्रियाँ और स्वराज्य

श्रीमती सुहासिनी देवीका पत्र[4] मैं खुशीसे छाप रहा हूँ पाठक उसे किसी अन्य स्तम्भमें प्रकाशित पायेंगे। यद्यपि कांग्रेसके प्रतिभावान सभापति[5] अपना बचाव करनेमें स्वयं समर्थ हैं, परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि मुझे पत्र लिखनेवाली इस बहनने अपने थोड़ेसे अनुभवके ही आधारपर जरूरतसे ज्यादा सामान्यानुमान निकाल लिये हैं। अस्पृश्यता निवारणके आन्दोलनकी महान प्रगति सिद्ध करनेके लिए किन्हीं आँकड़ोंकी जरूरत नहीं है। अस्पृश्यताकी दीवार हर जगह ढह रही है। हर सूबेमें ऊँचे वर्गोंके लोग दलित जातिके बच्चोंके लिए स्कूल-छात्रावास आदि चलाकर उस रूपमें दलित जातिके लोगोंकी आवश्यकताएँ पूरी करते हुए मिल सकते हैं। लगता है कि यही चीज सभापति महोदयके मनमें थी, जब अपने भाषणमें उन्होंने इसका जिक्र किया था। खैर जो-कुछ अभीतक हो सका है, उससे असंख्य गुना ज्यादा करना अभी बाकी है।

स्त्रियोंके पूर्वाग्रहको दूर करनेका सवाल सबसे कठिन काम है। वस्तुतः यह स्त्री-शिक्षाका सवाल है। और इस विषयमें यह सवाल केवल लड़कियोंकी ही शिक्षाका नही है बल्कि विवाहित स्त्रियोंकी शिक्षाका भी है। इसलिए मैंने बार-बार यह बात

१. गांधीजीने इसे मौनवारको लिखा था।

२. लगता है कि यह पर्ची मणिलालके विवाहके दूसरे दिन ७ मार्च, १९२७ को लिखी गई होगी।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

४. इस पत्रमें लेखिकाने इस बातकी शिकायत की थी कि अस्पृश्यता निवारणके विषयमें कोई ठोस कदम उस हदतक नहीं उठाया जा रहा है जिस हदतक कांग्रेसके प्रस्ताव तलब कर रहे हैं।

५. एस० श्रीनिवास आयंगार।

सुझाई है कि हरएक देशभक्त पतिको अपनी पत्नीका शिक्षक खुद बन जाना चाहिए और उसे अपने समाजकी कम खुशनसीब बहनोंमें काम करने योग्य बनाना चाहिए। मैंने लोगोंका ध्यान अपनी इस सलाहके फलितार्थोंकी ओर खींचा है। उनमेंसे एक तो यह कि पति पत्नीको केवल भोगविलासकी सामग्री समझना छोड दें और राष्ट्र-निर्माणके काममें उनको अपना साझेदार समझें। सीताके बिना हमें राम नही मिल सकते। और सीताने वनवासमें, कठिन परीक्षाके वर्षोंमें, रामकी स्नेहमयी देखभालमें सच्ची शिक्षा पाई। तो हम सब लोग अपने ही देशमें निर्वासितसे है और हमें अपनी शक्ति-भर अवसर अनुसार राम और सीताका ही अनुकरण करना चाहिए। इस विषयमें मैं श्रीमती सुहासिनी देवीका ध्यान इस सच्चाईकी ओर दिलाये बिना नही रह सकता कि श्रीयुत आयंगारने अस्पृश्यताका बन्धन न केवल खुद ही तोड़ा है बल्कि अपने इस कार्यमें, जिसे दस वर्ष पूर्व, शायद वे खुद असम्भव समझते थे, अपने साथ अपनी पत्नी और परिवारवालोको भी लेकर चले है।

सहभोजको अस्पृश्यताके सवालसे बिलकुल अलग ही रखना होगा। खानपानके मामलेमें परहेज बरतनेकी बात सारे हिन्दू समाजमें घर किये है। अस्पृश्यताके सवालसे इसे मिलानेका अर्थ होगा अछूतोद्धारके आन्दोलनकी गति रोकना। और इस आन्दोलनका उद्देश्य तथाकथित अछूतोंके लिए उन सामाजिक सेवाओंको दूसरोंके समान ही और उन्हीकी शर्तोंपर पानेके अधिकारमें लगाई पाबन्दियाँ हटाना है।

स्वराज्यके विषयमें भी कुछ भ्रान्ति फैली हुई है। स्वराज शब्दके अनेक अर्थ है। जब श्रीयुत आयंगार कहते है कि अस्पृश्यता निवारणसे स्वराज्यका कोई सम्बन्ध नही है तो मैं समझता हूँ कि इससे उनका मतलब यह है कि अस्पृश्यताका बना रहना संवैधानिक स्थिति बेहतर बनानेमें बाधक नही हो सकता। दुहरे शासनसे अथवा विधानसभाओंको अधिक तथा प्रभावशाली अधिकार देने जैसी संवैधानिक बातोंसे तो निश्चय ही अस्पृश्यता निवारणका कुछ वास्ता नहीं है। अस्पृश्यता एक सामाजिक प्रश्न है, जिसे हिन्दुओंको ही हल करना है। यह प्रश्न हिन्दुओं और उनके साथ-साथ, मुसलमानो और पारसियोंको सैनिक खर्चपर नियन्त्रण रखने, या विनिमयकी दर ठीक करने या पूर्ण मद्यनिषेध करने, या स्वदेशी उद्योगोंकी रक्षाके सम्बन्धमें विदेशी मालपर रोक लगानेवाली महसूल निर्धारित करनेकी शक्तिपर क्यों अंकुश लगायेगा? सच्चा व संगठित स्वराज्य तो एक अलग ही प्रश्न है। आम तौरपर लोगोंके दिलोंमें स्वराज्यके साथ जैसी स्वतन्त्रताकी बात है, न वह केवल अछूतोद्धार और भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोंमें हृदयोंकी एकताको बढ़ावा दिये बिना ही अप्राप्य है बल्कि और भी उन अनेक सामाजिक दोषोंको दूर किये बिना अप्राप्य है, जिनको आसानीसे गिनाया जा सकता है। इस व्यापक शब्द स्वराज्यसे हमारा मतलब आन्तरिक विकासकी यही प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहनी चाहिए। और जबतक पूर्वग्रह, मनोविकार और अन्धविश्वासकी दीवारें इस विकासके भव्य वृक्षको घेरे रहती हैं, उसे बढने नही देतीं, तबतक वह स्वराज्य नही मिल सकता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-३-१९२७

१४८. प्रवर्तक तरुण बंगाल संघ और खादी

फिलहाल इस समय बंगालके जैसा पीड़ित दूसरा प्रान्त नही है। इसके कुछ अच्छेसे-अच्छे नवयुवक जेलोंमें पड़े सड़ रहे है और उन्हें इसका कारण भी मालूम नही। कांग्रेसियोमें भी फूट है। देशवन्धुके वाद वंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी किसीको अपना एकमात्र नेता स्वीकार नही कर पाई है। इसमें ताज्जुवकी कोई वात नही है। देशवन्धु जैसे तो केवल वे ही हो सकते थे।

मगर इस सवके होते हुए भी वंगालमें रचनात्मक कार्य लगभग निरन्तर चल रहा है। इस काममें लगे हुए निःस्वार्थ भावसे सेवा करनेवाले नवयुवकोंकी संख्या दिन-दिन वढ़ती ही जा रही है। श्रीयुत मोतीलाल रायके नेतृत्वमें बंगालका प्रवर्तक संघ, जिसका प्रधान कार्यालय चन्द्रनगरमें है, खादी तैयार करने और बेचनेका अपना काम वरावर वढ़ाता जा रहा है। मगर अवतक संघमें खादीका काम एक पूरक काम ही रहा है — उसके कई वड़े-वड़े कामोंमें से यह भी एक छोटासा काम है। मगर अव मोतीवावूने खादीके कामको अपने संघका मुख्य कार्य वनानेका दृढ़ निश्चय कर लिया है। उनसे मैंने खुद इसके वारेमें वहुत देरतक वात की थी और उन्होने कहा था कि उनके दिलमें यह धारणा वलात् घर करती जा रही है कि चरखेको केन्द्र विन्दु वनाये विना जनसमूहकी सच्ची सेवा कर पाना असम्भव है। सर्वश्री वैंकर और लक्ष्मीदास मेरे वाद चन्द्रनगर गये। और उन्होंने मुझे कुतुवदियामें चरखेके प्रति संघके उत्साहका और उसके [खादी] कार्यका वहुत ही रोचक वर्णन भेजा है। उन्होंने मुझे यह भी वतलाया कि कताई और धुनाईके काममें हो रहे नएसे-नए सुधारोंको सीखनेके लिए मोतीवावू कितने उत्कंठित हैं। यह संघ अपेक्षाकृत एक पुरानी संस्था है। इसकी मूल प्रेरणा पांडिचेरीके तपस्वीसे मिली है और वंगालमें इसके कितने ही निःस्वार्थ और श्रद्धालु कार्यकर्त्ता हैं।

मेरे सामने उनके जनवरी मासकी खादीके जो आँकड़े हैं उन्हें देखनेसे पता चलता है कि इस महीनेमें उन्होंने ७०० रु० से ऊपरकी खादी वनाई और ३४०० रु० से अधिककी विक्री की। अगर यह संघ खादीका उत्पादन करनेमें अपनी शक्ति केन्द्रित कर सके तो वह वहुत जल्दी ही खादी प्रतिष्ठान और अभय आश्रमकी, उनके कार्यमें वाधा डाले विना, वरावरी करने लगेगा। क्योंकि अगर हरएक नया संघ अपने लिए नया क्षेत्र ढूँढ़ ले और उसीमें काम करता रहे तो फिर खादीके उत्पादन और विक्री दोनों हीके लिए प्रायः असीम क्षेत्र है। वंगाल जैसे विशाल प्रान्तकी माँगें पूरी करना किसी एक संस्थाके लिए असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १०-३-१९२७

१४९. कार्यकर्त्ता चाहिए

ग्राम सगठन तथा ग्रामोंमें किये जानेवाले कामके सम्बन्धमें गैर-जिम्मेदाराना बात-चीत सुनाई देती है। ग्राम-सगठनकी कागजी योजनाएँ भी देशके समक्ष जब-तब पेश की जाती हैं। वे योजनाएँ कभी-कभी तो खूब सुन्दर ढंगसे छपी हुई होती हैं, परन्तु लिखी प्रायः लापरवाहीसे होती हैं। पूछनेपर उनके लेखक साफ-साफ स्वीकार कर लेते है कि उन्होंने अपनी योजनाओंका प्रयोग नहीं किया है, उनके पास यथेष्ट साधन और समय नही है अथवा उसकी तरफ उनका रुझान ही नहीं है। मगर वे समझते हैं कि उनके मनमें जो भी बात सूझे उसे देशके सामने रखना उनका कर्त्तव्य है, चाहे वह कितनी ही अधकचरी या अव्यावहारिक क्यों न हो। जब उनकी योजनाएँ शुरू नही की जाती तो कुछ लेखक तो बिगड़ भी उठते हैं। मगर एक ऐसी योजना है, जो देशके सामने कई सालसे प्रस्तुत है, उसके प्रणेताओंने पहले ही एक-एक करके उस पर अमल स्वयं कर लिया और बादमें सबने मिलकर उसे किया, और अब वह योजना बराबर उन्नति करते चली जानेवाली सस्था अ० भा० चरखा संघके जरिये काममें लाई जा रही है। अगर ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता मिलें तो चरखेका कार्यक्रम जो अन्य कार्यक्रमोंकी अपेक्षा अधिक सफल हुआ है, बेहद आगे बढ़ाया जा सकता है।

महाराष्ट्रके दौरेमें मुझे ऐसे गाँवोंमें ले जाया गया जहाँ प्रायः बराबर अकालकी स्थिति ही बनी रहती है और जहाँ लोगोंके पास न तो काफी काम है और न खानेको पर्याप्त अन्न। कुछ गाँवोंके निवासी तो सालमें ६ या ८ महीनोतक अपने-अपने गाँव छोड़कर चले ही जाते हैं। ये लोग बम्बई जा पहुँचते हैं और अस्वास्थ्य-कर, एवं कभी-कभी अनैतिक परिस्थितियोंमें काम करते हैं। फिर बरसातमें वे अपने साथ भ्रष्टाचार, शराबखोरी और रोग लेकर गाँव लौटते हैं। अगर ठीक ढंगसे ऐसे कार्यकर्त्ता, जिनके दिलोंमें अटूट धैर्य और अटल श्रद्धा हो, चरखेका सन्देश लेकर इन गाँवोंमें जायें तो इन गाँववालोंमें से एकको भी कही बाहर जानेकी जरूरत न पड़े। क्योंकि चरखेके इस कार्यक्रममें हमें सिर्फ कतैयोंको मिलनेवाली मजदूरी नहीं, बल्कि चरखेके कार्यक्रमके साथ-साथ जो एक पुनर्निर्माण कार्य होगा उस सबको ही ध्यानमें रखना होगा। गाँवके जुलाहे, रगरेज, धोबी, लोहार, बढ़ई तथा अन्य बहुतसे लोग भी फिर अपने प्राचीन गौरवपूर्ण धन्धोंमें जुट जायेंगे, जैसा कि हमने जहाँ-कही भी चरखेकी जड़ जम गई है, होते देखा है।

तब फिर ग्रामीण कार्यकर्त्ता कौन बन सकता है? अपने कामके लिए हर कार्य-कर्त्ताको चरखा शास्त्रका शास्त्रीय और व्यावहारिक — दोनों प्रकारका पूरा ज्ञान होना चाहिए। इसलिए उसे कपासकी किस्मोंकी जानकारी होनी चाहिए; उसे हाथ-कताईके योग्य कपास चुननेका तरीका मालूम होना चाहिए, क्योंकि मिलोंके लिए तो कपास किसी तरह भी चुन ली जा सकती है परन्तु हाथ-कताईके लिए यह ठीक नहीं है। अगर हाथ-कताईके लिए कपास उचित रीतिसे चुनी जाये तो बहुत ज्यादा

मेहनत बच जायेगी और सूत भी मजबूत निकलेगा। कार्यकर्त्ताको ओटनेकी क्रिया भी जान लेनी चाहिए और भारतके गाँवोंमें प्रयुक्त होनेवाली भिन्न-भिन्न प्रकारकी ओटाई चर्खियोंकी भी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। उसे धुननेका काम जानना चाहिए और आजकल काममें आनेवाली भिन्न-भिन्न प्रकारकी धुनकियोंसे परिचित हो जाना चाहिए। उसे कपासके अलग-अलग जातिके रेशे पहचानने और निर्दिष्ट अंकका सूत कातनेका अभ्यास होना चाहिए। सूतकी मजबूती, उसकी एकसारता और अंक बता सकनेकी योग्यता होनी चाहिए। उसे खराब और अच्छे चरखेकी परख होनी चाहिए और टूटे-फूटे चरखोंकी मरम्मत करनी आनी चाहिए। उसे टेढ़े तकुएको सीधा करना आना चाहिए। अगर उसे अपने गाँवमें आदर्श जीवन बिताना है तो उसे नागरिक स्वच्छताके नियम जानने होंगे और गाँवके लोगोंके सामने सफाईका पदार्थ-पाठ रखना होगा। रोजमर्राकी बीमारियोंका घरेलू इलाज भी उसे आना चाहिए। साधारण बहीखाता अथवा हिसाब रखनेकी विधिका सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लेना होगा। यदि गाँववालोंकी निगाहमें उसे ऊँचा रहना है और उनका विश्वास प्राप्त करना है, तो सबसे प्रमुख बात यह है कि उसे शुद्ध और पवित्र जीवन बिताना होगा। गाँव के कार्यकर्त्ताको स्वभावतः सादे और मितव्ययितापूर्ण जीवनमें आनन्द मिलेगा। कोई यह न समझे कि मैंने गाँवके कार्यकर्त्ताका जैसा चित्रण किया है वैसी सभी अपेक्षाओंको पूरा कर पाना असम्भव है। मैंने असम्भाव्य अपेक्षाएँ नही की हैं। व्यावहारिक शिक्षा, जो जाहिरा इतनी कठिन मालूम होती है, धैर्यवान विद्यार्थीके लिए जरा भी कठिन नही है। उपरोक्त कामोंमें से हरएक काममें चरित्र की शुद्धताका होना तो मानी हुई बात है ही। और कोई भी गाँवका कार्यकर्त्ता यदि स्वच्छताके साधारण नियमोंको नही जानता और अपनी हदतक स्वयं उन नियमोंका पालन नही करता है तथा मामूली रोगोंका घरेलू इलाज करना नहीं जानता, तो वह किसी-न-किसी रोगके चंगुलमें फँसे बिना नही रह सकता। ऊपर दी हुई इस सादी-सी कसौटीमें खरे उतरनेवाले चाहे जितने कार्यकर्त्ताओंके लिए चरखा खादी संगठनमें जगह है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १०-३-१९२७

१५०. दक्षिण आफ्रिकी समझौता

मैं यह अंश उनकी सहज विशिष्टताके कारण नही, बल्कि यह दिखानेके लिए छाप रहा हूँ कि दक्षिण आफ्रिकाका विचारशील निवासी समझौतेके बारेमें क्या विचार[1] रखता है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १०-३-१९२७

१. उक्त विचार यहाँ उद्धृत नहीं किये जा रहे हैं।

१५१. बर्मा और श्रीलंका

एक पत्रलेखक जिनकी अध्ययनशीलता उनके पत्रसे ही टपकती है इस प्रकार लिखते हैं :

नीचेके कुछ सवालात आपको शायद केवल बहसकी खातिर ही किये गये मालूम होंगे मगर 'यंग इंडिया', १०-२-१९२७ के अंकमें आपके उत्तर[1] सहित प्रकाशित आपके संवाददाताके पत्रमें जो भारत और बर्माका नाम लिया गया है, और उस पत्रमें जो हिन्दुस्तानी भाषाको हमारी अन्तःप्रान्तीय भाषा माननेपर एतराज किया है (अपने उत्तरमें आपने तो फिर भी बर्माका नाम नहीं दिया है) उसके प्रकाशनसे मुझे आपसे ये सवाल पूछनेका मौका मिल जाता है, जिन्हें मैं बहुत दिनोंसे पूछना चाह रहा था।

१. क्या आप विश्वास करते हैं कि भावी स्वराज्यमें बर्मा हिन्दुस्तानका साथी समुचित रूपसे बन सकता है या आप समझते हैं कि बर्माको एक अलग ही राष्ट्र होना चाहिए? (चूँकि इस सवालपर खुद बर्मा निवासियोंमें ही मतभेद है, इसलिए शायद आपका विचार उनका और हिन्दुस्तानियों दोनोंका ही मार्गदर्शन कर सके।)

२. क्या देशके पिछले कई दौरोंमें आप कभी बर्मा गये हैं? अगर नहीं गये तो क्या भविष्यमें बर्मा जानेका इरादा रखते हैं और कब जानेका विचार है?

३. क्या आप इसे ठीक नहीं मानते कि लंकाको हमारे भावी स्वराज्यमें भारतीय संघ सरकारके साथ रहना चाहिए, क्योंकि हिन्दुस्तान और बर्माके सम्बन्धोंकी बनिस्बत हिन्दुस्तान और लंकाके जातीय, भाषा-सम्बन्धी और धार्मिक सम्बन्ध अधिक करीबी हैं — लेकिन यह ध्यान जरूर रहे कि लंकानिवासी संघमें रहनेको राजी हों (और उनका राजी होना बहुत सम्भव जान पड़ता है)।

४. क्या आप समझते हैं कि बर्मामें हिन्दुस्तानी भाषाका कोई अच्छा खासा प्रचार है हालाँकि कई सालसे (१९०८से) बर्मा एक कांग्रेसी प्रान्त रहा है। या यह कि बर्मा-निवासियोंको हिन्दुस्तानी स्वीकार्य होगी?

५ लंका और लंका-निवासियोंके विषयमें आपका इसी प्रश्नपर क्या विचार है?

शायद मेरे जैसे आदमीके लिए, जो न तो खुद कभी बर्मा या लंका गया है, और न ही जो वहांसे कोई निजी सम्बन्ध रखनेका दावा कर सकता है, ऐसे

१. देखिए "राष्ट्रभाषा", १०-२-१९२७।

सवाल पूछनेसे, आपको आश्चर्य हो सकता है, मगर इन सवालोंमें मेरी रुचि बतौर एक विश्वप्रेमीके है। मैं आपको भी वैसा ही विश्वप्रेमी मानता हूँ। पर मैं आशा करता हूँ कि अपनी सुविधाके अनुसार आप शीघ्रसे-शीघ्र इन सवालोंका जवाब देंगे, खासतौरपर इसलिए कि मैं जानता हूँ बहुतसे बर्मी या लंकावासी और उसी प्रकार हिन्दुस्तानी भी इस प्रश्नमें बहुत दिलचस्पी रखते हैं और आपकी राय जाननेको उत्सुक हैं।

मैं बर्मा गया हूँ और इस देशको काफी अच्छी तरह जानता हूँ और पत्रलेखकके प्रश्नोंका उत्तर भरोसेके साथ दे सकता हूँ। लंकाके विषयमें मैं वही बात नही कह सकता। इच्छा होते हुए भी अभी मैं वहाँ नहीं जा सका हूँ। मेरे मनमें इस बात पर कोई शक नही है कि बर्मा स्वराज्यमें हिन्दुस्तानका एक हिस्सा नही बन सकता। ब्रिटिश भारत एक कृत्रिम शब्दावली है, जो हमें अपने ऊपर विदेशी यानी ब्रिटिश आधिपत्यकी याद दिलाती रहती है और हमें गुलाम बनाये रखनेवालोंकी इच्छापर ही हमारी सरहदोंका विस्तार अथवा संकोचन किया जाता है। भारत तो एक पूर्ण सुसंगठित इकाई होगा, जिसमें वे ही रहेंगे जो उसके स्वतन्त्र नागरिक बनकर रहना चाहेंगे। इसलिए स्वतंत्र भारतकी अपनी भौगोलिक, जातीय और सांस्कृतिक सीमाएँ होंगी। अतएव स्वतन्त्र भारत जाति और संस्कृतिमें भिन्नता स्वीकार करेगा और वह जहाँ बर्मियोंकी ओर मित्रता और सहायताका हाथ बढायेगा, वहाँ उनके पूर्ण स्वातन्त्र्यके अधिकारको मान्यता भी देगा तथा स्वतन्त्रता प्राप्त करने और बनाये रखनेमें अपनी शक्ति-भर उसे सहायता भी देगा। इसलिए अब यह कहना बेकार ही है कि मेरी योजनामें बर्मियोंको हिन्दी या हिन्दुस्तानी सीखनेका कोई आह्वान नहीं है। जो लोग हिन्दुस्तानकी सच्ची सरहदके भीतर हैं, उनसे मैं आशा करता हूँ कि वे हिन्दुस्तानी सीख लें, क्योंकि वे एक ही देशके बच्चे हैं, एक समान संस्कृतिके उत्तराधिकारी हैं, कई और हितों और समान विचारों द्वारा आपसमें बंधे हैं और उनकी प्रान्तीय भाषाओंमें बहुत-से शब्द एक दूसरेसे मिलते-जुलते हैं।

श्रीलंकाके विषयमें मैं इतने ही विश्वाससे नहीं बोल सकता। यद्यपि लंकाकी और हमारी संस्कृति एक है, और वहाँके अधिकांश निवासी दक्षिण भारतके हैं, तो भी लंकाका अपना एक अलग ही अस्तित्व है और चूँकि मेरी कल्पनाके हिन्दुस्तानको साम्राज्यकी अभिलाषा नहीं है, मैं उसे बिलकुल अलग एक स्वतन्त्र देश देखकर ही सन्तुष्ट रहूँगा, लेकिन अगर खुद लंकानिवासी ही बिलकुल स्पष्ट शब्दोंमें हिन्दुस्तानमें मिलनेकी इच्छा प्रकट करें, तो मुझे लंकाको स्वतन्त्र भारतका एक अंग बना लेनेमें संकोच नहीं होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १०-३-१९२७

१५२. पत्र : ममा डी० सरैयाको

शनिवार, फाल्गुन सुदी ९ [१२ मार्च, १९२७][1]

चि० ममा[2],

तुम्हारी तवीयतके कुछ खराब होनेका समाचार सुनकर दुःख हुआ। लेकिन तुम्हें अब पूज्य गंगा बहनकी सेवाकी अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। उनका चित्त परमार्थमें लगा हुआ है; उन्हें अपनेको उसीमें अर्पित करनेकी सुविधा देना तुम्हारा धर्म है। मैं चाहता हूँ कि तुम उन्हें ज्ञानपूर्वक और प्रसन्न मनसे मुक्त कर दो।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१८) से।
सौजन्य : पुरुषोत्तम डी० सरैया

१५३. एक सन्देश

साबरमती
१३ मार्च, १९२७

सत्य ही ईश्वर है। और सत्यको पानेका मार्ग अहिंसा है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इम्मोर्टल महात्मा

१५४. बाँचो, विचारो और रोओ

निम्न लेखका[3] यह शीर्षक मैंने जान-बूझकर दिया है। लेखपर लेखकका नाम नहीं है, लेकिन 'ढेढका गुरु' गली-गलीमें तो नहीं मिल सकता। इस कारण 'ढेढ़ोंके' इस अभिमानी 'गुरु' ने अपना नाम गुप्त रखनेका ढोंग करके हमसे मानो व्यजना-पूर्वक यही कहा है कि ढेढ़ोंके सेवक भले कई हों; लेकिन 'ढेढका गुरु' तो एक ठक्कर बापा ही है। लेख लम्बा जरूर है; परन्तु इस कारण पाठक ऊबें नहीं।

१. ममाकी मृत्यु १९२७ में हुई थी।

२. गंगाबहन वैद्यकी पुत्री।

३. लेख यहाँ नहीं दिया जा रहा है। यह 'ढेढ़ोंका गुरु' इस उपनामसे लिखा गया था और इसमें गुजरातके गाँवोंके अस्पृश्योंकी दुरवस्थाओंकी चर्चा की गई थी।

यदि पाठकोंको हरिजनोंसे जरा भी सहानुभूति होगी तो वे इसे पढ़ना आरम्भ करनेके बाद समाप्त किये बिना छोड़ ही न सकेंगे। इस लेखकी प्रत्येक पंक्तिसे दलितोंके प्रति लेखकका प्रेम टपकता है। यदि हम उनके इस प्रेमकी कुछ बूंदें भी ग्रहण करके अपने हृदयको आर्द्र होने देंगे तो दलितोंका तथा हमारा दोनोंका ही दुःख दूर हो जायेगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १३-३-१९२७

१५५. पत्र : मीराबहनको

[१४ मार्च, १९२७][1]

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे सब पत्र मिल गये हैं। आश्रमवासकी मेरी थोड़ी-सी अवधिका यह अन्तिम दिन है। हम जल्दी ही मिलेंगे, इसलिए तुम्हें लम्बा स्नेह-पत्र लिखनेकी कोई जरूरत नहीं है। तुम्हें अपनी खोई हुई सेहत फिर हासिल कर लेनी चाहिए। तुम्हें वहाँ बहुत कटु अनुभव हुए हैं और तुम हिन्दीमें बहुत कम प्रगति कर सकी हो, इसके बावजूद मुझे तुम्हारे वहाँ जानेका दुःख नहीं है।

मेरा १९ तारीखसे पहले वहाँ[2] पहुँचना असम्भव है, क्योंकि मैं एक दलित वर्ग सम्मेलनसे १७ तारीखको ही निवृत्त हो सकूँगा। अगर मैं सम्मेलनकी तारीखें बदल सकता, तो आश्रममें खुशीसे एक दिन कम ठहरता। मगर उसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती थी। अब मैंने सुझाया है कि अगर हरिद्वारके लोगोंको खादी प्रदर्शनीका उद्घाटन करानेके लिये कोई दूसरा व्यक्ति न मिले तो वे उसका उद्घाटन वा या महादेवसे करा लें।

मुझे पूरी उम्मीद है कि कलकत्तेसे चरखा आ गया होगा।

क्या मैंने तुम्हें बताया कि मेरा वजन ५ पौंड और बढ़ गया है? जिस दिन मैं यहाँ पहुँचा, उस दिन मेरा वजन लगभग १०८ पौंड था। यह बहुत अच्छी बात है। आज शामको मेरा वजन फिर लिया जायेगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२०९) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. बापूज लैटर्स टु मीरासे।
२. गुरुकुल काँगड़ी।

१५६. पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

दुबारा नही पढा

१४ मार्च, १९२७

प्रिय क्षितीश बाबू,

मुझे कितनी खुशी हुई है। आपके निर्णयका हार्दिक अनुमोदन करते हुए आपको आज तार भेजा है। परन्तु आपको अपने स्वास्थ्यका ध्यान अवश्य रखना है और सोदपुरमें नालियों आदिका ठीक-ठीक प्रबन्ध करके उसे स्वास्थ्यप्रद जगह बनाना है। कृपया मुझे पत्र लिखते रहियेगा। क्या आपने मीराबाईको गुरुकुल काँगड़ी, बिजनौरके पतेपर एक सफरी चरखा भेज दिया है? मैंने बहुत दिन हुए उसके लिए लिखा था। यदि अभीतक न भेजा हो तो अब वी० पी० पी० द्वारा तुरन्त भेज दीजिये।

मेरा कार्यक्रम इस प्रकार है:

१९-२१ तक गुरुकुल काँगड़ी, जिला बिजनौर

२३ लेबर्नम रोड, गामदेवी, बम्बई

२५-२६ कोल्हापुर

२७-४ अप्रैल कर्नाटक, मुख्य मुकाम बेलगाँव

५-१२ मद्रास

१२-२७ मैसूर राज्य

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ८०३१) की फोटो-नकलसे।

१५७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

[१४ मार्च, १९२७ या उसके पश्चात्][1]

प्रिय सतीश बाबू,

क्षितीश बाबूके निर्णयसे कितनी खुशी हुई है। मैंने उन्हें अपने अनुमोदनका तार भेज दिया है और सोदपुरमें बीमार न पड़नेकी चेतावनी भी दे दी है।

मुझे खुशी है कि तारिणीकी तबीयत सुधर रही है।

हेमप्रभादेवी और बच्चेकी तबीयत कैसी है? मुझे चैन उसी दिन आयेगा जिस दिन आप सचमुच यह लिख सकेंगे कि अब आप सब ठीक हैं।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

मैं कमीशनके बारेमें पता लगाऊँगा।

आप सबको सस्नेह,

हृदयसे आपका,
बापू

[कार्यक्रम][1]

अंग्रेजी (जी० एन० १६३२) की फोटो-नकलसे।

१५८. पत्र : मीराबहनको

१५ मार्च, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्र मिले। शायद कल एक और मिले। देखता हूँ कि सेठी भी तुम्हें निराश करता रहा है।

पत्र यह सूचित करनेके लिए लिख रहा हूँ कि श्रीमती राय जो पत्र चाहती हैं, सो तुम उन्हें भेज दो। उनका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। तुम उन्हें जानती हो। वे एक दिनके लिए आश्रम आई थी। वे सुप्रसिद्ध डा० रायकी पत्नी तथा एक विख्यात संस्कृत विद्वानकी पुत्री हैं। वे स्वयं भी संस्कृतकी विदुषी हैं। बाकी सब तुम्हें उनके पत्रसे पता चल ही जायेगा। सीधे उन्हें ही पत्र लिख देना। यदि चाहो तो जबतक हम मिल नही लेते, तबतक रुक भी सकती हो।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१०) से।
सौजन्य : मीराबहन

१५९. पत्र : जी० ए० नटेसनको

१५ मार्च, १९२७

प्रिय मित्र,

मद्रासमें रहते हुए यात्राके दौरान आपका अतिथि बननेमें मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी। परन्तु मैंने अपने आपको राजगोपालाचारीके हाथों सौंप दिया है। आप उनसे बात करके जो प्रबन्ध करना चाहें, कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० २२३५) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

१६०. पत्र : मगनलाल गांधीको

मंगलवार [१५ मार्च, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

यह मैं जंगलसे लिख रहा हूँ। मुझे तीन घंटोंकी जरूरत थी; इसलिए उतनी देरके लिए मौन रखा है। इसके साथका पत्र पढ़ना तथा तकलीके बदलेमें उसे कताई-वाला निबन्ध तो भेज ही देना। तकुआ वहाँ आ गया है; कृष्णदास जानता है। उस विषयमें उसे विवरण भेजना। यदि तकुआ अच्छा हो तो हम ले लें और उसे उसकी उचित कीमत दें। यदि अच्छा न हो तो हमें उसे खरीदना नहीं चाहिए, लेकिन उसके दोष बताने चाहिए और मार्गदर्शन करना चाहिए। वह आदमी अच्छा है। यदि तुम्हें ऐसे पत्र भेजना उचित न हो तो मुझे लिखना। तुम्हारे ऊपर कामका जो बोझ है उसे देखकर मुझे डर लगता है। इसलिए जिस कामसे तुम्हें बचाया जा सकता हो, उस कामसे मैं तुम्हें बचाना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६०) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१६१. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

मढ़ी
[१५ मार्च, १९२७][2]

भाई हरिभाउ,

तुमारा खत मीला है। तुमारी शारीरिक स्थितिके हालतो मुझको मीलते हिं रहते हैं। अब छूट गये। अच्छा हुआ। यदि शक्ति पूरी न आ जाय तो भरतपुर जाना मोकुफ करना वही अच्छा है।

घनश्यामदासजीका खत उनकी निखालसताका सूचक है। इसके साथ रखता हूं।

जानकीबहनकी तबियत अब कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४२) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. यह पत्र मगनलाल गांधीको १६-३-१९२७को प्राप्त हुआ था।
२. गांधीजी इस तारीखको मढ़ी, माण्डवी ताल्लुका, जिला सूरतमें थे। देखिए अगला शीर्षक।

१६२. भाषण: माण्डवी ताल्लुकेमें

१५ मार्च, १९२७

जबसे मैंने इस ताल्लुकेमें प्रवेश किया है तभीसे मेरे मनमें तरह-तरहके विचार उठते रहे हैं। आपसे परिहास करके मैं अपने दुःखको भूल जाता हूँ किन्तु इस तरह परिहासका सहारा लेना भी तो मेरे दुःखकी ही निशानी है। एक दिन था जबकि सूरत जिलेपर न केवल पूरे गुजरातको बल्कि हिन्दुस्तान-भरको अभिमान था, तथा स्वराज्यके आन्दोलनमें आर्थिक सहायता, सिपाहगरी, शिक्षा और हरिजन-सेवाकी दृष्टिसे सूरत जिलेका हिस्सा सबसे अधिक माना जाता था। दोनों जिलोके बीच आपसमें मधुर स्पर्द्धा चला करती थी, जिसमें बारडोलीने तो गजब ही ढा दिया था। उस मधुर प्रतिस्पर्द्धाकी याद आती ही रहती है। बारडोली दुनिया-भरमें प्रसिद्ध हो गया था। कहाँ तो वे दिन थे और कहाँ आजका दिन? यदि हम आज बारडोली जायें तो इनीगिनी सफेद टोपियाँ और [उनमें भी] अन्त्यज इने गिने नजर आते हैं। ऐसी स्थितिमें सरभणकी करुण कहानी याद आती है और ऐसा लगने लगता है कि स्वराज्य कैसे मिलेगा? उस वृक्षके नीचे हमने प्रतिज्ञा ली थी, अड़तालीस व्यक्तियोंने ईश्वरको साक्षी मानकर वचन दिया था तथा उनके वचनपर विश्वासकर मैंने वाइसरायको नोटिस दिया था — इन सब बातोंको कही भुलाया जा सकता है? और अब मुझे यहाँ इस आश्रमके उद्घाटनके लिए आना पड़ा है। इससे हमें यही सीखना है कि हमें हार नही माननी है, मृत्यु-पर्यन्त अपनी श्रद्धा नही खोनी है और अपना कदम पीछे नहीं हटाना है। इसीमें इस आश्रमकी स्थापनाका रहस्य छिपा हुआ है। गुजरात प्रान्तीय कमेटीसे पैसा लेकर हमने यह आश्रम खड़ा किया, यह कोई गर्वकी बात नही है। यदि आप चाहते हैं कि यहाँ आश्रमकी स्थापना हो तो आपको पैसे देनेमें हिचक होनी ही नहीं चाहिए। आप तो पैसोंकी व्यवस्था करके मुझसे कार्यकर्त्ताओंकी माँग करें। प्रान्तीय कमेटीसे पैसे लेकर काम करना, यह तो दुर्व्यवस्था अथवा कुव्यवस्था है। मनुष्य यदि मस्तिष्कके रक्तके बलपर ही अपना काम चलाना चाहे तो उसका काम नही चलेगा उसे तो अपने पूरे शरीरके रक्तपर निर्भर रहना चाहिए। प्रान्तीय कमेटी हमारा मस्तिष्क होनेके बजाय हमारे पैर बन गई है और हम अब उसके बलपर घिसट रहे हैं। यह तो शोचनीय अवस्था है।

अन्य स्थानोंपर जब मैं राष्ट्रीय शालाओं तथा हरिजनोंको देखता हूँ तो मुझे गुजरातकी याद आ जाती है। ऐसा लगता है कि कही गुजरात इस स्पर्द्धासे हट तो नही गया। परन्तु मैं ठहरा आशावादी, घोर निराशामें भी आशाकी अमर किरणोंका दर्शन करनेवाला हूँ। ऐसी ही आशाकी एक किरण यह लूला-लँगड़ा आश्रम है, क्योंकि इसको चलानेवाले श्रद्धावान कार्यकर्त्ता मौजूद हैं। मेरी कामना है कि दिनोदिन यह

आश्रम उन्नति करे तथा बारडोली और सूरत जो आज हतोत्साह और बेहाल हैं पुनः तेजस्वी बनें तथा गुजरात और देशको तेजस्वी बनायें।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २०-३-१९२७

१६३. पत्र : मगनलाल गांधीको

[१६ मार्च, १९२७ से पूर्व][1]

चि० मगनलाल,

काकासाहबने एक प्रश्न उठाया है। [उनका कहना है,] कामकाज सम्बन्धी कागजात कार्य समितिको देखनेको मिलने चाहिए, जिससे कि वह मेरे विचारोंसे अवगत हो सके। यह उचित है। इसलिए मैं अबसे कामकाज सम्बन्धी पत्र अलगसे लिखा करूँगा, जिससे सब कोई उन्हें पढ सकें। इस बार भी मैंने तुममें पहले जैसी ही अनुदारता देखी है। चूँकि तुम स्वयं इससे अवगत नहीं हो इसलिए यह अनिवार्य है, यह मैं मानता हूँ। उसे दूर करना; प्रयत्न करनेसे वह दूर होगी। शालाकी समितिमें तुम्हें भाग लेना ही चाहिए। यदि तुम शिक्षण समितिमें शामिल होना चाहते हो तो वैसा कर सकते हो। मानापमानका खयाल न करना। विशेष तुम्हारा पत्र आनेपर। रामचन्द्रके क्रोधका निराकरण करना। लिफ्ट-सम्बन्धी कठिनाइयोंको ज्यादा अच्छी तरहसे समझना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६१) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१६४. भाषण : वेड़छीकी रानीपरज परिषदमें[2]

१६ मार्च, १९२७

आभार प्रदर्शनकी, विनयकी भाषाका क्या उपयोग है? यदि सम्भव हो तब तो मैं अपना सारा समय दलित जातियोंके बीचमें ही बिताऊँ। जन्मसे मैं वैश्य हूँ और जबसे मैंने आपको जाना है तबसे सुनता आ रहा हूँ कि 'कालीपरज' काली

१. मगनलाल द्वारा दी गई प्राप्तिकी तारीखके आधारपर।

२. भाषण आरम्भ करनेके पहले गांधीजीने कहा था, जिन्होंने खादी पहननेकी प्रतिज्ञा की है, अपने हाथ उठायें। सबने हाथ उठा दिये। फिर कहा, जिन्होंने शराब न छूनेकी प्रतिज्ञा की है, अपने हाथ उठायें। सबने हाथ उठा दिये। उन्होंने फिर कहा कि जिन्होंने अपनी प्रतिज्ञाएँ निभाई हैं, अपने हाथ उठायें; इसपर भी सबने हाथ उठाये और अन्तमें उन्होंने कहा कि अब वे अपने हाथ उठायें जिन्होंने अपनी प्रतिज्ञाएँ तोड़ी हैं — इसपर एक भी हाथ ऊपर नहीं उठा।

है। बनियों और पारसियोंके कारण ही तो उन्हें यह [तिरस्कार सूचक] नाम मिला है। लेकिन व्यवसायकी दृष्टिसे पारसी भी बनिये ही हैं। उन्होंने अपनी वणिक्-बुद्धि और व्यापारके बलपर ही संसार भरमें नाम कमाया है। मैं जानता हूँ कि वणिक्के बिना संसार नहीं चल सकता, पर यह तो शामल भट्ट द्वारा वर्णित सच्चे वणिक्के बिना। लेकिन आज तो ऐसे अनेक वणिक् हैं जो सदा एक रुपयेके दो बनानेके विचारमें लीन रहते हैं और पैसेके लिए स्त्री, माता, पिता और आत्माको बेचनेके लिए भी तैयार हो जाते हैं। मेरा मन चाहता है कि उनसे दूर भागकर मैं आपके बीच आकर रहने लगूँ। नहीं रहता तो केवल इस मोहके कारण कि शायद बाहर रहकर मैं थोड़ी बहुत सेवा कर सकता हूँ, अपनी शक्तिका उपयोग कर सकता हूँ। परन्तु मैं नहीं रहता तो भी मुझे इतना आश्वासन तो है ही कि मेरे साथी आपके बीच रहते हैं।

कौन काला है, कौन गोरा है? हम सभी एक ही स्याहीके बने चित्र हैं। परमात्माकी एक ही कलम है। ईश्वर अलग-अलग कलम लेकर नहीं लिखता। जंगलमें सिंह और सिंहनी रहते हैं। आप भाई-बहन भी उनकी तरह बनें, जिससे कोई आपको लूट न सके, कोई सता न सके, कोई अपवित्र न कर सके? 'रानीपरज' यानी जंगलवासी। जंगलमें वही घूम सकता है जो ऋषि हो या लुटेरा हो; या फिर सिंहादि हिंसक पशु घूम सकते हैं। आप न हिंसक पशु हैं न लुटेरे। तो आपको ऋषि बनना है। शहरोंकी दुर्गन्धपूर्ण नालियों, शराबकी दुकानों, सूरतके भोजन-प्रिय निवासियोंकी तीव्र गन्धवाली साग-सब्जियों और सेव-भजियासे आप दूर हैं और दूर ही रहें। आप सचमुच जंगलवासी बनें तो मेरे जैसे दुबले, निर्बल आपके पास रक्षण माँगने आयेंगे। आज हम शहरवासी खानेके लिए ही जी रहे हैं। इसलिए आप हमें जीनेके लिए खानेकी कला सिखाइये। आप जंगलोंमें वेदोच्चार कीजिए, जंगलोंको पवित्र बनाइये, हिंसक पशुओंको वहाँसे बाहर निकालिए या उन्हें वासुदेवमय जगतका साक्षात्कार कराके रामनामके मन्त्रसे वशमें कर डालिये।

अंतमें मैं बहनोंसे इतना ही कहूँगा कि आपने खादी पहनना शुरू कर दिया है, यह बहुत अच्छा किया। अब आप इन भद्दे गहनोंको भी छोड़ दें जो आपके नाक-कान आदिको कुरूप बना देते हैं, जिनमें मैल जमा होता रहता है और जो गुलामीके तमगे हैं।[1]

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २०-३-१९२७

१. अंतिम अनुच्छेद यंग इंडिया, २४-३-१९२७से लिया गया है।

१६५. अध्यक्ष महोदयका दान

श्रीयुत विट्ठलभाई पटेल और मेरे बीच हुए निम्नलिखित पत्र-व्यवहारमें जो समाचार है उसके आनन्दसे पाठकोंको अबतक वंचित रखनेका मुझे खेद है।

पत्र चौथा[1]

२० अकबर रोड, नई दिल्ली
९ मार्च, १९२७

प्रिय महात्माजी,

जैसा कि आपको पहलेसे ही विदित है, मैंने पहलेकी ही तरह आपको अपने वेतनमें से प्रतिमास, गत अप्रैलमें[2] आपको लिखे अपने पत्रमें उल्लिखित उद्देश्यकी पूर्तिके लिए, उतनी रकम भेजनेका निश्चय किया है जितनी मैं समझता हूँ कि प्रति मास मैं सुविधाके साथ बचा सकूंगा। विधानसभाके अध्यक्षके अपने पूरे कार्यकालमें बराबर मेरा इरादा यथासम्भव यही क्रम जारी रखनेका है।

फरवरीके अन्ततक ऐसी जो भी बचत हो सकी है, वह अर्थात् २०००) चैक द्वारा साथमें भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
वि० झ० पटेल

इस समाचारका प्रकाशन [कुछ देरके लिए] रोक रखनेकी इच्छा श्रीयुत विट्ठलभाई पटेलने व्यक्त की थी, इसीलिए रोक रखा था। चुनावोंके बाकी रहते इसे प्रकाशित करनेमें उन्हे कुछ संकोच-सा मालूम हुआ। चुनावोंके समाप्त हो जानेके बाद भी उनकी रजामन्दी पिछले हफ्तेतक नही पा सका। अगर इसका प्रकाशन सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे जरूरी न होता तो मैं स्वयं उनके इस संकोचको बढावा ही देता। मैं जानता हूँ कि विट्ठलभाई चाहते हैं कि लोग उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरणोंकी नकल करें। अगर किसी-न-किसी कारणसे, हिन्दुस्तानकी स्थितिको देखते हुए अपेक्षाकृत बेहिसाब ऊँची-ऊँची तनख्वाह लेते रहनेका लोग आग्रह करें, तो उन तनख्वाहोंमें से समुचित पर्याप्त अंश किसी सार्वजनिक हितके लिए निकाल कर अलग रख दिया जाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि ऐसे कितने बड़ी तनख्वाहें पानेवाले व्यक्ति हैं जो अपनी आमदनी निजी ऐशोआराममें नही खर्च करते, बल्कि सार्वजनिक हितोंके कार्यमें

१. यह चौथा पत्र है। पहले तीन पत्र यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं। तीसरे पत्रके लिए देखिए खण्ड ३१, पृष्ठ २०२-०४।

२. वास्तवमें मई ११। यह इस पत्र व्यवहारका पहला पत्र है; देखिए खण्ड ३०, परिशिष्ट १।

लगाते हैं। मगर वे अपनी इस रकमको अपनी ही मर्जीके मुताबिक ढंगसे [सार्वजनिक हितमें] लगाते हैं। विट्ठलभाई ऐसी रकमोंका एक विशेष कोष खोलना चाहते हैं, जिसकी व्यवस्था जाने माने प्रतिष्ठित लोगोंके हाथमें हो। अगर इस उद्देश्यको हासिल करना है तो न्यासियोंका निकाय पूरी तरहसे राष्ट्रीय होना चाहिए और उसमें यथासम्भव उतने दलोंके प्रतिनिधि होने चाहिए जितने कि एक सामान्य निकायमें हो सकते हों। इसलिए जिन लोगोंको यह योजना पसन्द हो, उनसे मेरा निवेदन है कि इसपर अपनी आलोचनाएँ और सुझाव भेजें। कोषकी सारी जिम्मेदारी लेनेकी या केवल उन्हीं कामोंमें जिनके लिए मैंने जीवन समर्पित किया हुआ है, कोषका उपयोग करनेकी मेरी कतई इच्छा नहीं है। मैं जानता हूँ कि विट्ठलभाईके इस महान उपहारका उद्देश्य अच्छी तरह पूरा करनेका उपाय यही होगा कि मैं अधिकसे-अधिक ऐसे लोगोंका सहयोग माँगूँ जो सहायता करनेको तैयार हों।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१६६. नहीं और हाँ

कामरेड सकलातवालामें गजबकी तत्परता है। उनकी दिली ईमानदारी साफ झलकती है। उन्होंने बहुत बड़े-बड़े त्याग किये हैं। गरीबोंके प्रति उनके प्रेमके सभी कायल हैं। इसलिए मेरे नाम उनकी उत्साहपूर्ण खुली चिट्ठीपर[1] मैंने उतनी ही गम्भीरतासे विचार किया है जितनी गम्भीरतासे ऐसे सच्चे देशभक्त और विश्वप्रेमीके पत्रपर करना उचित है। अगर मुझे दिली ईमानदारीके जवाबमें ईमानदारीका व्यवहार करना है, या आचरणमें अपने सिद्धान्तके अनुरूप आचरण करना है तो उनकी चिट्ठीके जवाबमें 'हाँ', कहनेकी लाख ख्वाहिश होते हुए भी मुझे 'नहीं' ही कहना होगा। लेकिन मैं जवाबमें 'हाँ' भी कह सकता हूँ। परन्तु अपने ढंगसे ही कह सकता हूँ। उनकी शर्तोंपर मैं उनसे सहयोग करूँ — उनकी इस अत्यन्त बलवती इच्छाके पीछे यह भी शर्त निहित है कि मैं 'हाँ' तो तभी कहूँ जब उनकी दलील मेरे मन और बुद्धिको पूरी तरहसे सन्तोष दे सके। सच्चे विश्वासके फलस्वरूप 'नहीं' कहना, उस 'हाँ' से लाख दर्जे अच्छा और बड़ी बात है, जो किसीको महज खुश करनेके लिए कहा जाये और जो केवल झंझटोंसे बचनेके लिए कहा जाये, वह तो और भी बुरी बात है।

उनके साथ हार्दिक सहयोग करनेकी पूरी ख्वाहिश रखते हुए भी मैं इस दिशा अपना रास्ता बन्द देखता हूँ। उन्होंने जो तथ्य प्रस्तुत किये हैं, वे कपोल-कल्पित

१. सकलातवालाकी "महात्मा गांधीके नाम खुली चिट्ठी" बम्बईमें ८ मार्च, १९२७को प्रकाशित हुई थी। यही चिट्ठी हिन्दुस्तान टाइम्समें १७-३-१९२७को छपी थी। उसमेंसे उद्धृत किये अंशोंके लिए देखिए परिशिष्ट १।

है और इन तथ्योंके आधारपर निकाले गये निष्कर्ष निश्चय ही निराधार है। और जहाँ वे तथ्य सच है, वहाँ मेरी सारी शक्ति (मेरी दृष्टिमें) उनके जहरीले असरको दूर करनेमें केन्द्रित है। मुझे खेद है, परन्तु हम दोनोंकी स्थितिमें जमीन आसमानका अन्तर है। फिर भी हम दोनोमे एक बड़ी चीज समान रूपसे विद्यमान है। हम दोनो ही देश और विश्वका हित ही अपना एकमात्र उद्देश्य होनेका दावा रखते है। इसलिए इस समय हम लोग भले ही विपरीत दिशाओंमें जाते हुए मालूम पड़ते है, मुझे आशा है कि एक दिन हम मिलेंगे जरूर। मै वचन देता हूँ कि अपनी भूल सूझते ही मैं काफी क्षतिपूर्ति करूँगा। इस बीचमें मेरी भूल ही, चूँकि मै उसे भूल नही मानता, मेरी ढालका काम देगी और मेरे लिए सान्त्वनाप्रद होगी।

कामरेड सकलातवालाके विचारोंसे ठीक विपरीत, मेरी यह धारणा नही है कि आवश्यकताओ और उनकी पूर्तिके लिए यन्त्र बढाते जानेसे दुनिया अपने ध्येयकी ओर एक पग भी बढ रही है। सकलातवाला महोदय आजकलकी आपाधापीपर लट्टू है। काल और देशकी दूरी मिटा देने और पाशविक वृत्तियोको बढ़ाने और उनकी तृप्तिकी खातिर जमीन आसमानके कुलावे एक कर देनेकी इस विवेकहीन आकाक्षाको मै पूरी तरहसे नापसन्द करता हूँ। आधुनिक सभ्यता यदि इन्ही सब बातोंके समर्थनको अपना लक्ष्य मानती है, और मै तो समझता हूँ कि मानती है, तो मै उसे 'हैवानियत' कहता हूँ और साथ ही वर्तमान शासन प्रणालीको उसका सबसे बड़ा प्रतिरूप कहता हूँ। गरीबोंकी दशा सुधारनेकी उसकी योजनाको मै अविश्वास की दृष्टिसे देखता हूँ, उसके मुद्रा-सुधारमें मुझे धोखा ही नजर आता है, उसकी जल और स्थल सेनापर भी मै यकीन नही करता। इस सरकारने सभ्यताके नामपर और खुद अपनी हिफ़ाजतके नामपर जनताका खून बराबर चूसा है, लोगोंको गुलाम बनाया है, शक्तिशाली व्यक्तियोंको दौलत और पदकी रिश्वतें दी है और अपने निरकुश कायदे कानूनोंके नीचे उन स्वतन्त्रता प्रेमी देशभक्तोंको कुचल डालनेकी कोशिश की है, जिन्हे खुशामदसे या धनसे खरीदा नही जा सकता था। अगर मेरे हाथमें सत्ता होती तो इस शासन-पद्धतिको मै आज ही नष्ट कर देता। अगर मुझे विश्वास हो जाता कि अत्यन्त भीषण अस्त्रों द्वारा इस शासन प्रणालीको समाप्त किया जा सकता है, तो भीषण अस्त्रोंको भी इस्तेमाल करता। मै उन अस्त्रोंका प्रयोग केवल इसलिए नही कर रहा हूँ कि यद्यपि उनके प्रयोगोंसे वर्तमान प्रशासकोंका अन्त तो जरूर हो जायेगा, लेकिन शासनकी वही पद्धति चिरस्थायी बन जायेगी। जो लोग बुराइयोके बदले बुरी बातोके करनेवाले लोगोंका नाश करना चाहते है, वे खुद उन बुरी बातोके शिकार बन जाते है। और उन लोगोसे भी खराब बन जाते है, जिन्हे उन्होने इस गलत विश्वासमें मारा था कि आदमियोंके साथ-साथ उनकी बुरी नीतिका भी अन्त हो जाता है। वे पापके मूल कारणको नही पहचानते।

१९२० के आन्दोलनकी रूपरेखा वैसी बनाई गई थी कि यह सिद्ध किया जाये कि हम आत्मा-विहीन शासन-पद्धतिका सुधार हिंसाके जरिये और इस तरह खुद आत्मा-विहीन बनकर नही कर सकते। उसे सुधारनेका केवल एक ही रास्ता था,

वह यह कि हम खुद उसके शिकार न बनें अर्थात् उसके साथ असहयोग करे, और शैतान द्वारा फैलाये गये जालमें हमें फँसानेके लिए की जानेवाली उस हर कोशिशके जवाबमें हम जोरसे 'नही' कहते रहें।

उस आन्दोलनको धक्का जरूर लगा है, लेकिन वह मरा नही है। मैंने जो वायदा किया था वह शर्तके साथ किया था। शर्तें मामूली और आसान थी। मगर उस आन्दोलनके प्रमुख कार्यकर्त्ताओंके लिए वे बहुत ही सख्त साबित हुईं।

जिसे कामरेड सकलातवाला, मेरी भूल और असफलता मानते है उसे मैं अपनी शक्ति और दृढ़ विश्वासकी अभिव्यक्ति मानता हूँ। हो सकता है कि वह मेरी भूल हो; लेकिन जबतक इसके सच होनेमें मेरा विश्वास है तबतक मेरी भूल ही मुझे अडिग बनाये रहेगी, जैसे कि अभी बनाये हुए है। बारडोलीमें अपने कदम वापस लेना मैं बहुत ही बुद्धिमानीका काम और देशकी परम सेवा समझता हूँ। उस फैसलेकी वजहसे सरकारकी ताकत घटी ही है। अगर मैं चौरीचौराके बाद भी उसकी शर्तोको, जिन्हें वाइसरायके नाम मेरी अन्तिम चेतावनी[1] माना गया था, पालन करनेपर ही जोर देता रहता तो सरकार फिर अपने खोये हुए मोर्चे वापस हथिया लेती।

मेरे 'बन्धु' यह कहनेमें भूल करते हैं कि दक्षिण आफ्रिकाका आन्दोलन असफल रहा। यदि वह असफल रहा है तो निश्चय ही मेरा सारा जीवन असफल ही माना जाना चाहिए। और उनका मुझे अपने दलमें शरीक होनेके लिए आमन्त्रित करना भी बेमतलबकी बात समझना चाहिए। मेरे जीवनके मिशनका श्रीगणेश दक्षिण आफ्रिकाने ही कराया था। गत महायुद्धके दिनोंमें अपने तत्कालीन विश्वासोंके अनुसार मैंने अपने आपको तथा अपने साथियोंको घायलोंकी सेवा करनेवालोंकी हैसियतसे जो सरकारके हवाले कर दिया था, अपने उस कामको भी मैं भूल नहीं मानता।

ये प्रख्यात संसद सदस्य महोदय उतावलीमें हैं। ये महाशय तथ्योंका अध्ययन करना हेय समझते हैं। मैं उन्हें बतला दूँ कि खादी आन्दोलन उतारपर नही है। गत वर्ष १९२० के कामकी अपेक्षा कमसे-कम बीस गुना काम जरूर हुआ। आज खादी-कार्यसे १५०० गाँवोंमें कमसे-कम ५० हजार कतैयोंको लाभ हो रहा है और इसके अलावा बुनकरों, रंगरेजों, छीपियों, धोबियों और दर्जियोंको भी काम मिल रहा है।

श्री सकलातवाला पूछते हैं कि खद्दरका उद्देश्य क्या है। इसका उद्देश्य है सादगी, आडम्बर नहीं। गरीबोंके शरीरोंपर यह खूब खिलता है, बड़ेसे-बड़े धनी और कला-प्रेमी स्त्री-पुरुषोंके शरीरोंको सुशोभित करने लायक भी बन सकता है, जैसा कि वह पहले बना ही करता था। खद्दर पुरातन कलाकौशलको पुनरुज्जीवित करता है। यह सभी प्रकारके यन्त्रोंको नष्ट नहीं करना चाहता मगर उनके प्रयोगपर नियन्त्रण और उनकी बेहिसाब बढ़ोतरीकी रोकथाम जरूर चाहता है। यह यन्त्रोंको इस्तेमाल करता है, गरीबसे-गरीबको उसीके झोंपड़ेमें बैठे-बैठे राहत पहुँचानेके लिए। चरखा खुद एक बहुत ही सुन्दर यन्त्र है।

१. देखिए खण्ड २२, पृष्ठ ३१७-२०।

खद्दर गरीबोंको धनिकोंके बन्धनसे मुक्त करता है, वह वर्गों और आम लोगोंके बीच एक नैतिक और आध्यात्मिक सम्बन्ध स्थापित करता है। वह अमीरों द्वारा गरीबोंसे लिये गये धनका कुछ अंश उन्हें वापस दिलाता है।

खद्दर किसी भी गृह-उद्योगकी जगह नहीं हड़पता; वरन् इसके विपरीत दिन-ब-दिन ऐसा माना जा रहा है कि खद्दर दूसरे गृह-उद्योगोंका केन्द्र बनता जा रहा है। विधवाओंके उजड़े घरोंमें खद्दर आशाकी एक किरण पहुँचाता है।

परन्तु वह विधवा यदि और अधिक कमा सकती है तो यह उसे वैसा करनेसे रोकता नहीं है। खद्दर किसीको कोई बेहतर धन्धा अपनानेसे नहीं रोकता। जिन लोगोंको किसी धन्धेकी जरूरत है उन्हें यह सम्मान्य धन्धा देता है। यह राष्ट्रके खाली समयका सदुपयोग करता है। हमारे मान्य कामरेड साहब उन लोगोंके कामका गर्वके साथ जिक्र करते हैं, जो अधिक आमदनीके धन्धोंको सुलभ करते हैं। उनको यह जान लेना चाहिए कि अपने आप खद्दरसे यही काम हो जाता है। यदि इससे गरीबो को कुछ आने मिलेंगे, तो कुछ अन्य लोगोंको भी रुपये मिले बिना रह नहीं सकते। जो लोग शहरोंमें अपना काम शुरू करते हैं, वे काम तो अच्छा करते हैं किन्तु इस मसलेको किसी बड़े पैमानेपर हल नहीं कर पाते। खद्दर तो इस मसलेकी तहतक पहुँचता है और इसलिए इसमें अन्य बातोंका समावेश लाजिमी तौरसे हो ही जाता है।

मगर इस अधीर साम्यवादीके समूचे पत्रमें शहरोंका ही जिक्र है और इसलिए उनका पत्र उस भारतकी और उन भारतीय परिस्थितियोंकी उपेक्षा करता है, जो भारतके ७ लाख गाँवोंमें देखनेको मिल सकती हैं। आजके मुट्ठी-भर शहर, बिला-जरूरतकी बढती हैं और इस समय तो वे देहातोंका जीवन-रक्त चूस लेनेके निंद्य उद्देश्यकी पूर्ति ही कर रहे हैं। खद्दरका काम तो शोषणकी इस प्रक्रियाको सुधारने और वर्तमान शोषण-व्यवस्थाको पलट देनेका एक प्रयास है। शहर और उनके उद्धत दलाल ग्राम्यजीवन और ग्रामीणोंकी स्वतन्त्रताके लिए एक निरन्तर खतरा हैं।

खद्दरमें संगठन करनेकी शक्ति सबसे अधिक है, क्योंकि पहले इसके कामका संगठन करना होता है और उसका समूचे हिन्दुस्तानपर असर पड़ता है। खद्दर अगर आकाशसे बरसता तो यह बडी भारी विपत्ति होती। लेकिन, चूँकि खादी लाखो भूखे मरनेवाले लोगों और हजारों मध्यवर्गीय स्त्री-पुरुषोंके स्वेच्छापूर्वक किए गये सहयोगसे ही तैयार की जा सकती है, इसलिए इसकी सफलताका अर्थ है शान्तिमय ढंगसे ऐसा एक सर्वोत्तम सगठन, जितने सर्वोत्तम संगठनकी कल्पना की जा सकती है। अगर खाना पकानेकी क्रियाका भी पुनरुद्धार करना होता और उसमें भी इसी तरहके संगठनकी जरूरत होती, तो मैं उसके लिए भी उसी खूबीका दावा करता, जो खद्दरके लिए कर रहा हूँ।

मेरे साम्यवादी कामरेड महोदय जमशेदपुरके मजदूरोंके बीच किये मेरे काममें इसलिए दोष निकालते हैं कि जमशेदपुरमें मैंने टाटाकी ओरसे नहीं किन्तु मजदूरोंकी ओरसे मानपत्र स्वीकार किया था। मुझे लगता है कि उनके मनमें मेरे कामको नापसन्द करनेका कारण स्व० श्री रतन टाटाका अध्यक्षपदपर आसीन होना था; जो

भी हो इस सम्मानसे मैं अपना सिर नीचा हुआ कदापि नहीं मानता। मुझे श्री टाटा दयालु और सौजन्यपूर्ण मालिक मालूम हुए। मैं समझता हूँ कि कर्मचारियोंकी सभी प्रार्थनाएँ उन्होंने सहज ही स्वीकार कर ली और मुझे बादमें यह मालूम हुआ कि उस समझौतेका पालन भी ठीकसे किया जा रहा है। मैं अपने कामके लिए धनिकों और गरीबोंसे भी दान माँगता और लेता रहता हूँ। धनी लोग खुशीसे मुझे दान देते हैं। यह कोई व्यक्तिगत विजयकी बात नहीं है। यह अहिंसाकी विजय है, जिसका मैं ही, अपूर्ण रीतिसे ही क्यों न हो, प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश करता हूँ, फिर यह प्रतिनिधित्व मैं कितने ही अपर्याप्तरूपसे क्यों न करता होऊँ। मेरे लिए यह स्थायी रूपसे व्यक्तिगत सन्तोषकी बात है कि सामान्यतया मुझपर उन लोगोंका भी प्रेम और विश्वास कायम रहता है, जिनके सिद्धान्तों और नीतियोंका मैं विरोध करता हूँ। दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंने खुद मुझपर विश्वास किया और मेरे प्रति मैत्री बरती। ब्रिटिश नीति और ब्रिटिश सरकारकी निन्दा करते रहनेके बावजूद भी हजारों अंग्रेज स्त्री-पुरुषोंका स्नेह मुझे मिल रहा है और मैं आधुनिक भौतिक सभ्यताकी बेहिसाब निन्दा करता रहता हूँ, फिर भी मेरे यूरोपीय और अमेरिकी मित्रोंका दायरा बराबर बढ़ता ही जा रहा है। यह भी अहिंसाकी ही विजय है।

अन्तमें, शहरोंमें काम करनेवाले मजदूरवर्गकी बात ले लें। इसके विषयमें कोई गलतफहमी नहीं रह जानी चाहिए। मैं संगठनका विरोधी नहीं, मैं मजदूरोंके संगठनके विरुद्ध नहीं हूँ, मगर मैं इसे भी हर कामकी तरह हिन्दुस्तानी ढंगपर, या आप चाहें तो यह भी कह सकते हैं कि अपने ढंगपर करना चाहता हूँ। और मैं ऐसा कर भी रहा हूँ। हिन्दुस्तानी मजदूर इसे स्वभावसे ही जानता है। मैं पूँजीपतियोंको मजदूरोंका शत्रु नहीं मानता। मेरा विचार है कि वे मजदूरोंके साथ हिल-मिलकर चल जरूर सकते हैं। दक्षिण आफ्रिका, चम्पारन या अहमदाबादमें मैंने मजदूरोंका जो संगठन किया था, वह पूँजीपतियोंके प्रति किसी वैरभावसे नहीं किया था। हर मामलेमें जहाँ और जितना विरोध करना जरूरी समझा गया, पूरी सफलतासे किया गया। मेरा आदर्श है धनका बराबर बँटवारा, परन्तु जहाँतक मैं समझ सकता हूँ यह होनेवाली बात नहीं है। इसलिए मैं धनके न्यायपूर्ण समुचित बँटवारेका प्रयत्न करता हूँ। इस आदर्श स्थितिको मैं खद्दरके जरिये प्राप्त करनेकी कोशिश करता हूँ। और चूँकि इस उद्देश्यकी पूर्तिसे अवश्य ही इंग्लैंड द्वारा हिन्दुस्तानकी शोषण-नीति निष्प्राण हो जायेगी, इसलिए खद्दरके प्रचारका यह भी प्रयोजन है कि हिन्दुस्तान और इंग्लैंडके सम्बन्ध निस्वार्थ हो जायें। इसलिए, इस अर्थमें खद्दर स्वराज्यकी प्राप्तिमें सहायक माना जा सकता है।

'महात्मा' सम्बोधनको तो मुझे उसके हालपर ही छोड़ देना होगा। असहयोगी होते हुए भी मैं खुशीसे किसी ऐसे कानूनका समर्थन करूँगा, जिससे मुझे महात्मा कहना, या मेरे पैर छूना जुर्म करार दिया जा सके। जहाँ मैं आप ही वह कानून चला सकता हूँ, यानी आश्रममें वहाँ यह जुर्म ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १७-३-१९२७

१६७. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

(दौरेपर)
सत्याग्रहाश्रम, साबरमती[1]
१७ मार्च, १९२७

प्रिय बहन,

मुझे आपके पत्र नियमित रूपसे मिलते रहते हैं। आपने मुझसे पूछा है कि भारतपर पूर्ण मद्यनिषेधके विषयमें उदासीन होनेका जो आरोप लगाया जाता है, उसके विषयमें आप अपने सहयोगियोंके कठोर प्रश्नोंका उत्तर कैसे दें? क्योंकि अपनी यात्राके दौरान मेरे पास आपका पता नहीं था, इसलिए मैं आपको पत्र नहीं लिख सका। परन्तु मैंने 'यंग इंडिया'में आपके पत्रपर आधारित एक अग्रलेख[2] लिखा था। आशा है आपने उसे देखा होगा, उसमें आपका अपेक्षित जवाब दिया था। यदि आप कुछ और जानना चाहें तो कृपया मुझे लिखें।

मुझे प्रसन्नता है कि तारिणी सिन्हा आपकी सहायता कर रहे हैं।

मुझे आपके उस पत्रकी प्रतीक्षा है जिसमें आप इंडिया ऑफिसमें हुए अपने अनुभवोंका ब्यौरा देनेवाली हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि अपने आपको इस कार्यके लिए तैयार करनेकी दृष्टिसे आप जो कदम उठा रही हैं, वे उपयुक्त और जरूरी हैं। वे ही कदम आपको अपने सामने प्रस्तुत संघर्षका सामना करने योग्य ज्ञान, अनुभव और आत्मविश्वास प्रदान कर सकते हैं।

'ऑब्जर्वर' के संवाददाताके साथ हुई आपकी भेंटका विवरण मैंने पढ़ा है। वह एक भारतीय दैनिक पत्रमें उद्धृत किया गया था। निश्चय ही यदि वह भेंट आपने न दी होती तो ज्यादा अच्छा होता; इस विषयमें मैं आपसे सहमत हूँ। परन्तु यदि संवाददाताने आपके कथनको ठीकसे उद्धृत किया है, लेकिन उसने साथ ही अपने भ्रमपूर्ण अनुमान भी दे दिये हैं, तो उससे क्या फर्क पड़ता है? यदि हम दूसरों द्वारा गलत समझे जानेकी सम्भावनासे हर कदमपर डरते ही रहें तो यह एक दारुण स्थिति न होगी!

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ६५६५) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।
२. देखिए "क्या भारत मद्यनिषेधवादी है?", ३-३-१९२७।

१६८. भाषण : गुरुकुल काँगड़ीके दीक्षान्त समारोहमें

१९ मार्च, १९२७

आज तो जी चाहता है कि साधु वास्वाणीकी तरह मैं भी आपको प्रणाम करके बैठ जाऊँ। पर मनुष्य दूसरेकी हर बातका अनुकरण नहीं कर सकता। फिर अनुकरण भी स्वाभाविक होना चाहिए। इसीलिए मुझे आपसे जो कहना है वह कहता हूँ।

स्वामीजीकी[1] मृत्यु हुई ही नहीं है। वह तो तब होगी जब हम उनकी सच्ची देहको नष्ट कर डालें। सच तो यह है कि हमारे प्रयत्नोंसे भी उनकी देहका नाश नहीं हो सकता। जबतक गुरुकुल कायम है, जबतक एक भी स्नातक गुरुकुलको सेवा कर रहा है, तबतक स्वामीजी जीवित ही हैं। स्वामीजीके शरीरका अन्त तो किसी दिन होता ही। पर गुरुकुल स्वामीजीकी सर्वश्रेष्ठ कृति है। उन्होंने अपनी सारी शक्ति इस काममें लगा दी थी। इस गुरुकुलकी स्थापनाके लिए उन्होंने सर्वाधिक तपश्चर्या की। आपने सत्यकी प्रतिज्ञा ली है। यदि आप इस प्रतिज्ञाका पालन करें तो संसारमें कोई शक्ति ऐसी नहीं है जो गुरुकुलको मिटा सके।

यदि हम इस गुरुकुलको चिरस्थायी बनाना चाहते हैं तो आवश्यकता इस बातकी है कि हमने स्वामीजीके जीवनमें जिस वीरता, जिस ब्रह्मचर्य, जिस संकल्प और जिस क्षमाशीलताके दर्शन किये उनका विकास हम अपने जीवनमें भी करें। ब्रह्मचर्यका पालन तथा वीर्यका संचय — यही वीरताके लक्षण हैं। इनके द्वारा आप धर्म और देशकी पूरी-पूरी रक्षा कर सकते हैं। मैं जानता हूँ कि यह कार्य कठिन है। मेरे पास आपके यहाँसे बहुतसे विद्यार्थियोंके पत्र आते हैं। कोई मेरी स्तुति करता है; कोई गाली देता है। स्तुतिका तो कुछ उपयोग ही नहीं है। उसका मुझपर कोई असर नहीं होता। परन्तु जब विद्यार्थी चिढ़कर गाली देते हैं तब मुझे उनके विषयमें चिन्ता होती है। क्योंकि क्रोधसे वीर्यका नाश होता है। स्वामीजीके सामने मैंने ब्रह्मचर्यकी अपनी व्याख्या रखी थी और वे मुझसे सहमत थे। किसी स्त्रीका वासनायुक्त स्पर्श न करें, ब्रह्मचर्यका अर्थ इतना ही नहीं है; यह तो ब्रह्मचर्यका केवल आरम्भ है। परन्तु क्षमाकी पराकाष्ठा ब्रह्मचर्यका लक्षण है। पिछले वर्ष जब स्वामीजी टंकारासे लौटते हुए मुझे मिलने आये थे उस समय उन्होंने मुझसे कहा था कि हिन्दू धर्मकी रक्षा नीतिसे ही शक्य है। यदि आप वैदिक आचार और विचारकी रक्षा करना चाहते हैं तो आपको यह बात याद रखनी चाहिए कि आपको ढेरों रुपया मिल सकता है, पर यदि यहाँ नीति और ब्रह्मचर्यका आचार न रहा तो आपका यह गुरुकुल मिट्टीमें मिल जायेगा। यह भूमि तो जड़ है — इसकी आत्मा आप लोग हैं। यदि

१. स्वामी श्रद्धानन्द।

आप अपना आत्मबल खो बैठेंगे और "उदर निमित्तं बहुकृत वेश."[1] जैसे बनेंगे तो आपकी सारी शिक्षा निरर्थक होगी।

आज मैं आपके सामने चरखे और खादीकी बात करने नहीं आया हूँ। ब्रह्मचर्य, वीरता और क्षमापालन आपका पहला काम है। इसे भूलेंगे तो स्वामीजीका कार्य कायम नहीं रहेगा। रशीदकी गोली स्वामीजीका क्या बिगाड़ सकी? वे तो इस गोलीसे अमर हो गये।

स्वामीजीका दूसरा कार्य अछूतोद्धार था। खादीकी वकालत मालवीयजीने जिन शब्दोंमें की थी उस तरह मैं नहीं कर सकता, पर इतना जरूर कहूँगा कि यदि हमारे मनमें सदा गरीबों और अछूतोंका विचार हो तो आप खादीसे अलग नहीं रह सकते। वीर्यकी रक्षाके लिए कोई अमली काम करना हो तो इसके लिए खादीसे बढ़कर कोई दूसरा काम नहीं है। खादीके कार्यके साथ मैं स्वामीजीका नाम नहीं जोड़ना चाहता, क्योंकि वह स्वामीजीका प्रधान कार्य नहीं था। पर इतना अवश्य कहूँगा कि आप स्नातक विदेशी वस्त्रोंसे अपने आपको सुशोभित करनेका विचार न करें। गरीबों और अछूतोंकी रक्षाके लिए सिर्फ खादी ही धारण करें। ईश्वर आप सबके ब्रह्मचर्यकी, सत्यकी और प्रतिज्ञाओंकी रक्षा करे, गुरुकुलका कल्याण करे, और स्वामीजीकी प्रत्येक शुभ प्रवृत्तिको चालू रखे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-३-१९२७

१६९. भाषण : हरिद्वारमें[2]

१९ मार्च, १९२७

यदि मैं आर्यसमाजकी आलोचना करता हूँ तो उसकी प्रशंसा भी करता हूँ। जो हार्दिक प्रशंसा करता है उसे आलोचना करनेका अधिकार भी है। ब्रिटिश साम्राज्यकी स्थापनाके बाद शिक्षित वर्गका जनताके साथ कोई आध्यात्मिक सम्बन्ध नहीं रहा। आर्यसमाजने इस सम्बन्धको पुन:स्थापित किया है; ऐसी मेरी मान्यता है।

आज यहाँ जो दृश्य दिखाई दे रहा है, वह शायद ही कहीं और देखनेको मिलेगा। मैं आपका थोड़ा-बहुत अनुकरण करता हूँ। पर मुझे बाल्टियोंमें पैसा नहीं मिलता। मैं तो रूमालोंमें पैसा इकट्ठा करता हूँ। मुझे तो पैसे मिलते हैं और आपको रुपये मिलते हैं। सभी पंजाबी धनी नहीं हैं; कुछ गरीब भी हैं। पर आपका दिल उदार है। मैं आर्यसमाजकी आलोचना करता हूँ। आपसे कहता हूँ कि आप झगड़ा करनेवाले लोग हैं। पर आज मैं आपका ही काम करने यहाँ आया हूँ। क्योंकि मैं मानता हूँ कि गुरुकुलकी मार्फत हिन्दुस्तानकी सेवा हो रही है। आपकी आलोचना

१. शंकराचार्य कृत चर्पटमंजरीसे।

२. गांधीजीने यह भाषण श्रद्धानन्द स्मारक कोषके लिए की गई अपीलके समर्थनमें दिया था।

करते हुए भी मैं आपके त्यागको नहीं समझता, सो बात नहीं है। आपमें त्यागका गुण तो अवश्य है, पर इतने ही त्यागसे आप सन्तुष्ट न हों। आपको जितना त्याग करना चाहिए उसके मुकाबलेमें आजका त्याग कुछ भी नहीं। फिर भी मैं आपके त्यागकी प्रशंसा करता हूँ, क्योंकि दूसरोंमें तो आपके जितनी त्याग-शक्ति भी नहीं है।

मैं आपकी जो प्रशंसा कर रहा हूँ, उससे आप फूल न जायें। आपने जो दिया है उससे आप यह न मान लें कि आपने जितना दे सकते थे उतना दे दिया। दानका अर्थ ही है ज्यादासे-ज्यादा देना। जिस संस्थाके लिए श्रद्धानन्दजीने अपने सर्वस्वका त्याग कर दिया उस संस्थाके लिए आप जितना दे सकें उतना धन दें। गुरुकुलकी शिक्षाका दूसरा कोई फल न भी मिले तो भी उसने संस्कृतके अध्ययनको शिक्षामें स्थायी स्थान तो प्रदान किया ही है। यह क्या कोई मामूली बात है। जब भी मैं देखता हूँ कि कोई पंजाबी देवनागरी लिपि पढ़ रहा है, मैं उससे तुरन्त यह अनुमान लगा लेता हूँ कि उसने गुरुकुलमें शिक्षा पाई होगी। दोष किस संस्थामें नहीं हैं? परन्तु इन दोषोंके बावजूद गुरुकुलने काफी सेवा की है। आप इस गुरुकुलकी सेवा करें, इसे जीवित रखें। श्रद्धानन्दजी कहते थे कि इस संस्थाके लिए तपश्चर्या और ब्रह्मचर्य ही मेरा दान है। आप यही आश्वासन दें कि श्रद्धानन्दजीकी संस्थाको जीवन्त रखनेके लिए आप जितना दान दे सकेंगे उतना देंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-३-१९२७

१७०. सत्याग्रह सप्ताह

६ अप्रैल अब नजदीक आ रही है। मैं मानता हूँ कि उस समय प्रत्येक स्थानपर खादी बेचनेके प्रयत्न किये जायेंगे। अहमदाबादके रीची रोडपर स्थित खादी भण्डारने उस अवधिमें भाव कम करनेकी सूचना[1] भेजी है। मैं उसकी ओर अहमदाबादके नागरिकोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ :

मैं उम्मीद रखता हूँ कि बहुतसे नागरिक खादी खरीदेंगे। स्मरणीय है कि यह रियायत केवल ६ अप्रैलसे १३ अप्रैलतक दी जायेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २०-३-१९२७

१. यहाँ नहीं दी जा रही है।

१७१. भाषण: हरिद्वारकी राष्ट्रीय शिक्षा परिषदमें[1]

२० मार्च, १९२७

संस्कृतका अध्ययन करना प्रत्येक भारतीय विद्यार्थीका कर्त्तव्य है। हिन्दुओंका तो है ही, मुसलमानोंका भी है। क्योंकि आखिर उनके पूर्वज भी राम और कृष्ण ही थे। और अपने इन पूर्वजोंको जाननेके लिए उन्हें संस्कृत सीखनी चाहिए। किन्तु मुसलमानोंके साथ सम्बन्ध बनाये रखनेके लिए उनकी भाषा जानना हिन्दुओंका भी कर्त्तव्य है। आज हम एक-दूसरेकी भाषासे दूर भागते हैं, क्योंकि हमारी बुद्धि नष्ट हो गई है। जो संस्था एक-दूसरेके प्रति मनमें द्वेष और भय रखनेकी शिक्षा दे, निश्चित मानिये कि वह राष्ट्रीय संस्था कदापि नहीं है।

गांधीजीने कहा कि राष्ट्रीय संस्थाओंको हिन्दू-मुस्लिम एकताके संदेशवाहक तैयार करने चाहिए। जो संस्थाएँ धर्मान्ध, कट्टर हिन्दू या मुसलमान तैयार करती हैं वे नष्ट कर देने योग्य हैं। शैक्षणिक संस्थाओंका उद्देश्य व्यक्तियोंको धर्मान्ध बनाना नहीं है। मुझे विश्वास है कि निराशाका कोई कारण नहीं है और अब भी यदि आत्मावलम्बी और आत्मत्यागी शिक्षक मिल सकें तो हमारा उद्देश्य सफल हो सकता है।[2]

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २७-३-१९२७

१७२. पर्ची: चन्द त्यागीको

मौनवार, २१ मार्च, १९२७

श्री चन्द त्यागी,

आपके साथ मैं रात्रीको बातें करना चाहता था परंतु आप नहीं थे। दस बजने पर मैंने मौन ले लिया।

आपकी क्या इच्छा है? यदि आप यहां निश्चिन्त है और शांत है तो जिन चीजोंको आप मानते है उसका प्रचार करे और उस द्वारा देशकी सेवा करे।

. . . .[1]

आप जब दिल चाहे आश्रममें जा सकते हो इस समय मेरा तो वहां रहना नहीं होता है। इसलिये मैं नहि जानता आप वहां जाना चाहिंगे या नहि।

१. गांधीजीने यह भाषण गुरुकुल कांगड़ीके तत्त्वावधानमें हुई परिषद्के अध्यक्षपदसे दिया था।
२. यह अनुच्छेद लीडर, २३-३-१९२७ से लिया गया है।
३. साधन-सूत्रके अनुसार।

मुझको भी जब चाहे लीख सकते है।

मूल (सी० डब्ल्यू० ४२७६) से।
सौजन्य: चन्द त्यागी

१७३. पत्र: ममा डी० सरैयाको

हरिद्वार
फाल्गुन बदी ३, १९८३ [२१ मार्च, १९२७]

चि० ममा,

तुम्हारा पत्र पढकर मुझे बहुत खुशी हुई। तुमने यदि क्रोध किये बिना और धर्म जानकर गंगाबहनको मुक्ति दी है तब तो तुम्हारा यह कदम निस्सन्देह बहुत अच्छा है और इसीसे तुम्हें शान्ति मिलेगी, क्योंकि तुम्हारा मन सुस्थिर हो गया होगा। यदि हमारा कोई प्रियजन अपना मन ईश्वरमें लगाये और समस्त जगतको अपना कुटुम्ब मानकर व्यवहार करे तो इससे हमें आनन्दित होना चाहिए।

मुझे उम्मीद है कि तुम्हें अब आराम होगा। मुझे फिर पत्र लिखना। स्याहीसे साफ-साफ अक्षर लिखनेका अभ्यास करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१९) से।
सौजन्य: पुरुषोत्तम डी० सरैया

१७४. पत्र: फूलचन्द शाहको

दुबार नहीं पढ़ा

हरिद्वार
फाल्गुन बदी ३, १९८३ [२१ मार्च, १९२७]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

२,००० रुपयों सम्बन्धी आपका पत्र मुझे भेजा गया है। अब मेरे पास एक कौड़ी भी नही रही। सारी बचत खत्म हो गयी है और इसलिए मुझे फिरसे भिक्षा माँगनी होगी।

इस बार तो मैंने उन्हें लिखा है कि जिस तरह हो सके उस तरह आपको रुपया भेज दें। लेकिन इसके बाद काम कैसे चलेगा?

अब आपको मुझसे बजट पास करवाना होगा। परिषदके चालू खर्चके लिए जरूरी पैसे उगाहनेकी शक्ति आपमें अर्थात् देवचन्दभाई और आपमें होनी चाहिए। यदि ऐसा नही होता तो हम कबतक चला सकेंगे?

अन्य सब कार्यालयोंका बजट पहलेसे ही पास होना चाहिए। नागकर अपनी शालाका बजट आप नानाभाईको दिखा लिया करें। वे शालाका निरीक्षण करके जितना पैसा पास करें मैं उतना पैसा इकट्ठा करनेका प्रयत्न करूँगा। सब राष्ट्रीय शालाओंको मैं विद्यापीठके साथ मिला देनेका विचार किया करता हूँ, क्योंकि उनके लिए अलगसे पैसा माँगनेमें अब दिक्कत होती है। अनेक दान देनेवालोंमे खादीके लिए तो पैसा ले ही लिया जाता है। मैंने परिषदकी बैठकमें कुछ पैसे इकट्ठा करनेकी उम्मीद की थी लेकिन बैठक हुई नहीं। अब चूँकि परिषदकी बैठक अगस्त तकके लिए स्थगित हो गई है इसलिए हमें इस सवालपर फिरसे विचार करना पड़ा। इसलिए अब इसके बाद आप जो भी माँग करेंगे उसका बजट मुझसे पहलेसे पास करवा लेना। अन्ततः तो [गुजरातकी] सब संस्थाओंको अपने पैरोंपर खड़ा होना पड़ेगा, ठीक वैसे ही जिस तरह सारे भारतवर्षमें है। अथवा हमें शिक्षाके सम्बन्धमे महागुजरातके लिए कोई खास योजना बनानी होगी। आप नानाभाईसे मिलकर इन सब बातोंपर विचार करें। हमारे पास तीन काम कहे जा सकते हैं, खादी, अन्त्यज [-सेवा] और सामान्य राष्ट्रीय शिक्षा।

मेरे विचारसे तो यह तीनों खादीमें समाहित हैं; शिक्षा तो अवश्य समाहित है। अन्त्यजोंकी समस्याका अभी पूर्ण समाधान नहीं हो सका है। यह सब साथियोंके विचारके लिए लिख रहा हूँ। मेरे साथ पत्र-व्यवहार करके जहाँ आवश्यक लगे स्पष्टीकरण करा लें। उससे अनेक समस्याएँ सुलझ जायेंगी।

यह पत्र चि० छगनलाल आपको पढकर भेजेगा, जिससे कि वे सब यह समझ सकें कि मैं इस समय कहाँ हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :][1]

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८३३)से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

१७५. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

हरिद्वार
मौनवार [२१ मार्च, १९२७]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं उसे चि० किशोरलालको भेज रहा हूँ। किशोरलाल सत्यनिष्ठ और मुमुक्षु है। उसे जिस विषयमें सन्देह हो उसपर तुम्हें और मुझे पुनर्विचार करना होगा। अत. तुम्हें और मुझे उसे अपनी बात समझानेका प्रयत्न करना होगा, जिससे तुम्हारा कदम उसे धर्म विरुद्ध न जान पड़े। यदि चि० नमाका पत्र

१. दौरेके कार्यक्रमके लिए देखिए "पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको", १४-३-१९२७।

क्रोधमें न लिखा गया हो तो उसे अच्छा ही माना जायेगा और यदि तुमने भी अपना कदम काफी सोच-समझकर उठाया हो तो सब ठीक ही है तथा उससे ममाको भी शान्ति ही मिलेगी। यदि उसे शान्ति न मिले तो यह मान लेना गलत न होगा कि उस कदममें कहीं कोई भूल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८२४)से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१७६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

सोमवार [२१ मार्च, १९२७][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिल गया है।

पैसे मील जाने पर चर्खा कार्यकी मदद होगी। पू० मालवीजी चर्खाकी ओर ज्यादाह आ रहे हैं इससे मुझको बड़ा आनन्द होता है। चर्खेके लीये मुझको वहीत रूपैये चाहींयेगें? उनकी मदद मीलने पर अधिक घन इकट्ठा हो सकता है।

भाईजीने और रामेश्वरजीने अंत्यजोके लीये जलाशयोंके निमित्त रूपैये देनेका निश्चय किया है उसका व्यय उनके लिखनेके अनुसार होगा।

परसराम फटे हुए कागजोंको इकट्ठा करता था उसका मुझे कुछ पता नहीं था। उसको मैंने इस दोषका दर्शन कराया है। वह आपको लीखेगा। उसका हेतु मलीन न था। वह पागलसा है। मुझको काम दे सकता है। पू० मालवीजी और रविंद्रनाथके साथ कुछ दिनों तक रहना चाहता है। मैंने कह दीया है वह स्वतंत्र चेष्टा उनकी सेवामें रहनेकी करे।

यूरोपमें आरोग्य अच्छा रखनेके लीये इतने नियमोंका पालन आवश्यक समझता हूं।

१) अपरिचित खोराक न लेना।

२) वे लोग छ सात वार खाते हैं। हम तीन वारेसे ज्यादा न खाय। बीचमें चौकोलैंट इ० खानेकी बुरी टेव न रखे।

३) रात्रीको १ वजे तक भी खा लेते हैं। हम रात्रीको ८ वजेके बाद न खाय। किसी जगह पर जाने पर चाह इ० लेनेके लीये हम मजबूर होते हैं ऐसा माना जाता है। ऐसा कुछ नहिं है।

४) नित्य कमसे कम ६ मईल पैदल घूमनेका अभ्यास रखना अत्यावश्यक है। प्रातःकालमे और रात्रिको दोनों समय घूमना चाहीये।

[1] यात्राके कार्यक्रमके आधारपर।

५) हदके बाहर कपड़े पहननेकी आवश्यकता न मानी जाय। रहस्य यही है की शरीरको ठंडी न लगे। घूमनेसे ठंडी चली जाती है।

६) इंग्रेजी कपड़े पहननेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

७) यूरोपके गरीब लोगोंका परीचय करनेकी कोशीश की जाय। इस परीचयके लीये बहोत काम पैदल करना आवश्यक है। जब समय है तब पैदल ही जाना अच्छा है।

८) यूरोपमें गये तो कुछ न कुछ करना ही है ऐसा कभी न सोचा जाय। स्वच्छ प्रयत्नोंसे और निश्चिन्ततासे जो बन पड़े वह कीया जाये।

९) मेरे ख्यालसे तो आपके जानेका एक परिणाम अवश्य आ सकता है। शरीर वज्रसम बनाया जाये। यह बात बन सकती है।

१०) ईश्वर आपको मानसिक व्यभिचारसे बचा ले। बहोत कम हिंदी इस दोषसे बचते हैं। वहाका रहनसहन यद्यपि उन लोगोंके लीये स्वाभाविक है हमारे लीये मद्यपानसा बन जाता है।

११) 'गीताजी' और 'रामायणका' अभ्यास हो तो हरगीज न छोड़ा जाय। यदि नही है तो अब रखा जाये।

आपने इतनी सूक्ष्म सूचनाकी तो आशा नहि रखी होगी। मैंने दी है क्योंकी आप सब भाइयोंकी सज्जनता पर मेरा विश्वास है। आप जैसे जो थोड़े धनिकोंमें धनके साथ नम्रता और सज्जनता है उनकी नम्रता और सज्जनतामें मैं बहोत वृद्धि चाहता हु। और उस वस्तुका देश कार्यके लीये उपयोग करना चाहता हु। शठ प्रति शाठ्यका सिद्धान्तको मै मानता नहि हुं। इसलीये जिस जगह मृदुता, सत्य, अहिंसा ई०का थोड़ा-सा भी दर्शन कराता हुं तो सूम जैसे धनका संग्रह करता है ठीक इसी तरह मैं ऐसे गुणोंका संग्रह करनेकी चेष्टा कर आनंदित होता हुं।

और पूछना है तो पूछोगे।

२३–२४ मुंबई
२५–२६ कोलापुर
२७–४ अप्रैल बेलगाव
५–१२ मद्रास

आपका,
मोहनदास

[पुनश्च :]

इस पत्रकी पहोंच भेजीयो।

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४६) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१७७. प्रश्नोंके उत्तर

[२१ मार्च, १९२७][1]

[प्रश्न:] क्या आपको वर्तमान राजनैतिक गुलामीका वातावरण असह्य नहीं लगता है?

[उत्तर:] लगता है।

२. यदि ऐसा है तो क्या आप स्वयं व्यक्तिगत रूपसे उससे छुटकारा पाने और राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिए तैयार हैं या नहीं?

तैयार हूँ।

३. "आपके तैयार होने"का अर्थ यदि यह लगाया जाये कि आपने दो आध्यात्मिक गुणों, आत्मबल और स्वातन्त्र्य प्रेमकी अवाप्ति की है, तो क्या आपको कोई ऐतराज होगा?

आप ऐसा मान सकते हैं।

४. क्या "स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी तैयारी" का यही अर्थ नहीं है कि भारतीयों द्वारा भी उसकी प्राप्तिके लिए उन्हीं सब गुणों और शक्तिकी अवाप्ति की जाये जो आपने क्रमशः प्राप्त कर ली हैं।

इसका यही अर्थ है।

५. क्या ऐसे गुणोंको प्राप्त करनेके लिए बौद्धिक और नैतिक प्रशिक्षण आवश्यक नहीं है?

है।

६. यदि ऐसा है, तो सारे राष्ट्रको प्रशिक्षित करनेके कौनसे साधन हैं? और इसके लिए कितना समय लगेगा?

कताई।

७. क्या जनताके मनमें राजनैतिक गुलामीके प्रति पूरी-पूरी अरुचि उत्पन्न कर देना परमावश्यक नहीं है?

है।

८. यदि ऐसा है तो आपकी रायमें ३० करोड़ भारतीयोंमेंसे आज कितने प्रतिशत लोगोंके मनमें यह भावना विद्यमान है?

अनुमान लगाना कठिन है।

९. जनताको गुलामीका एहसास हो, क्या इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि उसे मातृभूमिके बीते हुए सुनहरे दिनोंका ज्ञान हो और वह वर्तमान दुःखपूर्ण परिस्थितियोंके प्रति सच्ची बेचैनीका अनुभव करे?

है।

१. देखिए अगला शीर्षक।

१०. क्या इस ज्ञानके विना या इस बेचैनीका अनुभव हुए विना जनतामें आत्मवलका विकास किया जा सकता है?

कठिन है।

११. क्या आत्मवलको तथा हर प्रकारकी पीड़ाको शान्ति और निर्भयताके साथ सहन करनेकी शक्तिको अपनेमें सन्निविष्ट करना ही आपके आध्यात्मिक कार्य-कलापका मुख्य आधारस्तम्भ है या नहीं?

हाँ, कुछ हदतक।

१२. जनताको शासकोंसे सत्ता छीननेके लिए अपने आत्मवलका उपयोग कहाँ, किन परिस्थितियोंमें और किस प्रकार करना है?

सारे देशमें अहिंसापूर्ण असहयोगके द्वारा।

१३. सविनय अवज्ञा और सरकारको कर देनेसे इनकार करना, इन दो उद्देश्योंको पूरा करनेके लिए लोगोंमें किस प्रकारकी बौद्धिक, नैतिक और शारीरिक तैयारीकी जरूरत है?

हाथ कताई उन्हें अहिंसा और आत्मनिर्भरता दोनोंकी शिक्षा देती है।

१४. यदि हम अपनी तैयारीको पूर्ण अर्थात् सोलह आने मानना चाहें, तो आपकी रायमें आपके अनुयायियों या सामान्य जनतामें स्वतन्त्रता प्राप्तिके लिए कितने आने तैयारीका होना जरूरी है।

आठ आने एक पाई।

१५. क्या आज जनता इस प्रकार तैयार है? यदि नहीं तो आपकी रायमें उसे तैयार करनेमें कितना समय लगेगा?

अभी तैयार नहीं है। भविष्यवाणी नहीं कर सकता।

१६. इस देशके कितने प्रतिशत लोग जानते हैं कि भारतमें महात्मा गांधी सरीखा एक अनोखा व्यक्तित्व भी है?

मुझे इसका कुछ अन्दाज नहीं है।

१७. यदि यह मान लिया जाये कि हजारमें से १ व्यक्ति इसे जानता है तो आपकी रायमें एक लाखमें से कितने लोग महात्माजीके स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचारों और कार्यवाहियोंके विषयमें जानते होंगे?

मुझे जाननेवाले १,००० लोगोंमें से एक ऐसा जाननेवाला होगा।

१८. ऐसा लगता है कि विचारों और कार्यवाहियोंके सम्बन्धमें इस प्रकारकी जानकारी कतई नहीं है। यदि इस अज्ञानको दूर करना है, तो कितनी देरतक ऐसा करते रहना होगा?

जितनी देरतक जरूरी हो।

१९. क्या आप कह सकते हैं कि यदि हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकता न भी हो, लेकिन यदि दोनों जातियोंके लोगोंको राजनैतिक गुलामीके कष्ट असह्य लगें और वे उनसे मुक्त होनेके लिए संघर्ष करें अथवा दोनों जातियोंके मनमें यह बात भी

आ जाये कि स्वतन्त्रताके बिना जीवन मृत्युसे बदतर है तो भी स्वराज्य पा सकना असम्भव है?

यदि दोनों जातियोंको ऐसा लगे, जैसा कि आप कहते हैं, तो मैं इसे असम्भव नहीं मानता।

२०. क्या आप यह कहेंगे कि असह्य राजनैतिक परिस्थितियोंकी दुःखपूर्ण प्रतीतिमें दो विभिन्न संस्कृतिके लोगोंको एकताके सूत्रमें बाँध सकनेकी सामर्थ्य नहीं है।

उसमें यह सामर्थ्य है।

२१. मुसलमानोंने हिन्दुओंपर जो धार्मिक अत्याचार किये थे, वे ही शिवाजीके जमानेमें स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका मुख्य कारण बने। विभिन्न जातियोंके लोग इन धार्मिक अत्याचारोंसे अपने-आपको मुक्त करानेके लिए एक हुए। इतिहासके विद्यार्थी इस बातको जानते हैं कि समर्थ गुरु रामदास द्वारा मठोंकी स्थापनासे इस कार्यमें बहुत सहायता मिली थी। क्या यह सच नहीं है कि आज भी लोग अपने आपको राजनैतिक, औद्योगिक और व्यावसायिक उत्पीड़नसे बचानेके लिए ही स्वतन्त्रता चाहते हैं?

हाँ, वस्तुतः ऐसा ही है।

२२. चाहे अस्पृश्यता दूर हो या न हो, चाहे हिन्दुओं और मुसलमानोंकी आपसी फूट दूर हो या न हो, किन्तु यदि इन दोनों बातोंके रहते हुए भी हमारे पास दो हजार व्यक्ति ऐसे हों, जिनमें आत्मबल हो और जो आजादीके दीवाने हों, तो क्या आपको लगता है कि ऐसे ये आदमी देशकी आजादी हासिल नहीं कर सकते?

ऐसे दो हजार व्यक्ति फूट और अस्पृश्यताको उखाड़ फेंकेंगे और स्वराज्यकी स्थापना कर सकेंगे।

२३. यदि १,४०० असैनिक अधिकारी भारत जैसे विशाल देशको गुलामीके पाशमें बाँधकर रख सकते हैं, तो क्या आप सोचते हैं कि इन उपर्युक्त गुणोंसे लैस दो हजार व्यक्ति भारतको पुनः आजाद नहीं कर सकते?

बाईसवें प्रश्नका उत्तर ही इसका उत्तर है

२४. संक्षेपमें क्या आपका यह कहना है कि स्वतन्त्रताके बिना जीवनको असह्य मानते हुए गुलामीके प्रति पूरे देशमें केवल तीव्र अरुचिकी भावना व्याप्त हो जानेसे ही स्वराज्य पा सकना सम्भव नहीं है?

कोरी भावनासे स्वराज्य कभी नहीं मिल सकता।

२५. यदि ऐसा लगे कि उल्लिखित भावनाके बिना कतई काम नहीं चल सकता और उसके द्वारा स्वराज्य की प्राप्ति हो सकती है तो क्या खद्दर सम्बन्धी आपके मौजूदा भाषणोंसे लोगोंके मनमें यह भावना जगाई जा सकती है?

खद्दर सम्बन्धी मेरे भाषण इस भावनाको शक्ति एवं स्फूर्तिमें बदल रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-४-१९२७

१७८. पत्र : जी० के० तिलकको[1]

चलती गाड़ीमें
२१ मार्च, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र इस बीच मेरे पीछे-पीछे घूमता रहा है। चूंकि आपने अपने प्रश्नों पर काफी मेहनत की है और चूंकि मैं उनको 'यंग इंडिया' में ले ही नहीं सकता, मैं आपको उनके जवाब[2] इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। आप चाहें तो उन्हें प्रकाशित कर सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-४-१९२७

१७९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार [२२ मार्च, १९२७][3]

बहनो,

इस बारकी जुदाई ज्यादा भारी पड़ी, क्योंकि मुझे बहुत-सी बातें करने और विचारोंका आदान-प्रदान करनेकी इच्छा थी। मगर हम स्वतन्त्र कहाँ हैं? ईश्वरके हाथोंमें हैं, वह जैसे नचाता है, नाचते हैं। स्वेच्छासे नाचें तो सुख पाते हैं। अनिच्छासे, जबर्दस्ती नाचें तो दुःख पाते हैं। इसलिए यद्यपि मेरे लोभकी तुष्टि नहीं हो पाई तथापि मैं निश्चिन्त हूँ। उसे जब मिलाना मंजूर होगा तब हमें मिलायेगा। तबतक हम पत्रों द्वारा बातचीत करेंगे।

तुमसे अभी इतनी आशा रखता हूँ, उसे पूरी करना :

१. तुम सब ओटने, धुनने और कातनेका काम बाकायदा और अच्छी तरह सीख लो। इतनी अच्छी तरह सीखो कि औरोंको भी सिखा सको।

२. संयुक्त भोजनालयकी देखरेख करो और उसे आदर्श भोजनालय बनाओ। इस काममें तुममें से कोई बहन सदाके लिए लग जाये, यह मैं फिलहाल नहीं

१. बारसीके एक वकील।
२. देखिए पिछला शीर्षक।
३. मीराबहन के रिवाड़ी आश्रम जानेके उल्लेख से, देखिए अगला शीर्षक।

चाहता। मगर चूँकि तुम इस काममें स्वभावतः कुशल हो इसलिए भोजनालयको सुघड़तासे चलाने और भोजन अच्छा बनानेका बोझ तुमपर डालता हूँ।

ये दो बोझ उचित हैं न?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मीराबाई आज रिवाड़ी आश्रम जा रही हैं, जहाँ जमनालालजीकी लड़की है।

गुजराती (जी० एन० ३६४२) की फ़ोटो-नकलसे।

१८०. पत्र : मीराबहनको

भरतपुरसे आगे गाड़ीमें
२२ मार्च, १९२७

चि० मीरा,

आजकी जुदाई दुःखद रही; मैंने देखा कि मैंने तुम्हें कष्ट पहुँचाया। लेकिन फिर भी यह अनिवार्य था। मैं चाहता हूँ कि तुम आदर्श नारी बनो। मेरी इच्छा है कि तुम अपनी सारी कमियोंको दूर कर दो। तुम्हें सारा अनावश्यक संकोच त्याग देना चाहिए। आश्रम तुम्हारे घरका केन्द्र है। मगर यदि तुम संयोगवश कहीं अन्यत्र पहुँच जाती हो तो तुम्हारा घर वहीं बन जाना चाहिए। हम जिन लोगोंके सम्पर्कमें आते हैं, हमें उनसे अपनी जरूरतें इस तरह पूरी करानी चाहिए कि उन्हें हमारा भार न मालूम हो। हमें सबके साथ एकताकी भावना रखनी चाहिए। और मैंने यह देखा है कि हम जाने-अनजाने कुछ लिये बिना कभी कुछ नहीं देते। मैं चाहता हूँ कि एक हदतक संकोच सबमें हो, मगर वह संकोच आत्मसंयमका परिणाम होना चाहिए; भावुकताका नहीं। तुम्हारा संकोच भावुकताका परिणाम है। वह दूर होना ही चाहिए। मैंने सोचा कि मैं तुम्हारा ध्यान इस तरफ खींचूं। लेकिन देखता हूँ कि मुझे इसके लिए अभी ठहरना चाहिए था। फिर भी अब तो मैंने कह ही दिया।

घबराहटको तो उतार फेंको। तुम्हें मेरे शरीरसे मोह हरगिज नहीं होना चाहिए। शरीर-रहित आत्मा तो हमेशा तुम्हारे साथ ही है। और वह उस शरीरबद्ध दुर्बल जीवात्मासे अधिक सबल है, जिसके साथ शरीरकी सारी मर्यादायें जुड़ी हैं। शरीर-रहित आत्मा सम्पूर्ण है और उसीकी हमें आवश्यकता है। यह हम अनासक्तिका अभ्यास करनेपर ही अनुभव कर सकते हैं। अब तुम्हें इसे प्राप्त करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

अगर मैं तुम्हारी जगह होऊँ तो इसी तरह अपना विकास करूँ। मगर तुम्हें अपने ही ढंगसे विकास करना चाहिए। इसलिए मैंने इस पत्रमें जो-कुछ कहा है, उसमें से जो तुम्हारे दिल व दिमागको न जँचे, तुम उसे छोड़ देना। चाहे कुछ भी

हो तुम्हें अपना व्यक्तित्व अवश्य कायम रखना चाहिए। जहाँ आवश्यक हो, मेरी बात तुम्हें नहीं माननी चाहिए, क्योंकि यह सम्भव है कि तुम्हारे प्रति पूर्ण प्रेम होनेपर भी मैं तुम्हारे बारेमें गलत खयाल बना लूं। मैं नहीं चाहता कि तुम यह समझो कि मुझसे कभी भूल हो ही नहीं सकती।

[कार्यक्रम][1]

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

तुम रुपया और चैक नहीं ले गईं। वह तुम्हारे पास भेज दिया गया है।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२११)से।
सौजन्य : मीराबहन

१८१. भाषण : सान्ताक्रूज, बम्बईमें[2]

२३ मार्च, १९२७

गांधीजीने सभामें अपनी जगहपर बैठे-बैठे ही गुजरातीमें भाषण देना शुरू किया, जब कि उनसे हिन्दीमें भाषण देनेका अनुरोध किया गया था, क्योंकि सभामें बहुतसे मद्रासी और ऐसे अन्य व्यक्ति उपस्थित थे, जिन्हें गुजराती नहीं आती थी। गांधीजीने मत लिया और बहुमतकी इच्छानुसार गुजरातीमें भाषण देना शुरू किया। लेकिन अल्पमतवालोंको उन्होंने विश्वास दिलाया कि उन लोगोंके हककी उपेक्षा नहीं की जायेगी। उन्होंने कहा :

श्री जे० के० मेहताको जिस चीजकी आशंका है उसका कारण काफी हदतक सही है। सान्ताक्रूजमें छ. साल पहले दी गई[3] और आज दी गई रकममें जो इतना अधिक अन्तर है उसपर अहिंसाको अपना सिद्धान्त माननेवाला कोई व्यक्ति जितनी करारी चोट कर सकता है, मैं आज उतनी करारी चोट करनेवाला हूँ। श्री मेहताके साग्रह आमन्त्रणपर ही मैं रिवाड़ी, जहाँ जाना पहले तय हो चुका था, जानेके बजाय यहाँ आया। आप शायद जानते हैं कि यद्यपि मैं शहरोंकी उपेक्षा नहीं कर रहा हूँ, फिर भी आजकल मैं बहुधा गांवोंमें ज्यादा जाता हूँ, क्योंकि भारत अपने मुट्ठीभर

१. दौरेके कार्यक्रमके लिए देखिए "पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको", १४-३-१९२७।

२. बम्बई उपनगर जिला कांग्रेस कमेटीके प्रधान, जयसुखलाल के० मेहता द्वारा दिये गये स्वागत-भाषणके उत्तरमें।

३. छ साल पहले दिये गये ५२,००० रुपयोंकी तुलनामें इस सभामें गांधीजीको केवल ३,००० रुपये दिये गये थे।

शहरोंमें नहीं; अपितु अपने गाँवोंमें वास करता है। वहाँ भी ३,००० रुपये इकट्ठा करना कोई कठिन काम नही है। आपको शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि मेरे पिछले दौरेमें महाराष्ट्र और बिहारके गाँवोंने सवा-सवा लाख रुपया चन्दा दिया था। गाँवोंमें भी खादीका खूब तेजीसे और बड़ी दूरतक प्रचार हो रहा है। बावजूद ऐसी उल्टी-सीधी तमाम फवावाहोंके कि खादीका नामोनिशान मिट गया है; मैं आँकड़े देकर सिद्ध कर सकता हूँ कि १९२० में जब आन्दोलन आरम्भ ही हुआ था जितनी खादी तैयार होती थी, उससे बीस गुना ज्यादा आज तैयार की जा रही है। १९२६ में कमसे-कम बीस लाखकी खादी तैयार की गई और देशके १,५०० गाँवोंमें रहनेवाली कमसे-कम ५०,००० स्त्रियोंको कताईका काम दिया गया, जिसके लिए उन्हें नौ लाख रुपयेसे ज्यादा पारिश्रमिकमें दिये गये। फिर भी यह स्थिति पूर्णतया सन्तोषजनक नहीं है। उससे मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ। मैंने देखा है कि बम्बई और दूसरे शहरोंमें बहुत कम लोग खादी पहनते हैं। १९२१ में बम्बईकी हालत आजकी हालतसे बिलकुल भिन्न थी। खद्दरके बारेमें इस ढिलाईके मैं दो ही कारण सोच सकता हूँ या तो यह कि जो लोग पहले खादी पहनते थे, उनकी खादीके सम्बन्धमें राय अब बदल गई है या फिर यह कि वे १९२१ में ढोंग कर रहे थे।

यद्यपि असहयोग या हिन्दू-मुस्लिम एकताके विषयमें कुछ कहनेका यह अवसर नहीं है, लेकिन मुझे साफ-साफ कह देना चाहिए कि इन दोनों चीजोंमें मेरा पहले जैसा ही दृढ़ और अत्यधिक विश्वास है। बल्कि मुझे यह कहना चाहिए कि पहलेसे भी ज्यादा हो गया है। यदि मैं उस तरहका स्वराज्य चाहता हूँ, जिसके लिए मैं पिछले कुछ वर्षोंसे संघर्ष कर रहा हूँ, तो मैं ऐसा महसूस करनेको विवश हूँ कि हिन्दू-मुस्लिम एकता उसके लिए निहायत जरूरी है। परन्तु मानव-प्रकृतिके एक पारखीके रूपमें मैंने पाया है कि पूरा वातावरण ही बदल गया है। लेकिन खादीके साथ ऐसी बात नहीं है; खादी-कार्यका परिणाम निराशाजनक नहीं है। मैंने पाया है कि लोग उससे ऊबे नहीं हैं। और इसके लिए हमें समाचारपत्रोंपर निर्भर रहनेकी जरूरत नहीं है। सच तो यह है कि समाचारपत्र सिर्फ शहरोंमें ही पढ़े जाते हैं। हरिद्वारमें कोई समाचारपत्र नहीं हैं, फिर भी वहाँ आसानीसे दो लाख रुपये जमा हो गये। वह स्थान इस बम्बई जैसा नहीं है, जो मुझे तो इंग्लैंडकी एक प्रशाखा जैसा लगता है।

मैं आजकल जो धन एकत्र कर रहा हूँ, वह उस अखिल भारतीय देशबन्धु स्मारक कोषमें जमा किया जाता है और यह ग्राम-संगठन कार्यमें खर्च किया जायेगा। गाँवोंका पूर्ण रूपसे संगठन ही स्वर्गीय देशबन्धुका उपयुक्त स्मारक होगा। मैं कह सकता हूँ कि भारतके गाँवोंके संगठनका उपाय चरखा ही है। मैं आपको सूरत जिलेकी रानीपरज जातिका उदाहरण दे सकता हूँ, जहाँ चरखेके सन्देश द्वारा लगभग १०४ गाँवोंमें रहनेवाले रानीपरज लोगोंको पूरी तरह संगठित किया गया है। रानी-परज जातिकी अनपढ़ स्त्रियोंने भारी गहने पहनना छोड़ दिया है और स्त्री, पुरुष, बच्चे सभी शुद्ध खादी पहनते हैं। ऐसी जातियों और गाँवोंमें काम करनेके लिए धनकी जरूरत है। मैं भारतके लाखों निर्धन लोगोंका स्वयं नियुक्त वकील हूँ और

उनकी ओरसे धनिक वर्गके आप जैसे लोगोंसे खादीके इस महान आन्दोलनके लिए अधिकसे-अधिक दान देनेकी अपील करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-३-१९२७

१८२. एक मित्रके ज्ञान-कोषसे

अपने जिन मित्रका परिचय मैं पाठकोंको पहले ही दे चुका हूँ, उन्होंने मेरे मौनवारके लिए कुछ उद्धरण भेजे हैं। उसमें से कुछ रत्न चुन कर मैं पाठकोंके लिए यहाँ देता हूँ:

> मनुष्यकी वाणी ईश्वरके रहस्योंको इतने अपूर्ण रूपमें व्यक्त करती है कि शब्द हमें कोई सान्त्वना देनेके बजाय हमारे मार्गमें बाधा ही डालते हैं।
>
> —ब्रदर गाइल्स
>
> तुम अपने चित्तको शांत करके एकान्तमें बैठो और ईश्वर तुम्हें अपने भीतर ही मिल जायेगा।
>
> —टेरेसा
>
> तुझे प्रभुको दूरसे अपने पास बुलानेकी जरूरत नहीं है। तू जिस क्षण अपना हृदय खोलेगा, वह उसी क्षण उसमें आ जायेगा। प्रतीक्षा करना तेरे लिए जितना कठिन है, उसके लिए वह उससे भी कठिन है।
>
> —मास्टर एकहार्ट

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१८३. गरीबके आमने-सामने

बारडोली ताल्लुका गुजरातके सबसे ज्यादा उपजाऊ इलाकोंमें माना जाता है। किन्तु उसके कुछ भागोंमें कितनी गरीबी है इसका एक सही और स्पष्ट विवरण एक खादी कार्यकर्त्ताने लिखा है जो 'नवजीवन' में छप चुका है। उसका महादेव देसाई कृत स्वतन्त्र अनुवाद नीचे दिया जाता है।[1] यह विवरण एक कहानीके रूपमें लिखा गया है। लेखक बहुत ऊँचे दर्जेका लोक-कवि बन सकता है। इस विवरणमें जो कलात्मक सौन्दर्य है उसके कारण इसका सहज मूल्य और भी बढ़ गया है। मैं आलोचकोंका ध्यान इसकी ओर विशेष रूपसे आकर्षित करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-३-१९२६

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

१८४. गुरुकुल काँगड़ी

स्वामी श्रद्धानन्दके प्राण गुरुकुल काँगड़ीमें ही बसते थे, भले ही उनका नश्वर शरीर समय-समयपर चाहे जहाँ क्यों न घूमता फिरता रहा हो। और जबतक गुरुकुलका अस्तित्व है तबतक स्वामी श्रद्धानन्दजी भी जीते रहेंगे। इसलिए इस स्वर्गीय शहीदकी यादमें जो अच्छेसे-अच्छा स्मारक खड़ा किया जा सकता है, वह है इस गुरुकुलको स्थायी बनाना। इसमें सन्देह नहीं कि वास्तविक स्थायी स्मारक तो गुरुकुलके अध्यापकों और स्नातकोंके सुन्दर चारित्र्यबल और प्राचीन शिक्षा और उसपर आधारित आचरणको प्रधानता देते रहनेके दृढ़ संकल्पसे ही बनकर निखरेगा। असहयोग आन्दोलन शुरू होनेके काफी पहलेसे ही श्रद्धानन्दजी यह कहते थे और उनका कहना काफी उचित भी था, कि यह गुरुकुल असहयोग आन्दोलनमें दी गई व्याख्याके अनुसार एक राष्ट्रीय संस्था है। उनकी धारणा थी कि हम चाहें अथवा न चाहें, सरकारी शिक्षा संस्थाओंमें जानेका अर्थ ही पश्चिमके प्रभावको प्रधान स्थान देना है। पश्चिमकी लाभप्रद चीजोंको अपने तरीकेसे अपनी सुविधाके अनुसार देखकर अपना लेनेमें उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी। इसलिए स्वामीजीका योग्य स्मारक होनेके लिए गुरुकुलको पूरी तौरपर सरकारसे स्वाधीन रखना होगा। यह कुछ कम सन्तोषकी बात नहीं है कि सरकारी सहायता और प्रभावसे मुक्त होनेके बावजूद भी गुरुकुलके सदस्योंकी संख्या बढ़ती जा रही है और मैं आशा करता हूँ कि उसी प्रकार इसके श्रद्धेय संस्थापककी भावनाके अनुरूप इसके शिक्षकों और स्नातकोंका चरित्र भी उन्नत होगा।

परन्तु यदि स्मारक अपने वास्तविक अस्तित्वके लिए अन्ततोगत्वा गुरुकुलके विद्यार्थियों और अध्यापकोंके चरित्रपर निर्भर करता है, तो उसे अभी फिलहाल जनताकी आर्थिक सहायतापर निर्भर रहना है। आचार्य रामदेवने तीन लाख रुपयोंकी याचना करते हुए अपील जारी की है। मैं समझता हूँ कि लगभग दो लाख तो पहले ही मिल चुके हैं। गत १९ तारीखको गुरुकुलके मैदानमें, उस बड़े मंडपके भीतर अपीलके[1] अवसरपर मैंने जो दृश्य देखा था[2] वह कभी न भूलने लायक दृश्य है। स्वयंसेवकगण बाल्टियाँ लिए हुए दर्शकोंके बीच, घूम रहे थे। उनमें अपने रुपयों और नोटोंको डालनेके लिए मानो सभी स्त्री-पुरुषोंमें होड़-सी लग गई थी। रेजगारी तो दिखाई ही नहीं पड़ती थी। मैं इस अपीलपर जनताका ध्यान देनेकी दिली सिफारिश करता हूँ। आर्यसमाज तथा उसके सिद्धान्तोंसे मेरे जो मतभेद हैं उन्हें मैं बतला ही चुका हूँ। वे तो हैं ही। गुरुकुलोंको चलानेके तरीकोंसे भी मेरा मतभेद है। मगर आर्यसमाजकी सेवाओं और गुरुकुलोंकी आवश्यकतासे मैं अनभिज्ञ नहीं हूँ। यदि उन्होंने धर्मके विकासको सीमित कर दिया है तो साथ ही उसमें नई जान भी

१. देखिए परिशिष्ट २।

२. देखिए "भाषण: हरिद्वारमें", १९-३-१९२७।

टाल दी है। यह प्रवृत्ति सभी सुधारोंमें होती है। बुद्धिमान पुरुषोंका काम अच्छाईको बुराईसे अलग करके अच्छाईको धारण करना है। गुरुकुलमें बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जिन्हें सुरक्षित रखना होगा, और जो लोग यह चाहते हैं कि यह जैसी स्थितिमें आज है, उससे भी अच्छा बने तो उन्हें इसको बेहतर बनानेके लिए कोई तब्दीलियाँ सुझानेसे पहले इसके प्रति अपना मित्रभाव सिद्ध करना होगा, इसलिए धनकी इस अपीलपर अपना हस्ताक्षर करनेमें मुझे जरा भी संकोच नहीं है। अपीलमें अपेक्षित इतनी छोटी रकम इकट्ठी करनेमें कोई विलम्ब या कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१८५. प्रस्तावना: 'आत्मसंयम बनाम विषयासक्ति'[1]

इस पुस्तकका पहला संस्करण प्रकाशित होनेके लगभग एक सप्ताहके भीतर ही बिक गया। यह मेरे लिए बड़ी खुशीकी बात है। इस पुस्तकमें संकलित लेखों पर जो पत्र आये हैं, उनसे प्रकट होता है कि ऐसी पुस्तकोंको प्रकाशित करनेकी आवश्यकता है। उन लोगोंको इन पृष्ठोंके पढ़नेसे कुछ सहायता मिल सकती है, जिन्होंने विलासिताको धर्म नहीं बना लिया है, जो अपने खोये हुए सहज आत्मसंयमको, जो सामान्य अवस्थामें होना चाहिए, फिरसे प्राप्त करनेके लिए संघर्ष कर रहे हैं। ऐसे लोगोंके मार्गदर्शनके लिए निम्न निर्देश लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं:

१. यदि आप विवाहित हैं तो याद रखें कि आपकी पत्नी आपकी सहचरी, साथिन और मित्र है, भोग-विलासका साधन नहीं।

२. संयम आपके जीवनका नियम है। इसलिए सहवास तभी किया जाना चाहिए जब पति और पत्नी दोनोंकी इच्छा हो और उसमें भी उन नियमोंका ध्यान रखा जाना चाहिए जिनके सम्बन्धमें स्पष्ट ही दोनोंकी राय एक हो।

३. यदि आप अविवाहित हैं तो आपका अपने प्रति, समाजके प्रति और अपनी भावी पत्नीके प्रति यह कर्त्तव्य है कि आप पवित्र जीवन बितायें। यदि आप अपने भीतर सचाईकी यह भावना पैदा कर लेंगे तो आप समस्त प्रलोभनोंसे अवश्य ही सुरक्षित रह सकेंगे।

४. इस संसारमें जो अज्ञात शक्ति है, आप सदा उसका ध्यान रखें। सम्भव है उस शक्तिके दर्शन हमें कभी न हों किन्तु हम अपने मनमें यह अनुभव करें कि वह शक्ति हमें देख रही है और हमारे प्रत्येक पापमय विचारका लेखा रख रही है। यदि आप ऐसा करेंगे तो इस शक्तिसे आपको सदा सहायता मिलेगी।

१. यह प्रस्तावना सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सेज सेल्फ-इनडल्जेन्स नामक पुस्तकके द्वितीय संस्करणके लिए लिखी गई थी। बादमें यह दूसरा संस्करण सेल्फ कन्ट्रोल नामसे छपा।

५. संयत जीवनके नियम विलासी जीवनके नियमोंसे अवश्य ही भिन्न होते हैं। इसलिए आप अपनी संगति, अपने पठन-पाठन, अपने मनोरंजन और अपने भोजनको नियमोंमें बाँधे।

आप अच्छे और शुद्ध चरित्रके लोगोंका साथ ढूंढ़े।

आप अपने आपको ऐसे उपन्यास और मासिक पत्र पढ़नेसे दृढ़तापूर्वक रोकें, जो मनमें विकार पैदा करते हैं और ऐसी रचनाएँ पढ़ें जिनसे मनुष्यका उत्थान होता है। आप सन्दर्भ और मार्गदर्शनके लिए ऐसी कोई पुस्तक सदा साथ रखें।

आप सिनेमाओं और नाटकघरोंमें न जायें। मनोरंजन वही होता है जहाँ आपकी शक्तिका क्षय न हो, वल्कि उसका पुनर्निर्माण हो। इसलिए आप भजन-मण्डलियोंमें जायें, जहाँ शब्द और लय दोनों ही आत्माको ऊपर उठानेवाले हैं।

आप अपनी जीभके स्वादके लिए भोजन न करें, वल्कि क्षुधाकी निवृत्तिके लिए भोजन करें। विलासी आदमी खानेके लिए जीता है; संयमी आदमी जीवित रहनेके लिए खाता है। इसलिए आप समस्त तेज मसालोंसे परहेज करें; शराव न पियें, क्योंकि वह हमारे तन्तुओंको उत्तेजित करती है; और नशीली चीजोंका भी सेवन न करें, क्योंकि वे उचित और अनुचित विवेककी शक्तिको समाप्त कर देती हैं। आप अपने भोजनकी मात्रा और भोजनका समय बाँध लें।

६. जब वासनाएँ आपपर हावी होनेका प्रयत्न करें, आप अपने घुटनोंके वल बैठ जायें और ईश्वरसे सहायताके लिए प्रार्थना करें। मुझे रामनामसे सदा ही सहायता मिली है। बाहरी सहायताके रूपमें आप कटिस्नान करें, इसके लिए आप अपनी टाँगें बाहर कर के ठण्डे पानीके टबमें बैठ जायें। आप देखेंगे कि आपकी वासनाएँ उसी क्षण शान्त हो गई हैं। यदि आप कमजोर न हों और आपको ठण्ड लगनेका भय न हो तो आप उसमें कुछ मिनटतक बैठे रहें।

७. व्यायामकी दृष्टिसे सुबह-सबेरे और रातको सोनेसे पहले खुली हवामें तेज कदमोंसे टहलें।

८. जल्दी सोने और जल्दी जागनेसे मनुष्यको स्वास्थ्य, सम्पत्ति और ज्ञानकी प्राप्ति होती है। यह कहावत बिलकुल ठीक है। ९ बजे सो जाना और ४ बजे जग जाना एक अच्छा नियम है। आप जब सोयें तब आपका पेट खाली हो, इसके लिए आपको अपना शामका भोजन ६ बजेतक कर लेना चाहिए।

९. स्मरण रखें कि मनुष्य ईश्वरका प्रतिनिधि है और उसका उद्देश्य समस्त प्राणियोंकी सेवा करना और इस प्रकार ईश्वरकी महत्ता और उसके प्रेमको व्यक्त करना है। आप सेवामें ही सुखका अनुभव करें और तब आपको जीवनमें किसी दूसरे सुखकी आवश्यकता नहीं रहेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१८६. 'यंग इंडिया' के एक पाठकको

पर्देके पक्षमें आपका पत्र मैं छापना नही चाहता। मेरा मत है कि हिन्दुस्तानमें पर्देकी प्रथा अभी हाल ही की चीज है और यह हिन्दू-समाजके पतनकालमें अपनाई गई थी। जिस युगमें स्वाभिमानिनी द्रौपदी और निष्कलंक सीता रहती थी, उसमें पर्दा जैसी कोई चीज हो ही नही सकती थी। गार्गी पर्देके भीतरसे तो अपने शास्त्रार्थ नही कर सकती थी। पर्दा सारे हिन्दुस्तानमें सर्वत्र प्रचलित भी नही है। दक्षिण भारत, गुजरात और पंजाबमें इसका नामोनिशान भी नही है। किसान इन चीजको जानते भी नही। मगर उन प्रान्तों अथवा किसानोंकी स्त्रियाँ जो अपेक्षाकृत थोड़ी-बहुत स्वतन्त्रता भोग रही है, उसके कोई अवाछनीय दुष्परिणाम सुननेमें नही आये हैं। यह कहना भी उचित नही होगा कि दुनियाके अन्य हिस्सोंमें पर्दा न होनेके कारण वहाँके स्त्रियों या पुरुषोंमें कम नैतिकता है। 'यंग इडिया' के एक पाठक महोदय हर पुरातन चीजका समर्थन करनेकी कोशिश करते है। यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि हमारे पूर्वजोने हमें ऐसे नैतिक नियम दिये हैं, जिनसे बेहतर नियम हो ही नहीं सकते, फिर भी मैं इस मान्यतामें अपना योग नही दे सकता कि वे किसी बातमें भूल कर ही नही सकते थे और यह कह भी कौन सकता है कि अमुक वस्तु सचमुच प्राचीन है? क्या सभी १०८ उपनिषद्, समान रूपसे पूज्य है? मुझे तो ऐसा लगता है कि जिस बातको हम तर्ककी कसौटीपर कस सकते हों अवश्य कसें और जो बात इस कसौटीपर खरी न उतरे, वह भले ही प्राचीनताके परिवेशमें दिखलाई देती हो, उसे माननेसे इनकार कर दें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१८७, 'ज्ञानकी खोजमें'

श्रीयुत एस० डी० नादकर्णी लिखते है:

"क्या साधारण जनता आप जैसा 'आत्मबल' प्राप्त कर सकती है?" इस प्रश्नका उत्तर आपने अक्तूबर, १९२१ में एक पत्रलेखकको यह दिया था: "उसके पास तो वह बल पहले ही बहुतायतसे है। एक दफा फ्रांसीसी वैज्ञानिकों का एक दल ज्ञानकी खोजमें निकला और घूमता-फिरता भारत आ पहुँचा। दलके सदस्योंने अपनी अपेक्षाके अनुसार उस ज्ञानको विद्वानमण्डलीमें खोजनेका भगीरथ-प्रयत्न किया, परन्तु वे इसमें कृतकार्य न हो सके। पर उन्हें वह अचानक एक पंचम (पेरिया) के घरमें मिल गया।"[1]

1. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ३७०।

मैंने उस समय भोलेपनमें यह सोचा था कि आप अपनी पढ़ी हुई किसी वास्तविक घटनाका उल्लेख कर रहे हैं। इसलिए फ्रांसीसी सदस्योंके दल जैसी उत्सुकतासे मैंने आपसे उसका विस्तृत विवरण पूछा। आपने कृपा करके मेरे प्रश्नका उत्तर स्वयं देते हुए कहा "मेरा खयाल था कि मेरे लेखसे यह बात पर्याप्त रूपसे स्पष्ट हो जाती है कि उक्त विवरण बिलकुल काल्पनिक था।"

इसके बाद १९२५ में कलकत्तामें मिशनरियोंकी सभामें आपने यह कहा: "मैं नहीं कह सकता कि . . . इस सुन्दर भूमिमें रहनेवाले मनुष्य नीच हैं। वे नीच नहीं हैं; वे सत्यकी खोज उतनी ही आकुलतासे कर रहे हैं जितनी आकुलतासे मैं और आप कर रहे हैं, बल्कि शायद मुझसे और आपसे ज्यादा आकुलतासे ही। यह मुझे फ्रेंच भाषाकी एक पुस्तककी याद दिलाता है, जिसका अनुवाद एक फ्रांसीसी मित्रने मेरे पढ़नेके लिए किया था। इस पुस्तकमें ज्ञानकी खोजमें किये गये काल्पनिक अभियानका वर्णन है। इन यात्रियोंका एक दल भारतमें उतरता है और उसको एक पेरियाकी छोटीसी कुटियामें सत्य और प्रभुका मूर्तिमन्त रूप देखनेको मिलता है।"[1]

अब इस बारेमें यदि आप अपनी 'आत्मकथा' में आगे और कुछ लिखनेवाले नहीं तो मैं आपका बहुत अनुगृहीत होऊँगा। यदि आप मुझे यह जानकारी दे दें कि उस पुस्तक और उसके लेखकका नाम क्या है, आपके लिए उसका अनुवाद किसने किया था, कब किया था और कहाँ किया था। आप यह जानकारी 'यंग इंडिया' में (या स्वयं मुझे पत्र लिखकर) दे सकते हैं। यह भी लिखें कि क्या वह अनुवाद प्रकाशित हुआ था और क्या वह इस समय उपलब्ध है? मैं यह भी निश्चय करना चाहता हूँ कि यह यूल एण्ड बर्नेलके 'हॉब्सन-जॉब्सनमें' (पेरिया शीर्षकके अन्तर्गत) उल्लिखित दो पुस्तकोंमेंसे तो एक नहीं है? वह कहानी बर्नार्डीन डी सेंट पियरेकी लिखी है और उसका फ्रांसीसी नाम है शोमिये इन्डियन (भारतीय झोंपड़ी)। कहानी अस्वाभाविक है; किन्तु वह कभी लोक-प्रसिद्ध थी। इस (पेरिया) शब्दसे जो एक गौरवकी भावना भ्रमवश जुड़ गई है, जो कैसीमीर डेलावीके नाटकमें चरमावस्थाको प्राप्त हुई है और जो कुछ इस शब्दसे अभीतक संलग्न है, उसका स्रोत भी वही पुस्तक तो नहीं है? अवश्य ही फ्रांसीसी लेखकोंके बारेमें अंग्रेज आलोचकोंने जो मत प्रकट किया है उससे मेरी सहमतिका कोई प्रश्न नहीं उठता।

मैं चाहता था कि मैं श्री नादकर्णीको, जो अपेक्षित है सो जानकारी पूरी तरहसे दे सकता। मुझे इस कहानीका नाम याद नहीं रहा है। इस पुस्तकका अनुवाद खास

1. देखिए खण्ड २७, पृष्ठ ४५२।

तौरसे मेरे लिए एक आंग्ल-फ्रांसीसी मित्रने १९१०में उस समय किया था जब वे जोहानिसबर्गके निकट स्थित टॉल्सटॉय फार्ममें मेरे साथ रहते थे। मैं इसे प्रकाशित करना चाहता था, लेकिन जो हालत मेरी दूसरी कीमती चीजोंकी हुई है, वही मेरी कीमती किताबोंकी हुई है। मेरी बहुत-सी कीमती किताबें और पाण्डुलिपियाँ सन् १९१५की यात्रामें खो गई थी। यह कीमती अनुवाद भी उन्हीं किताबोंमें था, किन्तु मेरे कुछ पाठकगण शायद श्री नादकर्णी द्वारा अपेक्षित जानकारी दे सकें। योग्य लेखककी पुस्तककी कहानी वैसे तो प्रशंसाके योग्य है। किन्तु मुझे याद आता है कि उसने कहानीके अन्तमें एक पेरिया कन्याका विवाह एक ईसाई लेखकसे कराया है; मानो जिस पेरिया घरमें उसके वैज्ञानिकोंको ज्ञानकी उपलब्धि हुई, वह घर इस प्रेम-व्यापार और इस विवाहके बिना, जो कन्याको वातावरणसे विलग करता है और जो पड़ोसियोंकी सेवाकी दृष्टिसे भी उसे कम उपयोगी बना देता है, पूर्ण नही था।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २४-३-१९२७

१८८. भेंट : 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिसे

२४ मार्च, १९२७

प्रश्न : कामरेड सकलातवालाने आपसे भारतके मजदूर संघ आन्दोलनका नेतृत्व करनेका अनुरोध किया है। इस आह्वानके प्रति आपका क्या कहना है?

उत्तर : मुझे नही लगता कि उसका नेतृत्व करनेकी योग्यता मुझमें है।

परन्तु श्री सकलातवालाका कहना है कि आप ही उसे सँभालनेके लिए सबसे योग्य व्यक्ति हैं।

उससे मेरे अहंभावको बढावा मिलता है परन्तु इस उक्तिपर मुझे विश्वास नही होता।

आप यह किस प्रकार कह सकते हैं कि आपके बारडोली निर्णयसे[1] सरकारका बल घटा है?

यदि मैं आन्दोलन जारी रखता तो बारडोलीके लोग तबाह हो जाते और हमारे उद्देश्यको भी हानि पहुँचती। तनाव भी आजसे कही ज्यादा होता। सच तो यह है कि लोग अहिंसाके लिए तैयार नही थे और आन्दोलनका अन्त व्यापक आतंकमें होता। सरकार जानती है कि असहयोग मरा नही है और वह असहयोगसे ज्यादा किसी अन्य चीजसे डरती भी नही है। सरकार हिंसाको दबाना जानती है, पर अहिंसा और असहयोगका सामना करना उसे नही आता। बारडोली निर्णय द्वारा हमने व्यवस्थापूर्ण ढंगसे और जानबूझकर अपना कदम वापस लिया, भगदड़में नही। तथाकथित चेतावनी देनेसे सरकारकी प्रतिष्ठाको जो धक्का लगा था वह अब भी

१. देखिए "नहीं और हाँ", १७-३-१९२७।

कायम है। अब यह हमपर निर्भर है कि हम जब चाहें आगे कदम उठायें। [लोगोंके मनसे] सरकारका भय तो सदाके लिए समाप्त हो गया है।

लोगोंकी सामान्य राय यही है कि आप कामरेड सकलातवालाको जरा ज्यादा ब्यौरेवार जवाब देते। क्या आप उन्हें इस बारेमें कुछ और जवाब देनेवाले हैं?

मेरी रायमें तो मैंने उन्हें उपयुक्त जवाब दे दिया है। मैं हर बातका विवेचन विस्तारसे नहीं कर सका। लेकिन अगर मेरा जवाब कहीं स्पष्ट न हो तो मैं सब भ्रम दूर करनेको तैयार हूँ।

आपने अपने जवाबमें कहा है कि मजदूरोंका संगठन करनेके आपके अपने अलग तरीके हैं। क्या आप अपनी बात कुछ और स्पष्ट करेंगे?

हाँ, मैं मजदूरोंका संगठन उनके अपने प्रयत्नों द्वारा कराऊँगा। मैं उनमें पूंजीके प्रति असन्तोषकी भावना उतनी नहीं, जितनी कि स्वयं अपने प्रति असन्तोषकी भावना भरना चाहूँगा। मैं चाहता हूँ कि पूंजी और श्रमके बीच सच्चा सहयोग हो। मैं मजदूरोंको यकीन दिलाऊँगा कि बहुतसे मामलोंमें दोष पूंजीपतियोंका नहीं, उनका अपना है। राजनैतिक आन्दोलनकी तरह मजदूरोंके आन्दोलनमें भी मैं आन्तरिक सुधार पर अर्थात् उनमें आत्मसन्तोषकी भावना भरनेपर विश्वास करता हूँ। इस तरहका सुधार मालिकोंको उनके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करनेके लिए बाध्य कर देगा। दक्षिण आफ्रिका और भारत दोनोंमें बराबर अपने अनुभवसे मैंने हमेशा इस सिद्धान्तपर अत्यधिक जोर दिया है कि मजदूरोंको आत्मबलका विकास करना चाहिए। तब पूंजी सचमुच श्रमकी दास बन जायेगी। जिस प्रकार मैं चाहता हूँ कि भारत और इंग्लैंड एक-दूसरेसे सहयोग करें, उसी प्रकार मैं चाहता हूँ कि पूंजी और श्रम भी एक-दूसरेसे सहयोग करें।

मुसलमानों द्वारा प्रस्तावित संयुक्त मतदानके सम्बन्धमें महात्मा गांधीने कहा कि संयुक्त मतदानका प्रस्ताव एक शुभ लक्षण है और अच्छा शकुन है। पर जबतक मैं प्रश्नके सभी पहलुओंपर विचार न कर लूँ, तबतक अपनी राय विस्तारसे देनेका खतरा नहीं उठा सकता। उन्होंने कहा कि प्रस्तावित अखिल भारतीय सम्मेलनमें इस मामलेका अन्तिम रूपसे फैसला हो जायेगा।

क्या निकट भविष्यमें आपका विदेश यात्राका कोई इरादा है?

इस समय तो मेरा कोई इरादा नहीं है।

चीन जानेका भी नहीं?

मैं अभी कुछ निश्चित रूपसे नहीं कह सकता पर इतना जानता हूँ कि इस साल मैं चीन नहीं जा रहा हूँ।

क्या खादीके सन्देशका हरिद्वारके तीर्थयात्रियों और साधुओंपर कुछ प्रभाव पड़ा था?

इस सम्बन्धमें कुछ कहना बड़ा कठिन है। सच तो यह है कि पंडित मदनमोहन मालवीय खादी प्रचार कार्यमें इन साधुओं और तीर्थयात्रियोंकी सहानुभूति पानेका

भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। वे इन लोगोंके कहीं ज्यादा सम्पर्कमें हैं। मेलेके समय वे १० दिनतक हरिद्वारमें रहेंगे और खादी आन्दोलनमें साधु दिलचस्पी लेने लगें, इसके लिए वे यथासम्भव सब-कुछ करेंगे।

खादी और मद्यनिषेध कार्य तथा अस्पृश्यता-निवारणके लिए उन लोगोंकी सहायता प्राप्त करनेकी दृष्टिसे क्या आप और अधिक संख्यामें सम्मेलनोंका आयोजन करेंगे?

यह सही है कि साधु इन सब कामोंमें बहुत-कुछ कर सकते हैं, पर इस वक्त मैं यह नहीं कह सकता कि मैं उनके साथ बातचीत करनेके लिए विशेष सम्मेलनोंका आयोजन करूँगा। पण्डित मालवीयजीने इस दिशामें कदम उठाया है और वे उनपर मुझसे ज्यादा प्रभाव डाल सकते हैं।

भारतमें मद्यनिषेध जल्दी किया जा सके, इसके लिए आप प्रचारके किन खास तरीकोंका सुझाव देंगे। उचित सावधानी बरतते हुए शान्तिपूर्ण धरना फिरसे शुरू करनेके बारेमें आपका क्या विचार है?

यदि जितनी चाहिए उतनी सावधानीके साथ धरना देना सम्भव हो तो मैं किसी समय भी उसका स्वागत करूँगा। परन्तु मैं नहीं जानता कि अब फिरसे धरना देना शुरू किया जा सकता है या नहीं। धरना देनेके लिए शान्तिपूर्ण वातावरणकी आवश्यकता होती है, लेकिन सवाल तो यह है कि क्या आज देशमें सचमुच ऐसा वातावरण है। मुझे जिस समय वातावरणके शान्तिपूर्ण होनेका विश्वास हो जायेगा उसी समय मैं स्वयं धरना शुरू करनेके लिए तैयार हूँ। लेकिन अभी इस समय मुझे ऐसा विश्वास नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-३-१९२७

१८९. भाषण : घाटकोपरके सार्वजनिक जीवदया खातामें

२४ मार्च, १९२७

गुरुवारकी सुबह बम्बई सरकारके वित्त मन्त्री सर चुन्नीलाल मेहता और अहमदाबादके वल्लभभाई पटेलके साथ गांधीजी घाटकोपर जीवदया खाता[1] देखने गये। . . . उन्हें संस्थाकी पशुशाला और पशु दिखानेके बाद . . . संस्थाके मन्त्रीने उनका हार्दिक स्वागत किया। . . .

[उत्तर देते हुए] गांधीजीने कहा कि मैं [संस्थाको देखकर] बहुत ही प्रसन्न हुआ हूँ और जीवदया खाता समितिको बधाई देता हूँ। जबसे मैंने १९२५ में बेलगांवमें गोरक्षा-कार्य हाथमें लिया, तबसे मेरी बहुत इच्छा थी कि मैं इस संस्थाको देखूं।

१. १९२३ में स्थापित एक संस्था। जिसका उद्देश्य बम्बईमें दुधारू पशुओंके वधको रोकना और नागरिकोंको शुद्ध दूध देना था।

परन्तु मैं इतना व्यस्त रहा हूँ कि मैं ऐसा नहीं कर पाया। १९२५में अपने दौरेके दौरान मुझे भारतमें दुधारू पशुओंके संरक्षणसे सम्बन्धित विषयका अध्ययन करनेके बहुतसे अवसर मिले थे। और मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि दुधारू पशुओंका वध तबतक कारगर रूपसे बन्द नहीं किया जा सकता जबतक उनका वध रोकनेके इच्छुक लोग भी चमड़ेका काम शुरू नहीं करते। यह देखते हुए कि भारतसे प्रतिवर्ष ९ करोड़ रुपयेकी खालें विदेश भेजी जाती हैं, इस उद्योगका काफी महत्त्व है। हिन्दुओंके लिए भी चमड़ेका व्यापार करना पाप नहीं है। और मुझे आशा है कि जब मैं अगली बार सार्वजनिक जीवदया खाता देखने आऊँगा तब यहाँ चमड़ा साफ करनेका एक कारखाना भी चालू हो चुका होगा। अन्तमें गांधीजीने संस्थाकी समितिको सलाह दी कि वह भैंसें पालनेके बजाय अपने सब साधनोंका उपयोग गोपालनके लिए करे।

महात्माजीने कहा कि यदि मैं बम्बईका गवर्नर होता तो मैं इस पशुशालाको बीस मील दूर ले जाता और उसके लिए केवल १० एकड़ ही नहीं, वरन् चरागाह बनानेके लायक हजारों एकड़ भूमि देता। संस्थाको आर्थिक लाभके लिए पशुशालासे सम्बद्ध एक चमड़ेका कारखाना भी खोलना चाहिए। उसे खेतीसे सम्बन्धित संस्थाओंसे सम्पर्क बढ़ाना चाहिए ताकि खादका अधिक लाभदायक उपयोग हो सके।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-३-१९२७

१९०. भेंट: महाराष्ट्रके दौरेके सम्बन्धमें[2]

२४ मार्च, १९२७

मैं अपने कुछ मित्रोंकी इस आशंकासे कि महाराष्ट्र चरखा और कताई सम्बन्धी सन्देशको प्रेमसे नहीं अपनायेगा, कभी सहमत नहीं था। अबतक जो चन्दा इकट्ठा हुआ है मेरे अनुमानसे बहुत ज्यादा है, क्योंकि मेरा अनुमान सिर्फ १ लाखका था। कुल मिलाकर १,२०,००० रुपये प्राप्त हुए। इसमें खादीकी बिक्रीसे प्राप्त रकम शामिल नहीं की गई जो लगभग बिहारके बराबर ही अच्छी हुई।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-३-१९२७

१. यह अनुच्छेद २६-३-१९२७ के *हिन्दुस्तान टाइम्स*से लिया गया है।

२. यह भेंट गांधीजीने कोल्हापुरके लिए रवाना होते समय पूना रेलवे स्टेशनपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको दी थी।

१९१. भाषण: बालकोंकी सभा, कोल्हापुरमें[1]

२५ मार्च, १९२७

स्कूलके सारे ही छोटे-छोटे बच्चे खासी-अच्छी रकमकी थैली लिये हुए धूपमें खड़े गांधीजीका इन्तजार करते रहे। थैलीकी रकम उन्होंने ही इकट्ठा की थी। गांधीजीने उन्हें निर्भीकताका पाठ सिखाया:

निर्भीकता समस्त शिक्षणका आधार है, अथ है इति नही है। यदि शिक्षाका महल तुम उसी [निर्भीकताकी] नींवपर बनाकर तैयार नही करोगे तो तुम्हारी सारी शिक्षा व्यर्थ ढह जायेगी।

उन्हें इस पाठको हृदयंगम करानेके लिए उन्होंने बच्चोंको प्रह्लादकी कथा सुनाई और उसी तरह शालीनतासे, बहादुरीसे परिणामोंकी परवाह किये बिना जैसे कि बारह सालके प्रह्लादने किया था, सत्यकी घोषणा करनेकी प्रेरणा दी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-३-१९२७

१९२. भाषण: कोल्हापुरके ईसाइयोंके समक्ष

कोल्हापुर
२५ मार्च, १९२७

'ईश्वरका राज्य' आनेके बारेमें मेरा अनुभव यही कहता है कि ईश्वरका राज्य तो आज भी है और आप जिस 'बाइबिल'को मानते हो, उसके अनुसार ईश्वरका राज्य हमारे दिलमें है, और यदि ईश्वरके भक्त उसे देखना चाहते हों तो ईश्वरका कार्य करके ही उसे देख सकते हैं। उसका सिर्फ नाम जपकर उसे नही देखा जा सकता। इसलिए आप यदि यह बाट जोहते हुए बैठे हों कि ईश्वरका राज्य किसी दिन आनेवाला है, तो यह आपकी भारी भूल है। आपको तो यह समझ लेना चाहिए कि ईश्वरका राज्य हमारे दिलमें ही है। आप कहते हैं कि आपको मेरा काम अच्छा लगता है। यह सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई है। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि मै जो कार्य कर रहा हूँ उसका उद्देश्य इसी राज्यको लाना है। इसे सिद्ध करनेके लिए ही मैं अस्पृश्यता दूर करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि यदि आपको यह काम पसन्द हो तो आपको खादी भी अपनानी चाहिए, क्योंकि मेरे मतानुसार अस्पृश्यता निवारणके द्वारा हम जो-कुछ करना चाहते हैं, खादी कार्य उससे भी आगे जाता है। क्या आपको मालूम है कि

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

भारतमें लाखों ऐसे गाँव हैं जहाँके लोग भूखों मर रहे हैं और सर्वनाशके किनारे पर खड़े हैं। यदि हम ईश्वरकी आवाज सुनना चाहते हैं, तो वह यही कहती है कि आप भूखसे मर रही इस जनताका विचार करें, मेरा नाम लेना झूठ है। इसलिए यदि हम गरीबोंको मदद देना चाहते हैं और उनका काम करना चाहते हैं तो हमें क्या करना चाहिए? यही चरखा सामने आता है। कोई आठ दिन हुए सैम हिगिनबॉटम नामके ईसाई मिशनरी मित्र मुझे मिलने आये थे। वे जानना चाहते थे कि गरीबोंके लिए क्या धन्धा हो सकता है, संयोगवश वे जिस जगह मुझसे मिलने आये वह उस क्षेत्रमें है, जहाँ गरीबोंने चरखेकी मदद ली है। उन्होंने स्वयं अपनी आँखोंसे देखा कि चरखेमें कितनी शक्ति है। यदि आप भी स्वयं देखना चाहते हैं तो वहाँ जाकर देखिए। और आपको जाकर देखनेका अवकाश न हो तो मेरे जैसे जो व्यक्ति उनके बीच रहते हैं उनकी बातपर विश्वास कीजिए। यदि आपको विश्वास हो तो स्वयं सूत कातिए और गरीबों द्वारा बनाई हुई खादीका उपयोग कीजिए। यहाँ प्रदर्शनी हो रही है। यदि आपको मेरी बात ठीक लगती हो तो प्रदर्शनीमें जाकर खादी देखिए और उसकी सारी खादी खरीद डालिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-४-१९२७

१९३. भाषण: कोल्हापुरकी सार्वजनिक सभामें

२५ मार्च, १९२७

खादीका उद्देश्य बहुत महान है। लेकिन ऐसा नहीं है कि खादी पहननेसे कोई बुरा मनुष्य अपने आप अच्छा बन जाता है। पर मैं तो व्यभिचारी और वेश्यासे भी कहूँगा कि आप खादी पहनें। मैं उनसे कहूँगा कि आपके चरित्रके बारेमें तो मैं आपसे क्यों कहूँ? उसका जवाब तो ईश्वर लेगा ही। लेकिन गरीबोंके लिए आपके हृदयमें सहानुभूति हो तो आप खादी जरूर पहनें। हम गेहूँ खाते हैं; वे भी उसी तरह गेहूँ खाते हैं न? उसी तरह वे खादी भी पहनें, ब्राह्मण पहनें, ब्राह्मणेतर पहनें, पारसी पहनें, ईसाई पहनें, मुसलमान पहनें, जिन्हें देशसे प्रेम हो वे सब खादी पहनें। खादीमें स्वार्थके साथ परमार्थ भी सधता है। शराब और व्यभिचारमें रुपया लुटानेवाला पापी है। बीड़ी पीनेवाला अपेक्षाकृत कम पाप करता है। विदेशी कपड़ा पहननेवाला भी कदाचित्त बीड़ी पीनेवाले के बराबर ही पाप करता है। मिलका कपड़ा पहननेवाला पाप नहीं करता तो पुण्य भी नहीं करता, क्योंकि धनवानका घर भरना हमारा कर्त्तव्य नहीं है। पर खादी लेनेवालेकी बात दूसरी हो जाती है। खादीकी पूरी-पूरी कीमत गरीबके घर जाती है, गरीबोंके साथ उसका सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इस प्रकार, खादी पहननेवालेकी वृत्ति सुधरती है, इसमें कोई शंका नहीं है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ३-४-१९२७

१९४. पत्र : एस्थर मेननको

[२६ मार्च, १९२७ से पूर्व][1]

मेरी प्यारी बच्ची,

तुम्हारा दर्द-भरा पत्र मिला। मैं सोच रहा था कि इतने लम्बे अर्सेसे तुम्हारा कोई पत्र जाने क्यों नही आया। अब मैं समझ गया। तुम्हे इतनी पस्त हालतमें देखकर मुझे दुःख होता है। यह पत्र लिखनेमें काफी खलल पड़ रहे हैं। मेरे पास एक पलका भी अवकाश नही है। इसलिए मैं तुम्हे अपना प्यार और प्रार्थनायुक्त आशीर्वाद भेजता हूँ। अप्रैलमें दक्षिणमें रहूँगा। अपने दौरेके बीच मैं तुमसे मिलनेकी जी तोड़ कोशिश जरूर करूँगा।

जब मेरिया लौटेगी, मुझे देखना ही होगा कि कताईके लिए क्या कुछ किया जा सकता है।

तुम सबको सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

माई डियर चाइल्ड तथा अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकलसे भी।

सौजन्य: नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया

१९५. डा० वेन्लेसके साथ बातचीत[2]

[२६ मार्च, १९२७][3]

यह एक ऐसा उदाहरण है जिसमें डाक्टर लोग सौभाग्यसे गांधीजीको मना सकनेमें सफल हुए। जहाँ वे असफल रहे हैं ऐसे उदाहरण तो हो ही चुके हैं, बहुतसे डाक्टरोंने प्रमाणित किया है कि गांधीजी बहुत दृष्टियोंसे एक आदर्श रोगी हैं; परन्तु कभी-कभी वह डाक्टरोंके लिए निराशाका कारण भी बन जाते हैं। डाक्टरने

१. पत्रमें आए दक्षिण भारतके दौरेके उल्लेखसे प्रतीत होता है कि यह पत्र अवश्य ही गांधीजीने बीमार पड़नेसे पहले लिखा होगा। गांधीजी अधिक काम करनेके फलस्वरूप २५ मार्चको मस्तिष्क की नसों की संज्ञा-शून्यतासे बाल-बाल बचे थे। रक्त चाप बहुत बढ़ गया था। इस शीर्षकसे लेकर आनेके अनेक पत्रोंमें उसीका उल्लेख है। "पत्र: मीराबहनको", की पाद-टिप्पणी भी देखिए।

२. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

३. बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-३-१९२७ और यंग इंडिया, ३१-३-१९२७ से।

गांधीजीको विपत्ति[1] आते ही पूर्ण शारीरिक विश्राम लेनेकी हिदायत दी। इसमें कताई बन्द कर देना भी शामिल था।

अच्छा, तो आप मेरा कातनेसे पहले और कातनेके बाद रक्तचाप ले लें और यदि आप मुझे विश्वास दिला सकें कि कातनेके बाद रक्तचाप चिन्ताजनक दशा तक बढ़ गया है, तो मैं आपकी सलाह मान लूँगा। इसके विपरीत मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कातना निश्चय ही उद्योगसे विश्रान्ति है। इससे स्नायुमण्डलको शान्ति मिलती है। और डाक्टर, आपको यह अवश्य मालूम होना चाहिए कि मेरी जीवनसंहिता आपकी जीवनसंहितासे नितान्त भिन्न है। दृष्टान्तके रूपमें आप सब तरहकी औषधियोंका विधान करेंगे। मैंने जीवनकी ऐसी पद्धति बनाई है जिसे मैं शायद कुछ विशेष स्थितियोंमें न बदलूँ। अतः यदि आप मुझे ऐसी औषधि दें जो पाँच ही चीजोंकी बनी हो, तो मैं इसे ले लूँगा। किन्तु तब आप इस बातके लिए सहमत हो जायें कि मैं भोजन त्याग दूँ; क्योंकि मैं दिनमें पाँचसे ज्यादा चीजें किसी भी दशामें नहीं ले सकता। इसलिए या तो आप मुझे यह विश्वास दिला दें कि औषधि मेरे स्वास्थ्यके लिए भोजनसे भी ज्यादा जरूरी है, या आप इसपर सहमत हो जायें कि आप मुझे कोई औषधि नहीं देंगे। एक और भी बात है। कातना एक ऐसी चीज है जिसके बिना मैं जीवित नहीं रह सकता। यदि मेरे लिये भोजन करना और जीवित रहना जरूरी है तो कातना भी जरूरी है और यदि आप आकर देखें कि मैं कातते-कातते ही लुढ़क गया हूँ तो वह कितनी गरिमामय मृत्यु होगी। यदि आप डाक्टरके रूपमें अपने अनुशासनपर अड़े रहेंगे तब तो आप मेरे आसपासके लोगोंको इसपर बहुत भला-बुरा कहेंगे; परन्तु यदि आप अच्छे व्यक्ति हैं तो आप कहेंगे कि यह स्वागत योग्य मृत्यु है। आपको यह अवश्य जान लेना चाहिए कि यदि मैं जीवित रहूँ और कात न सकूँ तो इससे मेरी अन्तरात्माको बड़ा आघात पहुँचेगा और इससे मेरा जीवन अत्यन्त दुःखी हो जायेगा। मैं पढ़ना, लिखना और कातना भी तभी बन्द कर सकता हूँ जब मैं भोजन करना भी बन्द कर दूँ। क्या आप मुझे ऐसा करनेकी आज्ञा देंगे?

नहीं, डाक्टर जबतक आप अपने उपचारके अचूक होनेका दावा नहीं कर सकते मैं आपकी आज्ञाका पूरी तरह पालन नहीं कर सकता।

डाक्टरने न्यायसंगत उत्तर दिया कि यदि हम इस प्रकारका दावा कर सकें, तो हमें दवाइयाँ नहीं देनी चाहिए अपितु भविष्यवाणी करनेवाले देवताओंकी तरह मन्दिरोंमें बैठे रहना चाहिए।

फिर इसमें आश्चर्यकी क्या बात है कि डाक्टर बेन्लेसने साफ शब्दोंमें कह दिया कि अनिश्चित कालतक विश्रामके अतिरिक्त अन्य कोई उपचार आवश्यक नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-४-१९२७

१. डाक्टरी रायके बारेमें देखिए परिशिष्ट ३।

१९६. पत्र : मणिबहन पटेलको

रविवार [२७ मार्च, १९२७ या उससे पूर्व][1]

चि० मणि,

तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा है। मैं जानता हूँ कि तुम जानबूझकर मुझे पत्र नहीं लिखती। परन्तु अब तो ऐसा करना जरूरी नहीं है। संस्कृतकी पढ़ाई कितनी हुई? अब कातने-पींजनेमें पहला नम्बर आयेगा या नहीं?

कराचीकी कोई खबर नहीं। तबीयत कैसी रहती है?

मैं ठीक होता जा रहा हूँ। मेरी चिन्ता करनेका कारण नहीं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने

१९७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

[२७ मार्च, १९२७के पश्चात्][2]

प्रिय सतीश बाबू,

इस समय जब कि मैं स्वयं ही संकटमें हूँ, आपके बारेमें पूछनेका कोई अधिक अर्थ नहीं है। मैं अपने आपको इस संकटसे बाहर निकालनेकी कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु यदि ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही हो तो मेरे प्रयत्नोंसे क्या होता है? मैं १३ अप्रैल, १९२८ से आगे किसी तरह भी चल सकनेकी आशा नहीं रखता। मुझे और कुछ नई बात कहने या लिखनेको नहीं है। हाँ, यह सम्भव है कि मैं कुछ और इकट्ठा कर लूँ, कुछ और अधिक सुझाव दूँ या एक पैबन्द वहाँ लगा दूँ और एक यहाँ लगा दूँ। परन्तु वास्तवमें मेरा समय आ गया है। सन्देशको कार्यान्वित करना अब आपका काम है। इसलिए अब आपको रहना है और काम करना है। यदि मैं बच भी जाऊँ, तो मैं स्पष्टतः सक्रिय कार्यके लिए अधिक उपयोगी नहीं रहूँगा। देखें क्या होता है: "हे ईश्वर, तेरी इच्छा पूरी होगी हमारी नहीं।" तब भविष्यमें झांक कर देखनेसे भी क्या लाभ? इस समय तो ऐसा लगता है,

१. पत्रमें संस्कृत, कताई, पिंजाई और रविवारके उल्लेखसे; देखिए "पत्र: मणिबहन पटेलको", २८-३-१९२७।

२. ऐसा प्रतीत होता है कि यह पत्र गांधीजीने बीमार पड़नेके बाद लिखा होगा।

मानो मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ। इसलिए मैं उन मित्रोंको, जिनका मुझे ध्यान आता है; परन्तु जिनसे बात करनेका समय नहीं है; प्रेम सन्देश भेजकर अपना मन बहलाता रहता हूँ।

आपको तथा हेमप्रभादेवीको प्यार।

आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १६३५) की फोटो-नकलसे।

१९८. राष्ट्रीय सप्ताह और गुजरात

राष्ट्रीय सप्ताहके सम्बन्धमें श्री वल्लभभाई पटेलने गुजरात प्रान्तीय कमेटी की ओरसे जो माँग की है, मुझे उम्मीद है कि गुजरातके लोग उसका स्वागत करेंगे और उसे पूरा करेंगे। गुजरातके लिए एक लाख रुपयेकी रकम कुछ भी नहीं है, ऐसा कहें तो गलत न होगा। यह पैसा भी केवल दलित वर्गोंकी सेवाके लिए चाहिए। दलित वर्गोंमें अन्त्यज और रानीपरज आते हैं। लेकिन अब तो हम अन्त्यजोंके लिए भी जहाँतक सम्भव होगा वहाँतक 'दलित' शब्दका ही प्रयोग करेंगे। 'दलित' शब्द स्वामी श्रद्धानन्दने चलाया था। उसी भावको व्यक्त करनेवाला एक अंग्रेजी शब्द स्वामी विवेकानन्दने चलाया। उन्होंने अस्पृश्योंको 'डिप्रेस्ड'—'दबे हुए' नहीं अपितु 'सप्रेस्ड'—'दबाये गये' कहा। और यह ठीक भी है। तथाकथित उच्च वर्णोंने उन्हें दबाया, इसलिए वे दब गये और दबे हुए रहते हैं। इसके लिए हिन्दी शब्द 'दलित' है। सारे दलित वर्गोंमें अस्पृश्य सबसे अधिक दलित कहे जा सकते हैं। 'रानी (काली) परज' भी दलित ही है और चौधरा आदि ऐसी अन्य जातियाँ भी। इन सबकी यथाशक्ति सेवा करना प्रान्तीय कमेटीका उद्देश्य है। इस सेवामें स्वराज्य प्राप्त करनेका रचनात्मक कार्य निहित है; उसीमें परोपकार है और धर्म है। इसलिए मैं उम्मीद रखता हूँ कि वल्लभभाईकी इस प्रार्थनाका सब लोग स्वागत करेंगे और तुरन्त एक लाख रुपया इकट्ठा कर देंगे और उस कार्यके लिए आवश्यक सच्चे प्रामाणिक स्वयंसेवकोंके नाम शीघ्र ही मिल जायेंगे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २७-३-१९२७

१९९. खादीकी प्रगति

भाई लक्ष्मीदासने अपनी यात्राके अनुभव देते हुए जो पत्र लिखे हैं उन्हें मैं अभीतक नहीं छाप सका हूँ। कारण, मुझे उन्हें देखने और [छापनेकी दृष्टिसे] व्यवस्थित रूप देनेका वक्त बिलकुल नहीं मिला। मेरे पास उनके बहुतसे उपयोगी पत्र इकट्ठे हो गये हैं। अब मैंने किसी तरह वक्त बचाकर उनमें से कुछ देनेका निश्चय किया है। यहाँ मैं उनके चन्द्रनगरके प्रवर्तक संघकी और खादी प्रतिष्ठानकी कलाशालाकी प्रवृत्तियोंका विवरण देनेवाले पत्र दे रहा हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २७-३-१९२७

२००. गोरक्षाकी शर्तें

[२८ मार्च, १९२७][2]

मेरे लिए यह अफसोसकी बात रही है कि जीवनके अन्तिम वर्षोंमें मैंने अपने सिर गोरक्षाका भार लिया है। मगर जब जिम्मेदारियाँ ढूँढ़े जानेके बजाय बिना ढूँढ़े ही हमारे उपर आ जातीं हैं, तब अफसोसकी कोई बात नहीं रह जाती। गोरक्षाके विषयमें मेरे साथ यही बात हुई है।

हालमें, घाटकोपर, बम्बईकी जीवदया संस्थाकी गोशाला[3] देखनेका अवसर मुझे मिला। इसका प्रबन्ध सुचारुरूपसे, संस्थाके मन्त्री श्रीयुत नगीनदास कर रहे हैं। यह संस्था अन्ततोगत्वा बीच बम्बईमें स्थित है और यह दुर्व्यवस्थित और रोगोंके घर खानगी दुग्धालयोंका, जहाँ घूमने-फिरने लायक जगह नहीं है और जहाँ अच्छेसे-अच्छा जानवर असमय ही कसाई की छुरीके धार उतार दिया जाता है, स्थान लेनेके प्रशंसनीय उद्देश्यसे दुग्धालय चलानेका प्रयोग कर रही है।

यद्यपि इस संस्थाका प्रबन्ध सुचारुरूपसे होता है, इसमें सहज दोष भी हैं। पूछनेपर मुझे संस्थाका ध्यान भी उन दोषोंकी ओर दिलाना पड़ा। इसी सिलसिलेमें मैंने गोरक्षाकी शर्तोंको बतलानेका भी साहस किया। उन्हें यहाँ दुहरानेसे लाभ ही होगा।

१. ऐसी हरएक संस्था बाहर इस प्रकारकी खुली जगहमें होनी चाहिए, जहाँ काफी तादादमें, हजारों बीघे खुली जमीन मिल सके, जिसमें ढोरोंके लिए चारा उगाया

१. यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

२. देखिए "पत्र: मगनलाल गांधीको", २८-३-१९२७।

३. देखिए "भाषण: घाटकोपरके सार्वजनिक जीवदया खातामें", २४-३-१९२७।

जा सके और घुमा-फिराकर उनका व्यायाम भी कराया जा सके। अगर सभी गोशाला-ओंका प्रबन्ध मेरे हाथोंमें होता तो मैं अधिकांश गोशालाओंको मुनाफेमें बेच देता और आसपासमें ही सुभीतेकी जमीन खरीदता। जिन गोशालाओंकी आवश्यकता केवल दूधके डिपोके लिए होती, सिर्फ उन्हें ही नहीं बेचता।

२. प्रत्येक गोशालाको आदर्श दुग्धालय और चर्मालय बनाना चाहिए। हरएक मरे हुए ढोरके चमड़ेको वैज्ञानिक ढंगसे कमाया जाना चाहिए और उसकी खाल, हड्डियों और दूसरे अंगोंका अधिकसे-अधिक लाभदायक उपयोग होना चाहिए। मैं मृत ढोरके चमड़ेको वध किये गये ढोरके चमड़े और उसके अन्य अंगोंसे जिन्हें मानवके या कमसे-कम हिन्दुओंके व्यवहारके लिए अनुपयुक्त मानना चाहिये, पवित्र और व्यवहार्य वस्तु मानूंगा।

३. कई गोशालाओंमें गोमूत्र और गोबरको फेंक दिया जाता है। इस बरबादीको मैं गुनाह मानता हूँ।

४. सभी गोशालाओंका प्रबन्ध वैज्ञानिक ढंगसे होना चाहिए।

५. अगर सुचारुरूपसे प्रबन्ध किया जाये तो हरएक गोशाला स्वावलम्बी होनी चाहिए, और वह स्वावलम्बी बनाई जा सकती है और दानकी रकमोंका उपयोग गोशालाके विकासमें हो सकता है। इन संस्थाओंको मुनाफा कमानेवाली संस्थाएँ बनानेका विचार नही है; बल्कि सभी मुनाफोंका उपयोग अंगहीन, लाचार और खुले बाजारमें कसाईखानेके लिए बिकनेवाले सभी जानवरोंको खरीदनेके काममें किया जाना चाहिए।

६. अगर गोशालाएँ भैंस, बकरियाँ भी रखेंगी तो फिर ये सारे काम हो पाना असम्भव होगा। जहाँतक मैं देख सकता हूँ, मैं इससे कितना ही उलटा क्यों न चाहूँ, मगर जबतक सारा हिन्दुस्तान निरामिष भोजी नही बन जाता, तबतक क्या बकरियाँ या भेड़ें कसाईकी छुरीसे बचायी जा सकती हैं? अगर हम भैंसका दूध पीनेका आग्रह छोड़ दें और धर्म समझकर गायके दूधकी तुलनामें भैंसके दूधको तरजीह न दें तो गायको बचाया जा सकता है। दूसरी ओर बम्बईमें गायके दूधके बदले, भैंसका ही दूध पीनेका चलन है। सभी चिकित्सक एकमतसे कहते हैं कि स्वास्थ्यकी दृष्टिसे गायका दूध भैंसके दूधसे कही अच्छा होता है और दुग्धालय-विशेषज्ञोंकी राय है कि विवेकपूर्ण प्रबन्ध द्वारा गायका दूध, जैसा आजकल मिलता है, उससे कही अधिक पुष्टिकर बनाया जा सकता है। मैं मानता हूँ कि गाय और भैंस दोनोंको बचा सकना असम्भव है। गायकी रक्षा केवल तभी की जा सकती है जब भैंसकी नस्ल बढ़ाना बन्द कर दिया जाये। खेती के काममें भैंसेका उपयोग बड़े पैमाने पर नही हो सकता। अगर उनकी नस्ल हम और न बढ़ायें, तो आज जितनी भैंसें हैं, उन्हें हम बचा सकते हैं, तो भैंसकी या इस दृष्टिसे गायकी भी नस्ल बढ़ाना धर्मका कोई अंग नही है। हम अपने कामके लिए उनकी नस्ल खड़ी करते हैं। भैंसकी नस्ल तैयार करना तो गाय और भैंस दोनोंके प्रति क्रूरता है। जीवदयावादियोंको मालूम होना चाहिए कि इस समय भी हिन्दू ग्वाले पाड़ेको बड़ी निर्दयतासे मार डालते हैं, क्योंकि उसे खिलानेमें कोई

लाभ नहीं होता है। गाय और उसकी सन्ततिकी रक्षाके लिए — हिन्दू गाय और उससे सम्बद्ध तिजारतमें से मुनाफा छोड़ सकते हैं, किसी अन्य दशामें नहीं और यही एकमात्र व्यावहारिक प्रस्ताव है। सच्चे धर्मको जीवदयाका खाता ठीक रखना ही होगा यानी आमदनी और खर्च पूरी तरह बराबर होने चाहिए। ऐसी स्थिति गाय और केवल गायके मामलेमें ही कुछ वर्षतक धार्मिक हिन्दुओंके दानकी सहायता मिलनेपर सम्भव हो सकती है। यह याद रखना चाहिए कि यह बहुत बड़ा मानवीय प्रयोग गोभक्षक संसारके विरोधके रहते हुए हो रहा है। जबतक सारा संसार मुख्यतः निरामिष भोजी नहीं बन जाता, मैंने जो सीमाएँ बतलाई हैं उनसे आगे बढ़ सकना क्या सम्भव है? यहाँतक सफलता पानेका अर्थ है, आगेकी पीढ़ियोंके लिए और प्रयत्न करनेका रास्ता खोल देना। इन सीमाओंका उल्लंघन करनेका अर्थ होगा, हमेशाके लिए गायको और उसके साथ-साथ भैंस तथा और दूसरे जानवरोंको भी कसाईके हाथोंमें दे देना।

गोशालाओं और पिंजरापोलोंके प्रबन्धक हिन्दू लोग और दूसरी दयाप्रचारिणी सभाएँ, अगर वे वास्तवमें धार्मिक हैं, तो गोरक्षाकी ऊपर दी हुई शर्तोंको ध्यानमें रखेंगी और उन्हें तुरन्त ही अमलमें लाना शुरू करेंगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-३-१९२७

२०१. पत्र : सतीशचन्द्र मुखर्जीको

२८ मार्च, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

मैं जानता हूँ कि आप मेरे बारेमें सोचते रहते हैं। "मत सोचिए" ऐसा कहना निष्ठुरता होगी। परन्तु "प्रार्थना कीजिए" यह कहना न्यायसंगत होगा। बीमार हूँ या ठीक हूँ, जी रहा हूँ या मर रहा हूँ, इन चीजोंका आपके लिए या मेरे लिये कोई महत्त्व नहीं होना चाहिए। चिन्ता करनेसे मेरे लिए जितना समय नियत है उसमें एक क्षण भी और नहीं बढ़ जायेगा। इस सम्बन्धमें अभी कुछ भी निश्चित नहीं है कि आगे मुझे क्या करना है। यथासम्भव मैं डाक्टरोंके निर्देशपर चल रहा हूँ।

"कलकी कुछ चिन्ता मत करो" यह यीशुका सुन्दर संग्रहीत वचन है। "सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ"[1] यह श्लोक इस समय मेरे मनको बहुत भला लग रहा है। दोनों कहावतोंमें अन्तर्निहित अभिप्राय एक ही है।

हृदयसे आपका
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९१७१) की नकलसे।
सौजन्य : के० पी० एस० मालानी

1. **भगवद्गीता**, अध्याय २, श्लोक ३८।

२०२. पत्र : मगनलाल गांधीको

निपाणी
मौनवार [२८ मार्च, १९२७]

चि० मगनलाल,

मेरे बीमार पड़नेसे तुम तो नहीं ही घबराओगे। भाई वोमनजीकी असुविधाओंका ध्यान रखना और फिक्र मत करना। इन्हें कमोड आदि ऊपर ही चाहिए।

मृत्युंजयने कहा है कि वह मर्यादाका पालन करेगा। इसीके आधारपर मैंने विद्यावती और प्रभावतीको आश्रमकी सीमाके भीतर रखनेका सुझाव दिया। हम भी तो रहते हैं न? मुझे जितना विश्वास अन्य लोगोंके शब्दोंपर है उतना ही मृत्युंजयके शब्दोंपर भी है। वह अत्यन्त विनम्र और सत्यशील युवक है। राजेन्द्र बाबूके सारे गुण उसमें आये हैं। लेकिन यदि तुम उसका कोई और प्रबन्ध करना चाहते हो तो अवश्य कर सकते हो।

बीजापुरका मामला क्यों लटका हुआ है? हम ब्याज नहीं देंगे? कहाँसे दें? क्या देशपाण्डे साहब काम करनेसे इनकार करते हैं?

सर गंगारामको तो अब लिख ही देना।

मैं छोटेलालको पत्र लिख रहा हूँ। गोरक्षाके बारेमें तुम्हें जो समझमें आये सो लिखना। अब एक भी भैंस न लेना। मेरा लेख[1] 'यंग इंडिया'में पढ़ना।

पुरुषोत्तदासने रा[मचन्द्र]की लिफ्टके बारेमें बिलकुल विपरीत विचार व्यक्त किया है। उसके मुद्देको धीरजके साथ समझना। मेरा खयाल है तुमने तकुएके सम्बन्धमें कोई व्यवस्था कर ली होगी और आप्टेको लिख दिया होगा। कताई निबन्ध भेज दिया होगा।

तुमने अलोना छोड़नेका निश्चय करके ठीक ही किया। शारदाबहनने[2] चार घंटे कातने और पीजनेके लिए कहा था। उन्होंने यह भी कहा था कि अगर बन सका तो वे सिलाई भी करेंगी और यथाशक्ति रसोईमें भी मदद करेंगी। अब क्या हुआ, सो लिखना।

मैं जूनतक टिका रह सका तो परिषदके लिए वहाँ आऊँगा ही। उससे पहले भी आ सकता हूँ।

मैंने काकाको जो पत्र लिखा था वह काकाने स्वयं पढ़नेको दिया ही होगा। उसके सम्बन्धमें मुझे काकाका तथा अन्य शिक्षकोंके पत्र प्राप्त हुए हैं। काकाने मेरी बीमारीकी खबर सुनकर अपनी बात वापस ले ली है। तुम सब धर्म देखकर निर्णय

१. देखिए "गोरक्षाकी शर्तें", २८-३-१९२७।

२. शारदाबहन शाह।

करो, ऐसी मेरी इच्छा है। बीमारीको भूल जाना। मेरे पत्रमें तो उसका जिक्र नहीं है। आज बीमारी है तो कल मौत। उसका विचार क्या करना? अथवा उसे ध्यानमें रखते हुए ही हमें सब निर्णय करने चाहिए। इसलिए यह कोई नई बात नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

मेरा कार्यक्रम अभीतक निश्चित नहीं हुआ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१२६) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

२०३. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

निपाणी
मौनवार [२८ मार्च, १९२७]

प्रिय बहनो,

मेरी गाड़ी अटक गई है, इससे घबराना मत। आज तो अटकी ही है, कुछ वर्षो बाद टूट जायेगी; तब भी क्या? 'गीता' तो पुकार-पुकार कर कहती है और हम रोज अनुभव करते हैं कि जन्म लेनेवाले अवश्य मरते हैं और मरे हुए जन्म लेते हैं। सब अपना-अपना ऋण थोड़ा-बहुत अदा करके चलते बनते हैं।

मेरा कहना तो सही ही है। विकारके बिना रोग नहीं होता। निर्विकारको भी जाना तो है ही। मगर वह तो पके फलकी तरह अपने-आप गिर पड़ता है। मैं भी इसी तरह गिर जानेकी इच्छा और आशा करता हूँ। वह इच्छा और आशा आज भी है, परन्तु अब कौन जाने? विकार हैं और वे अपना प्रभाव दिखाते ही रहते हैं। निर्विकार स्थितिका अनुभव तो जब होगा तब होगा।

तुम अपने कर्त्तव्यमें सलग्न रहना। जवानी विकारोंको जीतनेके लिए मिली है। उसे हम ऐसे ही गँवा न दें। पवित्रताकी रक्षा करना। चरखा न छोड़ना। हो सके तो आश्रमको भी न छोड़ना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४३) की फोटो-नकलसे।

२०४. पत्र: मणिबहन पटेलको

निपाणी
मौनवार, २८ मार्च, १९२७

चि० मणि,

मेरी बीमारीका खयालतक न करना। वर्ष बीतते जाते हैं, उनका हम खयाल नहीं करते। वैसे ही विकारी मनुष्योंके नसीबमें बुढ़ापेकी तरह बीमारी भी लिखी हुई है न? कोई यूँ ही चले जाते हैं। किन्तु जाना तो सभीको है, फिर हर्ष-शोक क्यों?

अभीतक तुम्हारे बारेमें तार नहीं आया। अब तो आना चाहिए। तैयारी रखना। संस्कृत कितनी पढ़ ली? आशा है बुनने और कातनेका अभ्यास काफी हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यद्यपि बहनोंके नाम[1] तथा यह पत्र एक ही दिन लिखे गये हैं, फिर भी यह तुम्हें उनके बाद मिलेगा क्योंकि डाकका समय बीतनेपर लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

२०५. पत्र: राधाको

२८ मार्च, १९२७

चि० राधा,

बीमार पड़नेकी मनाही है, यह बात क्या तुम भूल गई? 'औरोंको नसीहत, खुद मियाँ फजीहत' ऐसा मत कह बैठना। मैंने तो मोहवश अपनी शक्तिसे अधिक काम उठा लिया, इसलिए ईश्वरने मुझे मार गिराया है। लेकिन तुमने ऐसा क्या किया है? खैर यह सब तो कहनेकी बात हुई — असली बात तो तुम्हारी बीमारी है। इसलिए अब बीमारीके बावजूद प्रसन्न रहना सीखना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२०६. पत्र : प्यारेलाल नैयरको

२८ मार्च, १९२७

मुझे उम्मीद है कि मेरे घायल होनेकी[1] बात सुनकर तुम अधीर न हुए होगे। घायल होनेवालेकी मृत्यु भी हो सकती है। इस बारके प्रहारको तो स्पष्ट रूपसे चेतावनी समझना चाहिए — आज नही तो कल — मैंने तो १३ अप्रैल, १९२८ तककी अवधि निश्चित की है। बादमें तो मकटकी घड़ी बीत जानेपर व्यक्ति सौ वर्षतक भी जीवित रह सकता है। यदि जीवित रहेंगे तो कातेंगे और यदि काता नही गया तो हम जिन्दा रहनेसे इनकार कर देंगे — यह बात तो उचित है न?

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२०७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२८ मार्च, १९२७

[चि०] जमनालालजी,

तुम घबराये तो नही होगे। एक न एक दिन तो ज्योति बुझ ही जायेगी; अभी तो केवल मन्द ही हुई है। ज्योति क्षीण हो अथवा समाप्त हो, हमें दोनोंको एक समान ही मानना चाहिए। जो तेज प्रदान करता है, वह क्षीण भी होता है और अन्तमें बुझता भी है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

1. बीमार होनेकी।

२०८. पत्र: द० बा० कालेलकरको

२८ मार्च, १९२७

चि० काका,

तुम भटक गये जान पड़ते हो। मैं मानता हूँ कि प्रभु-दासी सम्बन्ध अभी चल रहा है इसलिए मैं ऐसा लिख रहा हूँ। तुमने अपनी पहली प्रतिज्ञाओंका विचारतक न किया; पिछले पत्रपर भी ध्यान नहीं दिया और न ही तुमने मगनलालके आनेकी प्रतीक्षा की। दूसरे सारे शिक्षकोंके पत्र भी मिले हैं। मैं यहाँ जो कह रहा हूँ उसका अधिकांश उनपर भी लागू होता है। मगनलालके साथ बातचीत करनेके बाद तुम जो निर्णय करोगे उसे मैं स्वीकार करूँगा। मेरी बीमारीको बीचमें न आने देना और निर्णय भी जैसे-तैसे चलानेकी खातिर न करना। निर्णय धर्मकी दृष्टिसे किया जाये तो उससे किसी प्रकारकी हानि नहीं होती। मैं बीचमें नही हूँ और शाला तथा आश्रम तुम सबके हैं, ऐसा मानकर जो करना जरूरी हो वही करना।

मेरी चिन्ता न करना। तुम सब ज्ञानी हो। इसलिए मुझे तुम्हें आश्वासन देनेकी जरूरत नही है। अब तो मरना ही बाकी रह गया है न? वह भी भले १३ अप्रैल, १९२८ से पहले ही आ जाये। इस देहसे स्वराज्य-प्राप्तिकी साधनाके लिए इतनी अवधि कम नहीं मानी जायेगी। स्वराज्य अर्थात् चरखा राज्य, ऐसा मेरा निश्चय दिन-प्रतिदिन दृढ़ होता जाता है। यदि तुम सबको मेरी तरह विश्वास हो तो इसकी स्थापनाके लिए प्राण अर्पित करना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२०९. पत्र: वेलाबहनको

२८ मार्च, १९२७

क्या एक बीमार दूसरे बीमारसे यह पूछ सकता है कि तुम बीमार क्यों पड़ी हो? खैर, बीमार तो हो गई लेकिन हँसती तो हो न। बीमार पड़ना न पड़ना हमारे हाथमें नहीं है, ऐसा अज्ञानवश हम कह सकते हैं। लेकिन बीमार होनेके बावजूद हँसना तो हमारे हाथमें है, यह ठीक है न? इसलिए बीमारीमें हँसती रहना और रामका स्मरण करना।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२१०. पत्र: आश्रमके बच्चोंको

२८ मार्च, १९२७

बालको और बालिकाओ,

तुम सब 'गीता' के अभ्यासी हो। और उसके पारायणकी जिम्मेदारी हमेशा तुम्हारे ऊपर है। इसलिए यदि इस समय मेरी बीमारीका समाचार सुनकर तुम लोग घबरा गये हो तो उसका निवारण 'गीता' में खोजना। मेरी गाड़ी दूसरे अध्यायका अनुवाद करनेके बाद रुक गई है। इसलिए मैं तो उसे ही याद करता रहता हूँ और उसका आनन्द लेता हूँ। मैं चाहता हूँ कि यह आनन्द तुम्हें भी मिले। देहका दण्ड देहको भोगना ही होगा। जीने-मरनेका शोक क्यों करें? जो मरते हैं वे फिर जीनेके लिए मरते हैं और जीनेवाले मरनेके लिए जीते हैं। तब जन्मपर आनन्द क्यों और मरणपर शोक क्यों? हाँ, एक बात है, इतना जान लेनेके बाद हम अपने कर्त्तव्यका विचार करें और मृत्युपर्यन्त उसमें जुटे रहें। अपने ज्ञान या अपनी श्रद्धाके फलस्वरूप अपना कर्त्तव्य तो तुमने जान ही लिया है। इसमें चूक न हो इसके लिए सावधान रहना। फिर तो मेरी देह-रूपी गाड़ीके रुकनेके बजाय तुम्हें उसके टूटनेका समाचार भी मिले तो भी तुम अपने खेल-कूदमें निमग्न रह सकोगे। गाड़ी टूटनेकी बात भी कोई करे तो तुम अपने कर्त्तव्यमें जुटे रहकर उसे झूठा साबित करना। क्या मैं तुमपर इतना विश्वास कर सकता हूँ?

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२११. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

निपाणी
मौनवार [२८ मार्च, १९२७]

चि० मणिलाल तथा चि० सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र आये। मुझे दुःख तो अवश्य हुआ। तनिक-सा भी झूठ मुझे भालेके समान चुभता है। सुशीलाको बालक और पराधीन समझकर मैं उसकी असावधानीको माफ कर सकता हूँ, लेकिन तुम्हारी असावधानीका कोई कारण न था। लेकिन अब जो हुआ सो हुआ — मुझे आगे और वचन न देना। जो दिये हैं उनका पालन करो, मेरे लिए इतना ही बहुत है।

मेरी बीमारीकी चिन्ता न करना। यहाँ आकर रहनेकी तो जरूरत ही नहीं है। अपना काम तुम एकनिष्ठ होकर करते जाओ, इसीमें अच्छी सेवा है। देहका सम्बन्ध क्षणिक है। वह कोई सदा रहनेवाला नहीं है। उसका क्या शोक; इसपर विचार करना।

तुम दोनों अच्छे रहो और शोभा पाओ — यह मेरा आशीर्वाद और इच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ४७१४) से।

२१२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

[मार्च, १९२७के अन्तमें][1]

चि० मणिलाल और सुशीला,

जानेसे पहले लिखा हुआ तुम्हारा पत्र मुझे मिला। आशा है, तुम निर्विघ्न पहुँच गये होगे।

मैंने तुम्हें रेडियो भेजा था, लेकिन वह स्टीमरके रवाना होनेपर ही पहुँच सका। मैंने उसे तुम्हारे द्वारा दी हुई अवधिके भीतर ही भेजा था।

जो व्यक्ति वचनका पालन करनेसे चूक जाता है वह और भी दृढ़ निश्चयवान बनता है। तुम वचनका पालन नहीं कर सके, इसलिए अब प्रतिज्ञा न लेनेकी प्रतिज्ञा ले बैठे। वह चढ़नेका नहीं अपितु गिरनेका रास्ता है, यह याद रखना। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे. . .[2]

गुजराती (जी० एन० ४७१५) से।

१. मणिलाल और सुशीलाके दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना होनेके उल्लेखसे।
२. पत्रका शेषांश उपलब्ध नहीं है।

२१३. पत्र : चन्द त्यागीको

[३१ मार्च, १९२७ के पश्चात्][1]

आज्ञा लेकर टिकट न देनेमें कोई हरज नहीं है। अविनय न होना चाहिये।

मूल (सी० डब्ल्यू० ४२७७) से।
सौजन्य : चन्द त्यागी

२१४. पत्र : मीराबहनको

[१ अप्रैल, १९२७][2]

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला और तार[3] भी। तुम्हें घबराना हरगिज नहीं चाहिए। किसी-न-किसी दिन तो शरीर नष्ट होना ही है। तुम मेरे शरीरको भूल ही जाओ। वह तुम्हारे पास सदा नहीं रह सकता। तुम्हें अपना प्रस्तुत कार्य करना चाहिए। मुझे और ज्यादा नहीं लिखना चाहिए ताकि डाक्टर और मेरे आसपासके लोग नाराज न हों। मेरे खयालसे मुझे जितने आरामकी आवश्यकता है, उतना मैं ले रहा हूँ। लेकिन मैं शरीरकी बहुत ममत्वपूर्ण सार-सँभाल नहीं कर सकता। तुम्हें वचन देना ही होगा कि तुम चिन्ता नहीं करोगी। तुम अपने काममें डूब जाओ।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

अगला कार्यक्रम अनिश्चित है।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१३) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. गांधीजीने यह पत्र चन्द त्यागीके ३१-३-१९२७ के पत्रके उत्तरमें लिखा था।

२. डाककी मुहरसे।

३. यह महादेव देसाईके निपाणीसे २७ मार्च, १९२७ को दिये गये तारके उत्तरमें भेजा गया था, जो इस प्रकार था : "बापू मस्तिष्ककी नसोंकी [illegible] बाल-बाल बचे हैं। अभी उन्हें अति रक्तचाप है। डाक्टर कहते हैं कि यह अति श्रम, स्नायुओंकी थकानसे हुआ है। कमसे-कम गर्मीके महीनोंमें पूरा आराम करें। कार्यक्रम रद करनेकी सलाह दी है। २८ को बेलगाँव जायेंगे।"

२१५. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

अम्बोली
शुक्रवार, १ अप्रैल, १९२७

ढेढ़ भीलादिके पुरोहित,

मेरे स्वास्थ्यकी खराबीने मुझे बिछौनेपर डाल रखा है, इसलिए मैं कल आपका भाषण आदिसे अन्ततक पढ़ गया। उससे मुझ जैसेको थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त हुई। लेकिन मेरी नम्र रायमें अध्यक्षके भाषणके रूपमें वह नहीं चल सकता। आपने मुझे 'वीटो'का जो अधिकार दिया है उसके आधारपर मैं ऐसा नहीं लिख रहा हूँ, मैं तो यह मित्रकी हैसियतसे ही कह रहा हूँ।

भाषणमें प्रमाणका अभाव दिखता है। हम हालमें ही अपने प्रमाणका निर्वाह करनेकी शक्ति खो बैठे हैं। दूसरा कारण है कि राणा साहबके साथ हमारा अलिखित करार इससे भंग होता है। तीसरा कारण यह है कि जो प्रेक्षक वहाँ एकत्र होंगे यह भाषण उनके लायक नहीं है।

इसमें प्रमाणका निर्वाह नहीं हुआ है, क्योंकि यह भाषण पिछली परिषदसे सम्बद्ध नहीं है। राणा साहबके साथ हमारा अलिखित करार है कि व्यक्तिगत चर्चा आदि नहीं होनी चाहिए। इससे यह करार टूटता है और इस समय हम जिस समाजको जगानेका प्रयत्न कर रहे हैं वह इस भाषणको न तो समझ सकेगा और न पढ़ेगा। 'गुलिवर'[1] पढ़कर किसी काल्पनिक देशका चित्रण किया होता और उसमें अपने व्यंग्य वचन गूँथे होते तो जो आपने कहा है उसका अधिकांश कह सकते थे। अथवा यदि आपने ईसपका अनुवाद किया होता तो सौराष्ट्रके हर पेड़पर अपने काल्पनिक पंछी बैठाकर उनके संवादोंके द्वारा अपने सिद्धान्त समझा सकते थे और हम सबको हँसाते हुए शिक्षा भी दे सकते थे। अथवा व्यासजीकी तरह अमानवीय और अति मानवीय पात्र तैयार करके वास्तविक इतिहासको भुलाकर मानवजातिके प्रतीकात्मक इतिहासकी रचना कर देते और हमें सौराष्ट्रका एक अल्पकाय 'महाभारत' बना कर दे देते?

आपने जो भाषण तैयार किया है या जो आपके लिये तैयार किया गया है उसके लिए तो नये प्रेक्षक तैयार करने होंगे। इसलिए पहला काम तो यह होगा कि भावनगरमें बनाये गये संविधानको रद कर दिया जाये। ऐसा करनेके लिए मैं सहमत हो जाऊँ तभी यह हो सकता है। फिर कुछ चुने हुए लोगोंकी परिषदका आयोजन करना होगा, जो इस भाषणके विचारोंको समझ सकें या उसपर अमल कर सकें। उसके बाद ऐसी परिषदके सामने ये विचार पेश करने और उनपर अमल करानेकी जरूरत होगी।

१. प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक, गुलिवर्स ट्रैवल्स।

इसलिए मेरी यह सलाह है कि आप एक छोटी-सी समितिकी बैठक बुलाएँ, उसके सामने अपने विचार पेश करें। तब अपने भाषणकी रूपरेखा तैयार करें। कांग्रेसमें पहले ऐसा ही होता था। वेडरबर्न, वैब, ब्रैडलॉ आदिके भाषण फीरोजशाह, गोखले आदिको दिये जाते थे और उनसे पसन्द कराये जाते थे। इससे परम्पराकी रक्षा होती थी। मुझे मालूम है कि यह वस्तुस्थिति सिन्हाके समयतक चलती रही। आपका भाषण उस जमानेका है। मैं नहीं कहता कि वह उपयोगी नहीं है। पर उसके उपयोगी होनेके लिए नये समाजकी जरूरत है। ऐसे भाषण गाँववालोंकी सभाके लायक नहीं होते।

मेरा चाहे कुछ भी हो किन्तु परिषद जूनमें अवश्य होनी चाहिए। मैं तो यह कहूँगा कि उस समय परिषदके आकारका निश्चय करके हम अपने घरका मैल साफ कर डालें। उसके बाद नई पद्धतिसे बनाई गई परिषद बुलाकर नये युगका प्रवर्तन करें। पर मैं यह सब लिखकर नहीं समझा सकता। जहाँ भाषणको पूरा बदल देनेकी बात है वहाँ विस्तारपूर्वक टीका करना मैं निरर्थक मानता हूँ।

यह पत्र तो मैं लिख रहा हूँ, लेकिन इस समय मैं इतना अशक्त हूँ कि किसी भी प्रकार आपमें से किसीको अभी यहाँ आनेके लिए नहीं कह सकता। इसलिए आप देवचन्दभाई, फूलचन्द और अमृतलालसे मिलकर जो करना जरूरी हो वह कर लें। मैं तो उसमें पटवारी, पट्टणी साहब और शुक्ल साहबको भी बुलाना चाहूँगा। सबका मत जानकर जिसमें अच्छाई लगे वही करना चाहूँगा। पर यह तो मेरी मान्यता है। और कुछ करना चाहें तो वल्लभभाईकी भी सलाह ले लें। जो कुछ भी करें दृढ़ नींव बाँध कर करें। मैं तो आपके सभी शुभ प्रयत्नोंमें सफलताका इच्छुक हूँ।

बापू

[पुनश्च :]

मुझे पत्र लिखकर तो सब पूछ सकते हैं। उससे कुछ कल्याण होगा या नहीं यह तो ईश्वर जाने या आप।

शुक्रवार – बेलगाँव[1]

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. ऐसा प्रतीत होता है कि पत्र बेलगाँवमें लिखा गया होगा, अम्बोलीका पता पत्र-व्यवहारके लिए दिया गया होगा।

२१६. डा० जीवराज मेहताके साथ हुई बातचीत[1]

३ अप्रैल, १९२७[2]

गांधीजी : ऐसे नरेशका[3] अतिथि मैं कबतक बना रहूँ जो साक्षात कृपाकी मूर्ति है? जलवायुकी बातके अतिरिक्त मैं साबरमतीमें भी उतने ही आरामसे रह सकता हूँ, जितने आरामसे किसी और जगह। सिर्फ गर्मीकी ही बात नहीं है, हालाँकि उसका भी असर पड़ता है, यद्यपि मुझे पूरा यकीन है कि मैं गर्मीसे बचनेकी कई तरकीबें निकाल सकता हूँ। और अगर हमें अपने आपको गरीबों जैसा बनाना है, तो हमें यह जरूर समझ लेना चाहिए कि बहुत बड़ी संख्यामें हमारे देशवासी सूर्यकी प्रचंड धूपमें रहते हैं और काम करते हैं, मेहनत करते हैं और बीमार पड़नेपर जलवायु परिवर्तनके लिए दूसरी जगह जानेकी बाततक कभी नहीं सोचते।

तर्क तो अकाट्य है, हालाँकि डाक्टर, जिन्हें विशेष करके शरीरकी ही फिक्र रहा करती है इस तर्कको ठुकरा देंगे। गांधीजीकी बराबर खुश किस्मती रही है कि उन्हें ऐसे डाक्टर मित्र मिलते रहे हैं, जो कमसे-कम उनके लिए, शरीरकी अपेक्षाओंके अलावा आत्माकी अपेक्षाओंको भी समझनेकी कोशिश करते रहे हैं और शरीरकी रक्षाके बारेमें ऐसी उपयुक्त सलाह देनेका प्रयत्न करते रहे हैं, जो उनकी मानसिक और आध्यात्मिक रुचिके अनुकूल हो।

यदि मुझे केवल बैठे-बैठे बेकार ही समय गुजारना है तो पुनः स्वास्थ्य-लाभके लिए अपनी ही जगह रहकर सन्तोष करना चाहिए।

डाक्टर मेहता : मगर आप निठल्ले तो नहीं रहेंगे। आपका आराम भी तो काम ही है, क्योंकि उससे आपका शरीर स्वस्थ हो जायेगा और फिर काममें जुट जानेके लायक हो जायेगा।

वह आराम तो साबरमतीमें भी मिल सकता है।

हाँ जरूर मिल सकता है, किन्तु फिर भी गर्मीसे रक्तचाप बढ़ सकता है और स्वास्थ्य सुधरनेमें देर लग सकती है।

अगर आप मेरे लिए चुने गये पहाड़ी मुकामपर मेरे लायक कोई काम ढूंढ़ निकालें या निकट भविष्यमें इसकी सम्भावना हो कि मैं अपना बीचमें छोड़ा हुआ कार्यक्रम फिरसे शुरू कर सकूंगा, तो मैं बंगलोर या ऐसी किसी अन्य जगह जानेके लिए राजी हो सकता हूँ।

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से। इस बातचीतके परिणामस्वरूप गांधीजी नन्दी हिल्स जानेको राजी हो गये थे।

२. २-४-१९२७के बॉम्बे क्रॉनिकल तथा ६-४-१९२७के हिन्दूकी रिपोर्टसे।

३. सावन्तवाड़ी नरेश, जिनके अम्बोली स्थित बंगलेमें गांधीजी ठहरे थे

आपके लिए तो वहाँ काफी काम है और हमेशा बना रहेगा। मैं आपका अपना रोजमर्राका काम नहीं छुड़ानेवाला हूँ। आप अपने शरीरपर जो बोझ डाल रहे थे, असाधारण था। जैसे ही आपकी तबीयत अच्छी लगने लगे, लोग आपसे मिल सकते हैं, उन्होंने जो रकमें एकत्रित की हों उनकी थैलियाँ भेंट कर सकते हैं, कार्यकर्त्तागण अपने कामका ब्यौरा आपको दे सकते हैं और आपसे सुझाव और सलाह ले सकते हैं। मैं बस इतना ही चाहता हूँ कि काममें आप स्वयं सक्रिय भाग लिये बिना, कामका निर्देशन करते रहें। जहाँतक हो सके मनबहलाववाली या हल्की चीजें पढ़ सकते हैं। 'आत्मकथा' लिख सकते हैं लेकिन आनेवाले पत्रोंके अम्बार को न निपटायें।

मुझे बहुत खुशी है। लेकिन मनबहलावकी पढ़ाई है क्या? यही न कि जिसे पढ़नेमें मुझको थकान महसूस न हो? यही बात है है न?

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-४-१९२७

२१७. अम्बोलीमें राष्ट्रीय सप्ताहके सम्बन्धमें बातचीत[1]

[४ अप्रैल, १९२७]

राष्ट्रीय सप्ताहके[2] दो दिन पहले गांधीजीने पूछा कि अम्बोलीमें यह सप्ताह आप किस प्रकार मनाने जा रहे हैं। मैंने कहा — 'बारह घंटेका अखण्ड चरखायज्ञ करके।' पर यह उनके सन्तोषके लिए बहुत ही ना-काफी था। वे बोले:

बारह घंटे अखंड चरखा यज्ञ करनेका कार्यक्रम ठीक है। मैं भी अपना एक घंटा दूंगा। पर आपको सावन्तवाड़ी जरूर जाना चाहिए और वहाँ राष्ट्रीय सप्ताह भर खादीकी फेरी अवश्य लगानी चाहिए, अस्पृश्योंके घरोंमें जानेकी कोशिश जरूर करनी चाहिए, उनकी सुख-सुविधाकी उनसे पूछताछ करनी चाहिए, देखना चाहिए कि उनके यहाँ स्कूल और कुएँ आदि हैं या नहीं। अगर देवदास और आप दोनों भी चले जायेंगे तो चरखायज्ञको अखण्ड रूपसे जारी रखनेकी जिम्मेदारी मैं लेता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २१-४-१९२७

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।
२. ६ अप्रैलसे १३ अप्रैलतक।

२१८. पत्र : मीराबहनको

४ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

तुमने तो मुझे पत्र लिखनेकी जिम्मेदारीसे मुक्त कर दिया, मगर मैं स्वयं तुम्हें हर सोमवारको पत्र लिखनेके सुखसे वंचित नहीं होना चाहता। स्नेहपत्र लिखना एक मनोरंजन है; वह कोई ऐसा काम नहीं है, जिसे टालनेके लिए कोई वहाना ढूंढ़ना पड़े। अभी कमजोरी तो है, मगर तबीयत पहलेसे अच्छी है।

डा० मेहता बम्बईसे शरीरकी जाँच करने यहाँ आये थे। उनका तो यह दृढ़ मत है कि मुझे अगले कुछ महीनोंतक दौरा बिलकुल नहीं करना चाहिए। वे बिस्तर पर पड़े-पड़े पढ़नेसे या कभी-कभी मित्रोंको पत्र भी लिखनेसे मना नहीं करते। अगर मैं पूरा आराम लूँ, तो उनका खयाल है कि मेरी खोई हुई शक्ति बहुत कुछ वापस आ जायेगी। मगर इतनी ताकत मुझमें कभी नहीं आ सकेगी कि ऐसे चूरचूर कर देनेवाले दौरे कर सकूँ, जैसा मैंने पिछले महीनेकी २५ तारीखतक किया और जो उस दिन यकायक समाप्त हो गया। अब देखें आगे क्या होता है। अगर दौरा रद करनेका निर्णय अन्तिम रहा, तो मैं आश्रममें जाकर आराम करूँगा। मैं आज या कल निर्णय कर लूँगा। सम्भावना यही है कि दौरा रद हो जायेगा। फिर भी मैं अगले सप्ताह मंगलके पहले यहाँसे रवाना नहीं होऊँगा।

लेकिन तुम्हें दौरे[1] क्यों पड़ रहे हैं यह केवल आध्यात्मिक पीड़ा ही है या इसका जलवायुसे भी कुछ सम्बन्ध है? अगर तुम्हें स्वास्थ्यवर्धक जलवायुकी आवश्यकता हो, तो तुम अवश्य बाहर चली जाना। वहाँकी जलवायु तुम्हें कैसी लगी है?

तुम भरतपुर नहीं गई, यह बहुत ठीक किया। यदि शान्ता वहाँ हो तो उसे साथवाला पत्र दे देना।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१४)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहन इस सम्बन्धमें लिखती हैं: 'तब मेरे मनमें संघर्ष चल रहा था।'

२१९. पत्र: मगनलाल गांधीको

मौनवार, चैत्र सुदी ३ [४ अप्रैल, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

सर गंगारामका खेतीका अनुभव जाननेको उत्सुक हूँ।

शिक्षकोंके साथ तुम्हारा मेल मुझे प्रिय है। लेकिन वह हार्दिक और स्वाभाविक हो, तभी। यदि ऐसा मेरी तबीयतके कारण हुआ है तो उसमें फिर कोई विघ्न उठ खड़ा होगा। एक आँख जिस तरह दूसरी आँखके साथ स्वतः मेल रखती है, मैं उसी तरहके मेलका भूखा हूँ। वह तो तभी सम्भव हो सकता है जब हम सबको स्वजन मानें। अनुभव बताता है कि अच्छे परिणामोंका मेल साधनेकी अपेक्षा अच्छे व्यक्तियोंका मेल साधना हमेशा अधिक श्रेयस्कर है। यह विश्वास रखना कि बादमें परिणाम अच्छा ही आयेगा — यही निष्काम कार्य है।

गाँवोंमें प्रवेश करनेकी दिशामें कुछ किया या नहीं?

पानीकी समस्याके बारेमें तुरन्त कुछ-न-कुछ करना। दुग्धालयका काम किस तरह चलता है? रामचन्द्र कोसके विरोधमें भाई पुरुषोत्तमने जो मुद्दे उठाये हैं उनपर धैर्यपूर्वक विचार करना और समाधान ढूंढ निकालना।

मैं वहाँ जल्दी ही आऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६३)से।
सौजन्य: राधाबहन चौधरी

२२०. पत्र: जानकीदेवी बजाजको

अम्बोली, सावन्तवाड़ीके समीप, कोंकण
सोमवार [४ अप्रैल, १९२७][2]

चि० जानकीबहन,

तुम्हारे पासमें देवदासको आना पड़ा यह मुझे अच्छा नहीं लगा। किन्तु उससे वहाँ रहा नहीं गया, यह मैं समझ सकता हूँ। अब हो सकता है थोड़े ही दिनोंमें वह वहाँ फिर पहुँच जाये।

१. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
२. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

तुम्हारी तबीयत कैसी रहती है? वहाँ कुछ शक्ति बढ़ रही है? कोई तकलीफ है?

चि० कमलाकी पढ़ाई कुछ चल रही है या नहीं? तुम खुद न लिखो तो मुझे कमलासे एक लम्बा पत्र लिखवा कर भेजना।

मेरे स्वास्थ्यकी चिन्ता किसीको नहीं होनी चाहिए। अभी तो ठीक रहता है। परन्तु बूढे तो मृत्युके किनारे ही बैठे होते हैं न? अतः किसी-न-किसी बहाने उन्हें पुराना मन्दिर छोड़ना ही होगा। फिर, इच्छा हो तो नये मन्दिरमें जा बसे या यदि यह पिंजड़ा एकदम छोड़ना ही हो तो वायुमें ही वास करें और स्वतन्त्रताका सुख लूटें। परन्तु बहुत कालतक जेलमें रहनेवालेको जैसे जेलखाना अच्छा लगने लगता है, वैसा ही हाल हमारा भी है। देहाध्यासके कारण देह छोड़ना अच्छा नहीं लगता। मुझे अच्छा लगता है कि नहीं, यह तो मैं नहीं जानता। मेरी बुद्धिको इसमें अच्छा लगने जैसा कुछ भी दिखाई नहीं देता। परन्तु आवरणके कारण बुद्धि बेचारीका बस नहीं चलता। अतः सच्ची बातका पता तो मरते समय ही लगेगा।

तुम्हारे पास आजकल कौन है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० २८८०) की फोटो-नकलसे।

२२१. पत्र: रामदासको

४ अप्रैल, १९२७

हमें एक क्षणके लिए भी यह नहीं भूलना चाहिए कि हम गरीब हैं। ऐसा लगता है कि तुम यह बात समझ चुके हो।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२२२. पत्र: आश्रमके बच्चोंको

४ अप्रैल, १९२७

बालको और बालिकाओ,

देखो, सत्याग्रह सप्ताहको शोभान्वित करना। जिसे 'गीता'में रस नहीं आता, जिसे चरखेका गान अच्छा नहीं लगता वह जीवनको जानता ही नहीं है। हमें तो रसका स्वामी होना चाहिए और जो वस्तु हमारे लिए कल्याणकारी हो उसीमें से आनन्द प्राप्त करना आना चाहिए। इसीमें सच्ची कला है। बाह्य रसोंके अधीन होना गुलामीका परिचायक है। अन्तरसे रस उत्पन्न करनेमें ही सच्चा आनन्द है। यदि हम तुम्हें यह ज्ञान नहीं दे सकते तो हम सब शिक्षक नहीं, घास छीलनेवाले हुए। तुम्हें निकम्मे शिष्य तो कैसे कहा जा सकता है?

मैं आनन्दमें हूँ।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य: नारायण देसाई

२२३. पत्र: हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

मौनवार [४ अप्रैल, १९२७][1]

प्रिय भगिनी,

आपका कोई खत आजकल नहिं है। यदि शक्ति है तो लिखियो। ऐसे खतोंसे मुझको कुछ तकलीफ नहिं होत है, लाभ होता है।

मुझे आराम है। यहा बा, महादेव, देवदास, कृष्णदास इ० है। राजाजी और गंगाधरराव भी हैं। शांत जगह है।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० १६६२) की फोटो-नकलसे।

१. गंगाधरराव मैसूर राज्य १० तारीखको चले गये थे।

२२४. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

६ अप्रैल, १९२७

प्रिय मित्र,

यह पत्र मैं आपको बीमारीकी हालतमें बिस्तरपर पड़ा हुआ लिख रहा हूँ। मुझे आशा थी कि मैं आपसे बंगलोरमें मिलकर अपने दावेके लिए जोर दूंगा। परन्तु अभी कुछ और समयतक ऐसा नहीं हो सकता। आपने मेरे तारका कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे आशा है कि वह तार आपको जरूर मिल गया होगा। यदि आप दक्षिण आफ्रिका नहीं जायेंगे, तो वहाँके भारतीयोंका दिल टूट जायेगा। श्रीमती शास्त्रीको अवश्य आपके साथ जाना चाहिए।[1] मैं नहीं जानता कि दोनों ही, मेजबान दम्पती यदि बहुत बढ़िया अंग्रेजी बोलनेवाले हों तो लाभ रहता है या नहीं। आप श्रीमती शास्त्रीके लिए दुभाषियेका काम कर सकते हैं या फिर आप उनके लिए एक प्रतिभासम्पन्न तमिल स्नातक लड़की, जैसी आपके पास बहुत-सी हैं, साथ ले जा सकते हैं। वह लड़की उनकी सखी, अध्यापिका और दुभाषियेका काम करेगी। रानी विक्टोरिया, जब फारसके शाह, जो अंग्रेजी नहीं जानते थे, की मेजबान बनी थी, तो क्या करती थीं? आप लॉर्ड इर्विनको यह साफ बता दें कि आप जब रायल कमीशन आये उस समय यहाँ होना चाहेंगे; और आखिरमें मैं यह कहूँगा कि जबतक लॉर्ड इर्विन वाइसराय हैं, तबतक छोटी-छोटी संतापकी बातोंका कोई अन्देशा नहीं होगा। वह आपको अच्छी तरह जानते हैं। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप अपने निर्णयपर पुनर्विचार करें और चाहे एक सालके लिए हो सही, लेकिन वहाँ जायें जरूर। केवल आप ही दोनों पक्षोंके बीच समझौतेका सूत्रपात कर सकते हैं। केवल आप ही वातावरणमें सुधार ला सकते हैं।

ईश्वर आपका पथ-प्रदर्शन करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री

१. श्रीमती शास्त्री उनके साथ नहीं गई थ।

२२५. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

अम्बोली, सावन्तवाड़ी राज्य
६ अप्रैल, १९२७

भाई सातवलेकर,

प्रकृतिने मुझको बीमारीके बिछानेपर डाल दिया है। इस कारण मुझको आपका "ब्रह्मचर्य" ऊपर पुस्तक पढ़नेका समय शीघ्रतासे मिला। मुझको ये पुस्तक प्रिय लगा है। वर्षोंसे मैंने आपको सत्यके पुजारी माना है। इसलिये इह पत्र लिख रहा हुं।

(१) क्या आसनको आप ब्रह्मचर्यके लिये अमोघ साधन मानते है?

(२) यदि वैसा ही है, तो इसका अर्थ इह ही है ना कि आसनके प्रयोग करनेवाला मनुष्य हर हालतमें वीर्यकी रक्षा कर लेता है। इसका इह अर्थ भी है क्या कि वह ब्रह्मचारी विकारसे भी रहित हो जाता है। आप जानते होंगे कि पाश्चात्य वैदक ग्रंथमें एक किया है जिससे मनुष्य वीर्यकी रक्षा कर लेता है। परंतु विकारको कायम रखता है। ये क्रिया उन्ही लोकोंके लिये की जाती है जो वीर्यकी रक्षा करते हुये रति सुखका अनुभव करना चाहते। ऊर्द्धरेता बननेका हमारा शास्त्रमें इह तो अर्थ नही है? अगर एही अर्थ होगा तो ऊर्द्धरेतापन शुद्ध ब्रह्मचर्यका विनाशक बन जाता है। और आसनसे बनी हुयी वीर्यकी रक्षाका परिणाम उल्टा आनेका भय कुछ प्रतीत होता है। एक मित्र दिल्हीसे मुझको लिखते है कि आसनोंसे उन्होंने ब्रह्मचर्य इहा तक सिद्ध किया है कि वे कुछ भी और कितना ही खोराक खा सकते है और भोगी मनुष्य जैसी प्राय: सब कुछ चेष्टा करते हुये वीर्य रक्षा कर लेते है। उनका पत्रका मेरे पर कै प्रभाव नही पड़ा इस कारण मैंने ज्यादा पत्र-व्यवहार उनसे नही चलाया। दुसरे मित्र लिखते है कि छे महिना मे प्राणायाम आसन इत्यादिसे ब्रह्मचर्यकी सम्पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो सकती है। इनको मैं जानता हूं। वह भोले सिधे सादे है। और आसनादिका अभ्यास करनेका मुझको बडा आग्रह कर रहे है। मैंने अबतक उनका कहा नही माना है। परंतु आपके पुस्तकने मुझको हिलाया है। अनेक विद्यार्थीओंकी सबंधमें मुझको आना पड़ता है और इन सबको मेरे ही प्रयोगोंसे मैं संतुष्ट नही रख सकता हुं। आहारादिकी मर्यादाके उपरांत मेरे सब प्रयोग केवल मानसिक ही रहते है। विद्यार्थीगणमें से कीतनेक वैसे गीरे हुए है की उनके लिये आसनादि लाभदायी होनेका संभव लगता है इस कारण इह पत्र लिख रहा हूं।

(३) वनस्पत्यादीके ब्रह्मचर्यके बारेमें जो कुछ आपने लिखा है वह अनुभवसिद्ध है? आप जानते होंगे कि प्रकृति शास्त्रके जाननेवाले पश्चिमके लोक ब्रह्मचर्यके विरोधमें आज कल लिख रहे है। मैं तो इनको खण्डन मेरे ही अल्प अनुभवसे और बुद्धि-प्रयोगसे किया है। परन्तु हमारे शास्त्रज्ञ लोगोंकी लेखनीसे पाश्चात्य ग्रंथोंका निरीक्षणकी आवश्यकता है। क्योंकी इन ग्रंथोंका प्रभाव हमारे नवयुवकोंको उपर बहुत पड़ता है।

(४) आपकी सूर्य-भेदन व्यायाम पुस्तक भी मैंने पढली है। क्या आप वैसा जानते हैं कि इह व्यायाम मेरे जैसा मनुष्य भी केवल पुस्तककी मददसे कर ले तो भी कै हानी नहीं हो सकती है?

(५) वेदके मंत्रोंके अर्थ करनेमें 'ऋग्वेदादि' भाष्य-भूमिकामें जो नियम दिये हैं उसमें और आपकी प्रणालीमें कुछ भेदसा मुझको प्रतीत होता है। ये मेरा मन्तव्य ठिक है क्या?

अंब्रोलीमें मैं इस मासको अठारह तारिक तक हुं।

आपका,
मोहनदास गांधी

मूल (एस० एन० १२७७१) की फोटो-नकलसे।

२२६. पत्र: फूलचन्द शाहको

अम्बोली [वरास्ता] वेलगाँव
सत्याग्रह दिवस [६ अप्रैल, १९२७]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

मैंने आपको पत्र लिखा था उसका जवाब नहीं मिला।

तबीयत बिगड़नेसे पैसा इकट्ठा करनेकी मेरी शक्ति काफी कम रह गई है। मैंने एक जगह कोशिश की भी किन्तु वहाँसे अभी मिलनेकी सम्भावना नहीं है।

यदि मैं बीमार न हुआ होता तो जैसे-तैसे प्रबन्ध कर देता।

भाई अमृतलाल 'बापा'के भाषणके विषयमें देवचन्द भाईको लिखनेके लिए मैंने महादेवसे कहा था। उसके विषयमें पूरी तरह विचार कर लेना चाहिए। मुझे लगता है कि राजकीय परिषद और चरखा-कार्य, ये दोनों प्रवृत्तियाँ अलग-अलग होनी चाहिए। ऐसा हो तो अच्छा रहे। खर्चकी तीन मदें हैं। उनकी व्यवस्था इस प्रकार की जाये।

(१) खादी प्रवृत्ति चरखा संघको सौंप दें, क्योंकि यह मण्डल मेरे बाद भी बना रहेगा और यथाशक्ति अपना काम चलायेगा।

(२) विद्यालयोंका और अन्त्यजोंकी सेवाका कार्य विद्यापीठको सौंप दें। वह भी मेरे जानेके बाद बना रहेगा।

और (३) काठियावाड़की अलग प्रवृत्ति। इन तीनों विषयोंके सम्बन्धमें हम ऐसी कोई व्यवस्था नहीं कर पाये हैं जो स्वतन्त्र रूपसे चल सके। इसलिए मुझे तो ऊपर सुझाई गई व्यवस्था ही ठीक लगती है। खादीका कार्य गुजरात खादी मण्डलको भी सौंपा जा सकता है — इस विषयमें भाई लक्ष्मीदासके[1] साथ बातचीत करनेके बाद। इन तीन कार्योंके सिवा चौथी किसी चीजमें मेरा मन अभी नहीं लग सकता।

१. लक्ष्मीदास आसर।

पर मैं देखता हूँ कि जो लोग उससे भिन्न कुछ करना चाहते हैं उनके लिए अलग संस्था होनी चाहिए। राजकीय परिषद इस प्रयोजनके काम आ सकती है। पर ये तो एक बीमार आदमीके विचार हैं।

आप देवचन्दभाई आदिसे मिलें और शान्तिसे कोई हल ढूँढें। मेरे पास आना हो तो सभी अपने-अपने खर्चसे आयें, वह भी पन्द्रह दिनके बाद। मुझे लगता है कि अभी मुझमें लम्बी बातचीत करनेकी शक्ति नहीं है।

प्रभुकी इच्छा हुई तो जून मासकी तारीख निभानेकी आशा रखता हूँ। पर अभी निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता।

जो कुछ करना हो, स्वयं-नियुक्त न्यासियोंकी तरह तटस्थ भावसे घबराये बिना करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

सम्भवतः मुझे १९ तारीखको बेलगांवसे नन्दी हिल्स ले जायेंगे। नन्दी हिल्स बंगलोरके पास है। वहाँ हम २० तारीखको पहुँचेंगे।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८५६) से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

२२७. पत्र: वा० गो० देसाईको

अम्बोली
चैत्र सुदी ५ [६ अप्रैल, १९२७]

भाईश्री ५ वालजी,

आदरणीय रेवाशंकरभाईका पत्र पढ़ा, उनका कहना ठीक तो है। सभा तथा संस्थाके नियमोंको तो तुम्हें जान ही लेना चाहिए। जो प्रस्ताव पास हों उनकी नकल कोषाध्यक्षको तुरन्त ही भेज देनी चाहिए। उसपर तुम्हारे हस्ताक्षर. . .[1] हैं? अन्य सदस्योंको भी. . .[2] प्रस्ताव ही . . .[3] अब रेवाशंकरभाईको . . .[4] वर्षमें पास किये गये प्रस्ताव और उसके बाद साधारण बैठकमें पास किये गये प्रस्तावोंकी नकलें भी अपने हस्ताक्षर सहित भिजवा दें।

उचित तो यही जान पड़ता है कि ये नकलें समितिके सदस्योंको भी भेजी जायें।

जिन नये सदस्योंका चुनाव हुआ है उन्हें उनके चुनावके सम्बन्धमें लिख दें तथा उनसे अपनी स्वीकृति देनेका अनुरोध करें।

१, २, ३ व ४. मूलमें अस्पष्ट है।

चम्पाका क्या हालचाल है? प्रस्तावों आदिकी नकल 'नवजीवन'में भी प्रकाशित होनी चाहिए थी। मैं तो जल्दीमें भाग निकला इसलिए तुमसे कहना भूल गया। किन्तु इन सारी चिन्ताओंका बोझ क्या तुम नहीं उठाओगे?

हरिइच्छा आदि बिना किराया दिये भी रह सकती हैं। स्थानके सम्बन्धमें मगनलालसे पूछकर उन्हें बुला लो। यदि ऐसा लगे कि कहीं जगह नहीं निकल रही है तो हमें कुछ दिनों रुकना होगा।

मोहनदास

[पुनश्च :]

पैसा भेज देनेके लिए रेवाशंकरभाईको मैं पहले ही लिख चुका हूँ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३९१) से।
सौजन्य : वा० गो० देसाई

२२८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

चैत्र सुदी ५ [६ अप्रैल, १९२७][1]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारे पत्र मिलते रहते हैं। तुम चि० ममाको देखने गई इससे तुम्हारी प्रतिज्ञा तनिक भी भंग नहीं होती। ऐसे अवसरपर जाना होगा, यह तो पहले ही सोच लिया था। अब चि० ममाको पूर्ण शान्ति मिलनेके बाद ही तुम आश्रम वापस जाना। चि० ममाको यह मंत्र जरूर देती रहना कि देह रहे या जाये उससे हमें क्या? आत्मा थोड़े ही कहीं जा सकती है। हम अपनी देहकी चिन्ता किसलिए करें? चिन्ता तो उस आत्माकी करें जो अमर है और प्रसन्न रहें।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं बिलकुल ठीक हूँ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८२५) से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. गंगाबहन वैद्यकी पुत्री ममा बीमार थी और उसका देहान्त १९२७ में हुआ था। देखिए "पत्र : दामोदर लक्ष्मीदासको" और "पत्र : गंगाबहन वैद्यको" १०-४-१९२७।

२२९. मैं क्या करूँ?

सत्याग्रह सप्ताह फिर आ गया है। इसके छाने-छपते भी अमूल्य सप्ताहमें से एक दिन बीत जायेगा। पाठकोंसे मैं जोर देकर कहूँगा कि वे सप्ताहको यों ही यह सवाल पूछकर न गँवा दें कि 'हम क्या करें?' बल्कि यह सवाल पूछकर कि "मैं क्या करूँ" सप्ताहका अधिकसे-अधिक लाभ उठायें। एक समय था जब यह सवाल पूछनेमें भी लाभ था, और हम पूछते भी थे। अगर हर सख्श अपने कर्त्तव्यका पूरा-पूरा पालन करे तो हम शीघ्र ही यह पूछने लायक भी हो जायेंगे कि 'अब हम आगे क्या करें?'

निःसन्देह सत्याग्रहकी नींव भी राष्ट्र-निर्माणकी ही नींवके समान आत्मशुद्धि, आत्मसमर्पण और आत्मत्याग है। हर कोई अपने आपसे पूछे कि 'राष्ट्रीय दृष्टिसे मैं कैसे आत्मशुद्धि कर सकता हूँ?' खानगी जीवनकी पवित्रता निश्चय ही आत्मशुद्धिकी नींव है। अगर मेरा खानगी जीवन गन्दला है तो मैं पोले ढोलके समान हूँ। तब अगर मेरा अन्तर ठीक नहीं है, तो मुझे जरूर इसी क्षण अपनेको सुधारना होगा, बलिदानके योग्य पात्र बनना होगा। इसमें सरकार मेरी सहायता नहीं कर सकती और उसमें आड़े भी नहीं आ सकती। मेरा बनना-बिगड़ना बिलकुल मेरे ही हाथोंकी बात है।

अपना खानगी जीवन शुद्ध कर लेनेके बाद मैं अपने आपसे दूसरा सवाल पूछूँगा कि राष्ट्रका सेवक बनकर मैं क्या करूँ? अगर मैं हिन्दू होकर मुसलमानसे या किसी दूसरे धर्मावलम्बी व्यक्तिसे घृणा करता हूँ तो मुझे उससे तुरन्त सम्माननीय समझौता जरूर करना पड़ेगा। अगर मैं घमण्डसे या अज्ञानसे एक भी आदमीको अछूत मानता हूँ, तो अब मुझे अपने मनसे यह कलुष मिटा देना पड़ेगा, और उसे गलेसे लगा लेना होगा और इस बातकी निशानीके तौरपर उसकी कुछ निजी सेवा करनी होगी; चाहे वह इतनी ही हो कि उसके यहाँ जाकर उसके लड़कोंको इकट्ठा कर उनके साथ खेल भर लूँ। इन बातोंमें भी मुझे सरकारकी किसी भी मददकी जरूरत नहीं है और फिर भी पूरे मनोयोगसे ये काम करके मैं निश्चय ही स्वराज्यको अधिक निकट ले आता हूँ, और जब कभी मौका आयेगा उस वक्तके लिए अपने-आपको सगठित सेवाके अधिक योग्य बना लेता हूँ।

क्या मेरे पड़ोसमें शराबकी कोई दुकान है? एक भूले-भटके भाईको अपने विनाश-स्थलपर जानेसे मुझे विमुख करना ही होगा। १९२१में हमने यह काम बड़े अच्छे ढंगसे शुरू किया था। हमारी हिंसा-वृत्तिसे यह काम उतने ही भद्दे ढंगसे खत्म हुआ। यद्यपि अभी फिलहाल सार्वजनिक रूपसे इन मामलोंमें प्रयत्न करने योग्य वातावरण नहीं है, फिर भी व्यक्तिगत रूपसे कोशिश की जा सकती है।

अन्तमें मैं यह कहूँगा मगर यह किसीसे कम महत्त्वकी बात नहीं है कि यदि मेरा ऐसा विश्वास है कि चरखेमें गरीबसे-गरीब व्यक्तिका भी दुःख दूर करनेकी

क्षमता है, जिसका इतना विशद वर्णन मरखामके उन शब्दोंमें किया गया जिन्हें पिछले सप्ताहके 'यंग इंडिया'[1] में उद्धृत किया गया था, तो मुझे अपने हिस्सेका सूत जरूर कातना होगा। खादीकी फेरी लगानी पड़ेगी। अगर मेरे पास प्रोत्साहन देनेकी ताकत हो तो अपने पड़ोसीको भी दरिद्रनारायणके लिए कातनेको प्रोत्साहित करना होगा, और अगर वह विलायती कपड़ा पहनता हो तो उसे उसका त्याग करनेको समझाना होगा।

इस राष्ट्रीय सप्ताहके दौरान श्री वल्लभभाईने काठियावाड़, गुजरात और विदेशोंमें रहनेवाले गुजरातियोंसे गुजरातके दलित वर्गोंके हितके लिए चन्दा इकट्ठा करनेका प्रस्ताव किया है। फिलहाल गुजरातके दलित वर्गोंके उद्धारके लिए जो प्रयत्न किये जा रहे है, उन्हें सहायता पहुँचानेके लिए एक लाख रुपयेकी अपील की है। मैं अपना नाम वल्लभभाईके स्वयंसेवकके रूपमें लिखवाना चाहूँगा और भिक्षा-पात्र हाथमें लिये घर-घर घूमूँगा। मैं अपने प्रिय मित्रोंसे इस भिक्षा-पात्रको भरनेकी प्रार्थना करूँगा और उनसे भी अनुरोध करूँगा कि वे धन-संग्रहके लिए अपना नाम स्वयंसेवकके रूपमें लिखायें। स्कूल जानेवाली लड़कियों एवं युवा स्त्रियोंसे भी, अपने माता-पिताकी आज्ञा लेकर ऐसा करनेके लिए एवं वल्लभभाईकी थैली भरनेमें सहयोग देनेके लिए अनुरोध करूँगा।[2]

निश्चय ही यह सूची बड़ी नहीं है। मैंने तो व्यक्तिगत प्रयत्नोंकी बड़ी सम्भावनाकी तरफ इशारा भर कर दिया है। इस सप्ताहमें हर कोई अपने लिए सेवा करनेका अच्छासे-अच्छा रास्ता खोज निकाले। खोजी व्यक्तिगत प्रयत्न करनेपर शान्ति और मर्यादित ढंगसे सफल सामूहिक कार्यवाहीकी जबरदस्त सम्भावनाएँ देखकर चकित हो जायेगा। सामूहिक कामोंकी बहुतायतसे ही हमारे हाथ-पाँव सुन्न न हो जायें या आँखें न चौंधिया जायें। आज जो दो-एक व्यक्तियोंके बारेमें सच साबित होगा, कल वही सारे देशके बारेमें भी सच होगा, बशर्ते कि वे आशा न छोड़ें, हिम्मत न हार बैठें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ७-४-१९२७

१. "ह्वाट खादी स्टैन्ड्स फॉर", शीर्षकके अन्तर्गत। देखिए परिशिष्ट ४।
२. यह अनुच्छेद नवजीवन, १०-४-१९२७ से लिया गया है।

२३०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

७ अप्रैल, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

आपका प्यारा पत्र मिला। आप देखेंगे कि फिलहाल दौरा रद्द कर दिया गया है। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि मैं कोई काम उतावलीमें नहीं करूँगा और अपने शरीरको आराम देनेका अपनी हदतक पूरा प्रयत्न करूँगा। कृपया मेरे बारेमें चिन्ता न कीजिएगा। क्या आप, हेमप्रभादेवी, बच्चा और तारिणी बाबू सकुशल हैं।

आपका,

बापू

[पुनश्च :]

१८ तारीखतक अम्बोली और उसके बाद मैसूर।

श्रीयुत सतीशचन्द्र दासगुप्त
होम विल्ला
गिरीडीह

अंग्रेजी (जी० एन० १५६६) की फोटो-नकलसे।

२३१. पत्र : नानालाल कविको

७ अप्रैल, १९२७

कवि कहता है कि दमयन्तीके निर्दोष होते हुए भी उसपर चोरी करनेका दोष लगा। इसमें उसका नसीब ही टेढ़ा था; वैसा ही मेरे साथ भी हुआ है। शुद्ध भावने, और उसके लिए यत्किंचित परिश्रम करके मैंने प्रेमपूर्वक, मुझसे जैसा बना वैसा एक स्तुतिपत्र लिखकर भेजा था। वह आपको नहीं रुचा। मुझसे अनजानमें जो दोष हो जाते हैं उनके लिए मैं प्रतिदिन प्रातःकाल प्रभुसे क्षमा-याचना करता हूँ। अनजाने ही इस दोषके लिए मैं आपसे भी क्षमा माँगता हूँ; क्या आप क्षमा नहीं करेंगे? जबतक आप क्षमा नहीं करेंगे तबतक मैं याचना तो करता ही रहूँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी से।
सौजन्य : नारायण देसाई

२३२. पत्र : गोकलभाईको

७ अप्रैल, १९२७

आपका पत्र मिला। आपने सन्देश[1] पढ़कर नही सुनाया, यह ठीक ही किया। जिसकी स्तुति की जाती है उसे भेजा हुआ सन्देश यदि उसे न रुचे तो वह पढ़ा ही नहीं जाना चाहिए। यदि आपने उसे अन्य पत्रोंमें भी प्रकाशित न कराया होता तो अच्छा होता। मेरे सन्देशके विना कौन-सी कमी रह जाती? मेरे विचारसे तो कविका क्रोध भी उन्हे दुधारू गाय ही सिद्ध करता है। वे कितना ही क्रोध क्यों न करें मैं उसे सहन कर लूँगा किन्तु दूर बैठे हुए भी मैं उनकी शक्तिका उपयोग तो जरूर करूँगा। आप निश्चिन्त रहें। साथका पत्र[2] आप उन्हें पहुँचा दें।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२३३. पत्र : नानाभाईको

८ अप्रैल, १९२७

प्राणायाम और आसनादिपर मेरी सदा श्रद्धा रही है, किन्तु कोई गुरु न मिलनेके कारण मैं उनके प्रयोग नहीं कर सका। सौभाग्यसे मैं इन दिनों खटियापर पड़ा हुआ हूँ, इसलिए कुछ पढ़ने और सोचने-विचारनेको मिल जाता है। सातवलेकरके आसन-सम्बन्धी लेख पढ़नेसे उस ओर विशेष रूपसे ध्यान गया है। आप तो नाथूराम शर्माके शिष्य हैं इसलिए आपको इसका अनुभव होना चाहिए। मेरा भी उनसे सम्पर्क रहा, किन्तु वे मुझे प्रभावित नहीं कर सके। हमारे कुटुम्बके चार-पाँच लोगोंपर उनका प्रभाव था। किन्तु अपने अनिश्चयके कारण मैं उनसे आसनादि न सीख सका। अब आसनादिके सम्बन्धमें आपके अनुभव जानना चाहता हूँ। क्या आपने उनका अभ्यास किया है? यदि किया है तो क्या वह अभ्यास अबतक चल रहा है? आप इस सम्बन्धमें जो कुछ भी जानते हों और उसे मुझे भी बता सकें तो बतायें।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१. नानालाल कविके जन्म-दिवसपर।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

२३४. पत्र : अमृतलालको

८ अप्रैल, १९२७

भाईश्री अमृतलाल,

अमृतलाल बापाके नाम लिखा मेरा पत्र[1] तो तुमने देखा ही होगा। मेरी इच्छा है कि तुम उसे देखो। आखिर उनका भाषण तुम्हारी ही कृति तो है। मैं चाहता हूँ कि इस बातका निर्णय शुद्ध तात्त्विक दृष्टिसे किया जाये। इसमें मेरी भावनाओंको आड़े नहीं आने देना चाहिए। और यदि मेरी भावनाओंका ही प्रश्न हो तो मेरी भावना यही होगी कि जो काठियावाड़के वातावरणके अनुकूल हो और वहाँके लोगोंके लिए श्रेयस्कर हो वही होना चाहिए। मैं जो खादीका पक्षपाती हूँ उसका कारण यह है कि मैं उसे श्रेयस्कर मानता हूँ, किन्तु यदि वह वहाँके वातावरणके अनुकूल न हो तो वह श्रेयस्कर क्योंकर होगी। ऑक्सीजन हमारे लिये प्राणवायु है, किन्तु वृक्षोंके लिए? काठियावाड़का वातावरण तो आप सब लोग ही हैं। यदि कोई बात तुम सबको मैं न समझा सकूँ तो मुझे किसी दूसरे उपायका सहारा लेना चाहिए अथवा उसे छोड़ देना चाहिए।

तुम्हारी योग्यतासे मैं परिचित हूँ। तुम्हारे कुछ काम तो मुझे बहुत ही पसन्द आते हैं। मैं तुम्हारी गिनती देशसेवकोंमें करता हूँ। तुममें हिम्मत है। उसका उपयोग करते हुए दूसरोंको भी हिम्मत बँधाओ और यदि मेरा विरोध करनेका मौका आये तो जरा भी न डरते हुए विरोध करो। मैं जो चाहता हूँ सो नहीं, बल्कि तुम जो चाहते हो वही करना, क्योंकि यही उचित है। माँगे हुए कपड़ोंमें हम कहीं फब सकते हैं!

आजकल मेरा मन खादी आदि रचनात्मक कामोंके सिवाय अन्य कामोंमें नहीं लगता। रचनात्मक काम करते हुए यदि मेरी जिन्दगी बाकी होगी तो सत्याग्रहकी मर्यादाके भीतर रहकर मुझे किसी दिन लड़ाई ठान देनेकी बात भी सूझ सकती है और यदि मेरी जिन्दगीमें यह लड़ाई न हो सकी तो मेरे बाद जिन्हें उसकी जानकारी होगी, वे लड़ेंगे।

हिंसात्मक क्रान्तिकी बात तो मुझे रुचती ही नहीं। जब जहरीले साँपको भी मारनेकी मुझे इच्छा नहीं होती तो फिर जहरीले मनुष्यकी तो बात ही क्या? मैं जानता हूँ कि दुनियाने स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका एक मार्ग हिंसात्मक क्रान्तिको भी माना है। किन्तु हिंसात्मक क्रान्ति निरर्थक है, यह बतानेमें मैं अपना जीवन लगा देना चाहता हूँ। इसीमें मुझे आनन्द आता है, इसलिए मेरा धीरज कभी चुकता नहीं। मुझे जितने रास्ते सूझते हैं वे सब शान्तिके ही रास्ते हैं। मेरे लिए तो वही सबसे

१. देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको", १-४-१९२७।

सीधा और इसलिए सबसे छोटा रास्ता है। अगर तुम्हें और तुम्हारे अनुयायियोंको भी वही रास्ता सूझता हो, तभी तुम मेरा साथ देना, अन्यथा मेरा साथ छोड़ देनेमें ही श्रेय है। क्योंकि कहा गया है: "श्रेयान् स्वधर्मो।"[1] रोग-शय्यामें पड़े होनेके कारण मुझे अधिक सोचने-विचारनेको मिलता है, इसलिए मैं इस बातको और अधिक स्पष्ट करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ कि मेरा और हम सबका मार्ग क्या है।

बापू

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

२३५. पत्र: हीरालाल अमृतलालको

८ अप्रैल, १९२७

मैं सान्ताक्रूजमें तो सिर्फ धन एकत्र करनेके लिए ही आया था।[2] वहाँ खादीका उत्पादन नहीं हो सकता। वहाँ तो वह केवल बेची जा सकती है। नीलामीके विषयमें मतभेद हो सकता है। मुझे उसमें कोई दोष नहीं दिखाई देता। उस क्रियामें अपने आपमें तो कोई दोष है ही नहीं। जिस कार्यके लिए वह की जाती है उसमें भी नहीं है। फिर उसका विरोध किसलिए?

मेरी सलाह तो यही है कि तुम्हारे जैसे विचारशील व्यक्तिको छोटी-सी बात परसे कोई धारणा नहीं बनानी चाहिए। और खादी जैसी निर्मल प्रवृत्तिका सूक्ष्मतासे निरीक्षण करना चाहिए।

आश्रममें जाओ और देखो। नारणदास, मगनलाल और शंकरलालसे मिलो। लक्ष्मीदास क्या कर रहे हैं, यह देखो और फिर अपने सुझाव मुझे लिखो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

१. भगवद्गीता, अध्याय ३-३५।
२. देखिए "भाषण: सान्ताक्रूजमें", २३-३-१९२७।

२३६. पत्र : शम्भूलालको

८ अप्रैल, १९२७

मैं देखता हूँ कि आजकल मेरा मन खादीके सिवाय अन्य किसी काममें नहीं लगता। हो सकता है मैं गलतीपर होऊँ।

> रजत सीप महुँ भास जिमि जथाभानुकर बारि।
> जदपि मृषातिहुँ काल सोई भ्रम न सकई कोउ टारि।।[1]

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२३७. पत्र : नारणदास गांधीको

शुक्रवार [८ अप्रैल, १९२७][2]

चि० नारणदास,

मैं तुम्हें पत्र नहीं लिखता किन्तु तुम्हारे कार्यके सम्बन्धमें तो मुझे जानकारी रहती ही है।

१. मैंने तुम्हारा एक पत्र जो गुजरातमें खादीके कार्यपर होनेवाले खर्चकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करता है, सँभालकर रख लिया था। उद्देश्य यह था कि इस सम्बन्धमें तुमसे और लक्ष्मीदाससे बातचीत करना चाहता था। किन्तु ऐसा मौका ही नहीं आया। अब जब मौका मिलेगा देखा जायेगा। मेरी समझमें उसका आशय यह है कि मजदूरी तो हमने २९,००० रु० दी है; लेकिन हमारा २९,००० रु० से भी अधिक खर्च हुआ है; और यह बहुत अधिक कहा जायेगा। इसमें रानीपरज लोगोंके बीच किये गये कामपर होनेवाला खर्च भी शामिल है न? इसका उत्तर तो यही होना चाहिए कि फिलहाल खादी-कार्यके साथ-साथ लोक-जागृति तथा लोक-शिक्षाकी प्रवृत्तियाँ भी चल रही हैं। यदि ऐसा हो तो यह हमारी नीतिका एक अंग है और जबतक प्रामाणिक रूपसे उस नीतिका पालन किया जा रहा हो तबतक एक प्रयोगके रूपमें हमारा उसे सहन करना ठीक है। किन्तु यह तो मेरा अनुमान है। यदि तुम इसपर अधिक प्रकाश डाल सको तो मैं उसकी चर्चा, अगर लक्ष्मीदास जल्दी मिल गया तो, उससे करूँगा अथवा जब हम तीनों मिलेंगे तब इस बारेमें विचार करेंगे।

१. रामचरितमानस, बालकाण्ड, ११७।
२. देखिए "पत्र : फूलचन्द शाहको", ८-४-१९२७।

२. फिलहाल मुझे जितना समय मिलता है अथवा मुझमें जितनी सामर्थ्य है उसको देखते हुए मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं काठियावाड़में चल रहे खादीके कामके लिए अलगसे चन्दा उगाह सकूँगा। इसलिए मैं तो ऐसा सोचता हूँ कि हम यह कार्य चरखा संघको सौंप दें और उसके नियमोंके अनुसार जितना काम हो सके उतना ही करें। इस सम्बन्धमें मैंने भाई फूलचन्दको लिखा[1] है। तुम भी इस बारेमें विचार करना। शायद अधिक अच्छा तो यह होगा कि इसे गुजरातके कामके साथ मिला दिया जाये। फिलहाल मैं इतनी बात स्पष्ट देख रहा हूँ कि उसे स्वतन्त्र रूपसे नहीं चलाया जा सकता। इस सम्बन्धमें आवश्यक समझो तो लक्ष्मीदास वहाँ हो तो उससे और शंकरलालसे विचार-विमर्श करना। इस बीच आश्रममें जितनी सुविधा मिल सके उसके अनुसार काठियावाड़के कामको देखते और बढ़ाते रहो तथा उसकी सूचना मुझे देते रहो। इतना ध्यान रखना कि जो काम हो चुका है अथवा जो करना है वह अस्त-व्यस्त न हो।

३. आजकल तुम 'यंग इंडिया' में [खादीके कार्यसे सम्बन्वित] आँकड़े और विवरण प्रकाशित नहीं करते। उत्पादनके आँकड़े तो प्रकाशित होने ही चाहिए तथा सदस्योंसे जो सूत प्राप्त होता है, उस सम्बन्धमें भी आवश्यक जानकारी भेजते रहा करो।

मैं अब धीरे-धीरे काम करने लायक हो गया हूँ इसलिए अब मुझे बख्शना मत। जो-कुछ लिखने योग्य हो सो सब लिखना और जो-कुछ पूछना चाहो वह पूछना।

चि० पुरुषोत्तमसे मैंने बातचीत की थी और अब उसके साथ मेरा पत्र-व्यवहार भी चल रहा है। मैं इस बारेमें तुम्हें बता नहीं सका था। मुझे ऐसा लगा कि वह निर्मल हृदयका युवक है। आशा है भगवान उसका मंगल ही करेंगे।

कनुका क्या हाल-चाल है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१४१) से।
सौजन्य : जमनादास गांधी

१. देखिए "पत्र : फूलचन्द शाहको", ६-४-१९२७ ।

२३८. एक पत्र

८ अप्रैल, १९२७

निश्चय ही मेरी तो यह प्रबल इच्छा है कि हमें जात-बिरादरीके उन छोटे-छोटे घेरोंसे बाहर निकलना चाहिए। धर्मका रहस्य जात-बिरादरीके बन्धनोंको निभानेमें नहीं है; वह तो वर्णाश्रमतक ही सीमित है। सैकड़ों वर्णोंकी बात तो कहीं जानने सुननेको नहीं मिलती। किन्तु इस बारेमें मेरा कोई आग्रह नहीं है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२३९. पत्र : दामोदर लक्ष्मीदासको

अम्बोली, बरास्ता बेलगांव
चैत्र सुदी ९ [१० अप्रैल, १९२७]

भाई दामोदर लक्ष्मीदास,

चि० ममाबाईके स्वर्गवासका समाचार भाई किशोरलालने दिया। दैहिक सम्बन्धोंके कारण हमें शोक तो होता ही है, किन्तु जब मैं ममाबाईके बारेमें विचार करता हूँ तो मुझे ऐसा ही लगता है कि वह दुःखोंसे मुक्ति पा गई।

तुम्हारे साथ मेरा कोई घनिष्ठ परिचय नहीं है, किन्तु यदि मुझे सलाह देनेका अधिकार हो तो मैं इतना ही कहूँगा कि ममाबाईको याद रखते हुए अब दुबारा सम्बन्ध न करके पवित्र जीवन व्यतीत करना।

तुमपर बाल-बच्चोंकी काफी जिम्मेदारी है। पू० गंगाबहनसे सलाह-मशविरा करके उनके लिए उचित व्यवस्था करना और ऐसी योजना करना जिससे उनका जीवन सुधरे। यदि मेरी सहायताकी आवश्यकता हो तो बताना। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जो-कुछ मुझसे बन पड़ेगा वह मैं करूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८१७) से।
सौजन्य : पुरुषोत्तम डी० सरैया

२४०. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

रविवार [१० अप्रैल, १९२७][1]

चि० गंगाबहन,

चि० ममा चल बसी यह मुझे तो ठीक ही लगा है। बेचारी बहुत कष्टमें थी। अन्तिम समय तुम पासमें थी यह भी ठीक हुआ। मैंने जमाईको[2] पत्र लिखा है। अब सवाल यह है कि चि० ममाके बच्चोंका क्या करना है; वह बच्चोंको तुम्हें सौंप दे और उनके खर्चका भार उठाये तो उनका दायित्व तुम्हे लेना चाहिए या नही यह सवाल उठता है। इसपर विचार करना। मुझे आशा है कि तुम जरा भी उद्विग्न नही हुई होगी।

तुम्हारे पत्र मुझे मिलते रहते हैं। मेरी तबीयत अच्छी ही मानी जायेगी। दो दिनसे थोड़ा चलने लगा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८२७) से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

२४१. पत्र : मीराबहनको

११ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र मिले। तुमने मेरे सामने अपनी सारी आत्मा उँडेलकर निश्चय ही बिलकुल ठीक किया। मैं तुमसे सर्वथा सहमत हूँ कि हमें एक संगठन खड़ा करना है, और इसलिए कामका कोई तरीका होना ही चाहिए। लेकिन शायद मेरे प्रति तुम्हारे स्नेहके कारण उन लोगोंके प्रति, जिन्होंने दौरोंका प्रबन्ध किया, अधीरताका आभास है। किन्तु जो चेतावनी मिली है, उससे सभी लाभ उठायेंगे। इस अत्यन्त रमणीय वातावरणमें जितने भी आरामकी जरूरत है, मुझे मिल रहा है और जब मुझे मैसूर ले जाया जायेगा तब और भी अधिक आराम मिलेगा। आराम आश्रममें नहीं किया जा सकता। डा० मेहताका आग्रह था कि कोई ठंडी जगह[3] चुनी जाये। और इस तरह मुझे वहीं रहना है जहाँ मुझे अप्रैलमें दौरा करना था।

१. ममाकी मृत्युके उल्लेखसे; देखिए पिछला शीर्षक।
२. दामोदर लक्ष्मीदास।
३. नन्दी हिल्स, बंगलोरके पास; देखिए "डा० जीवराज मेहताके साथ हुई बातचीत", ३-४-१९२७।

मेरी लिखावटसे तुम समझ सकती हो कि मैं दिनोंदिन सशक्त होता जा रहा हूँ। कल मैं काफी घूमा। यह तो हुई अपनी बात।

तुम्हारा घोड़ेकी सवारी करना सीखनेका विचार मुझे पसन्द है। इससे तुममें चैतन्य आयेगा और तुम गांवोंमें जाकर थोड़ा-बहुत ग्रामीण जीवन देख सकोगी। क्या तुम्हारे लिए उन्होंने ठीक जीनका प्रबन्ध कर दिया है? तुम्हें हर प्रकारकी ग्राम्य हिन्दी समझनेका प्रयत्न करना चाहिए। मुझे तबतक सन्तोष नहीं होगा, जबतक तुम हिन्दीमें इतनी पारंगत न हो जाओ कि देहातियोंकी हिन्दी समझ और बोल सको। तुम भयभीत न होना। तुम्हें अपने काममें प्रेम है, इसलिए तुम्हें उनकी हिन्दी समझना और बोलना आ जायेगा। मैं अधीर नहीं होऊँगा। परन्तु तुम्हारे कामके लिए हिन्दीका पूरा ज्ञान आवश्यक है। इसलिए तुम उसे जानने और बोलनेका मौका ढूंढती ही रहना। तुम्हारे आसपास जो-कुछ हो रहा हो, उस सबको समझनेका आग्रह रखना।

उस मोटी और सुन्दर महिला नूरबानूको तो तुम अवश्य ही जानती होगी। उसका तुम्हारे नाम एक पत्र है। उसने अभी हालमें आश्रमको अपने कई हजारके जेवर दिये हैं। वह अपने पतिके साथ इस समय महाबलेश्वरमें रहती है। दोनों मुझसे मिलने अभी यहाँ आये हैं। उन्हें उत्तर लिख देना। उसका पता महाबलेश्वर कालेज, महाबलेश्वर है। श्रीमती नूरबानू प्यारेअली उसका पूरा नाम है।

मैं यह जाननेके लिए उत्सुक हूँ कि नया चरखा कैसा चल रहा है। क्या तुमने वहाँ चरखे देखे हैं?

क्या तुम्हें अपने लिए अच्छे फल मिल जाते हैं?

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

महादेव और देवदास खादीकी फेरी लगाने गये हैं।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१५) से।
सौजन्य : मीराबहन

२४२. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

अम्बोली
सोमवार [११ अप्रैल, १९२७][1]

भाई सातवलेकर,

आपके दो पत्रो और पुस्तकें मील गये है। मैं आभार मानता हुं।

'वैदिक धर्म' मुझे भेजते रहियेगा।

मेरा साथ वहोत नवयुवक है, और युवती भी है। ब्रह्मचर्य पालनके साथ स्वास्थ्य अच्छा रखनेके लिये उनके वास्ते मैंने वहोत कोशिश तो की है। आसनादिका प्रयोग ही केवल वाकी रहा है। क्या आप इस वारेमें मुझको कुछ मार्ग वता सकते है, मेरा अभिप्राय है कि केवल चित्रोंसे और पुस्तकोंसे यह कार्य अच्छी तरह नही वन सकता सूर्यभेदन व्यायाम और. . .[2]

'ब्रह्मचर्य' नामक पुस्तककी दो प्रतियाँ आप आश्रम भेजनेकी कृपा करें। उसका मुल्य आपको आश्रमसे भेजा जायेगा। दोनों पुस्तकोको मीलाकर उसका सह परिवर्तन अनुवाद गुजरातीमें छपवानेकी इच्छा है यदि आपका सम्मति हो तो।

मोहनदास

मूल (एस० एन० १२७७१) की फोटो-नकलसे।

२४३. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

[११ अप्रैल, १९२७][3]

वहनो,

तुमने मुझे मुक्ति दे दी मगर मैं उसका उपयोग विना कारण कैसे कर सकता हूँ? अव मेरी तवीयत ऐसी नही है कि मैं तुम्हें पत्र लिख ही न सकूँ। कल तो काफी घूमा भी था। तुम्हें पत्र लिखना मेरे लिए कोई श्रमकी वात नही है।

क्या तुममें से कुछने संयुक्त भोजनालयमें वारी-वारीसे जानेका निश्चय किया है? लक्ष्मीवहनने[4] तो जानेकी इच्छा दिखाई ही थी। अगर अभीतक कोई न गया हो,

१. इस पत्रके उत्तरमें लिखे सातवलेकरके पत्रके अनुसार।

२. पत्रका दूसरा पृष्ठ उपलब्ध नहीं है।

३. संयुक्त भोजनालयकी देख-रेख और गांधीजीके काफी दूर घूमनेके उल्लेखसे। देखिए "पत्र: मीरावहनको", ११-४-१९२७।

४. संगीतशास्त्री खरेकी पत्नी। उन्हें गांधर्व महाविद्यालय, बम्बईमें संयुक्त भोजनालय चलानेका अनुभव था।

तो वे तो चली ही जायें। अगर भोजनालयमें कुछ भी कमी रही तो उसका दोष मैं सभी बहनोंको दे सकता हूँ न? पूरा यह काम तुम्हारे जितना सौंपा है, फिर भले तुम मुक्त हो जाना। मगर तबतक तो मुक्त नहीं हो सकती।

इसके साथ मीराबाईका पत्र है, उसे चि० मगनलालको दे देना। वह पढ़ने लायक है इसलिए भेजा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४४) की फोटो-नकलसे।

२४४. पत्र : मीराबहनको

१३ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

आज उपवासके दिन मुझे तुम्हारे उस पत्रकी, जिसमें बीथोवनके उद्धरण[1] दिये गये हैं, प्राप्ति स्वीकृति लिख ही देनी चाहिए। ये उद्धरण अच्छी आध्यात्मिक खुराक हैं। मैं नहीं चाहता कि तुम अपना संगीत या उसकी रुचि भूल जाओ। जिस चीजकी तुम इतनी ऋणी हो, और जो चीज वास्तवमें तुम्हें मेरे पास लाई, उसे भूल जाना निर्दयता होगी।[2]

महाराजजी और सब मित्रोंको उनके कृपापूर्ण निमन्त्रणके लिए धन्यवाद देना। लेकिन अभी तो मुझे मैसूरमें नन्दी हिलसपर ही जाना होगा। मैं जानता हूँ कि यदि मैं वहाँ आ सकूँ तो मुझे पूरा सुख मिलेगा।

हमने यहाँ राजसी ठाठसे सप्ताह[3] मनाया। एक चरखा रोज १६ घंटे चालू रखा गया। उसपर ४ फुटके ३,०००से ज्यादा तार प्रतिदिन काते गये। लगभग सभीने ६ और १३ तारीखको उपवास रखा।

मुझे आशा है कि यहाँ तुम्हारे और भी अधिक पत्र आयेंगे।

काकाने[4] तुम्हारे द्वारा किये गये रोलाँके पत्रके अनुवादकी एक प्रति भेजी है। अनुवाद सचमुच बहुत अच्छा है। मूल इससे अच्छा नहीं हो सकता।

तुम कमिश्नर आदिसे मिल ली, इसकी मुझे खुशी है। तुम्हें अपने त्यागका — एक भंगी द्वारा गोद लिये जानेका — पुरस्कार मिल रहा है। तुम्हें भूल जाना चाहिए कि तुम क्या थी। तुम्हें यही समझना चाहिए कि तुम क्या हो। ये बेचारे सरकारी

१. मीराबहनने इस सम्बन्धमें लिखा है कि “जहाँतक मुझे याद है, मैंने रोमां रोलां रचित लाइफ ऑफ बीथोवनके उद्धरण दिये थे; और एक चीज जो मैंने दी थी वह थी बीथोवनका आदर्श वाक्य: “कष्ट द्वारा आनन्द।”

२. इसके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

३. राष्ट्रीय सप्ताह।

४. काका साहेब कालेलकर।

अधिकारी सचमुच नहीं जानते कि जब वे तुमसे मिलते हैं तब उनकी हैसियत क्या होती है। वे तुम्हारे जीवनकी विगत बातोंको भूल नहीं सकते और स्वाभाविक है कि घबरा जाते हैं। तुम्हें उन्हें निश्चिन्त कर देना पड़ेगा। कहते हैं कि जब ब्रिटेनके मौजूदा राजा नाविक रूपमें भरती हुए थे तो उनके साथ नाविकों जैसा बर्ताव ही किया जाता था और दूसरे नाविकोंकी तरह उन्हें भी नाश्तेमें कॉफी और काली रोटी दी जाती थी। यह तो उससे सम्बन्धित सबसे छोटी बात थी। उन्हें साधारण नाविक ही समझा जाता था। इसी तरह एक दिन तुम भी मामूली देहाती लड़की ही समझी जाओगी। वह तुम्हारे और मेरे दोनोंके लिए गर्वकी बात होगी।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१६) से।
सौजन्य : मीराबहन

२४५. पत्र : सुरेन्द्रको

बुधवार [१३ अप्रैल, १९२७][1]

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि वहाँसे छुट्टी मिल सके तो तुम नाथजीके पास तथा वर्धा अवश्य जाना। इसमें सन्देह नहीं कि आरोग्यशास्त्रका अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है, जिसमें आसन और प्राणायाम भी शामिल है। मैं यह मानता हूँ कि कोई सिखानेवाला होना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम इसका अभ्यास करो। नाथजीको तो आसनादिका कुछ अनुभव है, किन्तु ऐसा नहीं जान पड़ता कि उसपर उनकी कुछ बहुत श्रद्धा है। इस बारेमें मेरे कुछ लोगोंसे बातचीत करनेपर यह परिणाम निकला कि बीमारीसे छुटकारा पानेमें आसनादिसे कोई बहुत मदद नहीं मिलती। किन्तु मैं स्वयं इस मतका समर्थक नहीं हूँ। यदि तुम्हारी इच्छा सीखनेकी हो तो मैं तुम्हें पं० सातवलेकरके पास भेज दूँगा। हरिद्वारमें एक स्वामीजी हैं। उनका कहना है कि यदि कोई आश्रमवासी उनके पास आसनादि सीखनेके लिए आयेगा तो वे उसे सिखा देंगे। मैं उनसे कभी नहीं मिला, किन्तु महादेव मिला है। जिस शुद्धताकी मैं आशा करता हूँ वह मुझे कहीं नहीं मिली, किन्तु हमें तो आसनादि सीखने-भरका सम्बन्ध चाहिए। नाथजीकी राय जानकर उन्हें पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९४१४) की फोटो-नकलसे।

१. सुरेन्द्रको पं० सातवलेकरजीके पास भेजनेके उल्लेखसे; देखिए "पत्र: श्री० दा० सातवलेकरको", १४-४-१९२७, जिसमें गांधीजीने लिखा था "एक अच्छा विद्यार्थीको आपके पास भेजनेका प्रयत्न कर दूंगा।"

२४६. बुद्धि बनाम श्रद्धा

मण्डालेके एक एम० बी० बी० एस० डाक्टरने एक प्रश्नावली भेजी है। प्रश्नावलीका पहला सवाल यह है:

एक बार 'यंग इंडिया' में आपने लिखा था कि जहाँ बुद्धिकी सीमा समाप्त होती है वहाँसे श्रद्धाका आरम्भ होता है। तब मैं आपसे यह आशा करता हूँ कि अगर कोई आदमी अपने विश्वासके कारण न बतला सके तो आप उसके उस विश्वासको श्रद्धा कहेंगे। क्या इससे यह बात साफ नहीं हो जाती कि अकारण विश्वास करना श्रद्धा है? अगर कोई आदमी किसी अयुक्तियुक्त बातपर विश्वास करे तो क्या इसे आप सही अथवा उचित मानेंगे? इस प्रकार विश्वास करनेको मैं मूर्खता मानता हूँ। मैं नहीं जानता कि आपका 'बैरिस्टरी दिमाग' इसे क्या कहेगा। अगर आप भी मेरी ही तरह सोचें तो मुझे विश्वास है कि आप श्रद्धाको और कुछ न कहकर मूर्खता ही कहेंगे।

अगर विद्वान डाक्टर साहब मुझे ऐसा कहनेके लिए क्षमा कर दें तो मैं कहूँगा कि उनके सवालसे ही यह बात साफ दिखती है कि उन्होंने मेरा मतलब ही नहीं समझा है। युक्तिसे जो-कुछ परे है, वह निश्चय ही अयुक्तियुक्त नहीं है। अयुक्ति-युक्त विश्वासका नाम तर्कहीन विश्वास है और वह प्राय अन्धविश्वास होता है। किसीको ऐसी बातमें बिना प्रमाण विश्वास करनेके लिए कहना जरूर अयुक्तियुक्त होगा, जिसके प्रमाण दिये जा सकते हैं, जैसे कि किसी बुद्धिमान मनुष्यको बिना प्रमाणके यह विश्वास करनेके लिए कहना कि त्रिभुजके तीनों कोणोंका योगफल दो समकोणके बराबर होता है। किन्तु यदि कोई अनुभवी मनुष्य किसी दूसरे मनुष्यसे प्रमाणित न कर सकनेपर भी यह विश्वास करनेको कहता है कि "ईश्वर है" तो इसका अर्थ यह है कि वह उस विषयमें नम्रतापूर्वक अपनी सीमा स्वीकार करता है और दूसरेको केवल श्रद्धा करके अपने अनुभवकी बात मान लेनेके लिए कहता है। यह तो सिर्फ उस आदमीकी विश्वसनीयताका प्रश्न है। जीवनकी साधारण-सी बातोंमें भी हम जिन लोगोंपर भरोसा करते हैं, उनकी बातपर विश्वास करते हैं, यद्यपि इसमें प्राय. धोखा भी खाते हैं। तब फिर हम जीवन-मरणके सम्बन्धमें सारी दुनियाके सन्तोंकी इस बातको प्रामाण्य क्यों न मान लें कि ईश्वरका सत्य और निर्मल जीवन (अहिंसा) के द्वारा ही साक्षात्कार किया जा सकता है। उसी प्रकार पत्रलेखकसे इस सार्वभौम प्रामाण्यको श्रद्धापूर्वक माननेके लिए मेरा कहना कमसे-कम उतना ही उचित है जितना कि उनका मुझसे कई डाक्टरोंके इलाजमें कोई फायदा न होनेपर भी अपनी दवाको आँख मूँद कर श्रद्धा करके खानेके लिए कहना। मैं तो यहाँतक कहता हूँ कि श्रद्धा न रहे तो यह संसार क्षणभर भी न रहे। सच्ची श्रद्धाके मानी हैं, उन लोगोंके युक्तियुक्त अनुभवोंको अपनाना जिनके बारेमें हमारा ऐसा विश्वास

है कि उन्होंने तपस्या और प्रार्थनासे युक्त पवित्र जीवन विताया है। इसलिए प्राचीन कालमें हुए अवतारों या नवियोंमें विश्वास करना एक बेमतलबका अन्धविश्वास नहीं है, वल्कि आत्माकी आध्यात्मिक भूखकी तृप्ति है। इसलिए मार्गदर्शनके लिए जो सूत्र मैंने नम्रतापूर्वक प्रस्तुत किया है, वह यह है कि प्रत्येक ऐसी वात, जो प्रत्यक्षत: प्रमाणित की जा सकती है, श्रद्धाके आधारपर न मानी जाये और जिसके सम्बन्धमें निजी अनुभवके अतिरिक्त कोई प्रमाण न दिया जा सके उसे विना हिचक श्रद्धासे मान लिया जाये।

इसी लेखकका दूसरा सवाल यह है:[1]

९ दिसम्बर, १९२६ के 'यंग इंडिया' में किसी अखवारकी यह खबर उद्धृतकी गई[2] थी: हैरॉल्ड ब्लेजर नामके किसी डाक्टरने अपनी लड़कीको क्लोरोफार्म देकर मार दिया था, क्योंकि उसे ऐसा लगा कि उसकी मृत्यु समीप आ गई है और उसके बाद उसकी लड़कीकी देखभाल करनेवाला कोई नहीं होगा। इस डाक्टरको अदालतने सर्वथा निरपराध घोषित कर दिया। डाक्टर ब्लेजरके वकील श्री हाउरीने कहा था, "डाक्टर ब्लेजरने समाजके ऊपर उस बेचारी लड़कीका भार न डालकर, नीतियुक्त और उचित काम किया है।" इसपर आपने अपना यह विचार प्रकट किया कि डाक्टर ब्लेजरने अपनी लड़कीकी जान लेकर भूल की, क्योंकि इससे प्रकट होता है कि उसे अपने आस-पास रहनेवालोंके मनमें दयाभाव होनेका भरोसा नहीं था और उसके पास यह मान लेनेका कोई कारण न था कि दूसरे उस लड़कीकी देखभाल न करते . . . मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप इसपर फिरसे विचार करें, क्योंकि मेरी समझमें यह कोई मामूली विषय नहीं है। चूँकि यह स्पष्ट है कि आपको समाजपर एक बेकार मनुष्यका बोझ लादनेमें कोई झिझक नहीं है और यह केवल इसलिए कि आपको पूरा विश्वास है कि समाज उस भारको अवश्य उठायेगा। आप ईश्वरके लिए हमें तो उस बेकार, वल्कि अत्यन्त हानिकर सिद्धान्तमें विश्वास करनेके लिए न कहें। मेरी ईमानदारीसे ऐसी राय है कि आपका यह विश्वास भारतके प्रमुख हितोंकी दृष्टिसे बहुत ही हानिकारक है। . . . मान लीजिए कुछ साल बाद आप समाजके लिए बिलकुल बेकार हो जायें, तब क्या उस दशामें भी आप चाहेंगे कि समाज आपको इसलिए खिलाए-पिलाए कि आपके जीवनके दिन अभी बाकी हैं या इसलिए कि आपने उनकी इतनी सेवा की है?

मैं ऐसा जरूर मानता हूँ कि अगरचे जूरीने डाक्टर ब्लेजरको छोड़कर ठीक ही किया है, किन्तु विशुद्ध नैतिक दृष्टिसे विचार करके देखें तो डाक्टर ब्लेजरका यह कार्य अनुचित था। मेरे पत्रलेखकने अपने उपयोगितावादी जोशमें, जिस सिद्धान्तका प्रतिपादन किया है उन्होंने उसके भयंकर परिणामों और फलितार्थोंपर बिलकुल ही

१. अंशत: उद्धृत।
२. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ३९४-९६

ध्यान नही दिया है। सच पूछो तो उनका यह सिद्धान्त उनके अपने आदर्शको खुदको ही झुठलाकर कलंकित करनेवाला बनेगा। यदि कोई नया डाक्टर किसी रोगीको ऐसा मानकर कि वह असाध्य है, और इसलिए वह समाजके लिए भार है, बेहोशीकी दवा सुंघाकर मार दे जबकि एक पुराना डाक्टर मरनेके बाद रोगीको साध्य बताये तो आप उस नये डाक्टरके बारेमें क्या कहेंगे? क्या किसी भी रोगीको बिल्कुल असाध्य नहीं मानना चिकित्सा विज्ञानकी एक सर्वोचित ही नही है? जहांतक मेरी अपनी बात है मै जरूर आशा रखता हूँ कि जब मैं बिल्कुल बेकार हो जाऊँ और समाजके ऊपर बोझ बन जाऊँ और मान लें कि मैं तब भी जीना चाहूँ तो मेरे देशवासी मेरा पालन-पोषण करेंगे। इतना ही नहीं, मेरा पक्का विश्वास है कि अगर ऐसा अवसर आ गया तो मेरे देशवासी अवश्य ही मेरा पालन-पोषण करेंगे। मुझे नही मालूम कि पत्रलेखकका क्या ऐसा ख्याल है कि जितने कोढी, अन्धे, बहरे लोग हैं उन सबको एक रात बेहोशीकी दवा सुंघाकर मीठी मौतकी नींद सुला देना चाहिए। किन्तु डेमियन कोढी था और कवि मिल्टन अन्धा। आदमी केवल शरीर ही नही है; बल्कि उससे कई गुना ऊँची चीज है।

लेखकका तीसरा सवाल है:[1]

आप उसी "सर्वभूतहिताय" शीर्षक लेखमें लिखते हैं कि अहिंसावादी उपयोगितावादका समर्थन नहीं कर सकता। वह तो सर्वभूतहिताय यानी सबके अधिकतम लाभके लिए प्रयत्न करेगा और इस आदर्शकी प्राप्तिमें मर जायेगा।... तब क्या मैं यह निष्कर्ष निकालूं कि आप सांपको मारकर अपनी जान बचानेके बजाय सर्प-दंशसे मर जाना पसन्द करेंगे; अगर मेरा यह निष्कर्ष ठीक है तो ... कि इस तरह आप एक हानिकारक जीवको बचानेका प्रयत्न करके और अपने उस तथाकथित सर्वभूत-हितायके आदर्शकी प्राप्तिमें खुशीसे खुद मर कर, हिन्दुस्तानका बड़ेसे-बड़ा अहित करेंगे। ... आप स्वीकार करते हैं कि आप अपूर्ण मनुष्य हैं और इसलिए सारे संसारका हित करना आपके लिए असम्भव है। इतना ही नहीं सभी सम्भव तरीकोंसे सारे हिन्दुस्तानका भी हित कर सकना आपके लिए असम्भव है। इसलिए बिना अपवादके भले और बुरे, उपयोगी और अनुपयोगी, मनुष्य और पशु सब भूतोंका हित करनेका ढोंग करनेकी अपेक्षा अधिकसे-अधिक लोगोंका अधिकतम हित करनेका प्रयत्न करना अच्छा है।

यह एक ऐसा सवाल है जिसका जवाब देनेसे मैं बचना चाहूँगा। इसका कारण मेरी श्रद्धाकी कमी नही, बल्कि मेरी हिम्मतकी कमी है। मगर मुझे अपने विश्वासको छुपाना नहीं चाहिए, भले ही परीक्षाका अवसर आनेपर उसके अनुसार चलनेका साहस मुझमे न हो। अत. मेरा जवाब यह है। मै नहीं चाहता कि मैं अपनी जान बचानेके लिए एक सांपकी भी जान लूं। मैं उसे मारनेके बजाय उसके दंशसे स्वयं मर जाना

1. अंशतः उद्धृत।

ठीक मानूंगा। लेकिन ऐसा हो सकता है कि अगर ईश्वर मेरी ऐसी कठोर परीक्षा लेनेके उद्देश्यसे एक साँपको मुझ पर दंश प्रहार करने दे तो मुझमें मरनेका साहस न हो; बल्कि मेरी पाशविक प्रवृत्ति जाग उठे तथा मैं इस नाशवान शरीरकी रक्षाके निमित्त साँपको मार डालनेकी कोशिश करूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि अहिंसामें मेरा विश्वास इतना दृढ़ नहीं हुआ कि मैं यह बात जोरसे कह सकूँ कि साँपोंसे मेरा डर बिलकुल जाता रहा है और उनसे मेरा मैत्री-भाव उतना पक्का हो गया है जितना कि मैं चाहता हूँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि ईश्वरने साँप, बाघ वगैरह जानवर, हमारे बुरे विचारोंके जवाबमें बनाये हैं। अन्ना किंग्सफोर्डने तो पेरिसकी गलियोंमें मनुष्योंमें बाघ-वृत्ति विकसित होती देखी थी। मेरा विश्वास है कि सभी जीव एक-से ही हैं। विचार निश्चित रूप ग्रहण करते हैं। बाघों और साँपोंका भी हमारे साथ निकटका सम्बन्ध है। वे हमारे लिए चेतावनी हैं कि हम बुरे, दुष्ट और विकारयुक्त विचार अपने मनमें न रखें। और यदि मैं दुनियासे सभी जहरीले जानवरों और साँपोंको मार भगाना चाहता हूँ तो पहले मुझे अपने सब बुरे विचार दूर करने होंगे। यदि अपने इस उतावलीयुक्त अज्ञान और शरीरको बनाये रखनेकी उत्कट इच्छाके कारण, मैं सभी कथित विषधर जानवरों और साँपोंको मारनेकी कोशिश करूँगा तो मनके बुरे विचार दूर नहीं कर पाऊँगा। अगर मैं इन जानवरोंसे अपना बचाव न करूँ और मर जाऊँ तो मैं फिर पहलेसे अच्छा और अधिक पूर्ण आदमी बनकर पैदा होऊँगा। ऐसा विश्वास रखते हुए मैं साँपके चोलेमें अपने समान किसी दूसरे जीवको किस प्रकार मारना चाहूँगा? मगर यह तो कोरा दर्शन है। मैं भगवानसे प्रार्थना करता हूँ, और मेरे पाठक भी प्रार्थना करें कि वह मुझे अपने इस दर्शनको जीवनमें उतारनेकी शक्ति दे, क्योंकि यदि दर्शन जीवनमें न उतारा जाये तो वह ऐसा ही है जैसे प्राणहीन देह।

मैं जानता हूँ कि हमारे इस देशमें दर्शन बहुत है, मगर उसके अनुरूप जीवन कम है। किन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि मनुष्यके आचरणपर नियंत्रण रखनेवाले नियम अभी खोजने हैं और उस खोजकी शर्तें अनिवार्य और अटल हैं। उनको हम मर कर ही खोज सकते हैं, मारकर नहीं। हमें सत्य और प्रेमका जीता-जागता स्वरूप बनना होगा, क्योंकि परमात्मा सत्य और प्रेम ही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १४-४-१९२७

२४७. सभ्यता और संस्कृति

ज्यूरिकके संस्कृत विद्वान डाक्टर मार्टिन हर्लीमैनने मेरे पास हाइनरिख पेस्टा-लॉजीके लेखोंमें से कुछ चुने हुए अंशोंका निम्न ज्ञानवर्द्धक अनुवाद[1] भेजा है। लेखकको मरे अभी १०० साल ही हुए हैं। डा० हर्लीमैनकी दृष्टिमें वे यूरोपके एक महानतम शिक्षा-शास्त्री थे और मानव जाति और मानवकी प्रतिष्ठाके लिए संघर्ष करनेवाले एक महानतम योद्धा थे। किन्तु यूरोपके लोग भी उनको ठीक-ठीक नहीं समझ सके और संसारके अन्य देशोंके लोग भी उनको लगभग जानते ही नहीं हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १४-४-१९२७

२४८. पत्र: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

अम्बोली
१४ अप्रैल, १९२७

प्रिय भाई,

आपके पत्रसे मुझे अपार हर्ष हुआ। यह खबर पाकर हमारे अपने लोग और एन्ड्रयूज खुश हो उठेंगे। और यूरोपीय भी ऐसे व्यक्तिको पाकर खुश होंगे, जिसे वे जानते हैं और जिसका वे आदर करते हैं। मुझे आपके पत्रसे बड़ी राहत मिली और रही आपके स्वास्थ्यकी बात। ईश्वर उसकी रक्षा करेगा। हमारे देशमें इस समय जो उथल-पुथल मची हुई है उससे दूर जाकर आपके थके हुए दिमागको भी चैन मिलेगा, इसके साथ ही देशकी अमूल्य सेवा भी होगी। आजकी उलझी हुई स्थिति न तो जल्दबाजीसे सुलझ सकती है और न बहुत सोच-समझकर किये जानेवाले हस्तक्षेपसे ही। समय आनेपर वह अपने आप सुलझ जायेगी।

श्रीमती शास्त्रीसे दक्षिण आफ्रिकामें आपको बड़ी सहायता मिलेगी और उनकी उपस्थितिका वहाँकी हमारी मूक बहनोंके लिए भी बहुत अर्थ होगा।

आशा है कि मैं आगामी बुधवारको नन्दी हिल्स पहुँच जाऊँगा। आप जब भी आ सकें और आना चाहें कृपया आयें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीके कागजात (पत्र व्यवहार सं० ४७०)।
सौजन्य : नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया

1. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२४९. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

अम्बोली
१४ अप्रैल, १९२७

भाई सातवलेकर,

आपका प्रत्युत्तर शीघ्रतासे आनेके लिये आभार मानता हूँ। एक अच्छा विद्यार्थीको आपके पास भेजनेका प्रयत्न कर लुंगा। आप जो कुछ कृपा कर रहे हैं इस परसे मैं समझता हुं कि आप मुझको सहाध्यायीका पद दे रहे हैं। मैं ऐसा ही बननेकी कोशिश करूंगा। आपका 'ईशोपनिषद्' ग्रंथ पढ लिया। चित्त बहुत प्रसन्न हुआ।

"ब्रह्मचर्य और सूर्यभेदन व्यायाम" के बारेमें मैं भाई बापुलालसे[1] पत्र व्यवहार कर लुंगा। उनको कुछ आर्थिक हानि नही पहोचना चाहिये।

कुवलयानन्द जी से मेरा परिचय है। मैंने उनके पास एक युवकको भेजा था परंतु वह दुर्बल होनेके कारण उनको प्राणायामादिके प्रयोग नहि बताया। परंतु दवाईयोंसे काम लिया।

ब्रह्मचर्य पालन इ०के बारेमें आजकलका वायुसे मुझे निराशा नहि है। यदि हममें से कोई भी सच्चा तपस्वी निकलेगा तो उस वायुको हरलेगा। अब तक मैं ऐसा कोई तपस्वीको नहि मिला हुं। मेरी निजकी तपश्चर्या बहोत अपूर्ण है। मेरा स्थूलकायिक ब्रह्मचर्य करीब ३० वर्षोसे चल रहा है। परंतु मैं विकारशून्य नहि हुं। होनेका प्रयत्न कर रहा हुं। मेरा मन्तव्य है कि संपूर्ण ब्रह्मचर्यके पालनके लिये पाँचों इन्द्रियोंका संपूर्ण निग्रह होना चाहिये। क्रोधादिको वशमें रखना काफी नहि है, परंतु क्रोधादिकी जड़का नाश होना चाहिये। 'रसोऽप्यस्य परं दृष्टवा निवर्तते'[2] में अक्षरशः ऐसा मानता हूँ। अगर मूर्तिपूजक है। जब कोई ऐसी व्यक्ति तैयार होगी तब जो जहरी वायु फैल रही है वह शीघ्र शान्त हो जायेगा। ऐसी व्यक्ति तैयार होनेके लिये हम सम्पूर्ण आशाके साथ प्रयत्न करें। आप ही ने तो लिखा है न कि यदि उपनिषदादिका शिक्षण सत्य और सनातन है — और है हि तो आज भी हम हैमवती उमाका और यक्षका भी दर्शन कर सकता है — ईश्वर कृपा होगी तो करेंगे। वीर्यसेवन और वीर्यभक्षणके बारेमें मैंने भी पढा है। मैं इसको आसुरी शिक्षा मानता हूँ। उसमें सत्यांश होनेका संभव है परंतु प्रयोग त्याज्य है। क्योंकि हम ब्रह्मचारीको इन्द्रजीत बनाना चाहते हैं। वीर्य रक्षा और वीर्य संग्रह साध्य नहि है परंतु साधन है। वीर्य भक्षणसे विकार रहितता नहि आती है उससे तो वीर्य स्खलनसे होनेवाली दुर्बलताका निवारण यत्किंचित हो सकता है। यही वस्तु पाश्चात्य क्रियासे बनती है। वीर्य स्खलनकी उत्पत्ति विकारोत्पत्तिमें है। हमारा उद्देश्य विकारोंका नाश है।

१. आनन्द, जिला खेड़ाके आर्यसमाजके कूलचंदास पटेल। सातवलेकरकी पुस्तकोंके प्रकाशक।
२. भगवद्गीता, अध्याय २, ५९।

इसी कारण मैंने आसनादिके बारेमें पूछा था। अब मैं समझ गया हूं कि आसनादि उस मार्गमें एक श्रेणी है और उसका प्रयोग साधकके लिये आवश्यक समझा जाय।

क्या मेरा कहना मैं स्पष्टतया समझा सका हूं?

वीर्यरक्षक आसनोंके बारेमें आपने पुस्तकमें लिखा है वह मैं समझ गया था। सूचना सावधान करती है। सिद्धासनादिसे गृहस्थके लिये भी कोई हानि नहीं देखता हूं। सिद्धासनसे यदि संभव है तो गृहस्थ स्थिर वीर्य बनेगा न तो निर्वीर्य। केवल सन्ततिके लिये ही स्त्री संग करनेवाले गृहस्थ आज कितने मीलेंगे? यदि विकारके लिये शांत शब्दका प्रयोग हो सकता है तो सिद्धासनादिसे गृहस्थ शांत विकार होगा। हा! यदि उसका लक्ष्य निरविकारता है तो दूसरी बात है।

आप पुराणोंका त्याग नहीं करते हैं। यह देखकर मुझको शांति हुई है। मुझे डर था कि आप पुराणोंका निरादर करते होंगे। मेरा तो यह निश्चय है कि लोग जब नास्तिक बन रहे थे तब पुराणियोंने आलंकारिक और काव्यमयी वाणीसे धर्म जागृति की। हमारे शास्त्रोंका हमारे आधुनिक युवकोंके लिये और आधुनिक ज्ञानकी दृष्टिसे नया अनुवाद करना है जैसा आप कर रहे हैं।

मेरे स्थिर होनेसे यदि हो सकता है तो आपको मेरे पास आनेका कष्ट देना चाहता हूं जिससे हम विचारोंकी लेन-देन करे।

अब तो मैं 'केनोपनिषद' पढ़ रहा हूं। उसके बाद 'महाभारत' की समालोचना लूंगा।

आपका,

मोहनदास

मूल (एस० एन० १२७७१) की फोटो-नकलसे।

२५०. पत्र : प्रभावतीको

नन्दी हिल्स, मैसूर[1]

चैत्र सुदी १३ [१४ अप्रैल, १९२७]

चि० प्रभावती,

तुमारा ख्याल तो मैं बहोत ही करता हुं! अब कैसे चलता है? तुमारा आश्रम जाना कब होगा? विद्यावतीका स्वास्थ्य कैसा है? मैं लीखुं या न लिखु तुमारे तो लीखते ही रहना। मेरा स्वास्थ्य अब तो कुछ ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ३३२९) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी बम्बोलीसे नन्दी हिल्स १८-४-१९२७ को रवाना हुए थे; देखिए "पत्र : मीराबहनको", १८-४-१९२७। नन्दी हिल्सका पता निश्चय ही इस कारण दिया गया है कि प्रभावती उन्हें इस पतेपर उत्तर दें।

२५१. पत्र : हरिइच्छा देसाईको

नन्दी हिल्स, मैसूर[1]
चैत्र पूर्णिमा [१६ अप्रैल, १९२७]

चि० हरिइच्छा,

तुम सब बहनोंका पत्र मिला। मेरी तबीयत सुधरती जा रही है। तुम सबका खयाल मुझे प्रायः आता रहता है। मैंने तो तुम सबको आश्रममें लानेकी बहुत कोशिश की। यदि तुम आना चाहो तो अब भी आ सकती हो। तुम सब जहाँ अच्छा लगे वहाँ रहो, किन्तु खूब कातो, खूब पढ़ो और खूब घूमो-फिरो। शरीर और मनसे स्वस्थ रहना ही चाहिए। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

चि० हरिइच्छा देसाई
मार्फत सुन्दरजी गोविन्दजी देसाई
रतिलाल मणियारके पुराने मकानमें
राजकोट

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४९०६) से।
सौजन्य : हरिइच्छा कामदार

२५२. सावन्तवाड़ीके प्रमुखसे बातचीत[2]

अम्बोली
[१७ अप्रैल, १९२७][3]

हमारे अम्बोलीसे रवाना होनेसे एक दिन पूर्व महाराजा और रानी गांधीजीसे मिले। हमेशाकी तरह उनका व्यवहार बड़ा शालीन था और उन्होंने पूछा कि अब भी क्या हम आपसे अम्बोलीमें कुछ दिन और रहनेके लिए अनुरोध नहीं कर सकते। गांधीजीने कहा कि मेरी बड़ी इच्छा है कि मैं इस सुरम्य और मनोरम दृश्योंसे भरपूर स्थानपर रहूँ। वास्तवमें मुझे इस स्थानको छोड़ते हुए बड़ा दुःख हो रहा है। परन्तु मैं विवश हूँ, क्योंकि मैं विश्रामके साथ-साथ काम भी करना चाहता हूँ। और तब गांधीजीने वे प्रश्न पूछे जो मैंने उस दिन नहीं पूछे थे।

१. देखिए पिछले शीर्षककी पाद-टिप्पणी।
२. महादेव देसाईके लेख "द पोपुलर प्रिंस" से।
३. गांधीजी अम्बोलीसे १८ तारीखको गये थे। देखिए अगला शीर्षक।

गांधीजी: महादेव जी भी अच्छी बातें आपके बारेमें सुनते रहे हैं, मुझे बताते रहे हैं। इनमें से एकका मैं आपसे सत्य निरूपण करवाना चाहता हूँ। क्या यह सच है कि आप सरकारी राजस्वसे केवल २,००० रु० अपने निजी खर्चके लिए लेते हैं?

सावन्तवाड़ी महाराज: २,००० रु० नहीं; २,५०० रु० लेता हूँ, किन्तु सभी राजकीय अवसरोंपर किया गया खर्च भी रियासतके राजस्वसे दिया जाता है।

यह सब तो ठीक है। अब आप गर्मीके महीनोंमें अम्बोलीमें रहेंगे। क्या यह सारा खर्च रियासत द्वारा भुगतान किया जायेगा?

नहीं, यह सारा खर्च मैं स्वयं उठाऊँगा।

और मैंने सुना है कि आप अपने पास कई अनाथ बच्चे रखते हैं। क्या आप उनका खर्च भी अपनी जेबसे करते हैं?

जी हाँ! परन्तु वे सब अनाथ नहीं हैं। उनमें से कुछ-एक अनाथ भी हैं। किन्तु वे गरीब बालक सम्मानित परिवारोंके हैं। और भी बहुतसे प्रार्थनापत्र हैं। परन्तु मुझे खेद है कि मैं अधिक लोगोंको अपने पास नहीं रख सकता।

अच्छा, केवल आपका दृष्टान्त ऐसा है कि एक राजा सरकारी राजस्वसे निश्चत् भत्ता लेता है।

नहीं, आपको और भी बहुतसे मिल सकते हैं। मैसूरके महाराजा भी भत्तेमें एक नियत रकम लेते हैं।

तो यह सौभाग्यका विषय है कि मैं आपके आश्रममें रहनेके बाद अब उनका आतिथ्य स्वीकार करने जा रहा हूँ, जो आप जैसे ही हैं।

हाँ, ग्वालियरके महाराजा भी रियासतके खजानेसे कुछ नहीं लेते थे।

इसका क्या अभिप्राय है?

उनकी अपनी निजी आमदनी थी और वे उसीपर निर्वाह करते थे।

रियासतकी कमाईके अलावा और निजी आमदनी क्या है?

और अब रानीकी ओर अभिमुख होकर जो एक तरहसे बड़ौदा परिवारकी राजकुमारी हैं, गांधीजीने कहा:

हाँ मैं जानता हूँ कि त्रावणकोरकी प्रति-संरक्षिका महारानी भी इतनी ही सीधी-सादी हैं जैसी आप। उनकी सादगीसे[1] मैं बहुत प्रभावित हुआ था। उनका पहनावा और अधिक सादा नहीं हो सकता था। उनके शरीरपर मुझे मंगलसूत्रके अलावा और कोई गहना नहीं दिखा। उनके कमरेका फर्नीचर जितना सादा हो सकता है उतना सादा था। मेरा युवा महाराजासे परिचय कराया गया। उन्हें उन रूपमें महाराजाकी तरह पहचानना कठिन था। परन्तु यहीं यह तुलना समाप्त हो जाती है। वे आपकी तरह स्वल्प वेतनपर निर्वाह नहीं करते।

१. देखिए खण्ड २६, पृष्ठ ४२५-२६

रानी धन्यवादके भाव सहित मुस्कराई। गांधीजीने आगे कहा:

आपने जो स्वल्प परिमाणमें खादी खरीदी, उसपर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। मुझे मालूम था कि आपके साधन सीमित हैं; और आपको अपनी आमदनीमें ही निर्वाह करना चाहिए और अब मुझे मालूम हुआ है कि महाराजाके समान आप भी अपनी प्रजासे बहुत मिलती-जुलती रहती हैं। क्या मैं आपको यह सुझाव दूँ कि यदि आप कताई कलामें प्रवीणता प्राप्त कर लें तो अपनी जनसेवाका प्रभाव और भी अधिक बढ़ा लेंगी?

बातचीतकी इस अवधिमें गांधीजी चरखा चलाते रहे। रानीने सिर हिलाकर सहमति प्रकट की। और प्रमुखने कहा: "हमारे पास इतनी ही खादी नहीं है। कुछ हमने गतवर्षकी खादी प्रदर्शनीमें खरीदी थी, और जब कभी आवश्यकता होगी हम आपसे और ले लेंगे।" इस बीच महाराजा सारा समय कोट और निकर पहने हुए फर्शपर बैठे रहे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-४-१९२७

२५३. पत्र: मीराबहनको

१८ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र मिले।

तुम्हें अपने आपपर कामका ज्यादा बोझ नहीं डालना चाहिए। अगर पढ़ानेसे तुमपर बहुत बोझ पड़ता है, तो उसे जरूर कम कर देना चाहिए और इसी तरह पढ़ना भी कम कर देना चाहिए। तुम्हें अपने आसपासके लोगोंको साफ बता देना चाहिए कि तुम्हारी शारीरिक शक्ति कितनी है। तुम्हें अपनी तन्दुरुस्ती किसी भी कारण गिरानी नहीं चाहिए। क्या तुम्हें उपयुक्त फल और दूध मिल जाते हैं?

मैं उत्तरोत्तर स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ। पिछले दो दिनोंसे सुबह-शाम दोनों समय घूमने जाता हूँ। इससे मुझे कोई हानि नहीं हुई है। तुम्हें मालूम है कि मैंने अपने भोजनमें एक फल कम करके सब्जी लेना शुरू कर दिया है और भाकरी ले रहा हूँ।

हम अम्बोलीसे आज रवाना हो रहे हैं और कार्यक्रम ठीक चला तो कल बेलगांवसे चल देंगे। अगले दो महीनेतक पता: नन्दी हिल्स, मैसूर, रहेगा।

इस स्थानको छोड़ते समय मुझे काफी दुःख तो जरूर महसूस होगा। यह जगह ही रमणीय है। परन्तु मुझे इस स्थानसे ममत्व इस कारण हो गया है कि यहांके राजाका चरित्र असाधारण है। अबतक मुझे मिली सभी खबरोंके आधारपर वे आदर्श राजा मालूम देते हैं। वे अपने निजी खर्चके लिए रियासतकी आमदनीमें से एक

बँधी रकम लेते हैं। वे अपनी प्रजासे खुलकर मिलते-जुलते है और अपने १२५ गाँवोंमें से हरएकमें गये हैं। वे संयमी जीवन व्यतीत करते हैं और उनकी पत्नी भी उनके ही अनुरूप है। मैं उनसे कई बार मिला हूँ और उनके स्पष्ट और नम्र व्यवहारसे मुझे खुशी हुई है। इसी कारण मैं इस स्थानको इतना अधिक पसन्द करता हूँ। मगर हम सदा ही वह नही कर सकते जो हमें पसन्द है। हम कुछ घंटेके भीतर रवाना हो जायेंगे।

मुझे आशा है कि नये चरखेकी बाबत तुम मुझे सूचना दोगी।

आश्रमके सदस्योंने तो चमत्कार कर दिया है। केशुने २४ घंटेमें १५,००० गजसे ज्यादा सूत काता है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१७)से।
सौजन्य : मीराबहन

२५४. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

मौनवार, चैत्र बदी [१, १८ अप्रैल, १९२७][1]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी सभी शुभेच्छाएँ पूर्ण हों और ईश्वर तुम्हें अपनी प्रतिज्ञाओंका पालन करनेकी शक्ति दे।

बालकोंके विषयमें तुम्हारा विचार बिलकुल ठीक है। परन्तु तुम्हारे आश्रममें होनेके कारण यदि दामोदरदास लड़कोंको तुम्हे सौंपता है तो उनकी देखरेखका दायित्व स्वीकार करना शायद तुम्हारा धर्म हो सकता है। अलबत्ता, आश्रमको सुविधा होनी चाहिए। इस विषयमें काकाके साथ बात करना। तुम्हारा मन न कहे तो दूसरी बात है। इस बारेमें हमारा धर्म ठीक क्या है, यह एकदम स्पष्ट नही होता।

आज यहींसे नन्दी हिल्स जानेके लिए रवाना होंगे। अब पत्र वहीं लिखना। मैं मानता हूँ कि फिलहाल तुम काकाके पास ही रहोगी, इसलिए यह पत्र काकाके पतेपर ही भेजता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८८२८)से।
सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

१. साधन-सूत्रमें तारीख चैत्र बदी २ है और उस दिन १९ अप्रैल थी। पर गांधीजी नन्दी हिल्सके लिए १८ अप्रैलको रवाना हुए थे।

२५५. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, चैत्र बदी २ [१९ अप्रैल, १९२७][1]

बहनो,

गंगाबहनकी गैरहाजिरीमें मैं यह पत्र तुम्हारे मन्त्रीको भेज रहा हूँ। गंगाबहनकी गैरहाजिरीमें तुम्हें कामचलाऊ प्रमुख नियुक्त कर लेना चाहिए। तुम्हारा काम अब तक इतना पक्का हो जाना चाहिए कि जैसे दूसरी संस्थाएँ अपने-आप सुव्यवस्थित रूपसे चलती हैं, वैसे ही यह भी अपने-आप चले। ऐसा होनेके लिए कोई नेत्री तो होनी ही चाहिए। नेत्रीको अधिकार थोड़े होते हैं, पर उसकी जिम्मेदारी बहुत होती है। वह निरन्तर अपनी संस्थाका हित सोचे और उसकी सेवाशक्ति सदा बढ़ाये।

मालूम होता है तुमने राष्ट्रीय सप्ताह बहुत अच्छे ढंगसे मनाया। पाखाने साफ करनेकी जिम्मेदारी तुमने उठा ली, यह बहुत अच्छा हुआ। इसी प्रकार अपनी शक्तिके अनुसार जिम्मेदारियाँ लेती रहना।

जो बहनें आश्रमसे बाहर काम करने जायें, उनके साथ सम्बन्ध बनाये रखना। राजीबहन और चम्पावतीबहनके साथ सम्बन्ध रखा होगा। राजीबहनका काम कैसा चल रहा है? यदि जानती हो तो मुझे लिखना।

ऐसा जान पड़ता है कि मेरी तन्दुरुस्ती सुधर रही है। इसके लिए फिलहाल मैं एक सरल प्रयोग कर रहा हूँ। उसके सफल हो जानेपर उसके उपयोग अनेक होंगे। मगर अभी उसका वर्णन लिखकर मैं तुम्हारा समय लेना नहीं चाहता। शायद अगले सप्ताह लिखनेका साहस करूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४५) की फोटो-नकलसे।

२५६. पत्र : कुवलयानन्दको

नन्दी हिल्स, मैसूर
१९ अप्रैल, १९२७

प्रिय मित्र,

आपने बाबा साहब सोमनको जो पत्र लिखा है उसके लिए धन्यवाद। आपने उस पत्रमें जरूरत पड़नेपर तुरन्त मैसूर आनेके लिए अपनी सहमति प्रकट की है और यह लिखा है कि २६ तारीखके बाद तो जरूरत होनेपर आप हर हालतमें आ ही सकते हैं। मैं चाहूँगा कि आप २६ तारीखके बाद जितनी जल्दी हो सके नन्दी

[1] पत्रसे स्पष्ट है कि इस समय गंगाबहन आश्रमकी बहनोंकी प्रमुख थीं; वर्षका अनुमान इसी आधारपर किया गया है।

हिल्स आ जायें। यदि आप कृपा करके तार भेज दें, तो आपको निकटतम स्टेशनसे नन्दी हिल्सतक लानेका इन्तजाम किया जा सकता है।

जैसा कि आप जानते हैं विद्यार्थियोंमें बढ़ते हुए आत्म-दुरुपयोग (सेल्फ एब्यूज) ने मेरा ध्यान यौगिक आसनोंकी ओर उस बुरी आदतके तथाकथित उपचारके रूपमें आकृष्ट किया है। मैंने अपने अध्ययनके दौरान देखा कि आसनोंका बहुत-सी अन्य बुराइयोंके उपचार साधनके तौरपर भी समर्थन किया गया है। अपनी बीमारीके दौरान मैंने पंडित सातवलेकरके लेख पढ़े। मैंने सोचा कि मैं अपनेपर ही प्रयोग करूँ। शीर्षासनके बहुत-से प्रशंसात्मक वर्णनोंने मुझे इसकी ओर आकृष्ट किया। मैं पिछले पांच दिनोंमे हर बार कुछ एक सेकेण्ड शीर्षासनका अभ्यास करता हूँ। मैं सुबह भोजनसे पहले दो मिनटके अन्तरपर दो बार शीर्षासन करता हूँ। इस अभ्याससे पूर्व 'नेति' क्रिया की जाती है, जिसमें बारीक कपड़ेके टुकड़ेसे नाक साफ की जाती है। आसन करते समय मैं बिलकुल निश्चेष्ट रहता हूँ। श्रीयुत गुलाजी शरीरको उठानेमें मेरी सहायता करते हैं और उसे सिरके बलपर रोके रखते हैं। सोनेके लिए जानेसे पूर्व ९ बजे यही क्रिया फिर दोहराई जाती है। दूध और फलका अन्तिम भोजन शामके ५ बजे कर लिया जाता है। कोई हानिकर प्रभाव मेरे ध्यानमें नही आये हैं। इसके विपरीत मैं ज्यादा ताजगी और ताकत महसूस करता हूँ। और थोड़ी सैर भी कर सकता हूँ। मेरी भूख बढ़ गई है। अब प्रश्न यह है कि इस तरह निष्क्रियभावसे किये गये शीर्षासनसे रक्तचाप कम होगा या बढ़ेगा। मैं समझता हूँ कि 'नेति'से कभी किसी प्रकारकी हानि नही हो सकती। हृदयगतिकी परीक्षा करानेसे इस समय मेरा रक्तचाप १८० मालूम हुआ है। पांच दिनोंके दौरान रक्तचाप नहीं बढा है। क्या आप मुझे अपने यहां पहुँचनेतक अभ्यास चालू रखनेकी सलाह देंगे या स्थगित कर देनेकी।

यदि आपकी सलाह शीर्षासन स्थगित कर देनेकी हो, तो मुझे तार भेज दें। मैं नही चाहता कि मेरी ओरसे उतावलीमें काम किये जानेसे आसनोंको दोष दिया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (जी० एन० ५०४५) की फोटो-नकलसे।

२५७. अखिल भारतीय गोरक्षा संघ

इस व्यावसायिक संस्थाको बहुत कम लोग जानते हैं। इसका जन्म प्राय. अचानक ही हो गया था और बाधाओंके बावजूद यह संस्था अपने जन्म कालसे ही गोरक्षाका बहुत ही मुश्किल सवाल, धार्मिक अर्थ-नीतिकी दृष्टिसे हल करनेकी कोशिश कर रही है। इस संस्थाकी कार्रवाई छापनेका पूरा विचार था। संघकी प्रबन्ध समितिकी एक बैठक और संघकी एक आम सभा गत ११ मार्चको आश्रममें हुई थी। मगर उसकी कार्रवाई यहाँसे मेरे जल्दी चले जाने और फिर बीमार पड़ जानेके कारण छप नहीं सकी। उस बैठकमें निम्न प्रस्ताव[1] सर्वसम्मतिसे स्वीकार किया गया था:

> संघकी प्रबन्ध समितिने (वर्धामें हुई) अपनी पिछली बैठकमें यह प्रस्ताव स्वीकार किया था कि अधिकसे-अधिक एक लाख रुपये, एक आदर्श डेरी और एक आदर्श चर्मालय बनानेमें लगाये जायें। आज इस बैठकमें यह निश्चय किया जाता है कि इस प्रयोगको सत्याग्रह आश्रम, साबरमतीकी प्रबन्ध समिति अपनी देखरेखमें, अ० भा० गोरक्षा संघके उद्देश्योंके अनुरूप चलाये और इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए अधिकसे-अधिक एक लाखकी रकम अलग निकाल दी जाये और यह रकम संघके कोषसे लेकर आश्रमकी प्रबन्ध समितिको इस निर्देशके साथ सौंप दी जाये कि वह इस प्रयोगकी प्रगतिका विवरण समय-समयपर संघके सम्मुख प्रस्तुत करे।

उस बैठकमें अ० भा० गोरक्षा संघके निम्नलिखित पदाधिकारी और सदस्य चुने गये।

सभापति, मोहनदास करमचंद गांधी,

खजांची, सेठ रेवाशंकर जगजीवन झवेरी,

सदस्य, श्रीयुत बैजनाथ केडिया, श्रीयुत महावीरप्रसाद पोद्दार, सेठ जमनालाल बजाज, श्रीयुत परमेश्वरीप्रसाद गाजीपुरिया, श्रीयुत नारायणदास पोद्दार, डाक्टर बा० शि० मुंजे, श्रीयुत बालकृष्ण मार्तण्ड चौंडे, श्रीयुत शंकर श्रीकृष्ण दवे, श्रीयुत नारायण बालकृष्ण केलकर, श्रीयुत नगीनदास अमुलखराय, श्रीयुत मणिलाल वल्लभभाई कोठारी, श्रीयुत मगनलाल खुशालचन्द गांधी,

मन्त्री, वालजी गोविन्दजी देसाई।

मुझे आशा थी कि मैं अपने दौरेमें गो-प्रेमियोंसे संघके लिए धन इकट्ठा कर सकूँगा। प्रस्तावमें तो एक लाख रुपया खर्च करनेकी बात कही गई है, मगर संघके पास १५,००० रुपयेसे अधिक नहीं हैं। प्रस्ताव इसी आशाके साथ स्वीकार किया गया है कि संघको जनतासे काफी दान मिल जायेगा। अब, चूँकि मैं अगले कुछ दिनोंतक अपने निवास स्थानसे बाहर न जा सकूँगा, इसलिए मैं उन लोगोंसे, जो

१. यह प्रस्ताव जमनालाल बजाजने प्रस्तुत किया था।

संघके काममें दिलचस्पी लेते हैं और हिन्दुस्तानके ढोरोंकी रक्षाके लिए सघ द्वारा अपनाए गये तरीकोंको पसन्द करते हैं, प्रार्थना करता हूँ कि वे व्यक्तिगत अपीलके बिना ही यथाशक्ति अपनी-अपनी सहायताकी रकमें भेज दें। जो-कुछ मिलेगा, उसकी इन स्तम्भोंमें उसकी प्राप्ति स्वीकार की जायेगी। पाठक जानते हैं कि संघका सालाना सदस्यता शुल्क ५ रुपये या २४,००० गज अच्छा बटदार स्वयं काता गया सूत है। फिर भी, मैं उन लोगोंसे, जो संघके तरीकों और प्रबन्धमें विश्वास रखते हैं, अच्छी रकमें मिलनेकी आशा रखता हूँ।[1]

मुझे आशा है कि गोरक्षा संघके कार्यकर्त्ता इस कोषके लिए धन संचयका भार जमनालालजीपर नहीं डाल देंगे। डेरीकी देखरेखके लिए पण्नेरकर नामक एक अनुभवी सज्जनको नियुक्त किया गया है। एक भारतीयको, जो अमेरिकासे चमड़ा साफ करनेका शिक्षण लेकर आये हैं, टैनरीका काम सौंपा गया है। आशा है मैं उन दोनोंके कामका विवरण जल्दी ही प्रकाशित करूँगा। मैं गोरक्षा सघके कार्यकर्त्ताओंको सुझाव देता हूँ कि वे आश्रममें और इन दोनों क्षेत्रोंमें जो काम किया जा रहा है, उसे स्वयं देखें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २१-४-१९२७

२५८. सत्य एक है

पोलैंडके एक प्राध्यापक लिखते हैं ?[2]

मूल पत्रके शब्दोंमें मैंने जहाँ-तहाँ एक दो शब्द बदल दिये हैं ताकि लेखकका मतलब मूल पत्रकी अपेक्षा और ज्यादा साफ हो जाये। इस पत्रके लेखकने मुझमें जो शक्तियाँ बताई हैं[3] मैं उनका किसी भी प्रकारसे दावा किये बिना अत्यन्त नम्रतापूर्वक उनके प्रश्नोंका उत्तर देनेका प्रयत्न करूँगा। मैं सोच-समझकर जो दावा करता हूँ, वह बड़ा सरल और सबल दावा है। मैं एक नम्र किन्तु अत्यन्त सच्चा सत्यान्वेषी हूँ। और अपने सत्यान्वेषणमें सभी सत्यान्वेषियोंको अपनी सब बातें साफ-साफ बता देता हूँ, ताकि अपनी गलतियाँ समझ सकूँ और उन्हें सुधार लूँ। मैं मानता हूँ कि मैंने अपने अनुमानों और निर्णयोंमें कई बार भूल की है। उदाहरणके लिए जब अधूरे सबूतके आधारपर ही मैंने यह अनुमान कर लिया था कि खेड़ा जिलेके लोग सविनय अवज्ञाके लिए तैयार हैं; फिर मैंने एकाएक देखा कि मैंने यह अनुमान लगाकर भयंकर भूल की थी।[4] मैंने देखा कि वे सविनय अवज्ञा नहीं कर सकते, क्योंकि वे

१. इसके बादका विवरण २४-४-१९२७के नवजीवनसे लिया गया है।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्रलेखकने यंग इंडियामें गांधीजीके लेखोंको पढ़कर कुछ प्रश्न किये थे। प्रश्न उत्तरोंपरसे स्पष्ट है।

३. लेखकने गांधीजीको गहरा आध्यात्मिक अनुभव सम्पन्न व्यक्ति कहा था।

४. देखिए आत्मकथा, भाग ५, अध्याय ३३।

ऐसे कानूनोंकी स्वेच्छापूर्वक पावन्दी करना नहीं जानते, जिन्हें कष्टप्रद तो माना जा सकता है, पर अनीतियुक्त नही। ज्योंही मुझे यह वात मालूम हुई, मैंने अपना कदम पीछे हटा लिया। इसी प्रकारकी निर्णय सम्बन्धी एक और भूल मैंने उस पत्रको भेजनेमें की थी जिसे वारडोलीकी 'आखिरी चेतावनी'[1] कहा गया था। मैंने तव यह विश्वास कर लिया था कि देश अर्थात् जनता आन्दोलनसे जाग्रत और प्रभावित हो गई है और अहिंसाकी उपयोगिता समझ गई है। पर उस चेतावनीको भेजनेके वाद चौवीस घंटेके अन्दर ही मुझे अपनी भूल मालूम हो गई, और फलत: मैंने तुरन्त अपना कदम पीछे हटा लिया। और चूँकि ऐसे हर मौकेपर मैंने अपना कदम पीछे हटा लिया है, कभी भी कोई स्थायी नुकसान नही हुआ। इसके विपरीत इससे अहिंसाका मूल सिद्धान्त पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्ट रूपसे व्यक्त हो गया और देशको किसी भी प्रकारका नुकसान हमेशाके लिए नहीं हो सका।

लेकिन मुझे तो इस वातका कुछ पता नही है कि किन्ही खास परिस्थितियोंमें, जिनका उल्लेख मैंने अपने लेखोंमे[2] स्पष्ट रूपसे किया है, कुछ खतरनाक जानवरोंको मारना जरूरी होनेके विषयमें अव मैंने अपने मतको वदल दिया हो। जहाँतक मैं जानता हूँ, मैंने उन लेखोंमें जो मत व्यक्त किया है, मैं उसपर कायम ही हूँ। परन्तु इसके मानी यह नहीं कि वह कभी वदला नही जा सकता। मै यह दावा नही करता कि मुझे कोई ऐसा निर्देश या प्रेरणा मिलती है जो गलत हो ही नही सकती। जहाँतक मेरा अनुभव है किसी भी मनुष्यका यह दावा कि वह गलती कर ही नहीं सकता टिक नहीं सकता, क्योंकि हम देखते हैं कि वह प्रेरणा भी उसीको मिलती है जो राग-द्वेष आदि द्वन्द्वोंसे मुक्त हो। यदि कोई ऐसा दावा करे कि वह इन द्वन्द्वोसे मुक्त हो गया है तो किसी विशेष अवसरपर यह निर्णय कर पाना भी कठिन होगा कि उसका दावा उचित है या नहीं, इसलिए यह दावा करना वहुत जोखिमका काम होता है कि गलती हो ही नही सकती। पर इसके मानी यह नहीं कि कोई हमें मार्गदर्शन निर्देशन ही नही मिला है। संसारके ऋषियोंके अनुभवोंका सार हमारे लिए सुलभ है और आगे भी सदैव सुलभ रहेगा। इसके अलावा मूल सत्य भी तो अनेक नहीं है; वह तो केवल एक ही है और वह है स्वयं 'सत्य' अथवा, दूसरे शब्दोंमें कहें तो 'अहिंसा'। अपूर्ण मानव, सत्य और प्रेमको पूर्ण रूपसे कभी नही जान पायेगा, क्योंकि सत्य या प्रेम असीम है। लेकिन हम अपने दिशा निर्देश भरके लिए जरूरी हदतक सत्यको जानते हैं। हाँ उसके व्यवहारमें हम भले ही गलती भी करेंगे और शायद कभी-कभी भयंकर गलती करेंगे। परन्तु मनुष्य तो अपना शासन आप करनेवाला प्राणी है। और स्वायत्त-शासनमें गलतियाँ करने और जितनी वार वे हों उतनी ही वार उन्हें सुधारनेकी सत्ता भी तो जरूर शामिल है। मैं नही जानता कि इस उत्तरसे मुझे पत्र लिखनेवाले महोदयको सन्तोप होगा कि नहीं। परन्तु उन्हें चाहे सन्तोष हो अथवा न हो, मुझमें इससे अधिक सन्तोषजनक उत्तर देनेकी शक्ति नही है।

१. देखिए खण्ड २२, पृष्ठ ३१७-२०।

२. "क्या यह जीवदया है?" नामक लेखमालामें; देखिए खण्ड ३२।

आखिर प्रत्येक मनुष्यके लिए यह आवश्यक है कि वह अपना मार्गदर्शन स्वयं ही करे। पर इस हालतमें एक शर्त अनिवार्य है और वह यह कि आदमी हमेशा परमात्मासे डर कर चले। इस प्रकार बराबर अपनी आत्मशुद्धि करना रहे। मनुष्यको सच्चा मनुष्य बननेके लिए अपना संस्कार करना चाहिए। इसी संस्कारको हिन्दू द्विज बनना कहते हैं और ईसाई दुबारा पैदा होना।

पत्रलेखक महोदयके अन्तिम प्रश्नोंके जवाब आसानीसे दिये जा सकते हैं। असलमें वे इनका उत्तर उपर्युक्त कथनमें ही पा सकते हैं। मैं प्रत्येक देशकी स्वाधीनताको उसी अर्थमें और उतने ही अंशोंमें सत्य मानता हूँ जिस अर्थमें और जितने अंशोंमें प्रत्येक मनुष्यकी स्वाधीनताको। अतः न तो कुछ देशों या राष्ट्रोंमें स्वराज्य विषयक सहज अयोग्यता होती है और फलत. न कुछ देशोंमें अन्य देशोंपर शासन करनेकी सहज योग्यता ही। निःसन्देह पत्रलेखक सचमुच यह समझते हैं कि जर्मन लोग दूसरे राष्ट्रोंपर शासन करनेकी ईश्वर प्रदत्त शक्ति होनेका दावा करते हैं। परन्तु साम्राज्यवादी जर्मनोंके साथ-साथ ऐसे नम्र लोकतन्त्रवादी जर्मन लोग भी तो हैं, जो शान्तिपूर्वक अपने देशका शासन कर पानेमें ही सन्तोष मानते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-४-१९२७

२५९. खादी भण्डार

तमिलनाड, बिहार, केरल और महाराष्ट्र, इन चार प्रान्तोंके खादी भण्डारोंकी निम्नलिखित सूची[1] दिलचस्पीसे पढ़ी जायेगी। मैं दूसरे सूबोंकी सूचियाँ भी मिलते ही छापना चाहता हूँ। यह सूची खादीकी सन् १९२०से अब तककी भारी प्रगतिकी सूचक है। हमारे लक्ष्यको देखते हुए तो अभी और बहुत प्रगति करनी है। जब खद्दरकी बिक्री भी घी और अनाजकी तरहसे आम हो जायेगी, तब चार प्रान्तोंमें ११० भण्डार होनेके बजाय अकेले बम्बई जैसे एक ही शहरमें उतने भण्डार हो जायेंगे और तब भी वे बहुत अधिक नहीं माने जायेंगे। और खादीका घी और अनाजकी तरह सार्वत्रिक होना अचम्भेकी बात या अनहोनी बात क्यों समझी जाये? पर अगर खद्दरका ऐसा सार्वत्रिक हो सकना सचमुच असम्भव हो तो फिर इसे क्यों अनहोनी बात समझना चाहिए कि आजसे कोई बीस साल बाद यहाँ आस्ट्रेलियाके घी की और अमेरिकाके गेहूँकी भी उतनी ही दूकानें होंगी जितनी इस समय यहाँ घी और गेहूँकी देशी दूकानें हैं? विलायती कपड़ा चूँकि सस्ता या आँखोंको लुभानेवाला होता है इसलिए अगर उसे खरीदना देश-भक्तिमें शामिल हो तो फिर वैसा समय आनेपर सस्ता विदेशी मक्खन और गेहूँ खरीदना भी देश-भक्तिका चिह्न क्यों न माना जाये, फिर चाहे हमारे देशके ग्वाले और किसान बेकार ही क्यों न हो जायें

१. यहाँ नहीं दी जा रही है।

और दूसरे धन्धोंके अभावमें भूखों ही क्यों न मरें? मैंने ये थोड़ेसे विचार विदेशी कपड़े पहननेवालोंके सामने विचार करनेके लिए यहाँ दिये हैं।

मगर ये भण्डार हम खादी कार्यकर्त्ताओंको क्या शिक्षा देते हैं? मेरी रायमें तो हम सचाईसे और योग्यतासे संगठन करके खादीकी माँग सभी जगह पैदा कर सकते हैं। बशर्ते कि :

(क) जो कार्यकर्त्ता खादी उत्पादनके काममें लगे है वे अधिक एकसार और मजबूत सूत कतवाने, कमसे-कम मिलके सूत जैसा अच्छा सूत कतवानेकी ओर ध्यान दें;

(ख) वे लोगोंकी रुचिको भी समझनेकी कोशिश करें, और भाँति-भाँतिकी खादी बनवायें;

(ग) अन्य बातोंमें कुशलता दिखाकर खादीके दाम घटायें;

(घ) खादी बेचनेके काममें लगे हुए लोग लोगोंकी रुचिको और अधिक अच्छी तरहसे समझें और खादी बेचनेकी कला सीखें;

(ङ) खादी बनाने और बेचनेवाले दोनों ही समझ लें कि उन्हें कमसे-कम दामपर अधिकसे-अधिक अच्छा माल देना होगा, और खादीको व्यापक आधारपर सफलतापूर्वक संगठित करनेके लिए आत्मत्यागकी शर्त अनिवार्य है।

मैं देखता हूँ कि निजी दूकानोंको मालिकोंका या कोई दूसरा नाम दे दिया जाता है। अधिक सुभीतेके लिए मैं सलाह दूँगा कि सब एक समान नाम, खादी भण्डार या वस्त्रालय रखें और उसके साथ कोष्ठकमें अ० भा० चरखा संघ, कांग्रेस या निजी, जैसा भी भण्डार हो; लिख दें। जहाँ एक ही जगह दो या अधिक भण्डार हों, वहाँ उनके नामके साथ नम्बर एक, नम्बर दो इत्यादि लगाया जाये। जबतक खादीका संगठन करना है और उसे पोषण देना है, और अधिकांश भण्डार अ० भा० चरखा संघकी ही मिलकियतमें है या उसके द्वारा मान्यता प्राप्त हैं और उससे सम्बद्ध हैं, तबतक ऐसा करना वांछनीय है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २१-४-१९२७

२६०. पत्र: तारिणीप्रसाद सिन्हाको[1]

२१ अप्रैल, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। यदि मुझे अवसर मिला तो मैं आपके कार्यालयका उपयोग करूँगा।

यदि आप मुझसे कोई काम नही लेना चाहते तो मुझे अपने पत्रलेखकोंकी सूचीमें रखनेका क्या लाभ है? निजी तौरपर मुझे यह पसन्द नहीं कि दिखावेके लिए ही किसी भी कामकी कोई सूची तैयार की जाये। हम इस आदतसे जितनी जल्दी छुटकारा पा लें, उतना ही अच्छा है। यदि आपका काम ठोस और मन लगाकर किया गया है तो आपके कामसे ही यह अवश्य मालूम हो जायेगा कि आप दिखावटी आँकड़ोंका सहारा लेते हैं या नहीं। क्योंकि जैसी मुझे उम्मीद है कि इस कार्यालयका सारा बोझ आपके कन्धोंपर पड़ेगा। मैंने सोचा कि मैं आपको पत्रलेखकों या सदस्योंकी जाली सूची रखनेकी बुरी प्रथाकी नकल करनेके विरुद्ध चेतावनी दे दूँ।

आपका,

मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२४८६) की फोटो-नकलसे।

२६१. पत्र: मीराबहनको

नन्दी हिल्स, मैसूर
२५ अप्रैल, १९२७

दुबारा नही पढ़ा

चि० मीरा,

मुझे तुम्हारे चार पत्र मिले हैं। इनमें से तीन तो एक साथ ही कल मिले।

१९ तारीखको बेलगांवसे रवानगीका जो तार भेजा गया था, वह तुम्हें जरूर मिल गया होगा।

तुम्हारे एक पत्रसे कल मेरे मनमें ऐसा आया कि तुरन्त तार देकर नन्दी चली आनेको कहूँ, लेकिन मैंने अपनेको रोक लिया। दूसरे दो पत्र उतने विषादमय नहीं थे। फिर भी अगर वियोग असह्य हो उठे तो तुम्हें मेरे उत्तरकी या कहनेकी

१. लन्दनसे लिखे गये २७ मार्चके पत्रके उत्तरमें। सिन्हाने लन्दनमें इंडियन इन्फोरमेशन ब्यूरोकी स्थापना की थी।

प्रतीक्षा किये बिना ही यहाँ आ जाना चाहिए। तुम्हारे आसपासके लोगोंका प्रेम तुम्हें सचमुच सशक्त बनानेवाला और ऐसा होना चाहिए कि वह तुम्हें वहाँ रोक कर रख सके। वहाँके लोगोंके स्नेहका वर्णन करनेवाला तुम्हारा पत्र अत्यन्त मर्मस्पर्शी है, फिर भी अगर तुम्हारे मनको वहाँ शान्ति न मिल सके तो दुःखकी बात होगी। मगर कोई भी अपना स्वभाव एकदम ही नही बदल सकता; और अगर अपनेको शान्त रखनेकी तुम्हारी कोशिश बेकार रहे, तो तुम्हें वहाँके मित्रोंको साफ-साफ बता देना चाहिए और जरा भी संकोच किये बिना यहाँ आ जाना चाहिए। किसी भी हालतमें वहाँ तुम्हारा स्वास्थ्य नही बिगड़ना चाहिए। तुम्हें अपने स्नायुओंपर इतना जोर डालनेकी कोशिश हरगिज नही करनी चाहिए कि तुम्हारा स्वास्थ्य बरबाद हो जाये।

आज यहाँ छठा दिन है। मै अभीतक यहाँके जलवायुका आदी नही हो पाया हूँ। अम्बोलीमें जैसी स्फूर्ति और शक्ति महसूस होती थी वह यहाँ महसूस नही होती। परन्तु डाक्टर मुझे यकीन दिलाते हैं कि अन्तमें नन्दी हिल्स जरूर अम्बोलीसे अधिक लाभदायक सिद्ध होगी। उनका कहना है कि यह रक्तचापसे पीड़ित लोगोंके लिए एक आदर्श स्थान है। चिन्ता या परेशानीका कोई भी कारण नही है।

चूँकि तुम दोनों उपवासोंको भूल जानेके कारण इतनी परेशान थीं, इसलिए उपवास करके तुमने अच्छा किया।[1] इसमें सन्देह नही कि जब स्नायुओंपर जोर पड़ रहा हो, तब शरीरकी दृष्टिसे भी उपवास करना उपयोगी होता है। बीमार पड़नेसे पहले मैंने उपवास कर लिया होता तो निश्चय ही अच्छा रहता। उस दिन कामका भयंकर जोर था। लेकिन यह तो कुछ चीज हो जानेके बाद बुद्धि आने जैसी बात हुई। हाँ, मेरी उस मूर्खतापूर्ण भूलसे अन्य कोई व्यक्ति लाभ उठा सकता है। मैं इसे मूर्खतापूर्ण इसलिए कहता हूँ कि मुझे मालूम था कि कामका जोर पड़ रहा है, और ऐसी परिस्थितिमें उपवास करनेका लाभ भी मैं जानता था। मगर शैतान हमारे पीछे हमेशा लगा रहता है, और वह हमें, जब हम सबसे कमजोर हालतमें होते हैं, आ पकड़ता है। उसने मुझे दुर्बल और ढीला पाया और घर दबाया। इसलिए तुम्हारे उपवाससे मुझे कोई चिन्ता नही है। तुम्हें केवल इतना समझ लेना होगा कि उपवास कब और कैसे करना चाहिए।

तुम्हें अपनी शिरायें वज्र बनानी ही होंगी। हमारे कामके लिए यह जरूरी है।

भगवान तुम्हारे सहायक हों।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१८) से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहनने इस सम्बन्धमें लिखा था : "राष्ट्रीय सप्ताह ६ अप्रैलसे शुरू होता है और १३ को खत्म होता है, मगर मैं उसके प्रथम और अंतिम, दोनों दिन उपवास करना भूल गई थी।

२६२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

नन्दी हिल्स, मैसूर
२५ अप्रैल, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

मैंने इधर कुछ दिनोंसे आपको पत्र नहीं लिखा है। मुझे आपके पत्र मिलते रहे हैं।

कृपया मेरे बारेमें कुछ भी चिन्ता न कीजिए। मेरी जितनी भी देखभाल और सावधानी रखी जा सकती है, सो मैं पूरी-पूरी रख रहा हूँ। यहाँपर अच्छीसे-अच्छी डाक्टरी सलाह मुझे सुलभ है। मौसम सुहावना और ठंडा है। मैं बिना सोचे-समझे या बिना डाक्टरोंकी रायके किसी सक्रिय काममें नहीं जुट जाऊँगा। यदि आपका स्वास्थ्य आपको आनेकी इजाजत देता है तो कृपया जरूर आइये। लेकिन किसी भी हालतमें आपको अपने शरीरपर बोझ नहीं डालना चाहिए। यहाँकी ऊँचाई ४८,००० फीटसे अधिक है। २,००० फीटकी सीधी चढ़ाई है। यह बहुत ज्यादा शुष्क स्थान है और आसपास पौधोंकी हरियाली नहीं है।

आपके पत्र हेमप्रभादेवीके विषयमें कुछ नहीं कहते। क्या वह अब बिलकुल ठीक है? और आपका बच्चा (उसका नाम मैं भूल जाता हूँ) कैसा है? और तारिणी कैसा है?

आप सबको सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५६७) की फोटो-नकलसे।

२६३. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

आश्रम, साबरमती[1]
२५ अप्रैल, १९२७

मुझे आपका २९ मार्चका पत्र मिला। यह पत्र मुझे बोलकर ही लिखवाना पड़ रहा है। क्योंकि मुझे यथासम्भव बिस्तरपर लेटे रहना चाहिए।

आप चाहती हैं कि मैं आपको किसी ऐसे भारतीय मित्रका नाम बताऊँ, जो आपके नये हॉलका शिलान्यास कर सके। एकमात्र व्यक्ति जिसके बारेमें मैं सोच सकता हूँ, और जिसे मैं पूरी तरह इस कामके लिए तजवीज कर सकता हूँ, और जिसे मैं व्यक्तिगत रूपसे भी बहुत अच्छी तरह जानता हूँ, वह व्यक्ति पण्डित जवाहरलाल

१. स्थायी पता।

नेहरू है। उनका पता है: पण्डित जवाहरलाल नेहरू, क्लीनिक स्टाफनी, मोंटाना, साउथ सियारे, स्विट्जरलैण्ड। आप उन्हें अवश्य लिखें। इस पत्रको इस्तेमाल करके उन्हें राजी कर लें। यदि आप उन्हें चाहेंगी तो वह आ जायेंगे और उन्हें बुलाकर आपको प्रसन्नता होगी। मैं भारतमें जिन अत्यन्त ईमानदार लोगोंको जानता हूँ, वह उनमें से एक हैं। मैं उन्हें भी पत्र लिख रहा हूँ।

मुझे आपका प्रस्ताव बिलकुल पसन्द नही। मैं उस प्रस्तावका जैसा मसविदा चाहता हूँ, वह निम्नलिखित है। मै जानता हूँ कि मेरा मसविदा पास कराना आपके लिए कठिन होगा। परन्तु यदि इस मसविदेको उपयुक्त समर्थन मिले तो केवल इसीसे काम चल सकता है। और उसे भारत सरकार बिना किसी कठिनाईके स्वीकार कर लेगी। क्योंकि वे कहेंगे कि हम किसी भी ऐसे काममें रोड़ा नहीं अटकायेंगे, जिसे भारतीय अपने अधिकार प्राप्त प्रतिनिधियों द्वारा सम्पन्न कराना चाहते हों। वे कहेंगे कि हमने यह विभाग उन्हें सौंप दिया है। वे जैसे चाहें आर्थिक व्यवस्थाको ठीक करें। क्या आप मेरा अभिप्राय समझ रही है? हमारा पक्ष यह है कि सरकार ईमानदारीसे कुछ नहीं करना चाहती। लोगोंका वास्तवमें इस मामलेमें कोई हाथ नही है। आबकारी आयको चुने हुए प्रतिनिधियोंके हाथ सौंप देना ही सरकारकी बदनियतीका सबूत है। शिक्षा, चुने हुए प्रतिनिधियोंके अधिकारमें सौंपा गया विषय है और इसे वित्तीय सहायता आबकारी आयसे ही दी जाती है। इस तरह सरकारने गतिरोध पैदा कर दिया है। यदि मान्यता प्राप्त प्रतिनिधि शराबकी दूकानें बन्द करवा दें, तो उन्हें शिक्षामें भारी कमी करनी पड़ती है या फिर उन्हें उन लोगोंपर जो मौजूदा करोंका ही बोझ किसी भी तरह बर्दाश्त नहीं कर सकते, और अधिक कर लगाने पड़ते हैं। इसलिए यदि ऊपर बताई गई स्थिति सही है, तो इसका उपाय यह है कि सरकार आबकारी विभागको अपने पास रखे और राजस्वमें जो कमी हो उसे सेनाके बजटमें कटौती करके पूरा किया जाये। यदि उन्हें कानून द्वारा मान्यता प्राप्त वेश्यावृत्तिसे राजस्व वसूल करनेका हक़ है, तो उतना ही हक शराबकी दुकानोंसे राजस्व वसूल करनेका भी है। यदि मेरी रायको ध्यान दिये बिना भी स्वतन्त्र रूपसे आपकी यही स्थिति है और यदि आप इस स्थितिको तथ्यों और आँकड़ों एवं दूसरे साहित्यके अध्ययन द्वारा परिपुष्ट बना सकती हैं, तो आपका प्रस्ताव इस तरहका होगा:

> इस सभाके मतमें भारतमें शराबके व्यवसायको बनाये रखनेमें इस देशके लोगोंका साझेदार होना और इसलिए प्रान्तोंके अधिकार क्षेत्रको हस्तान्तरित किया हुआ विषय बना देना सरकारका अनुचित कदम था। इसके फलस्वरूप चूँकि शराब-कर राजस्वका मुख्य स्रोत है, जिसपर खर्चा करनेवाले शिक्षा एवं विकास विभाग निर्भर करते हैं, इन विभागोंके उत्तरदायी मन्त्रियोंके लिए मद्यनिषेधकी नीति अपनाना कार्यरूपमें असम्भव हो गया है। इस सभाके मतमें भारत सरकारको शराब-राजस्वको केन्द्रीय विषय बना रहने देना चाहिए था और भारत सरकार ही को पूर्ण मद्यनिषेधकी नीति लागू करनी चाहिए थी। ऐसा करनेसे राजस्वमें जो क्षति होती, उसकी पूर्ति निरन्तर बढ़ते रहनेवाले

और अधिकांशमें अनावश्यक सेनाके खर्चमें कटौती करके की जा सकती थी। इसलिए यह सभा सरकारसे अनुरोध करती है कि इस प्रस्तावमें अभिव्यक्त इच्छाको लागू करनेके लिये आवश्यक कदम उठाये।

आप जिस रूपमें चाहें इस प्रस्तावमें हेरफेर कर सकती हैं, परन्तु इसका आशय नहीं बदलना चाहिए। मुझे आशंका है कि आपके लिए इस तरहका प्रस्ताव पास कराना कठिन होगा। परन्तु वास्तवमें केवल इसी प्रस्तावके पास होनेका महत्त्व है। और यदि आप समझती हों कि इस तरहके उग्र प्रस्तावके लिए अभी इंग्लैंडमें वातावरण नहीं बना है, क्योंकि मैं स्वीकार करता हूँ कि यह प्रस्ताव उग्र है, तो ऐसी स्थितिमें आप केवल अपना दृष्टिकोण शिक्षित जनताके सम्मुख प्रस्तुत करें और प्रस्तावकी प्रतीक्षा करें। आपके मित्रोंने जो प्रस्ताव आपको दिया है, वह गलत दिशामें कदम है। आप जानती हैं कि गलत ढंगसे शुरू की गई चीजसे पैदा हुई शरारतको खत्म करना कितना मुश्किल काम होता है।

मेरी हालत बेहतर हो रही है। अपने जिस्म और दिमागको, जहाँतक मुमकिन हो, आराम देनेके लिए मुझे अभी विशेष सावधानी जरूर बरतनी है।

हृदयसे आपका,

कु० म्यूरियल लेस्टर
चिल्ड्रन्स हाउस
बो
लन्दन ई० ३

अंग्रेजी (एस० एन० १२४७५) की फोटो-नकलसे।

२६४. पत्र : नारणदास गांधीको

मौनवार [२५ अप्रैल, १९२७][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

पुरुषोत्तमका स्वास्थ्य अब ठीक होता जा रहा है, यह जानकर तसल्ली हुई।

तुम्हारा तार ठीक समझमें नहीं आया, परन्तु वल्लभभाईसे मिल लेनेके लिए तार दे रहा हूँ।

तुमने जिन-जिन लोगोंको जो-जो जवाब दिये हैं वे ठीक हैं। अब यदि वे मुझे कुछ लिखेंगे तो तुम्हें सूचित करूँगा।

दास्तानेके सुझावके बारेमें भाई शंकरलालको लिखूँगा।

१. पारनेरकर मार्च १९२७ में आश्रममें आये थे। दुग्धालय सम्बन्धी आँकड़े ८-५-१९२७ के **नवजीवन**में प्रकाशित हुए थे। देखिए "पत्र : मगनलाल गांधीको", २७-४-१९२७ भी।

दुग्धालयके हिसावके वारेमें मुझे संतोष नहीं हुआ। उसमें २१ भूलें हैं; उन्हें सुधारे विना काम नहीं चलेगा। भूलें सुधारनेके वाद हिसाव मुझे भेजना। पारनेरकरसे मिलकर ये भूलें उन्हें वताना। मगनलाल वहाँ आया हो तो उसके साथ फिर चर्चा करना। इतनी सारी भूलें — और वे भी मोटी — उसे कैसे दिखाई नहीं दी? भूलें मोटी न हों तो भी उनकी संख्या भयंकर है। सुधरे हुए आँकड़े मुझे भेजते समय भूलवाले आँकड़े भी साथ भेजना, इसे निःशेष निपटा देना।

वापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७१०) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी

२६५. पत्र: मणिबहन पटेलको

नन्दी दुर्ग
मौनवार, चैत्र वदी ९ [२६][1] अप्रैल, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। उसका अन्तिम वाक्य अधूरा है और हस्ताक्षर तो है ही नहीं और न तिथि ही है। इससे तो वहुत ज्यादा उतावली प्रकट होती है। हमारे यहाँ कहावत है कि धीरजका फल मीठा होता है। उतावली करनेसे तो आमोंको पकाया नहीं जा सकता — यह भी हमारी एक कहावत है। उसका अंग्रेजी अनुवाद "हेस्ट इज वेस्ट" किया जा सकता है। तुमने वापूके लिए अपनी साड़ीमें से धोती निकाल दी, यह तो वहुत ही अच्छा किया। इस नियमको जारी रखो। डाह्याभाई तथा यशोदा भी ऐसा ही करें तो क्या ही अच्छा हो।

कराचीवाली जगह तुम्हें नहीं मिलेगी, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं। ऐसा हो भी तो दूसरी जगहें तो तैयार ही हैं। परन्तु इसका निश्चय हो जाये तव दूसरा विचार करेंगे।

वापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
वापुना पत्रो – ४: मणिवहेन पटेलने

१. साधन-सूत्रमें "२५" है।

२६६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, चैत्र बदी ९ [२६ अप्रैल, १९२७][1]

बहनो,

तुमने मुझे लिखनेसे छुट्टी दे दी, इसका तो यह मतलब मालूम होता है कि तुम खुद लिखना नहीं चाहतीं। या जैसे राजाके बिना राज्यमें अन्धेर चलने लगता है वैसे ही तुमने अभीतक नई सभानेत्रीका चुनाव नहीं किया, इसलिए क्या तुम्हारी संस्थामें भी अन्धेर चल रहा है? ठीक है न?

कुछ भी हो, मगर मैं खाऊँ-पीऊँ और तुम्हें याद न करूँ तो यह हो ही कैसे सकता है? तुममें से किसीने गंगादेवीके बारेमें कुछ भी समाचार नहीं दिया, इससे मैं अनुमान करता हूँ कि अब वे बिलकुल स्वस्थ हो गई हैं। जो भी बहन बीमार पड़े, उसकी खबर तो तुम्हें मुझे देनी ही चाहिए।

आश्रममें आज तो जैसे स्त्रियाँ हैं वैसे पुरुष भी हैं। मगर मानो कि किसी दिन पुरुष न हों और चोर वगैरा आ जायें, तब तुम सब क्या करोगी, इसका विचार कभी तुमने किया है? न किया हो तो करके मुझे लिखना कि तब तुम क्या करोगी। यह न मानना कि ऐसा मौका कभी आयेगा ही नहीं। हमारे छोटे गाँवोंमें ऐसे मौके अक्सर आ जाया करते हैं। दक्षिण आफ्रिकामें भी बहुत बार आते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४६) की फोटो-नकलसे।

२६७. पत्र : छगनलाल गांधीको

मौनवार, चैत्र बदी ९ [२६ अप्रैल, १९२७][2]

चि० छगनलाल,

तुम ब्यौरेवार पत्र लिखनेमें तनिक भी संकोच मत करना। पूछने लायक बात पूछनेमें भी संकोच मत करना।

खर्चके सम्बन्धमें जमनालालजीसे सलाह-मशविरा करके जो हो सकता हो सो करना। जितना काम तुम्हारी पहुँचके बाहर हो, उसे अवश्य समेट देना।

१. वर्षका निर्धारण पत्रके पाठसे किया गया है।

२. वर्षका निर्धारण पत्रमें फूलचन्दके पत्रके उल्लेखके आधारपर किया गया है। गांधीजीके उत्तरके लिए देखिए "पत्र: फूलचन्द शाहको", २७-४-१९२७।

साथका पत्र काशीके पढ़ लेनेके बाद चाहो तो नीमू अथवा मणिको पहुँचा देना। हरएकको मैं अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ। चि० प्रभुदासको शीघ्र ही राणावाव भेज देना। मैं अच्छा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

भाई फूलचन्दजी जितना पैसा माँगें अपनी सुविधानुसार देते रहना। उनका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१२५) से।
सौजन्य : छगनलाल गांधी

२६८. पत्र : मगनलाल गांधीको

[२६ अप्रैल, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला है। भुवरजीके विषयमें तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना। तुम्हें इसका ध्यान तो होगा ही कि उनकी सीतलासहायके साथ बनती नहीं है। कार्य समितिकी टिप्पणी मिल गयी है। मैं चाहता हूँ कि सब सद्भावके साथ ठीक-ठीक निपट जाये। मैं तो अब जानमालकी रक्षाकी चिन्ता कर रहा हूँ। चौकीदार रखनेकी बात मुझे ठीक नहीं लगती। दूसरे कामोंके लिए बाहरसे आदमी वेतन देकर रखनेकी बात समझमें आती है। पर जिस प्रकार प्रार्थनाका काम हमें स्वयं करना है उसी प्रकार रक्षाका काम भी हम स्वयं ही करें तभी हमारा छुटकारा है। यदि हम ऐसा नहीं कर सके तो हमें सामान्य नीति मानकर चलना होगा। उससे हमारे सत्य और अहिंसाके प्रयोगको हानि पहुँचेगी। चौकीदार किसीको मारे, यह भी हमें ठीक नहीं लगेगा और मार खाये, यह भी ठीक नहीं लगेगा। मारना ही पड़े तो खुद मारें और खुद ही मार खायें। बालकों और स्त्रियोंमें भी हमें इसी शक्तिको विकसित करना है। इस घटनाका जो वर्णन मुझे भेजा गया है उसे बढ़ाकर देखें तो मालूम होगा कि [इस नीतिके] परिणाम कितने भयंकर हो सकते हैं। अभी बाजी हाथसे नहीं गई है। उससे पहले ही हम अपना मार्ग धार्मिक वृत्तिसे सोच लें। 'ईस्ट इंडिया कम्पनी' ने किले बनवाये और सिपाही रखे तो सिर्फ परिस्थितियोंसे बाध्य होकर। हम परिस्थितियोंकी अधीनता स्वीकार करेंगे या उन्हें अपने नियन्त्रणमें रखेंगे? मुझे तो लगता है कि हमें पूरी रात जागते रहनेवाले साधकोंको तैयार करना चाहिए। उन्हें चोरोंको वशमें करनेवाली धार्मिक कलाओंकी खोज करनी होगी। भले वे रातभर जागें और फिर दिनमें आठ घंटे सोयें। खलासी ऐसा करते हैं, फिर भी उनका स्वास्थ्य

1. आश्रममें चोरोंके आनेके उल्लेखसे; देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको", २६-४-१९२७

खराब नहीं होता। जरूरी हो तो यह काम सब बारी-बारीसे करें। पर ये तो बीमार आदमीके मनकी तरंगें हैं। दूर बैठा हवाई किले बना रहा हूँ। परन्तु तुम सभी अलग-अलग और एक दूसरेके साथ विचार करके इस समस्याका अपनी इच्छाके अनुसार उपयुक्त उपाय ढूंढ़ निकालो। पर इस बातका चाहे कुछ भी निर्णय करना, इस बार चोर कौन थे यह तो हमें मालूम करना ही चाहिए। इतने ज्यादा थे इसलिए उनके पाँवोंके चिह्न तो मिलने ही चाहिए। जिन्हें चोट लगी थी वे पकड़में आने ही चाहिए। यदि तुम सब जो कुछ किया गया है उसे समेट लेनेका निर्णय करो तो भी मैं सहमत हो जाऊँगा, क्योंकि आखिरकार यह चलाना तो तुम सबको ही है। हिसाबकी जाँच तो एकदम हो जानी चाहिए। चाहे नाथजीके ऑडीटरको बुलाओ या चरखा संघके या जो भी पसन्द हो। अब इसमें ढील नहीं करनी चाहिए। ऑडीटरसे कहना कि आलोचककी दृष्टिसे बारीकीसे जाँच करें और जो-कुछ कहना हो सो कहे। चि० नारणदास साथ रहे, उससे उसकी सलाहका लाभ भी मिलेगा।

यह पत्र तुम सबके लिए है। मेरी तबीयत धीरे-धीरे सुधरती जा रही है। कल काफी चल लिया इसलिए आज आराम कर सका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

पुनश्च :

ऊपरका पत्र लिखनेके बाद तुम्हारे दूसरे पत्रमें व्यवस्था वगैराके बारेमें पढ़ा। इसलिए अब नियमके अनुसार तो साथका पत्र चि० छगनलालको लिखना चाहिए न? यदि परिवर्तन सोच-विचार कर किये हों तो सब ठीक ही हो गया।

सर गंगारामके बारेमें समझा। वर्णनसे मुझपर कुछ अच्छी छाप नहीं पड़ी। खेतीके सम्बन्धमें अगर कुछ सीख सके हो तो ठीक है। अपना रास्ता अलग है। हम अपने धर्मका पालन करते हुए मरें, तो हमने अपना कर्त्तव्य कर लिया।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

रुखी और राधाके क्या समाचार हैं?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६६) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

२६९. पत्र : मीराबहनको

मंगलवार, २६ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

मैं फिलहाल जितने अधिक पत्र लिख सकूँ, उतने मुझे लिखने ही चाहिए। मैं अपने कलके पत्रके जवाबकी प्रतीक्षा उत्सुकतासे करूँगा। अब तुम्हें प्रसन्न हो जाना चाहिए।

अगर वहाँ बढ़ई हों तो तुम्हें [अपने] सफरी चरखेकी मरम्मत करवा लेनी चाहिए। जितनी मरम्मत तुम खुद कर सकती हो, उतनी तुम्हें स्वयं कर लेनी चाहिए। तुम वहाँ मित्रोंसे आवश्यक औजार माँग सकती हो या कुछ खरीद सकती हो। यह सदा सुविधाजनक होता है।

मैं कलसे आज अपेक्षाकृत अधिक ताकत महसूस कर रहा हूँ। सुब्बैया डाक ले जानेका इन्तजार कर रहा है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२१९) से।
सौजन्य : मीराबहन

२७०. पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

नन्दी हिल्स, मैसूर
२६ अप्रैल, १९२७

प्रिय क्षितीश बाबू,

यद्यपि मैंने अपनी बीमारीके दौरान आपको पत्र नहीं लिखा है, मैंने बहुधा आपके और प्रतिष्ठानके बारेमें सोचा है। मैं काफी ठीक चल रहा हूँ और थोड़ा-बहुत पत्र-लेखन आदि कर सकता हूँ। कृपया मुझे अवश्य लिखियेगा कि आप कैसे चल रहे हैं और सोदपुरकी जलवायु वहाँके कार्यकर्त्ताओंको कैसी माफिक पड़ रही है।

मैं मीराबाईके पत्रसे सफरी चरखेके सम्बन्धमें एक अंशका उद्धरण आपको भेज रहा हूँ। मैंने भी चरखेके पुर्जोको कमजोर पाया है। चाहे सफरी चरखेका वजन थोड़ा बढ़ जाये, लेकिन यदि उसे ज्यादा मजबूत बनाया जाये तो कुछ असुविधा-जनक नही होगा। धुरीके बेयरिंग किसी धातुके होने चाहिए और ऊपरके हिस्से भी

निस्सन्देह मजबूत होने चाहिए। और भी जैसे हैं, उनसे ज्यादा मजबूत होने चाहिए। ऐसे आप देखेंगे ही कि क्या किया जा सकता है और क्या करना चाहिए। मीराबाई बहुत ही सन्तोषजनक काम करनेवाली है। उसकी सद्भावपूर्ण आलोचनासे समुचित लाभ उठाना चाहिए।

हृदयसे आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० ८०३२) की फोटो-नकलसे।

२७१. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

नन्दी हिल

२६ अप्रैल, १९२७

प्रिय गोविन्द,

आप चिन्तित न हों। यद्यपि मैं आपके पत्रका तत्काल उत्तर दे रहा हूँ। लेकिन शालीनतावश ऐसा नही कर रहा हूँ बल्कि इससे मुझे खुशी होती है। जहाँतक भोजन सुधारमें मेरी धुनका सम्बन्ध है, मैं आपके आगे नही झुक सकता। पिछले बीस वर्षोंके दौरान मेरा भाग्य कुछ ऐसे कठोर साँचेमें ढला-सा रहा है कि भोजन-सम्बन्धी अनुसन्धान करनेकी तीव्र इच्छाके बावजूद, मैं इस भाग्यसे अलग नहीं निकल पाया हूँ। परन्तु अब जबकि मुझे प्रकृतिने परास्त कर दिया है, मेरी अनुसन्धानकी वह भूख जो कभी भी पूरी तरह मिटी नहीं थी, परन्तु केवल दबी हुई थी, बढ़ गई है और मुझे इस दिशामें हरएक चीजको पानेकी तीव्र उत्कण्ठा रहती है।

अब मैं कामकी बातपर आता हूँ। एक सनकी साथी द्वारा उकसाये जानेपर पिछले दो दिनोंमें मैंने एक मुख्य परिवर्तन किया है। उसने सुझाव दिया था कि मैं ताजे नीमके पत्तोंका रस दूधमें मिलाकर लूँ। उनका कहना है कि मेरी बीमारी रक्तचापकी नहीं अपितु वातकी है। रक्तचाप तो निश्चय ही है, परन्तु मैं इस मित्रसे सहमत-सा हूँ कि मूल कारण वातका अस्थायी परिणाम रक्तचाप है। और उनका खयाल है कि मैं भोजनके साथ नीमके पत्तोंका रस लेकर वातका इलाज कर सकता हूँ। ये पत्ते कड़वे होते हैं। वे कहते हैं कि इनमें आवश्यक विटामिन होते हैं। अब मैं उनके प्रभावका निरीक्षण कर रहा हूँ। आपका पत्र कल मिला था और आज मैंने यह तबदीली कर ली है कि मैं बगैर उबाला दूध ले रहा हूँ। यह सुझाव मुझे अल्मोड़ामें कुछ डाक्टर मित्रोंने दिया था। परन्तु उस समय मैंने इसपर कोई ध्यान नहीं दिया था। आपके पत्रसे वांछित प्रतिक्रिया हुई है। मेरे मेजबान इन पहाड़ोंपर कुछ बकरियाँ रखते हैं, उनका दूध डेरीमें निकाला जाता है। इसलिए आज सुबह थनोंसे ताजा दूध लाया गया था। इसमें नीमके पत्तोंका रस और मुनक्कोंका रस और गरम पानी मिलाया

गया था। ऐसा दूध लेनेसे आपके पत्रमें लिखे अनुसार दूधके विटामिन मुझे मिल जाते हैं और उस मित्रके अनुसार नीमके पत्तोंके विटामिन भी मिल जाते हैं। इसलिए मैं फिलहाल ताजी सब्जियाँ बिलकुल नही ले रहा हूँ, क्योंकि मुझे अभी यह विश्वास नही है कि ये सब्जियाँ आवश्यक हैं। विशेषकर जबकि मैं ये कड़ुए पत्ते और बिना उबला दूध ले रहा हूँ। जब हम पत्तोंवाली सब्जियाँ उबालें तो किस तापमानपर विटामिन नष्ट हो जाते हैं? विटामिनोंके क्या गुण हैं? वांच्छित परिमाणमें विटामिन प्राप्त करनेके लिए मुझे पत्तोंवाली सब्जियाँ कितने परिमाणमें लेनी चाहिए? कच्चे दूधकी कितनी मात्रासे उपयुक्त परिमाणमें विटामिन मिल सकते हैं? क्या यह सही है कि दूधको मात्र गरम करनेसे विटामिन नष्ट नही होते? अथवा क्या जब दूधको उबलनेके तापमान तक लाया जाता है तब विटामिन नष्ट हो जाते हैं?

गिरी वाले फलोंका जिस तरीकेसे आपने प्रयोग करनेका सुझाव दिया है, मैंने वैसे ही किया है। मैंने उनका मक्खन बनाया। लुगदी मक्खन जैसी मुलायम थी। मैंने बादामोंका दूध बनाया। इन गिरी वाले फलोंको चाहे कितना ही पिसवाया, फिर भी मैं इसे निभा नहीं सका। ऐसा लगता है कि सभी निर्मांस खाद्य पदार्थोंके समान गिरी वाले फलोंको भी पाचनकी दुहरी प्रक्रियासे होकर गुजरना चाहिए। केवल मांसका भोजन ही है जो बड़ी अँतड़ियोंपर असर नहीं डालता। इसलिए इससे पहले कि गिरी-वाले फल दूधके समान पाचक हो जायें, पाचनकी पहली प्रक्रिया मानव शरीरसे बाहर ही पूरी हो जानी चाहिए। जब मैं लन्दनमें था, तब मुझे बताया गया था कि पिघले हुए गिरीवाले फलोंका मांस जैसा ही असर होता है। मैं दुग्धाहार रहित प्रयोगमें सफलता प्राप्त करना चाहता हूँ, क्योंकि मुझे विश्वास है कि माताके दूधके अलावा, अन्य दूध मानव-भोजनमें शामिल नहीं है, और न ही भोजन पकाना अनिवार्य है। इसलिए मानवीय आवश्यकताओंके अनुरूप निर्दोष भोजनकी खोज अभी की जानी है। आध्यात्मिक मतसे चौपाये पशुओंके दूधसे प्रति मेरे मनमें बड़ी वितृष्णा है और मैं जो बकरीका दूध लेता हूँ, इस बातसे मेरी वितृष्णाका भाव लेश-मात्र भी कम नही होता। इससे मैं अपने संकल्पका केवल नाममात्र ही पालन करता हूँ। मैं जानता हूँ कि ऐसा करनेसे यदि संकल्प टूटा नहीं है तो संकल्पकी भावना सुरक्षित भी नही रह सकी है। मैंने इस भ्रान्तिमें कि मुझे धरतीपर इस शरीरसे अपना काम पूरा करनेके लिए अवश्य जीवित रहना है, बकरीका दूध लेनेके लिए अपने आपको राजी कर लिया है। इसलिए अपनी अन्तरात्माकी अवहेलना करके भी मैं इस धारणापर जमा हुआ हूँ। इसलिए, वह व्यक्ति जो मुझसे दूध छुड़वा सके, एक प्रकारसे मेरा उद्धार करनेवाला होगा। मैं जानता हूँ कि दूध लेनेके कारण ही मेरे कुछ आध्यात्मिक अनुभवोंमें विघ्न पड़ा। जब मैं कई सालोंतक दृढ़तापूर्वक सूर्यसे पके फलों एवं सूर्यसे पके गिरीवाले फलोंपर आगका इस्तेमाल किये बिना निर्वाह करता रहा तो पाशविक वासनाका केवल सचेतन मनसे दमन अथवा शमन नही हुआ था, परन्तु जहाँतक मुझे याद पड़ता है, वासनाका पूरी तरह लोप हो गया था और मुझे विश्वास है कि मैंने वासनापर लगभग विजय पा ली थी। जबसे मैंने फिर दुग्धाहार शुरू किया

है, वह सब बदल गया है। मैं अब वासनायुक्त होनेका दावा नहीं कर सकता। मैं विनम्रतापूर्वक यह कह सकता हूँ कि यद्यपि इस वासनाका मुझे भान रहता है तो भी मैं इसे वशमें रखकर संसारके सामने ऐसे मानव व्यक्तिके रूपमें प्रस्तुत हो सकता हूँ, जिसकी वासनासे किसी महिलाको भय नहीं होना चाहिए। परन्तु अपने अन्दर स्थित इस पाशविक वासनाको अनुशासनपूर्वक दमित करने एवं वशमें रखनेके लिए मुझे सारी शक्ति लगानी पड़ती है। मुझे विश्वास है कि पूर्ण युवा व्यक्तिको वासनाएँ वशमें रखनेके लिए इतने प्रयासकी आवश्यकता नहीं पड़ती। इसके विपरीत जब वासनाएँ वशमें हों तो ऐसी स्थितिमें व्यक्ति यदि चाहे तो अपनी उन्मुक्त शक्तिको मानव-जातिके हित साधनके लिए अजेय सत्ताके रूपमें परिणत कर सकता है। किसी तरह मैं यह सोचता हूँ कि मैं वैसी स्वतन्त्रता एवं वैसा निजी स्वराज्य कभी नहीं प्राप्त कर सकूँगा जबतक मुझे अत्यन्त उत्तेजक एवं अस्वाभाविक भोजनके असरसे संघर्ष करना पड रहा है। जिस अर्थमें मैंने गिरीवाले फलोंका उपयोग किया है, वे उत्तेजक हुए बिना बढ़िया मास पेशियाँ बनानेवाले होते हैं। अब आप समझ सकते हैं कि मैं आपके पत्रका उत्तर तत्काल क्यों दे रहा हूँ।

बडे दुःखकी बात है कि आपको अभी बवासीरसे छुटकारा नहीं मिला है। केवल भोजन मात्रमें परिवर्तन करनेसे आपको कोई आराम नहीं होगा। औषधि केवल रोगको शान्तमात्र करनेवाली होगी। मैं छानबीन कर रहा हूँ। परन्तु इस समय मैं इसके बीच नहीं पैठना चाहता, क्योंकि मैंने अभी इसे केवल आरम्भ ही किया है। मैं अपने पास उन मित्रोंको इकट्ठा कर रहा हूँ, जिन्होंने प्रयोग किये हैं। यदि मुझे वास्तविक सफलताके कोई चिन्ह दिखाई दिये, तो मैं आपको सूचना दे दूँगा। मुझे यह सोचकर बड़ा कष्ट हुआ कि आप साधनोंके अभावमें ऑपरेशन नहीं करवा सके। डा० अन्सारी बहुत अच्छे शल्य-चिकित्सक हैं। यदि आप उन्हें नहीं जानते, तो मैं उन्हें एक छोटा-सा पत्र भेज सकता हूँ। मुझे विश्वास है कि वह खुशीसे ऑपरेशन कर देंगे और या तो आपको अपने घरमें रखेंगे या किसी ऐसी जगह रखेंगे जहाँ आपको कुछ नहीं देना पड़ेगा। आप बम्बईके डा० दलाल, जो भारतके एक अत्यन्त चतुर शल्य चिकित्सक हैं, से भी ऑपरेशन करवा सकते हैं। एक नहीं बल्कि एकसे अधिक कई अस्पताल ऐसे हैं, जो मैं मानता हूँ आपको बड़ी खुशीसे दाखिल कर लेंगे। शायद आपको पता नहीं कि डा० दलालने मेरा, देवदास, श्रीमती जमनालालजी और अन्तमें — महत्त्वकी दृष्टिसे नहीं, केवल क्रमकी दृष्टिसे — एन्ड्रयूजका भी ऑपरेशन किया। आप मुझे केवल इतना बता दें कि आप कैसा इन्तजाम चाहते हैं और वही इन्तजाम कर दिया जायेगा। कृपया चरखे एवं मशीनरीके सम्बन्धमें आपने जो खोज की है, उसके बारेमें मुझे लिखनेमें संकोच मत कीजिएगा। वस्तुतः आपके पाण्डित्य-पूर्ण अनुसन्धानोंमें मेरी रुचि है। वास्तवमें मुझपर लादे गये इस विश्रामसे मुझे इतना पर्याप्त समय मिल रहा है कि मैं पत्र पढ़ सकूँ और उन विषयोंपर विचार कर सकूँ, जिनमें हम दोनोंकी रुचि है। बोलकर लिखवाये गये इस पत्रकी लम्बाईसे आप निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि मेरी हालत बहुत बुरी नहीं है, यद्यपि स्वास्थ्य सम्बन्ध

हो, अभी मुझे विस्तरपर पड़े रहना चाहिए। बोलकर पत्र लिखवानेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं होती और थोड़ी देरतक बैठकर लिखनेमें भी कोई कठिनाई नहीं होती जैसे कि कल मैंने किया था, क्योंकि कल मेरा मौनवार था।

आप सबको सप्रेम।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

आर० बी० ग्रेग महोदय
द्वारा एस० ई० स्टोक्स महोदय
कोटगढ़, शिमला हिल्स

अंग्रेजी (एस० एन० १२५७१) की फोटो-नकलसे।

२७२. पत्र : फूलचन्द शाहको

नन्दी दुर्ग
चैत्र वदी [११, २७, अप्रैल, १९२७][1]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

आपका पत्र मिला। पोरबन्दरमें महामारी फैल रही है और भाई अमृतलाल ठक्करको डर है कि ऐसी स्थितिमें जून महीनेमें परिषद वहाँ नहीं हो सकेगी। क्या यह ठीक है? इसका एक कारण वे मेरे स्वास्थ्यकी अनिश्चितताको भी मानते हैं और मैं भी यही मानता हूँ। इस बारेमें जैसी स्थिति हो मुझे लिखें।

शालाके लिए रुपयोंसे सम्बन्धित पत्र मैंने चि० छगनलालको भेज दिया है और उसे लिख दिया है कि जब और जैसे बने आपको रुपये भेज दिये जायें। आपके पत्रसे मैं यह भी अर्थ निकालता हूँ कि आपका विचार विद्यापीठमें आनेका नहीं है और फिलहाल यदि आपकी आवश्यकता पूरी हो जाये तो बादमें आप जैसे-तैसे काम चला लेंगे।

खादीके कार्यके बारेमें चि० नारणदाससे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ।

अब दो शब्द सत्याग्रह दलके बारेमें।

सत्याग्रही जितने भी हों थोड़े हैं। इसलिए सत्याग्रही बननेका प्रयत्न करनेवालोंको भी मेरा आशीर्वाद है ही। किन्तु हमें दल बनाकर क्या विशेष लाभ होगा? सत्याग्रही तात्कालिक कामकी दृष्टिसे भरती हों, यह तो ठीक है। किन्तु कभी ऐसा भी समय आयेगा जबकि हमें उसकी आवश्यकता होगी, तब क्या दल काम आयेगा? अपने अनुभवके बलपर मेरा कहना यह है कि यदि ऐसा कोई दल हो तो उसके

१. मूलमें चैत्र वदी १० है किन्तु १०वीं तिथिका क्षय हो गया था।

सामने कोई रचनात्मक कार्यक्रम होना चाहिए। आन्दोलनके समय हमें उनमें से आवश्यक लोग मिल जायेंगे तथा अन्य लोग स्वेच्छासे उनमें सम्मिलित होते रहेंगे। जबतक आन्दोलन आरम्भ नहीं होता तबतक ये १८ आदमी क्या करेंगे? ये सब तो खाली ही हैं। जब मैं रचनात्मक कार्यकी बात कहता हूँ तो मेरा तात्पर्य निरन्तर चलनेवाले कार्यसे होता है। इन १८ व्यक्तियोंमें तो सब अपना-अपना काम-काज करनेवाले लोग हैं। फिलहाल तो इनके सामने ऐसा कोई कार्य नहीं है जिसे सम्मिलित रूपसे किया जा सके।

चरित्र निर्दोष है या नहीं इसका निर्णय कौन करेगा और इसकी परिभाषा क्या है? आप तो जानते ही हैं कि सत्याग्रह आश्रमका अस्तित्व इसीके लिए है। वहाँ भी निर्दोष चरित्रका प्रमाणपत्र कौन दे सकता है?

सत्याग्रह और सत्याग्रही तो सूरज और उसकी किरणोंके समान हैं। वे ऐसे नहीं होते कि उन्हें टोकरीसे ढककर, छिपाकर रखा जा सके।

सत्याग्रहके अवसर तो मुझे आज भी जहाँ-तहाँ देखनेको मिल जाते हैं। किन्तु सत्याग्रही कहाँ है? जो हैं सो हैं। वे अपनी तैयारी कर रहे हैं और जब उनमें आत्मविश्वास आ जायेगा तब वे मेरी अथवा किसी अन्यकी अनुमतिकी प्रतीक्षा नहीं करेंगे।

इतनी चेतावनी देनेके बाद अब मैं कहना चाहूँगा कि आपने जिस वस्तुको खड़ा किया है, उसे बना रहने दें। आपने उस चीजको खड़ा न किया होता तो कोई बात नहीं थी। किन्तु जहाँ हेतु शुद्ध है वहाँ निराशाकी गुंजाइश नहीं है, उसके विनष्ट होनेका भी कारण नहीं है।

कार्यकर्त्ताओंको किस प्रकार सुसंगठित किया जा सकता है इसका कोई उपाय खोजें। मैंने जो आलोचना की है उसपर पहले तो आप खुद ही विचार करें और तदुपरान्त जो परिवर्तन-परिवर्धन करना आवश्यक जान पड़े वह कर दें।

जब हम मिलेंगे तब इस सम्बन्धमें विस्तारसे चर्चा करेंगे। इस बारेमें यदि कुछ पूछना चाहें तो पूछें।

जो लोग हमपर राजनीतिक कार्य करनेका दबाव डाल रहे हैं, यह दल उनके उस दबावका जवाब नहीं है। किन्तु उनका दृष्टिकोण भी समझने लायक है। आपको या मुझे इस बातमें रुचि न हो यह एक जुदी बात है। वे तो कहते हैं कि राजनीतिक माने जानेवाले सभी मामलोंमें हमें आज भी सत्याग्रहित आन्दोलन चलाना चाहिए। सत्याग्रह किया जाये या न किया जाये, किन्तु हमें अपने वर्तमान कष्टोंके बारेमें कम-से-कम अर्जी तो देनी चाहिए। जब भी हमें आपसमें मिलनेकी, सभा-सम्मेलन आदिकी सुविधा दी जाये तब हम इकट्ठे बैठकर चर्चा तो करें। और कुछ नहीं तो आपसमें विचार-विमर्श आदि ही करें।

इन विचार-चर्चाओंको यों ही नहीं उड़ाया जा सकता। एक दिन हम लोग भी इसी दिशामें सोचा करते थे। आपके इस दलसे उनकी अपेक्षा पूरी नहीं होती। उनके लिए तो आपको कोई स्वतन्त्र-सा मार्ग बताना चाहिए अथवा उन्हें अपना मार्ग

खोजनेमें सहायता देनी चाहिए। इसका एक रास्ता तो यह है कि हम राजनीतिक परिषदका कार्य प्रसन्नतापूर्वक उन्हें सौंप दें और इसमें उनकी यथाशक्ति मदद करें।

मैं ज्यों-ज्यों ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ त्यों-त्यों अधिकाधिक विचार मेरे मनमें आते जा रहे हैं। किन्तु यदि मैं अधिक लिखने लगूँ तो मेरा हाथ थक जायेगा और डाक्टर इससे मेरा रक्तचाप बढ़नेकी बात कहेगा।

अतः मैंने आज जो-कुछ लिखा है उसमें यहाँ-वहाँ जो कमियाँ रह गई हैं उन्हें स्वयं भर लें। न भर सकें तो फिर कभी मुझसे ही पूरी करा लें।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८६६) की नकलसे।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

२७३. पत्र : वि० ल० फड़केको

नन्दी हिल्स, मैसूर
मंगलवार, चैत्र बदी ११ [२७ अप्रैल, १९२७][1]

भाईश्री ५ मामा,

आपका पत्र मिला। ऐसा लगता है कि अब तो गोधरा आश्रममें पर्याप्त विद्यार्थी हैं। और कहा जा सकता है कि आपने भी काम अच्छा किया है। यों आपने आँकड़ों परसे यह देखा होगा कि आश्रमके विद्यार्थियोंने ज्यादा काता है। आपने जामिया मिलियाके बारेमें रामचन्द्रकी रिपोर्ट पढ़ी?

ऐसा कहा जा सकता है कि इन छः वर्षोंमें उन विद्यार्थियोंने कताई बिलकुल ही नहीं की थी। विज्ञ, श्रद्धालु और लगनसे काम करनेवाले सिर्फ एक अध्यापकने वहाँके पूरे वातावरणको ही बदल दिया। मेरे पास तो ऐसे अनेक विवरण आते रहते हैं। यह सब मैं आलोचनाकी दृष्टिसे नहीं बल्कि हो सके तो आपकी श्रद्धाको दृढ़तर बनानेके विचारसे लिख रहा हूँ।

किन्तु मैं आपको अपनी बात न सुनाकर आपकी सुनना चाहता हूँ। रामानन्दजीके कामके बारेमें आपका क्या विचार है? पंजाब [के काम] का क्या हुआ? क्या आप इस कामको निभा पाये?

सभी ऐसा मानते हैं कि मेरी तबीयत सुधर जायेगी। यहाँके डाक्टर कहते हैं कि मुझे, जिसे बीमारी कहा जाये ऐसा कुछ नहीं है। किन्तु उनका कहना है कि काफी दिनोंतक आराम तो लेना ही पड़ेगा। यहाँकी आबहवा अच्छी है पर प्राकृतिक दृश्य चिचपोकलीकी बराबरी नहीं कर सकता।

१. साधन-सूत्रमें चैत्र बदी १० है जो क्षय तिथि थी।

आश्रममें चोरोंने उपद्रव मचा रखा है। यदि आश्रमकी जिम्मेदारी आपपर हो तो आप क्या करेंगे? सोचकर जवाब दें।

बापू

गुजराती (जी० एन० ३८४७) की फोटो-नकलसे।

२७४. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

२७ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा आह्लादपूर्ण पत्र मिला। अगर तुमने जो-कुछ लिखा है, उसके एक-एक शब्दकी तुम्हें प्रतीति हो जाये, तो तुम्हारा सारा दुःख भी दूर हो जाये और मेरी चिन्ता भी। हम सचमुच अपने कार्यके द्वारा और अपने कार्यमें ही जीते हैं। अगर हम अपने नाशवान् शरीरोंका स्थायी साधनोंके तौरपर उपयोग करनेके बजाय उनसे अपना तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं तो हम उन शरीरोंके साथ ही मिट जाते हैं। मैं जितना ही अधिक इसपर गौर करता हूँ और इसका अध्ययन करता हूँ, उतना ही मेरा यह खयाल पक्का होता जाता है कि वियोग और मृत्युका नाश शायद सबसे बड़ा भ्रम है। यह जान लेना ही कि यह भ्रम है, उससे मुक्त होना है। आत्मा न मरती है और न विलग होती है। लेकिन दुःखकी बात तो यह है कि यद्यपि हम अपने मित्रोंसे उनके भीतर रहनेवाली आत्माके कारण ही प्रेम करते हैं, फिर भी आत्मापर जो क्षणभगुर शरीर रूपी आवरण रहता है उसके नष्ट होने पर हमें दुःख होता है। होना यह चाहिए कि सच्ची मित्रताका उपयोग पिण्ड द्वारा ब्रह्मको प्राप्त करनेके लिए किया जाये। अभी तो ऐसा लगता है कि तुमने सत्यको देख लिया है। किन्तु वैसी स्थिति हमेशा ही बनी रहनी चाहिए।[1]

मैं नहीं जानता कि कृष्णानन्दजीने यह कैसे सोच लिया कि मैं वहां जूनमें आ रहा हूँ। मैंने तो पत्रमें शायद यही लिखा था कि मैं जितनी जल्दी सम्भव हो सके उतनी जल्दी आना चाहूँगा। मैंने तुम्हारी चेतावनी समझ ली है। यदि जूनमें आ सका तो जूनमें; जूनसे पहले रवाना हो सकूँगा इसकी गुंजाइश कम ही है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२०)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहनने इस सन्दर्भमें लिखा है "मेरे मस्तिष्कने सचाईको तो समझ लिया था परन्तु इसके बाद भी कई वर्षों तक मेरे हृदयने साथ नहीं दिया।"

२७५. पत्र : जमनाबहनको

२७ अप्रैल, १९२७

बीमारी घोड़ेकी चालसे आती है और चींटीकी चालसे जाती है। उस दिन तुम सब बहनोंने यदि मेरे लिए फल, व अन्य चीजें तैयार करके खिलानेकी बजाय मुझसे उपवास कराया होता तो मैं बीमार न पड़ता। मेरे प्रति तुम्हें अपना स्नेह अधिक खिलाकर नहीं बल्कि मुझसे उपवास कराकर जताना चाहिए। जब मैं ज्यादा काम करके आऊँ और खानेको माँगूँ तो तुम्हें मुझसे कहना चाहिए — "अभी थोड़ा धीरज रखो, कुछ देर आराम करो। तुम्हारा कामका नशा उतर जाये, उसके बाद मैं तुम्हें थोड़ा-सा दूध और एक नारंगी दूँगी।" ऐसा स्नेहपूर्वक कहा जा सकता है। तुम जानती ही हो कि रसिक और मनुसे मैं अक्सर ऐसा ही कहता हूँ। मैं ऐसा कहता हूँ इस कारण क्या कोई मुझे क्रूर मानेगा? मुझे अपनी चौकसी सदा खुद ही क्यों करनी पड़े? मनुके लिए मैं जो हूँ तुम सभी बहनें मेरे लिए वैसी ही क्यों नहीं हो सकती? अब जब आओ तो इतनी दयामयी बनकर ही आना।

सभी बहनोंको बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२७६. पत्र : मगनलाल गांधीको

बुधवार [२७ अप्रैल, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। गणेश और रामचन्द्रके पत्र तथा उनका उत्तर भी इसके साथ ही भेज रहा हूँ। रामचन्द्रने जो-कुछ लिखा है उस सम्बन्धमें यदि तुम कुछ कहना चाहो तो मुझे सूचित करना।

गाय-भैंसोंसे सम्बन्धित आँकड़े उपयोगी सिद्ध होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७०१)से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

१. पत्रमें उल्लिखित गाय-भैंसोंसे सम्बन्धित आँकड़े नवजीवन, ८-५-१९२७के अंकमें प्रकाशित हुए थे।

२७७. अस्पृश्यता और अविवेक

महाड़से एक पत्रलेखक लिखते हैं:

आपको यह लिखते हुए मुझे बहुत दुःख होता है कि गत २० मार्चको महाड़में स्पृश्य और अस्पृश्य जातियोंके बीच दंगा हो गया। घटना यों हुई। गत १९ और २० मार्चको कोलाबा जिलेकी दलित जातियोंकी एक परिषद हुई थी। परिषद बहुत सफल रही। परन्तु जब (परिषदके समाप्त होनेपर) लोग उठकर जाने लगे, तब बम्बई समाज सेवा संघ (सोशल सर्विस लीग) के कार्यकर्त्ता श्री ए० वी० चित्रेने लोगोंसे कहा, आप सब प्यासे हैं और धूप बहुत तेज है, इसलिए आप सब सार्वजनिक जलाशयपर जाकर पानी पी सकते हैं। वहाँ कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होंने इन लोगोंको जलाशयपर जानेसे रोकनेकी कोशिश की। किन्तु परिषदके अध्यक्ष डा० अम्बेडकरने लोगोंको पानी पिलानेके लिए जलाशयपर ले जानेका निश्चय किया। स्वयं पुलिस इन्स्पेक्टर भी स्थितिकी गम्भीरताकी कल्पना नहीं कर पाया; अतः भीड़को जलाशयकी ओर जानेसे रोकनेके बजाय वह भी उसके साथ चला गया। यह जलाशय ब्राह्मणोंके मोहल्लेके बीचमें है। चूँकि किसीको पता नहीं था कि अस्पृश्योंकी यह भीड़ जलाशयपर जा रही है; इसलिए कोई गड़बड़ नहीं हुई और सैकड़ों अस्पृश्योंने तालाबमें घुसकर 'हर हर महादेव'का घोष करते हुए अपनी प्यास बुझाई। तबतक स्पृश्य लोग वहाँ घटनास्थल पर आ गये। और क्रोधसे इस घटनाको देखते रहे। इसके बाद अस्पृश्योंका जमघट भोजन करने पण्डालमें चला गया। इसके एक घंटेके भीतर ही "गुरव" "गुरव"की जोरकी आवाजोंसे महाड़के लोग चौंक उठे और उन्हें बताया गया कि अस्पृश्य लोग वीरेश्वरके मन्दिरमें घुसनेका विचार कर रहे हैं।

यह सरासर झूठी अफवाह थी। पर बातकी बातमें कुछ स्पृश्योंका दल हाथोंमें लाठियां लिये हुए मन्दिरमें इकट्ठा हो गया। किन्तु बेचारे अस्पृश्योंका तो मन्दिरमें जानेका विचार ही नहीं था। लेकिन स्पृश्य तो यह देखकर कि कोई भी अस्पृश्य मन्दिरमें घुसनेका प्रयत्न नहीं कर रहा है, क्रोधसे पागल हो उठे। बाजारमें घुसे और राहमें जहां कहीं भी कोई अस्पृश्य मिला, उसे पीटने लगे। जितनी भी देर यह मारपीट स्पृश्यों द्वारा होती रही एक भी अस्पृश्यने कोई प्रतिकार नहीं किया। स्पृश्यजातिके कुछ लोगोंने, जिन्हें अस्पृश्योंसे सहानुभूति थी उन्हें बचानेकी कोशिश की। पर क्रोधसे पागल भीड़ उनसे रोके न रुकी। वह चमारों और अन्य अस्पृश्योंकी झोंपड़ियोंमें भी घुसी और

उन्हें भी बुरी तरह पीटा। बेचारे अस्पृश्य रोते-चिल्लाते सहायताके लिए बुरी तरह भागे। पर किसी भी दुकानदारने उन्हें सहायता नहीं दी। पण्डालमें जो अस्पृश्य थे उन्हें कुछ स्पृश्योंने बाहर खुलेमें आकर लड़नेके लिए चिढ़ाया। पण्डालमें लगभग १,५०० अस्पृश्य थे। यदि वे सचमुच मैदानमें लड़ने आ जाते, तो यह एक बड़ा भयंकर काण्ड हो जाता और हिन्दू धर्म लांछित हो जाता। डा० अम्बेडकरने अपनी सलाहको यह कहकर उचित ठहराया कि बम्बई विधान परिषदमें यह प्रस्ताव पास हो चुका है और महाडकी नगरपालिका इस विषयमें अपना मत प्रकट कर चुकी है कि अस्पृश्य कानूनन सार्वजनिक तालावों तथा कुओंसे पानी लेनेके अधिकारी हैं।

मैंने पत्रलेखकके पत्रमें से कई अंश, जिनमें विशेष तफसीलकी बातें दी हुई थी छोड़ दिये हैं। परन्तु मुझे इस पत्रकी बातें सच्ची मालूम होती है और उनमें अत्युक्ति नही दिखाई देती। अतः यदि हम घटनाका ब्यौरा ठीक मान लें, तो इसमें कोई सन्देह नही रह जाता कि तथाकथित उच्च वर्गोंके लोगोंने ऐसा गैर-कानूनी वरताव किया है, जिसके लिए उन्हें [अस्पृश्योंने] उत्तेजित नही किया था, क्योंकि स्मरण रहे कि अस्पृश्योंके तालावपर पानी पी लेनेके कारण ही स्पृश्योंकी भीड़ मन्दिरमें इकट्ठी नही हुई थी, वल्कि उस झूठी अफवाहके कारण इकट्ठी हुई थी कि अस्पृश्य मन्दिरमें घुसना चाहते हैं। पर अविवेकके साथ-साथ विचारशीलताकी आशा ही नही की जा सकती। अस्पृश्यताकी भावनाके पीछे कोई विवेक नही है। वह तो एक अमानुषिक प्रथा है, जो अब मिट रही है और कथित सनातनी हिन्दू इसे विशुद्ध पशुवलसे सहारा देनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

अत्यन्त उत्तेजनापूर्ण परिस्थितियोंमें तथाकथित अस्पृश्योंने जो इतने अनुकरणीय संयमसे काम लिया है इससे हम इस जटिल सवालको हल करनेमें एकदम और आगे वढ़ गये हैं। यदि वे इसका वदला लेते तो दोष किसका है यह वताना शायद कठिन होता। पर इस परिस्थितिमें तो सारा दोष स्पृश्योंका ही है। पशुवल अस्पृश्यताको कायम नही रख सकता। इससे तो लोकभावना उलटी अस्पृश्योंके पक्षमें हो जायेगी। यह इस वातका सूचक है कि कमसे-कम कुछ लोग तो ऐसे निकले, जिन्होंने वेचारे अस्पृश्योंका पक्ष लेकर उनकी रक्षा करनेका प्रयत्न किया। अच्छा होता महाडमें इससे कही अधिक लोग अस्पृश्योंके रक्षक होते। ऐसे मौकोंपर मूक सहानुभूति अधिक उपयोगी नही होती। प्रत्येक हिन्दूको, जो अस्पृश्यता-निवारणको सवसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य समझता है, चाहिए कि वह ऐसे मौकोंपर खुलेआम दीन-दलितोंका पक्ष लेकर उनके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करे और अपना सिर फुड़वा कर भी उन असहायों और दलितोंकी रक्षा करे।

डा० अम्बेडकरने जो अस्पृश्योंको तालावपर पानी पीनेकी सलाह देकर बम्बई विधान परिषद तथा महाड नगरपालिकाके प्रस्तावोंको कसौटीपर कसा उनका यह काम मैं समझता हूँ कि विलकुल उचित ही था। हिन्दू महासभा जैसी संस्थाओंको,

जो इन सुधारोंमें दिलचस्पी लेती है, इस तरहकी एक भी घटनाको ओझल नहीं करना चाहिए। वे पत्रोंके द्वारा कही बातोंकी जाँच-पड़ताल करें, और यदि वे सही प्रमाणित हों, तो दुष्टोंके कार्योंकी निन्दा करें। अनुदारता जैसी बुराइयोंको जड़से उखाड़नेके लिए जागरूक लोकमत तैयार करनेके समान शक्तिशाली दूसरा कोई उपाय नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-४-१९२७

२७८. भारतके पहले राजदूत

दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंको इस खबरसे बड़ी राहत होगी कि परम माननीय वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीने दक्षिण आफ्रिकामें पहला भारतीय राजदूत बनना स्वीकार कर लिया है, बशर्ते कि भारत सरकार अन्ततः उनसे वह पद ग्रहण करनेके लिए कहे। सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी और शास्त्रीजीने यह निर्णय करके बहुत बड़ा त्याग किया है। यह बात तो सभी जानते हैं कि यदि उनपर छोड़ दिया जाता, तो वे भारतमें अपना काम छोड़कर इस जिम्मेदारीको अपने सिरपर लेनेके जरा भी इच्छुक नहीं थे। परन्तु जब उनके मित्रोंने उनसे साग्रह यह कहा कि केवल वे ही उस समझौतेपर सफलतापूर्वक अमल शुरू कर सकते हैं, जिस समझौतेको करानेमें उन्होंने बहुत बड़ा हिस्सा लिया है, तो उन्होंने मित्रोंकी बात मंजूर कर ली। दक्षिण आफ्रिकासे समय-समयपर यहाँ आनेवाले तारोंसे हमें पता चलता है कि वहाँके यूरोपीय भी इस बातके लिए उत्सुक हैं कि शास्त्रीजी इस सम्माननीय पदको ग्रहण करें। जब शास्त्रीजी हबीबुल्ला शिष्टमण्डलके सदस्यके रूपमें थोड़े दिनोंके लिए दक्षिण आफ्रिका गये थे तब उनकी वक्तृत्व-शक्ति, स्पष्ट झलकनेवाली ईमानदारी, मधुर विवेकशीलता और असीम लगनने दक्षिण आफ्रिकी संघकी सरकार और वहाँके यूरोपीयोंके हृदयमें उनके प्रति अच्छी धारणा और आदरके भाव उत्पन्न कर दिये थे। मैं खुद जानता हूँ कि हमारे दक्षिण आफ्रिकावासी भाई इस बातके लिए कैसे व्यग्र और चिन्तातुर हैं कि किसी प्रकार शास्त्रीजी ही भारतके पहले एजेंट बनें। और श्रीयुत श्रीनिवास शास्त्रीके लिए भी, जिन्हें परमात्माने ऐसा उदार हृदय दिया है, दक्षिण आफ्रिकाके ऐसे सर्वसम्मत अनुरोधको अस्वीकार करना असम्भव था। अब यह प्रायः निश्चित है कि इस पदपर उनकी बाकायदा नियुक्ति कर दी जायेगी और उसकी घोषणा शीघ्र ही कर दी जायेगी।

प्रथम एजेंट जनरलका अपने लिये एक निश्चित काम होगा। निःसन्देह सब सरकारको और हमारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय भाइयोंको भारतके इस पहले राजदूतसे बड़ी आशाएँ हैं। निःसन्देह संघ सरकार यह सोचती है कि शास्त्रीजी चूँकि स्वयं भारतीय हैं और एक ख्यातिप्राप्त व्यक्ति हैं, इसलिए भारतीयोंका

सम्बन्ध है शास्त्रीजी उनसे सम्बन्धित सरकारके प्रत्येक कदमको सरल बना देंगे। दूसरे शब्दोंमें कहें तो दक्षिण आफ्रिकी सरकार उनसे यह आशा करेगी कि शास्त्रीजी उसकी बातोंको भारतीय समाज तथा भारत सरकारके सामने सहानुभूतिपूर्वक रखेंगे। इधर हमारे देशवासी भी आशा करते हैं कि शास्त्रीजी इस बातका जरूर आग्रह करेंगे कि समझौतेकी सम्मानजनक और उदारतापूर्वक व्याख्या की जाये और उसका पालन किया जाये। सामान्यतः दो प्रतिस्पर्धी उम्मीदवारोंको सन्तुष्ट करना कठिन होता है, परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें, जहाँ परस्पर विरोधी हितोंकी टक्कर देखकर बड़ी हैरानी होती है, यह अब और भी ज्यादा कठिन काम है। किन्तु मैं जानता हूँ कि अगर कोई व्यक्ति दोनों पक्षोंके प्रति समानरूपसे न्याय कर सकता है और दक्षिण आफ्रिकाके सभी सम्बन्धित दलोंको सन्तुष्ट कर सकता है, तो वे श्रीयुत श्रीनिवास शास्त्री हैं। मुझे निश्चित रूपसे ऐसा लगता है कि संघ सरकारके मन्त्री नये एजेंटसे यह अपेक्षा नहीं रखते हैं कि भारतीय समाजको उसके उचित अधिकार दिलानेमें वे तनिक भी झुकेंगे। हाँ, ज्यादासे-ज्यादा उनसे यह आशा की जा सकती है कि वे भारतीय प्रवासियोंको किसी भी हालतमें १९१४ के समझौतेका[1] उल्लंघन करके आगे बढ़नेसे कुछ समयतक रोकें, कमसे-कम तबतक रोकें जबतक कि वहाँके भारतीय अपने अनुकरणीय आत्मसंयम और व्यवहार द्वारा १९१४ के समझौतेसे प्राप्त स्थितिसे और आगे बढ़नेकी अपनी पात्रता न सिद्ध कर दें। अतः यदि हमारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय भाई भारतके इस एजेंट जनरलके कामको काफी आसान बनाना चाहेंगे और अपनी स्थितिको सुरक्षित बनाना चाहेंगे तो वे उनसे आश्चर्यजनक कामोंकी आशा नहीं करेंगे। उनका ऐसी आशा करना ठीक नहीं होगा कि अभी एक सम्मानपूर्ण समझौता हो चुका है, और चूँकि उसपर अमल करानेके लिए एक महान् भारतीय हमारे यहाँ आ रहा है, इसलिए अब तो हमारी पुरानी स्थितिमें एकदम कायापलट हो जायेगी। उन्हें याद रखना चाहिए कि परम माननीय शास्त्री वहाँ उनके वकील बनकर उनकी प्रत्येक व्यक्तिगत शिकायतको दूर करनेके लिए नहीं आ रहे हैं। उन्हें मामूली व्यक्तिगत शिकायतोंको विस्तारसे सुना-सुनाकर परेशान करना सोनेके अंडे देनेवाली मुर्गीकी हत्या कर देनेके समान है। वे वहाँ भारतके सम्मानके न्यासी बनकर जा रहे हैं। वे वहाँ सर्वसाधारण भारतीय प्रवासी समाजके अधिकारोंकी और स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिए जा रहे हैं। वे वहाँ यह देखेंगे कि संघ सरकार कहीं कोई नया प्रतिबन्धात्मक कानून तो नहीं बनाती। और वे यह भी देखेंगे कि प्रतिबन्धात्मक मौजूदा कानूनोंका पालन उदारतापूर्वक किया जाता है और उनके पालनमें भारतीयोंके निहित अधिकारोंका पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है। इसलिए यदि उनसे कोई व्यक्तिगत शिकायत की भी जाये तो वह उस स्थितिसे मेल खाती हुई हो जो मैंने स्पष्ट रूपसे प्रस्तुत कर दी है अर्थात् वह व्यक्तिगत शिकायत किसी व्यापक सर्वसाधारण सिद्धान्तको व्यक्त करती हो। इसलिए यदि व्यक्तिगत मामलोंमें शास्त्रीजीकी सहायता माँगनेमें दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय समाज विवेकपूर्ण आत्मसंयमसे काम न लेगा, तो वह एजेंटकी

१. देखिए खण्ड १२, परिशिष्ट २५।

स्थितिको असह्य बना देगा और इतना ही नहीं उन्हें उस महान् उद्देश्यकी पूर्ति कर सकनेमें असमर्थ बना देगा, जिसके लिए एजेंटकी नियुक्ति की गई है। और सचमुच एक ऐसे राजदूतकी उतनी उपयोगिता केवल अपने सरकारी पदसे सम्बद्ध कर्त्तव्यका पालन करनेमें नहीं है, जितनी कि अपने मिलनसार स्वभावसे और सच्चरित्रसे अप्रत्यक्ष सेवा द्वारा सरकारी तथा गैर-सरकारी कामोंके सम्बन्धमें मिलने-जुलनेवाले हर व्यक्ति और हर चीजपर अपना प्रभाव डालनेमें है। अतः यदि हमारे देशभाई, श्रीयुत शास्त्रीमें जो दिल और दिमागकी खूबियाँ हैं, उनका उपयोग करना चाहते हैं तो इन मर्यादाओंका जरूर ध्यान रखेंगे, जिन्हें साफ करके समझानेका मैंने प्रयत्न किया है।

मैं समझता हूँ कि यदि श्रीयुत शास्त्री दक्षिण आफ्रिका जायेंगे तो उनकी पत्नी भी उनके साथ जायेंगी। इससे दक्षिण आफ्रिकाके प्रवासी भारतीयोंको बहुत लाभ होगा। वहाँकी भारतीय बहनें उनकी अधीनतामें संगठित हों और उनको अपना पूरा स्नेह दें। यदि वे ऐसा करेंगी तो श्रीमती शास्त्रीको समाज-सेवाका एक अमूल्य साधन पायेंगी क्योंकि श्रीमती शास्त्री दक्षिण आफ्रिकामें सब जगह बिखरी हुई हजारों बहनोंका सामान्य स्तर ऊँचा उठानेमें बहुत प्रभावकारी शक्ति सिद्ध होंगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २८-४-१९२७

२७९. भयंकर अन्तर

एक भद्र महिला, जिन्होंने गत मार्चमें पहले-पहल नई दिल्ली और 'संसदभवन' देखे, लिखती हैं:[1]

> उस दिन मैं पहले-पहल संसद-भवनमें गई और तभी मैंने पहली बार नई दिल्ली भी देखी थी। जब देखा तो लगा कि नई दिल्ली बनानेमें सचमुच लाखों-करोड़ों रुपये बहाये गये होंगे, तब कहीं इस भव्यताकी सृष्टि हुई होगी। संसद-भवन भी उतना ही भव्य दिखाई देता है। पर मैं ज्योंही उस भवनको देखकर बाहर निकली, मेरी नजर उन टूटी-फूटी झोंपड़ियोंपर पड़ी। बादमें मुझे पता चला कि यह मजदूरोंका कैम्प है, जिसमें नई दिल्लीके भवन-निर्माण कार्यमें लगे मजदूर रहते हैं।. . .
>
> नई दिल्लीमें धनिकोंके लिए बनाये गये उन महलों तथा इनको बनानेवाले मजदूरोंको रहनेके लिए दी गई दयनीय झोंपड़ियोंमें इतना भयंकर अन्तर था कि उसपर विचार करनेका साहस भी नहीं होता था।

१. आंशिक रूपमें उद्धृत।

> अपने मनमें सोचा कि इस भयंकर अन्तरपर केन्द्रीय विधान-सभामें रोज आनेवाले सदस्योंकी निगाह क्यों नहीं जाती, जिसपर मेरी निगाह उन थोड़ेसे ही क्षणोंमें जा पड़ी जो मैंने नई दिल्लीमें गुजारे थे।
>
> मैंने किसी भी सदस्यसे उसके बारेमें कुछ नहीं कहा है। परन्तु क्या आप इस सम्बन्धमें कुछ नहीं कर सकते? मैंने तो किसीसे इसलिए नहीं कहा कि मेरे कहनेका किसीपर कोई असर नहीं होगा। लेकिन शायद आप इस बारेमें कुछ करना ठीक समझें। आप दीनबन्धु हैं, और उन दीन मजदूरोंका कुछ कष्ट दूर करा सकते हैं। जो हो, आपके सामने अपना दिल हलका किये बिना मुझसे तो नहीं रहा गया।

लेखिका बहनने हिन्दीमें लिखे अपने पत्रमें जो कुछ लिखा है उसका साराश मैंने यहाँ दिया है। धनिकों और मजदूरोंके रहन-सहनमें हम जो अन्यायपूर्ण अंतर देखते हैं, आजकल यह कोई नई चीज नही है। लेखिकाको जिस बातका अनुभव हुआ है वह उस अन्वेषणकी याद दिलाता है, जो कहते हैं कि गौतम बुद्धको सदियों पहले हुआ था। उन्होंने जो बात देखी थी वह कोई नई बात नही थी। लेकिन वृद्धावस्था, रोग तथा अन्य दुःखोंके दृश्योंने बुद्धके जीवनको एकदम बदल दिया, और संसारके जन-जीवनपर गहरा असर डाला। अच्छा हुआ कि इन बहनके दिलको भी यह पहली चोट लगी। यदि वे और भारतकी अन्य सुसंस्कृत स्त्रियाँ, जिन्होंने इन जैसे गरीबोंके बलपर शिक्षा प्राप्त की है, जिनका पत्रलेखिकाने इतना करुणाजनक वर्णन किया है, यदि और गहरी पैठकर और उन गरीबोंके दुःखको अपना दुःख मानकर उन्हें उसका कुछ बदला चुका दें, तो उन बेचारोंकी इस दीन दशाके कुछ सुधरनेमें अधिक समय नही लगेगा। प्रत्येक महल जिसे हम भारतमें देखते है, भारतकी सम्पत्तिका द्योतक नही है, वरन् सम्पत्तिसे कुछ लोगोंको मिलनेवाली ताकतके औद्धत्यका द्योतक है और यह सम्पत्ति भारतके लाखों-करोड़ों गरीब मजदूरोंको उनके श्रमका बहुत कम पुरस्कार देकर इकट्ठी की जाती है। हमारी यह सरकार लाखों श्रमजीवियोंके शोषणपर आधारित है और वह इस शोषणपर ही टिकी हुई है।

एक मित्रने अभी कुछ दिन पूर्व मेरे पास इंग्लैंडके किसी पत्रकी एक कतरन भेजी थी। इसमें लिखा था कि एक अंग्रेजकी जरूरतें पूरी करनेके लिए भारतमें १,५०० रुपये मासिक वेतन देना काफी नही है। इसमें अंग्रेजोंको सावधान किया गया था कि यदि उन्हें १,५०० रुपयेसे अधिक वेतन न मिले तो वे भारतमें नौकरीके लिए जानेका साहस न करें। रहन-सहनके इस स्तरके विषयमें वाद-विवादकी कोई जरूरत नही है। लेखककी दृष्टिसे तो १,५०० रुपये स्पष्टतः कम ही हैं, क्योंकि क्लबका खर्चा, मोटर, गर्मीके मौसममें किसी पहाड़की सैर और इंग्लैंडमें बच्चोंकी पढ़ाई, उसकी कमसे-कम अनिवार्य आवश्यकताएँ हैं। इस स्तरके सम्बन्धमें केवल यही कहा जा सकता है और जरूर कहा जाना चाहिए कि यदि एक अंग्रेजकी कमसे-कम जरूरतें ये हों, तो वह गरीब भारतकी ताकतसे बाहर खर्चीला है और अंग्रेजोंकी सेवाएँ

सिद्धान्त रूपसे चाहे कितनी ही कल्याणकारी बताई जायें, पर यदि दिन-रात कठिन परिश्रम करनेवाले करोड़ों भारतीयोंको जीवित रखना है, तो हमें इनकी कल्याणकारी सेवाओंके बिना ही काम चलाना चाहिए। क्योंकि हमारे पास इतना पैसा ही नहीं कि हम इन अंग्रेजोंकी लाभदायक सेवाएँ ले सकें। मैं समझता हूँ कि यह सिद्ध किया जा सकता है कि यदि करोड़ों भारतीय यहाँसे हटाकर हिमालयके किसी स्वास्थ्यप्रद प्रदेशमें रख दिये जायें, तो उनकी उम्र आसानीसे दूनी हो जाये। पर यह एक ऐसा प्रस्ताव है, जिसे वे गरीब लोग अपने बूतेसे बाहर बताकर हँसकर टाल देंगे।

इन बहनने नई दिल्लीमें जो देखा वह तो केवल दिन-ब-दिन बढ़नेवाले उस पुराने रोगका एक छोटा-सा चिह्न है जो प्रतिदिन हजारोंके प्राण हरता है। यह कल्पना भी की जा सकती है कि यदि कोई उत्साही सदस्य सरकारके सामने इन गरीबोंके रहनेके लिए अच्छे मकान बनानेके सम्बन्धमें प्रस्ताव रखे, तो वह मंजूर हो जायेगा और सरकार उसे अपने विशेषाधिकारका प्रयोग करके अस्वीकृत न करेगी, बल्कि वह अपेक्षाकृत इन मजदूरोंसे भी ज्यादा गरीब करोड़ों लोगोंको लूटकर खुशीसे उसपर अमल करेगी। पर मैं जानता हूँ कि लेखिका बहन वास्तवमें यह नहीं चाहतीं। देशकी हालत जाननेवाले हरएक भारतीयकी तरह ही वे भी यही चाहती हैं कि इस शासन-प्रणालीमें बहुत खर्चीले जो ऊँचे वर्गके कर्मचारी हैं उनका आमूल परिवर्तन किया जाये। उसके असह्य भारके नीचे इस देशके गरीब लोग दिन-ब-दिन पिसते जा रहे हैं और नीचे दबे हुए कराह रहे हैं। इस कठिन स्थितिसे निकलनेका रास्ता मैं कई बार बता चुका हूँ और मैं उस एक रास्तेके अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं जानता।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-४-१९२७

२८०. टिप्पणी

खादी और प्रेम महाविद्यालय

आचार्य गिडवानी प्रेम महाविद्यालय वृन्दावनमें पढ़नेवाले लड़कोंकी मनोवृत्तिमें धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूपसे क्रान्ति ला रहे हैं। उन्होंने एक पत्रमें लिखा है:

> इस महाविद्यालयमें जो खादीका कार्य हो रहा है, उसके सम्बन्धमें मैं शेखी नहीं मारता किन्तु मैं बिना किसी हिचकके आपको इतना विश्वास दिला सकता हूँ कि जब आप इसे देखेंगे तो आपको निराशा नहीं होगी। मैंने आरम्भमें हलका दबाव डाला था और अब मैं इस स्थितिमें पहुँच गया हूँ कि यहाँका हरएक अध्यापक और छात्र बिना आपत्ति किये खादी पहनता है और प्रतिदिन ४५ मिनटतक तकलीपर सूत कातता है। सब लोग बारी-बारीसे रुई पींजते हैं और कुछ चुने हुए छात्रोंको कपड़ा बुनना सिखाया जाता है।

रँगाईका काम शुरू कर दिया गया है। इस सत्रमें प्रेम महाविद्यालयकी मार्फत लगभग २,००० रुपये मूल्यकी खादी बेची गई और मथुरा तथा आसपासके लोग यह समझते हैं कि प्रेम महाविद्यालय शुद्ध खादीका गढ़ है। दो दर्जी महाविद्यालयमें महीनोंसे केवल सिलाईका काम करनेमें लगे हुए हैं और उनका काम अभी जारी रहेगा।

मैं आचार्य गिडवानी, उनके अध्यापक-मण्डल और छात्रोंको बधाई देता हूँ। उन्होंने जो काम किया है उससे मुझे दिल्लीके जामिया मिलिया द्वारा किये गये ऐसे ही कामकी याद आती है, जिसका विवरण इन स्तम्भोंमें छप चुका है। इन दो तथा अन्य अनेक उदाहरणोंसे यह प्रकट होता है कि जहाँ सचाई और श्रद्धा होती है वहाँ छात्रोंको खादी कार्यके लिए प्रेरित करनेमें कोई कठिनाई नहीं होती। मैंने यह बार-बार कहा है कि यदि अध्यापकोंमें श्रद्धा हो और इसके साथ ही उनमें ज्ञान और धैर्य हो तो स्कूलोंमें खादी और हाथ कताईको लोकप्रिय बना सकना अत्यन्त आसान है। मुझे ऐसे किसी स्कूलका नाम नहीं मालूम जिसमें ये तीनों शर्तें पूरी की गई हों और फिर भी सफलता न मिली हो।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २८-४-१९२७

२८१. पत्र : मु० अ० अन्सारीको

नन्दी हिल्स
२८ अप्रैल, १९२७

प्रिय डा० अन्सारी,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। लेकिन आपको यह तो याद ही होगा कि आपको डाक्टरी जाँच करनेके लिए मुझसे भेंट करनी है। परन्तु यह भेंट व्यावसायिक नहीं होगी। क्योंकि भेंटका वायदा करनेके बाद अब, जबकि आप दो बार यूरोप हो आये हैं, व्यावसायिक भेंटका मतलब होगा कि ज्यादा नहीं तो कमसे-कम आपको प्रतिदिन १,००० रु० देने होंगे। क्या ऐसा नहीं समझा जाता कि हर बार यूरोपकी यात्रासे डाक्टरों और वकीलोंकी योग्यता बढ़ जाती है? और इसलिए उनकी दैनिक फीस भी बढ़ जाती है? इस दौरान में आपकी हिदायतोंका ध्यान रखूँगा। और जबतक मैं पागलपनकी हालततक न पहुँच जाऊँ मैं अपने मनको सोचने नहीं दूँगा। यदि आप कहें कि मैं अपने विचारोंको लिखित रूपमें प्रस्तुत न करूँ, या वार्तालापके रूपमें वाणीसे भी अभिव्यक्त न करूँ, तो मैं इतना कुछ तो समझ सकता हूँ। परन्तु मैं नहीं समझता कि हिन्दू और मुसलमान जो इस तरहके काम कर रहे हैं, जिसके कारण मुझे बहुत जोर देकर सोचना पड़ता है, उसे कैसे रोक सकता हूँ। मैं यह भी नहीं जानता कि लाखों लोगोंकी भुखमरी जो बढ़ रही है, उसे कैसे रोकूँ,

ताकि उसका मेरे मनपर असर न हो। इन चीजोंके बारेमें लगातार सोचनेके लिए मुझे समाचारपत्र पढ़कर उनसे सूचना प्राप्त करनेकी आवश्यकता नहीं है। इन चीजोंके बारेमें मैं न सोचूँ इसका एकमात्र उपाय यह है कि हिन्दू और मुसलमान निकृष्ट जानवरोंकी तरह आचरण करनेके बजाय मानवोंकी तरह आचरण करें। हममें से वे सब लोग जिन्हें प्रतिदिन पेट-भर खानेसे ज्यादा मिलता है, भूखे रहनेवाले लाखों करोड़ों लोगोंका विचार करें और उनके लिए विदेशी कपड़ेका परित्याग करें। उन भूखे लोगोंको प्रोत्साहित करनेके लिए अपने अवकाशके समयमें हर क्षण चरखा चलायें।

यदि यह सचमुच सही है कि रक्तचापका कारण मानसिक उत्तेजना है तो मैं गम्भीरतासे दृढ़तापूर्वक कहता हूँ कि इस तनावको दूर करनेका सिर्फ एक ही उपाय है कि मुझे उपवासके उपचारकी हिदायत दी जानी चाहिए। अपने अन्तरतममें मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि लम्बा उपवास ही मेरी बीमारीको पूरी तरह दूर करनेमें सहायक सिद्ध होगा। क्योंकि पिछले २१ दिनोंके उपवासके[1] दौरान मुझे ऐसा महसूस हुआ कि १० दिनके बाद मैंने बाहरी दुनियाके बारेमें सोचना भी बन्द कर दिया था। उपवाससे अस्थायी मानसिकसमंजसकी दशा आ गई थी। जबतक मैं खाता रहता हूँ तबतक यदि मुमकिन हो तो भी मस्तिष्क बिना सोचे नहीं रह सकता। परन्तु उपवासके दौरान मस्तिष्क न सोचने एवं चिन्ता न करनेमें सहयोग देगा। और यदि इन सारी बातोंके बावजूद कि मैं अपने-आप जो ध्यान रख रहा हूँ, असंख्य मित्र डाक्टर जो मुझे मिलने आते हैं, और मेरी परीक्षा करते हैं; नीम हकीम जिनकी राय मैं स्वेच्छासे लेता रहता हूँ, सेवापरायण नर्सें जो मेरी पूरी देख-भाल करती हैं, रक्तचाप कम होनेका नाम नहीं लेता और कमज़ोरी बनी हुई है तो इस तरह बेकार समय बिताने और विक्षोभ उत्पन्न करनेवाली स्थितिको सुधारने या इसका अन्त करनेके लिए मुझे उपवास रखना पड़ेगा, चाहे इसके लिए मुझे बहुतसे मित्रोंको अस्थायी दुःख देनेका खतरा सिरपर मोल लेना पड़े। परन्तु अभी तो चिन्ताका कोई कारण नहीं है। ऐसा लगता है कि रक्तचाप कम हो जायेगा। जब मैं नन्दी आया था, तबके मुकाबले पिछले दो दिनोंसे मैं ज्यादा ताकत महसूस कर रहा हूँ। पिछले हफ्तेके दौरान अधिकतम रक्तचाप १८८ था। पिछले मंगलवारको १८० था। बीमार पड़नेके बाद रक्तचापमें यह गिरावट पहली बार देखी गई।

इस पहाड़ीकी ऊँचाई ४,८५० फुट है। इसलिए यह ऊटी जितनी ऊँचाई नहीं है; और न यहाँ उतनी सर्दी है। परन्तु फिर भी यहाँ काफी सर्दी है और डाक्टर मेहता समझते हैं कि मुझे इससे ज्यादा ऊँचे स्थानपर नहीं जाना चाहिए। दूसरे डाक्टर यह कहते हैं कि जितना अधिक ऊँ ाईवाला स्थान हो, उतना ही अच्छा है...।[2] जब डाक्टरोंकी राय आपसमें न मिलती हो तो बेचारा रोगी क्या कर सकता है?

१. १७ सितम्बरसे ८ अक्तूबरतक; देखिए खण्ड २५।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द छूट गये हैं।

किसी दिन जब आप खाली हों; मैं आपके आनेकी उम्मीद करूँगा और तब हम लोग केवल मेरी सेहतके बारेमें ही बात नहीं करेंगे; बल्कि कई ऐसी चीजोंके बारेमें भी बातचीत करेंगे जो बहुत ही अधिक महत्त्वकी है।

कृपया उन सबको मेरा प्यार दीजियेगा जो मेरे बारेमें सोचते हैं और मेरा प्यार स्वयं अपने लिए भी स्वीकार करें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२९४९ तथा १४११९) की फोटो-नकलसे।

२८२ पत्र: शंकरन्को

नन्दी हिल्स
२८ अप्रैल, १९२७

प्रिय शंकरन्,

तुम्हारा पत्र मेरे लिए एक बलवर्धक वस्तु है। तुम मेरी सभी उम्मीदें पूरी कर रहे हो। मुझे खुशी है कि अब रसोई बिलकुल ठीक हालतमें है। तुम्हारी हर तरहसे मदद करनेवाला दाहिना हाथ सरीखा कौन व्यक्ति है? गिरिराज कैसा काम कर रहा है? तुम्हारा स्वास्थ्य तो बिलकुल ठीक है न? तुम्हारी रसोईको मन, शरीर और भावनाके स्वास्थ्यका भण्डार बन ही जाना चाहिए। उसमें सब-कुछ सराहनीय ही होना चाहिए और हर समय उसमें एक ऐसी मिठास, आराम और शान्तिका वातावरण रहना चाहिए कि जिससे उसके करीबसे गुजरनेवाला कोई भी व्यक्ति उसके उन गुणोंको भाँप सके। रसोईमें हर चीज अपनी जगहपर, हर चीज साफ, विविध मसालोंकी कोई अप्राकृतिक सुगन्ध नहीं, केवल साधारण खाद्य पदार्थोंकी प्राकृतिक सुगन्ध और काम करनेवाले लोग आपसमें मिल-जुलकर सन्तुष्ट भावसे काम करते हुए स्वयं भी व्यक्तिगत रूपसे पूर्ण स्वस्थ हों। क्या तुम यह जानते हो कि पुराने ऋषि लोग कवि, दार्शनिक, रसोइये, सफाई करनेवाले सब-कुछ एक-साथ होते थे? नलराजा एक बुद्धिमान शासक, एक आदर्श पति और सिद्ध रसोइये थे। हर काम बुरे संसर्गोंसे अशोभन बन सकता है और हर काम जब बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा हाथमें लिया जाता है तो मुक्तिका सोपान बन सकता है।

तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२०) की फोटो-नकलसे।

२८३. पत्र : मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

२८/२९ अप्रैल, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा सबसे बादवाला पत्र और भी आह्लादपूर्ण है। मुझे आशा है कि तुम्हारी यही मनःस्थिति बरकरार रहेगी। मैं तो आज तुम्हें हिन्दीमें एक कार्ड भेज ही रहा था कि डाक निकल गई। यह पत्र डाक मिलनेके बाद लेकिन डाक निकल जानेपर लिखा गया है, क्योंकि जब डाक चली जाती है, तब डाक आती है।

मैंने यहाँ खुराकमें थोड़ी-सी तबदीली कर दी है। उसे एक मशहूर डाक्टरने, जो पास ही रहते हैं, ठीक बताया है। मैं अब कच्चा दूध लेता हूँ और कभी-कभी उसमें थोड़ा-सा नीमकी पत्तियोंका रस मिला लेता हूँ और फिलहाल चपातियाँ और तरकारियाँ छोड़ दी हैं; यदि जरूत हुई तो इन दोनों चीजोंको फिर लेने लगूँगा। बीमार पड़नेके बाद अब पहली बार रक्तचापमें कमी दिखाई दी है। मुझे अपनी तबीयत कुल मिलाकर बेहतर लगती है।

शेष महादेव द्वारा।

सस्नेह,

बापू

२९ की सुबह

तुम रोलाँकी पुस्तकका अनुवाद अवश्य करो; किन्तु यदि अबतक तुम्हारा चित्त शान्त हो गया हो तभी करो। तुम्हारा चित्तकी आन्तरिक शान्तिको स्थायी रखना किसी भी अन्य कार्यसे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। तुम्हें वहाँके लोग अच्छे लगते हैं। इसलिए तुम उन्हें बहुत कुछ सिखा सकती हो और उनसे बहुत कुछ सीख सकती हो। मैं चाहता हूँ कि तुम वहाँसे तभी हटो जब वहाँ अपना पूर्ण विकास कर लो। इस अवस्थामें मेरा सुझाव यह है कि तुम अनुवादके कार्यके लिए नियमित रूपसे एक घंटा अलग रख लो और उस कामको जितना बढ़ा सको उतना बढ़ाओ। हो सकता है कि तबतक प्रभु कोई ऐसा मार्ग निकाल दें कि मैं वहाँ अपेक्षित समयतक रह सकूँ और उसके तथ्योंमें महादेवकी सलाहसे संशोधन किया जा सके। यदि मैं वहाँ जल्दी न आ सकूँ तो ऐसा भी हो सकता है कि जब तुम्हें ऐसा लगे कि तुम्हारा काम पूरा हो गया है, तुम स्वयं, जहाँ मैं होऊँ वहाँ आ जाओ। लेकिन अपना कर्त्तव्य तुम्हें ही निश्चित करना होगा। मैं कह चुका हूँ कि तुम जब चाहो तब मेरे पास आनेके लिए स्वतन्त्र हो। मेरा केवल इतना ही कहना है कि तुम अनुवादको, जो काम तुम वहाँ कर रही हो, उससे अधिक आवश्यक न समझो। यदि किसी व्यक्तिका

मूल्यांकन उसके कार्योंके आधारपर किया जाये न कि उस युगके सबसे बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा दूरसे उसके जीवनका अध्ययन करके कहे गए वचनोंके आधारपर, तो मेरे सहयोगी कार्यकर्त्ताओंकी जीवनी ही मेरे बारेमें धारणा बनानेके लिए सर्वोत्तम कसौटी होगी। मैं क्या कहना चाहता हूँ तुम समझ गई होगी; समझ गई न?

मुझे लगता है कि एक पत्रमें पूछे गये तुम्हारे एक सवालका जवाब देना मैं भूल गया हूँ। तुम्हारे व्रतका अर्थ बेशक यही है कि तुम्हारा दिनका आखिरी भोजन शामके सात बजे या सूर्यास्तसे पूर्व, जैसा भी तुम्हारा व्रत हो, समाप्त हो जाना चाहिए। इसलिए तुमने ठीक ही अर्थ लगाया है। व्रतोंके बारेमें नियम यह है कि जब शंका हो, तब अपने विपक्षमें पड़नेवाला अर्थ लगाओ, अर्थात् अपने ऊपर और अधिक प्रतिबन्ध रखो।

बापू

[पुनश्च:]

कृपया श्रीमती स्लेडसे[1] कहिये कि उन्हें मेरे बारेमें जो ख्याल बना रहता है, उसके लिए मैं आभारी हूँ।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२१)से।
सौजन्य : मीराबहन

२८४. पत्र : मणिबहन पटेलको

शुक्रवार [२९ अप्रैल, १९२७][2]

चि० मणि,

तुम्हारे पत्र मिले हैं। यदि भोजन संयुक्त भोजनालयमें किया जा सके तब तो बहुत ही अच्छा हो। इस बारेमें मैंने शंकरन्‌को पत्र[3] लिखा है। उसे पढ़ लेना। चि० चम्पाकी[4] सार-सँभालका भार तुमने लिया, यह बहुत अच्छा किया।

अब तबीयत कैसी रहती है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

१. मीराबहनकी माँ।
२ व ३. देखिए "पत्र : शंकरन्‌को", २८-४-१९२७।
४. डाक्टर प्राणजीवन मेहताकी पुत्रवधु।

२८५. पत्र : जगजीवनदास नारायणदास मेहताको

नन्दी दुर्ग
३० अप्रैल, १९२७

ट्रस्टके रूपमें जो भी काम हाथमें लो उसे चमका कर दिखाओ। लाठीके कामके बारेमें यदि तुम्हें शंका हो अथवा सँभाल न सकते हो तो उसे छोड़ देना। थोड़ा ही काम अपने जिम्मे लो किन्तु उसे सांगोपांग ठीक करो।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्री जगजीवनदास नारायणदास मेहता
अमरेली

गुजराती (जी० एन० ६९) की फोटो-नकलसे।

२८६. पत्र : सुमन्त मेहताको

३० अप्रैल, १९२७

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिला। आपने तो तात्त्विक चर्चा छेड़ी है। वह मुझे अच्छी भी लगती है किन्तु आजकल आप नरसिंह मेहताके प्रदेशमें हैं इसलिए मुझे उनकी प्रभाती याद आती है: "हे कृष्ण, प्रेमरसके पानकी तुलनामें मुझे यह नीरस तात्त्विक चर्चा तुच्छ लगती है।" फिलहाल तो हम दोनोंको रोग-शय्यासे जल्दी उठनेमें होड़ लगानी चाहिए। भाई रायचुराको आपकी सेवाका सौभाग्य मिला इसके लिए उनसे मेरा धन्यवाद कहें। शारदाबहनको वन्देमातरम्।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

२८७. पत्र : नीमूको

३० अप्रैल, १९२७

चि० नीमू,

अगले वर्ष तुम्हारा विवाह होगा। विवाह एक प्रकारसे नया जन्म ही है। अतः मैं चाहता हूँ कि तुम और रामदास पहलेसे ही इसके लिए तैयारी कर लो। रामदासको लिखनेके बाद मैं तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूँ। रामदासके साथ तो काफी समयसे पत्र-व्यवहार चल रहा है। रामदासके पत्रका अंश इसके साथ भेज रहा हूँ, उसे पढ़ लेना।

मैं चाहता हूँ कि तुम दोनों सेवाके कार्यमें अपना जीवन बिताओ। रामदास भी यही चाहता है। तुम्हें उसी कार्यसे अपनी आजीविका चलानी चाहिए, जिस तरह कि मगनलाल तथा अन्य बहुतसे लोग चलाते हैं। साथ ही मैं चाहता हूँ कि तुम दोनों आदर्श दम्पती बनो। इसके लिए तुम्हें आजसे ही तैयारी करनी चाहिए। घरके कामके बाद जो समय बचे उसे तुम खादीके काममें लगाओ। उस कामके तुम्हें भी पैसे मिलेंगे। मैं दो मामलोंमें यही कर रहा हूँ। एक तो किशोरलाल और गोमतीबहन तथा दूसरे ठक्कर और उनकी पत्नीके मामलेमें। किन्तु तुम तो उनसे भी आगे बढ़ सकती हो। तुम्हारे हिस्से जो काम आयेगा वह आसान ही होगा, किन्तु कोशिश करनी चाहिए कि तुम्हें ऐसा लगे कि तुम स्वतन्त्र रूपसे ही कमा रही हो, और तुम कमा सकती हो। मैं तो मानता हूँ कि यह करते रह कर तुम अपनी घर-गृहस्थी चला सकती हो और सन्तान होनेपर उसका पालन-पोषण भी कर सकती हो। गरीब कुटुम्बोंमें तो हजारों दम्पती इस प्रकार कमाई करते हैं। दूदाभाई और दानीबहन, रामजीभाई और गंगाबहनका उदाहरण तो तुम्हारे सामने ही है। हमें भी गरीबीमें ही रहना है और उन्हींके जैसा बनना है। तभी हम ईश्वरको जानने योग्य बन सकेंगे।

ऐसा बननेके लिए तुम्हें ओटना, पींजना और कातना बहुत अच्छी तरहसे सीख ही लेना चाहिए। इसके साथ-साथ तुम्हें अपने गुजराती भाषाके ज्ञानको बढ़ाना चाहिए तथा कुछ हिसाब-किताब भी सीख लेना चाहिए। इसके लिए तुम्हें जो सुविधा चाहिए वह मिल सकती है। तुम्हें अपना स्वास्थ्य भी सुधारना चाहिए और संस्कृत आदि तो सीखनी ही है।

* * *[1]

इस सम्बन्धमें विचार करना और तुम्हें जो लगे सो बेझिझक लिखना। जैसे लड़की अपनी माँसे निःसंकोच कह सकती है अथवा दो मित्र एक-दूसरेके सामने अपना दिल खोल देते हैं वैसे ही तुम भी मुझे लिखना। मुझे क्या अच्छा लगता है, इस

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

बातका विचार न करके तुम क्या चाहते हो सो लिखना। मेरे पत्रमें किसी भी बातें तुम्हें पसन्द न आयें उनके बारेमें निःसंकोच होकर लिखना। पत्रोंसे तो कुछ कराया नहीं जा सकता; तुम्हारी इच्छासे जो होगा वही ठीक हुआ कहा जा सकता है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

२८८. पत्र : सीताराम पुरुषोत्तम पटवर्धनको[1]

३० अप्रैल, १९२७

मैंने भैंसके विषयमें जो लिखा[2] था उसमें भैंसका नाश करनेकी बात कहीं नहीं थी। बल्कि उसके संवर्धनका प्रयत्न करनेकी आवश्यकता बताई थी। जहाँ-जहाँ वास्तविक जरूरत होगी वहाँ उसकी रक्षा भी आसानीसे हो जायेगी। मेरे कहनेका अर्थ यह था कि हमारा धर्म सिर्फ गोरक्षा ही हो सकता है। दूसरे जानवरोंके प्रति दयाकी बात उसीमें आ जाती है। किन्तु उनका नाश तो नहीं हो रहा है। इसलिए उन्हें नष्ट होनेसे बचानेके लिए भगीरथ प्रयत्न करनेकी आवश्यकताका सवाल नहीं उठता। और यदि हम गायकी रक्षा करनेकी सामर्थ्य अर्जित कर लेते हैं तो दूसरोंके लिए जो कुछ करना जरूरी है वह अपने आप हो जायेगा। मैंने जो भी लिखा उसमें मेरा आशय भैंसकी अवगणना करनेका नहीं है। मैं केवल अपनी शक्तिकी सीमा बता रहा हूँ। गाँवोंमें भी चर्मालय व दुग्धालय आदि होने चाहिए। यानी गाँवोंमें भी चमड़ा उतारनेकी क्रियाका तरीका अधिक सभ्य होना चाहिए। गायके संवर्धनके अच्छे-अच्छे प्रयोग किये जाने चाहिए। लोगोंको समझना चाहिए कि दूध किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि इस समय हमें यह जानकारी गाँवोंमें शहरोंसे ही ले जानी पड़ेगी। अभी तो हालत यह है कि हमें इस शास्त्रका कोई ज्ञान ही नहीं है। मतलब यह कि जबतक पश्चिमसे इस शास्त्रको सीखकर आये लोग यहाँकी परिस्थितिको समझकर अपने ज्ञानको ऐसा नया रूप नहीं देते जो हमारे उपयोगका हो, तबतक हम कुछ नहीं कर सकते। इसलिए फिलहाल तो हमें प्रयोग ही करने हैं। तात्पर्य यह है कि आज मुख्यतया अज्ञानी मनुष्य मात्र आजीविकाकी दृष्टिसे जो धन्धा करते हैं उसमें जैसा कताई-बुनाईके सम्बन्धमें हुआ है, उसी तरह शिक्षित लोग देश-हितके लिए अपने हाथमें ले लें। आश्रममें इसका आरम्भ भी किया जा चुका है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

१. उर्फ अप्पा।

२. देखिए "गोरक्षाकी शर्तें" ३१-३-१९२७।

२८९. पत्र : रामदास गांधीको

[३० अप्रैल, १९२७][1]

चि० रामदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने विद्यार्थियोंकी सेवा आरम्भ कर दी है, यह बहुत अच्छा किया।

खुशालभाईका पत्र बहुत सुन्दर है। तुमने उन्हें क्या उत्तर दिया, लिखना। सेवामें स्वार्थ तो आ ही जाता है। जो सच्चे हृदयसे सेवा करता है उसे भगवान् चना-चबैना देता ही है। और सीखनेके लिए तो उसमें अपार अवकाश है। सच्चा सेवक कभी भूखों नही मरा। मगनलाल तथा अन्य लोगोंने कुछ गँवाया नही है बल्कि उन्होंने अपने जीवनको सुधारा और सफल बनाया है।

यदि किसी वस्तुके सम्बन्धमें पूरी जानकारी न हो तो यह कमी चेष्टा करके दूर की जा सकती है। अनुभवसे सारा ज्ञान स्वतः मिल जाता है। जिस इमारतकी नींव चरित्र और नैतिक जीवनपर रखी गई हो उसे सुन्दरताके साथ चिननेमें कोई कठिनाई ही नहीं होती।

गुजराती (जी० एन० ६८५६) की फोटो-नकलसे।

२९०. पत्र : लाजपतरायको[2]

नन्दी हिल्स
३० अप्रैल, १९२७

प्रिय लालाजी,

आपका पत्र तथा ट्रस्टके कागज मुझे मिल गए। इस निश्चयपर आपको बधाई। इस धनसे तो मेरा विचार है, काम नही चल सकेगा। अभी अधिक धनकी आवश्यकता होगी। उसके लिए प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

भवदीय,
मो० क० गांधी

लाला लाजपतराय : एक जीवनी

१. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीमें इस पत्रके अन्तिम अनुच्छेदको इसी तारीखमें दिया है।

२. मूल पत्र अंग्रेजीमें लिखा गया था, जो उपलब्ध नहीं है। देखिए "पत्र : लाजपतरायको", १-५-१९२७ भी।

२९१. पत्र : मीराबहनको

शनिवार [३० अप्रैल, १९२७][1]

चि० मीरा,

आज कुछ लीखनेका तो है नहिं। सिर्फ इसीलिये लीखता हुं कि तुमे पता चले कि मुझको तुमारे लीये आजकल कुछ चिंता रहती है। ईश्वर तुमको सुरक्षित रखेगा। क्या यह खत समझा जाता है?

बापूके आशीर्वाद

मूल (सी० डब्ल्यू० ५२२२) से।
सौजन्य : मीराबहन

२९२. पत्र : लाजपतरायको[2]

१ मई, १९२७

प्रियवर लालाजी,

उपरोक्त पत्र[3] गत रात्रिको लिखा गया। मैंने आपको अपने पूरे विचारोंसे परिचित नहीं किया। मेरी बधाईमें भी कुछ आलोचनाका अंश था। वह अब लिखता हूँ।

विचार अच्छा है, परन्तु कार्यप्रणाली दोषपूर्ण है। आपकी पत्नी तथा बच्चोंको ट्रस्टी नहीं होना चाहिए। आपके ट्रस्टी वह होने चाहिए, जो आपके आदर्शोंसे पूर्णतः सहमत हों, और जो उनकी पूर्तिके लिए भारीसे-भारी कष्ट सहन करनेको तैयार हों। यदि आपकी धर्मपत्नी, पुत्री तथा पुत्रमें ये गुण हैं, तो आपके सम्बन्धी होते हुए भी ट्रस्टी रह सकते हैं।

अब मैंने पूर्ण सत्य कह दिया है और सर्वशक्तिमान परमात्माको धन्यवाद है कि उसने मुझे सत्य-भाषणकी शक्ति प्रदान की। इसके बिना मैं अपने उस कर्त्तव्य पालनमें असमर्थ होता जो एक मित्रको करना चाहिए।

भवदीय,
मो० क० गांधी

लाला लाजपतराय : एक जीवनी

१. डाककी मुहरसे।
२. मूल पत्र अंग्रेजीमें लिखा गया था, जो उपलब्ध नहीं है।
३. देखिए "पत्र : लाला लाजपतरायको", ३०-४-१९२७।

२९३. तार: मीराबहनको

२ मई, १९२७

तुम्हारा तार मिला। नन्दी आशासे अधिक माफिक आई है। कल की परीक्षामें रक्तचाप सामान्य निकला। दो बार लम्बी दूरीतक पैदल घूमता हूँ। रोज रोज अधिक ताकत आती जा रही है और . . . . लिख[1] रहा हूँ। सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: मीराबहन

२९४. पत्र: मीराबहनको

दुबारा नहीं पढ़ा

नन्दी हिल्स
२ मई, १९२७

चि० मीरा,

मैंने तुम्हें एक पोस्टकार्ड[2] हिन्दीमें लिखा था, सिर्फ यह बतानेके लिए कि मुझे हर समय तुम्हारा खयाल रहता है और यह जाननेके लिए कि तुम मेरी हिन्दी पढ़ और समझ सकती हो या नहीं। घबराना मत। तुम्हें हमेशा हिन्दीमें पत्र लिखनेका मेरा इरादा नहीं है। लेकिन मेरी हिन्दी तुम समझ सको तो मैं कभी-कभी तुम्हें अतिरिक्त पत्र हिन्दीमें जरूर लिखना चाहता हूँ — वह भी अगर तुम्हें यह विचार पसन्द हो तो, अन्यथा नहीं।

अब रही बात तुम्हारे उद्विग्न कर देनेवाले तारके बारेमें। पता नहीं मैंने अपने पत्रोंमें ऐसा क्या लिख दिया, जिससे तुम्हें यह तार देना पड़ा। तुम्हें कल्पना भी नहीं हो सकती कि मैंने फिर कितनी शक्ति प्राप्त कर ली है। मैंने इस सप्ताह 'नवजीवन' के लिए चार लेख लिखे हैं। 'यंग इंडिया' के लिए पिछले सप्ताह तीन लेख लिखे थे। असलमें मैं इन पत्रोंका काम अब लगभग सदाकी भाँति ही कर रहा हूँ। और स्नेह-पत्र भी काफी लिख लेता हूँ।

मगर यह सब कलकी डाक्टरी परीक्षाके परिणामकी तुलनामें कुछ भी नहीं है। रक्तचाप १८८ से घटकर १५५ रह गया है और मेरी उम्रके व्यक्तिके लिए १५५

१. मूलमें यहाँ कुछ शब्द पढ़े नहीं जा सके।
२. देखिए "पत्र: मीराबहनको", ३०-४-१९२७।

से १६० के बीच रक्तचाप होना साधारण बात है। पिछले तीन दिनसे मैं तीस-तीस मिनट करके रोज दो बार एक मील से ज्यादा घूम लेता हूँ। मेरा इतना घूमना अम्बोलीसे अधिक है। इसलिए अब मेरी तन्दुरुस्तीके बारेमें चिन्ताकी कोई बात नहीं है। अब नन्दी छोड़नेका कोई प्रश्न नहीं हो सकता। अगर आ सकती हो तो पहले जैसी ताकत जबतक न आ जाये, तबतक या जबतक नन्दीमें रहनेका मौसम खत्म न हो जाये, जो जुलाईके करीब खत्म होता है, तबतक नन्दी छोड़नेका विचार करना मूर्खतापूर्ण होगा।

तुम्हारे तारसे मैं देखता हूँ कि तुम्हारे उस पहलेवाले पत्रमें जो शान्ति तुम्हें महसूस होती जान पड़ी थी, उस पत्रके बावजूद घड़ीकी सुई मानो फिर पीछे सरक गई है और तुम्हारा चित्त फिर अशान्त हो रहा है। इससे मुझे आश्चर्य नहीं होता। अगर हमारी शान्ति चिरस्थायी हो जाये, तो फिर और कुछ करनेको न रहे। दुर्भाग्य या सौभाग्यसे सच्ची शान्ति पा सकनेसे पूर्व हमें बहुतसे उतार-चढ़ाव पार करने पड़ते हैं।

इसलिए मैंने तुम्हें इस बातकी स्वतन्त्रता दे दी है कि जैसा चाहो वैसा करो। बेशक यह बेहतर होगा कि यदि तुम अपना चित्त शान्त रख सको तो वहीं रहो। लेकिन यह भी उतना ही निश्चित है कि अगर तुम्हारा चित्त शान्त न रह सके तो तुम जरूर चली आओ। केवल इतना ही कहना है कि कोई भी फैसला करते समय मेरे स्वास्थ्यका खयाल न करना। कारण कि अगर तुम यहाँ आई तो मैं तुम्हें वैसा ही मिलूँगा जैसा तुमने मुझे काँगड़ीमें देखा था। तबमें और अबमें मुझमें तुम्हें बहुत कम फर्क दिखाई देगा। इसलिए अपने मनमें गहराईसे आत्म-चिन्तन करके देख सको तो देखो कि तुम किस मनःस्थितिमें हो और फिर वैसा ही करो। इसकी परवाह न करो कि मैं तुमसे क्या करवाना चाहता हूँ, या दूसरी तरह कहूँ तो मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी अन्तरात्मा जैसा कहे वैसा तुम करो।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२४) से।
सौजन्य : मीराबहन

२९५. पत्र : मणिबहन पटेलको

नन्दी दुर्ग
मौनवार, २ मई, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। बापू लिखते हैं कि तुम दुबली हो गई हो। ऐसा क्यों हुआ? शरीर तो सशक्त और तेजस्वी होना चाहिए। आदर्श कन्याको तो सभी तरहसे वीर होना चाहिए।

यदि तुम्हारा कराची जाना नहीं हुआ तो मेरा विचार चम्पावतीके बजाय तुम्हें दिल्ली भेजनेका है। वहाँ बहुत लड़कियाँ हैं और बहुत काम है। दिल्लीकी आबोहवा तो अच्छी है ही। आजकलमें कराचीसे तार मिलना चाहिए।

बहनोंमें से यदि किसीको चोरका डर बना ही रहता हो तो मुझे सूचित करना।

राधाको कितनी चोट आई? क्या वह डर गई थी? फिलहाल तो उसे अलगसे पत्र लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने

२९६. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

मौनवार, वैशाख सुदी २ [३ मई, १९२७][1]

बहनो,

मेरे पास अब बहुत-सा हाथ-कागज आ गया है, इसलिए यद्यपि तुमने जितना चाहा था उससे इसका आकार कुछ छोटा है फिर भी मैं मानता हूँ तुम यह हाथ-कागज ही पसन्द करोगी। धर्म तो कपड़ेके बारेमें ही है, क्योंकि उससे भूखे मरनेवालोंकी रोजी चलती है। ऐसा कागज बनानेवाले थोड़े ही हैं। मगर इस देशमें जो चीज अच्छी बनती हो, वह जबतक मिले तबतक हमें चाहिए कि हम उसीको लें और काममें लायें।

तुम डाकखर्चके लिए पैसे अलग निकाल लेती हो, यह बहुत अच्छा है। वह रकम छोटी-सी भले हो, फिर भी उसका बाकायदा हिसाब रखकर तुममें से जो इस तरह बहीखाता रखना सीख सके वह सीख ले।

१. आश्रममें चोरोंके आनेके उल्लेखसे।

तुम्हारी दूसरी प्रगति भी अच्छी मालूम होती है। पिछले सप्ताह पहरेके बारेमें मैंने जो सवाल पूछा[1] है, उसका उत्तर टाल नहीं देना है। स्त्रियोंके लिए 'अबला', 'भीरु' वगैरा जो विशेषण काममें लाये जाते हैं, मैं चाहता हूँ तुम उन्हें गलत साबित कर दो। ये विशेषण सभी स्त्रियोंपर लागू नहीं होते। रानीपरजकी स्त्रियोंको कौन डरपोक कहेगा? वे कहाँ अबला हैं? पश्चिमकी स्त्रियाँ तो आजकल सब क्षेत्रोंमें हिस्सा ले रही हैं। मैं यह नहीं कहता कि वह सब अनुकरण करने लायक ही है, मगर वे पुरुषोंकी बहुत-सी धारणाओंको झूठा सिद्ध कर रही हैं। आफ्रिकाकी हब्शी स्त्रियाँ जरा भी भीरु नहीं हैं। उनकी भाषामें स्त्रियोंके लिए शायद ऐसा विशेषण ही नहीं है। ब्रह्मदेशके पुरुष ही भीरु और 'अबल' मालूम होते हैं। वहाँ तो स्त्रियाँ ही सारा कारोबार चलाती हैं।

मगर मैंने यह प्रश्न तुम्हें डरानेके लिए नहीं, केवल शान्तिके साथ विचार करनेके लिए पूछा है। आश्रममें हम सब आत्माका अनुभव प्राप्त करना चाहते हैं। आत्मा न पुरुष है, न स्त्री, न बालक है, न वृद्ध। ये सारे गुण तो शरीरके हैं, ऐसा शास्त्र और अनुभव दोनों कहते हैं। तुममें और मुझमें एक ही आत्मा निवास करती है। तब मैं तुम्हारी रक्षा भला किस तरह कर सकता हूँ? मगर यह कला मुझे आ जानेपर ही तो मैं तुम्हें सिखा सकता हूँ।

आज तो इतना ही विचार करना। अगर मुझे प्रेरणा हुई तो इस विचारको फिर आगे बढ़ाऊँगा।

जिन बहनोंको मुझे लिखना हो, वे शौकसे लिखें। मैंने सुना है कि वालजीभाईने सबको डरा दिया है। डरना मत।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४७) की फोटो-नकलसे।

२९७. पत्र : मणिबहन पटेलको

वैशाख सुदी ३, ४ मई, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। गंगादेवीसे कहना कि डाक्टर जैसा कहे वैसा जरूर करें और मूँगका पानी पीना हो तो पियें। यहाँ बैठा हुआ मैं बहुत मार्गदर्शन तो कैसे कर सकता हूँ? ये नये डाक्टर कौन हैं? और कबसे आने लगे हैं?

पहरेमें किन-किन बहनोंने नाम लिखवाये हैं?

मेरी तबीयत अच्छी होती जा रही है। मुझे नियमपूर्वक लिखती रहना। तबीयत कैसी रहती है?

बापूके आशीर्वाद

१. देखिए "पत्र : आश्रमकी बहनोंको" २६-४-१९२७।

[पुनश्च :]

वसुमतीबहनसे पत्र लिखनेको कहना।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने

२९८. पत्र: मथुरादास त्रिकमजीको

४ मई, १९२७

बहुत दिनोंसे तुम्हें पत्र लिखनेकी बात सोच रहा था, किन्तु उसपर आज अमल कर पा रहा हूँ। ऐसा तो शायद कोई दिन नही जाता जबकि तुम्हारा नाम न लिया हो अथवा तुम्हें याद न किया हो।

मेरे विषयमें तुम्हारी यह इच्छा थी कि मैं पंचगनीमें रहूँ, पर वह असम्भव था। मेरे कार्यके लिए इस प्रान्तमें रहना ही आवश्यक था। तबीयत सुधरते ही यहाँका कार्य पूरा कर लूँगा; कुछ नये ढंगसे हो, यह सम्भव है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

२९९. घोर अमानुषिकता

पाठक 'नवजीवन'से उद्धृत एक समाचार अन्यत्र देख सकते हैं, जिसमें एक डाक्टरकी काठियावाड़के एक गाँवमें रहनेवाले दलित वर्गके एक सदस्यकी मरणासन्न पत्नीके प्रति जान-बूझकर दिखाई गई लज्जास्पद अमानुषिकताका हवाला है। श्रीयुत अमृतलाल ठक्करने इस मामलेकी तफसील लिख भेजी थी। उन्होंने उक्त घटनासे सम्बन्धित स्थान और व्यक्तियोंके नाम इस आशंकासे नही दिये हैं कि उनके देनेसे कही वह डाक्टर उस अन्त्यज स्कूलमास्टरको और अधिक न सताये। पर मैं तो चाहता हूँ कि वे नाम प्रकाशित कर दिये जाने चाहिए। ऐसा समय भी जरूर आयेगा जब हमें दलित वर्गोंके लोगोंको और ज्यादा कष्ट और अत्याचार सहनेकी हिम्मत करनेको प्रोत्साहित करना होगा। उन्हें तो पहले ही से इतने अधिक कष्ट हैं कि कुछ और कष्ट बढ़ जायें तो वह उन्हें कुछ खास महसूस नही होगा। ऐसे अत्याचारोंके सम्बन्धमें जिनकी सच्चाईका पता नही लगाया जा सकता या जिनकी तहतक नहीं पहुँचा जा सकता, लोकमत जाग्रत नही किया जा सकता। मैं बम्बईकी मेडिकल कौंसिलके नियम नही जानता, पर अन्य स्थानोंपर ऐसे डाक्टरका नाम, जो पहले फीस लिये बिना मरीजकी चिकित्सा करनेसे इनकार करता है, कौंसिलके सदस्योंकी सूचीमें से काट दिया जाता है तथा अन्य रीतिसे भी उसके विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई की जाती है। निःसन्देह फीस तो वसूल ही करनी है, परन्तु मरीजोंकी ठीक तरहसे देखभाल करना डाक्टरका सबसे पहला कर्त्तव्य है। परन्तु यदि ऊपर बताई गई बातें ठीक हैं तो वास्तविक अमानुषिकता तो इसमें यह है कि डाक्टरने अस्पृश्योंके मुहल्लेमें जाने, मरीजको स्वयं देखने और अपने हाथसे थर्मामीटर लगानेसे इनकार किया। और यदि अस्पृश्यताका सिद्धान्त किसी भी परिस्थितिमें संसारमें कभी लागू

करना ठीक हो सकता है तो वह, अपने धन्धेको कलंकित करनेवाले इस डाक्टरके विरुद्ध निःसन्देह लागू किया जा सकता है। परन्तु मैं आशा करता हूँ कि श्री ठक्करको पत्र लिखनेवालेकी बात अतिशयोक्ति है। किन्तु यदि उसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है तो मैं आशा करता हूँ कि वह डाक्टर स्वयं आगे आयेगा और उस समाजकी सेवा करके अपनी गलतीकी भरपाई करेगा, जिसे उसने अपने अमानुषिक व्यवहारसे इस तरह अपमानित किया है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-५-१९२७

३००. उत्कलके लिए खादी

तीन महीने पहले श्रीयुत शंकरलाल बैंकर और लक्ष्मीदास पुरुषोत्तमने उड़ीसाका दौरा किया। उन्होंने दरिद्रोंके उस प्रदेशमें चल रहे खादी-कार्यकी जाँच की। और अब सेठ जमनालाल बजाज भी उस प्रान्तमें दौरा कर रहे हैं। लक्ष्मीदासकी टिप्पणियाँ 'नवजीवन' में प्रकाशित की गई हैं। जमनालालजीने अपने विचारोंका सार[1] निम्न-लिखित रूपमें भेजा है, जिसे मैं उत्कलके कार्यकर्त्ताओं और सभी खादी-प्रेमियोंके सामने अपनी सिफारिशके साथ पेश करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ५-५-१९२७

३०१. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

नन्दी
५ मई, १९२७

घनश्यामदास बिड़ला
बिड़ला हाउस
गिरगाँव
बम्बई

आपकी सफलता की कामना करता हूँ। मेरे आखिरी पत्रमें शर्तें लिखी हैं। दिन-ब-दिन ताकतवर होता जा रहा हूँ। इतवारसे रक्तचाप सामान्य है। चिन्ताका कोई कारण नहीं। ईश्वर आपपर अनुग्रह रखें।

गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८७६) से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें लोगोंकी 'अधभूखी' हालतका बयान किया गया था और उनका आर्थिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक स्तर ऊँचा उठानेके लिए हाथ-कताई तथा हाथ-बुनाईकी सिफारिश की गई थी।

३०२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

[५ मई, १९२७][1]

प्रिय सतीशबाबू,

अब मुझे मुसीबतसे बाहर निकल आया कह सकते हैं, क्योंकि रक्तचाप सामान्य हो गया है। मैं सुबह शाम हल्की सैर करता हूँ और थोड़ा बहुत लिखने-पढ़नेका काम करता हूँ।

लेकिन मैं देख रहा हूँ कि आप अब भी चिन्तामुक्त नहीं हैं और लगता है कि निखिल आपकी चिन्ताका कारण बना हुआ है। ईश्वर बच्चेपर कृपा करे।

मैं आरामकी जितनी भी जरूरत समझी जायेगी, अवश्य करूँगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५६९) की फोटो-नकलसे।

३०३. तार : सत्याग्रह आश्रमको

५ मई, १९२७

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

बार-बार पड़नेवाले [चोरोंके] छापोंको देखते हुए [आश्रमकी शालाकी] छुट्टी रद करनेकी सलाह देता हूँ। जो लोग रह सकते हैं, उन सबको आश्रममें बने रहना चाहिए। यदि जरूरत हो तो औरतोंको रात्रिके समय छात्रालयमें रखनेका प्रबन्ध करना चाहिए। मुझे रोजमर्रा का हाल भेजा जाये। मैं बिलकुल ठीक हूँ।

बापू

अंग्रेजी (एस० एन० ११७८६) की माइक्रोफिल्मसे।

१. गांधीजीका रक्तचाप सामान्य हो जानेके उल्लेखसे। देखिए पिछला शीर्षक।

३०४. पत्र : देवचन्द पारेखको

नन्दी हिल्स, मैसूर
५ मई, १९२७

भाईश्री ५ देवचन्दभाई,

खाट तो अब भी पकड़े हुए हूँ, किन्तु थोड़ा-बहुत काम कर सकता हूँ। वहाँके कामके सम्बन्धमें सोचता भी रहता हूँ।

ऐसा लगता है कि काठियावाड़के खादीके कार्यके लिए यदि नीचे लिखे अनुसार एक समिति बना दी जाये तो अच्छा होगा :

देवचन्दभाई — प्रधान

हरखचन्द
जयसुखलाल } मन्त्री

फूलचन्द, मणिलाल कोठारी, जीवरामभाई कच्छवाला, नारणदास और रामदास।

मैंने नारणदासभाईके बारेमें कुछ प्रयत्न शुरू किया है; दूसरोंसे अभी नहीं पूछा है। यदि यह आपको मंजूर हो तो इस मामलेको तुरन्त निपटा दें।

आपको पैसेकी तंगी है। मैं तो लिख[1] ही चुका था कि यदि आश्रममें पैसोंकी व्यवस्था हो सकती हो तो वह रकम भाई फूलचन्दको भेज दी जाये। किन्तु मुझे आज ही पत्र मिला है कि आश्रममें पैसे हैं ही नहीं, इसलिए वे नहीं भेज सकेंगे। यदि ले सकें तो आप वल्लभभाईसे प्रामाणिक कर्ज ले सकते हैं। किन्तु लें तभी जब आपको पैसा वापस कर सकनेका विश्वास हो। यदि मैं वहाँ होता तो पैसोंकी कोई-न-कोई व्यवस्था कर ही देता। किन्तु आजकल मैं तो लाचार हूँ।

बापूके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० ५७२०) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको", २६-४-१९२७ और "पत्र : फूलचन्द शाहको", २७-४-१९२७।

३०५. पत्र : तारिणीप्रसाद सिन्हाको

नन्दी हिल्स
६ मई, १९२७

प्रिय तारिणी,

मुझे आपका पत्र पाकर खुशी हुई। आपकी बीमारी एक लम्बी बीमारी रही। खैर, मैं आशा करता हूँ कि आप शीघ्र ही अपनी शक्ति एवं स्फूर्ति पुनः प्राप्त कर लेंगे। आपने फिरसे अपनी पढ़ाई शुरू कर दी है; मगर उसका अपने ऊपर अधिक बोझ मत डालना।

आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५६८) की फोटो-नकलसे।

३०६ पत्र : आयुर्वेदिक सम्मेलनके मंत्रीको[1]

[७ मई, १९२७ से पूर्व]

प्रिय मित्र,

अचानक बीमार पड़ जानेके कारण मैं आपके पिछले महीनेकी १७ तारीखके पत्रका उत्तर इससे पहले नहीं दे सका। आपने उस "अल्प मतवालोंकी रिपोर्ट[2]" में जो कथन उद्धृत किये हैं, और जिन्हें मेरे कथन बताया है, तथा जिसे मैंने निश्चय ही नहीं देखा है, वास्तवमें सही कथन हैं, लेकिन उन उक्तियों को प्रसंगसे अलग करके प्रस्तुत किया गया है। उस भाषणमें, जिसकी रिपोर्ट मैंने नहीं पढ़ी है और जिस भाषणसे मेरा खयाल है कि उपर्युक्त कथन आपने उद्धृत किये हैं, मैं आयुर्वेद और आजकलके वैद्योंके बीचका अन्तर बता रहा था और मेरी यह राय जरूर है कि वैद्य जिस व्यवसायका प्रतिनिधित्व करते हैं, उसके प्रति न्याय नहीं करते। परन्तु इन शब्दोंका प्रयोग किसी ऐसी प्रस्तावनाके समर्थनमें नहीं किया जाना चाहिए, जिसका अभिप्राय आयुर्वेद सम्बन्धी अनुसन्धानके लिए दी जा रही सरकारी सहायताको बन्द करा देना हो। मेरा विश्वास है कि आयुर्वेद एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें अनुसन्धानकी बड़ी आवश्यकता है। पश्चिमी चिकित्साशास्त्रके समान शोधकार्य करनेवाले छात्रोंके अभावमें आयुर्वेदमें शोधकार्य एक तरहसे बिलकुल रुक गया है। इसलिए आयुर्वेदमें

१. श्रीलंकामें।

२. आयुर्वेदिक भिषज आयोगकी रिपोर्ट।

शोधकार्यके लिए नियत परिस्थितियोंमें ऐसे ईमानदार एवं परिश्रमी लोगोंको, जिनकी अनुसन्धानमें रुचि है और जिन्होंने उपयुक्त शिक्षा प्राप्त की है, जो सहायता दी जा रही है, उसका मैं विरोध नहीं कर सकता। मुझे यह भी उल्लेख कर देना चाहिए कि जिस कथनको मेरा कथन बतलाया गया है, वह मैंने एक आयुर्वेदिक महाविद्यालय-का शिलान्यास करते हुए व्यक्त किया था। यदि मैं आयुर्वेदिक कार्यके लिए कोई सहायता देनेके विरुद्ध होता, तो मैंने कलकत्तामें आयुर्वेदिक महाविद्यालयका शिलान्यास करना, दिल्लीमें तिब्बिया कालेज खोलना और अभी हाल ही में अहमदनगरमें एक आयुर्वेदिक अस्पताल खोलना निश्चय ही अस्वीकार कर दिया होता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-५-१९२७

३०७. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

७ मई, १९२७

प्रिय भाई,

ईश्वरको धन्यवाद है कि तनाव[1] खत्म हो गया। आपको पत्र लिखते हुए खुशी होती है। आप बहुत अच्छे मुहूर्तमें जा रहे हैं। ईश्वर करे कि आपका पथ निर्विघ्न बना रहे और ईश्वर आपको आवश्यक शक्ति तथा विवेक दे।

एन्ड्रयूजका सबसे हालका पत्र साथमें है। यदि आप ठीक समझें तो मैं चाहूँगा कि आप उन्हें समुद्री तारसे सूचित कर दें कि आप शीघ्र ही उनके पास पहुँच रहे हैं। या फिर आप दो शब्द मुझे लिख दें; और चाहे तो मैं तार दे दूँगा।

वाइसरायका पत्र सचमुच ही बहुत अच्छा है।

यदि आप कभी समय निकाल सकें तो कृपया एक बार फिर [नन्दी] हिल्स पर चढ़िए।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीके कागजात (पत्र-व्यवहार सं० ४७७)।
सौजन्य : नेशनल आर्काइव्ज़ ऑफ इंडिया

१. शास्त्री द्वारा दक्षिण आफ्रिका जानेका फैसला करनेके सम्बन्धमें।

३०८. पत्र : मीराबहनको

७ मई, १९२७

चि० मीरा

तुम्हारा मधुर तार और पत्र मिला। यह तो तुम्हारा पतन हुआ।[1] लेकिन मैं घबराया नहीं हूँ। मुझे मालूम है कि तुम गिरी हो तो अवश्य ही फिर उठोगी। जब उन्नत विचारोंकी मानसिक स्थिति हमारे जीवनमें स्थायी बन जाती है, तब हमें उससे ऊपर और किसी चीजकी जरूरत नहीं रहती। इसीलिए मैं बैरोमीटरमें उतारकी खबरको सुननेके लिए तैयार था। जब आना आवश्यक समझो चली आना। इतना ही कहना है कि पूरी तरह सोचे-विचारे बिना कुछ न करना।

अब मैं लगभग अपनी स्वाभाविक चालसे टहलता हूँ। चार दिन पहले मैं जितना घूमता था, अब उससे दुगुना घूमता हूँ। प्रगति बराबर हो रही है। अब हर बार यह बात सुननेकी आशा न रखना कि मैं प्रगति कर रहा हूँ। जब भी प्रगतिमें कोई बाधा पड़ेगी, तुम्हें बता दूंगा।

भगवानके लिए अखबारी खबरोंपर भरोसा न करो। तुम्हें सीधी जानकारी मिल जाती है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२५) से।
सौजन्य : मीराबहन

३०९. पत्र : हेमप्रभादेवी दासगुप्तको

नन्दी हिल्स
शनिवार [७ मई, १९२७][2]

प्रिय भगिनी,

आपके दोनों खत मील गये हैं। अनिलके वियोगका दुःख मैं समझ सकता हुं। परंतु उसी दुःखसे आध्यात्मिक शक्ति बढ़ानी चाहिये। शोक करनेसे शक्तिका ह्रास होता है। दुःखका सदुपयोग करनेसे शक्तिमें वृद्धि होती है। सदुपयोग सेवा भावनाको बढ़ानेसे ही हो सकता है। इसलीये मेरी प्रार्थना है कि प्रत्येक क्षण सेवा-

१. मीराबहनने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया है : "बुद्धिसे समझ लेनेपर भी हृदयने मेरा साथ छोड़ दिया था।"

२. निखिलकी दुर्बलताके उल्लेखसे; देखिए "पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको", ५-५-१९२७।

कार्यमें ही दी थी जाय। अभ्यास दो प्रकारसे होता है। एक तो सद्ग्रंथके पठनसे और मननसे, दूसरा पारमार्थिक कार्य करनेके अभ्याससे। वैराग्य तो उसी चीज़का नाम है जिससे हमारा सासारिक वस्तु प्रत्ये राग कम होता है और पारमार्थिक वस्तु प्रत्ये राग बढ़ता है। वैराग्य विचारसे प्राप्त होता है, अभ्यास परिश्रमसे। इसी कारण अभ्यासको तपश्चर्या भी कहें।

निखिलका हृदय अब तक दुर्बल रहता है उसका क्या कारण डाक्टर लोग बताते हैं।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० १६४९) की फोटो-नक़लसे।

३१०. गाय बनाम भैंस

एक कोंकणवासी गो-सेवक लिखते हैं :

"गोरक्षाकी शर्तें"[1] शीर्षक लेखमें घाटकोपर गौशालाकी चर्चा करते हुए आपने लिखा था कि गोरक्षामें हमें भैंस और भैंसेकी रक्षा नहीं मिलानी चाहिए। मेरा खयाल है कि आपके इस सुझावके मूलमें यह बात रही होगी कि खेतीमें भैंसेका उपयोग नहीं होता। परन्तु कोंकणमें तो भैंसे भी बहुत काम देते हैं। वे नगरपालिकाओंकी मैलेकी गाड़ियाँ खींचते हैं; पानीके रहट भी प्रायः उन्हींसे चलाये जाते हैं, और वे हलोंमें भी जोते जाते हैं। खासकर जब पानी बहुत बरस रहा हो तथा जब खेतोंमें बहुत कीचड़ हो जाये तब बैल काम नहीं दे सकता। और कोंकणमें तो खेतोंका अधिकांश काम तभी किया जाता है जब पानी बहुत बरस रहा होता है। इसलिए कोंकणमें भैंसा उपयोगी है।

यहाँकी गायें जहाँ सामान्यतः आधा सेर दूध देती हैं, वहाँ भैंसें २॥ सेरसे पाँच सेरतक दूध देती हैं। गायें प्रयत्न करनेपर अधिक दूध दे सकती हैं; और उसमेंसे मक्खन भी अधिक निकल सकता है, किन्तु इस दृष्टिसे भैंसोंकी उपयोगिता तो स्पष्ट ही है। इसलिए क्या कोंकणमें गोरक्षाके साथ-साथ भैंसकी रक्षा भी कर्त्तव्य नहीं है? यदि इसमें दोष हो तो बतायें।

हाँ, घाटके प्रदेशकी बात जुदा है। वहाँ गर्मी अधिक होती है, खेत बड़े-बड़े होते हैं और पानी कम है। इसलिए वहाँ भैंसे काम नहीं दे सकते (क्योंकि उनके नहाने और तैरनेके लिए पानी आवश्यक होता है) परन्तु कोंकण उनके लिए उपयुक्त क्षेत्र है।

१. देखिए पृष्ठ २१३-१५।

आपकी चर्मालय तथा दुग्धालयकी योजनाएँ तो शहरोंके लिए हैं। देहातके लिए तो जानवरोंके पोषण और संवर्धन विषयक कुछ सामान्य सुझावोंकी अपेक्षा कुछ ज्यादा व्यावहारिक उपाय बतानेकी जरूरत है। मेरा सुझाव है कि प्रत्येक गाँवमें एक साँड़ रखा जाये। उसका खर्च सार्वजनिक चन्देसे दिया जाये। साँड़का उपयोग करनेवाले भी थोड़ा खर्च दें। यह कार्य हर जगह हो सकता है। इससे गायों और बैलोंकी नस्ल सुधर जायेगी। क्या आप इसी प्रकारके कुछ अन्य उपाय बतायेंगे?

सवाल ठीक है। मैंने जो कुछ लिखा उसका अर्थ यह नहीं था कि भैंसको बिलकुल छोड़ दिया जाये, वल्कि यह था कि उसे स्वराज्य दे दिया जाये। मैं यह कहना चाहता था कि गायोंको तो हमने अपने उपयोगके लिए कुटुम्बमें स्थान दे दिया है, इसलिए उनकी रक्षा करना हमारा धर्म हो गया है, किन्तु यदि हम गायोंकी तरह भैंसोंको भी पालेंगे तो न गायोंकी रक्षा कर पायेंगे, न भैंसों की।

कोंकणकी उपर्युक्त मिसालसे मेरे इस मतमें कोई फर्क नहीं पड़ता। फिलहाल जितनी भैंसे हमारे पास हैं उनका उपयोग तो करना ही होगा। अतः हम उनका उपयोग कोंकण जैसे प्रदेशमें करते रह सकते हैं।

लेकिन हमारा कर्त्तव्य तो स्पष्ट है। जहाँ हम गायोंसे अपना काम चला सकते हों वहाँ हमें भैंसोंकी नई झंझट मोल नहीं लेनी चाहिए। हमें गायके दूधका प्रचार करना चाहिए। बम्बईमें भैंसोंके प्रचारकी अथवा भैंसोंके दूधकी जरूरत नही होनी चाहिए। गायका शुद्ध दूध सस्ता मिल सके, इस बातका प्रयत्न बड़े पैमानेपर किया जाना चाहिए। गायोंकी दूध देनेकी क्षमता बहुत बढ़ाई जा सकती है और उसमें घीकी मात्रा भी बढ़ाई जा सकती है। यूरोपमें और खासकर डेन्मार्कमें इन सब बातोंकी काफी खोजबीन हुई है और उसका एक पृथक् शास्त्र ही बन गया है। वहाँकी गायें हमारी भैंसोंकी अपेक्षा कही अधिक अच्छा दूध देती हैं। वैद्योंसे सुना है कि गायके दूधमें कितने ही रोगनाशक और आरोग्य-वर्धक गुण हैं। ये गुण भैंसके दूधमें न तो होते हैं और न किसी प्रकार पैदा ही किये जा सकते हैं। धर्मज्ञ पुरुषोंके मुँहसे सुना है कि गायका दूध सात्त्विक होता है, जबकि भैंसका दूध तामसिक होता है। मैं खुद इन बातोंको नही जानता। हाँ, खोज कर रहा हूँ। अभी तो पाठकोंके सामने सुनी हुई बातें ही पेश कर रहा हूँ। यह सब लिखनेका उद्देश्य यही दिखाना है कि हमें भैंसके दूधसे जो कुछ मिलता है वह सब बल्कि उससे भी अधिक गायके दूधसे मिलता है और उसे और भी बढ़ाया जा सकता है। यदि यह बात ठीक हो तो मनुष्यके हितकी दृष्टिसे मनुष्यको भैंसके पालनकी उपाधि मोल लेनेकी कोई जरूरत नही है। और भैंसके हितकी दृष्टिसे विचार करें तो हमें उसे बांध कर गुलामोमें क्यों रखना चाहिए? अथवा इसी बातको सौम्य शब्दोंमें कहना चाहे तो उससे हम सेवा क्यों लें?

धर्मकी दृष्टिसे और सारे समाजके लाभकी दृष्टिसे की जा रही इस चर्चामें इस बातका विचार नहीं किया जा सकता कि कुछ लोगोंको भैंससे आर्थिक लाभ

होता है। केवल अपने लाभकी बात सोचने और दूसरोंके हिताहितकी परवाह न करनेकी इस वृत्तिके कारण ही हमारा अर्थात् देशका और धर्मका क्षय हुआ है। हम एक शक्तिशाली राष्ट्र तभी हो सकते हैं जब हम देशके लाभमें ही अपना लाभ माननेकी वृत्तिको पुष्ट करें। अगर हम इतना भी नहीं कर सकते तो धर्मकी बात करना व्यर्थ है। राष्ट्रीय भावनामें देशका लाभ मुख्य है और धर्मवृत्तिमें सारे संसारका —चींटीसे लेकर सारे प्राणि जगतका लाभ मुख्य है।

यह पढ़नेके बाद पाठक इस अंकमें अन्यत्र दी हुई तालिकाके आँकड़ोंपर विचार करें।

यह तालिका सत्याग्रहाश्रमके जानवरोंके खर्च और उनसे होनेवाली आयकी है। उसमें दिये गये नाम गायोंके हैं। तालिका भेजते हुए व्यवस्थापक लिखते हैं :

> ऐसी कोई पक्की बात नहीं है कि गायकी अपेक्षा भैंससे अधिक आय होती ही है। इस तालिकामें दी हुई कितनी ही गायोंसे लाभ मिलता है; कुछ ऐसी हैं जो जितना खाती है उतना ही देती है और कुछसे हानि है। जिनसे आर्थिक हानि हो रही है उन गायोंसे बच्चे लेना अब बन्द कर देना पड़ेगा। उनसे कोई हल्का-सा काम लेना शुरू करनेका विचार है। एक वन्ध्या गायसे तो काम लेना शुरू भी कर दिया गया है। भैंसा बहुत कम कीमतमें बिकता है। किन्तु कई बछड़े तो सौ-सौ रुपये कीमतके निकले हैं। इनमें से दो-तीन तो बैलगाड़ीमें तेज दौड़ते हैं। फलस्वरूप अब हमें घोड़ा-गाड़ीकी जरूरत नहीं रह गई है।

आश्रममें तो अब यह निश्चय कर लिया गया है कि भैंसे न बढ़ाई जायें। इस तालिकाका उद्देश्य यह बताना नहीं है कि इससे कोई बड़े-बड़े अनुमान निकाले जा सकते हैं, बल्कि यह बताना है कि यदि गायको अच्छी खुराक दी जाये तो वह भैंसके बराबर दूध दे सकती है और उसपर खर्च भी ज्यादा नहीं आता। फिर यह तो स्वयंसिद्ध है कि बछड़ेका उपयोग भैंसेसे कहीं अधिक है।

आश्रममें जो अन्य अनेक प्रयोग किये जा रहे हैं, मैं उनको समय-समयपर 'नवजीवन'में देनेकी उम्मीद करता हूँ।

कोंकणस्थ मित्रकी यह शंका ठीक नहीं कि दुग्धालय और चर्मालय शहरोंके लिए ही उपयोगी हैं, देहातके लिए नहीं। इस समय देहातमें गायें बड़ी खर्चीली हो गई हैं। उनके दूधका हिसाब रखना, उसकी नस्ल सुधारना, दुधारू गायोंके दूधको बढ़ाने और अच्छा बनानेकी कोशिश करना शहरोंकी तरह देहातके लिए भी परमावश्यक है। मरे हुए जानवरोंकी खाल निकालकर उसको उसी समय पकाकर उसका अच्छा उपयोग करनेकी आवश्यकता तो देहातमें ही ज्यादा है और यह काम चर्मालयका है।

दुःखकी बात तो यह है कि आज हमें इस शास्त्रको पहले शहरोंमें पूर्णताको पहुँचाकर फिर देहातमें ले जाना पड रहा है, क्योंकि देहातमें बड़े पैमानेपर प्रयोग नहीं किये जा सकते। पशुओंका बड़ी संख्यामें वध तो शहरोंमें ही होता है। इसलिए

यदि शहरोंमें चर्मालय और दुग्धालयके प्रयोग धार्मिक तथा सामाजिक दृष्टिसे हों तो उनका लाभ सभी गाँवोंको अनायास मिल जाये और हिन्दुस्तानका यह पशु-धन, जो हमारे अज्ञानके कारण आज व्यर्थ नष्ट हो रहा है, विनाशसे बच जाये और मनुष्य तथा पशु दोनों सुखी हों।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-५-१९२७

३११. लगनसे क्या नहीं हो सकता?

पश्चिमी देशोंमें कई बार लोग चौबीस घंटे 'क्लब स्विंगिंग' यानी मुगदर घुमानेका प्रदर्शन करते हैं। इनका हेतु यह दिखाना होता है कि मनुष्यमें कितनी सहन-शक्ति है। हजारों प्रेक्षक पैसा देकर उन्हें देखनेके लिए जाते हैं, और नाटक-शालाएँ भर जाती हैं। इसमें मुझे सन्देह है कि ऐसे प्रदर्शनोंसे थोड़ा-बहुत भी लाभ होता है।

परन्तु पाठकोंको याद होगा कि कुछ-कुछ इसी ढंगका प्रयोग सत्याग्रहाश्रममें राष्ट्रीय सप्ताहके समय किया गया था। अलबत्ता, उसका हेतु भिन्न था; उसका आयोजन धार्मिक हेतुसे किया गया था। कई युवकोंने अकेले ही चौबीस घंटेतक जागरण करके आग्रहपूर्वक चरखा चलाया। उनमें से सबसे अधिक सूत कातनेवाले युवकका पत्र पढ़ने योग्य है, इसलिए नीचे देता हूँ:[1]

विद्यार्थियोंकी पवित्र लगनको सराहनेवालों तथा चरखा-यज्ञमें श्रद्धा रखनेवाले पुरुषोंको यह पत्र पढ़कर जरूर हर्ष होगा। मैं चाहूँगा कि जो विद्यार्थी इस पत्रको पढ़ें, वे इससे कुछ सीखें। खेलोंसे रुचि होना अच्छी बात है। किन्तु उतनी ही रुचि और लगन परोपकारके कार्यमें हो तो और भी अच्छा है। वे इस उदाहरणसे यह भी सीखें कि जो अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करते हैं और ब्रह्मचर्यका पालन करते हैं उनके लिए ऊपर लिखे अनुसार चौबीस घंटेका अविश्रान्त परिश्रम करना भी साध्य है। धन कमानेके लिए विद्याका उपयोग करना मानो उसका दुरुपयोग करना है। विद्या तो तभी सार्थक होती है जब उसका उपयोग सेवाके लिए किया जाता है। फिर, विद्यार्थीके लिए श्रद्धाकी भी जरूरत है। भारतका दारिद्र्य चरखे जैसी चीजसे दूर हो सकता है, इसे समझनेमें बुद्धि जरूर कुछ मदद कर सकती है; परन्तु चरखेके प्रति उसके प्रेमको टिकाये रखनेका काम तो आखिर श्रद्धा ही कर सकती है। मैं तो विद्यार्थियोंके विषयमें इस बातको प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि श्रद्धाके अभावमें उनकी विद्या निरर्थक हो रही है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-५-१९२७

१. यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है।

३१२. पत्र : मीराबहनको

रविवार [८ मई, १९२७][1]

दुबारा नही पढा

चि० मीरा,

आशा है कि इन दिनोंके मेरे लिखे हुए तमाम पत्र तुम्हें मिलते रहे होंगे। मैं औसतन शायद एक पत्र हर दूसरे रोज लिखता रहा हूँ।

तुम्हारा बादका पत्र मिल गया है। मैं देखता हूँ कि तुम्हें अपना मानसिक सन्तुलन फिरसे प्राप्त करनेमें कुछ समय लगेगा। जबतक तुममें लचीलापन बना रहता है, तबतक मुझे उतार-चढावकी चिन्ता नही है। मेरी अपनी राय यह है कि तुम्हारा मेरे पास, जहाँ भी मैं रहूँ, आना उसी वक्त उचित होगा, जब तुम अपना निश्चित कार्य पूरा कर लो। किसी सामान्य आदमीको अपने ही द्वारा निर्धारित कार्यक्रम नही छोड़ना चाहिए। लेकिन अगर तुम अत्यधिक भावुक हो उठो और इससे तुम्हारे स्नायुओं पर दबाव पड़ता रहे, तो तुम्हें अपनी पढ़ाई समाप्त न होने पर भी आ जाना चाहिए।

तुम अपनी पढ़ाई पूरी कर लो, मेरी यह चिन्ता स्वाभाविक है। मैं यह मानना नही चाहूँगा कि यह काम तुम्हारे बूतेका नही है। लेकिन तुम्हारी पढ़ाई या और किसी तैयारीकी अपेक्षा तुम्हारा स्वास्थ्य मेरे लिए अधिक कीमती है।

मेरी तन्दुरुस्तीके खयालसे तुम्हे मेरे पास आनेका विचार हरगिज नही करना चाहिए, क्योंकि वह अच्छी है और तुम्हारे आ जानेसे भी मेरी जैसी देखभाल हो रही है उससे बेहतर देखभाल नही हो सकती। अगर मुझे तुम्हारी सेवाकी जरूरत होगी, तो मैं तुम्हें तार दे दूँगा। लेकिन ऐसा होगा नही; क्योंकि चाहे जिससे सेवा ले लेनेकी मेरी आदत पड़ गई है और मैं अपनी जरूरतके अनुसार नये सेवक तैयार कर लेता हूँ। यहाँ मेरी आवश्यकतासे अधिक सेवक हैं। इसलिए यदि तुम किसी तरहकी निजी सेवा करनेकी आशासे यहाँ आओगी, तो तुम अपने आपको बेकार महसूस करोगी और उबासियाँ लेती रहोगी।

अब वैयक्तिक सम्पर्ककी जरूरतकी बात लें। मेरा अपना मत यह है कि वह शुरूकी अवस्थाओंमें जरूरी होता है और बादमें वह सम्पर्क मिल-जुलकर काम करनेसे होता है। तुम मेरे कामको अपना ही समझकर करनेसे रोज मेरे सम्पर्कमें आती हो। और वह सम्पर्क मेरे इस भौतिक शरीरके नाशके बाद भी रह सकता है, रहना चाहिए और रहेगा। मैं जीवित रहूँ या मर जाऊँ, तो भी तुम मेरे सम्पर्कमें हो और रहोगी। और मैं तुम्हें ऐसी ही बनाना चाहता हूँ। तुम मेरे पास मेरी

१. बापूज़ लैटर्स टु मीरासे।

खातिर नही, बल्कि मेरे उन आदर्शोंकी खातिर, जिस हदतक मैं उनका पालन करता हूँ, आई हो। तुम अब तो जान गई हो कि मैंने जो आदर्श रखे हैं, उनपर मैं कहाँतक चलता हूँ। अब यह तुम्हारा काम है कि उन आदर्शोंपर मनन करो और जितनी पूर्णतासे उनका पालन करनेकी शक्ति ईश्वरने मुझे दी है तुम उनका पालन उससे अधिक पूर्णतासे करो। जो भी स्त्री या पुरुष ऐसा करेगा वही मेरा प्रथम उत्तराधिकारी और प्रतिनिधि होगा। मैं चाहता हूँ कि तुम प्रथम रहो। इसका और नही तो यही कारण है कि तुमने दूरसे मेरा अध्ययन करके मुझे अपनाया है। काम करते हुए भगवान हमें निकट ला दे तो अच्छा ही है, लेकिन समान उद्देश्यकी पूर्तिमें वह हमें अलग-अलग रखे तो भी ठीक है।

मगर यह तो पूर्ण बननेकी सलाह हुई। इसे सुन और समझ लेनेके बाद तुम्हें स्वतन्त्रता है कि जो चाहो सो करो। अगर तुम्हारा मन बसमें न रहे तो जरूर आ जाओ और यह न समझो कि मैं नाखुश हो जाऊँगा। मै नाराज तब होऊँगा, जब तुम अपने प्रति हिंसा करोगी और बीमार पड़ोगी।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२६) से।
सौजन्य : मीराबहन

३१३. पत्र : गंगारामको

नन्दी हिल्स (मैसूर राज्य)
८ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मुझे बहुत देरसे मिला और तब मेरे पास इतना समय नही बचा था कि मै उत्तर देता और वह आपके पास समयसे पहुँच जाता। बम्बईकी यात्रा असम्भव थी; क्योंकि डाक्टरोंका आदेश आपके आदेशके समान ही अनुल्लंघनीय था। परन्तु चूँकि समयकी दृष्टिसे डाक्टरी आदेश पहले मिल चुका था, इसलिए उसका पालन अनिवार्य था।

आपके मुझे सदा पढ़ाते रहनेकी बातके प्रति अब मै वास्तवमें निराश होने लगा हूँ। आपने वायदा किया था कि यदि मै आपको एक मानचित्र और अतीतकी सफलताओं एवं असफलताओंका ब्यौरा भेज दूँ, तो आप मेरे आश्रमको स्वर्गमें बदल देंगे। मैंने आपको सारी सूचना दे दी है। मैंने आपके पास अपना सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति भेजा। परन्तु आश्रमस्थल अभी उस जादूके स्पर्शकी प्रतीक्षा कर रहा है। आपके द्वारा दी जा सकनेवाली जनसाधारणकी गरीबीके सम्बन्धमें कोई भी सूचना, आपके व्यक्तिगत अनुभवोंपर आधारित तो हो नहीं सकती। क्योंकि आप मुझे जो भी कुछ

बता सकते हैं, वह सब दूसरोंसे सुनी सुनाई बातें होंगी। आपने गरीबीका स्वाद नहीं जाना है। एक लखपति, एक सफल इन्जीनियर और एक व्यापारी उसे क्या सिखा सकता है, जिसने गरीबीका स्वाद और कड़ुवाहट दोनोंका अनुभव किया है और जो गरीबीके सम्बन्धमें जन साधारणके सीधे सम्पर्कमें रहा है। तीसरी बात—परन्तु अभी मुझे तीसरी बातके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहना है।

आपने मेरे स्वास्थ्यका सम्बन्ध वायदेको, जो मैंने आपसे या किसी औरसे कभी नहीं किया, तोड़नेके साथ जोड़ा है; यह आपके अनुरूप ही है—उसी तरह जैसे कि आपने मुझ जैसे गरीब आदमीको सब तरहके सब्जबाग दिखाये थे और असंख्य वादे किये थे। मुझे ऐसा कुछ याद नहीं कि मैंने आपसे यह वायदा किया हो कि मैं राजनीतिमें कभी भाग नहीं लूँगा। और वैसे, अभीतक मैंने राजनीतिमें भाग नहीं लिया है। परन्तु मैं यह प्रतिज्ञा अवश्य करता हूँ कि यदि अनुकूल अवसर आये, तो मैं राजनीतिमें कूदनेमें संकोच नहीं करूँगा। इस वक्त तो मैं चरखेके पास बैठे रहने एवं ईश्वरकी स्तुति करते रहनेमें ही सन्तोष मानता हूँ; जिससे ईश्वर मुझे इतनी शक्ति देता है कि मैं भारतके उस जनसाधारणकी थोड़ी-बहुत सेवा कर सकूँ, जिसके शोषणमें आप इतना प्रमुख हिस्सा ले रहे हैं—यह हिस्सा चाहे आप अनजाने ही लेते हों, परन्तु ले तो रहे हैं।

जबतक आप पश्चिममें है, मैं आपसे इस पत्रके उत्तरकी आशा नहीं करता। जब आप भारत आयें तो आपके वायदोंकी अगली किश्त पाकर मुझे प्रसन्नता होगी। इतना मैं जानता ही हूँ कि आप पहलेकी तरह उन्हें भी तोड़ते जायेंगे और उस भेड़ियेकी तरह, जो मेमनेको गालियाँ देने लगा था, मेरे अभिमुख होकर मुझपर ही वे वायदे, जो मैंने कभी नहीं किये होंगे, तोड़नेका आरोप लगायेंगे। मैं ये सारे अपशब्द प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लूँगा, क्योंकि आपको सारे विश्वके ज्ञानका दर्प भले ही हो, मैं आपके मानसिक सद्गुणोंका बहुत आदर करता हूँ।

हृदयसे आपका,

सर गंगाराम, नाइट, सी० आई० ई०, एम० वी० सी०,
द्वारा सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२५७७) की फोटो-नकलसे।

३१४. पत्र: रेवरेंड जॉन हेन्स होम्सको

आश्रम
साबरमती[1]
८ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपके ४ अप्रैलके पत्रके लिए धन्यवाद।

मैं ध्यान रखूंगा कि जब अन्तरिम खण्ड प्रकाशित हो जाता है तब भारतसे बाहरके आदेश प्राप्त करनेके कोई प्रयत्न न किये जायें।

मैं कुछ कह नहीं सकता कि 'आत्मकथा' कब समाप्त होगी। मुझे दिन-प्रतिदिनका हाल लिखना है। मैंने कोई निश्चित योजना नहीं बनाई है। उस सप्ताह लिखे जानेवाले परिच्छेदको लिखनेके लिए नियत समयमें अतीतकी जो भी घटनाएँ मेरे मनमें आती जाती हैं, मैं उन्हें प्रति सप्ताह लिखता हूँ। आजकल मैं १९०३–४ की घटनाओंका ब्यौरा दे रहा हूँ और मुझे १९१४ के बीच तकके दक्षिण आफ्रिकाके संघर्षमय कालका और भारतके भी वैसे ही संघर्षमय १२ सालोंका ब्यौरा इसमें पूरा करना है। इसलिए यदि इन परिच्छेदोंकी अमेरिका या यूरोपमें सचमुच कोई माँग हो तो उन्हें यहाँकी तरह खण्डोंमें प्रकाशित करना ठीक रहेगा। यदि मैकमिलन कम्पनीका 'आत्मकथा' को किश्तोंमें प्रकाशित करनेका विचार न हो, तो बेशक ऐसा मानकर कि पश्चिममें इन परिच्छेदोंको पढ़नेकी लालसा किसीकी प्रेरणावश नहीं, अपितु स्वाभाविक है, भारतके बाहर इन खण्डोंके विक्रयको रोक पाना असम्भव होगा।

हृदयसे आपका,

रेवरेंड जॉन हेन्स होम्स
१२, पार्क ऐवेन्यू और ३४वीं स्ट्रीट
न्यूयार्क शहर (यू० एस० ए०)

अंग्रेजी (एस० एन० १३९७१) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।

३१५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

नन्दी

८ मई, १९२७

उनके बिना काम चला लेनेका तुम्हारा विचार, यदि इससे तुम्हारे स्वास्थ्यको हानि न पहुँचती हो तो, ठीक ही है। स्वास्थ्यमें इतना सुधार हुआ है, इसे तो भगवान्‌का उपकार ही मानना होगा। किन्तु यदि कभी किसीकी मददकी जरूरत महसूस हो तो मुझे लिखनेमें संकोच मत करना।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

३१६. पत्र : मीराबहनको

सोमवार [९ मई, १९२७][1]

चि० मीरा,

मुझे [तुम्हारे] दो पत्र फिर मिले हैं। यह क्या बात है कि अलग-अलग तारीखके और अलग-अलग लिफाफोंमें रखे हुए पत्र एक ही दिन मिलते हैं?

मुझे आज और कुछ नहीं कहना है। मुझे खुशी है कि तुमने अपना मानसिक संतुलन फिर पूरी तरह प्राप्त कर लिया है।

अनुवादके सम्बन्धमें मेरा विचार यह है कि तुम पहले उसे बिना किसी अनुवादसे मिलाये करो और फिर अपनी कठिनाइयाँ दूर करनेके लिए अंग्रेजी पाठको देखो। आत्मविश्वासकी कमी होना तुम्हारे लिए ठीक है, किन्तु मुझे कोई सन्देह नहीं है और मैं यह नहीं चाहता कि तुम कोषके अतिरिक्त किसी अन्य पुस्तककी बार-बार सहायता लेकर अपनी मौलिकता गँवा बैठो। जो अंश तुम्हारी समझमें न आयें तुम उनपर चिह्न लगा दो और बादमें जैसा मैं 'गीता' के सम्बन्धमें कर रहा हूँ, उन्हें अन्य अनुवादोंसे मिला लो।

वालुंजकर और गंगुबाई क्यों आये हैं? उन्हें मेरा स्मरण दिलाना। तुम्हारी खातिर मुझे उनके वहाँ होनेकी खुशी है।

सस्नेह,

तुम्हारा,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२७) से।

सौजन्य : मीराबहन

१. बापूज लैटर्स टु मीरासे।

३१७. पत्र : शापुरजी सकलातवालाको

नन्दी हिल्स, (मैसूर राज्य)
१० मई, १९२७

प्रिय मित्र,

श्रीमती अनुसूयाबाईने अपने आपही आपका तथा गुलजारीलाल,[1] देसाई और उनके नाम संयुक्त रूपसे लिखा गया आपका पत्र मेरे पास भेजे हैं। मैंने उन दोनों पत्रोंको ध्यानपूर्वक पढ़ा है। मुझे आपका पत्र भी मिला था। मैं उसका उत्तर पहले नहीं दे सका, क्योंकि मेरे पास आपका पता नहीं था।

जैसे ही मुझे अनुसूयाबाईका पत्र मिला, मैंने मोतीलालजीसे सम्पर्क स्थापित किया। मैं रोज उनका उत्तर पानेकी प्रतीक्षा करता हूँ। जैसे ही मुझे उनका उत्तर मिलेगा, आपको सूचना मिल जायेगी। आपको मुझपर जो विश्वास है, उसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। यदि मैं आपकी कोई व्यक्तिगत सेवा कर सकूँ, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। किन्तु मुझे खेद है कि मेरी सेवा करनेकी इच्छा एवं क्षमताकी सीमा इतनी ही हो सकती है।

जहाँतक हमारे आदर्शोंका सम्बन्ध है, हम एक दूसरेसे भिन्न हैं।[2] चूँकि अनुसूयाबाई, शंकरलाल बैंकर एवं गुलजारीलाल तथा देसाई पूर्णतया स्वतन्त्र कार्यकर्त्ता हैं, उन्होंने अपनी श्रम-नीतिके निर्धारण एवं प्रशासनमें मेरे दिशा-निर्देशको स्वीकार करनेमें स्वतन्त्रता बरती है, इसलिए श्रमिकोंके सम्बन्धमें अहमदाबादमें जो-कुछ हो रहा है, उसके विषयमें मुझे अपना उत्तरदायित्व अवश्य स्वीकार करना चाहिए। मैंने निश्चय ही उन्हें यह सलाह दी है कि जबतक अहमदाबादके मजदूर उनके नेतृत्वको स्वीकार करते हैं, उनको भारतके अन्य श्रम-आन्दोलनोंसे दूर रखा जाए। मेरी युक्ति अत्यन्त सरल है। भारतमें श्रमिकवर्ग अब भी अत्यन्त असंगठित है। जब राष्ट्र-नीति या श्रमिकोंके अपने सामूहिक हितसे भी सम्बन्धित कोई बात होती है, तो भी मजदूर लोग अपने दिमागसे काम नहीं लेते। भारतके विभिन्न भागोंमें मजदूरोंके सामाजिक तथा अन्य किसी प्रकारके पारस्परिक सम्बन्ध नहीं हैं। जहाँ कहीं ऐसे सम्बन्ध हैं भी वे प्रान्तीय अथवा एक ही तरहके जातीय आधारपर है। मजदूरोंके पारस्परिक सम्बन्धको समझदारीसे निर्देशित नहीं किया गया है। बहुतसे स्थानोंपर यह सम्बन्ध स्वार्थी एवं बेहद बेईमान लोगों द्वारा निर्देशित है। प्रान्तके मजदूर नेताओंमें परस्पर कोई सम्पर्क नहीं है। उपनेताओंमें कोई भी अनुशासन नहीं है और वे सब अपने प्रान्तोंके प्रधान

१. गुलजारीलाल नन्दा।

२. सकलातवालाकी राय थी कि सब नेताओंकी शक्तिका उपयोग देश-भरमें यथाशीघ्र श्रम एवं औद्योगिक संस्थाओंको खड़ा करनेकी दिशामें होना चाहिए।

नेताओंका समान रूपसे आज्ञापालन भी नहीं करते। विभिन्न प्रान्तोंके नेता एक नीतिका अनुसरण नहीं करते। इन परिस्थितियोंमें अखिल भारतीय संघका अस्तित्व केवल कागजोंमें ही सम्भव है। इसलिए मैं यह समझता हूँ कि अहमदाबादके लिए अपने आपको इस संघसे सम्बन्धित मानना घातक सिद्ध होगा। मेरा अपना विश्वास है कि अहमदाबाद इससे दूर रहकर या जैसा कि मैं इसे कहता हूँ आत्मसंयमसे काम लेकर भारतके सभी मजदूरोंकी सेवा कर रहा है। यदि यह स्वयंको निर्दोष बनानेमें सफल हो सकता है तो वह निश्चितरूपसे शेष भारतके लिए आदर्श होगा और उसकी सफलताका व्यापक प्रभाव होगा। परन्तु मुझे यह स्वीकार करनेमें कोई झिझक नहीं है कि अभी निकट भविष्यमें सफलताकी कोई आशा नहीं है। कार्यकर्त्ताओंकी शक्तिकी सदा सिर उठाती रहनेवाली विध्वंसक शक्तियोंसे संघर्ष करनेमें बुरी तरह कसौटी होती रहती है? हिन्दू-मुसलमानोंके बीच तनाव है एवं हिन्दुओंमें ही छुआछूतका प्रश्न है। इसमें मजदूरोंके बीच व्याप्त महान अज्ञान और स्वार्थको भी जोड़ दें तो यह मेरे लिए आश्चर्यकी बात है कि अहमदाबादने गत १२ वर्षोंके सुसंगठित अस्तित्वके दौरान इतनी उन्नति की है। ऐसी हालतमें यदि अहमदाबाद अलग रहता है तो स्वार्थवश नहीं अपितु सारे श्रमिक वर्गके हितके लिए।

नीतिके सम्बन्धमें भी एक शब्द कहना है। यह पूँजीपतियोंके विरोधमें नहीं है। अब धारणा यह है कि मजदूरोंके लिए पूँजीसे उचित भाग ले लिया जाए। यह कार्य पूँजीको हानि पहुँचाए बिना मजदूरों से ही सुधारकी भावना द्वारा एवं उनकी आत्मचेतना द्वारा किया जाए। और इसमें श्रमिक वर्गसे इतर नेताओंकी चतुराई एवं दाँव-पेंचकी कलाका उपयोग न किया जाए; बल्कि श्रमिकोंको इस प्रकार शिक्षित किया जाये कि वे अपने नेतृत्वमें स्वावलम्वी एवं आत्मनिर्भर संघका निर्माण एवं विकास कर सकें। इसका प्रत्यक्ष ध्येय राजनीतिक तो लेशमात्र भी नहीं है। इसका स्पष्ट उद्देश्य है, आन्तरिक सुधार एवं आन्तरिक शक्तिका विकास। यदि कभी यह विकास पूर्णताको प्राप्त हो जाए तो उसका परोक्ष परिणाम सहज ही में आशातीत राजनीतिक महत्त्वका होगा। इसलिए मेरा मजदूरोंका शोषण करने अथवा किसी स्पष्ट राजनीतिक उद्देश्यके लिए उनका संगठन करनेका रत्तीभर भी विचार नहीं है। जब यह संगठन स्वतन्त्र इकाईके रूपमें स्थिर हो जायेगा तब यह अपने आपमें प्राथमिक महत्त्वकी राजनीतिक शक्ति बन जायेगा। मेरे विचारमें मजदूरोंको राजनीतिज्ञोंके दाँव-पेचके मोहरे कभी नहीं बनना चाहिए। केवल अपने बलबूतेपर कार्यक्षेत्रमें प्रभाव जमाना चाहिए। यह सब कुछ केवल तभी हो सकता है जब मैं अहमदाबादके कार्यकर्त्ताओंके समझदारीसे युक्त एवं स्वेच्छासे अर्पित सहयोगको प्राप्त कर सकूँ, और अन्तमें हमारा यह सामूहिक प्रयत्न सफल हो जाए। यह मेरा स्वप्न है। मैं इसे हृदयमें संजोये हुए हूँ, क्योंकि इससे मुझे जितनी चाहिए उतनी सान्त्वना मिल जाती है। आप इस बातको स्वीकार करेंगे कि यह नीति, जिसकी रूपरेखा मैंने तैयार की है, मेरे अहिंसापर आधारित अटूट विश्वासका प्रत्यक्ष परिणाम है। यह साराका सारा विचार भ्रम हो सकता है, परन्तु जबतक मैं इसे भ्रमरूपमें न देखकर केवल जीवनदायनी शक्तिके रूपमें देखता हूँ, तबतक

यह मेरे लिए इतना ही वास्तविक है जितना कि यह जीवन। अब आप समझ गए होंगे कि आपके सुझावके अनुसार यदि मैं समर्थ होऊँ तो भी स्वयं इकट्ठे किए धनको विभाजित करनेका आपका अनुरोध क्यों स्वीकार नहीं कर सकता। वैसे मैं आपको यह बता दूं कि मुझमें यह क्षमता भी नहीं है। धन-संग्रह खादी-कार्यके लिए किया गया है और यदि मैं इस धनका कोई अन्य उपयोग करूँ, तो यह मेरे द्वारा पराये धनका दण्डनीय दुरुपयोग होगा।

इस पत्रसे आपको खुशी नहीं होगी। यदि ऐसा हो तो मुझे इसका दुःख होगा। परन्तु मैं आपको सत्यकी खोजमें अपना सहयोगी समझता हूँ और यदि मैंने आपको ठीक तरहसे समझा है, तो इसमें मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि मेरा पूर्ण एवं केवल सत्य कहना आपके लिए अत्यधिक प्रसन्नताका विषय न हो सके। हम सभीका अपनी धारणाओंमें मतैक्य नहीं हो सकता, परन्तु अपने साथियोंके कार्यों एवं धारणाओंके प्रति हम सब वही सम्मान जरूर दिखा सकते हैं, जिसकी अपने कार्यों एवं धारणाओंके प्रति दूसरोंसे आशा रखते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२४९१) की फोटो-नकलसे।

३१८. पत्र : ईजाबेल बमलेटको

आश्रम
साबरमती[1]
१० मई, १९२७

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला — उसके लिए धन्यवाद।

मेरे लिए जीवनकी समस्या इतनी सरल नहीं है जैसी कि आपको लगती है। मुझे विश्वास है कि आप यह नहीं चाहेंगी कि अपने निर्णयोंके सम्बन्धमें मुझे दलीलें देनी पड़ें। आप ईश्वरके मार्ग-दर्शनपर विश्वास करती हैं। मेरा भी ऐसा ही विश्वास है। ईश्वर जैसा मार्ग-दर्शन करेगा, मैं वैसा ही चलूंगा।

यदि आप चाहें तो मैं बिना आपका नाम दिए आपके पत्रकी मुख्य विषय-वस्तुको 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंमें एक लेखके तौरपर[2] मूल रूपमें दे दूं। 'यंग इंडिया'का

१. स्थायी पता।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", १२-५-१९२७का उपशीर्षक "अत्यन्त मितव्ययी"।

मैं स्वयं सम्पादन करता हूँ। मुझे आशा है कि इसमें आपको कोई आपत्ति नहीं होगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती ई० बमलेट
द्वारा इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया
कलकत्ता

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४४४३) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : श्रीमती कार्लाइल बमलेट

३१९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

नन्दी दुर्ग
मौनवार, वैशाख सुदी ९ [१० मई, १९२७][1]

बहनो,

चोरोंके बारेमें तुम्हारा विचार ठीक लगता है। अभी तो इतना ही काफी है कि तुम यह भूल जानेकी कोशिश करो कि तुम अबला हो। इस बारेमें मैंने जो लिखा है उसका कोई यह अर्थ तो भूलसे भी न करे कि पुरुषोंको अपना स्त्री-रक्षाका धर्म भूल जाना है। स्त्री अपना अधिकार प्राप्त करनेकी कोशिश करे, उससे यदि पुरुष यह मान ले कि अब वह होशियार हो गई है और बैठा रहे, तो उसकी गिनती कायरों और निर्लज्जोंमें होगी। वह कायर माना जायेगा। उसीने स्त्रीको पराधीन रखा है, इसलिए उसकी रक्षाका काम उसे करना ही है। आश्रममें हम पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही सावधान बनने और एक दूसरेकी स्वतन्त्रताका विकास करनेकी कोशिश कर रहे हैं। मगर वांछित स्थिति प्राप्त हो, तबकी बात तबसे रही। इसलिए तुम्हें जाग्रत करने और प्रोत्साहन देनेके लिए मैं जो पत्र लिखता हूँ वह एक चीज है; और पुरुषोंका तुम्हारे प्रति कर्त्तव्य दूसरी चीज है। इसलिए जबतक एक भी पुरुष आश्रममें जिन्दा है, तबतक बहनें अपनेको सुरक्षित ही समझें।

तुम्हारे पत्रमें सूरजबहनके बारेमें कोई समाचार नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६४८) की फोटो-नकलसे।

१. आश्रममें चोरोंके आनेके उल्लेखसे।

३२०. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

नन्दी हिल्स, मैसूर
वैशाख सुदी १० [११ मई, १९२७][1]

चि० मणिलाल और चि० सुशीला,

तुम्हारा पत्र तो मुझे नही मिला, पर रामदासको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढा है। रामदास यद तुम्हारा पत्र भेजना भूल गया।

तुम दोनोंकी गाड़ी ठीक चल रही है, इससे मुझे सन्तोष हुआ। मैं अहर्निश यही कामना करता हूँ कि तुम दोनों एक-दूसरेको आगे बढ़ानेमें सहायक होओ।

मेरी तबीयत सुधर रही है। मैंने तुम्हें पहले भी लिखा था कि तुम्हारी इच्छाके अनुसार तुम्हें तार भेजा तो था पर तुम्हारा स्टीमर बन्दरगाहसे चल चुका था। 'गीता' के श्लोक तुम्हें नियमपूर्वक भेजे जा रहे हैं। उनका बार-बार मनन करना।

श्रीनिवास शास्त्री अब वहाँ कुछ दिनोंमें पहुँच जायेंगे। उनसे मिलते रहना और वे जो मदद माँगें, देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

लगता है इस प्रदेशमें अभी दो-तीन मास रहना पड़ेगा। यदि सीधे पत्र लिखना चाहो तो बंगलोर भेजना। इस पहाड़से जून महीनेमें नीचे उतर आना पड़ेगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११३२) से।
सौजन्य : सुशीलाबहन गांधी

३२१. पत्र : फूलचन्द शाहको

बुधवार, ११ मई, १९२७

तुम्हारा पत्र मिला। गोंडलमें समाचारपत्रोंकी प्रवेश-बन्दीके खिलाफ गोंडलसे बाहरके लोग सत्याग्रह करें, यह सत्याग्रह नही कहलायेगा। गोंडलमें गोंडलसे बाहरके लोग तभी सत्याग्रह कर सकते हैं जब गोंडलकी समस्या सारी देशी रियासतोंकी समान समस्या हो और गोंडलमें विजय होनेसे सभी रियासतोंमें सुधार हो सके। और समाचारपत्रोंपर लगी हुई रोकको हटानेके लिए सत्याग्रह करना तो चमड़ेकी डोरीके लिए भैंस मारने[2] या गाजर खानेके लिए तो शास्त्र-वचनका प्रमाण देने और ऊँट यों

१. वर्षका निर्धारण पाठके आधारपर किया गया है।
२. अर्थात् किसी छोटी चीजके लिए बहुत बड़ी कीमत चुकाना।

ही निगल जानेके बराबर है। गोंडलवासी ही वहाँ सत्याग्रह करे, इसके लिए भी कारण इससे अधिक सबल होना चाहिए।

वढ़वानके कुएँका मामला इससे कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण है पर उसे हाथमें लेनेसे पहले शालाके नष्ट होनेकी हानि सहनेके लिए तैयार रहना चाहिए। तुम्हें उससे पहले कुछ दूसरे उपाय करने चाहिए, बातचीत करे, अच्छे मनुष्योंको बीचमें डालें। इस मामलेके विषयमें सबको बतायें और यह सिद्ध करें कि द्वेषभावसे ही तुम्हें मना किया जा रहा है। मतलब यह कि सत्याग्रहीका मामला स्वयंसिद्ध होना चाहिए। जहाँ शकाके लिए थोड़ी भी गुंजाइश हो या दूसरे पक्षके पास अपनी बातके समर्थनमें कहनेके लिए कुछ हो तो सत्याग्रहीको तबतक धीरज रखना चाहिए। मैंने अभीतक जो सत्याग्रह किये हैं उन सबपर नजर डालो तो तुम्हें इन सब बातोंका तात्पर्य समझमे आ जायेगा।

मेरी आज्ञाके बिना सत्याग्रह नहीं किया जा सकता, यह तुमने ठीक मर्यादा बाँधी है। इस मर्यादाका दृढ़तापूर्वक पालन करना। और कुछ करनेसे पहले मेरी लिखित आज्ञा जरूर ले लेना। इसमें तुम्हारा कल्याण है। और तुम्हारे हाथों सत्याग्रह सिद्धान्तके निन्दित होनेका अवसर नहीं आयेगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३२२. टिप्पणियाँ

मशीनी धान-कुटाईसे हानि

दक्षिण आफ्रिकामें बसे भारतीयोंके हित-साधनके लिए वहाँ जी-तोड़ काम करते हुए भी श्री एन्ड्रयूज भारतकी उन बातोंको नहीं भूल सकते जो उनके दिलमें घर कर गई है। महादेव देसाईके लिखे बिहारके दौरेका ब्यौरा पढकर उन्होंने कुछ रोज हुए यह तार भेजा था :

> महादेवसे कहें उनके लिखे बिहारके दौरेका वर्णन पढ़कर बहुत प्रसन्न हुआ। राजेन्द्रप्रसादसे प्यार कहें। मेरा सुझाव है कि आप हाथकी धान-कुटाईपर जोर दें। मिलोंमें मशीनोंसे की गई धान-कुटाईकी बुराइयाँ देख चुका हूँ। उसमें पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। जनताको सावधान करें, दक्षिण आफ्रिकासे भेजे जानेवाले अप्रामाणिक तारोंपर विश्वास न करें।

पाठक देख सकते हैं कि यह तार मुझे इसलिए भेजा गया है कि मैं जनताको सावधान कर दूँ कि वह दक्षिण आफ्रिकासे आनेवाली ऐसी किसी खबरपर विश्वास न करें जिसपर श्री एन्ड्रयूजकी मुहर न हो। लेकिन मुझे जनताको सावधान करनेकी कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती। यहाँकी जनता स्वभावत. ही दक्षिण आफ्रिकासे

आनेवाली ऐसी सनसनीखेज खबरोंपर विश्वास नहीं करेगी, जिनकी ठीकसे पुष्टि न की गई हो। पर हम आशा करते हैं कि परम माननीय श्रीनिवास शास्त्री शीघ्र ही दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना हो जायेंगे और तब हमारी इस सारी चिन्ता और डरका कारण दूर हो जायेगा। इसलिए तारके दक्षिण आफ्रिका सम्बन्धी भागपर और चर्चा न करके अब मैं धान-कुटाईकी उन मिलोंकी बातपर आता हूँ, जिनकी बुराइयोंसे श्री एन्ड्रयूजको इतना खेद हुआ है कि उन्हें अपनी राय हमें तार द्वारा बतानी पड़ी है। पाठक इस मामलेमें श्री एन्ड्रयूजकी चिन्ताको मेरे यह बतानेपर समझेंगे कि अपने भारत निवासके दौरान उन्हें धान-कुटाईकी मिलोंके बीच ही रहना होता है। क्योंकि जब वे पहले-पहल बोलपुरके समीपवर्ती स्थान 'शान्तिनिकेतन' में गये थे तब बोलपुरमें धान-कुटाईकी एक भी मिल नहीं थी; परन्तु आज तो उस स्थानमें, जो एक समयमें बिलकुल शान्त स्थान होता था, धान-कुटाईकी कई मिलें चल रही हैं। उन्होंने मुझसे बोलपुरमें धान-कुटाईकी इन मिलोंके चालू होनेके बादसे होनेवाले शोरगुल, धूल और धुएँकी और धोखाधड़ीके व्यापारकी चर्चा कई बार की है। और साथ ही कई बार इस बातकी भी चर्चा की है कि इन मिलोंकी स्थापनाके कारण धानकी हाथ-कुटाईका एक उपयोगी गृह-उद्योग हमसे छिन गया है। इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं हो सकता कि हाथ-कुटा चावल मिलके कुटे चावलकी बनिस्बत कहीं अच्छा होता है। लेकिन मिलोंकी बुराईके विषयमें मेरी अपेक्षा डाक्टर और वैद्य अधिक अधिकारपूर्वक कुछ कह सकते हैं। पर निःसन्देह जब हम उन क्षेत्रोंमें जाते हैं जहाँ मिलें जम गई हैं, तो इन मिलोंसे होनेवाली नैतिक बुराई हमारे सामने स्पष्ट हो जाती है। श्री एन्ड्रयूजने अपने नम्र स्वभावके कारण और भारतके प्रति अपने असीम प्रेमके कारण मुझसे अनुरोध किया है कि मैं इस कामको अपने हाथमें ले लूँ, किन्तु मैं तो बीमार हूँ और चारपाईपर पड़ा हूँ। परन्तु यदि मैं चारपाईपर न भी पड़ा होता तो भी इस बुराईको देखते जानते हुए कि हमारे गृह-उद्योग दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक नष्ट किये जा रहे हैं, मैं इस कामको अपने हाथमें न लेता, क्योंकि मैं तो अपने-आपको एक ऐसा कार्यकर्त्ता समझता हूँ जिसे अपनी क्षमताकी सीमाओंका पूरा-पूरा ज्ञान है और जो उनका उपयोग बड़ी किफायतसे करता है। मैं महसूस करता हूँ कि हाथ-कताईको पुनर्जीवित करनेके अपने प्रयत्नों द्वारा मैं इस बुराईकी जड़ ही काट रहा हूँ और यह एक काम ही इतना बड़ा है, जिसमें मेरी पूरी शक्ति लग जाती है। मुझे यह भी लगता है कि यदि यह आन्दोलन सफल हो गया, जैसा कि मुझे दिन-ब-दिन ज्यादासे-ज्यादा यकीन होता जा रहा है कि यह जरूर सफल होगा, तो धान-कुटाईकी मिलोंकी ये बुराइयाँ जिनकी ओर श्री एन्ड्रयूजने मेरा ध्यान आकर्षित किया है तथा अन्य बुराइयाँ भी जो गिनाई जा सकती हैं, अपने-आप मिट जायेंगी। हमें यह सोचनेकी भूल नहीं करनी चाहिए कि भारतमें जो गति चरखेकी हुई है और धानकी हाथ-कुटाई जैसे गृह-उद्योगकी आज भी जो गति हो रही है, उससे राष्ट्रीय जीवनको कोई क्षति नहीं पहुँचेगी, क्योंकि पश्चिममें ऐसी ही स्थिति आ चुकी है और इससे उसे कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ा है। पहली बात तो यह है कि अभी इसके बारेमें निश्चित रूपसे कुछ

कहना कि पश्चिममें ग्राम्य-जीवनके विनाशसे क्या पश्चिमको या सामान्य रूपमें मानव-जातिको कोई लाभ हुआ है, काफी जल्दी कुछ कह देना होगा। दूसरी बात यह जो ज्यादा महत्त्वकी है कि यदि यह मान भी लें कि पश्चिमके नये जीवनमें मानव-जातिका कल्याण ही होगा, तो भी हमें एक बात समझकर चलना चाहिए कि पश्चिममें तो जिन ग्रामीणोंके गृह-उद्योग नष्ट किये गये उन्हें तुरन्त ही दूसरा धन्धा मिल गया और इसलिए उनको कुछ तो काम जुटा दिया गया, लेकिन यहाँ उन लोगोंमें बहुत थोड़ेसे लोगोंको ही कोई दूसरा काम मिला है, जिनकी रोजी धान-कुटाईकी मिलोंने छीन ली है और उनमें से अधिकाश तो बेकार और दरिद्र ही हो गये हैं। पाठक जल्दबाजीमें यह नतीजा भी न निकाल लें कि हाथ-कताईका यह आन्दोलन सभी प्रकारकी मशीनोंपर अविवेकपूर्वक चोट करता है। इस आन्दोलनका उद्देश्य तो केवल ऐसी शक्तिचालित मशीनोंका स्थान लेना है जो भूखों मरनेवाले करोड़ों लोगोंके नैतिक और आर्थिक हितोंको हानि पहुँचाती है। सच्ची बात तो यह है कि हम पश्चिमके इस इन्द्रजालसे तथा पहलेसे लिखे इस हानिकर साहित्यसे जो हर सप्ताह हमारे पास ढेरों भेज दिया जाता है, हदसे ज्यादा सम्मोहित हो गये हैं। हम इस बातको भूल जाते हैं कि यह जरूरी नहीं है कि जो बात कुछ परिस्थितियोंके कारण पश्चिमके लिए पूरी तरहसे फायदेमन्द हो, वही उनसे भिन्न परिस्थितियोंमें भी फायदेमन्द ही हो और बहुधा बिलकुल ही विपरीत पूर्वकी परिस्थितियोंमें भी फायदे-मन्द ही हो। कर-मुक्त व्यापारकी नीति इंग्लैंडके लिए भले ही फायदेमन्द साबित हुई हो; पर उसी नीतिपर यदि जर्मनीमें अमल किया जाता तो वह निःसन्देह जर्मनीको तबाह कर देती। जर्मनीकी समृद्धि तो इसलिए हुई कि उसके विचारकोंने गुलामोंकी तरह इंग्लैंडका अनुकरण करनेके बजाय अपने देशकी खास परिस्थितियोंको ध्यानमें रखते हुए अपनी अर्थ-नीति ऐसी बनाई जो उनके देशके लिए अनुकूल थी। और ज्योंही इंग्लैंड और जर्मनी द्वारा शोषित देश सँभल जायेंगे और अपना शोषण नहीं होने देंगे, त्योंही इन दोनों देशोंको अपनी अर्थ-नीति बदलनी पड़ेगी, क्योंकि इन दोनों देशोंकी सभ्यता दूसरे देशोंके शोषणपर आधारित है। हमें याद रखना चाहिए कि यदि हम इस तरह किसी देशका शोषण करना भी चाहें तो आज हममें वैसा करनेकी शक्ति नहीं है। इसलिए यदि हमें एक स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें जीना है तो हमें अपनी अर्थ-नीति और स्थिति ऐसी बना लेनी चाहिए जो हमारे विकासके अनुकूल हो।

अत्यन्त मितव्ययी

मेरी एक महिला मित्रने जो उसी समयमें बीमार पड़ गई थी जब मैं काम करनेमें असमर्थ हो गया था मेरे प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए और स्वयं सहानुभूति चाहते हुए अपने पत्रमें लिखा है:

> मेरे पास तत्त्व-चिन्तनके लिए समय था और जबसे मेरा बोलना बन्द हुआ है, तबसे मैं एक ही विचारपर चिन्तन कर रही हूँ। मैंने यह पाया

है कि हमें जीवित रहनेकी जरूरत नहीं है और नियति जब हमें जल्दी मृत्यु देती है तब वह बहुत मितव्ययिता बरतती है, क्योंकि इस तरह वह उस शक्तिको बचाती है, जो हमारे भीतर मौजूद है; किन्तु जिसे हम, जीवित रहना स्पष्ट रूपसे अनावश्यक हो जानेपर भी, जीवित बने रहकर नष्ट करते हैं। मैं इस बातपर जबतक थक नहीं गई विचार करती रही और तब मैंने अपने मनमें कहा, आखिर इससे क्या फायदा? कुछ भी हो, अभीतक मृत्युका बुलावा नहीं आया है। इसलिए जबतक नष्ट करने योग्य कुछ और नहीं बच रहता, तबतक मुझे अपनेको नष्ट करते ही रहना चाहिए।[1]

मृत्युके सम्बन्धमें, चाहे वह कभी भी आये, इस तरहका खयाल करना कि प्रकृतिकी अर्थ व्यवस्थाकी वह एक विवेकपूर्ण योजना है, कैसा सुखद विचार है? यदि हम अपने पार्थिव अस्तित्वके इस नियमको ठीकसे समझ सकें और मित्र और त्राताके रूपमें मृत्युका स्वागत करनेके लिए तैयार रह सकें तो हम जीवनके ऐसे उन्मादपूर्ण संघर्षमें रत होना छोड़ देंगे। हम दूसरोंके जीवनको क्षति पहुँचाकर और मानव-हितके समस्त विचारोंको नीची निगाहसे देखकर जीवित रहना नहीं चाहेंगे। किन्तु इस मित्रकी तरह तत्त्वचिन्तन करना एक बात है और उचित समयपर तत्त्वचिन्तन जन्य सत्यके अनुरूप अनुभूति हो सकना दूसरी बात। जबतक हम इस शरीरकी निश्चित और गम्भीर सीमाओंको उचित रूपमें नहीं समझ लेते और जबतक ईश्वरमें और उसके निर्धारित किये हुए कर्म फलके अपरिवर्तनीय नियममें हमारी स्थायी श्रद्धा नहीं होती तबतक इस तरहकी अनुभूति हो सकना असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-५-१९२७

३२३. बुढ़ापेमें भी जवानीका उत्साह

एक अंग्रेज बहन लिखती हैं:

मुझे आपसे स्विट्जरलैंड निवासिनी एक प्रिय किसान वृद्धासे मिले एक पत्र और तसवीरोंके बारेमें कुछ बातें कहनी हैं। उसकी उम्र ७० वर्षसे भी अधिक है, वह इतनी उम्रमें भी 'बिलेनिव' के ऊपर वाली पहाड़ीपर बैठी चरखा चलाती और कपड़ा बुनती रहती है। मेरे पत्रोंके जवाबमें वह (फ्रेंच भाषामें) लिखती है, "जाड़े आ गये हैं, बर्फ पड़ना शुरू हो गया है, यह हमारे यहाँ कई महीने पड़ती रहेगी। मुझे अब करघेपर काम करनेके लिए काफी समय मिला करेगा। ५९ मीटरके दो थान तैयार करनेके लिए फरमाइशें

१. गांधीजीके उत्तरके लिए देखिए "पत्र: ईजाबेल बमलेटको", १०-५-१९२७।

आई हुई हैं। इसलिए उन्हें तैयार करनेके लिए मुझे ऐसे ही लम्बे समयकी जरूरत थी। क्योंकि अब (७५ वर्षकी अवस्थामें!) मैं जल्दी थक जाती हूँ।" इस वृद्धाका जीवन सन्तुष्ट और शान्तिमय जीवनका ऐसा पूर्णतया निर्दोष नमूना है, जैसा प्रत्येक किसानका जीवन होना चाहिए। गर्मियोंमें वह खेतोंमें काम करती है और कभी-कभी फुरसतके वक्त या बरसातके दिनोंमें चरखा या करघा चलाती है। लेकिन जाड़ेमें, जबकि जमीन बर्फसे ढक जाती है, वह सारा दिन कताई-बुनाई करती है। आप उससे करघे और चरखेकी हस्तकलाका यह उद्योग छीन लें तो वह पूरी मुसीबतमें पड़ जायेगी, लेकिन अभी तो इस उद्योगके कारण उस पहाड़ीके सब किसानोंमें वही सबसे अधिक सुखी और मृदुल स्वभाव-वाली है। ऐसा क्योंकर है? इसलिए कि गाँवके उन सब लोगोंमेंसे केवल उसीने इस पुराने उद्यमको पकड़े रखा है और इसलिए केवल उसीका जीवन परिपूर्ण और सच्चा जीवन है। मैं आपको इस पत्रके साथ उसकी एक छोटीसी तसवीर भेज रही हूँ। उस चित्रमें वह वृद्धा एक लकड़ीके कुंदेपर बैठी हुई अपनी एक बकरीपर प्यारसे हाथ फेर रही है। इससे आपको उसके प्यारे, वृद्धावस्थाके प्रसन्न चेहरेकी कुछ कल्पना हो सकेगी। चित्रमें जो कम उम्रकी स्त्री है, वह उसकी पुत्रवधू है।

यह सुन्दर तसवीर मेरे पास है, जिसे मैं 'यंग इंडिया' में प्रकाशित नहीं कर सकता। लेकिन कल्पनासे इस तसवीरकी रेखाएँ भर सकनेवाले विचारशील पाठकको तसवीरकी कमी पूरी कर सकनेमें कठिनाई नहीं होगी। पत्रमें ध्यान देनेकी बात यह है कि यन्त्रोंके बोझ तले दबे हुए उन पश्चिमी देशोंमें भी ऐसे लोग हैं, जो चरखे और करघे द्वारा, सच्ची शान्ति पाते हैं। जो उद्योग किसी समय प्रधान और व्यापक गृहोद्योग थे और जब वह वृद्ध महिला इस ७५ वर्षकी अवस्थामें भी इस उद्योगके कारण जवानी जैसे उत्साहका अनुभव करती है और उससे आजीविका नहीं बल्कि शान्ति प्राप्त कर रही है, तब भला इस उद्योगकी उस देशमें कितनी अधिक आवश्यकता होगी, जहाँ विरली ही स्त्रियाँ ७५ वर्षकी आयु पाती हैं, जहाँ अधिकांश ५० वर्षकी अवस्थामें ही नाहक बूढ़ी हो जाती हैं और जहाँ देशकी करोड़ों बहनोंको फुरसतके समय एक निर्दोष कुटीर-उद्योग द्वारा मिलनेवाली शान्तिकी ही नहीं बल्कि पेटकी ज्वाला शान्त करनेके लिए भी किसी आजीविकाकी बेहद जरूरत है?

[इस सबके जवाबमें] अज्ञानी निन्दक पूछता है, "यदि ऐसा है तो भारतकी करोड़ों स्त्रियाँ उस प्यारी स्विस बुढ़ियाकी तरह गृह-उद्योग क्यों नहीं अपना लेतीं हैं और इससे अपने लिए शान्ति और भोजन क्यों नहीं प्राप्त करती हैं? उन्हें ऐसा करनेसे रोकनेवाली क्या चीज है?" कुछ इसीसे मिलता-जुलता सवाल १८८९ या १८९० में एक हट्टे-कट्टे किन्तु उजड्ड दिखाई देनेवाले अंग्रेजने सुरेन्द्रनाथ बनर्जीसे उस समय किया था, जब वे अंग्रेजोंकी किसी सभामें व्याख्यान दे रहे थे। बंगालके तत्कालीन बेताजके बादशाह बाबू सुरेन्द्रनाथसे उस शक्तिशाली शासक अंग्रेजोंकी पेढ़ीके उस

योग्य सदस्यने पूछा कि यदि जैसा कि आप कहते है कि भारत स्वाधीनता चाहता है ठीक है, तो भारतको स्वाधीनता लेनेसे रोक कौन रहा है? यह कैसी बात है कि शक्तिशालिनी और विशाल जनसंख्यावाली अंग्रेजोंकी पेढ़ीके सदस्य हम लोगोंने कभी ऐसी बातें नही सुनी कि भारतीयोंने खिड़कियोंके शीशे तोड़-फोड़ डाले या सिर फोड़ दिये, क्योंकि हम लोग तो अपनी मनचाही वस्तु न मिलनेपर ऐसा ही किया करते है? जहाँतक मुझे याद है अखबारोंमें वक्ता (सुरेन्द्रनाथ बनर्जी) का उत्तर नही दिया गया था। श्रोताओंके बीचसे केवल वाह, वाह! की आवाजोंका उल्लेख किया गया था। किन्तु उस स्पष्टवादी अंग्रेजने सुरेन्द्रनाथजीसे जो सवाल किया था वही आज भी बड़ी आसानीसे पूछा जा सकता है। और साथ ही हम यह भी जानते है कि ऐसा सवाल स्वाधीनताकी पुकारका जवाब नही हो सकता। शायद हम स्वाधीनताकी प्राप्तिका उपाय न जानते हों या उसे जानते हुए भी उसे अपनानेकी हममें इच्छा या शक्ति ही न हो। फिर भी स्वाधीनताकी पुकार न्यायपूर्ण भी है और स्वाभाविक भी, वह चाहे कितनी ही बेअसर क्यों न हो लेकिन वह स्वाधीनताकी ओर पहला कदम जरूर है।

पर जब इन करोड़ोंके भूखों मरनेकी बात कही जाती है, तब ये अज्ञानी निन्दक अज्ञानवश ही इस बातको भूल जाते है कि वे करोड़ों गरीब तो काम या रोटीके लिए भी पुकार मचाना नही चाहते। इसीलिए तो हम भी अंग्रेज इतिहासकारकी तरह उन्हे 'गूंगे' कहते है। और इसीलिए हमें (और उन निन्दकोंको भी) उनकी ओरसे आवाज उठानी पड़ती है। हमें उन करोड़ों गूँगोंको पहला पाठ पढ़ाना है। उनकी इस भयंकर गरीबी और अज्ञानके लिए वे नही, हम ही जिम्मेदार है। वे तो बेचारे यह जानते भी नही कि उन्हें क्या चाहिए, उनकी जरूरत क्या है, क्योंकि वे जीते हुए भी मुर्दोंके सदृश है।

उन अस्पृश्योंसे यह कहनेकी हिम्मत कौन करेगा कि "यदि तुम स्वाधीनता चाहते हो तो ले लो, तुम्हें कौन रोकता है?" परमात्मा बड़ा धैर्यवान और चिर सहिष्णु है। जालिमको वह अपनी कब्र अपने आप खोदने देता है। केवल समय-समय पर उसे गम्भीर चेतावनियाँ देता रहता है।

हम कह सकते है और कहना उचित ही होगा कि यद्यपि उस अंग्रेजका ताना सैद्धान्तिक दृष्टिसे ठीक ही है परन्तु अंग्रेजोंके मुँहसे यह प्रश्न इस ढंगसे सामने आते शोभा नही दे सकता जबकि हममें से हरएक आदमी यद्यपि अपनी लाचारी महसूस करता है, फिर भी स्वाधीनता प्राप्त करनेकी अपनी स्वाभाविक इच्छा व्यक्त कर रहा है। उसी प्रकार यदि हम मध्यम वर्गके लोग भी करोड़ों गरीबोंकी आवश्यकताके उत्तरमें वह ताना दें जो मैंने यहाँ उस काल्पनिक निन्दकके मुखमें रखा है, तो हमें शोभा नही देगा। उनकी आवश्यकताका उन्हें भले ही ज्ञान न हो किन्तु हममें से कुछ लोग तो उनकी जरूरत महसूस कर सकते है। अतः उनकी वह जरूरत पूरी करनेका यही उपाय है कि हम ऐसे प्रतिनिधियोंको बढ़ायें जो न केवल उन गूंगे करोड़ों गरीबोंके पक्षकी वकालत करें वरन् खुद ऐसे तरीके अपनायें जैसे चरखा चलायें, अपने बढ़िया

विदेशी कपड़ोंको फेंक दें, खादी पहनने लग जायें और जो तबतक चैनसे न बैठें जबतक देशके प्रत्येक फालतू क्षणका सदुपयोग न होने लग जाये। उस दिन ही, भारतकी स्त्रियाँ भी उस प्यारी स्विस बुढ़ियाकी भाँति ७५ वर्षकी उम्रमें भी युवतीके समान उत्साहवती, सुखी और श्रद्धाशील दिखाई देंगी, उसके पहले नहीं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-५-१९२७

३२४. मलाबारके चन्देके विषयमें

निम्नलिखित पत्र[1] मुझे पिछले वर्ष मिला था और तबसे वह मेरे पास पड़ा रहा है। उसके एक हस्ताक्षरकर्त्ता दीवान बहादुर एम० ओ० पार्थसारथी आयंगार हस्ताक्षर करनेके कुछ समय बाद ही दुर्भाग्यसे स्वर्गवासी हो गये। पत्रमें लिखी बातें तथा उसके साथ हस्ताक्षरके रूपमें सम्बद्ध प्रतिष्ठित व्यक्तियोंके नाम[2] अपने आपमें काफी हैं। उसमें जो अपीलकी[3] गई है उसका मैं सच्चे दिलसे समर्थन करता हूँ। परन्तु उसपर औपचारिक रूपसे अमल करनेके पहले यह आवश्यक है कि दान देनेवाले सज्जनोंकी इच्छा जान ली जाये। 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' में जब दानके लिए अपील की गई थी, तब कुछ सज्जनोंने अपने दान 'सत्याग्रहाश्रम' के पते पर कुछने 'नवजीवन' के और कुछने गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके कार्यालयके पते पर भेजे थे। और समय-समयपर जैसे श्री राजगोपालाचारी उसमेंसे रुपया माँगते गये उतनी रकमें उनके पास भेजी जाती रही। और उन्होंने इन रकमोंका हिसाब जाँच करवा लेनेके बाद अखबारोंमें प्रकाशित करा दिया था। यह दैवी आपत्ति ऐसी आकस्मिक थी कि दयालु हृदय सज्जनोंने दानकी अपीलोंको पढ़ते ही उदारतापूर्वक दान दिया। परिणामस्वरूप लगभग सभी स्थानोंमें फालतू रकमें इकट्ठी हो गई थी। रकममें उपयोगके लिए जो एजेन्सियाँ स्थापित की गई थी, वे अपने समुचित कर्त्तव्य पालनकी दृष्टिसे उन सब रकमोंको खर्च नहीं कर सकी। जैसा कि निम्नलिखित पत्रके हस्ताक्षरकर्त्ता मुझे सूचित करते हैं, अन्य एजेन्सियोंने तो उन्हे मिली हुई रकममें से जो बचत हुई, उसे किसी-न-किसी उपयोगी काममें खर्च कर दिया है। 'यंग इंडिया' में छपी अपीलोंके जवाबमें आई हुई रकममें से बचे हुए धनको खर्च करनेकी मुझे कोई जल्दी नहीं थी। वह बैंकमें रख दिया गया है, जिससे उसपर

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. श्रीनिवास आयंगार; अ० भा० च० संघ तमिलनाड और केरलके मन्त्री रामनाथन; च० राजगोपालाचारी; के० केलप्पन; एम० ओ० पार्थसारथी आयंगार; एम० कृष्णा नायर, एम० एल० सी० तथा त्रावनकोरके भूतपूर्व दीवान और टी० रंगाचारियर।

३. दक्षिण भारत बाढ़ सहायता कोषकी बची हुई रकम अ० भा० च० संघकी मार्फत खादी कार्यके लिए दी जानेके लिए।

व्याज मिल रहा है। दुर्भाग्यवश भारतमें अकाल बराबर पड़ा ही करते हैं। फिलहाल अखिल भारतीय चरखा संघका प्रमुख कार्य अकालके ऐसे कारणोंको दूर करना है, जिनपर मानव काबू पा सकता है। बाढ़ोंको मानव एक खास हदतक ही रोक सकता या उसका नियमन कर सकता है। उस हदसे ज्यादा नही। उस सीमासे आगे मनुष्य चाहे हजार युक्ति लड़ाये, वे बाढ़ें अपनी बलि लेकर ही रहेंगी। परन्तु बाढें हमेशा अपने पीछे दाय कर छोड़ जाती हैं, जिसे मनुष्य सहज सँभाल सकता है और उसे वह करना ही होता है। उसी प्रकार अनावृष्टिके समय आदमी एक हदसे ज्यादा पानी भी कहींसे नहीं जुटा सकता। मानव ऐसी परिस्थितियाँ तो बना सकता है कि जो आदमी काम करनेको इच्छा रखते हों वे काम करके गुजर-बसर लायक काफी जुटा सकें, यदि प्रकृति इतनी कृपा शेष रखें कि एक स्थानसे दूसरे स्थानको अनाज ले जाना सम्भव हो। ठीक इसी बातकी व्यवस्था करनेका प्रयत्न अखिल भारतीय चरखा संघ अपने कार्यकर्त्ताओंकी बढती हुई सेना द्वारा कर रहा है। उन्होंने जो तरीका अपनाया है, वह यह कि अवकाशके समयमें कामकी जहाँपर सबसे ज्यादा जरूरत है, ऐसे स्थानोंपर कताईके केन्द्रोंकी स्थापना कर रहे हैं। और यह बात सुविदित है कि इस ढंगका काम दक्षिण भारतमें सबसे बड़े पैमानेपर हो रहा है। मैंने जो पत्र उद्धृत किया है उसमें यही सिफारिश की गई है कि [मलाबार] बाढ़ सहायता कोषका उपयोग इसी संस्था अर्थात् अ० भा० च० संघके द्वारा हो। जब मैंने इस चन्देमेंसे कुछ रकमका उपयोग उड़ीसाके लिए करनेकी अपील की थी, तब उसपर सहायता देनेवाले किसी व्यक्तिने आपत्ति नही की थी। बल्कि कितनों ही ने तो मेरे सुझावको अच्छा बताते हुए मेरे पास चिट्ठियाँ भी भेजी थीं। इस बारेमें भी मैं दाताओंकी राय, यदि वे अपनी राय व्यक्त करना चाहें, जान लेना चाहता हूँ। इस सूचनाके प्रकाशित होनेके बाद यदि १५ दिनके भीतर मेरे सुझावके विरुद्ध राय व्यक्त करनेवाली कोई चिट्ठी मुझे न मिली, तो उस पत्रके प्रतिष्ठित हस्ताक्षर-कर्त्ताओंके सुझाये हुए ढंगके मुताबिक चन्देकी बची हुई रकमका उपयोग कर लेनेकी बात मैं सोच रहा हूँ। कहना न होगा कि मैंने अपने सभी साथियोंसे इस विषयमें सलाह ले ली है और उन्होंने इस सुझावको ठीक बताया है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-५-१९२७

३२५. उड़ीसाके नरकंकाल

मेरी अपनी मान्यताके अनुसार तो यदि उत्कल — उड़ीसामें खादी कार्यमें सफलता नही मिल सकती तो और कही भी नही मिल सकती। फिर भी शायद यह बात कुछ विचित्र मालूम दे लेकिन हाथकताईका काम संगठित करनेमें खादी-कार्यकर्त्ताओंको जितनी कठिनाई उत्कलमें हुई है, उतनी और कही नही हुई। उत्कलके जीवित नरकंकालोंकी आँखोंमें आशाकी एक भी किरण नही दिखाई देती। जिसने जीवनकी आशा ही छोड़ दी हो, जीविकाके साधनोंसे उसे क्या दिलचस्पी होगी? उत्कलमें जिन लोगोंने चरखा अपना लिया है, वे जीवनमें अवतक कुछ आशा रख पा रहे हैं? उस वहुत वड़े जन-समुदायके वीच, जिसने जीवनकी सारी आशा त्याग दी हो, हमारे खादी-सेवक अभी पहुँचे भी कहाँ है। हमारी अपनी आँखोंके सामने लोग मर रहे हैं। परन्तु हम तो यह तभी देख सकते हैं जब हमारी आँखें ऐसी हों और यदि हम आँखें खोलकर देखें तो हम सब यज्ञार्थ चरखा भी चलाने लगें और अपना समस्त संचित धन खादीके काममें लगा दें। और पैसा न हो तो अपने भोग-विलासकी सामग्री और खर्चमें कटौती करे, और वचतके धनको खादीकार्यमें लगायें।

इन नरकंकालोंमें पुनः जल्दी जीवन लानेके लिए जिस वातावरणकी आवश्यकता है, वह तभी वन सकेगा जब हम स्वयं कातने लगें। परन्तु चरखा कातनेका वातावरण अपने आपमें इससे अधिक और कुछ नही कर सकेगा कि उस समस्याका एक हल्का-सा स्पर्श कर सके। प्रगति तो धनके एकत्रित होनेपर निर्भर है। दक्षिणाके विना कोई भी यज्ञ पूर्ण नही हो सकता। मुझे यह दिनके उजालेकी तरह साफ दिखता है कि आज सच्चा यज्ञ चरखा है, और चरखेकी प्रगतिके लिए धन देना एकमात्र दक्षिणा है। जिन लोगोंने इस सीधी-सादी वातको अभीतक नही समझा है उनकी आँखें इस पत्रसे[1] खुल जायेंगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १२-५-१९२७

१. लक्ष्मीदास पुरुषोत्तमका लिखा हुआ यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें भी शंकरलाल बैंकरकी तरह खादीके लिए अपील की गई थी। देखिए "उत्कलके लिए खादी", ५-५-१९२७।

३२६. पत्र : मीराबहनको

१२ मई, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्र फिर एक ही दिन मिले। मालूम होता है तुममें स्थिरता आ गई है। इससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। लेकिन जब भी तुम अस्थिरता अनुभव करो, मुझे बता देनेमें संकोच न करना, क्योंकि अब तुम्हें अनुभवसे मालूम हो गया है कि मै धीरज रखूंगा। मुझे सबसे ज्यादा चिन्ता इसकी है कि तुम वैसा दिखनेकी कोशिश न करो जैसी कि तुम नही हो। मुझे चाहिए कि मैं तुम जैसी हो उसी ही रूपमें तुम्हें स्वीकार करूँ और जैसा तुम्हें बनना चाहिए वैसा बननेमें तुम्हें मदद देना मेरा धर्म है। यह तभी सम्भव है जब मै तुम्हें अपनेसे डरनेका कोई कारण न दूं। इसलिए मैंने तुमसे एक बार कहा था कि मै तुम्हारे लिए केवल पिताका स्थान ही नही, बल्कि माताका स्थान भी लेना चाहता हूँ।

जबतक डी० सी० तुम्हारे पत्रपर ध्यान देता है, उसका पिंड न छोड़ना। उसकी तमाम शंकाओं और प्रश्नोंका नम्रतासे उत्तर देना। अगर तुम्हें यहाँके प्रचलित रहट और रामचन्द्र कोसका फर्क मालूम हो तो उन्हें बता देना; और यह भी बता देना कि कताई केवल एक उद्योग ही नही, वरन् राष्ट्रका मुख्य उद्योग भी क्यों है।

मेरे वहाँ आनेके बारेमें लोगोंको शायद अब भी कुछ गलतफहमी है। मै दो कारणोंसे वहाँ आनेके लिए उत्सुक हूँ। जिस स्थानके बारेमें मैंने इतनी बातें सुनी है, उसे मै देखना चाहता हूँ और दूसरे तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ। मगर नही जानता कि कब आ सकूँगा। मुझे आशंका है कि अभी शायद मैं चार महीने और दक्षिणको नही छोड़ सकूँगा। मगर घटनाओंके बारेमें पहलेसे कुछ अन्दाज लगानेसे कोई लाभ नही। मेरे लिए इतना ही कह सकना काफी है कि मैं साबरमती जानेके लिए जितना उत्सुक होता हूँ उतना ही उत्सुक वहाँ जानेके लिए भी हूँ। कृष्णानन्दजीसे यह बात नम्रतासे कह देना।

बालुंजकर मुझे पत्र लिखे। तुम उसके नामके सही हिज्जे सीख लो। वह पत्र हिन्दीमें लिखे। क्या वे लोग वहाँ ज्यादा दिन ठहरेंगे?

मैं अच्छी तरह हूँ।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२८) से।

सौजन्य : मीराबहन

३२७. पत्र : एच० कैलेनबैकको

नन्दी हिल्स (बंगलोरके समीप)
१३ मई, १९२७

लोअर हाउस[1],

मैं बिस्तरपर पड़ा-पड़ा पुराने बिना निपटाये पत्रोंको देख रहा हूँ और पुरानी पवित्र स्मृतियाँ ताजा कर रहा हूँ ऐसेमें ही मुझे आपका २७ फरवरीका वह पत्र मिला है जिसे आपने अपने घर, इनान्डासे एन्ड्रयूजके पत्रके साथ भेजा था। उस पत्रसे मेरी कितनी ही सुखद और पवित्र स्मृतियाँ जाग उठी। पिछले दो वर्षोंमें यद्यपि आपने बहुत पत्र नही लिखे — परन्तु जो भी पत्र लिखे वे निराशासे भरे हुए और आत्मविश्वाससे रहित हैं। परन्तु जबतक मैं जीवित हूँ आपके प्रति मेरा विश्वास कम नहीं हो सकता। मुझे आशा है कि पहलेकी तरह, आप क्षणिक प्रसन्नता देनेवाली सनसनीपूर्ण बातोंसे तंग आ जायेंगे और एक पुराने मित्रको देखने और पुराने परिचितोंको फिरसे मिलनेके लिए कमसे-कम भारत जरूर आयेंगे। आपने अगले सितम्बर या अक्तूबरमें भारत आनेका एक कच्चा वायदा किया है। यदि सम्भव हो सके तो आप अवश्य आएँ और अधिक या थोड़ा जितना भी ठहरना चाहें, यहाँ ठहरें।

मुझे प्रसन्नता है कि आप यदाकदा थोड़ा समय एन्ड्रयूजकी संगतिमें बिता पाते हैं। मैंने अपने सारेके-सारे एवं तरह-तरहके अनुभवोंके बीच उनसे अधिक विनीत और धर्मभीरु व्यक्ति नही देखा।

आपसे मुझे अपनी बीमारीके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी जरूरत नही है; क्योंकि मैं जानता हूँ कि आप 'यंग इंडिया' तो लेते ही है और उसे पढ़ते भी हैं। मैं आजकल मैसूर राज्यमें एक छोटी-सी पहाड़ीपर अपना इलाज करवा रहा हूँ, जहाँ बहुतसे निष्ठावान स्वयंसेवक और बहुतसे मेरे निकटतम साथी कार्यकर्ता मेरी देखभाल कर रहे हैं। श्रीमती गांधी और देवदास मेरे पास हैं। दूसरोंके नामोंसे आप कुछ नही समझेंगे। इसलिए वे नाम मैं नही लिखूँगा। पर जब आप आयेंगे आप उन सबको देखेंगे और जानेंगे जो इस पहाड़ीपर मेरे साथ हैं।

यह कमजोरी मुझपर क्षणभरमें हावी हो गई। पिछले कुछ समयसे मैंने दिमागपर इतना अधिक बोझ डाल रखा था कि संकट आ पड़नेकी आशंका तो थी ही। और जब मैं हलका कार्यक्रम बनानेकी तैयारीमें ही था कि यह कमजोरी आ गई। ऐसा प्रतीत होता है जैसे ईश्वरने कहा हो "इससे पहले कि तुम अपनी पद्धतिके पागलपनको समझ पाओ, मैं तुम्हारे अभिमानको नष्ट कर दूंगा, और तुम्हे दिखा दूंगा कि यह सब अच्छे उद्देश्यके लिए किया जा रहा है। ऐसा सोचकर तुम्हारा इस तरह

१. गांधीजी कैलेनबैकको प्रेमसे 'लोअर हाउस' तथा स्वयंको 'अपर हाउस' कहते थे।

जुट जाना सरासर भूल है। मूर्ख! तुमने यह सोचा कि तुम आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हो। अब तुम सबक लो और समय रहते समझ जाओ कि केवल ईश्वर आश्चर्यजनक कार्य कर सकता है और वह जिसे चाहे साधनके रूपमें इस्तेमाल करता है।" मुझे आशा है कि मैं इस दण्डको उचित विनम्रतासे स्वीकार कर रहा हूँ और यदि वह मुझे बीमारीसे फिर उठने दें, तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अपने आचरणको सुधार लूँगा, उसकी इच्छाको जाननेका और अधिक प्रयत्न करूँगा और उसके अनुकूल कार्य करूँगा।

मुझे आशा है कि आप मणिलालसे सम्पर्क बनाए हुए हैं। उसे दृढ़ चरित्रवाली लड़की पत्नीके रूपमें मिली है। मैं यथासम्भव उसके लिए इससे अच्छी लड़की नहीं खोज सकता था। संयोगसे ही वह मुझे मिल गई। वह एक धर्मपरायण परिवारकी बेटी है। स्मरण रहे कि आप फीनिक्स आश्रमकी व्यवस्थापिका समितिके सदस्योंमें से एक हैं। मैं आपसे अपेक्षा करता हूँ कि आप इस जिम्मेदारीको निभायेंगे।

सम्भवतः आपके इस पत्रको पानेके एक महीनेके भीतर शास्त्री दक्षिण आफ्रिकामें होंगे। मेरी उनसे आपके सम्बन्धमें एवं गोखलेके साथ आपके सम्बन्धोंके बारेमें लम्बी चर्चाएँ होती रही हैं। उनके समीप रहनेका प्रयास अवश्य कीजियेगा और अपने सभी पुराने साथियोंको उनके सम्पर्कमें लाइयेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५०) की फोटो-नकलसे।

३२८. पत्र : पी० जे० रेड्डीको

आश्रम
साबरमती[1]
१३ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। इसके लिए धन्यवाद। जब मैं बिहारका दौरा कर रहा था, मुझे चीन छात्र-संघका समुद्री तार मिला था। जहाँतक मुझे याद है, मैंने उन्हें समुद्री तारकी प्राप्ति स्वीकृतिका पत्र भी भेजा था। बहरहाल इसमें जो भी आवश्यक था उसका उल्लेख करके मैंने 'यंग इंडिया' में शीघ्र ही लिखा। भारतीय सैनिक दस्तोंके भेजे जानेके विरोधमें आन्दोलन किया गया। परन्तु जैसा कि आप जानते हैं इसमें हमारा कोई वश नहीं है।

१. स्थायी पता।

मैं अब आपके द्वारा बताये गए पतेपर संघको पत्र लिख रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

पी० जे० रेड्डी
अवैतनिक सचिव
हिन्दुस्तान एसोसिएशन ऑफ सेंट्रल यूरोप
नेसेवेक्स्टर ८-९
शार्लोटनवर्ग, २
बर्लिन

अंग्रेजी (एस० एन० १२४८९) की फोटो-नकलसे।

३२९. पत्र : चीनी छात्र संघको

आश्रम
साबरमती[1]
१३ मई, १९२७

प्रिय मित्रो,

मुझे श्रीयुत रेड्डीसे ज्ञात हुआ है कि आपको इस बातका पता नहीं चला कि कुछ समय पहले आपके द्वारा भेजा गया समुद्री तार मुझे मिला भी या नहीं अथवा उसपर मैंने कोई कार्यवाही की या नहीं। जहाँतक मुझे याद है आपने समुद्री तारमें कोई पता नहीं दिया था। परन्तु मुझे याद है कि मैंने उसी जगह जहाँसे आपने समुद्री तार भेजा था, प्राप्ति स्वीकृति भेजी थी। इस सम्बन्धमें जो इससे भी ज्यादा जरूरी था वह किया, मैंने शीघ्र कार्यवाही की और 'यंग इंडिया' में कठोर शब्दोंमें इसका उल्लेख किया। मैंने बिना प्रमाणके यह मान लिया था कि आप 'यंग इंडिया' नियमित रूपसे पढ़ते हैं। लगभग सभी भारतीय सार्वजनिक दलोंने भारतीय सैनिक दस्ते भेजे जानेके विरोधमें डटकर आन्दोलन किया। परन्तु मैं अत्यन्त खेदपूर्वक स्वीकार करता हूँ कि भारतीय जनमतमें इतनी शक्ति नहीं है कि ऐसे विषयोंमें सरकारपर कुछ असर डाल सके। यह तो मानना ही पड़ेगा कि इतना सब होनेपर भी हमारा राष्ट्र हीनावस्थामें है और ऊपर उठनेके लिए संघर्ष कर रहा है। इसलिए हम निस्सन्देह आपके जैसे राष्ट्रोंकी पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्तिके प्रयत्नमें पूरी सफलता मिलनेकी कामना ही कर सकते हैं; इससे अधिक और कोई सहायता नहीं कर सकते।

हृदयसे आपका,

चीनी छात्र संघ
बर्लिन

अंग्रेजी (एस० एन० १२४९८) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।

३३०. पत्र : एच० क्लेटनको

नन्दी हिल्स
१३ मई, १९२७

प्रिय श्री क्लेटन,

सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके श्री अ० वि० ठक्करने इस मासके दिनांक ४, 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की एक कतरन भेजी है, जिसमें नगर निगमकी बहसकी रिपोर्ट है। इसमें आपके सम्बन्धमें कहा गया है कि आपने श्री ठक्कर द्वारा की गई जाँच-पड़तालके सम्बन्धमें निम्नलिखित बातें कहीं हैं:

> आयुक्तने आगे बोलते हुए कहा कि मैं सामान्य प्रशासनकी समस्याके सम्बन्धमें विचार नहीं कर रहा हूँ। श्री हॉर्निमैनने श्री ठक्कर द्वारा की गई जाँच-पड़तालका जिक्र किया था। अध्यक्ष महोदयकी श्री ठक्करके प्रति बड़ी श्रद्धा है। इस भद्र पुरुषको जाँच-पड़तालका पूरा मौका दिया गया है। एक बार श्री गांधीके साथ भी उन्हें ऐसा मौका दिया गया था। परिणामस्वरूप श्री गांधीने सूचना दी कि सबके-सब गवाह इतने अविश्वसनीय हैं कि मैं उनके द्वारा लगाये गये किसी आरोपका विश्वास नहीं कर सकता।

यदि आप कृपया मुझे बतायें कि क्या आपके सम्बन्धमें यह सही रिपोर्ट दी गई है, तो मुझे प्रसन्नता होगी और यदि कृपया मुझे तथाकथित, मेरी दी हुई रिपोर्टकी प्रति भेज दें तो मैं आपका आभार मानूंगा। मुझे भंगियोंकी शिकायतोंके सम्बन्धमें स्व० श्री टर्नरसे हुई भेंट या भेंटोंकी तो याद है। परन्तु उपर्युक्त अनुच्छेदमें कहे अनुसार मुझे अपने श्री ठक्करके साथ या और किसी तरहसे जाँच-पड़ताल करनेकी कुछ याद नही आती।

जब डा० मेहता मुझे अम्बोलीमें मिले थे उस समय आपने मेरे बारेमें जो पूछताछ की थी उसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। जैसा कि आप जानते हैं, मैं उपर्युक्त पहाड़ीपर विश्राम कर रहा हूँ। यह स्थान अम्बोलीसे ज्यादा ऊँचाईपर है और इसलिए अपेक्षाकृत ठण्डा है।

हृदयसे आपका,

एच० क्लेटन महोदय
आयुक्त
नगर निगम
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२९०९) की माइक्रोफिल्मसे।

३३१. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

नन्दी हिल्स
१३ मई, १९२७

प्रिय गोविन्द,

मुझे आपका टाइप किया हुआ पत्र मिला। टाइप किये हुए पत्रोंको पढ़ना तो निस्सन्देह आसान है, फिर भी मुझे हाथसे लिखे पत्रोंका मोह है। वहरहाल इसका यह अभिप्राय नही है कि आप मुझे अपने हाथसे ही पत्र लिखें। आपके टाइप किये हुए पत्र भी मुझे हस्तलिखित पत्रोंके समान ही प्रिय हैं। आजकल खुद मुझे ज्यादातर आशुलिपि और टाइपपर निर्भर रहना पड़ता है।

विटामिनोंपर लिखी पुस्तक मुझे अभी नही मिली। यदि आपने मुझे पुस्तक और लेखकका नाम बताया होता तो मैं इसे बंगलोरसे मँगवानेका प्रयास करता। बंगलोरमें पुस्तकोंकी बड़ी अच्छी दुकानें हैं।

मैं खादीपर आपकी पाण्डुलिपिकी प्रतीक्षा करूँगा। मैं अब उस सिद्धान्तकी चर्चा नही करूँगा जिसकी रूपरेखा आपने अपने पत्रमें प्रस्तुत की है।

वादामोंका मैंने दो प्रकारसे प्रयोग किया। पहले मैंने उन्हें भूना और चक्कीसे पीस कर लुगदी बनाई और मक्खनके रूपमें उन्हें खाया। दूसरे मैंने उन्हें रात भर पानीमें भिगोये रखा, छिलका उतार कर और तब बहुत बारीक पीसकर पानीमें मिलाकर उसका दूध बना लिया। इस दूधको उबाल कर पिया। यह भी मुझे हजम नही हुआ। यह बात अबसे आठ या नौ वर्ष पहले पेचिश हो जानेके बाद की है। जबसे मैंने बकरीके दूधका प्रयोग करना शुरू किया है, मुझे उस प्रयोगको फिर दोहरानेका साहस नही हुआ। यदि मेरे पास और कोई कार्य न हो तो मैं प्रसन्नतापूर्वक अपनी जिम्मेदारीपर यह प्रयोग करूँगा और कुशल निरीक्षणमें दूसरे कार्योंके बावजूद भी इस प्रयोगको कर सकता हूँ।

सबको प्यार सहित,

हृदयसे आपका,

आर० बी० ग्रेग
कोटगढ़

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२२) की फोटो-नकलसे।

३३२. पत्र : मणिबहन पटेलको

नन्दी दुर्ग

वैशाख सुदी १२ [१३][1] मई, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दोनों बहनोंने अपने नाम लिखा दिये, सो ठीक किया।[2] मैं तो चाहता हूँ कि तुम्हारा शरीर जितना सहन करे उतना पहरा तुम भी दो (भले किसीके साथ रहकर)। डर-जैसा भूत इस संसारमें दूसरा कोई नहीं और वह तो अभ्यास तथा ईश्वरकी कृपासे ही जाता है। मुझे तो पूरा विश्वास है कि चोरोंको जब यह विश्वास हो जायेगा कि हमारा चौकीदार भी उन्हें मारनेके लिए नहीं परन्तु मरनेके लिए ही वहाँ है और पहरा देनेवाले आश्रमवासी चौकीदार-जैसे वैतनिक आदमी नहीं, परन्तु गृहस्थ हे, तब चोर आश्रमवासियोंको सताना छोड़ देंगे। तुममें से कोई-न-कोई तो किसी दिन आत्मबल दिखायेगा और उन लोगोंको प्रेमसे वशमें करेगा। परन्तु निस्सन्देह यह सब साँपके बिलमें हाथ डालने जैसा है। सम्भव है, तुममें से किसीको मार भी खानी पड़े, जान भी गँवानी पड़े। रोगसे कौन बच पाया है? स्त्री, पुरुष, बालक सभी उसकी चपेटमें आ जाते हैं। राधा कितनी बार बीमार पड़ी? रुखीको क्या हुआ? जुहूके अस्पतालमें कितनी लड़कियाँ थी? अगर हम यह सब सहन करते हैं तो चोर इत्यादिकी मार भी हम हँस कर सहन कर सकते हैं। इसमें आश्चर्य की क्या बात है? पुलिसके सिपाहियोंसे रक्षाकी इच्छा रखनेवालोंको जरूर अचम्भा होगा, मगर हमें नहीं होना चाहिए।

तुम्हारी पूनियाँ, मैं कल कात रहा था, तभी मिलीं। उनमें से कुछ तुरन्त कातीं, एक भी तार नहीं टूटा। और आज मैंने सूतका कस निकालनेका एक निजी उपाय ढूँढ़ा है। उसमें तुम्हारी पूनियोंसे निकले हुए तारकी बराबरी [अन्य पूनियोंसे काता गया] एक भी तार नहीं कर सका। इनसे अच्छी पूनियाँ मेरे हाथमें कभी नहीं आईं। इनके जैसी शायद एक दो बार मिली हों तो भले मिली हों। परन्तु मैं नहीं मानता कि तुम्हारी पूनियोंसे अच्छी पूनियाँ कोई बना सकता है। तुम्हारी पूनियाँ एक बार हाथ पर चढ़ जानेके बाद दूसरी पूनियोंसे कातना मुश्किल हो सकता है। जैसी पूनियाँ हैं वैसे अक्षर कर लो, कातना भी वैसा ही करो, सभीमें पहला नम्बर लाओ, यह मेरी इच्छा और आशा है।

कराचीसे कल पत्र आ गया। नारणदासकी गैरहाजिरीके कारण काम गड़बड़में पड़ गया है। इसलिए वे एक महीना माँगते हैं। मैंने लिखा है कि यदि वे चाहते

१. साधन-सूत्रमें "१२" है।

२. आश्रममें पहरा देनेके लिए।

हूं कि तुम वहाँ आओ तो भले ही एक महीना ले। शर्मके कारण अथवा तुम्हें वहाँ ले जाने लिए अर्थात् हमपर कोई उपकार करनेके खातिर वे ऐसा करते हों तो मैंने लिख दिया है कि इसकी कोई जरूरत नहीं है। और तारसे जवाब माँगा है। जहाँ खास जरूरत हो वहीं जाना है। यही शोभा देता है। हमें कोई जल्दी तो नहीं है। इस बीच सोची हुई चीजोंको पक्का करती रहो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने

३३३. पत्र : जेठालालको

नन्दी दुर्ग, मैसूर
वैशाख सुदी १२ [१३ मई, १९२७][1]

भाईश्री ५ जेठालाल,

आपका पत्र मिला। धीरज रखनेसे आपको अपने प्रयत्नमें सफलता मिलेगी। इस युगमें ऐसे प्रयत्नोंका फल तुरन्त ही नहीं मिलता। परन्तु आगेसे इस नियमका पालन तो आपको करना ही चाहिए कि कोई भी प्रतिज्ञा हो, एक बार उसे लिया कि फिर उसका पूर्ण पालन करना ही चाहिए। प्रतिज्ञाका पालन करने तथा सुरक्षित रहनेके लिए जितने दुर्ग बनाना जरूरी हो उतने बनाएँ। उनमें से एक आवश्यक और प्रारम्भिक दुर्ग तो यह है कि आप दोनोंको प्रतिज्ञा-कालमें एक दूसरेसे अलग रहना चाहिए और चाहे जो हो एकान्तका सेवन नहीं करना चाहिए। यदि आपमें प्रतिज्ञा लेनेकी शक्ति न हो या ऐसा करनेकी इच्छा न हो, तो प्रतिज्ञा मत लीजिए। किन्तु प्रतिज्ञा लेनेके बाद आवश्यक शर्तोंका पालन जरूर करना चाहिए।

पण्डित सातवेलकरकी ब्रह्मचर्य सम्बन्धी पुस्तक पढ़ जाना। उनका पता है — औंध, जिला सतारा। यह पुस्तक आश्रममें भी आ गई है; वहाँ ले लेकर भी पढ़ सकते हैं।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० १३५६) की फोटो-नकलसे।

१. वर्षका निर्धारण पाठके आधारपर किया गया है।

३३४. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

नन्दी हिल्स
१४ मई, १९२७

प्रिय मोतीलालजी,

मुझे बोलकर ही लिखवाना होगा। स्वयं अपने हाथों नियमित रूपसे लिखनेमें बहुत अधिक थकावट हो जाती है, और देरतक बैठ पाना सम्भव नही है। वहरहाल इसका यह अभिप्राय नही कि मैं अपेक्षाकृत सशक्त नही होता जा रहा हूँ, परन्तु शक्ति बहुत धीरे-धीरे आ रही है। जिस पत्र-व्यवहारपर मैं ध्यान देना चाहता हूँ, उसे मै बकाया नही रखना चाहता।

मै आपके पहले पत्रका उपहारकी वस्तुके रूपमें आदर करता हूँ। उससे आपका बड़प्पन और अच्छाई प्रकट होती है।

आप अपने बच्चोंके लिये जी रहे हैं। मुझे उनसे स्पृहा है। परन्तु कृष्णाका[1] विवाह जवाहरके विवाह जैसा नही होना चाहिए। वह इतने सादे ढगसे होना चाहिए, जैसा स्वरूपका[2] हुआ था। नहीं तो मुझे कुर्कीके वारंटके लिये आवेदन देना ही पड़ेगा या फिर यदि ठीक लगा तो मुझे कृष्णासे साँठगाँठ करनी पड़ेगी।

मैंने जनताके लिए छपी रिपोर्ट आदिसे अन्ततक पढ़ी है। अब मैंने गोपनीय रिपोर्ट[3] भी पढ़ ली है। दोनों जवाहरलालके अनुरूप हैं। जवाहरने विदेशोंमें प्रचार सम्बन्धी जो दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है, उसकी मै सराहना करता हूँ। परन्तु किसी तरह भी सही, मैं अब भी अनुभव करता हूँ कि हमारा रास्ता अलग है। मेरा विचार है कि हमें निश्चित सीमासे परे यूरोपका समर्थन नही मिलेगा, क्योंकि आखिरकार यूरोपके अधिकतर देश हमारे शोषणमें हिस्सेदार हैं। और यदि मेरी धारणा सही है कि हमें प्रत्येक आकार प्रकारके शोषणका प्रतिरोध अवश्य करना है, तो अपने संघर्षके अन्तिम दौरमें हम यूरोपकी सहानुभूतिको कायम नही रख सकेंगे। वहरहाल इस समय मेरे इस दृष्टिकोणका केवल सैद्धान्तिक महत्त्व है। आप कांग्रेस निधिके बारेमें जैसा चाहें वैसा मत दे सकते हैं।

जवाहरलालके अध्यक्षता करनेका सुझाव मेरे निकट दुर्निवार प्रलोभन है। परन्तु मैं सोचता हूँ कि क्या वर्तमान वातावरणमें उसपर उत्तरदायित्व लाद देना उपयुक्त होगा? मुझे यह प्रशस्त नही लगता है। सारा अनुशासन समाप्त हो गया है। साम्प्रदायिकता चरम सीमापर है। जालसाजीकी सब जगह जीत हो रही है। अच्छे और सच्चे लोगोंके लिये कांग्रेसमें अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखना कठिन हो गया है। जवाहरका

१ व २. मोतीलाल नेहरूकी पुत्रियाँ।
३. "दलित राष्ट्र परिषद्"के कार्योंके सम्बन्धमें; देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको" २५-५-१९२७।

समय केवल कांग्रेस संस्थाको सन्तोषजनक ढंगसे शुद्ध रखनेमें ही लग जायेगा और वह खिन्न हो जायेगा। आपका पत्र आनेतक मेरा इस वर्षके अध्यक्षपदके चुनावमें हस्तक्षेप करनेका कोई विचार नहीं था। मेरा मन तो अब भी वैसा ही कहता है। परन्तु यह भी हो सकता है कि सम्पर्क न रहनेसे मैं स्थितिको बहुत अधिक अवसादपूर्ण मान रहा होऊँ। आपको ज्यादा मालूम है और यह सोचकर कि आप बम्बईमें बुद्धिसे, और मैं समझता हूँ, हृदयसे भी, काम लेंगे, स्थितिको प्रत्यक्ष रूपमें जान जायेंगे और मेरा पथप्रदर्शन करेंगे। और तब भी कुछ करनेके लिये पर्याप्त समय बच रहेगा।

मैं जवाहर द्वारा कृष्णाको भेजी हुई गोपनीय रिपोर्टकी प्रति और उसके पत्रका पहला पृष्ठ वापस कर रहा हूँ। मुझे सकलातवालासे सम्बन्धित कागजात अभी मिले हैं। मैं उन्हें समय मिलनेपर पढ़ूँगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२५७६) की फोटो-नकलसे।

३३५. पत्र : डा० बी० एस० मुंजेको

नन्दी हिल्स
१४ मई, १९२७

प्रिय डा० मुंजे,

मैं आपके भाषणकी प्रतिलिपिकी प्रतीक्षा कर रहा था। अब मुझे यह प्रतिलिपि आपके व्याख्यात्मक पत्र सहित मिल गई है। उन दोनोंके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

आचार्य गिडवानीने मुझे पत्र लिखकर आपके भाषणकी प्रतिलिपि पानेके लिये तैयार कर रखा था। तबतक मैंने आपका भाषण पढ़ा नहीं था; परन्तु उन्होंने मुझे बताया कि आपने मुझपर अस्पृश्यताके पक्षमें ऐसा विचार रखनेका आरोप लगाया है जैसा विचार न कभी मेरा रहा और न कभी मैंने ऐसा विचार व्यक्त ही किया। जब आचार्य गिडवानीने मुझसे यह कहा, तब मैंने उन्हें लिखा कि यदि आपने ऐसा किया है, तो उससे मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा, क्योंकि आपके जीवन-दर्शनके अनुसार विरोधीको किसी भी साधनसे परास्त किया जा सकता है। अब मैंने आपका भाषण पढ़ लिया है। मैं देखता हूँ कि इस भाषणसे आचार्य गिडवानीके मतका अनुमोदन होता है। मैं समझता हूँ, आपको यह बताना अनावश्यक है कि आपने जिस दृष्टिकोणका मुझपर आरोप लगाया है, वह मेरा दृष्टिकोण नहीं है। क्योंकि मैं समझता हूँ, आप इस बातको नहीं जानते कि मैंने कई बार घोषणा की है कि जिस रूपमें अस्पृश्यता आजकल प्रचलित है वह हिन्दू धर्मका अंग नहीं है। और यदि मुझे ऐसा विश्वास हो जाये कि वह हिन्दू धर्मका अंग है तो मैं हिन्दू धर्मको छोड़ दूंगा। लेकिन इस तरह स्पष्ट रूपसे उलटा अर्थ लगाकर मेरा मत पेश करनेसे हमारी मित्रतामें कोई अन्तर

नही आयेगा। क्योंकि यद्यपि मैं आपके जीवन-दर्शनको गलत समझता हूँ, तो भी देश-प्रेम हम दोनोंको एक सूत्रमें बाँधनेके लिये काफी है। मैं आशा करता हूँ कि किसी दिन आपको अपने इस मतके अनुकूल बना लूँगा कि विरोधीसे भी अच्छा एवं न्यायपूर्ण व्यवहार करना अच्छी नीति है। जब मैं आपके दृष्टिकोणमें परिवर्तन ले आऊँगा, तो यह कार्य शुद्धि-आन्दोलनमें मेरा योगदान होगा।

आप अपने भाषणके सम्बन्धमें मेरी राय जानना चाहते हैं। मैं आपकी स्पष्ट-वादिता और निर्भीकताके लिए आपको बधाई देता हूँ। परन्तु आपके भाषणका विषय मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगा। आपके भाषणमें इस्लामकी ओरसे प्रभावपूर्ण और प्रगल्भ तर्क प्रस्तुत किये गये हैं। परन्तु वे इस्लामके सर्वश्रेष्ठ भाष्यकारके तर्क नही हैं, वरन् जिस रूपमें आप स्वयं इस्लामको देखते हैं, आपने उसके अनुरूप तर्क प्रस्तुत किये हैं। यदि मैं हिन्दू-धर्मको आपसे अधिक अच्छी तरह न जानता होऊँ तो मेरा काम किस तरह चल सकता है। फिर आपने यह दिखानेके लिये बड़ा कष्ट किया है कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मका अनिवार्य अंग है। मैं इस मतको स्वीकार नही करता और मैंने सदैव ही इसका पूरी तरहसे खण्डन किया है। मेरे लिये यह प्रसन्नताकी बात है कि मेरा हिन्दू धर्म मुझे किसी वस्तु-विशेषसे इसलिये नही बाँधता कि वह संस्कृत श्लोकोंमें लिखी है अथवा वह हमारे किन्ही वेद-शास्त्रोंका अंग है। यदि आपका किया हुआ घटनाओंका विश्लेषण सही हो, और यदि आपका हिन्दू-धर्मके प्रति दृष्टिकोण भी सही हो, तो भी इस विश्लेषणका परिणाम हिन्दू-धर्म और देश दोनोंके लिये निराशाजनक है। परन्तु मैं आपको आदरपूर्वक बताना चाहता हूँ कि शास्त्रोंके अक्षरशः ज्ञानके बावजूद आपका हिन्दू-धर्मका ज्ञान विकृत है। मैं बड़ी नम्रतासे यह दावा करता हूँ कि मैं बराबर ही हिन्दू धर्मके अनुसार जीवन व्यतीत करता रहा हूँ। परन्तु मैं दलील करके आपको बदल नही सकता। मैं जानता हूँ कि यदि मैं आपको लाठी की चोटोंके बलपर बदलनेकी कोशिश करूँगा तो आप तो बालकी बातमें मेरे पैर उखाड़ देंगे। इसलिये मैं जो कुछ हिन्दू पद्धतिके बारेमें जानता हूँ, उसीसे सन्तोष करूँगा और धैर्यसे अवसरकी प्रतीक्षा करूँगा।

हृदयसे आपका,

डा० बी० एस० मुंजे
नागपुर

अंग्रेजी (एस० एन० १४६१३) की फोटो-नकलसे।

३३६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१४ मई, १९२७

यदि प्यारेलालको वापस भेजनेके बारेमें तनिक भी उतावली करोगे तो तुम्हें कड़ी डाँटका पात्र माना जायेगा। . . .[1] विना किसी सहायकके रहनेका प्रयोग करनेके लोभमें प्यारेलालको लौट जानेकी अनुमति कदापि न देना।

यदि तुम क्षय रोगके बारेमें गुजरातीमें लिखना ही चाहते हो तो पहले स्वस्थ हो जाओ तब किसी मैडिकल कालेजमें भरती हो जाना तथा किसी तरहकी उपाधि लेनेकी इच्छा किये विना उसका ज्ञान प्राप्त करना। . . .[2] और कोई मौलिक खोज करना।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी

३३७. पत्र : चिनाईको

नन्दी दुर्ग
वैशाख सुदी १३ [१४ मई, १९२७][3]

भाईश्री ५ चिनाई,

आपका पत्र मिला। आपसे पहले भाई कल्याणजी और प्रागजीभाईने भी विवरण भेज दिया था परन्तु आपके पत्रसे घटनापर प्रकाश पड़ा है। आपने स्वयं मारे विना और भागे विना मार खाकर जो सहनशीलता दिखाई उसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। इसका फल अच्छा ही होगा, इस सम्बन्धमें मेरे मनमें कोई शंका नहीं है। हम इसका परिणाम अपनी आँखोंसे नहीं देख सकते इसलिए मनमें लेशमात्र भी अविश्वास न लायें।

अब आपके प्रश्नोंका जवाब देता हूँ। हिन्दू [महा] सभामें भाग लें या नहीं इसका जवाब निश्चयपूर्वक नहीं दिया जा सकता। जो लोग वहाँ जाकर अपने सिद्धांतोंपर अमल करानेकी शक्ति रखते हों वे अवश्य जायें; इसके सिवा, जो वहाँ के स्थानीय कार्यकर्त्ताओंके विचारोंको पसन्द करते हैं वे तो उसमें जायेंगे ही। हिन्दू-सभाके ध्येयमें तो मुझे कोई दोष दिखाई नहीं दिया है। संगठन करनेमें तो कोई बुरी बात है नहीं। और अस्पृश्यता निवारण तो सबका धर्म है।

१ व २. यहाँ मूलमें कुछ अंश छोड़ दिये गये हैं।
३. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

शुद्धि बहुत व्यापक शब्द है। उसके इस व्यापक अर्थका कुछ हिस्सा हम स्वीकार कर सकते हैं किन्तु कुछ त्याग करने योग्य है। मेरा खयाल है कि शुद्धिकी कोई निश्चित व्याख्या उनके ध्येयमें नहीं की गई है। इसलिए अपने-अपने प्रान्त या शहरमें सभाका कार्य जिस तरह चलता हो उसपर विचार करके हरएकको इस सम्बन्धमें स्वतन्त्र निर्णय करना चाहिए। इसलिए सच पूछें तो वहाँकी परिस्थितिको देखते हुए जो आपकी अन्तरात्मा कहे आपको वही करना चाहिए। महासभा द्वारा आयोजित सभी सभाओंमें जाना जरूरी है ऐसा कोई. ऐकान्तिक धर्म नहीं है। और ऐसा भी नहीं है कि सभामें जानेपर उसमें भाग लेना ही होगा। धर्म इतना ही है कि हम ऐसा आचरण करें, जिससे हमें अपने माने हुए धर्मके पालनमें सहायता मिले। हिन्दू-सभा द्वारा निकाले गये जुलूसका हेतु यदि झगड़ा करना न हो और वह किसी शुद्ध उद्देश्यसे निकाला जाये तो उसमें भाग लेनेमें कुछ भी आपत्ति नहीं है। कहीं दंगा हो जानेकी खबर मिले और हममें शान्ति स्थापित करनेकी शक्ति हो तो हमें अवश्य ही इस शक्तिका उपयोग करना चाहिए। दंगा रोकनेका शुभ प्रयत्न करना सबका धर्म है। 'शुभ' विशेषणका उपयोग मैंने जानबूझकर किया है। क्योंकि कायरताके इस युगमें कई लोग केवल अपने शरीरकी रक्षा करनेके इरादेसे दंगेसे दूर रहकर शान्ति-धर्मके पालनका ढोंग करते दिखाई देते हैं। इसलिए शुभ प्रयत्न का अर्थ यह है कि किसीको भी अपना धर्म छोड़कर दंगा रोकनेका प्रयत्न नहीं करना है। मेरे मन्दिरके ऊपर कोई हमला करने आये और मैं भाग जाऊँ या मुझे कोई भागनेकी सलाह दे तो ऐसा नहीं कहा जा सकता कि मैंने अथवा मेरे सलाहकारने दंगा रोकनेका प्रयत्न किया है।

सिद्धान्तके तौरपर सामाजिक बहिष्कारका समर्थन किया जा सकता है। पर मुसलमानोंका सामाजिक बहिष्कार करनेका कोई ठीक कारण अभीतक मुझे दिखाई नहीं दिया है। मुझे यह भी नहीं लगता कि उनका सार्वजनिक सामाजिक बहिष्कार किया जा सकता है।

इससे अधिक स्पष्टीकरणकी आवश्यकता हो तो मुझे अवश्य लिखें। आशा है आपका दर्द दूर हो गया होगा। डा० रायजीको भी आराम हो गया होगा। आपकी एक शंकाका निवारण रह गया है। हिन्दू-सभाके अस्तित्वमें सरकारका हाथ है, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। हाँ, यह सही है कि अपने स्वभावके अनुसार और अपनी स्थिति कायम रखनेके लिए सरकार किसी भी सभा-समितिका उपयोग कर लेती है। इस तरह तो वह हिन्दू-सभा, मुस्लिम लीग और कांग्रेसका भी उपयोग कर रही है।

यह पत्र भाई कल्याणजी और भाई प्रागजीको भी पढ़ा दें, ताकि मुझे उन्हें अलगसे न लिखना पड़े।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती (जी० एन० २६८४) की फोटो-नकलसे।

३३८. पत्र : गंगाबहन झवेरीको

नन्दी दुर्ग
वैशाख सुदी १३ [१४ मई, १९२७]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा पत्र बहुत दिनोंके बाद मिला। मैं उसकी राह तो देख ही रहा था। तुम कन्या गुरुकुल देख आई, यह ठीक किया। चम्पावतीबहनको पत्र लिखो तो लिखना कि मुझे संस्थाके समाचार भेजती रहें। तुम सभी बहनोंको चोरोंसे डर नहीं लगता, इससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। मैं यही चाहता हूँ कि हम आश्रममें भयभीत होकर न रहें।

सूरजबहन, पालीताणाका श्राविकाश्रम देखनेके लिए बुला रही हैं; तो समय मिले तब केवल देखनेके खयालसे अवश्य चली जाना। परन्तु वहाँ रहनेके लिए तुमने अनिच्छा प्रकट की यह बात मुझे बिलकुल ठीक लगी है। मैं चाहता हूँ कि जब तुम्हें और ज्यादा अनुभव हो जाये, तुम्हारे विचार और दृढ़ हो जायें और तुममें आत्मविश्वास आ जाये तभी तुम निजी रूपसे सेवा-कार्य हाथमें लो।

सुरेन्द्रजीमें ऐसी सरलता है कि उसका अच्छा प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। जो बहनें उनके सत्संगमें आई हैं उन्हें लाभ ही हुआ है। मैं चाहता हूँ कि अभी तुम सब बहनें उनकी उपस्थितिका पूरा उपयोग करो और उससे लाभ उठाओ। मैं उन्हें एक निर्मल हृदय ब्रह्मचारी मानता हूँ।

तुम रामनामको अपने हृदयमें अंकित करनेका प्रयत्न कर रही हो, यह तो बहुत ही अच्छा है। यह नाम अनेक रोगोंको हरनेवाला है।

मेरी तबीयत धीरे-धीरे ठीक हो रही है। अधिकसे-अधिक पत्रोंका उत्तर देने तथा अपनेको बचानेकी दृष्टिसे मैंने आजकल अपने हाथसे पत्र लिखनेके बजाय दूसरोंसे लिखवानेकी आदत डालनेका निश्चय किया है।

बा आशीर्वाद भेजती हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३१३५) की फोटो-नकलसे।

३३९. तार : लुइस डाएलको[1]

[१४ मई, १९२७ या उसके पश्चात्]

जनसाधारण द्वारा आत्मशुद्धि-आत्मसंयमका सीखा जाना सच्ची कला है। जर्मन जनता जीवन की इस कला को सीखनेमें समर्थ हो।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२५००) की फोटो-नकलसे।

३४०. अपील : दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे

परम माननीय श्री श्रीनिवास शास्त्रीने अपनी कितनी ही हार्दिक इच्छाओंका त्याग करके, मित्रोंके जोर दबावसे उनकी बात मानकर दक्षिण आफ्रिकामें आपकी सेवा की खातिर ही भारतके प्रथम राजदूत-पदको सँभालनेकी स्वीकृति दे दी है। अब उनकी सेवाका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना और अपने बीच उनकी उपस्थितिसे लाभ उठाना आपका काम है। नीचे लिखी शर्तोंका पालन किये बिना आप ऐसा नहीं कर सकते हैं :

१. आप उनसे बहुत ज्यादा आशा नहीं करेंगे।

२. शुद्ध निजी मामलोंमें आप उनके जरिये राहत पानेकी कोशिश नहीं करेंगे।

३. उनके साथ किये जानेवाले किसी भी व्यवहारमें आप सत्यसे कदापि दूर नहीं हटेंगे। उनसे छल करना अपने आपसे छल करना है।

४. आप लोग आपसमें मिलकर एक बने रहेंगे।

५. अपने भीतरकी बुराइयोंको दूर करेंगे और व्यवस्थित ढंगसे रहेंगे।

आप ऐसा नहीं मान बैठेंगे कि शास्त्रीजीके प्रथम प्रतिनिधिके रूपमें आते ही आपके सारे दुःख दूर हो जायेंगे। यदि वे आपके खिलाफ कोई नये प्रतिबन्धात्मक कानून न बनाने देने और पुराने प्रतिबन्धात्मक कानूनोंको जरूरतसे ज्यादा कठोर न होने देने और अभी-अभी जो समझौता हुआ है उसपर दक्षिण आफ्रिकाकी सरकार द्वारा समझौतेकी भावनाके अनुरूप अमल करानेमें सफलता पा सकें तो आपको समझना चाहिए कि उन्होंने बहुत काफी काम कर लिया है।

परम माननीय शास्त्रीजी समूचे भारतके प्रतिनिधि हैं न कि अलग-अलग व्यक्तियोंके। वे वहाँ भारतके सम्मानकी रक्षा करने जा रहे हैं। इसलिए आप उनके

१. १४ मई, १९२७ को प्राप्त लुइस डाएलके उस तारके उत्तरमें; जिसमें लिखा था: "हम जन-साधारणके महान् जर्मन कलाकार केट कोलविट्सका जन्मदिन मना रहे हैं। कृपया तार द्वारा सन्देश भेजें।"

पास हरएक निजी शिकायत लेकर नहीं दौड़ेंगे। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप रुपयेका उपयोग कौड़ीकी तरह करनेकी भूल करेंगे।

हमारी शक्ति सत्यपर ही निर्भर है। आप अपने धन्धेमें चाहे जो-कुछ भी करें परन्तु अपने समाजके हितोंका खयाल करके शास्त्रीजीके साथ अपने व्यवहारमें सत्यसे हटनेकी बात कभी न सोचियेगा। उनसे छल करनेकी कोशिशमें आप अपना ही नुकसान करेंगे।

आपके अन्दर फूटकी खबरें यहाँ बराबर आती रहती हैं। यदि आप अपने हित अलग-अलग बनाते जायेंगे जैसे गरीबोंके अलग और अमीरोंके उनसे भिन्न हक और परस्पर विरोधी उत्तर भारतीयों व दक्षिण भारतीयोंके कुछ, और व्यापारी पक्षके कुछ, उपनिवेशमें जन्मे लोगोंके कुछ, ट्रान्सवालके भारतीयोंके हित और तो केपके भारतीयोंके दूसरे कुछ। तो, और तो रहा दूर, जो कुछ आपने प्राप्त कर लिया है उसे भी खो देंगे। यदि आप अपनी, अर्थात् समस्त भारतीय समुदायकी स्थिति बेहतर बनाना चाहते हैं तो आप सबको हमेशा एक होकर रहना होगा।

अन्तमें तो हमारी विजय अपने ही प्रयत्नोंसे होगी। हमारे प्रयत्नोंका अर्थ छल कपटसे नहीं है, वरन् आत्मशुद्धि है और आत्मशुद्धिका अर्थ है अपनी भीतरी बुराइयाँ आप दूर करना, अपने अन्धविश्वास और कुप्रथाएँ मिटाना, बच्चोंको पढ़ाना और शिक्षा तथा अन्य अच्छे-अच्छे कामोंमें पैसे लगाना। आत्मशुद्धिके इस कार्यमें परम माननीय शास्त्रीजीके समाज-सुधार तथा शिक्षा विषयक अनुभवजन्य ज्ञानसे बहुत लाभ मिलना चाहिए और श्रीमती शास्त्रीसे भी हमारी भारतीय महिलाएँ प्रेरणा पा सकती हैं।

आपको अपनी स्थिति इतनी आसानीसे सुधारनेका ऐसा दूसरा मौका निकट भविष्यमें फिर नहीं मिलेगा। मेरी रायमें शास्त्रीजीसे अधिक योग्य, उपयुक्त और निष्पक्ष प्रतिनिधि पाना असम्भव था। यही समझिए कि इस शुभ कार्यके होनेमें परमात्माका हाथ है। अब परमात्माने कृपा करके जो अवसर दिया है, उससे अधिक लाभ उठाना न उठाना पूर्णतया आपपर निर्भर है। ईश्वर आपको सही रास्ता दिखलाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२७

३४१. टिप्पणी

रामचन्द्र कोस

रामचन्द्र कोसका उपयोग पिछले कई महीनोंसे गुजरातमें हो रहा है। यह कोस कई जगह भेजा जा चुका है। पालनपुरके सेठ अमृतलाल रामचन्द्र झवेरीने एक कोस मँगाया था। उसके विषयमें उन्होंने निम्नलिखित लिख भेजा है।[1]

इसी प्रकार, जिन दूसरे लोगोंने कोस मँगाया है वे भी अपने अनुभव लिख भेजेंगे तो मैं उनका समुचित उपयोग करूँगा। यह कोस मुझे जीवदयाकी दृष्टिसे बहुत उपयोगी जान पड़ा है; उसके इस गुणके कारण ही मैं इसकी झंझटमें पड़ा हूँ। इसकी थोड़ी आलोचना भी सुननेमें आई है। इस आलोचनाकी जाँच की जा रही है। मुझे तो अभी इस टीकामें कोई वास्तविकता नही दिखी। यदि उसमें कुछ वास्तविकता लगी तो मैं इन टीकाओंको अवश्य प्रकाशित करूँगा।[2] मुझे यह बार-बार कहनेकी जरूरत नही है कि इस कोसका प्रचार किसी तरहसे व्यावसायिक लाभकी दृष्टिसे नही किया जा रहा है। श्री रामचन्द्र अय्यरने २५ रु० फी कोसके हिसाबसे १,००० कोस तक देनेकी शर्तपर इस कोसके अधिकार बेच दिये है। इतना तो उन्हें मिलना ही चाहिए, क्योंकि उन्होंने सिरपर काफी कर्ज कर लिया है और उनके गुजर-बसरके लिए भी तो कुछ धनकी जरूरत है। परन्तु इसके अलावा इस कोसके दाममें लागत भरके ही दाम रखे गये हैं, उससे ज्यादा नही। जो लोग इस कोसको देखना चाहें, वे इसके लिए सत्याग्रह आश्रम आ सकते हैं।

जहाँ हेतु सिर्फ धार्मिक तथा सत्यकी खोज हो वहाँ किसी बातको छिपानेका कोई कारण नही है। ऊपर जो प्रशंसा प्रकाशित की है उसका उद्देश्य स्पष्ट है। उद्देश्य यह है कि यदि ये गुण इस कोसमें सचमुच है तो उसका लाभ सबको मिलना चाहिए। सत्याग्रह आश्रममें पहले एक कोस लगाया गया था, अब चार लगाये जा चुके हैं। इनमें से तीन चालू है और एक बादमें चलाया जायेगा। किन्तु मैं इतना प्रमाण काफी नही मानता। जिन लोगोंने कोस खरीदा है उन सबको उससे सन्तोष हो और उन्हें ऐसा लगे कि इसके उपयोगसे प्राणी और पैसा दोनोंकी बचत होती है, तो फिर इसके विरुद्ध कुछ कहा नही जा सकता। अभी तकके अनुभव रामचन्द्र कोसके पक्षमें हैं, इतना अवश्य कहा जा सकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-५-१९२७

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२. यहाँसे आगे इस अनुच्छेदके अन्त तकका भाग **यंग इंडिया**, २६-५-१९२७से लिया गया है।

३४२. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

नन्दी हिल्स
१५ मई, १९२७

प्रिय बन्धु,

यह पत्र मुझे बोलकर ही लिखवाना पड़ रहा है। मैं आपसे एक बात कहना भूल गया था। मुझे कुछ ऐसा ध्यान है कि मैंने आपको उमर हाजी अहमद झवेरीका नाम बताया था। जीवनमें जो सर्वाधिक सत्यवादी पुरुष मेरे सम्पर्कमें आये हैं वह उनमें से एक हैं। यदि उनका किसी व्यक्तिके प्रति दुर्भाव होता है, तो मुझे मालूम है कि श्री झवेरी यह बात उसके सामने स्पष्ट कह देते हैं और क्षमा माँग लेते हैं। वह स्व० अबूबकर अहमदके, जो दक्षिण आफ्रिका जानेवाले प्रथम भारतीय व्यापारी थे, भाई हैं। उमर हाजी अहमदकी डर्वनमें बड़ी भारी सम्पत्ति है, और उनके पास प्रिटोरियामें चर्च स्ट्रीटके केन्द्रीय स्थानपर एक जमीनका टुकड़ा है, जिसपर सुन्दर भवन बने हुए हैं। ट्रान्सवालमें केवल यही सम्पत्ति एक भारतीयके नामपर रजिस्ट्री की हुई है। इस सम्पत्तिपर भारतीयोंका स्वामित्व बना रहे, इस बातपर जमे रहना हमारे लिये मानका प्रश्न बन गया था। श्री झवेरी मुझे कह रहे थे कि इस सम्बन्धमें कुछ झगड़ा है। आजकल मामलेकी जो स्थिति है उसके सही हालात मुझे मालूम नही है, यद्यपि मैं उसके पुराने ब्यौरे निस्सन्देह अच्छी तरह जानता हूँ। यह मामला शायद आपके सामने आये। तब आप इस तथ्यको, जिसका मैंने जिक्र किया है, ध्यानमें रखियेगा। यह व्यक्तिगत मामला नही है। इसका राष्ट्रीय हितसे सम्बन्ध है। इस सम्बन्धमें जनरल स्मट्स और मेरे बीच पत्र-व्यवहार भी हुआ है। यदि कभी यह मामला आपके सामने आये, तो आप सारे कागजात देख लीजियेगा।

मैंने डा० मलानका तार देखा था। वह बड़ा शानदार था। मुझे प्रसन्नता है कि आप बड़ी जल्दी ८ जूनको ही जा रहे हैं। बेचारे एन्ड्रयूजकी बड़ी बुरी दशा हो रही है। आप दक्षिण आफ्रिका समयसे एक क्षण भी पहले नही पहुँचेंगे।

नेटाल प्रान्तीय परिषद्का मतदान निस्सन्देह बुरी शुरुआत है। परन्तु केप संसदमें नेटालके मतका कोई महत्त्व नही। मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि नेटालके सदस्योंसे आपको कोई कठिनाई नही होगी। उनमें से कुछ अच्छे हैं, और उनमें से सभीको ट्रान्सवाल, ऑरेंज और केप तकके सदस्योंके विपरीत, अंग्रेजोंके साथ सम्बन्धका अभिमान है। परन्तु सम्भवतः आप इन सब बातोंको पहलेसे ही जानते हैं।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५१) की फोटो-नकलसे।

३४३. पत्र : सी० नारायणरावको

नन्दी हिल्स
१५ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

मेरी बीमारीके कारण इतने लम्बे अरसेतक आपका पत्र बिना उत्तर दिये पड़ा रहा। क्या अब भी आपकी इच्छा आबकारी विभागको छोड़ देनेकी है? क्या आप आश्रममें जाने एवं बिना किसी वेतनके वहाँका अनुशासन पालन करनेके लिये तैयार हैं? यद्यपि आपको खाना बनानेका काम नही आता, तो भी आपके लिए रसोईके काममें भाग लेना अनिवार्य होगा। जो-कुछ आप नही जानते, आपको सिखाया जायेगा। यदि आपको वहाँ प्रवेश मिल गया तो आपसे आशा की जायेगी कि आप हिन्दी सीखे। आपसे यह भी आशा की जायेगी कि आप सुबह ४ बजे उठें और ४ बजेसे शामके ७-३० बजेतक आश्रमके सामूहिक कार्यमें कुछ हिस्सा बँटायें; नि:सन्देह स्नानादिके लिए आवश्यक छुट्टी दी जाती है। इस तरह आप देखेंगे कि सायंकाल ८ बजेसे पहले निजी अध्ययनके लिये आपके पास समय नही बचेगा। दिनके समय एक घण्टेका विश्राम होगा। परन्तु कठिन परिश्रमके उपरान्त कुछ भी पढ़नेमें आपका मन नही लगेगा। सच पूछो तो आश्रममें उन स्वयसेवकोंके लिये जो आश्रमके अनुशासनका पालन करनेको बाध्य हैं, 'आठ घंटेका दिन' नामकी कोई चीज नही है। आपसे यह अपेक्षा की जायेगी कि आप रात्रिको ९ बजे बिस्तरपर लेट जाएँ। वास्तवमें आश्रमका एक आदर्श वाक्य है कि लोकहितके लिये किया जानेवाला कार्य प्रार्थना है और कार्य ही ईश्वर-भक्ति है। यदि आप समझते हैं कि आप आश्रमके अनुशासनका पालन कर सकते है तो कृपया मुझे बताइये। मैं आपके पत्रको आपको प्रवेश देनेकी सिफारिश सहित आश्रमके प्रबन्धकको भेज दूंगा। अन्तमें आपको आश्रममें प्रवेश मिले या न मिले, यह प्रबन्ध समितिपर निर्भर करेगा। समितिका आश्रमकी सभी चीजोंपर पूर्ण नियन्त्रण है।

हृदयसे आपका,

श्री सी० नारायणराव
उत्पादन-कर विभाग
बेजीपुरम्
(डाकखाना बरहामपुर)

अंग्रेजी (एस० एन० १२५६४) की फोटो-नकलसे।

३४४. पत्र: एन० एच० तेलंगको

नन्दी हिल्स
१५ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

अपनी बीमारीके कारण मैं आपके पत्रके सम्बन्धमें आगे कुछ नही कर सका हूँ। यदि आप प्रशिक्षण कक्षामें प्रवेश ले ले तो आपको खर्चा दिया जायेगा, परन्तु उसमें शर्त यह होगी कि आप इकरारनामा भरें कि जब प्रशिक्षण समाप्त हो जायेगा, आप अखिल भारतीय चरखा संघकी सेवा करेंगे। यदि आप असाधारण कुशलता दिखायेंगे तो सम्भव है कि आपको साधारण समयसे पूर्व ही पास होनेका प्रमाणपत्र मिल जाये और तब हो सकता है कि उसी समय आपको नौकरीमें ले लिया जाये। यदि इन परिस्थितियोंमें आप प्रशिक्षण लेनेको तैयार हैं तो आपके प्रवेशके बारेमें मुझे अधिक कठिनाई नही दिखाई देती।

हृदयसे आपका,

श्री एन० एच० तेलंग
अध्यापक
ए० वी० स्कूल
बालापुर

अंग्रेजी (एस० एन० १२५६७ ए)की माइक्रोफिल्मसे।

३४५. पत्र: बनारसीदास चतुर्वेदीको

नन्दी हिल्स, बंगलोर
१५ मई, १९२७

भाई बनारसीदासजी,

आपका पत्र मिल गया है। आश्रममें से जो कुछ भी लिखा गया है उसका मुझे कोई पता नहीं था जबतक आपका पत्र नही मिला था। मैं बीमारी बिछौने पर हूँ यह तो आपको मालूम ही होगा। आश्रमसे ऐसा पत्र क्यों लिखा गया उसका मैं तो केवल अनुमान ही कर सकता हूँ। वह यह है कि तोतारामजीका सब कार्य नियमबद्ध है ऐसा मैंने देख लिया है। उन्हीकी प्रेरणासे पत्र लिखा गया होगा। यदि यह ठीक है तो उसमें दु:ख माननेका कोई कारण नहीं है। मेरा तो आपकी सच्चाई ऊपर नि:सन्देह पूरा विश्वास है। परंतु जब कोई कार्य एक . . .[1] भाईसे बनता है

१. मूलमें अस्पष्ट है।

तब शुद्धतम पुरुषको भी चाहिये कि वह सामान्य नियमसे स्वेच्छापूर्वक बद्ध रहकर चले।

यद्यदा चरति श्रेष्ठः इ०[1]

आपको यह भी मालूम नहीं होगा कि आजकल आश्रममें एक कार्यवाहक मंडल बन गया है और सब कार्य उसी मंडलके मार्फतसे बनता है। और मेरी बीमारीके बाद मंडलने प्रत्येक जिम्मेवारीमें से मुझको मुक्त कर लिया है। इसका यह भी तो फलितार्थ है कि मैं कुछ अधिकार भी न रक्खूं, न उसका अमल करूं। इतना लिखने पर भी यदि मैं आपको संतोष न दे सका हूं तो आप मुझको लिखिये मैं और क्या करूं?

आजकल क्या कर रहे हो? आजीविकाका कौनसा साधन रख लिया है? स्वास्थ्य अब सुधर रहा है।

आपका,
मोहनदास

मूल (जी० एन० २५७६) की फोटो-नकलसे।

३४६. पत्र: मीराबहनको

दुबारा नही पढ़ा

नन्दी हिल्स
१६ मई, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे खयालसे अब तुम्हें रोगमुक्त माना जा सकता है। और इसलिए मैं अब तुम्हें स्नेह-पत्र भेजनेकी ओरसे जरा निश्चित हो गया हूँ।

मैं बराबर प्रगति कर रहा हूँ। आज बंगलोरके डाक्टर आये थे और उन्होंने रक्तचाप सिर्फ १५० और साधारण हालत बिलकुल अच्छी बताई। वे चाहते हैं कि मैं जितना खा रहा हूँ उससे अधिक खाऊँ। देखूंगा कि इस दिशामें क्या हो सकता है। मैं रोटी और सब्जी छोड़नेपर इसलिए विवश हुआ हूँ कि मैं उन्हे बहुत भारी मानता हूँ। अब मुझे एक और प्रयत्न करना पड़ेगा। लेकिन मुझे कोई सन्देह नही कि मैं पहलेसे अच्छा हो रहा हूँ।

मैं देखता हूँ कि तुम अपने काममें उन्नति कर रही हो। वहाँ कितनी स्त्रियाँ और कितनी लड़कियाँ हैं? कितने पुरुष और कितने लड़के हे? जब सम्भव हो मुझे आश्रम और आश्रमवासियोंके बारेमें सर्वसामान्य जानकारी लिखना।

१. भगवद्गीता, अध्याय ३, २१।

मालूम नही कि तुम्हे किसीने बताया है या नही कि कुछ समयसे साबरमतीमें हम लोगोंपर चोरोंकी बहुत अधिक कृपा रहने लगी है। एक बार तो उनसे हमारे चौकीदारकी मुठभेड हो गई और इसमें उसे बुरी तरह चोट आई। इस घटनाने मुझे हमारे अपने कर्त्तव्यका भान करा दिया है। और मैंने सोचा है कि पहरा देना हमारा उतना ही बडा कर्त्तव्य है जितना सम्मिलित भोजनालय चलाना। इसलिए मैंने सुझाया है कि हम सब स्त्री-पुरुष स्वयं ही अपनी चौकीदारी करें और अगर हमें चोर मिल जायें तो हम उन्हें मार-पीटकर आश्रमसे निकाल देनेके बजाय, उनसे इस गलत रास्तेको छुड़वानेका प्रयत्न करें और ऐसा करनेमें उनसे मार खानेकी जोखिम आये तो उसे उठा लें। मेरा यह सुझाव मान लिया गया है और आजकल तीससे अधिक स्वयंसेवक पहरा दे रहे हैं और इनमें पाँच स्त्रियाँ भी हैं। यह प्रारम्भ अच्छा है।

सम्मिलित भोजनालय दिनोंदिन सुधर रहा है। शंकरन् एक आदर्श मुखिया और रसोइया साबित हुआ है। भोजनालयमें २० से ज्यादा आदमी भोजन करते हैं। जब तुम लौटोगी तब यह सब देखकर तुम्हें प्रसन्नता होगी।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२२९) से।
सौजन्य : मीराबहन

३४७. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

वैशाख सुदी पूर्णिमा [१६ मई, १९२७][1]

बहनो,

यह जानकर कि तुम डरती नही, मुझे तो बहुत खुशी हुई। जो जानते हैं कि राम सबका रखवाला है वे क्यों डरें? रामकी रखवालीका अर्थ यह नही होता कि कोई कभी हमें लूट न सकेगा या कोई जन्तु हमें कभी काटेगा नही। ऐसा कभी हो तो उससे रामकी रखवालीपर नही, बल्कि हमारी श्रद्धापर लाछन लगता है। नदी सबको पानी देनेके लिए तैयार रहती है। मगर कोई लोटा लेकर उसमें से न भरे या यह मानकर कि पानी जहरीला होगा, उसके पासतक न जाये, तो उसमें नदीका क्या कसूर? भयमात्र अश्रद्धाकी निशानी है। मगर श्रद्धा कोई अकल दौड़ाकर नही पैदाकी जा सकती। वह धीरे-धीरे मननसे, चिन्तनसे और अभ्याससे आती है। इस श्रद्धाको पैदा करनेके लिए हम प्रार्थना करते हैं, भजन गाते हैं, अच्छी पुस्तकें पढते

१. आश्रममें चोरोंके आनेके उल्लेखसे।

हैं, सत्संग ढूँढ़ते हैं और चरखा-यज्ञ करते हैं। जिनमें श्रद्धा नहीं होती, वे चरखेको हाथ क्यों लगाने लगे?

मैं अच्छा होता जा रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

कागजके दूसरी ओर इतनी सारी जगह खाली रह गई, यह मैंने नही देखा था। हम जानते हैं कि हम गरीब हैं इसलिए उसे मैं बेकार कैसे जाने देता?

गुजराती (जी० एन० ३६४९) की फोटो-नकलसे।

३४८. पत्र: तारा मोदीको

नन्दी दुर्ग
वैशाख सुदी १५ [१६ मई, १९२७]

चि० तारा,

तुम्हारी तबीयतके समाचार तो मुझे मिलते ही रहते हैं। तबीयत क्यों बिगड़ गई थी? हिस्टीरिया कैसे हो गया? यदि विस्तृत पत्र लिखने लायक शक्ति हो तो मुझे लिखना। यदि तुम उपवास करना चाहो तो उससे मुझे तनिक भी चिन्ता नही होगी, क्योंकि दिन पर दिन मेरा यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि जब कोई दवा असर नही करती उस अवस्थामें उपवास रामबाण ओषधि सिद्ध होती है। उपवाससे नुकसान तो होता ही नहीं, किन्तु यदि हिम्मत न पड़े तो उपवास कदापि न करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १६९७) से।
सौजन्य: रमणीकलाल मोदी

३४९. पत्र : गंगादेवी सनाढ्यको[1]

नन्दी दुर्ग
वैशाख १५ [१६ मई, १९२७]

प्रिय भगिनी,

आपका शरीर अब तक ठीक नहिं हुआ है। यह कै अब बहोत दिन हुए? क्या कुछ और इलाज करनेकी इच्छा भी नहिं होती है? सब हाल मुझको तोताराम लीखे। आपको लीखनेका कष्ट उठानेको कोई आवश्यकता नहिं है।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २५४८) की फोटो-नकलसे।

३५०. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

नन्दी हिल्स
१७ मई, १९२७

प्रिय सतीशबाबू,

मेरी बीमारी तो शीघ्रतासे एक बीती बात बनती जा रही है; किन्तु आपकी बीमारी हठीली जान पड़ रही है। जबतक ऐसी स्थिति बनी रहती है, आपको हरगिज बाहर नही निकलना चाहिए। क्या आप वहाँ कोई इलाज करवा रहे हैं? पर यह बीमारी इस तरह अटल कैसे हो गई है? आप भोजनमें क्या-क्या ले रहे हैं? मैं यह प्रश्न इसलिये पूछ रहा हूँ कि श्री ग्रेगने मुझे एक पुस्तक भेजी है, जिसमें भोजनपर नवीनतम अनुसन्धान और भोजनका स्वास्थ्यसे जो सम्बन्ध है, उस विषय पर सामग्री है। बहरलाल इस पुस्तकके अलावा भी मुझे ऐसा लगता है कि यह भी हो सकता है कि आपका शाकाहार आपके शरीरके अनुकूल न बैठता हो, क्योंकि आपके शरीरका निर्माण मांसाहारपर हुआ है। आहार-परिवर्तनसे प्रत्यक्ष हानि भले न हुई हो, परन्तु ऐसा हो सकता है कि इससे शारीरिक गठन दुर्बल हो गया हो या यह भी हो सकता है कि आहार-परिवर्तनसे नष्ट प्राय शारीरिक गठनके पुनर्निर्माणमें कोई सहायता न मिलती हो। ऐसी ही दशा मेरी भी हुई थी। ६ वर्षसे अधिक समयतक मैं कन्दमूल और फलपर निर्भर रहा। परन्तु पेचिशके उग्र हानिकर प्रभावके बाद, बिना दूधके मै अपने शरीरका पुनर्निर्माण नही कर सका। ४५ वर्ष या विशेषकर ४० वर्षतक मेरा शरीर किसी-न-किसी रूपमें दूधका सेवन करनेका

१. साबरमती आश्रमके अन्तेवासी फीजीसे लौटे प्रवासी तोताराम सनाढ्यकी पत्नी।

अभ्यस्त था। आप मेरी कट्टर प्रवृत्ति जानते हैं, जो शाकाहारके पक्षमें हठधर्मिताकी सीमातक पहुँच जाती है। परन्तु मेरी हठधर्मिता मुझतक ही सीमित रहती है। इसका सीधा-सा कारण यह है कि मेरे लिये यह जीवन-भरके अभ्यास और गहरी धर्म-निष्ठाका विषय है। परन्तु धर्म-निष्ठा प्रत्येक व्यक्तिका अपना निजी मामला है। इसलिए यद्यपि मैं शाकाहारी हूँ, मैं अपने विश्वासको अपने मित्रोंपर नहीं थोपता। परन्तु मैं उन्हें, चाहे वे मेरे प्रभावमें हों तो भी, अपनी इच्छाके अनुसार कार्य करनेके लिए स्वतन्त्र रहने देता हूँ। उदाहरणके तौरपर जैसा कि मैंने छगनलालके पुत्र प्रभुदासके सम्बन्धमें किया। मेरे एक अंग्रेज मित्र थे जो डर्बनमें मेरे साथ रहते थे। मेरे प्रभावमे आकर वह शाकाहारी हो गये थे। कुछ समय बाद वह बीमार पड़ गये। यह स्पष्ट था कि वह अपनी प्रकृतिके अनुकूल भोजन किये बिना ठीक नहीं रह सकते थे। मैंने उनसे प्रार्थना की कि वह बाहरसे मांस मँगवा लें और ठीक हो जायें। मैं अपने घरमें मांसाहार नहीं होने दे सकता था। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप इस विषयपर गम्भीरतासे सोचें। आपको केवल अपना ही खयाल नहीं रखना है, अपितु निखिलका भी खयाल रखना है। यदि हेमप्रभादेवीका स्वास्थ्य अब भी आपके स्वास्थ्यकी तरह ही खराब है और यदि तारिणी शाकाहारी है, तो उनका भी खयाल रखना है। यदि आप दालें खाते हैं, तो दालें दुर्बल लोगोंके लिए और ऐसे लोगोंके लिए जिन्हें बैठे रहनेकी आदत होती है, निस्सन्देह बहुत ही नुकसान पहुँचाती हैं। आपने देखा है एन्ड्रयूजने कितनी उद्विग्नतासे पिसे हुए चावलके बारेमें इतनी दूर दक्षिण आफ्रिकासे तार भेजा है। श्री ग्रेग द्वारा भेजी हुई पुस्तक पढ़नेके बाद मेरी आपके भोजनके विषयमें चिन्ता बढ़ गई है।

यदि आपको बुद्ध-धर्मपर कोई विशेष पुस्तक चाहिए तो कृपया लिखिये। मैं इसे प्राप्त करनेकी कोशिश करूँगा।

'नवजीवन' में योगके सम्बन्धमें जो अनुच्छेद है, वह दुर्भाग्यपूर्ण है। मैंने भी यौगिक क्रियाओंके सम्बन्धमें सोचा है, परन्तु मैंने इनके केवल दो पहलुओंपर ध्यान रखकर ही विचार किया है। वे हैं स्वास्थ्य सुधारनेमें एवं ब्रह्मचर्य-साधनमें इन क्रियाओंका विशेष रूपसे सहायक होना। पहलेका सम्बन्ध मेरे स्वास्थ्यसे है और दूसरेका सम्बन्ध विद्यार्थियोंसे है, जिनका मस्तिष्क दुर्व्यसनोंमें पड़े रहनेके कारण विकृत हो गया है। मैंने अपनी बीमारीके दौरान ब्रह्मचर्यपर एक पुस्तक पढ़कर एवं आसनोंके प्रयोगके सम्बन्धमें बहुतसे उल्लेख सुनकर आगे अनुसन्धान करना शुरू किया। इससे महत्तर आत्मशुद्धि प्राप्त करनेमें अधिक सहायता मिलनेकी आशा नहीं है। यह बात नहीं कि जो कुछ मैं प्राप्त कर सकता हूँ, उस सबकी मुझे आवश्यकता नहीं है, परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगा कि इन यौगिक क्रियाओंसे मैं वह सब कुछ प्राप्त कर लूँगा। एक व्यक्तिने, जो अपने आपको योगमें निपुण समझते हैं, मुझे बताया है कि राजयोग, हठयोग और कर्मयोग अपनी अन्तिम दशामें एक ही चीज बन जाते हैं। प्रत्येक आकार एवं रूपमें वासनाओंपर विजय कदाचित् केवल अन्तिम दशामें ही सम्भव है। हठयोगमें अन्तिम दशा प्राप्त करना बड़ा कठिन है। उसके लिए

सतत अभ्यासकी आवश्यकता है। यह सुनकर मुझे अचम्भा नहीं हुआ। क्योंकि मैं इस बातको अधिकारपूर्वक बताये जानेके पूर्व ही जानता था। इसलिए इस प्रकारकी विजयके लिए मुझे सतत उसी पथपर चलते रहना है, जिस पथका मैंने इतनी देर तक अनुसरण किया है। परन्तु इनमें से कुछ आसनों द्वारा मैं हलका व्यायाम कर रहा हूँ। जैसे ही मुझमें शक्ति आ जायेगी, मैं और अधिक व्यायाम करना चाहूँगा। इसलिए आपको यौगिक क्रियाओंके बारेमें अधिक कुछ नहीं सोचना चाहिए। किसी दिन इस सम्बन्धमें पूर्वाशाओं और गलतफहमियोंको दूर करनेके लिए 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें लिखनेका मेरा विचार है। यदि स्वास्थ्य सुधारनेके लिए आसनोंके साधारण प्रयोगके सम्बन्धमें मैंने कोई खोज की, तो मैं निश्चय ही आपको लिखूँगा।

सस्नेह,

आपका,

बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५७०) की फोटो-नकलसे।

३५१. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

नन्दी दुर्ग

वैशाख कृष्ण २ [१८ मई, १९२७]

भाई मूलचन्दजी,

आपका पत्र मिला है। आपने खादीका कामका आरंभ कर दिया है उसलिये आपको धन्यवाद देता हूँ। मेरी बीमारी के कारण आजकल चरखा संघका काम जमनालालजी कर रहे हैं। उनको आपका पत्र दूंगा। एक दो दिनमें वे यहा आ रहे हैं।

आपका

मोहनदासके वं[दे]मा[तरम्]

मूल (जी० एन० ७६१) की फोटो-नकलसे।

३५२. नागपुर सत्याग्रह

अखबारोंमें एसोसिएटेड प्रेसका एक तार देख रहा हूँ, जिसमें यह दिया गया है कि श्री मंचरशा अवारीने कहा है कि बंगालके कैदियोंकी रिहाईके उद्देश्यसे शस्त्र-कानून और विस्फोटक द्रव्य सम्बन्धी कानून (एकस्प्लोजिव सब्स्टेंसेस ऐक्ट) के सिलसिलेमें उनके सविनय अवज्ञा आन्दोलनके साथ मेरी पूरी सहानुभूति और अनुमति है।

यदि मुझे ठीक तरहसे याद है, तो या तो एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिने श्री अवारीके कथनका कुछ गलत अर्थ निकाला है, या स्वयं श्री अवारी ही मुझे गलत समझे हैं। मुझे तो कुछ याद नही पड़ता कि मैंने श्री अवारीको किसी भी तरहकी बातके सम्बन्धमें सविनय अवज्ञा शुरू करनेके पक्षमें पहले ही से अपनी सम्मति दी हो। इस तरहकी सम्मति पहलेसे दे देना वस्तुतः मेरे स्वभावके विपरीत है। श्री अवारीकी देश-भक्ति और स्वार्थ-त्यागके लिए मेरे दिलमें बड़ी जगह है और मैंने उनके साथ सविनय अवज्ञाके सिद्धान्तपर बातचीत जरूर की थी। मैंने सविनय अवज्ञाकी गम्भीर मर्यादाओंकी ओर भी उनका ध्यान आकर्षित किया था। उन्होंने बंगालके नजरबन्द कैदियोंके विषयमें बड़ी ममता और चिन्ताके साथ अपनी बात की थी और यह उचित भी था। मुझे याद है कि मैंने उनसे यह कहा था कि यदि सविनय अवज्ञा सरीखे किसी आन्दोलनकी बात सोची जा सके और सफलताके साथ उसे शुरू किया जा सके, तो एक बड़ा काम होगा। अब भी मेरा यही मत है। क्योंकि मैं मानता हूँ कि बंगालके देशभक्तोंको किसी भी प्रकारकी जाँचके बिना अनिश्चित समयतक जेलोंमें डाले रखना एक भारी अन्याय है। और यदि अभीतक मैं इस विषयपर चुप रहा हूँ तो इसलिए नही कि मेरे दिलमें उन देशभक्तोंके प्रति उनके घनिष्ठतम मित्रों जितना ही प्रेम नही है, बल्कि इसलिए कि मैं व्यर्थ ही अपनी बेबसीका इजहार करना नही चाहता। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताको जिस बातमें उसका बस न चले उसे धीरजसे सहना सीखना पड़ता है और यदि रोगशय्यापर पड़ा हुआ भी मैं उन बंगाली देशभक्तोंको उस कैदसे छुड़ानेका कोई व्यावहारिक और शान्तिपूर्ण उपाय सोच सकता, तो मैं जरा-सी भी झिझकके बिना उसपर एकदम अमल करने लग जाता। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि ऐसा कोई उपाय मुझे नही सूझता। मेरी अपनी निजी राय तो यही है कि अभी देशमें सविनय अवज्ञाके लिए अनुकूल वातावरण नही है। हमारे बड़े बुरे दिन चल रहे हैं। आज वातावरण अहिंसात्मक सविनय अवज्ञाके लायक नही, बल्कि देशमें अत्यन्त हिंसात्मक और आत्मघातक अवज्ञाका वातावरण है।

मुझे कतई कुछ पता नही कि नागपुरमें क्या किया जा रहा है। मैं श्री अवारीके आन्दोलनपर कोई राय प्रकट नही कर सकता और मैंने उनके इस आन्दोलनको अपनी सम्मति भी नही दी है। मैं तो उसके विषयमें एक भी शब्द कहना नही

चाहता था। अच्छा होता यदि श्री अवारी व्यर्थ ही मेरे नामको बीचमें न घसीटते। यदि उनका खयाल था कि उनके आन्दोलनके लिए मेरी अनुमति है तो उन्हें ऐसा करना चाहिए था कि वे अपने आन्दोलनकी सारी योजना स्पष्ट रूपसे मेरे सामने रखते, और उसपर मेरी लिखित अनुमति प्राप्त कर लेते। यदि मैं उसे ठीक मान लेता, परन्तु उसमें सक्रिय भाग न ले पाता तो कमसे-कम इन स्तम्भोंमें मैं अपनी पूरी शक्तिभर उसका समर्थन तो करता ही। खैर, अब यदि मेरे अनुमति देनेकी बात स्वीकार न करनेसे उनके आन्दोलनको किसी प्रकारसे क्षति पहुँचे, तो इसके लिए वे अपने आप ही को धन्यवाद दें।

और आइन्दाके लिए मेरे नामका उपयोग करनेकी इच्छा रखनेवाले सभी लोगोंके लिए मेरा यह कदम चेतावनीका काम भी देगा कि मेरी लिखित सम्मति लिए बिना वे किसी आन्दोलनके साथ मेरा नाम न जोड़ें। वस्तुत: अब तो कार्यकर्त्ताओंको स्वावलम्बी और इतना साहसी हो जाना चाहिए कि अपने आन्दोलनके लिए उन्हें बड़े और प्रभावशाली समझे जानेवाले लोगोंके नामोंका उपयोग करनेके लिए उनके मुँह न ताकने पड़ें। उन्हें अपनी मान्यताओंपर और अपने उस उद्देश्यके बलपर, जिसे वे हासिल करना चाहते हों, भरोसा रखना चाहिए। गलतियाँ तो होंगी। कष्ट भी होंगे, ऐसे कष्ट जो टाले जा सकते थे। लेकिन राष्ट्रोंका निर्माण आसानीसे नहीं हो जाता है। कोई बड़ी और स्थायी चीज हासिल करनेके पहले कठोर और कड़े अनुशासनका होना जरूरी है। और यह अनुशासन कोरे तर्कों और तर्कमें सही लगनेवाली बातोंसे नहीं प्राप्त होगा। अनुशासनका पाठ तो विपत्तिकी पाठशालासे सीखा जाता है। और जब जोशीले जवान किसीकी आड़ लिये बिना उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करनेमें प्रशिक्षित हो जायेंगे तो वे जिम्मेदारी और अनुशासनको भी अच्छी तरह जानने लग जायेंगे। और वैसे भावी नेताओंके लश्करमें से एक ऐसा सच्चा नेता पैदा होगा, जिसे अनुशासन और आज्ञापालनके लिए उन गुणोंकी पैरवी नहीं करनी होगी, बल्कि वे गुण उसे अपने आप अनायास प्राप्त होंगे। क्योंकि वह बहुत-सी कसौटियोंपर खरा उतर चुका होगा और निर्विवाद रूपसे अपना नेता होनेका अधिकार सिद्ध कर चुका होगा।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-५-१९२७

३५३. भयंकर कर्म

डर्बनसे भेजे हुए एक पत्रमें श्री एन्ड्रचूज लिखते हैं:[1]

मैंने उम्बिलोके मन्दिरको देखा है। वास्तवमें उम्बिलोको डर्बनका ही एक बाहरी मोहल्ला कहना चाहिए। कई वर्ष पूर्व यह मन्दिर बनाया गया था, तब मेरे मनमें कुछ गलत धारणाएँ थीं। अपने कड़ुए अनुभवोंसे मुझे यह शिक्षा मिली कि सभी मन्दिर "देवालय" नहीं होते। वे शैतानके निवासस्थल भी हो सकते हैं। जबतक इन पूजास्थलोंके पुजारी भगवानके अच्छे बंदे नहीं होते तबतक उन पूजास्थलोंका कोई महत्त्व नहीं है। मन्दिरों, मस्जिदों और गिरजाघरोंको इन्सान जैसा बनाता है, वैसे ही वे बन जाते हैं। इसलिए इस स्थानमें, जिसे लोग मन्दिरके नामसे पुकारते हैं, किये जानेवाले कष्टप्रद और घोर अन्धविश्वासपूर्ण कर्मोका हाल पढ़कर मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। यह जानना कि इन कार्योकी शुरुआत कैसे हुई काफी आसान है। दक्षिण आफ्रिकामें तीन तरहके भारतीय हैं। स्वतन्त्र भारतीय व्यापारियोंका इन जघन्य कृत्योंसे कोई सरोकार नहीं है। और न ही उपनिवेशमें जन्मे उन भारतीयोंका जिन्होंने बड़ी-बड़ी बाधाओंके बावजूद काफी मात्रामें शिक्षा प्राप्त कर ली है। तीसरी किस्मके लोग वे गिरमिटिया भारतीय हैं जो अब स्वतन्त्र हो गये हैं। वे स्वभावतः भारतके गरीबसे-गरीब तबकेके लोग हैं। और इन बेचारे पुरुषों और स्त्रियोंको अज्ञान तथा अन्धविश्वासोंसे मुक्त करानेके लिए न तो सरकारने कभी कोई प्रयत्न किया है, न उनके मालिकोंने और न ही दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए स्वतन्त्र भारतीय समुदायने। परिणाम यह होता है कि वे ऐसे अंधविश्वासी और कुटिल स्वभाववाले लोगोंके चंगुलमें फँस जाते हैं, जो अपनेको पुजारी, पण्डा या साधुके रूपमें पेश करते हैं। वे कुछ संस्कृतके श्लोक बोलते हैं, जिनके अर्थ वे खुद नहीं जानते और उनका उच्चारण भी बहुत ही भद्दी अशुद्धियोंके साथ करते हैं। और अनेक प्रकारकी श्रद्धा उत्पन्न करनेवाली क्रियाएँ करते हैं। और ऐसे कर्मोके लिए भला मन्दिरसे अधिक अच्छा स्थान और कहाँ हो सकता है, क्योंकि मन्दिरोंमें ही सीधे-सादे लोग इकट्ठे होते हैं, और मन्दिरके वातावरणमें चूँकि भक्ति तथा पवित्रताकी भावना भरी रहती है, वहाँ हर प्रकारका अन्धविश्वासयुक्त कर्म भी श्रद्धासे देदीप्यमान हो जाता है। मेरा खयाल है कि यदि दक्षिण आफ्रिकाकी सरकार इन कुकर्मोको बन्द करना चाहे तो वहाँका प्रचलित कानून ही इतना व्यापक है कि उसीके अधीन सरकार ऐसे कर्मोको बन्द करा सकती है।

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें यह कहा गया था कि उम्बिलो मन्दिरमें भारतीयों द्वारा "आगपर चलने" जैसे भयानक आत्मपीड़क खेलोंका प्रदर्शन होता है। उसमें यह लिखा था कि नेटाल एडवर्टाइजरने ऐसे दृश्योंके चित्र भी अपने पत्रमें छापे हैं।

बदकिस्मतीसे हकीकत यह है कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति जो पूर्वाग्रह है, उसका कारण ये दुष्कर्म नहीं है और न वह इन क्रूर प्रथाओंके शिकार भारतीयोंके प्रति है। यह पूर्वाग्रह मुख्यतः उस स्वतन्त्र व्यापारी वर्गके प्रति है, जिनका इन कुप्रथाओंसे कोई सरोकार नहीं है। इसलिए इन कुप्रथाओंके विषयमें किसीका ध्यान नहीं गया है और न ही इनपर कोई टीका-टिप्पणी ही की गई है। और आज जो उन कुप्रथाओंकी तरफ ध्यान दिया जा रहा है, सो केवल इसलिए कि इस हबीबुल्ला शिष्टमण्डलके प्रति तथा उसके द्वारा भारतीय प्रवासियोंको जो-कुछ थोड़ा-सा लाभ पहुँचनेवाला है उसके खिलाफ गोरी जनताके मनमें द्वेषभाव पैदा किया जाये। स्मरण रहे कि ये दुष्कर्म दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंमें सभी जगह प्रचलित नहीं हैं। वे तो केवल एक हिस्सेमें, नेटालके समुद्री किनारेपर हैं, जहाँ गिरमिटिया भारतीय सबसे अधिक संख्यामें बसे हुए हैं। इसलिए यदि सरकार इन दुष्कर्मोंको बन्द करना चाहे तो वह उन्हें आसानीसे अपने सामान्य कानूनों द्वारा बन्द करा सकती है। यह म्युनिसिपल उपनियमोंके द्वारा भी बन्द कराये जा सकते हैं। मुझे निश्चित रूपसे मालूम है कि यदि उनपर कोई कानूनी कार्यवाही की गई तो इन दुष्कर्मोंके बचावमें जो झूठमूठ ही धार्मिक कहे जाते हैं धर्मके नामपर एक भी आवाज नहीं उठाई जायेगी। कोई भी सुसंस्कृत भारतीय उनसे बिलकुल दूर रहेगा और वे अज्ञानी भारतीय जो इन क्रूर कर्मोंको भयमिश्रित श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं, उनके पक्षमें न्यायालयमें बहस करनेकी हिम्मत नहीं करेंगे। हम यहाँ बैठे हुए यह तो कर सकते हैं कि इन अन्धविश्वासोंसे दक्षिण आफ्रिकाके सुसंस्कृत भारतीयोंको जूझनेके लिए प्रोत्साहित करें। सरकारी हस्तक्षेपकी याचना किये बिना उन्हें गरीबोंके बीच काम शुरू कर देना चाहिए और उनको इस बर्बरतासे विरत करनेकी कोशिश करनी चाहिए और यदि वे चाहें तो दुष्कर्मोंमें भाग लेनेवालोंपर अदालती कार्रवाई करनेकी दिशामें सरकारकी सहायता करनेकी सलाह भी दे सकते हैं। इस प्रकार वे यह प्रमाणित कर सकेंगे कि दक्षिण आफ्रिकामें अपने सामाजिक जीवनकी कुरीतियोंकी पुनरावृत्ति करनेकी हमारी इच्छा नहीं है, बल्कि यह है कि हमारी संस्कृतिमें जो-जो अच्छी बातें हैं वे ही वहाँ भी सामने रखें। दक्षिण आफ्रिकामें बसनेवाले भारतीयोंको हम सलाह दें और उन्हें प्रोत्साहित भी करें कि वे ऐसी कोई बात न करें, जिससे उनके विरुद्ध खड़े किये जानेवाले आन्दोलनको जरा भी बल मिले।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १९-५-१९२७

३५४. पत्र : सतकौड़ीपति रायको

नन्दी हिल्स, (मैसूर राज्य)
१९ मई, १९२७

प्रिय सतकौड़ी बाबू,

परसों मुझे आपका पत्र उस दिनकी डाक बन्द हो चुकनेके बाद मिला। कल तो आपका पत्र निबटाना सम्भव ही नहीं था।

आपकी परेशानियोंमें मुझे आपसे पूरी सहानुभूति है। परन्तु मुझे लगता है कि जिस दिशामें आप मेरी सहायता चाहते हैं, वह मेरे बसकी बात नहीं है। तो भी आप कृपया अपनी सम्पत्तिका सारा विवरण दीजिए। वह कहाँ स्थित है, कितनी है, क्या उसपर इमारतें भी बनी हुई हैं, यदि हैं तो उनकी लम्बाई चौड़ाई कितनी है? इस जानकारीका होना मेरे लिये लाभदायक होगा। परन्तु आपका मामला असाधारण नहीं है। मैं बहुतसे लोगोंको जानता हूँ जो इसी तरहकी कठिनाईसे गुजर रहे हैं। अपने ध्येयकी तरफ आगे बढ़ते हुए हमें जिन संकटोंको पार करना पड़ता है, यह भी उनमेंसे एक है। मैं चाहता हूँ कि आप दार्शनिकों जैसी शान्तिसे अपनी विपत्तियोंको सहन कर लें। मैं जानता हूँ कि आप ऐसा ही करेंगे।

परन्तु आप यह क्यों कहते हैं कि दिवालिया करार दिये जानेकी बात आप सोच भी नहीं सकते। यदि उधार लेनेवाला फलने-फूलनेवाले उद्योगमें लगानेके लिए सच्चे भावसे उधार लेता है, तो उसका इस तरह दिवालिया हो जाना पाप नहीं है। मान लीजिए कि मेरा अपना उद्योग मेरे किसी कसूरके बिना असफल हो जाता है और उधार देनेवालेको मालूम हो जाता है कि मेरे पास पैसा वापस देनेका कोई साधन नहीं है। यद्यपि जैसा कि मुझे करना चाहिए, मैं दिवालियेपनके बावजूद पैसा वापस देना चाहता हूँ, परन्तु यदि वह लेनदार अधीर ही हो उठता है, तो फिर मेरे लिये केवल एक ही सम्मानजनक मार्ग खुला रह जाता है कि मैं अपनेको दिवालिया घोषित कर दूँ। मेरा दिवालिया करार कर दिया जाना ही एक ऐसा रास्ता है, जिससे मैं आगे भी व्यापार कर सकता हूँ। वकीलके रूपमें आप दिवालियेपनके कानूनका रहस्य समझते हैं। इसका सृजन इसलिये किया गया था कि ईमानदार परन्तु अभागे उत्साही व्यक्तियोंको संरक्षण दिया जा सके तथा व्यवसाय एवं उद्यमको बढ़ावा मिल सके। निःसन्देह बढ़िया नियम तो यह है कि ऋण न लिया जाये। परन्तु इस सुनहरे नियमका हममें से बहुत थोड़े लोग पालन करते हैं। इसलिए दूसरे दर्जेका श्रेष्ठ उपाय यह है कि पराजय स्वीकार न की जाये परन्तु दिवालिया करार देनेवाली अदालतकी शरणमें जाकर जीवनका नया अध्याय आरम्भ किया जाये और यदि अगले उद्यममें सफलता मिले तो स्वेच्छासे मूल ऋणदाताका पैसा लौटा दिया जाये। ऐसे लोगोंके उदाहरण प्रसिद्ध हैं, जो स्वेच्छासे दिवालिये बन गये और बादमें उन्होंने

अपने लेनदारोंका पैसा वापस कर दिया। अपनी वकालतके दौरान मैंने अपने एक सबसे ज्यादा प्रिय मुवक्किलको[1] ऐसी ही सलाह दी थी। उसने सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग लिया था, अतः उसे दिवालिया करार देनेवाली अदालतमें जाना पड़ा। मैंने लेनदारोंकी सभा बुलाई। वे माननेके लिए तैयार नही थे। मैंने उन्हें ललकार कर कह दिया कि उनसे जो बन पड़े कर ले। परिणाम दिवालियापन था। परन्तु दिवालियापनके बाद मेरे मुवक्किलने ऋणदाताओंकी सारी रकम वापस कर दी। इससे उन्हें बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ। उन्होंने क्षमा माँगी। बादमें उन लोगोंने मेरे मुवक्किलको अपरिमित धन उधार देकर अपनी श्रद्धा दिखाई, जिसके लिए उन्हे खिन्न होनेका अवसर कभी नही आया। इसलिए मै आपको दृढ़तासे सलाह देता हूँ कि आप ऋणदाताओंसे मिले। सारी स्थिति स्पष्ट रूपसे एवं निडर होकर उनके सामने रख दें और उन्हें बता दें कि यदि कमाई होगी तो आप उनका पैसा वापस कर देंगे। यदि वे नही सुनते तो आपको दिवालिया बनवा दें। या यदि दिवालियेपनका कानून स्वेच्छापूर्वक समर्पणकी अनुमति देता हो तो आप स्वेच्छासे भी अपना सब कुछ उनके हवाले कर सकते है। तब आपको साँस लेनेका वक्त मिल जायेगा। उस समय यदि आप फिरसे वकालत आरम्भ करना न चाहें तो आप खादी सेवामें प्रवेश कर सकते है। खादीसे आपको २५,००० रुपये कभी नही मिलेगे। परन्तु यदि खादी आन्दोलन शीघ्रतासे प्रगति करे, तो खादी तिजारती व्यवसाय बन जायेगा। और जब ऐसा हो जायेगा, तो इसमें से भी अच्छी खासी रकम प्राप्त की जा सकेगी। यह बहुत देरसे हो सकनेवाला कार्य लगता है। परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता है, क्योंकि मै खादीको व्यापारिक दृष्टिकोणसे भी बहुत ही ठोस व्यवसाय मानता हूँ। हमारे धनिक व्यापारी व्यापारसे जो कुछ रकम कमायेंगे उसका न्यूनतमांश खादीसे भी कमाया जा सकता है। आखिरकार ठोस आधारवाले किसी भी व्यवसायकी प्रगति धीमी होगी। परन्तु मेरा खादीमें ऐसा विश्वास है कि यद्यपि इसकी प्रगति धीमी है, किन्तु आगे चलकर यह किसी व्यक्ति और निस्सन्देह राष्ट्रकी स्वस्थ व्यावसायिक समृद्धिका सबसे छोटा रास्ता साबित होगा।

इसलिए मै नही चाहता कि आप झूठे गर्व अथवा झूठी मानमर्यादाके प्रभावमें आकर हार मान बैठें। मै चाहता हूँ कि आप दूसरोंके लिए दृष्टान्त बने। इसलिए कृपया मेरी सलाह मानिये और इस बोझसे, जो आपको दबाये डाल रहा है, छुटकारा पा लीजिए। उसके बाद दृढ़ प्रतिज्ञा कर लीजिए कि अबसे एक पैसा भी उधार नही लेंगे। जनसेवकोंको उधार लेना ही नही चाहिए। आपके परिवारमें आपके जो बहुतसे आश्रित है उनसे आप अनुरोध करें कि वे अपनी रोजी स्वयं कमायें। वे सब खादीका काम करें। और यदि वे ऐसा नही करना चाहते तो पुरुष सदस्य अपना मार्ग स्वयं चुन सकते हैं। हो सकता है कि महिलाएँ इसपर शिकायत करती रहें, परन्तु अन्तमें वे नियतिके आगे झुक जायेंगी। पारिवारिक दायित्वोंका नियमन भी राष्ट्रीय उन्नतिका आवश्यक अंग है। यदि हमें राष्ट्रीय प्रतिष्ठा प्राप्त करनी है

१. अ० मु० काछलिया; देखिए खण्ड ९, पृष्ठ १५८।

तो हमें इन पारिवारिक बाधाओंको दूर करते हुए आगे निकलना है। मैं जानता हूँ कि झूठमूठ स्वीकार किये गये ये दायित्व व्यक्तियोंकी एवं राष्ट्रकी उन्नतिमें जैसा रोड़ा अटका रहे हैं, वैसी बाधा साधारणतया अन्य बहुत कम चीजें पैदा कर रही हैं। जिन पुरुषों एवं महिलाओंमें काम करनेकी शक्ति है, उनका भरण-पोषण करना गलत काम है। मैं तो कुछ ऐसा कहना चाहता हूँ कि यह अनैतिक कार्य है। यदि कोई समृद्ध राष्ट्र भी अपने आधे लोगोंका, बिना उनसे काम लिये, भरण-पोषण करना आरम्भ कर दे, तो वह राष्ट्र नष्ट हो जायेगा। हम तो इससे कहीं ज्यादा बुरा कार्य कर रहे हैं और फिर भी हम शक्ति-सम्पन्न, आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमानी राष्ट्र बनना चाहते हैं। यह असम्भव बात है।

अपने अन्तिम निर्णयकी सूचना मुझे अवश्य ही दीजिएगा। आप मुझे जब पत्र लिखना चाहें, निस्संकोच होकर लिखते रहें। यदि आपको सार्वजनिक सेवाकार्यसे विरत होना पड़े तो यह बड़े संकटकी बात होगी।

हृदयसे आपका,

श्री सतकौड़ीपति राय
२७, कालीदास पतितेन्दु लेन
कालीघाट
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १२५७९) की फोटो-नकलसे।

३५५. पत्र : एस० श्रीनिवास आयंगारको

नन्दी हिल्स
१९ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

अपनी शक्तिको बनाये रखनेके लिए मुझे बोलकर लिखवाना ही पड़ता है।

मैं आपके सुविचारित तारकी[1] कद्र करता हूँ। हमारे चारों ओर जो गन्दा वातावरण है, उसके कारण मैं यह तार पाकर उत्साह नहीं दिखा पाया। हमारे अच्छेसे-अच्छे प्रस्ताव निष्फल होकर रह जाते हैं, क्योंकि ऐसा लगता है कि हम लोगोंको अपने साथ ले चलनेकी शक्ति खो बैठे हैं। यदि लोग बर्बरतासे एक दूसरेके सिर फोड़ते रहें, तो हमारे प्रस्तावोंसे क्या लाभ होनेवाला है? परन्तु मैंने आपके सम्बन्धमें कहा है कि जहाँ दूसरे लोग असफल हो गए हैं वहाँ आप अपने अजेय विश्वासके कारण सफल हो सकते हैं। इसलिए मैं आपके लिए पूर्ण शक्तिकी कामना

१. तारमें १५ और १६ मईको बम्बईमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा हिन्दू-मुस्लिम समस्यापर सर्वसम्मतिसे पास किये गए प्रस्तावका विवरण था।

करता हूँ। यदि आप इस अपमानजनक गृहयुद्धको समाप्त करने एवं आजकल हम लोग जो पशु बने हुए हैं, उन्हें मानव बनानेमें सफल हो जायें, तो मुझे अत्यन्त हर्ष होगा। मेरी सेहत बराबर सुधर रही है और मैं जितना हो सकता है, उतने ध्यानसे आपकी हलचलोंकी जानकारी रखनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

पूर्ण शुभ कामनाओं सहित,

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० श्रीनिवास आयंगार
मेलापुर

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२४) की फोटो-नकलसे।

३५६. पत्र : छगनलाल गांधीको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ३ [१९ मई, १९२७][1]

चि० छगनलाल,

तुम लिखते हो कि कराची जानेके बजाय अभी मणिबहनका आश्रममें रहना ही ज्यादा अच्छा होगा। यह तो दैव ही जाने कि जानेका अवसर आयेगा भी या नही। किन्तु वह वहाँ न जाये तो भी उसे कही तो भेजना ही है। कारण, आश्रमके प्रति उसके मनमें कोई ममताका भाव मैं अभी तक नही देख पाया हूँ। लड़की मनकी बहुत साफ, खरी और ईमानदार है इसलिए वह जहाँ भी होगी, काम तो करेगी ही, किन्तु इसके साथ ही वह रुचि लेना सीखे और उसमें स्नेह-भावका विकास हो, इसका प्रयत्न तो तुम सबको करना ही चाहिए। यदि तुमसे बने तो उसे वही रखो। और [फिलहाल] यदि ऐसा हो सकता है तो फिर मुझे उसे अन्यत्र भेजनेकी जरूरत नही रह जाती। कराची जानेकी बात यदि तय होती है तो मैं वैसा होने दूंगा। किन्तु कुछ समयके बाद उसे वापस बुलाया जा सकता है। बहनोंने रसोई घरकी जिम्मेदारी उठा ली है, यह जानकर खुश हुआ। उन सबको मेरी ओरसे बधाई देना और कहना कि उन्होंने जो काम हाथमें लिया है उसे उन्हें सुशोभित करना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१८७) से।
सौजन्य : छगनलाल गाधी

1. वर्षका निर्धारण पाठके आधारपर किया गया है।

३५७. पत्र : फूलचन्द शाहको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ३ [१९ मई, १९२७]

भाईश्री ५ फूलचन्द,

आपका पत्र मिला। मेरा अपना मत हमेशा यही रहा है कि देशी रियासतोंके कामकाजमें अंग्रेजोंको मध्यस्थताके लिए नहीं बुलाना चाहिए। पर यह मत हर मामलेमें मानने योग्य है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। क्योंकि जो मनुष्य अंग्रेजोंको मध्यस्थताके लिए नहीं कहता या उसकी इच्छा नहीं करता उसमें मैं दूसरे प्रकारकी शक्तिका होना मान लेता हूँ। दूसरे प्रकारकी शक्ति यानी यह कि वह जुल्मका मुकाबला शान्ति या अशान्तिसे लड़कर करे अथवा इस सारे अन्यायको चुपचाप सहन करनेकी शक्तिका विकास करे। जो मनुष्य न तो लड़ सकता हो और न जुल्म सहन कर सकता हो, जो अंग्रेजोंकी मदद न लेनेपर बिलकुल निरुपाय हो जायेगा और परवशता स्वीकार करके अपना मनुष्यत्व खो बैठेगा, उसे अंग्रेजी राज्यकी मदद अवश्य लेनी चाहिए।

काठियावाड़ राजकीय परिषदकी मेरी जो कल्पना है उसमें अंग्रेजी राज्यकी मदद लेनेकी बात नहीं है। इसलिए अगर यह परिषद मेरी कल्पनाके अनुसार चलेगी तो उसमें सिर्फ असहयोगी, सत्याग्रही, खद्दर-पोश आदि [रामायणकी भाषामें] वानर और रींछ ही होंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २८५४) से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

३५८. पत्र : शापुरजी सकलातवालाको

नन्दी हिल्स, (मैसूर राज्य)
२० मई, १९२७

प्रिय मित्र,

यह उद्धरण पण्डित मोतीलालजीने मेरे पत्रका जो उत्तर दिया है, उसमें से है। कृपया मुझे बताइये कि आप इस मामलेमें मुझसे क्या करवाना चाहेंगे।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

शापुरजी सकलातवाला, संसद सदस्य
हाउस ऑफ कॉमन्स
लन्दन एस० डब्ल्यू० १

अंग्रेजी (एस० एन० १२५०४) की फोटो-नकलसे।

३५९. एक पत्र

आश्रम
साबरमती[1]
२० मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला, जिसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने जिन लेखोंका जिक्र किया है, उनके अलावा एवं जी० ए० नटेसन द्वारा संग्रहीत लेखों, १९२२ से लेकर 'यंग इंडिया' की प्रतियों और मेरी 'इंडियन होमरूल'[2] नामक पुस्तिकाके अलावा स्व० रेवरेन्ड जोसेफ डोक, डा० पी० जे० मेहता और एच० एस० एल० पोलक द्वारा लिखित निबन्ध भी हैं। इनमें से बहुतसे प्रकाशन 'इंडियन रिव्यू', मद्रासके जी० ए० नटेसनसे प्राप्त किये जा सकते हैं। 'यंग इंडिया' का सम्पादन मैं करता हूँ और इसका प्रकाशन अहमदाबादमें होता है। 'एथिकल रिलिजन'[3] मूल पुस्तक नहीं है। यह अमेरिकामें प्रकाशित, साल्टर द्वारा लिखित 'एथिक्स ऑफ रिलिजन,' जिसे मैंने कई साल पहले पढ़ा था, के गुजराती रूपान्तरका अनुवाद है। मैंने इसका अनूदित रूप नहीं पढ़ा है। इसलिए इस पुस्तकसे मेरे सिद्धान्तोंके विषयमें ज्ञान प्राप्त करना जोखिमका काम होगा। यदि आपको और कुछ जानना आवश्यक लगे तो संकोच न कीजिये। कृपया उसके बारेमें पूछ लीजियेगा।

आपने मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें जो पूछताछ की, उसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मेरे स्वास्थ्यमें बराबर सुधार हो रहा है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२५) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।
२. देखिए खण्ड १०।
३. देखिए खण्ड ६।

३६०. पत्र : वसुमती पण्डितको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ४ [२० मई, १९२७]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि लिखने लायक कोई बात न सूझे तो भी सप्ताहमें एक बार पत्र लिखनेसे तुम्हें छुट्टी नहीं मिल सकती। और कुछ नहीं तो इससे मुझे इतना तो देखनेको मिलेगा ही कि तुम्हारी लिखावटमें कितना सुधार हुआ है। और यदि तुम्हें लिखनेको कुछ भी न मिले तो पत्र लिखनेके (अथवा उससे पहले) दिन तुमने जो कुछ किया हो उसका विवरण ही लिख दिया करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४७४) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

३६१. पत्र : जॉर्जेस मिग्ननको

आश्रम
साबरमती[1]
२१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला, जिसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

आप अपनी पत्रिकामें 'सत्यके प्रयोग' नामक मेरी पुस्तकके परिच्छेद प्रकाशित कर सकते हैं। उन्हें फ्रेन्च भाषामें पुस्तकके रूपमें प्रकाशनके अधिकार एम० एमिल रोनिगरको पहलेसे ही दिये जा चुके हैं। इसलिए आप अपने अनुवादको कृपया अपनी पत्रिकामें प्रकाशित करनेतक ही सीमित रखें। मैं समझता हूँ कि आप कृपापूर्वक अपनी पत्रिकाकी वे प्रतियाँ, जिनमें वह अनुवाद समय-समयपर छपता रहेगा, मेरे पास भेजते रहेंगे।

हृदयसे आपका,

एम० जॉर्जेस मिग्नन
सम्पादक, 'एक्सट्रीम-एशिया'
सैगोन

अंग्रेजी (एस० एन० १२५०५) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।

३६२. पत्र : मु० अ० अन्सारीको

नन्दी हिल्स
२१ मई, १९२७

प्रिय डा० अन्सारी,

आपकी बीमारीका समाचार सुनकर मुझे बड़ा दु:ख हुआ। आशा है कि आप शीघ्र स्वस्थ हो जायेंगे। आप स्वास्थ्य सुधारनेके लिये यहाँ क्यों नही आ जाते? जैसा कि आप जानते ही हैं, यहाँका जलवायु बड़ा अच्छा है।

जाने क्यों अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके प्रस्तावसे[1] मुझे तात्कालिक परिणामकी आशा नही बँधती; उससे कोई उत्साहका सवाल तो कतई नही उठता। मेरे अन्तस्तलमें वह आशा तो विद्यमान है जो दृढ विश्वाससे आती है। परन्तु उस आशाको इस प्रस्तावसे कोई ज्यादा प्रेरणा नही मिलती। क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि वे थोड़ेसे लोग जो निष्पक्ष भावना रखते हैं, या जिनके चित्त शान्त रहते हैं, इस समय जो संघर्ष कर रहे हैं या जो संघर्ष करनेवाले लोगोंके पृष्ठपोषक हैं, उन लोगोंपर कोई प्रभाव नही डाल सकते। मैं नही जानता कि आप उनपर अपना कोई प्रभाव मानते हैं या नही। मुझे इसमें धर्मकी आड़में हो रही शैतानीके अलावा और कुछ भी नही दिखाई देता। जबतक हम आदमी बनना नही सीखते और इसीलिए काल्पनिक या वास्तविक अधिकारोंपर किये गये प्रहारोंसे सम्बद्ध मामलोंको मध्यस्थताके लिये सुपुर्द करना नही सीखते, और जबतक हम सरकारी हस्तक्षेपके बारेमें सोचना बन्द नही कर देते, तबतक क्या हमें वास्तविक शान्ति और वास्तविक स्वराज्य मिल सकता है? मुझे इससे कम किसी भी चीजसे संतोष नही है। इसलिए मेरी एकमात्र आशा प्रार्थना और उसके सुने जानेमें है।

हृदयसे आपका,

डा० एम० ए० अन्सारी
१, दरियागंज
दिल्ली

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२६) की फोटो-नकलसे।

१. हिन्दू-मुस्लिम एकतापर; देखिए "पत्र : एस० श्रीनिवास आयंगारको", १९-५-१९२७।

३६३. पत्र: मणिबहन पटेलको

नन्दी दुर्ग
२१ मई, १९२७

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला।

'कदी नहीं हारना भावे साडी जान जावे' यह गीत तो तुमने सुना है न? इसलिए हमारी जान भी चली जाये, तो भी क्या? और फिर कातने और सुन्दर अक्षर लिखनेके मामलेमें क्या हार मानना उचित है? सावधान करनेके लिए एक चौकीदार तो मैं वैठा ही हूँ, तुम्हारे पास हूँ। बूँद-बूँद करके सरोवर भरता है और कंकर-कंकर करके बाँध तैयार होता है। उद्यमके आगे कुछ भी असम्भव नही। इसलिए निराश होनेका कोई कारण नही। नियमित रूपसे कातनेसे गति जरूर बढ़ेगी; नियमित रूपसे साफ और बड़े-बड़े अक्षर लिखनेकी आदत डालनेसे अक्षर जरूर सुधरेंगे। जिनके अक्षर बहुत खराब थे और अभ्याससे अच्छे हो गये, इसके मेरे पास कई उदाहरण हैं। भण्डारका काम अपने ऊपर लेकर तुमने बहुत अच्छा किया। अब उसे हरगिज न छोड़ना और अच्छी तरह पूरा करना। हिसाब लिखना भले ही न पड़े, परन्तु हिसाबके सामान्य सिद्धान्त जान लेना। और भण्डारके कामके कारण दो घंटे कातनेका समय न मिले तो भले ही कम कातो, परन्तु जितना समय मिले उतने समयमें स्वस्थ चित्तसे कातना। अधीरतासे लम्बे समयतक कातनेकी अपेक्षा एकाग्र चित्तसे धीरजके साथ थोड़े समय कातनेसे कस बढ़ेगा और गति बढ़ेगी और सब तरहसे अच्छा सूत निकलेगा।

गंगादेवीके बारेमें मुझे खबर देती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो — ४: मणिबहेन पटेलने

३६४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ५ [२१ मई, १९२७]

भाई घनश्यामदासजी,

दो दिनसे जमनालालजी यहाँ आ गये हैं। उन्होंने आपको संदेशा दिया है। जो कुछ मैंने आपसे लिखा है उससे ज्यादह लिखनेका कोई ख्याल नही आता। बादशाहकी मुलाकातके बारेमें मेरा अभिप्राय यह है कि उस मुलाकातकी आप कोशिश न करें। यदि हिंदी प्रधान या तो मुख्य प्रधान मुलाकात करानेके लिये चाहे तो उस बातका इनकार भी न करे। जब तक मुझे ज्ञान है मेरा ऐसा मंतव्य है कि बादशाहके पास कुछ राज्य प्रकरणकी बातें नही की जा सकती हैं। केवल क्षेत्र कुशलकी हि बात होती है। प्रधानोंको अवश्य मिलें। और उनके साथ जो कुछ भी दिल चाहे वह बात कर सकते हो। वहाकी जेलोंका सूक्ष्म निरीक्षण करे, और लंदनके गरीब प्रदेशमें किसी जानकार मनुष्यके साथ खूब भ्रमण करें और गरीबोंकी स्थितिका अवलोकन करे। शनिचरकी रात्रिको एक या दो बार गरीब और धनिक प्रदेशके शराबखानोंके नजदीक खडे रहकर वहाकी भी चेष्टा देखें।

मेरा स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन अच्छा होता जाता है।

पूज्य मालवीयाजीको मैंने बहुत दिनोंके पहले खत लिखा। उसके उत्तरकी आशा नही रखता हूं। क्योंकि पत्रोंका उत्तर देना उनका स्वभाव नही है। तारोंका उत्तर तारसे अवश्य देते हैं। मैं तो दुबारा भी लिखनेवाला हूं।

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

आपका,
मोहनदास

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४७) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३६५. नौकरीसे अलग किया जाये?

श्री अमृतलाल ठक्करने एक अन्त्यज वहनके प्रति जिस डाक्टरकी निर्दयताका उल्लेख किया था[1], उसका नाम-धाम अव मुझे मालूम हो गया है। इस समय उस घटनाकी जाँच की जा रही है। इसलिए मैं अभी डाक्टरका नाम-धाम वतानेकी कोई आवश्यकता नहीं देखता। परन्तु एक प्रसिद्ध डाक्टर मित्र लिखते हैं:[2]

मेरा इस पत्रको प्रकाशित करनेका उद्देश्य केवल यही है कि अन्त्यज वहनके प्रति ऐसी निर्दयता कोई भी वरदाश्त नही कर सकता। मैं नहीं मानता कि यदि वह डाक्टर निजी तौरपर अपना धन्धा करता हो तो अहिंसाका पालन करनेवालोंके लिए हाथ पर हाथ रखकर रोनेके सिवा और अहिंसाका पालन न करना हो तो उसकी हड्डियाँ-पसलियाँ तोड़नेके सिवा और कोई उपाय शेष नहीं रहता। हड्डियाँ-पसलियाँ तोड़नेसे वह डाक्टर सुधर जायेगा, ऐसा तो है नहीं। उससे अन्त्यज भाई-वहनोंको भी कोई लाभ न होगा। उससे न डाक्टरके प्रति न्याय होगा और न उस वहनके प्रति की गई निर्दयताका परिशोध। अहिंसा धर्मके सच्चे उपासक रो-धोकर वैठ जायें ऐसी कोई वात नही है। अहिंसा धर्म न तो कायरोंका धर्म है और न मूर्खोंका। वह तो ऐसे लोगोंका धर्म है जो चौवीसों घंटे जाग्रत रहते हैं। हिंसाका कानून तो केवल शरीर और शरीरसे सम्वन्धित वस्तुओंको ही प्रभावित कर सकता है; परन्तु अहिंसाका धर्म तो ठेठ हृदय तक पहुँचता है। अहिंसाके द्वारा मनुष्योंमें धर्मका वोध जगाया जा सकता है। यानी, समाजमें निर्भय और सात्विक लोकमतका विकास किया जा सकता है। जिस गाँव या नगरमें यह घटना हुई, वहाँ शुद्ध दयाधर्मका वातावरण होता तो ऐसी निर्दयताकी घटना वहाँ हो ही नही सकती थी। वह वेचारा डाक्टर तो निमित्तमात्र हो गया है। निर्दयता तो उस वायुमण्डलमें पहलेसे ही मौजूद थी। तभी तो उसे इलाज करनेसे पहले ही फीसके दो रुपये माँगनेकी हिम्मत हुई और रुपये मिल जानेपर भी उस अन्त्यज वहनको, उसके रोगकी जाँचके लिए भी छूनेमें भ्रष्ट हो जानेका भय लगा। अहिंसाका काम है, हमेशा जाग्रत रहकर सात्विक लोकमतका विकास करना और ऐसा वातावरण वना देना, जिससे इस डाक्टर जैसे लोगोंकी अधम वृत्तियोंको पोषण ही न मिलने पाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-५-१९२७

१. देखिए "घोर अमानुषिकता", ५-५-१९२७।

२. यहाँ उद्धृत नहीं किया जा रहा है।

३६६. गाय और भैंस

एक अहिंसाके उपासक लिखते हैं:[1]

मैंने "गाय बनाम भैंस" लेख लिखते समय मान लिया था कि भैंसको स्वराज्य देनेकी बातमें स्पष्ट करने जैसा कुछ नही है। जिस जानवरको हम पालते हैं उसकी स्वतन्त्रता तो हम छीन ही लेते हैं, भले उसका पालन कितने ही शुभ हेतुसे क्यों न करते हों। सैकड़ों अंग्रेज यह मानकर खुश होते हैं कि वे शुभ हेतुसे हिन्दुस्तानका पालन करते हैं। और हम उस पालनको अस्वीकार करते हैं, तो भी वे हमें बेवकूफ समझकर अपना पालन करनेका धर्म नही छोडते। लेकिन हम दोनोंके बीच कोई न्यायाधीश नियुक्त हो, तो उसके सामने हमारी इतनी गवाही काफी होगी. "हमारे दुःखकी बात हमारे स्वयंभू पालक क्या जानें? उसे या तो हम ही जान सकते हैं या त्रिकालदर्शी ईश्वर जानता है। और हम तो कहते हैं कि हमारा हित हमें छोड देनेमें ही है।" इसी तरह भैंसके जबान हो, उसके हमारे बीच निष्पक्ष न्यायाधीश हो, और भैंस हमारे जैसी दलील करे — और मैं मानता हूँ कि वह करेगी — तो निर्णय उसीके पक्षमें होगा। इसीसे मैंने लिखा कि भैंसको पालनेका मोह छोड़ देनेमें हम भैसको निकाल नही देंगे, यानी उसका अहित नही करेंगे, बल्कि उसे स्वतन्त्रता दे देंगे। इसमें ली हुई जिम्मेदारियोंका इनकार कही नही है। जिस भैंसको हमने रखा है, उसकी जिम्मेदारी तो निभानी ही पड़ेगी। लेकिन गायका वंश बढाने और सुधारनेके लिए अनेक उपाय सोचनेका जो धर्म हमने माना है वैसा धर्म, मेरा विचार ठीक हो तो, भैंसके सम्बन्धमें पैदा नही होता। यानी गोरक्षाके विशेष धर्ममें भैंसकी रक्षाको गिन लेना जरूरी नही है। मेरी बताई हुई योजना सब स्वीकार कर ले, तो जहाँ गाय-बैलका निर्वाह नही हो सकता और भैंसका ही निर्वाह हो सकता है, उन प्रदेशोंमें पाली हुई भैंसोंको इकट्ठा करने और उनके पाड़े वगैराकी भी पूरी रक्षा करनेका धर्म अपने-आप पैदा हो जाता है।

मेरे कहनेका मतलब यह नही था कि ग्राम-जीवन सम्बन्धी दुग्धालय और चर्मालय अलग ही होने चाहिए। परन्तु आजकी परिस्थितिमें हमारी ऐसी दयाजनक हालत हो गई है कि पशुपालनका शास्त्र, गायको दु.ख दिये बिना अधिकसे-अधिक दूध प्राप्त करनेका शास्त्र और उसका चमड़ा वगैरा कमानेका शास्त्र हम शहरोंमें प्रयोग करके ही गाँवोंमें ले जा सकेगे। आज जब कि गोचर भूमियोंका नाश हो गया है, खली, चारा वगैरा महँगे हो गये हैं, तब गाँवोंके लोग बड़ी मुश्किलसे अपने जानवरोंको जीता रख सकते हैं। चमड़ेका उपयोग तो अपढ़ चमार जितना हमें दे दे, उतना ही लेकर हम सन्तुष्ट रहते हैं। हड्डियाँ वगैरा बेकार जाती हैं। नतीजा यह

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें लेखकने गांधीजीके "गाय बनाम भैंस", ८-५-१९२७ शीर्षक लेखका हवाला देते हुए पूछा था कि भैंसको स्वराज्य देनेसे उनका क्या मतलब है।

होता है कि यह जीवित धन बरबाद हो रहा है, ढोर मरते नहीं तो हाड़पिंजर बनकर मुर्देकी तरह जिन्दा रहते है, अक्सर मालिकपर भाररूप हो जाते है और अन्तमें बम्बई वगैरा शहरोंके कसाईखानेमें पहुँचते हैं। मैं यह बात समझता हूँ कि इस स्थितिमें महत्वपूर्ण परिवर्तनकी जरूरत है, मगर अभी यह कहनेमें असमर्थ हूँ कि यह परिवर्तन कैसे हो सकते हैं और हमें पश्चिमसे कितना लेना चाहिए। यह सारी चीज अभी प्रयोगकी अवस्थामें है। अगर मैं साफ-साफ समझा सका होऊँ कि हमें क्या करना है, तो फिर किस तरह करना है, यह तो हरएक सेवकको अपने लिए और अपनी जिम्मेदारीपर तय करना होगा। ऐसा समय कभी था, जब हमारी सभ्यतामें उचित फेरबदल हो सकते थे और फेरबदलकी आवश्यकता लोग स्वीकार कर सकते थे। कहा जा सकता है कि जबतक उन्नतिकी यह शर्त मानी जाती थी, तबतक हमारी सभ्यता जीवित थी। आज तो हम यह मान बैठे है कि शास्त्रके नामसे जो छपी हुई पुस्तक हाथमें आये, उसमें लिखा सब ब्रह्म वाक्य है और उसमें कोई कमोवेशी नहीं हो सकती। हमें इस भयानक मानसिक मृत्युसे बाहर निकलना ही चाहिए। यह हम आज भी अपनी नई दृष्टिसे देख सकते है कि युग-युगमें हमारे रहन-सहनमें परिवर्तन हुआ है। यह नियम स्वीकार करके निःस्वार्थ संस्कारवान् सेवकोंको आत्म-विश्वासके साथ गाँवोंमें प्रवेश करना चाहिए। सभीके लिए खास सिद्धान्तोंको मानकर चलना बहुत जरूरी है। इन सिद्धान्तोंके अमलमें विविधता तो होगी ही; यह अनिवार्य है और स्वागत करने लायक है। उसमें से हमें सिद्धान्तोंपर अमल करनेके अच्छेसे-अच्छे रास्ते मिल जायेंगे। इस विचारश्रेणीके अनुसार यह बात गौण हो जाती है कि पश्चिमके यन्त्र इस्तेमाल करना है या नहीं, और करना है तो कहाँतक। साधारण नियम तो यह है ही कि गाँवोंमें जितना हम पैदा करते है या पैदा कर सकते है, उतना वहीं पैदा करें और बनावें और देहाती औजारोंसे काम चलता हो, तो जर्मनीके अधिक अच्छे माने जानेवाले क्रुपके औजार दाखिल करनेके जालमें न फँसें। लेकिन अगर हम सीनेकी सूई गाँवमें न बना सकते हों और आस्ट्रियासे सस्ती सूई मिलती हो, तो उसके साथ हमें कोई वैर नहीं रखना चाहिए। अच्छी, ग्रहण करने योग्य और हजम हो सकनेवाली चीज कहींसे भी लेनेमें मैं कोई दोष नही देखता।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-५-१९२७

३६७. पत्र : ईजावेल वमलेटको

नन्दी हिल्स, (मैसूर राज्य)
२२ मई, १९२७

प्रिय वहन,

आपका पत्र मिला। जब मैं कहता हूँ कि समस्या इतनी सहज नहीं है, जितनी आप समझती हैं[1], तो मेरे ऐसा कहनेके दो अर्थ होते हैं। यह काफी नहीं कि केवल ईश्वरका नामोच्चारण किया जाये या किसी विशेष वस्तु या किसी विशेष व्यक्तिके सहारे रहा जाये। वल्कि आवश्यक यह है कि ईश्वरकी सेवामें प्रस्तुत रह कर पता लगाया जाये कि उसकी इच्छा क्या है। यह मालूम करना है तो कठिन कार्य, पर मैंने उसे अनुभवसे वहुत आनन्दप्रद पाया है। कभी-कभी हमारे सामने यह दुर्वोध प्रश्न खड़ा हो जाता है कि जिसे हम ईश्वरकी इच्छा समझ रहे हैं वह वास्तवमें उसीकी इच्छा है हमारी अपनी नहीं। जब हम समझते हैं कि ईश्वरकी इच्छा वास्तवमें ईश्वरकी इच्छा है और वह हमारी इच्छासे मेल नहीं खाती, तो प्राय: यह एक प्रश्न वन जाता है और यह अति दुर्वोध प्रश्न होता है। इस तरह हम कुछ वैसी ही वातपर आ पहुँचते हैं, जैसी कि सेंट पॉलने कही है 'अपनी मुक्तिके लिये स्वयं उपाय करो।'

दूसरी कठिनाई यह है कि सभी धर्मोके वहुतसे सिद्धान्त समान हैं। सभी धर्मोंने अच्छे, सच्चे और धार्मिक पुरुषों एवं स्त्रियोंको जन्म दिया है और जन्म देते रहेंगे।

इन परिस्थितियोंमें संसारके सभी धर्मोके विनीत विद्यार्थीके लिये प्रार्थनासे यह निष्कर्ष निकाल पाना कि सबसे सच्चा धर्म कौन है, सहज कार्य नहीं है। परन्तु यह कहना, जैसा कि मैं भी कहता हूँ, कठिन नहीं है कि सव धर्म लगभग ईश्वर-प्रदत्त हैं, और इसलिए मनुष्यको अपने पूर्वजों द्वारा अपनाये गये धर्ममें मुक्तिका उपाय खोजना चाहिए। क्योंकि सत्यकी खोज करनेवाला इस निष्कर्षपर पहुँचता है कि सब धर्म द्रवीभूत होकर ईश्वरमें मिलकर एक हो जाते हैं, उस ईश्वरमें जो एक है और जो अपने सव जीवधारियोंके लिए समान है।

यदि मैंने 'यंग इंडिया' में कुछ लिखा तो आपकी चेतावनीको ध्यानमें रखूँगा। निश्चय ही मैं आपके नामका उल्लेख नहीं करूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीमती ईजावेल वमलेट
द्वारा द ब्रिस्टल होटल, कलकत्ता

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४४४२) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य : कार्लाइल वमलेट

१. देखिए "पत्र : ईजावेल वमलेटको", १०-५-१९२७।

३६८. पत्र : अब्बास तैयबजीको

नन्दी हिल्स
२२ मई, १९२७

प्रिय भुर्ररर और गर्वित पिता,

यद्यपि यह स्नेह-पत्र है, तो भी मुझे बोलकर ही लिखवाना पड़ रहा है। यदि मैं बिस्तरपर पड़ा हुआ बोलकर लिखवाता हूँ, तो मुझे उससे अपनी शक्ति बनाये रखनेमें मदद मिलती है। बहरहाल मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ताकी कोई बात नही है, क्योंकि मेरी सेहतमें बराबर सुधार हो रहा है। उस स्वास्थ्यको जिसे मैंने निमिष मात्रमें खो दिया, फिरसे पानेमें अभी कुछ समय लगेगा। खोये हुए स्वास्थ्यको शायद पूरी तरहसे न पाया जा सके, परन्तु डाक्टरोंका खयाल है कि वह बहुत-कुछ तो फिर पूरी तरह सुधर सकता है।

कृपया, सोहेला और प्रोफेसर मुहम्मद हबीबको मेरी बधाई दें। यद्यपि मैं शारीरिक रूपसे आपके पास उपस्थित नही हो सकूँगा परन्तु मेरी आत्मा आपके पास होगी। मै कामना करता हूँ कि दोनोंका जीवन सुखी रहे एवं देशसेवाके लिए उपयोगी हों। सोहेलाको यह अवश्य स्मरण रखना चाहिए कि उसका विवाह इसलिए नहीं हो रहा है कि वह केवल एक गुड़िया बन जाये और देशके लिए उपयोगी न रहे। परन्तु उससे यह आशा की जायेगी कि वह उसी निष्ठासे देशकी सेवा करे जैसी निष्ठासे उसके पिता कर रहे है, जो बाल पक जानेपर भी युवा है, और जो प्रतिदिन युवा होते जा रहे है। यदि उसके पति इस सम्बन्धमें कही उदासीन हों, तो उन्हें भी वह अपनी आन्तरिक शक्तिसे प्रेरित करके इस सेवामें अपना साझेदार बनाये, क्योंकि उन्हें जीवनके सभी सुखों और दुःखोंमें साझेदार बनना है। मेरे यह कामना करनेसे कोई लाभ नही कि जीवनमें कभी कोई दुःख न हो, सुख ही सुख मिले। यह तो सुन्दर रंगोंकी विविधतासे विहीन जीवनका एक सपाट और फीका चित्र होगा। जीवनमें उल्लास तो होना चाहिए परन्तु बीच-बीचमें कभी-कभी दुःख भी आने चाहिए। इसलिए मेरी कामना एवं आशा है कि यदि ईश्वर उन्हें यह स्मरण दिलानेके लिए कि जीवनके उल्लासमय क्षणोंमें उसे अपना आपा नही भूलना है दुःखके घूँट देगा, तो जीवनमें पर्याप्त परिमाणमें उल्लास भी देगा।

मुझे आश्चर्य हो रहा था कि आप क्या कर रहे है और रंगूनमें आप कैसे रहे। एक लम्बे अरसेसे आपने मुझे कोई पत्र नही डाला। मै समझता हूँ कि यह सब बिस्तरपर पड़े मित्रकी शुभकामनाके लिए स्वेच्छापूर्वक किया गया है। रेहानाने भी आपका अनुसरण किया है। परन्तु आपको मालूम होना चाहिए कि न तो आपके और न रेहानाके ही पत्रसे मेरे स्वास्थ्यकी हानि होनेकी सम्भावना है।

वर-वधूको एवं सभी मित्रों तथा परिवारके सदस्योंको, जो आनेवाला समारोह मनानेके लिए एकत्र हुए हों, मेरा स्नेह दें और अपने लिये तथा श्रीमती अब्रामके लिए भी मेरा स्नेह स्वीकार करें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० ९५५८) की फोटो-नकल से।

३६९. पत्र : सोंजा श्लेसिनको

आश्रम
साबरमती[1]
२२ मई, १९२७

प्रिय कुमारी श्लेसिन,

जैसा कि तुम जानती हो, मैं अभी विस्तरपर पड़ा हूँ। इसलिए तुम्हारे २० अप्रैलके उस पत्रका, जो अभी मिला है, उत्तर बोलकर लिखवाना पड़ रहा है। यह याद नही आता कि मैंने तुमको लिखे अपने सारे पत्रोमें क्या लिखा है। जहांतक मुझे याद पड़ता है, तुम्हारा कोई एक भी पत्र ऐसा नही, जिसकी प्राप्ति स्वीकृति न भेजी गई हो। तुमने मेरे अभिनन्दनमे बहुतसे वाक्य लिखे हैं, जिन्हे मैं स्वीकार नही करता और कर भी नही सकता। परन्तु उनमें से, यद्यपि इस सम्बन्धमें तुम्हारा अनुभव भिन्न है, पत्रोंका तत्काल उत्तर देनेवाली बातको अधिकारपूर्वक भी स्वीकार कर सकता हूँ, क्योंकि मेरे परिचितोंमें से प्रत्येकने अन्य गुणोंकी अपेक्षा तत्काल पत्रोत्तर देनेके लिए मेरी प्रशंसा की है।

मुझे तुम्हारा ४ जनवरीका कोई पत्र नही मिला। मेरी फाइलमें ३ जनवरीका पत्र जरूर पड़ा है। मैं नही समझता कि मैं तुम्हे उसका उत्तर दे चुका हूँ; दिया भी हो तो क्या विस्तारपूर्वक दिया है? यह पत्र आश्रममें ३ फरवरीको पहुँचा था। मेरे दौरेमें होनेके कारण वह पता बदल कर मेरे पास भेज दिया गया था। इसके तुरन्त बाद मैं बीमार पड़ गया।

श्री स्टेन्ली जोन्सकी पुस्तक[2] मैंने केवल सरसरी तौरपर पढ़ी है। क्योंकि मैं दौरेके दौरान बहुत कम अध्ययन कर सका। यह तो मेरे लिये सम्भव भी नही था कि उन सारी पुस्तकोंपर, जो मेरे पास आई थी, मैं नजर डाल सकता। यह पुस्तक मैंने इसलिए पढ़ी कि इसके साथ स्टेन्ली जोन्सका, जिन्हें मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ, पत्र भी था। मुझे उनका सुझाव याद नही है और इस समय मेरे पास उनकी पुस्तक भी नही है।

१. स्थायी पता।
२. द क्राइस्ट ऑफ द इंडियन रोड।

मैं तुमसे पूरी तरह सहमत हूँ कि कर्म और ईसाई धर्म साथ चल सकते हैं। यदि तुम 'यंग इंडिया'को पढ़ती रही हो, तो तुम्हारे ध्यानमें आया होगा कि पिछले साल मैं प्रति शनिवार अपने राष्ट्रीय विद्यालयके विद्यार्थियोंको 'न्यू टेस्टामेंट' पढ़कर सुनाया करता था। मैं "बिना किसी कारण"[1] इन शब्दोंपर लड़खड़ा गया और इन शब्दोंकी व्याख्या करते हुए मैंने इस चीजको अनावश्यक कहकर अस्वीकार कर दिया। परन्तु जब मैंने तुम्हारी बातको मिला कर देखनेके विचारसे मोफात और वेमाउथके अनुवादोंको, जो मेरे पास ही पड़े थे, पलटा तो उससे मुझे सुखद आश्चर्य हुआ। सारे धर्म-ग्रन्थोंको पढ़ते हुए मैंने एक बात सीखी है। उनका शब्दार्थ कभी ग्रहण नहीं करना चाहिए। अपितु उनका सार सोच-समझ कर ग्रहण करना चाहिए। जो सत्य और अहिंसाकी कसौटीपर खरे नहीं उतरते उन्हें अस्वीकार कर देना चाहिए। मैं जानता हूँ कि ऐसी सही व्याख्याके बावजूद कठिनाई अवश्य हुई थी। परन्तु यदि मनुष्यमें धैर्य हो एवं उसे ईश्वरपर विश्वास हो तो इन कठिनाइयोंका समाधान हो जाता है।

मैं तुम्हारा पत्र श्री जोन्सको भेज रहा हूँ। क्योंकि मुझे कोई सन्देह नहीं है कि वह तुम्हारी दलील देखना चाहेंगे। निकट भविष्यमें उनसे मेरी मुलाकात होनेकी कोई सम्भावना नहीं है, क्योंकि अभी कुछ महीनोंतक मैं दक्षिणमें रहूँगा। तुम पत्र सदाकी तरह आश्रमके पतेपर भेजती रहो।

'आत्मकथा' अभी पूरी नहीं हुई। गणेशन तुम्हें 'आत्मकथा' की प्रति नहीं भेज सकते। तीन भाग जो पूरे हो गये हैं, पुस्तक रूपमें प्रकाशित होने जा रहे हैं। परन्तु अभी तो तुम्हें 'यंग इंडिया' के अंकोंपर ही निर्भर रहना होगा, जिनमें आजतकके परिच्छेद हैं। तुम ये खण्ड मणिलालसे उधार ले सकती हो या जबतक ये तीनों भाग पुस्तक रूपमें छप न जायें, तुम्हें इन्तजार करना चाहिए। तुमको जान लेना चाहिए कि 'आत्मकथा' लिखना आरम्भ करनेसे पूर्व मैंने 'दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास[2]' समाप्त किया था। मूल गुजरातीमें है। अब गणेशन इसका अनुवाद किश्तोंमें प्रकाशित कर रहे हैं। मुझे लगता है कि इतिहासके अंग्रेजीमें उपलब्ध होनेमें अभी समय लगेगा।

दक्षिण आफ्रिकामें भारतके प्रथम प्रतिनिधि श्री शास्त्रीसे अवश्य मिलना। वे बहुत ही श्रेष्ठ व्यक्ति हैं। जैसा कि तुम जानती हो वे गोखलेके उत्तराधिकारी हैं। वे तुम्हारे बारेमें सब कुछ जानते हैं और स्वयं तुमसे मिलनेको उत्सुक हैं।

१. सेंट मैथ्यू, पद २२। प्रामाणिक संस्करणमें मिले इन शब्दोंको संशोधित तथा बादके संस्करणोंमें निकाल दिया गया है।

२. देखिए खण्ड २९।

मैं ठीक हो रहा हूँ। जिन लोगोंको तुम जानती हो, उनमें से श्रीमती गांधी और देवदास मेरे साथ हैं।

हृदयसे आपका,

कु० श्लेसिन
बोक्स २२८४
जोहानिसबर्ग
(दक्षिण आफ्रिका)

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५३) की फोटो-नकलसे।

३७०. पत्र : रेवरेंड स्टेन्ली जोन्सको

नन्दी हिल्स (मैसूर राज्य)
२२ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

यह दक्षिण आफ्रिकाकी हमारी प्रिय बहन कु० श्लेसिनका पत्र है। आपकी इसमें दिलचस्पी होगी। कृपया पढ़कर इसे लौटा दीजिएगा।

श्रीमती जोन्ससे फिर इतना अवश्य कह दीजिए कि जीवनकी पवित्रतापर लड़के और लड़कियोंको सम्बोधित पुस्तिकाके सम्बन्धमें मैं अभीतक चिन्तन कर रहा हूँ। और मैंने अभी बीमारीके बिस्तरसे कुछ लिख सकने अथवा विशेषतः कुछ बोल-कर लिखवा सकनेकी आशा त्याग नहीं दी है।

मैं अब खोई हुई शक्ति धीरे-धीरे फिरसे प्राप्त कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

संलग्न : १

रेवरेंड स्टेन्ली जोन्स
सीतापुर, उ० प्र०

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२७) की फोटो-नकलसे।

३७१. पत्र : देवेश्वर सिद्धान्तालंकारको

नन्दी हिल्स (मैसूर राज्य)
२२ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

मैंने आपका २९ जनवरीका पत्र इस आशासे सँभाल कर रखा है कि मैं किसी दिन आपको पत्र लिख सकूँगा। यह पत्र मुझे अपने दौरेके दौरान मिला था। पिछले तीन दिनोंके पहले मैं इसकी कतरनोंको नहीं पढ़ सका। बीमारीके बिस्तरपर लेटा हुआ मैं धीरे-धीरे अपने पत्र-व्यवहारको निबटा रहा हूँ और मैंने वे कतरनें पढ़ डाली हैं। वे बड़े महत्त्वकी हैं। कई एक स्थानोंपर आपके अनुवादका मूलसे ठीक मेल नहीं बैठता। परन्तु आपने निष्पक्ष रहनेके जो प्रयत्न किये हैं, उससे मुझे आशा होती है कि गलती लापरवाहीके कारण रह गई है।

आपने जिन उद्धरणोंका संग्रह किया है, वे निश्चय ही असमंजसमें डालनेवाले हैं। मैं धार्मिक ग्रन्थोंका अनुशीलन, जिनमें 'कुरान' भी शामिल है, आलोचनात्मक दृष्टिसे नहीं करता रहा हूँ। मैंने धार्मिक शान्ति प्राप्ति करनेकी दृष्टिसे इन ग्रन्थोंको सहानुभूतिपूर्वक पढ़ा है। इसलिए आपके द्वारा संग्रहीत अंशोंने जो प्रभाव आपके मस्तिष्कपर डाला है, स्वाभाविक है कि वैसा प्रभाव मेरे मस्तिष्कपर नहीं पड़ा है। पाठ्य-विषयकी आपने जो व्याख्या की है कि "धर्ममें हिंसाका समावेश नहीं होना चाहिए", यह व्याख्या मेरे लिए बिलकुल नई है और बिलकुल उलटा अर्थ देती है। व्याख्यारहित मूल पाठका यह अर्थ कदापि नहीं है। बहरहाल मैं इस सम्बन्धमें मुसलमान मित्रोंकी राय जानना चाहूँगा। परन्तु आपके द्वारा उद्धृत अंशोंको ध्यान-पूर्वक पढ़नेके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि इस्लाम बलप्रयोगका धर्म नहीं है। परन्तु अन्य महान् धर्मोंकी तरह शान्तिका धर्म है। मैं ऐसा इस कारण कहता हूँ कि मैं असंख्य मुसलमानोंसे मिला हूँ, जो मेरी और आपकी तरह यह नहीं मानते कि अन्य धर्मावलम्बियोंको मौतके घाट उतार दिया जाये। ये मुसलमान किसी भी तरह धर्मका मखौल उड़ानेवाले नहीं हैं। वे अपने धर्मके कट्टर अनुयायी हैं। सूफियोंकी लम्बी परम्परामें शान्ति और प्रेमके प्रभासमान जीवन दर्शनका श्रेय 'कुरान'को है। सूफियोंकी 'कुरान' के प्रति श्रद्धा सन्देहास्पद नहीं है। मैंने मौलाना शिबलीकी पुस्तक 'लाइफ ऑफ द प्रोफेट' पढी है और उन्हींकी रचना 'अल कलाम' के अंग भी पढ़े हैं। मैंने उनकी पुस्तक 'लीव्स फ्रॉम द लाइव्स ऑफ द कम्पेनियन्स ऑफ प्रोफेट' भी पढ़ी है। इन सारी रचनाओंने कुल मिलाकर मेरे मस्तिष्कपर जो प्रभाव डाला है वह अत्यन्त उत्कृष्ट कोटिका है। मुझे आशा है कि आपका यह अभिप्राय नहीं है कि मौलाना शिबली तथा अन्य इसी प्रकारके इस्लामके लेखकोंने जो कुछ लिखा है, वे उसपर स्वयं विश्वास नहीं करते या इन्होंने यह सब कुछ दूसरे लोगोंकी

आंखोंमें धूल झोंकनेके लिए लिखा है। बहरहाल, इसका यह अर्थ नही कि मैं यह समझता हूँ कि हजरत मुहम्मदका जीवन पूर्णत. निर्दोष रहा है या यह कि 'कुरान' अपने आपमें परिपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें सब दूसरे धार्मिक ग्रन्थोंकी तरह, जिनमें हमारे धर्मग्रन्थ भी शामिल है, कुछ एक अश ऐसे है जिनके कारण कठिनाई होती है। परन्तु 'कुरान' पढते हुए जो कठिनाइया दिखाई देती है, वे अन्य धर्म-ग्रन्थोकी कठिनाइयोंसे अधिक नही है। मैं यह मानता हूँ कि ईसाई धर्म शान्तिका धर्म है; यह बात सर्वमान्य होनी चाहिए। परन्तु 'ओल्ड टेस्टामेंट' जो ईसाई धर्मका अग है, वीभत्स रक्तपातके वृत्तान्तोसे भरा है। और प्रारम्भिक ईसाई धर्मका इतिहास तो ऐसा है कि उसमे ईसाई मतावलम्बी किसी तरह भी विश्वास नही कर सकते।

आप मुझसे कहते है कि मैं 'वेदों' मे से 'कुरान' जैसे अंशोंके उद्धरण दूं। आपने दस्युओंका उल्लेख स्वयं स्वीकार किया है। आपने दस्युओंसे सम्बन्धित अशोका जो भाष्य किया है, वह बिलकुल ठीक हो सकता है। परन्तु 'कुरान' के सहृदय भाष्यकार भी 'कुरान' मे आये अशोंकी व्याख्या इसी प्रकार करते है। दस्यु अपने आपको दुराचारी नही समझते।

प्रत्येक व्यक्ति अपने हर छोटे बड़े कार्योका औचित्य सिद्ध करता है और जिन लोगोंके प्रति उसके मनमें विश्वास नही होता वह उनपर दुश्चरित्रताका आरोप लगाता है। जनरल डायर अपनी कार्यवाहीके बारेमें निश्चित रूपमें ऐसा ही समझते थे कि यदि उन्होंने वैसा न किया होता, तो अग्रेज पुरुष और स्त्रियोंका जीवन खतरेमें पड जाता। हम लोग जो इस बातको ज्यादा अच्छी तरह जानते है, उसे नृशसता और प्रतिशोधका कार्य मानते है। परन्तु जनरल डायरके दृष्टिकोणसे वह कार्रवाई ठीक थी। बहुतसे हिन्दू हृदयसे मानते है कि गायकी हत्या करनेपर उद्यत व्यक्तियोंका वध उचित है। वे अपने समर्थनमें वेद-शास्त्रोंका उल्लेख करेंगे। बहुतसे दूसरे हिन्दू भी उनके वधका औचित्य सिद्ध करेगे। परन्तु वे विदेशी लोग, जो गायकी पवित्रताको स्वीकार नही करते, एक जानवरको बचानेके लिए मनुष्यकी हत्याको अति मूर्खतापूर्ण बताएँगे। गुरु नानकके बारेमें, जिन्होंने निश्चय ही 'कुरान' पढ़ा था, यह कहा जाता है कि वे मक्का भी गये थे और इस्लाम धर्मके प्रति बहुत ऊँची आदरकी भावना लेकर वापस आये थे। कबीर और दादूने भी 'कुरान'का अध्ययन किया था। इसलिए मैं यह सोचनेके लिए बाध्य हूँ कि यह दिखानेका प्रयत्न करना कि 'कुरान' अनैतिक ग्रन्थ है और 'कुरान' के अनुयायी तो और भी ज्यादा अन्यायी है, एक अवाछनीय और निरर्थक कार्य है। मेरी समझमें ज्यादा अच्छा तरीका तो यह है कि इन ग्रन्थोंके उन अच्छे तथ्यों और सुन्दर स्थलोंको ढूंढनेकी चेष्टा की जानी चाहिए, जिनके कारण इन ग्रन्थोंपर विश्वास करनेवाले लोगोंके जीवनमें परिवर्तन हो गया। इस्लाम और मुसलमानोंके सम्बन्धमें, भारतके इन बहुत-से मुसलमानोंके आचरणसे, जो इस्लाम और मुसलमानोंका सही प्रतिनिधित्व नही करते, अनुमान लगाना, और उस आचरणको 'कुरान' की शिक्षाओंपर मढ़नेकी कोशिश करना अनुचित ही नही, खतरनाक भी है। शान्तिके पक्षमें 'कुरान' की सामान्य प्रवृत्तिके समर्थनमें मुझे

किसी एक मुसलमान द्वारा किये गये अत्याचारका प्रत्याख्यान करने अथवा कुछ एक दुष्कृत्योंकी, जिन्हें मैं अपने सामने होता देख रहा हूँ, सफाई देनेकी आवश्यकता नही है। परन्तु 'कुरान' के प्रति मेरी उदार भावना मुझे मुसलमानोंके प्रति वही न्याय देनेकी सामर्थ्य प्रदान करती है, जो मैंने ऐसी दशामें अपने सहधर्मी हिन्दुओंको दिया होता। किसी एक धर्मको लेकर केवल उसे मात्र सत्य धर्म प्रमाणित करने और शेष सभी धर्मोंको उखाड़नेकी अपेक्षा संसारके विभिन्न धर्मोंके प्रति सहानुभूति रखना अधिक सहज कार्य है।

मैंने आपके पत्रका विस्तार सहित उत्तर दिया है, क्योंकि मेरा विश्वास है कि आप सत्यकी खोज करनेवाले व्यक्ति हैं। यदि आप मुझसे कोई और भी स्पष्टीकरण चाहेंगे तो मैं प्रसन्नतापूर्वक दूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

देवेश्वर सिद्धान्तालंकार
नैनी (उ० प्र०)

अंग्रेजी (एस० एन० १२३८३) की माइक्रोफिल्मसे।

३७२. पत्र : नर्मदाको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ६ [२२ मई, १९२७]

चि० नर्मदा,

तुम्हारा एक पत्र आया था। उसका उत्तर मैंने तुम्हारे स्कूलके पतेपर दिया था, क्योंकि मैं तुम्हारा पूरा नाम और पता नही जानता था। आशा है पत्र तुम्हें मिल गया होगा।

मैं यह नही जानता था कि तुम्हारा विवाह इतनी जल्दी होनेवाला है। मुझे आशा है कि तुम अपना अध्ययन जारी रखोगी और देशसेवा सम्बन्धी जो उच्च विचार तुमने मुझे बताये थे तथा जिन्हें तुमने अपने पत्रमें भी व्यक्त किया है, उनपर दृढ रहोगी, एवं तुम्हारे पति भी तुम्हें उन विचारोंपर दृढ़ बना रहने देंगे। खादी और चरखा कभी मत छोड़ना....।[1]

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४७५५) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: नाना धर्माधिकारी

१. इसके आगेका अंश अस्पष्ट है।

३७३. पत्र : मीराबहनको

२३ मई, १९२७

चि० मीरा,

यद्यपि मुझे तुम्हारे कई पत्र मिले हैं लेकिन इस सप्ताह-भर मैंने तुम्हें कोई पत्र नहीं लिखा। और फिलहाल मेरा विचार तुम्हें प्रति सप्ताह एकसे ज्यादा पत्र लिखनेका नही है। मैं 'यंग इंडिया' 'नवजीवन' और 'गीता' के कामके लिए अपनी शक्ति बचाना चाहता हूँ। मैं आजकल 'गीता' पर पहलेसे कमसे-कम पाँच गुना अधिक परिश्रम कर रहा हूँ। यदि हो सके, तो अनुवादको अगस्त समाप्त होनेसे पहले खतम करना चाहता हूँ। और आरामके दौरान मैं 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' पर इन पत्रोंके स्तम्भ भरनेकी अपनी कोई जिम्मेदारी माने बिना अधिक ध्यान देना चाहता हूँ। लेकिन जरूरत हुई या तुम्हारी मन स्थिति फिर वैसी ही हुई, तो अवश्य ही तुम्हें ज्यादा पत्र लिखूँगा। परन्तु अब तुम्हारी मन स्थिति वैसी नही होगी।

मुझे बहुत खुशी हुई कि तुमने भाँगका विरोध किया। वह लगभग शराबकी तरह ही बुरी है। कुछ भी हो, यह याद रखना कि हकीमजीके पान देनेपर मैंने तुम्हे क्या लिखा था[1] — किसी भी वस्तुको उसके गुणदोष जाने बिना हरगिज न खाना। जिस चीजके बारेमें शंका हो उसे छोड देना और जरूरत हो तो मुझसे पूछ लेना। मुझे जमनालालजीसे पूछनेपर मालूम हुआ है कि महाराजजी स्वयं भाँग खाते हैं। दुर्भाग्यसे धार्मिक वृत्तिके बहुतसे लोग मानसिक सुखकी प्राप्तिके लिए भाँग खाते हैं। किन्तु उससे जो सुख प्राप्त होता है, मैं जानता हूँ कि वह मिथ्या है। लेकिन तुमने उन्हे यह बात बताकर अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। अब धीरे-धीरे सब बातें व्यवस्थित हो जायेंगी।

जमनालालजीने मुझे तुम्हारा हिन्दीका पत्र दिखाया था। वह काफी अच्छा था। लिखावट तो बहुत ही अच्छी थी। ज[मनालाल] कल बम्बई जा रहे हैं।

मैं रोलाँके तुम्हारे नाम आये पत्रके तुम्हारे अनुवादकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

मैं दोपहरके खानेमें रोटी या भाखरी और एक सब्जी फिर लेने लगा हूँ। आज पाँचवाँ दिन है। अभीतक तो कोई नुकसान नही हुआ है। घूमता भी पहलेसे ज्यादा हूँ।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

साथका पत्र गंगूके लिए है।

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३०)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. देखिए खण्ड ३२, पृष्ठ ५४०-४१।

३७४. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

नन्दी

मौनवार, वैशाख बदी ७ [२३ मई, १९२७]

बहनो,

तुमने भण्डारके कामका बोझ उठानेकी जिम्मेदारी ली है, इसे मैं बहुत बड़ा कदम मानता हूँ। अब उस जिम्मेदारीको दृढतासे निभाना। सफल होनेमें ईश्वर तुम्हें सहायता देगा। ऐसे तो बहुतसे काम हैं जो तुम हाथमें ले सकती हो और आश्रमको सुशोभित कर सकती हो, मगर मुझे जल्दी नहीं है। तुम्हारी भावना शुद्ध है, इसलिए तुम धीरे-धीरे स्वतः बहुतसे काम करने लगोगी। फिलहाल तो भण्डारके प्रयोगको सफल बनानेका ध्यान रखना। भण्डारकी छोटीसे-छोटी बात जान लेना। बहीखाता रखना तो जरूर सीख लेना। यह बिलकुल न मानना कि यह काम कठिन है। बहीखाता लिखना और समझना बहुत आसान है। उसमें मुश्किल तो जोड़ लगानेकी है। अंक ठीक न आते हों और जोड़ लगानेकी आदत न हो तो जरूर परेशानी होती है। मगर जोड़ लगाना केवल अभ्याससे ही आता है। जिसे सादा जोड़, घटाना, गुणा, भाग न आता हो वह सीख ले। इस काममें मेहनत है, बाकी तो आसान है। लेकिन इतना करनेकी इच्छा हो तो फिर इसमें रस भी मिलने लगता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६५०) की फोटो-नकलसे।

३७५. पत्र : आश्रमके बच्चोंको

सोमवार, २३ मई, १९२७

ईश्वर पहला ब्रह्मचारी था यह बात बालने याद रखी है। मुझे तो यह विचार अत्यन्त सुन्दर लगा। पूर्ण ब्रह्मचारी तो पूर्ण रूपसे निर्विकार होगा। ईश्वरके सिवा कौन ऐसा है जो पूर्ण रूपसे निर्विकार हो? लेकिन उसकी तरह निर्विकार बननेका प्रयत्न तो हमें भी करना है। और सभी शास्त्र पुकार-पुकार कर कहते हैं कि हम ऐसा कर सकते हैं। ऐसा बननेके मात्र प्रयत्नमें भी आनन्द ही आनन्द है। मेरा अनुभव है कि इस आनन्दका करोड़वाँ हिस्सा भी संसारके उन पदार्थोंमें नहीं है जो आनन्ददायी माने जाते हैं। और सैकड़ों योगियोंने अपने इसी प्रकारके अनुभवोंका वर्णन किया है। उनके इन अनुभवोंमें विश्वास रखकर तुम सब ब्रह्मचर्यका पालन करनेका यथाशक्ति प्रयत्न करना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

३७६. पत्र : राधाको

२३ मई, १९२७

[चोरों द्वारा तुम्हारे ऊपर फेंके गये] उस ढेलेसे तुम्हे डर नही लगा यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई। अच्छा हुआ कि उससे तुम्हें कोई भारी चोट नहीं आई। लेकिन चोट आ भी जाये तो उससे क्या? ढेलेसे चोट लगी भी तो शरीरको लगेगी न? शरीर तो चूडीके समान है। मनुष्यकी सौ वर्षकी आयुकी तुलनामें चूडीकी आयु कितनी है। ब्रह्माके अनन्त कालमें मनुष्य रूपी चूडी तो उतनी भी नही है। वह तो बिलकुल ही नगण्य है। वह आज जाये या कल इसमें बड़ी बात क्या है? अथवा उसमें दरार पड जाये तो भी क्या है? इस विचारको बुद्धि तो तुरन्त समझ जाती है। पर यदि उसे हृदयमें उतार लें तो कभी किसीसे डर लगे ही नही। ऐसा व्यक्ति कभी बुरा काम नही करेगा। वह कभी किसीको दुख नही देगा। संकटके समय हमेशा हमारे मनमें यही विचार आना चाहिए और ऐसे समय यह विचार मनमें आये, इसके लिए सदा उसका चिन्तन करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

३७७. पत्र : वि० ल० फड़केको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ८ [२४ मई, १९२७]

भाईश्री ५ मामा,

प्रश्नकी चर्चासे युक्त आपका पत्र मिला। वह लिखा तो अच्छा गया है परन्तु आप देखेंगे कि मैंने सूरत और बड़ौदाके विषयमें 'नवजीवन' मे एक भी शब्द नही लिखा है। ऐसा मैंने जानबूझ कर किया है। उपद्रव करनेवाले जानबूझ कर उपद्रव करते हैं और करवाते हैं। इस प्रकारका लेख लिखनेसे तो उनपर उलटा ही असर होगा। मैं तो यहांतक मानता हूँ कि यदि समाचारपत्रोंमें इन लडाई-झगड़ोंके सम्बन्धमें एक भी शब्द न छपे तो ये झगड़े अपने आप ही शान्त हो जायें। परन्तु सभी पत्रकार स्वयं ऐसा नही चाहते, इसलिए यह नही हो सकता। किन्तु हम लोगोंको, जो इसे जानते हैं उन्हे तो चुप ही रहना चाहिए। जो लडना चाहते हैं वे लड़ लें। हमारे लिए तो इतना ही काफी है कि यदि हम वहां उपस्थित हों और हमें ऐसा लगे कि अवसर हमारे बलिदानकी अपेक्षा करता है तथा हममें ऐसा करनेकी शक्ति हो, तो

हम अपनेको वलिदान कर दें। यदि हम रागद्वेप रहित रहते हुए अपना वलिदान कर सकते हों तो हमें यह विश्वास होना चाहिए कि उसका परिणाम शुभ ही होगा।

अपना लेख आप वापस माँगें तो मिल जाये, इसलिए अभी तो मैंने उसे सँभाल कर रखा है।

जवाब नहीं आया तो कुछ दिन राह देखनेके बाद फाड़ दूंगा।

मेरी तवीयत सुधर रही है।

वापूके आशीर्वाद

मामासाहव फड़के
अन्त्यज आश्रम
गोधरा

गुजराती (जी० एन० ३८१७) की फ़ोटो-नकलसे।

३७८. प्रार्थना[1]

२४ मई, १९२७

हे प्रभु, हम जिसे शुद्ध भावसे धर्म मानते हों हमें उसका सम्पूर्ण रूपसे पालन करनेकी शक्ति दे। और उसका पालन करते हुए लोकनिन्दा, अपशब्द, मार-पीट मृत्यु और निर्धनता इत्यादि सभी संकटोंको धैर्य और प्रेमसे सहन करनेकी शक्ति भी दे।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

३७९. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

नन्दी हिल्स (मैसूर राज्य)
२५ मई, १९२७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र जव मैं रोग-शय्यापर पड़ा था तव मिला था। उस समय मैं वहुत पत्र-व्यवहार नहीं कर सकता था। अभी मैं स्वास्थ्य लाभ कर रहा हूँ और काम हल्का ही कर पाता हूँ; मगर मेरी प्रगति वरावर जारी है।

अव तुम्हें वहाँ रहते काफी समय हो गया है, मगर मैं जानता हूँ कि तुमने समय वेकार नहीं गँवाया है। फिर भी मुझे आशा है कि जव तुम लौटोगे तवतक

१. छगनलालको लिखे एक पत्रमें गांधीजीने उन्हें प्रार्थनाके समय प्रतिदिन यह प्रार्थना करनेका आदेश दिया था।

कमला पूरी तरह स्वस्थ हो जायेगी। अगर उसके स्वास्थ्यके लिए ज्यादा दिन रहना जरूरी हुआ तो मैं समझता हूँ कि तुम वहाँ और रुकोगे।

दलित राष्ट्र सम्मेलन (ऑप्रेस्ड नेशन्स कान्फ्रेन्स) की कार्रवाइयोंके बारेमें मैंने तुम्हारा सार्वजनिक विवरण और तुम्हारा निजी गोपनीय विवरण भी बहुत ध्यानसे पढ़ा। खुद मुझे तो इस संघसे बहुत आशा नहीं है, क्योंकि और कुछ कारण न भी हो तो भी यह तो है ही कि उसके स्वतन्त्र रूपसे कार्य करनेका दारोमदार उन्हीं सत्ताओंके सद्भावपर है, जो उक्त राष्ट्रोंके शोषणमें हिस्सेदार हैं और मेरा ख़याल है कि यूरोपीय राष्ट्रोंके जो सदस्य इस संघमें शरीक हुए हैं वे अंतिम कसौटीपर टिक नहीं सकेंगे। कारण, जिस बातमें वे अपने स्वार्थकी हानि समझेंगे वे अपनेको उसके अनुकूल नहीं बना सकेंगे। हमारी ओर खतरा यह है कि हमारे लोग अपनी भीतरी शक्तिका विकास करके मुक्ति प्राप्त करनेके बजाय उसके लिए फिर बाहरी शक्तियोंका मुँह ताकने लगेंगे और बाहरी मदद ढूँढने लगेंगे। मगर यह तो कोरा तर्काश्रित मत हुआ। मैं यूरोपकी घटनाओंको ध्यान देकर समझते चले आनेका प्रयत्न तो बिलकुल ही नहीं कर रहा हूँ। तुम मौकेपर हो और सम्भव है तुम्हें वहाँके वातावरणमें सिद्धान्ततः कुछ करने योग्य सुधार दिखाई दे सकता है; किन्तु वह मुझे तो बिलकुल दिखाई नहीं देता।

आगामी कांग्रेस अधिवेशनमें तुम्हारे अध्यक्ष चुने जानेकी कुछ चर्चा है। इस बारेमें तुम्हारे पिताजीसे मेरा पत्र-व्यवहार[1] हो रहा है। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सर्वसम्मत प्रस्तावके बावजूद लोगोंका रुख अच्छा कतई नहीं दिखता। पता नहीं कि सिर फोड़नेका यह सिलसिला किसी तरह रुकेगा भी या नहीं। आम लोगोंपर हमारा काबू नहीं रहा है और मुझे ऐसा दिखाई देता है कि अगर तुम अध्यक्ष बन गये तो आम लोगोंकी दृष्टिसे तुम कमसे-कम साल-भरके लिए तो ओझल हो ही जाओगे। फिर भी इसका यह अर्थ नहीं है कि कांग्रेसके कामकी उपेक्षाकी जाये। वह किसी-न-किसीको तो करना ही है। मगर ऐसे बहुतसे लोग हैं जो उसे करनेके लिए तैयार हैं और उत्सुक भी हैं। उनकी नीयत मिलीजुली या स्वार्थपूर्ण भी हो सकती है; परन्तु वे कांग्रेसकी गाड़ी किसी-न-किसी तरह चलाते रहेंगे। संस्था सदा उनकी मर्जीके मुताबिक चलेगी और उनके हाथमें रहेगी, जिनमें सामूहिक कार्य करनेके गुण होंगे और जिन लोगोंमें आम जनतापर नियन्त्रण रख सकनेका गुण होगा। तब प्रश्न यह है कि तुम्हारी सेवाओंका सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जा सकता है? तुम्हारा अपना जो विचार हो, वही करो। मुझे मालूम है कि तुममें अनासक्त रहकर विचार करनेकी क्षमता है और तुम दादाभाई या मैक्स्विनीकी तरह बिलकुल निःस्वार्थ होकर कहोगे कि "यह ताज मेरे सिरपर रख दो" और मुझे कोई सन्देह नहीं कि वह तुम्हारे सिरपर रख दिया जायेगा। स्वयं मुझे मार्ग इतना स्पष्ट दिखाई नहीं देता कि मैं उस ताजको जबर्दस्ती तुम्हारे सिरपर रख दूँ और तुमसे उसे पहननेका अनुरोध करूँ। यदि पिताजीका

१. देखिए "पत्र : मोतीलाल नेहरूको", १४-५-१९२७।

पत्र तुम्हें अभीतक नहीं मिला होगा, तो इस डाकसे मिलेगा। मैं इस पत्रकी एक नकल उनको भेज रहा हूँ।

अच्छा हो, तुम भी अपनी इच्छा तार द्वारा सूचित कर दो। जुलाईके अन्त तक मेरे बंगलोरमें रहनेकी सम्भावना है। इसलिए तुम अपना तार सीधा बंगलोर भेज सकते हो या बिलकुल पक्का काम करना हो तो आश्रमके पतेपर भेज देना। वहाँसे वह तार मुझे, मैं जहाँ भी होऊँगा, भेज दिया जायेगा।

तुम सबको सस्नेह,

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लैटर्स

तथा एस० एन० १२५७२ की फोटो-नकलसे।

३८०. पत्र : मोतीलाल नेहरूको

नन्दी हिल्स
२५ मई, १९२७

प्रिय मोतीलालजी,

जमनालालजीने मुझे आपका पत्र दिया और बताया कि आप एक लम्बा पत्र भेज रहे हैं। जबसे मुझे आपका पहला पत्र मिला है, मैं इस विषयपर लगातार सोच रहा हूँ। अध्यक्ष यहाँ हैं और कल उन्होंने इस विषयकी चर्चा छेड़ी थी। मैंने जवाहरलालका नाम लिया। उन्होंने इस सम्बन्धमें नहीं सोचा था। बहरहाल उन्होंने अन्सारीको तरजीह दी। मैंने उन्हें कहा कि यदि डा० अन्सारीको यह सम्मान स्वीकार करनेके लिए प्रस्तुत किया जा सके तो जवाहरलालकी सारी चर्चा समाप्त हो जायेगी। और मैं समझता हूँ कि यह हमारा सौभाग्य होगा यदि डा० अन्सारीको यह भार वहन करनेके लिए तैयार किया जा सके। मैंने जवाहरलालको पत्र[1] लिखा है। जवाहरलालको लिखे पत्रकी प्रति आपको भेज रहा हूँ। इससे मेरी अन्तिम राय प्रकट होती है। पहले मैंने सोचा था कि अपना लिखा पत्र जवाहरलालके पास भेजनेके लिए आपको भेज दूँ, ताकि यदि आप चाहें तो उस पत्रको रोक लें। परन्तु बादमें मैंने सोचा कि यदि मैं आपके देखनेसे पूर्व भी जवाहरलालको पत्र भेज दूँ, तो इसमें कोई हानि नहीं है। आप जो चाहें मेरे पत्रमें जोड़ सकते हैं, जिससे जवाहरलाल सही निर्णय ले सके।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १४६१४) की फोटो-नकलसे।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

३८१. पत्र : एच० क्लेटनको

नन्दी हिल्स
२५ मई, १९२७

प्रिय श्री क्लेटन,

इस मासके दिनांक १३ के मेरे पत्रका तत्काल ही और वह भी विस्तारसे उत्तर देनेके लिए मैं आपका अत्यन्त आभार मानता हूँ। मैंने १९१८ की नगर निगमकी कार्रवाईकी कतरन ध्यानपूर्वक पढ़ी है। इसमें ऐसी बात नहीं है, जिससे इस बातका समर्थन हो सके कि मैंने जाँच-पड़ताल की थी अथवा स्व० डा० टर्नरको कोई रिपोर्ट दी थी। चूँकि मुझे अस्पृश्यतासे सम्बन्धित हर चीजमें दिलचस्पी थी और मेरा 'सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी' से गहरा सम्बन्ध रहा है, मुझे याद पड़ता है कि मैं श्री ठक्करके कहनेपर उनके साथ चालों और उन अभागे लोगोंको देखने गया था। जब डा० टर्नरने सुना कि मैंने चालोंको जाकर देखा है, तो उन्होंने मुझे एक सन्देशा भेजा और मैं प्रसन्नतापूर्वक उनसे मिला और मैंने चालोंमें जो कुछ किया था सो उन्हें बताया। इसे आप मेरे द्वारा जाँच-पड़तालका किया जाना या कोई रिपोर्ट देना नहीं कह सकते। यदि मैंने जाँच-पड़तालकी होती तो स्वाभाविक था कि मैं उसे उचित ढंगसे करता। मैंने लोगोंकी गवाही लिखित रूपमें ली होती। जिन अफसरोंपर भ्रष्टाचारके आरोप लगाये गये थे, उनसे मिलता और कोई ठीक लिखित रिपोर्ट देता। हुआ यह था कि मैं अपने दौरेके दरम्यान उस समय बम्बई पहुँच गया था और जैसे दूसरे लोग मुझे बहुत-से अन्य स्थानोंपर ले गये, वैसे श्री ठक्कर मुझे चालोंमें ले गये। मैं नहीं समझता कि डा० टर्नरसे मेरी इस मुलाकात और बातचीतका प्रयोग सदा इस तरह किया जाना ठीक हो सकता है, जिससे श्री ठक्करकी इस प्रतिष्ठाको कि वे एक सावधानीसे तहकीकात करनेवाले व्यक्ति हैं, बट्टा लगे। बहरहाल मैं इस विवरणका सदुपयोग कर लेना चाहता हूँ। वर्तमान स्थितिमें मेरा इरादा समाचारपत्रोंमें कुछ कहनेका नहीं है। परन्तु श्री ठक्करसे मेरा पत्र-व्यवहार चल रहा है। मैं उन्हें आपके पत्रकी प्रति भेजनेकी धृष्टता कर रहा हूँ और उन्हें कुछ सुझाव दे रहा हूँ, जिनपर अमल करके तथाकथित भ्रष्टाचारकी यह बात सदाके लिए समाप्त की जा सके।

मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि किसी चीज या व्यक्तिके प्रति निराधार दोषारोपण नहीं किये जाने चाहिए। जबतक समर्थनके लिए पर्याप्त प्रमाण न हों, निगमके कर्मचारियोंपर सर्वसामान्य आरोप नहीं लगाये जाने चाहिए। आपकी आज्ञासे श्री ठक्करसे पत्र-व्यवहार समाप्त करनेके बाद मुझे आशा है कि मैं फिर अपने पत्रमें उठाये गये मुद्देके विषयमें लिखूंगा।

आपने मेरे सम्बन्धमें जो पूछताछ की, उसके लिए आपका आभारी हूँ। मेरा स्वास्थ्य ठीक गतिसे सुधर रहा है। जब मैं अगली बार बम्बई होकर गुजरूँगा तो गोधरामें हुई अपनी मुलाकातकी मधुर स्मृतियोंको ताजा करनेमें मुझे निश्चय ही प्रसन्नता होगी।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२९११) की माइक्रोफिल्मसे।

३८२. पत्र: तोताराम सनाढ्यको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण ९ [२५ मई, १९२७]

भाई तोतारामजी[1],

आपका पत्र मिला अब मैं समजा कि गंगादेवीका व्याधि किस प्रकारका है। दूसरा जो चल रहा है वह भी वैसा ही चले परंतु उनको बाहर ले जाकर घुमानेकी आवश्यकता है। अपने आप पैदल नहीं घूम सकती है। इसलिये या तो खुरसीपर बैठाकर लड़के ठीक आधे घंटेतक खुल्ले हवामें घुमावें या तो हाथगाड़ीमें बैठाकर घुमावें। हाथगाड़ीमें घुमानेसे एक दो लड़केसे काम निपट सकता है। और आरामसे लेट सकती है। आरामकी बड़ी आवश्यकता है। परंतु इतनी हि आवश्यकता खुल्ली हवाकी भी है। इतना करनेमें किसी प्रकारका संकोच नहीं रखना चाहिये। बाकी किसीको लिखनेकी आदत बहुत कम है और मेरे खतमें उसका कुछ भी इशारा करनेकी आदत मुझको नही है। बाकी वह हमेशा सबको याद करती है।

मेरे आशीर्वादमें बा के हमेशां सम्मिलित हैं वैसा ही गंगादेवी समजें।

आप दोनोंके धैर्यसे मुझको बड़ा ही आनंद होता है और मैं जानता हूं कि वह धैर्य हम सबके लिये अनुकरणीय है। ईश्वर हमेशा दोनोंकी शांति कायम रखें।

मेरा स्वास्थ्य ठीक होता जाता है।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २५२९) की फोटो-नकलसे।

१. फीजीसे लौटे एक प्रवासी; साबरमती आश्रमके एक अन्तेवासी।

३८३. अत्यन्त असन्तोषजनक

मेरी इच्छा थी कि श्रीयुत सुभापचन्द्र वोसकी रिहाईपर बंगालकी सरकारको धन्यवाद दे सकता। रिहाईकी मजूरी इसलिए नही दी गई कि लोकमतने उसकी माँग की थी, इसलिए भी नही कि कलकत्ता नगर निगमके मुख्य अधिकारीको सरकारने निर्दोष माना और इसलिए भी नही कि सरकारके विचारसे सुभापवाबू उस जुर्मके लिए काफी सजा भुगत चुके है, जिसके वारेमें जानकारी न तो सुभापबाबूको है और न जनताको। वरन् रिहाईकी मंजूरी तो इसलिए दी गई कि स्वय सरकारके स्वास्थ्य अधिकारियोंकी रायमें वह प्रतिष्ठित बन्दी गम्भीररूपसे वीमार समझा गया — इतना बीमार कि उसका जीवन खतरेमें होनेकी आशका थी। अगर सुभापचन्द्र वोस समाज अथवा किसी व्यक्ति विशेषके जीवनके लिए एक खतरनाक आदमी है और यदि वे अपने निश्चयपर दृढ़ रहनेवाले व्यक्ति है, जैसी कि उनके वारेमें लोगोंकी धारणा है और स्वयं सरकारका भी जैसा विश्वास है, तो वे अधिक वीमार होनेपर आज भी किसी प्रकार कम खतरनाक नही हो गये है। फिर सरकार उनको जेलमें मरने देनेसे क्यों डर गई? निश्चय ही सरकारका यह दस्तूर तो है नही कि जो भी कैदी ज्यादा बीमार पड जाये, उसे रिहा कर दिया जाये। और अगर उनकी बीमारीके कारण ही उन्हे रिहा कर देना मुनासिव था, तो उन्हे उसी समय क्यों नही रिहा किया गया, जब उनके शरीरमें क्षयरोगके लक्षण दिखाई दिये थे? अखवारोंमें उनकी चिन्ताजनक वीमारीकी खबरें तो काफी दिनोंसे बरावर छपती आ रही है। कैदीके भाईने खुद भी सरकारको वार-वार कैदीकी बीमारी चिन्ताजनक होनेके विषयमें चेतावनी दी है।

मै तो यह कहना चाहता हूँ कि इस तरह एक मरणोन्मुख आदमीको उसके रिश्तेदारोंके हवाले कर देना और उसकी मृत्युकी जिम्मेवारी खुद लेनेसे बचना कायरता है। यह रिहाई बगालके उन कैदियोंके प्रश्नको हल करानेमें हमारी जरा भी सहायता नही करती, जो सरकारके सन्देहभाजन वने और जो विना जाँचके कैद कर लिये गये थे और जिन्हे सरकारने मुकदमा चलाये विना अनिश्चित समयके लिए जेलमें डाल रखा है। बंगाल रेग्यूलेशन भी अभी जहाँका तहाँ ही है। अव इनसे कुछ कम या अधिक अस्वस्थ कैदियोंको जेलमें सड़ते रहना पड़ेगा, क्योंकि उनकी रिहाईके लिए जो आन्दोलन काफी जोरसे इसलिए हो रहा था, कि उनके साथ एक प्रभावशाली व्यक्ति भी कैद था, अव उसकी मदद भी उन्हें नही मिलेगी। इसमें शक नही कि अन्य कैदियोंकी रिहाईके लिए आन्दोलन किसी-न-किसी रूपमें अव भी चलाया ही जायेगा। परन्तु इस वातकी पूरी आशंका है कि वह आन्दोलन उतना सशक्त नही होगा। भारतीयोंका स्वभाव छोटी-छोटी दयाके लिए भी कृतज्ञता अनुभव करनेका है। भारतीय आसानीसे सन्तुष्ट हो जाता है। और इसलिए सुभाप वावूकी रिहाई होनेसे जनता दूसरे कैदियोको कैद रखे रहनेकी वात माफ कर देगी। और वह यह भूल

जायेगी कि यह रिहाई सरकारकी दयाभावनाके कारण नही, बल्कि सबसे ताकतवर प्रकृतिके हस्तक्षेपके कारण हुई है।

सम्भव है, लोगोंको मेरी यह बात क्रूरतापूर्ण लगे, लेकिन मै तो कहूँगा कि मैं यह ज्यादा पसन्द करूँगा कि कतई कोई रिहाई न हो तो बेहतर है, बनिस्बत इसके कि किन्हीं ऐसे झूठे कारणोंसे रिहाई हो, जिससे मुख्य प्रश्न और भी अधिक उलझ जाये और तब उसे सुलझानेका काम पहलेसे और ज्यादा कठिन हो जाये क्योंकि इन कैदियोंकी रिहाईके आन्दोलनकी जड़में नागरिकोंकी स्वाधीनता और बिलकुल एक गैरजिम्मेदार सरकार द्वारा जनताके जीवनपर असाधारण अधिकारोंके प्रयोगमें लानेका सवाल है। इस दु:खद मामलेमें से भी अगर जनता कोई सान्त्वनाकी चीज ढूँढ़ निकालना चाहे तो उसे एक चीज जरूर मिल जायेगी और वह यह कि अन्तिम क्षणतक श्रीयुत सुभाषचन्द्र बोस सरकार द्वारा समय-समयपर रिहाईके लिए रखी गई उन अपमान भरी शर्तोंको बड़ी जवांमर्दीके साथ माननेसे इनकार करते रहे। अब हमें आशा और प्रार्थना करनी चाहिए कि परमात्मा उन्हें शीघ्र ही फिर स्वस्थ करे, और वे चिरकालतक अपने देशकी सेवा करते रहें।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २६-५-१९२७

३८४. अपील: भारतीय जनताके नाम

'नवजीवन' में प्रकाशित श्रीयुत किशोरलाल मशरूवालाके विचारोंका सार अन्यत्र दिया गया है। वे एक काफी पुराने कार्यकर्त्ता हैं और अभी हालतक गुजरात विद्यापीठके रजिस्ट्रार थे। महज बीमारीके सबबसे उन्हें उस पदका त्याग करना पड़ा है। भारतमें चुपचाप शान्तिसे काम करनेवाले लोगोंमें से वे एक अत्यन्त विचारशील कार्यकर्त्ता हैं। वे प्रत्येक शब्द तौल-तौलकर लिखते या बोलते हैं। मैं उनके इन गुणोंका उल्लेख यहाँ इसलिए कर रहा हूँ कि मैं चाहता हूँ कि पाठक उनके विचारोंको पढ़कर उसी तरह भुला न दें, जैसे कि आजकल हमें कई लेखोंको भुला देना पड़ता है।

रानीपरजकी बेबस स्त्रियोंके साथ किये जानेवाले व्यभिचारकी बात हमारे राष्ट्रके माथेपर एक कलंकका टीका है। श्रीयुत किशोरलाल मशरूवालाने इस बुराईको दूर करनेके लिए पारसियोंसे अपील की है और उनके विचारसे यह ठीक भी है, क्योंकि भोलीभाली स्त्रियोंको बिगाड़नेवाले जो पारसी लोग बताये जाते हैं, उनपर यदि कोई कुछ असर डाल सकता है, तो वह पारसी लोग ही अच्छी तरहसे डाल सकते हैं। परन्तु दु:खके साथ मुझे यह चीज मालूम हुई है कि गरीब बहनोंकी आबरूको इतनी सस्ती केवल पारसी ही नहीं समझते हैं। दूसरे धर्मोके भारतीय भी ऐसी ही परिस्थितिमें ठीक इसी तरहका आचरण करते हुए पाये गये हैं, जैसा कि ये शराबकी कैन्टीनवाले पारसी करते बताये जाते हैं। परन्तु इससे पारसियोंके इन अमानुषिक

अत्याचारोंका कोई समर्थन नहीं किया जा सकता। पैसेका लोभ उन्हें एक ऐसे व्यापारकी ओर बरबस ले जा रहा है, जिसके बारेमें वे जानते हैं कि वह इन वन-प्रदेशके, दूसरी तरहसे भले उन निवासियोंके पौरुषका हरण करता है और उन्हें घोर अनैतिकता पूर्ण दिशामें जानेकी प्रेरणा देता है जिन्हें गलतीसे कालीपरज अर्थात् काले लोग कहा जाता है।

श्री मशरूवालाने जो दुःखद कथा हमें लिख भेजी है उसके लिए तो सबसे पहले ब्रिटिश सरकार अथवा यों कहें कि भारत सरकार और बड़ौदा राज्यको जिम्मेदार मानना चाहिए। क्योंकि वे ही अपनी आबकारी आयके लिए इन सीधे-सादे लोगोंके बीच शराबकी दुकानें खोलने या चालू रखनेकी इजाजत देते हैं। इन बेचारोंने इस सरकारसे कभी नहीं कहा था कि हमारे यहाँ शराबकी दुकानें खुलवा दीजिए। और यदि कहा भी होता तो भी शराबकी दुकानें खुलवा देना तो और भी बड़ा गुनाह होता ठीक वैसे ही जैसे किसी छोटे बच्चेको महज इसलिए आगसे खेलनेकी इजाजत देना क्योंकि वह खेलना चाहता था। परन्तु एक सुधारक कार्य शुरू करनेके पहले उपदेश देने और खरी तुलापर तौलकर दोषका बँटवारा करनेके लिए नहीं रुकता। जहाँ कहीं जब भी उसे मौका मिलता है, वह अपना सुधार कार्य शुरू कर देता है। और अब चूँकि भ्रष्टाचारकी बात सबके सामने स्पष्ट रूपसे रख दी गई है, पारसी सुधारकों को चाहिए कि वे इन अनैतिक लतोंमें पड़े हुए लोगोंके पास जायें और यदि वे शराबका व्यापार करनेसे उन्हें न रोक सकें तो भी कमसे-कम उनके विवेक और सम्मानकी भावनाकी दुहाई देकर उन्हें इन सीधी-सादी गरीब निर्दोष रानीपरज स्त्रियोंकी आबरू लेनेसे तो जरूर रोकें।

हमारे देशपर जो यह ताना कसा जाता है कि हम भारतीय अपनी स्त्रियोंके सम्मानकी बहुत कम कद्र करते हैं, वह दुर्भाग्यसे बहुत कुछ सही ताना है। झूठे देशाभिमानवश इस तरहकी दलील द्वारा बचाव करनेकी कोशिशसे काम नहीं चल सकता कि यह तो होता ही है या तू भी तो ऐसा ही है। दूसरे, श्री किशोरलाल मशरूवाला द्वारा उल्लिखित अनैतिक कार्योंके साथ हमें स्त्री-पुरुष विषयक अनीतिवाले उस प्रश्नको नहीं मिला देना चाहिए जिसमें एक ही वर्गके कुमार्गी स्त्री-पुरुष अपनी मर्जीसे बेलगाम व्यभिचार करते हैं।

पहले प्रकारकी अनैतिकता बुरी जरूर है और मानव जातिको बेहद नुकसान पहुँचा रही है। परन्तु इन शराबके ठेकेदार पारसियों द्वारा जो पाप किये जा रहे हैं, वे अपेक्षाकृत कहीं अधिक बुरे हैं। और परमात्माको धन्यवाद है कि अभीतक फैशनेबल समाजने इसे उचित नहीं ठहराया है। श्री किशोरलाल मशरूवालाने जो उदाहरण दिये हैं, उनमें वे शराबके ठेकेदार उनके संरक्षकोंकी हैसियतमें हैं। और यह अत्यन्त असहनीय बात है कि ये लोग उन अनपढ़ और अबूझ स्त्रियोंको, जो उनके पास रहती हैं, फुसला या ललचाकर उनके द्वारा अपनी पाप-वासनाकी तृप्ति करते हैं। इन तथाकथित ऊँची श्रेणीके लोगोंकी अपने सम्पर्कमें या मातहतीमें रहनेवाली नासमझ बहनोंकी आबरूके प्रति इस तरहकी उपेक्षाके विरुद्ध आलोचना ठीक ही

की गई है। यदि हम स्वाधीन और स्वाभिमानी राष्ट्र बनना चाहते हैं तो हमें इस बुराईको दूर करना ही होगा। गरीब-से-गरीब बहनकी आबरू भी हमारे लिए उतनी ही मूल्यवान और प्रिय होनी चाहिए जितनी अपनी सगी बहनकी होती है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-५-१९२७

३८५. टिप्पणियाँ

अखिल भारतीय चरखा संघ

अखिल भारतीय चरखा संघकी परिषदने मुझे संघके कार्य संचालनके भारसे मुक्त कर दिया है और सेठ जमनालाल बजाजको कार्यवाहक अध्यक्ष नियुक्त कर दिया है, क्योंकि मुझे सक्रिय और दैनिक कार्यसे लम्बे अर्सेतक विश्राम लेनेकी जरूरत है। इसलिए यद्यपि नाममात्रको मैं अब भी संघका अध्यक्ष हूँ, फिर भी उसके कार्य संचालनका सारा भार जमनालालजीपर रहेगा और अबसे पत्रलेखकोंको जब भी जरूरत जान पड़े, मेरे बजाय उन्हीको पत्र लिखें। ठीक तरीका तो निश्चय ही यही है कि सब पत्र संघके कार्यकारी मन्त्री श्रीयुत शंकरलाल बैंकरको लिखे जायें। क्योंकि स्वाभाविक है कि जमनालालजी किसी निर्णयपर पहुँचनेके पहले सब पत्र उन्हीको भेजा करेंगे। इसका अर्थ यह नही है कि मैं संघके मामलोंमें कोई दिलचस्पी नही लूँगा। इसके विपरीत जब कभी परिषद अथवा कार्यवाहक अध्यक्ष अथवा मन्त्रीकी रायमें किसी मामलेको मेरे सामने रखना ही उचित होगा, तब वह मार्गदर्शन और परामर्शके लिए मेरे सामने रखा जायेगा। किन्तु परिषदका निर्णय और परिषद्के साथ मेरी जो बात तय हुई है, वह यह कि मैं हर छोटे या बड़े मामलेकी तफसीलके बारेमें, प्रत्येक समस्याके बारेमें उतनी चिन्ता नही करूँगा जितनी मैं अबतक करता आया हूँ। उन्होंने मुझसे यह वचन ले लिया है कि अब मैं इन कामोंसे दूर रहूँगा और सारा भार उन्हीके ऊपर डालूँगा और उनपर यह बात छोड़ दूँगा कि जिन मामलोंको वे इतने महत्त्वपूर्ण समझें कि उनपर वे मेरी राय लेना आवश्यक समझें, उनके बारेमें वे मुझसे राय लें। किसी भी सजीव संस्थाकी यही कसौटी है कि वह किसी एक व्यक्तिपर निर्भर नहीं रहती, चाहे वह व्यक्ति कितना ही महत्त्वपूर्ण और योग्य क्यों न हो। सजीव संस्था तो अपना काम करती ही जाती है। परिषदके सदस्योंकी कोशिश यह है कि वे इस संघको एक सजीव और कुशलताके साथ प्रभावशाली काम करनेवाली संस्था बना दें। इसलिए मैं विश्वास करता हूँ कि खादी कार्यकर्त्ता और खादी प्रेमी नई व्यवस्थाको सहयोग देंगे और इस प्रगतिशील संस्थाको यथासम्भव अधिकसे-अधिक अच्छे ढंगसे चलानेमें परिषदकी सहायता करेंगे।

एक अनुकरणीय दृष्टांत

लगता है कि जावरा राज्य रंगाई और छपाईके लिए मशहूर है। मुझे मालूम हुआ है कि जावराके राज्य प्रमुख नवाब साहब खादी आन्दोलनमें दिलचस्पी रखते

है। छपाई रँगाईकी प्रक्रियाओं द्वारा खादीको अधिक आकर्षक बनाकर खादीको बढ़ावा देनेके खयालसे उन्होंने खादीको सब करोंसे मुक्त कर दिया है। इस प्रशंसनीय कार्यके लिए मैं जावरा राज्यको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि अन्य राज्य भी इस महान् और दिन-ब-दिन प्रगति कर रहे राष्ट्रीय उद्यमके प्रति, जिसमें भारतके भूखों मरनेवाले करोड़ों लोगोंके लिए बहुत बड़ा आर्थिक सहारा बननेकी सम्भावना निहित है, अनुग्रहयुक्त व्यवहार करेंगे।

विवेकानन्द और कताई

एक पत्र लेखकने मेरे पास अमेरिकी प्रश्नकर्त्ताओंके उत्तरमें विवेकानन्द द्वारा दिए गए उत्तरोंमें से कुछ दिलचस्प उद्धरण भेजे हैं। कताईसे सम्बन्धित एक अंश नीचे उद्धृत किया जाता है:

> भारतके ग्रामीण जीवनके विषयमें भाषण देते हुए वे बोले: "कहीं-कहीं भारतकी सामान्य ग्रामीण लड़की अपने चरखेपर कातते हुए कहती है "मुझसे द्वैतकी बात मत कहो, मेरा चरखा तो कहता है सोऽहम् सोऽहम् — वही मैं हूँ, वही मैं हूँ!" इन यन्त्रों और विज्ञानसे क्या फायदा? उनका तो केवल यही परिणाम हुआ है कि वे ज्ञानका प्रसार करते हैं। आपने आवश्यकताओंके सवालको हल करनेके बजाय उसे और भी मुश्किल बना दिया है। यन्त्र गरीबीका प्रश्न सुलझाते नहीं हैं वे तो जीवन-निर्वाहके लिए संघर्षको बढ़ाते ही हैं और परस्परकी होड़ तीव्र हो जाती है। प्रत्येक चीजकी कीमत इस सिद्धान्तके अनुसार आँकी जानी चाहिए कि वह वस्तु परमात्माके स्वरूपको कहाँतक व्यक्त करती है।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २६-५-१९२७

३८६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

नन्दी हिल्स
२६ मई, १९२७

प्रिय सतीशबाबू,

मुझे आपका पत्र और क्षितीशबाबूका भी एक पत्र मिला। आप 'यंग इंडिया' में मेरी टिप्पणी[1] पहले ही देख चुके हैं। जमनालालजीने, यहाँ रहते हुए जब मुझसे कहा कि मैं 'यंग इंडिया' में नये प्रबन्धके बारेमें एक अनुच्छेद लिख दूँ, तो मैं यह समझा था कि परिषदके सब सदस्य इससे सहमत हो गये हैं। मूल विचार तो मेरे पूरी तरह इस्तीफा दे देनेका था। जो प्रस्ताव अब पास हो चुका है वह मध्यमार्गीय है। मैंने सोचा कि मेरा संघके प्रधानपदसे हट जाना बहुत ही उतावलीका कार्य होगा और इससे हमारे उद्देश्यको क्षति पहुँच सकती है। मेरे स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी इसका औचित्य नहीं था। परन्तु मैंने सोचा कि मुझे दैनिक कार्यके उत्तरदायित्वसे मुक्त

१. अ० भा० च० संघके सम्बन्धमें; देखिए पिछला शीर्षक।

करने एवं मेरे बिना परिषदके आगे बढ़नेका विचार बहुत अच्छा है। मेरी राय और पथ-प्रदर्शनकी जब कभी आवश्यकता होगी, वह तो मिलता ही रहेगा।

मै खुद तो यही मानता हूँ कि दौरेका मेरे अकस्मात् बीमार पड़ जानेसे कोई सम्बन्ध नहीं था। खूब जुटकर काममें लग जाना इसका कारण था, और वह मैंने स्वयं स्वीकार किया था। किसीने मुझे बाध्य नहीं किया था कि मैं तड़ित् गतिसे दौरा लगाऊँ। मैंने अपने सहयोगियोंको यह सोचनेकी गुंजाइश दी और स्वयं भी मेरा यही ख्याल था कि मेरा शरीर लादे गये भारको किसी तरह सहन कर लेगा। क्या आप जानते है कि यह कष्ट कठिन परीक्षाके बिलकुल अन्तिम दिन ही एकाएक आ पड़ा? क्योंकि महाराष्ट्रका दौरा समाप्त करनेके बाद मेरा विचार नया अध्याय आरम्भ करनेका था; और मैंने उपयुक्त सूचना[1] राजगोपालाचारीको दे रखी थी कि मै अब वैसी उतावली नही करूँगा। मैने सोच रखा था कि बाकीका दौरा सालभरमें सुविधापूर्वक समाप्त करूँगा। यदि यह संकट न आ पड़ता, तो मै गर्वित होकर सोचता कि अपने शरीरपर मै जितना चाहूँ बोझ डाल सकता हूँ। प्रकृतिने बदला लिया और इतनी नरमीसे कि जैसा डा० वेन्लेसने कहा है 'यह प्रकृतिकी प्रथम और बहुत हदतक एक कठोर चेतावनी है।' डा० वेन्लेस सोचते है, बहुतसे दूसरे डाक्टर तथा मैं स्वयं भी सोचता हूँ कि एकाएक जो शक्ति क्षीण हो गई उसे उपयुक्त परिमाणमें फिरसे प्राप्त कर लेनेके बाद, जो कि सम्भव भी है, मै हलका दौरा भी कर सकता हूँ। डाक्टर सोचते हैं कि शायद इससे कुछ लाभ ही हो। परन्तु इसके साथ यह जरूरी है कि आराम प्रतिदिन करना ही चाहिए। अधिक उतावली नही करनी चाहिए। अधिक कोलाहल न हो। निश्चित समय एवं नियमके अनुसार काम करनेकी पाबन्दी न हो। दिनभरमें केवल एक ही सभामें शामिल होऊँ, और उसमें भी बहुत ज्यादा न बोलूँ — एवं इसी तरहकी अन्य बातोंको ध्यानमें रखा जाये। मै अपने मनको जीवनकी इस नई विधाके अनुकूल ढालना चाहता हूँ। यदि मै सफल हो सका तो इससे मेरी आयुकी अवधि बढ़ जायेगी और मै अच्छा खासा काम भी कर सकूँगा। इसलिए कृपया जो हो चुका है, उसकी चिन्ता मत कीजिये। बादमें मै प्रतिदिनका कार्य भी फिरसे सँभाल सकूँगा।

आप मुझे प्रति सप्ताह नियमित रूपसे पत्र लिखें और बतायें कि आप तथा अन्य लोग कैसे है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरी सेहत बराबर सुधर रही है। मैं शायद एक महीनेतक मद्रास प्रदेशका हलका-सा दौरा कर सकूँगा, जिससे कि वहाँ जो रकम पहले ही से इकट्ठी की जा चुकी है, उसे सँभाल लूँ।

सस्नेह,

हृदयसे आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५७१) की फोटो-नकल तथा (एस० एन० १९७७७) की माइक्रोफिल्मसे।

१. देखिए "पत्र: च० राजगोपालाचारीको", २१-२-१९२७ से पूर्व।

३८७. पत्र : जेन हॉवर्डको

आश्रम
साबरमती[1]
२६ मई, १९२७

प्रिय कुमारी हॉवर्ड,

आपका पत्र जिसमें आपने स्व० श्री हॉवर्ड और अपने बारेमें विवरण दिया है, पाकर प्रसन्नता हुई। आपका उनके साथ जो सम्बन्ध था, उसके तथा आपके निःस्वार्थ सेवाभावके बारेमें मुझे कुछ मालूम नहीं था। आपने जो विवरण दिया है, उसे पढ़कर आत्माको शान्ति मिलती है। इसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ।

मुझे आशा है कि आपको 'यंग इंडिया' नियमित रूपसे मिल रहा होगा। न मिल रहा हो तो कृपया लिखिए। आप समय-समयपर मुझे लिखती अवश्य रहें। चूँकि मैं अभी बीमारीके बिस्तरपर हूँ, इसलिए मैं यह पत्र बोलकर लिखवानेके लिए बाध्य हूँ।

श्रीमती गांधी और मेरी ओरसे स्नेहपूर्ण अभिवादन सहित।

हृदयसे आपका,

कु० जेन हॉवर्ड
रोजमैरी
५०, पण्डोरा रोड
मलबोर्न, जोहानिसबर्ग

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५४) की फोटो-नकलसे।

३८८. पत्र : फ्रांसिस्का स्टैन्डेनथको

आश्रम
साबरमती[2]
२६ मई, १९२७

प्रिय बहन,

इस बार आपका पत्र बहुत दिनोंके बाद आया। मैं बराबर आपकी याद करता रहता हूँ। आपको मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। यद्यपि मेरी बीमारी अस्थायी थी, तो भी मुझे इसने कमजोरी बहुत आ गई। बहरहालमें प्रतिदिन थोड़ा-बहुत काम कर सकता हूँ।

मैं आपकी श्री रणछोड़लाल अमृतलालके साथ हुई भेंटके ब्योरेकी प्रतीक्षा करूँगा।

१ व २. स्थायी पता।

आपने दोनों प्रकाशनोंके बारेमें जो-कुछ लिखा है, वह मैंने नोट कर लिया है। हमें उनकी तरफ ज्यादा ध्यान नहीं देना चाहिए। हम लोगोंको अपनी-अपनी रुचिके अनुकूल विचार रखनेसे नहीं रोक सकते। जैसे हम चाहते हैं कि अन्य लोग हमारे विचारोंका मान करें, वैसे ही हमें भी उन लोगोंके विचारोंका, वे हमारी रुचिके अनुकूल न हों तो भी, आदर करना चाहिए।

हृदयसे आपका,

श्रीमती फ्रांसिस्का स्टेन्डेनथ
ग्रेज (स्टीरियामें)
ट्राउटमन्सडोर्फगेज – १
(ऑस्ट्रिया)

अंग्रेजी (एस० एन० १२४९३) की फोटो-नकलसे।

३८९. पत्र : श्रीप्रकाशको

नन्दी हिल्स
२६ मई, १९२७

प्रिय श्रीप्रकाश,

आश्रमसे पता बदलकर भेजे गये आपके पत्रको पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। आपका सूत मामूली ठीक है। और आप अपना नाम चरखा संघके सदस्योंमें बिना किसी आशंकाके दर्ज करा सकते हैं।

मैं समझ सकता हूँ कि गर्मियोंके दिनोमें तकलीसे परेशानी होती होगी। तो ठीक यह रहेगा कि आप यह काम तड़के ही ऐसे समय कर लिया करें जब आप धागेको कृत्रिम प्रकाशके बिना अच्छी तरह देख सकते हों। उस समय सूखीसे-सूखी आबहवावाले स्थानपर भी इतनी नमी रहती है कि पूनियोंका तार ज्यादा अच्छी तरह निकल सके। यदि आप कताई एकान्तमे करते हों तो आप पूरी 'भगवद्गीता' या अपने किन्ही अन्य प्रिय श्लोकोंका पाठ भी कर सकते हैं।

आश्रमसे मेरे पास जो रु० २६५–३–० भेजे गये है, उनकी रसीद भेज रहा हूँ।

मुझे प्रसन्नता है कि आपने विद्यापीठमें खद्दर पहनना और कातना अनिवार्य कर दिया है।

आशा है कि आपने कुछ समय आश्रममें गुजारनेका विचार नही छोड़ा होगा।

संलग्न : १

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १९७७६) की माइक्रोफिल्मसे।

३९०. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

नन्दी हिल्स
२७ मई, १९२७

प्रिय गोविन्द,

आपने मगनलालको इसी महीनेकी १७ तारीखको जो महत्त्वपूर्ण पत्र लिखा, और जिसकी एक प्रति मगनलालने मुझे भेजी है, उससे मुझे आपको यह पत्र लिखनेका अवसर प्राप्त हुआ है।

यदि हम तथ्योंको स्वीकार कर सकें, तो आपके सुझाव अत्यन्त श्रेष्ठ हैं। मैं आपको जो बात अब बताने जा रहा हूँ यह बात सम्भवत. मगनलालके ध्यानमें ही नही आई है। यदि यह बात उसके ध्यानमें आई भी हो तो मुझे इसमें कोई आश्चर्य नही होगा, क्योंकि मैं समझता हूँ कि मगनलालने कताई-आन्दोलनके तत्त्वको आत्मसात् कर लिया है। जो मैं कहना चाहता हूँ वह यह है: ऐसी जीवन-पद्धतिमें जिसमें कि शत्रुओंके लिए कोई गुंजाइश नही, यदि विरोधी शब्दका प्रयोग उचित है, तो विरोधियों द्वारा अपनाये गये तरीकोंको या विरोधियों द्वारा अपनाये गये तरीकोंमें आवश्यक परिवर्तन करके करीब-करीब उन्ही तरीकोंको अपनाकर हम सफल होनेकी आशा रखते हों, तो यह आन्दोलन निश्चय ही असफल सिद्ध होगा। मेरी रायमें कमसे-कम जहाँतक भारतका सवाल है हमें इस आन्दोलनको सजीव और सार्वत्रिक शक्ति बनानेके लिए दूसरे उपाय सोचने चाहिए। विरोधीका नवीनतम उपकरणोंके प्रयोगमें विश्वास है। इसलिए उसे उन लोगोंके तरीकोंका प्रयोग अवश्य करना है, जो इन उपकरणोंके प्रयोगमें कुशल हैं। परन्तु कताई-आन्दोलनमें आधुनिक उपकरणोंका ज्यादातर बहिष्कार किया जाता है, और कुछ एक उपकरण, जो रखे भी जाते हैं, उनका अलग तरीकेसे प्रयोग किया जाता है। हमारे आन्दोलनमें टाइपराइटरोंकी और आशुलिपिकी मदद अस्थायी तौरपर ली जाती है। इसी तरहके अन्य उपायोंको भी अस्थायी तौरपर अपनाया जाता है। जैसे ही कोई व्यक्ति गाँवोंमें जाता है, ये उपकरण सहायक होनेके बजाय बाधक बन जाते हैं। यदि आन्दोलनको बढ़िया आशुलिपि पर निर्भर रहना पड़े, तो यह शीघ्र ही असफल हो जायेगा। क्योंकि फिर यह आन्दोलन इन हालातोंमें शहरोंसे बाहर निकलकर कोई प्रगति नही कर सकता। यदि इस आन्दोलनको प्रसारके लिए अंग्रेजी भाषापर निर्भर रहना पड़े, तो भी यह सफल नही हो सकता। आपको मालूम है कि आश्रममें और संघके कार्यालयमें और यहाँ भी हम नाममात्रके ही आशुलिपिकोंसे काम चला रहे हैं। यदि विज्ञापन दें तो भी शायद हमें सबसे अच्छा आशुलिपिक नही मिलेगा। क्योंकि उसे मालूम हो जायेगा कि इस आन्दोलनमें केवल आधा दर्जन आशुपिलिकोंकी जरूरत है। और हमें, जैसा कि मेरा खयाल है, आजकल जो १०० या १२५ अभी दिये जा रहे हैं उसकी जगह

वैसी जैसी सहायताका विचार आप कर रहे हैं, उसके लिए २०० से ४०० के बीच कुछ देना होगा। यदि आप यह दलील दें कि अगर केवल एक ही आदमी लेना हो, तो वह तनख्वाह भी मितव्ययता होगी, तो मैं आपसे पूरी तरह सहमत होऊँगा। बहरहाल, अनुभव बताता है कि आप ऐसे आदमीकी सेवाओंको तबतक बरकरार नहीं रख सकते जबतक कि आप उसे मालिककी तरह मनमौजी बननेकी एवं हर तरहसे अपनी शर्तें मंजूर करवाते रहनेकी अनुज्ञा देनेको तैयार नहीं। इस तरह जिसे आन्दोलनमें श्रद्धा न हो; जो खादी पहननेसे घृणा करता हो; और जिसे कामपर जमकर बैठनेसे पहले पालिश किये हुए फर्नीचरकी जरूरत हो, ऐसे योग्य आशुलिपिकको रखना बेकार होगा। जहाँतक मैं समझ सकता हूँ इस तरहके व्यवसायमें लगे अच्छे लोग जितना अधिक पारिश्रमिक माँगते हैं, उतना कताई-आन्दोलन कभी नहीं दे सकता। क्या आपको मालूम है कि यदि हम खादी-सेवामें एक भी व्यक्तिको अधिक वेतन दें तो सभी श्रेणीके लोगोंमें स्वाभाविक तौरपर तुरन्त विक्षोभ भर जायेगा। और वे सब अपने तुच्छ वेतनकी तुलना उस व्यक्तिको दिये जानेवाले अधिक वेतनसे करने लगेंगे। कताई-आन्दोलनको सुचारुरूपसे चलानेके तरीकेका अभी विकास हो रहा है। यह आन्दोलन अभी परिवर्तनोंके दौरमें है। यह कह सकनेमें अभी कुछ समय लगेगा कि इसमें स्थिरता आ गई है। यह ऐसा आन्दोलन है जिसका विकास अपने अन्दरसे होना है। यह आन्दोलन शहरी जीवनके अभ्यस्त लोगोंसे सतत त्यागकी अपेक्षा करता है। इस आन्दोलनके लिए अपेक्षित पुरुषों एवं महिलाओंके वर्गको प्रशिक्षित करके इसके लिए तैयार करना है। ऐसे लोग विज्ञापनसे नहीं मिल सकते। हमारे पास कार्य-कुशल आशुलिपिक न होनेका कारण यह है कि आशुलिपिकोंको प्रशिक्षण देनेका प्रयत्न कभी नहीं किया गया। उदाहरणके लिए छगनलाल, महादेव, कृष्णदास, प्यारेलाल और बहुतसे दूसरे ऐसे लोगोंको, जिनके नाम मैं गिना सकता हूँ, उच्चकोटिके आशु-लिपिक बनाया जा सकता है। परन्तु ऐसा करना उपयोगी नहीं समझा गया। ऐसा करनेका मतलब तो पैसेकी जगह रुपया खर्च करने जैसी बात होगी। इसलिए हमें यह आशा करते हुए कि यदि वे आन्दोलनके भावसे आत्मसात् कर लेंगे, तो जिस काममें वे लगे हुए हैं, उसमें उच्चकोटिकी निपुणता प्राप्त कर लेंगे, हम बहुत ही घटिया किस्मके आशुलिपिकोंसे ही काम चला रहे हैं। मैंने यह लम्बी-चौड़ी दलील दी है; और इस दलीलको अटपटे ढंगसे पेश किया है। मैंने आन्दोलनके सम्बन्धमें इस विचारको लिखित रूपमें पहली बार प्रस्तुत किया है, क्योंकि मैं इस बातके लिए उत्सुक हूँ कि चूँकि आप कताई-आन्दोलनकी भावनामें सराबोर हैं; इसलिए मेरे मनमें जो-कुछ है, वह सब आप समझ लें और मुझे अपनी आलोचना द्वारा लाभ पहुँचाएँ। जैसा कि मुझे सन्देह है, यदि मैंने अपने विचारोंको साफ ढंगसे व्यक्त नहीं किया है, तो और स्पष्टीकरणके लिए फिर मुझसे पूछनेमें संकोच मत कीजियेगा। कुछ एक पत्रोंके आदान-प्रदानसे मैं अपने विचारोंको पहलेकी अपेक्षा और अच्छी तरह व्यक्त कर सकूँगा। मैंने ऊपर जो-कुछ कहा है उसके अलावा आपके मतके सम्बन्धमें और बहुत कुछ कहना है।

'यंग इंडिया' और 'नवजीवन' ठीक वैसे ही नही है जैसा मै चाहता हूँ, उसके कारण है, जिनपर चर्चा करनेकी इस समय आवश्यकता नही है। कुछ एक कारण तो ऐसे है जिनका निवारण किया जा सकता है और कुछ एक अनिवार्य है। आशा है कि मै उन कारणोका निराकरण कर लूँगा जिनका निवारण किया जा सकता है।

मुझे विटामिनोके सम्बन्धमें लिखी पुस्तक मिल गई है। जैसे ही यह पुस्तक मुझे मिली, मैने इसे पढ डाला। पुस्तक अच्छी है। परन्तु इससे तसल्ली नही हुई। जहाँतक मै समझ पाया हूँ, विटामिनोंसे सम्बन्धित विषयपर अभी खोज होनी बाकी है। लेखकका कथन मुझे अन्तिम नही लगता। उन्होंने मांस-भोजनके पक्षमें जो मत गिरीवाले फलों एवं दालोंके बहिष्कारकी बात कही है वह प्रकृतिके विरुद्ध बैठती है, और मैंने शाकाहारसे सम्बन्धित साहित्यमें जो-कुछ पढा है, उससे बिलकुल मेल नही खाती। जो-कुछ लेखकोंने कहा है, वह यदि विटामिनोंके सम्बन्धमें अन्तिम कथन है, तो वह शाकाहार सिद्धान्तपर बड़ी भारी चोट है। परन्तु लेखकोंके पास गिरीवाले फलो और दालोंके प्रभावके सम्बन्धमें सही निर्णयपर पहुँच सकनेके लिए सम्भवतः पर्याप्त सामग्री नही है। शाक — प्रोटीन — खाद्यकी गुणकारिता या गुणहीनताके बारेमें सही पर्यवेक्षण बड़े पैमानेपर केवल भारतमें ही किया जा सकता है। केवल भारतमें ही हमें जन्मजात शाकाहारी हजारोंकी संख्यामें मिलते हैं। इससे पहले कि सही निष्कर्ष निकाले जायें, उन लोगोंके भोजनका एवं उनकी आदतोंका वैज्ञानिक ढंगसे पर्यालोचन एवं विश्लेषण आवश्यक है और उसके बाद भी बहुतसे और कारण है जैसे कि इससे पहले कि उन लोगों द्वारा खाये जानेवाले अन्नोंका मूल्यांकन किया जाये, जल-वायु, हानिकर रीति-रिवाज तथा ऐसी दूसरी चीजोंको भी ध्यानमें रखना जरूरी है। इसलिए मै उस पुस्तकमें लिखी सभी बातोंको बडी सावधानीसे देख रहा हूँ। स्वर्गीय ए० एफ० हिल्स, लन्दनमें शाकाहार संस्थाके प्रधान थे। वह अच्छे व्यक्ति थे। मुझे नही मालूम कि उनको विज्ञानके सम्बन्धमें कितना ज्ञान था। परन्तु उन्होंने भोजनके सम्बन्धमें साहसपूर्ण अनुसन्धान किये। उन्होंने स्वयं एकके बाद एक बहुतसे प्रयोग किये। इस विषयपर जिसे उन्होंने "शक्तिदायक खाद्य" की संज्ञा दे रखी थी, कई एक लेख लिखे। उन्होंने खाद्य-पदार्थोंको तीन या चार वर्गोमें बाँटा है। एक उनके लिए जिनका धन्धा मुख्यत शारीरिक श्रमसे सम्बन्धित था। दूसरा उनके लिए जो मुख्यत. बुद्धिजीवी थे, तीसरा उनके लिए जिनका कार्य मुख्यत. अध्यात्मसे सम्बन्धित रहता है, और चौथा उनके लिए जो अस्वस्थ दशामें रहते है। उनके तर्क मुझे उन दिनों बहुत जँचते थे। मुझे नही मालूम कि मै उनके सभी लेखोंको यदि फिरसे पढूँ तो वे अब भी मुझे वैसे ही जँचेगे भी या नही। खाद्य-पदार्थोंके मूल्योंके सम्बन्धमें चिकित्सा व्यवसायमें उन दिनों जो चर्चा चल रही थी, मैंने उसे भी बड़े ध्यानसे समझनेकी कोशिश की। मुझे मालूम है कि डाक्टरोंका एक वर्ग बड़े जोर-शोरसे सफेद पाव रोटीके पक्षमें था और दूसरा वर्ग मानता था कि सफेद पाव रोटी मृत्युकी आश्रयस्वरूप है; और भूरी पाव रोटी जीवनकी। एक "रोटी सुधार संघ" भी बना था, जिसकी कुमारी येट्स मंत्री थी। मै उस भद्र महिलाके निकट सम्पर्कमें आता रहता था।

परन्तु तब भी मुझे यही पता चला कि दोनों ही पक्ष अपनी बातपर दृढ़ थे। दोनों विभिन्न प्रकारकी पाव रोटियोंके विश्लेषण और आँकड़े पेश किया करते थे। निष्कर्षके लिए किसीके पास पर्याप्त सामग्री नहीं थी। क्योंकि वे ऐसे बहुतसे लोग जुटा सकते थे जो उनके पर्यवेक्षणके लिए केवल भूरी पाव रोटी और पानीपर अथवा सफेद पाव रोटी और पानीपर निर्वाह करनेके लिए तैयार थे। एक डाक्टरका दिया एक दृष्टान्त मुझे याद है। जहाँतक मुझे याद पड़ता है वह डा० एलिसन थे। उन्होंने कहा कि मैंने अपने कुत्तोंमें से एकको सफेद पाव रोटीपर एक महीनेतक रखा और वह मर गया। दूसरे कुत्तेको भूरी पाव रोटीपर रखा और वह जीवित रहा। अनिवार्य निष्कर्ष यह था कि सफेद पाव रोटी मृत्युकी आश्रयस्वरूप थी एवं भूरी पाव रोटी जीवनकी। उन्होंने यह नहीं बताया कि क्या दोनों कुत्तोंको सारा समय बन्धनमें रखा गया। न ही उन्होंने यह बताया कि क्या जब प्रयोग शुरू किया गया तो दोनों कुत्तोंकी शारीरिक शक्ति एक ही जैसी थी? मैं यह स्वीकार करूँगा कि उन दिनों लगभग ४० वर्ष पहले, मैंने डा० एलिसनका पक्ष मान लिया था और कुत्तोंके बारेमें उनके प्रमाणको तत्काल स्वीकार कर लिया था। मैं भूरी पाव रोटीके अलावा और कुछ भी नहीं खाता था और भूरी पाव रोटीकी किस्ममें भी ज्यादातर एलिसनकी ही भूरी रोटी खाता था, क्योंकि माननीय डाक्टर एलिसन ही भूरी रोटी खानेकी आवश्यकतापर विशेष जोर दिया करते थे, वह इसलिए कि केवल उसीमें आवश्यकतानुसार बारीक पिसा हुआ गेहूँ पूरी तरहसे होता था। वह अच्छे व्यक्ति थे। मैंने उनके सारे लेख पढ़े। १९१४ में भी जब मुझे प्लूरिसी हो गई थी और जब मैं दूधतक लेनेसे बराबर इनकार करता रहता था, तब भी मैंने उनकी राय ली थी। सम्भवतः माननीय डाक्टर अब भी जीवित हैं। इतनेपर भी जैसे-जैसे अनुभव पक्का होता गया मैंने इस किस्मकी बहुत-सी दलीलोंको, जिनका मैंने वर्णन किया है, स्वयं नगण्य मानना शुरू कर दिया था। इस सारे ब्यौरेका निष्कर्ष यह है कि मैं आपको बताना चाहता हूँ कि मैंने अपने भोजनमें, जो-कुछ मैं आपको बता चुका हूँ, उसके अलावा और कोई परिवर्तन नहीं किये हैं। मैं बिना उबाला दूध अब भी लेता हूँ। मैं इसमें पानी मिला लेता हूँ। उसी समय लाया गया बकरियोंका ताजा दूध उबलते पानीमें डाला जाता है। उससे दूध यथेष्ट गर्म हो जाता है और क्योंकि उसमें पानी मिलाया जाता है इससे दूध हलका हो जाता है। मैं अभीतक थोड़ी-सी रोटी या घरमें पिसे गेहूँकी बनी हुई थोड़ी-सी भाखरी और एक हरी सब्जी ले रहा हूँ। पुस्तकके लेखक कहते हैं कि सोडा सब्जियोंके विटामिन नष्ट कर देता है। परन्तु बिना सोडेके सब्जियाँ नर्म नहीं होतीं। इसलिए मैंने सब्जियोंमें सोडा डालनेका निश्चय कर लिया है। सब्जीको जबतक पूरी तरह न पकाया जाये, उसे हज्म करना कठिन है। बिना पकाई हरी पातगोभी मुझे हज्म नहीं होती। आपने गौर किया होगा कि दूधमें चारोंके चारों विटामिन पाये जाते हैं। मैं जो फल ले रहा हूँ, उनमें ये विटामिन भी पाये जाते हैं। इसलिए पातगोभी या भारतीय मटरको पकाते समय सोडा मिला लेनेसे मुझे अधिक हानि नहीं होती। पालकको बिना सोडेके

पकानेमें कोई कठिनाई नही होती। इसलिए जब कभी मैं पालक लेता हूँ उनमें सोडा नही मिलाया जाता। मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्धमें चिन्ताकी कोई बात नहीं है। क्योंकि ऐसा लगता है कि मैं चाहे धीरे ही सही, पर ठीक हो रहा हूँ। जबतक मैं फिरसे फल और गिरीवाले फल नही लेने लगता मुझे किसी खाद्य-पदार्थमें निजी तौरपर सन्तोष नही हो सकता? परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि इस तरहके निजी सन्तोषके बिना ही मेरा यह सासारिक जीवन समाप्त हो जायेगा।

हृदयसे आपका,

[पुनश्च :]

मुझे इस लम्बे पत्रके लिए क्षमा कर दीजियेगा। मुझे मालूम नही था कि यह पत्र इतना लम्बा हो जायेगा।

अंग्रेजी (एस० एन० १२५७४) की फोटो-नकलसे।

३९१. पत्र : मगनलाल गांधीको

नन्दी दुर्ग
चैत्र कृष्ण ११ [२७ मई, १९२७][1]

चि० मगनलाल,

रामचन्द्रके विषयमें तुमने महादेवको जो लिखा है वह मैंने सुन लिया है। उसके बारेमें मुझे इस समय कुछ नही लिखना है। मेरा पत्र तुमने उसे दिया है इसलिए उसका असर देखना। और फिर जमनालालजी जब वहाँ आये तब उनसे बात करके जो करना उचित मालूम हो सो करना। उसके बाद अगर ऐसी कोई बात हो जिसपर मेरा लिखना जरूरी हो तो मुझे खबर करना।

गोविन्दजीका पत्र बहुत अच्छा है। उसे पढकर जो विचार मुझे सूझे वे मैंने उन्हें लिख भेजे है।[2] अपने जवाबकी नकल तुम्हे भेज रहा हूँ। जवाब तुम पढना और नारणदासको पढाना। उसने मूल पत्र न पढा हो तो वह भी पढ़ाना। मेरे जवाबको पढकर तुम्हे कोई विचार सूझे तो मुझे लिखना। उसमें से कोई बात समझ न आये तो भी लिखना। जिस विषयमें हम विरोधी पक्षके साथ स्पर्धा नही करना चाहते उस विषयमें तो हममें अपूर्णता होगी ही। लेकिन जहाँ हम स्पर्धा करते है या जिस विषयमें हम विशेषताका दावा करते है वहाँ हम जितनी पूर्णतातक पहुँच सकें उतनी तक पहुँचना ही चाहिए। 'नवजीवन' में या 'यग इडिया' मे जो सामग्री

१. पत्रके पाठके आधारपर।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

देना तुम्हें जरूरी मालूम हो वह सामग्री तुम मुझे भेज देना; यदि वह मुझे पसन्द आई, तो उसे छापनेमें कोई अड़चन नहीं होगी। जिन पुस्तकोंके बारेमें 'यंग इंडिया' या 'नवजीवन' में हमेशा सूचना जानी चाहिए उनका विज्ञापन बनाकर मुझे भेज देना, मैं उसकी व्यवस्था कर दूंगा। हेनरीके बारेमें मैंने एक टिप्पणी 'यंग इंडिया' के लिए लिखी थी। परन्तु तुम्हारा और जमनालालजीका पत्र मिलनेपर उसे रोक रखा। अब उसे स्वामीके पाससे मँगवा कर देख जाना और उसमें जरूरी फेरफार करनेके बाद यदि ऐसा लगे कि उसे दिया जा सकता है, तो मुझे भेज देना और यदि ऐसा न लगे तो कुछ करनेकी जरूरत नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७७६७) से।
सौजन्य : राधाबहन चौधरी

३९२. पत्र : मीराबहनको

नन्दी हिल्स
२८ मई, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे दोनों पत्र मिले; तार भी मिल गया है। जवाब देनेमें दो दिनकी देर न हो, इसलिए मैं बोलकर लिखवा रहा हूँ। जहाँतक हो सके, मौनवारके सिवा खुद पत्र न लिखनेका नियम मैं नहीं तोड़ना चाहता। तुम्हारे दोनों पत्र बड़े कीमती हैं। अब मुझे आश्रमके बारेमें पहलेसे कहीं अधिक अच्छी जानकारी हो गई है। लगभग ऐसी ही जैसे मैं वहाँ खुद जाकर देख आया होऊँ। तुम्हारा वर्णन अपने ढंगका अनोखा है और उसकी उपयोगिता वालुंजकरके पत्रसे और बढ़ गई है।

तुमने अच्छा किया कि अलग-अलग दलोंके गुणोंकी तुलनामें नहीं पड़ी, मुझे पूरी आशा है कि अप्रिय तुलनाएँ सुनकर भी तुम स्थिरचित्त रहोगी। जो तुलना करते हैं वे तो ऐसा ईमानदारीसे ही करते हैं किन्तु वे यह नहीं जानते कि ऐसी तुलनाएँ करना अनुचित है। और लोग वास्तवमें जो धारणाएँ रखते हैं उन्हें सुनकर अशान्त होनेमें क्या लाभ है?

यह भाँगका प्रयोग परेशानीकी बात है। यदि समय रहते यह व्यसन रोका न गया तो इससे वह संस्था नष्ट हो जायेगी। किन्तु तुम्हारा सुधारके लिए आग्रह न करना ठीक ही है। तुम वहाँ व्यवस्थापक या निरीक्षक बनकर सुधार करने तो नहीं गई हो। तुम तो वहाँ हिन्दीका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने गई हो। और ऐसा करते हुए तुम वही सेवा कर सकती हो जो सम्भव और स्वीकार्य हो। अब मैं तुम्हारी हिन्दी सीखनेकी बात को लेता हूँ।

तुम अपने आप ही इस काममें तेजीसे जुट गई हो। निश्चय ही हमारा सूत्र यह रहा है कि हिन्दी पहले है और दूसरी सब चीजें बादमें। मैंने तो समझा था कि वह सूत्र कुछ-कुछ उपेक्षित हो रहा है। जब तुम दिल्लीमें थी और वहांके गुरुकुलकी विभिन्न मर्यादाओंकी चर्चा कर रही थी, तब मैंने तुम्हे लिखे अपने पत्रोंमें इस बातपर जोर दिया था। लेकिन मैंने सोचा कि इस सूत्रका अपने पत्रोंमे इससे अधिक उल्लेख करना अवाछनीय होगा। और मैं यह भी जानता था कि तुम स्वय भी सावधान हो और यदि तुम्हें अपनी ओरसे सुस्ती दिखेगी तो अपने आपको तुरन्त चुस्त बनाओगी। तुमने अब ऐसा कर लिया है, मुझे इससे प्रसन्नता हुई है। मैं बिलकुल सन्तुष्ट हूँ। निस्सन्देह ऐसे असख्य लाभदायक कार्य हैं जिन्हे तुम हर जगह कर सकती हो। धार्मिक भावना होनेकी सच्ची कसौटी यह है कि मनुष्य ऐसे बहुतसे कामोंमें से, जो सभी थोड़े-बहुत 'ठीक' हैं, उसे चुन सके जो सबसे ज्यादा 'ठीक' हो। 'भगवद्गीता' के एक श्लोकका यही अर्थ है, जिसमें कहा गया है "परधर्म कितना ही बड़ा हो तो भी उसका पालन करनेकी अपेक्षा स्वधर्मका, फिर वह कितना ही छोटा क्यों न हो, पालन करते हुए मर जाना ज्यादा अच्छा है।"[1] इसलिए मुझे इनमें जरा भी सन्देह नही कि जिस एक कामके लिए तुमने साबरमती आश्रम छोड़ा है, उसकी यदि जरा भी कुर्बानी या उपेक्षा करनी पड़े, तो तुम्हें उन बहुत-से कामोंकी तरफ, जिन्हें तुम आसानीसे कर सकती हो, ध्यान न देनेका हक होगा। और अगर वहाँ या और किसी जगह तुम इसलिए अनचाही मेहमान बन जाओ कि तुम उस कामका आग्रह रखती हो, तो उस स्थानको छोड देनेके लिए तुम्हें इतनी चेतावनी ही पर्याप्त है। जब तुम्हें इस तरहकी जोरदार पुकारका अनुभव हो, तब तुम और किसी भी सुझावकी तरफ हरगिज ध्यान मत देना। मगर इस तरहकी तीव्र और जबरदस्त इच्छा भीतरसे उत्पन्न होनी चाहिए। मुझे तुमसे कोई बात हरगिज बार-बार नही कहनी चाहिए। मै बार-बार कहूँगा भी नही। तुम जितनी भी प्रगति कर सको, फिर वह कितनी ही धीमी क्यों न हो, मुझे उससे पूरा सन्तोष होगा। तुम जिस ढंगको सबसे उत्तम समझो, उसी ढंगसे हिन्दी सीख लो। अगर तुम्हें ऐसा लगे कि हिन्दीके साथ-साथ दूसरे अनेक काम करनेसे तुम्हारे चित्तको शान्त रखनेमें और अधिक सहायता मिलती है, तो तुम उन्हे भी करने लगो। इसलिए हमेशा यह न सोचती रहो कि मुझे क्या पसन्द होगा बल्कि जो तुम अपने खयालसे, अपना शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बिगाड़े बिना, आसानीसे कर सकती हो वही करो। अपनी योजनाको क्रियान्वित करनेमें जब कभी तुम्हें मेरी सहायता या सलाहकी जरूरत हो, फौरन माँग लेना। उदाहरणार्थ, ब्रजकृष्णके पास जानेकी बात है। तुम्हारे तारसे मुझे ऐसा लगा है कि अब तुम्हें उस आश्रमको छोड़नेकी जरूरत नही है। किन्तु स्पष्ट है कि तुम यह नही जानती कि ब्रजकृष्ण तबीयत ठीक न रहनेके कारण ही मसूरी भेजा गया है। किन्तु यदि तुम दिल्ली जाना चाहो, तो मेरी समझमें तो तुम उसके वहां न रहने पर भी उसके घर जा सकती हो। निस्सन्देह यदि भगवद्भक्ति आश्रममें तुम्हे

१. अध्याय १८, ४७।

हिन्दी सीखनेमें पूरा सन्तोष न मिले तो अन्य ऐसी बहुत-सी जगहें हैं जहाँ तुम्हें हिन्दी सीखने भेजा जा सकता है।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३१) से।
सौजन्य : मीराबहन

३९३. पत्र : गुलजारीलाल नन्दाको

नन्दी हिल्स
२८ मई, १९२७

प्रिय गुलजारीलाल,

आपका पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। बिस्तरपर पड़ा-पड़ा मैं आप जैसे उन बहुत-से लोगोंकी बराबर याद करता रहा हूँ जिनमें मेरी गहरी दिलचस्पी है, और जिनसे मैं यह अपेक्षा करता हूँ कि यदि ईश्वरने उन्हें उनके कार्यके लिए भरपूर स्वास्थ्य दिया तो वे बड़े-बड़े कार्य करेंगे।

आपने विशुद्ध धार्मिक जीवनका जो विवरण दिया है, वह बिलकुल ठीक है। मुझे लेशमात्र भी सन्देह नहीं कि आन्तरिक हर्ष एवं निश्चिन्तताकी यह आनन्दमय स्थिति कठिनसे-कठिन संघर्षोंमें भी कायम रह सकनी चाहिए। इसमें किसी तरहका कोई अपवाद नहीं हो सकता। स्वाभाविक है कि इस स्थितिको बहुत ही कम लोग प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु मुझे इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि यह स्थिति मनुष्यके लिए अप्राप्य नहीं है। इस तरहके किसी मनुष्यके होनेका कोई प्रमाण हमें इतिहासमें नहीं मिलता, इससे केवल यही प्रमाणित होता है कि तत्सम्बन्धी जो भी लिखित सामग्री हमारे पास है, वह अपूर्ण मनुष्यों द्वारा तैयार की गई है और जो स्वय अपूर्ण है, वह पूर्णताकी स्थितिको पहुँचे हुए लोगोंके जीवनका सही चित्रण नहीं कर सकता। हमारे अपने अनुभवोंके बारेमें भी यही बात कही जा सकती है। आपने जिन पूर्ण आत्माओंका वर्णन किया है उनके सम्पर्कमें आनेके लिए स्वयं हमें लगभग पूर्ण होना चाहिए। चूँकि एक औसत दर्जेका आदमी उस स्थितिका चित्रण नहीं कर सकता और उसका अनुभव भी नहीं कर सकता, इसलिए आप ऐसा न समझें कि मैंने एक बेढंगी समस्या प्रस्तुत कर दी है। इस प्रकारकी आशंका करनेका मतलब यह होगा कि हमारा प्रश्न ज्योंका-त्यों अछूता ही रह गया है। बात यह है कि हम यहाँ उन असाधारण मनुष्योंकी बात सोच रहे हैं जो मनुष्य तो हैं, परन्तु असाधारण हैं, और इनको खोज निकालनेके लिए निस्सन्देह असाधारण क्षमताकी जरूरत होती है। यह बात ऐसी छोटी-छोटी चीजोंके सम्बन्धमें भी सही हैं, जो प्राय: हास्यास्पद-सी

जान पड़ती है। परन्तु फिर भी जिनको कर पाना बहुत कठिन है; उदाहरणके लिए, सर ज० च० बोसके आविष्कार या कोई बहुत ही उत्कृष्ट चित्र। हम सामान्य-जनोंको इन दोनों चीजोंको विश्वासके आधारपर ही मान लेना होगा। केवल कुछ-एक विशेष प्रतिभावान लोग ऐसे होंगे जिनमें उन आविष्कारों या उन चित्रोंको समझने या परखनेकी योग्यता होगी। इन चीजोंको हम धोखाधड़ी नहीं कहते और हम इनके सच अथवा श्रेष्ठ होनेकी बात केवल इसलिए स्वीकार कर लेते हैं कि हमें इनके पक्षमें दावेसे कहनेवाले बहुत लोग मिल जाते हैं। इसकी अपेक्षा अधिक स्थायी मूल्यकी वस्तुओंके, जैसे ऊँचेसे-ऊँचे प्रकारकी मानवीय पूर्णताके पक्षमें सम्भवत इतने साक्षी नही मिलते। इसलिए आपने जो सीमा स्वीकार की है वह फिलहाल तो काफी काम दे सकती है, क्योंकि इस सीमाके अन्दर भी ऐसे दुःखो और कष्टोंके प्रचण्ड आक्रमणके बावजूद, जो आध्यात्मिक नवजन्मसे पूर्व हमें नष्ट कर देते, शान्त और स्थिर बने रह सकनेके लिए तथा अपनी आन्तरिक स्थितिकी प्रगतिके लिए काफी गुंजाइश है।

मुझे प्रसन्नता है कि आपने अपनी उपासना और भी तीव्र कर दी है। मुझे नही मालूम कि इस समय आप क्या पढ़ रहे हैं। मुझे ध्यान नही कि मैंने आपको यह बताया था या नही कि हमें ऐसी स्थिति अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए जबकि हमें सान्त्वना पानेके लिए बहुत-सी पुस्तकोंकी आवश्यकता न पड़े, अपितु एक ही पुस्तकसे जो-कुछ भी हम चाहते हैं, वह सब मिल जाये। अन्तमें हम जब पूर्ण समर्पण एवं अहंकारके सम्पूर्ण विलोपकी स्थितिको पा लेते हैं, तब एक पुस्तककी सहायता भी अनावश्यक हो जाती है। इस समय यद्यपि मैं बहुत-सी पुस्तकें पढ रहा हूँ, 'भगवद्गीता' ही उत्तरोत्तर मेरी एकमात्र और अचूक पथ-प्रदर्शक बनती जा रही है। मेरे लिये वही एक ऐसा सन्दर्भ-कोष है, जिसमें मुझे सारे दुःख, सारी परेशानियाँ और सब कष्ट सुन्दर समाधानों सहित मानो वर्णमालाके क्रमसे विन्यस्त मिलते हैं। मेरा खयाल है कि मैंने आपको यह जरूर बताया था कि 'भगवद्गीता' के जो अनुवाद मेरी नजरमें पड़े हैं, उनमें से 'सॉंग सैलेशियल' सर्वोत्तम है। परन्तु यदि आप संस्कृत नही जानते तो मैं समझता हूँ कि 'भगवद्गीता' समझने लायक संस्कृतका ज्ञान आप आसानीसे प्राप्त कर सकते हैं। आप लगभग एक मासके भीतर ही इतनी संस्कृत सीख सकते हैं कि मूल पाठको समझ सकें। क्योंकि यद्यपि अंग्रेजी अनुवाद बढिया है, और यद्यपि आपको हिन्दी एवं उर्दूका भी कोई अनुवाद मिल सकता है, परन्तु अनुवाद मूलकी तुलनामें निःसन्देह कुछ भी नही है। यदि आप उसे मूलमें पढ़ें तो आप उसके श्लोकोंको अपना नया अर्थ दे सकेंगे और उसकी नवीन व्याख्या कर सकेंगे। वह ऐतिहासिक ग्रन्थ नही है। किन्तु वह उसके लेखकके वास्तविक अनुभवोका वर्णन अवश्य है। फिर, यह लेखक वास्तवमें व्यास ही थे या कोई और, इस प्रश्नमें मैं नहीं पडता। और यदि यह किसी व्यक्तिके अनुभवोंका वर्णन है, तो उस अनुभवको दोहराकर उसके सत्यासत्यकी परख कर सकना हमारे बससे बाहरकी बात नही होनी चाहिए। मैं अपने जीवनमें प्रायः प्रतिदिन उसकी परख कर रहा हूँ और उसे निरपवाद रूपसे

सत्य पाता हूँ। इसका यह मतलब नहीं कि मैंने वह स्थिति, उदाहरणके रूपमें दूसरे अध्यायमें वर्णित स्थिति, प्राप्त कर ली है। परन्तु मैं जानता हूँ कि हम इसमें बताये गये नियमोंका जितना पालन करते जायेंगे, उतना ही हम उस परिपूर्ण स्थितिके समीप पहुँचते जायेंगे।

आशा है आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा; मेरी सेहत बराबर सुधार रही है।

हृदयसे आपका,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९६४१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य: गुलजारीलाल नन्दा

३९४. पत्र: धनगोपाल मुखर्जीको

आश्रम
साबरमती[1]
२८ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

'यंग इंडिया' के लिए शुल्क सहित आपका पत्र मिला। यदि आपको 'यंग इंडिया' नियमित रूपसे न मिले तो कृपया इसकी सूचना प्रबन्धकको दीजिएगा और मुझे भी एक पंक्ति लिख भेजिएगा।

कृपया आप मेरी सेहतके बारेमें चिन्ता न करें। मैं सब तरहकी आवश्यक सावधानी बरत रहा हूँ और यथासम्भव विश्राम कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री धनगोपाल मुखर्जी
टाउन हॉल क्लब
१२३, वेस्ट ४३ स्ट्रीट
न्यूयॉर्क

अंग्रेजी (एस० एन० १२५०७) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।

३९५. पत्र : महाराजा नाभाको

नन्दी हिल्स
२८ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे आपका इसी मासकी २० तारीखका पत्र मिला है। समझमें नहीं आया कि आपने मेरे १ जनवरीके पत्रको अपमानजनक क्योंकर समझा। मैं तो आपको आश्वासन भर दे सकता हूँ कि उसमें अपमान करनेका मेरा कोई अभिप्राय नहीं था।

जो अनुच्छेद आपने अपने पत्रमें उद्धृत किया है, उसे मैं नहीं समझ पाया हूँ।

आपकी यह धारणा गलत है कि १ जनवरीका पत्र पण्डित मोतीलालजी द्वारा बोलकर लिखवाया गया है या वह उनके द्वारा उकसाये जानेपर लिखा गया है। अधिवेशन समाप्त होनेसे पूर्व ही मैंने कांग्रेस छोड़ दी थी और मुझे पण्डित मोतीलालजीके १ जनवरीको कलकत्तामें होनेकी बात भी मालूम नहीं थी। वे वहाँ रहे हों या नहीं, यह निश्चित है कि उन्हें इस बातका पता भी नहीं था कि मैं आपको पत्र लिख रहा हूँ। मैंने केवल यही सोचा था कि इस तरहका पत्र लिखकर मैं आपके प्रति मित्रताका व्यवहार करूँगा।

मैं लखनराजके मामलेके बारेमें कुछ नहीं जानता। लखनराज नामका कोई व्यक्ति है भी, यह सूचना मुझे पहली बार आपके पत्रसे मिली। और इसका तो मुझे कतई पता न था कि इससे सम्बन्धित कोई मामला भी है।

मेरी रायमें आपने पण्डित मोतीलालजीका जो चित्र खींचा है, उसके बारेमें कमसे-कम कहा जाये, तो भी उसे अशिष्ट कहना पड़ेगा। आपने जो बातें कही हैं, वे सब चाहे उनमें हों, परन्तु सभ्य समाजमें प्रचलित आचरण संहिता इस बातकी इजाजत नहीं देती कि किसी अजनबीके सामने किसी व्यक्तिके, चाहे वह कोई भी हो, चरित्रपर आक्षेप किये जायें। आखिरकार मैं आपके निकट बिलकुल अजनबी हूँ। आपने पण्डित मोतीलालजीके चरित्रपर जो दोष लगाये हैं, उसके बावजूद मैं समझता हूँ कि वे एक उदार चरित्र, योग्य और आत्म-त्याग करनेवाले देशभक्त हैं। उन्हें देशमें जो प्रतिष्ठा मिली है वह अधिक जनसेवकोंको नहीं मिलती। जैसी कि वर्तमान स्थिति है, उनकी और मेरी राजनीति एक नहीं है। यदि उनकी और मेरी राजनीति एक होती तो मैं अपने निर्णयोंको उनकी विवेकशीलतासे प्रभावित होते देखकर एवं उनके विवेककी कसौटीपर खरे उतरते पाकर अपना मान समझता।

हृदयसे आपका,

परमश्रेष्ठ नाभाके महाराज
देहरादून (उ० प्र०)

अंग्रेजी (एस० एन० १२५८१) की फोटो-नकलसे।

३९६. पत्र: एम० एस० केलकरको

नन्दी हिल्स
२८ मई, १९२७

प्रिय डाक्टर,

आपका पत्र मिला। यद्यपि मैं आपको यहाँ आनेका कष्ट नही देना चाहता, फिर भी इतना तो निश्चय ही चाहता हूँ कि यदि हो सके, तो आप मुझसे क्या अपेक्षा करते हैं सो लिख भेजें। जहाँतक मेरे लिये सम्भव होगा मैं आपके सुझावोंको कार्यान्वित करूँगा।

मुझे नन्दीमें साफ किया हुआ पानी नही मिलता। मुझे मालूम है कि हम खुद पानीको साफकर सकते हैं। परन्तु यहाँ मेरे पास उसके लिए उपयुक्त नलियाँ और वर्तन आदि नही हैं। जब मै नीचे बंगलोर जाऊँगा तो वहाँ इस बातकी कोशिश करूँगा कि साफ पानी मिल सके।

वैसे भी अभी मैं कच्चे दूधमें उबाला हुआ पानी मिलाकर पीता हूँ। यह मुझे अधिक अनुकूल बैठता है। मै ३० औंस कच्चा दूध पीता हूँ। लगभग दो औंस आटेकी भाखरी बनती है, जिसमें थोड़ा-सा मक्खन, सोडा और नमक मिलाया जाता है। मै एक सब्जी भी लेता हूँ, जो अच्छी तरह उबली होती है और जिसमें एक चम्मच बकरीके दूधका बना ताजा मक्खन पड़ता है। मैं सुबहके दूधमें नीमके दस बड़े पत्तोंका रस मिला लेता हूँ। मै अच्छी तरह सोता हूँ और प्रतिदिन लगभग ४ घंटे बोलकर लिखवाता हूँ। एक घंटा लिखता हूँ और कमसे-कम एक घंटा पढ़ता हूँ। एक रोगीके लिए, जो अभी सँभल ही रहा है, इतना काम काफी है। इसके अलावा मैं सुबह आधा घंटा काफी तेजीसे सैर करता हूँ और आधा घंटा शामको सैर करता हूँ। रातको ९ बजे मैं सोने चला जाता हूँ और सुबह ४ बजे उठ जाता हूँ। सुबह और शामकी प्रार्थना भी इसमें शामिल कर लें। मैं सुबह गहरी-गहरी साँसें खीचता हूँ। मैं दिनके समय सिरपर मिट्टीकी पट्टी रखकर डेढ़ घंटा सोता हूँ। अब आप जो चाहते हों, सो सुझाव दे सकते हैं।

अब आपके बारेमें। मेरी वास्तवमें आपकी हिदायतोंपर अमल करनेके लिए बड़ी इच्छा है। पूरी-पूरी इच्छाके बावजूद, मैं आपके इलाजके प्रति विशेष उत्साह संचित नहीं कर पाया हूँ। मेरी समझमें ऐसा कहना गलत है कि वे सभी रोगी जो मैंने आपके सुपुर्द किये, कई डाक्टरोंके पास हो आये थे और डाक्टरोंने उन्हें जवाब दे दिया था। आपके पास प्रभुदास, उनके दादा, गोमतीबहन, नवीन तथा अगर मैं अपनी याददाश्तपर जोर देकर लोगोंके नाम सोचूँ तो और भी बहुत-से रोगी आये हैं। अंडोंके लिए आग्रह और ज्योतिषके प्रति अतिशय पक्षपात, आपके इलाजकी दो गम्भीर त्रुटियाँ है। आपका अंडोंके लिए जो आग्रह है, उसका मैं मान करता हूँ। परन्तु अंडे

मेरी धार्मिक रुचिके अनुकूल नही बैठते। मैं ज्योतिषके प्रति आपके पक्षपातका भी आदर करता हूँ। परन्तु मैं ज्योतिषके प्रति अपनी संशयालु प्रवृत्तिसे छुटकारा नही पा सकता। इसलिए मैं आपकी उपलब्धियोसे किसी सीमित रूपमें ही लाभ उठा सकता हूँ।

मुझे नही मालूम कि आपने रोगोंकी चिकित्साके रूपमें आसनोंके प्रयोगके बारेमें अध्ययन किया है या नही। अभी हाल ही में मेरा ध्यान उन आसनोंकी ओर आकृष्ट किया गया है। परन्तु क्योंकि आपको शरीर-विज्ञानका अच्छा ज्ञान है, इसलिए मैं चाहूँगा कि आप, विभिन्न आसनोंके पक्षमें जो दावे किये जाते हैं उनकी शरीर-विज्ञानके आधारपर जाँच करें। क्या आपने विटामिनोंके सम्बन्धमें किये गये नवीनतम अनुसन्धानोका अध्ययन किया है?

हृदयसे आपका,

डा० एम० एस० केलकर
३४२, सदाशिव पेठ
पूना शहर

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३१) की फोटो-नकलसे।

३९७. पत्र : वसुमती पण्डितको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण १२ [२८ मई, १९२७]

चि० वसुमती,

तुम्हारा पत्र मिला। वहाँ जो काम चल रहा है भले ही उसका कोई फल न निकल रहा हो किन्तु तुम्हारी दैनन्दिनीसे मुझे जो मिला वह तुम अपने इतने बहुतसे पत्रोंके द्वारा भी नही दे पायी थी। इसलिए तुम जिस दिन मुझे पत्र लिखो, दैनन्दिनी उससे पहले दिनकी भी क्यों न हो, भेज देना। तुम रामदासको पत्र लिखती रहती हो यह अच्छा है।

मेरी तबीयत सुधरती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४७१) से।
सौजन्य : वसुमती पण्डित

३९८. पत्र : तारा मोदीको

नन्दी दुर्ग
वैशाख कृष्ण १२ [२८ मई, १९२७]

चि० तारा,

तुम्हारा पत्र मिला। सुरेन्द्रके पत्रसे मालूम हुआ कि तुम बहुत दुर्बल हो गई हो। जो शक्ति तुमने खो दी है वह तो धीरे-धीरे ही आयेगी। तुम्हें धीरज रखनेके लिए तो नहीं कहना पड़ेगा? इसके सिवा नाथजी इस समय वहीं हैं, उनका वहाँ रहना तुम्हारे लिये तो शान्तिदायक औषधिके समान है। यह पत्र इसलिए नहीं लिख रहा हूँ कि तुम इसका जवाब दो। यह तो मैं यदि सम्भव हो तो तुम्हारी शान्तिमें किंचित् वृद्धि करनेके हेतु ही लिख रहा हूँ। जवाब लिखना हो तो रमणीकलाल लिख देगा या मुझसे कुछ कहना हो तो रमणीकलालसे कह देना। परन्तु तुम स्वयं न लिखना। यदि वहाँ ताजा और अच्छा अर्थात् शुद्ध दूध मिलता हो तो मैं अपने अनुभवसे देख रहा हूँ कि उसे उबाले बिना उबलते पानीके साथ मिलाकर पीनेसे वह ज्यादा अच्छी तरह हजम होता है और यहाँके सभी डाक्टरोंसे पूछनेपर उन सबका भी यह मत है कि यदि गाय निरोग हो, थन ठीक धोये गये हों, बर्तन साफ हो और ग्वालेने अपने हाथ गर्म पानीसे धोकर दूध दुहा हो, तो यह दूध उबाले बिना ताजा पीनेसे बहुत फायदेमन्द होता है और ज्यादा अच्छी तरह हजम होता है। उसको उबालनेसे उसमें निहित जीवनदायी तत्त्व जल जाता है।

हमारे यहाँ तो धीमी आँचपर पकाये दूधकी खूब महिमा है। इसलिए यदि यह मिल सके तो उसका उपयोग करके देखना।

बा आशीर्वाद भेजती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १६९६) से।
सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

३९९. पत्र : लक्ष्मीदासको

२८ मई, १९२७

भाई लक्ष्मीदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने भाई जेठालालका पत्र पढ़ लिया है। हम रियासतोंमें खादीका काम कर तो रहे हैं किन्तु मुझे हमेशा यह डर रहा है कि जब खादीका असर विदेशी कपड़ेपर कारगर रूपसे पड़ने लगेगा उस समय उसपर ऊपर, नीचे, दायें, बायें दसों दिशाओंसे हमला होनेकी सम्भावना है। और जब यह हमला शुरू होगा तब हम रियासतोंमें अपना काम कर सकेंगे या नहीं इस सम्बन्धमें मुझे शंका है। यदि हमारी तपश्चर्या गहरी और व्यापक होगी तो शायद इस हमलेमें बच जायेंगे। अब यह प्रश्न स्वभावतः उठता है कि इस बीचकी अवधिमें हम रियासतोंमें अपना काम किस प्रकार चलायें। मेरी अन्तरात्मा तो यही कहती है कि अपमानपूर्ण शर्तें स्वीकार करनेसे तो हमें साफ इनकार कर देना चाहिए। हम उन्हें ऐसी कोई बात लिखकर कैसे दे सकते हैं, जिससे पथिक और रामनारायणकी अवगणना होती हो। हम उन्हें विनयपूर्वक यह कहें और समझायें कि हम आपके राज्यमें सिर्फ खादीका काम करना चाहते हैं। —वह भी आर्थिक दृष्टिसे। आपकी राजनीतिमें तनिक भी भाग लेनेकी हमारी इच्छा नहीं है। आप चाहें तो इस विषयमें हम लिखकर देनेको तैयार हैं। खादीका काम भी हम आपके राज्यमें केवल आर्थिक दृष्टिसे ही करना चाहते हैं। पर आप इसका अर्थ यह न लगायें कि आपके राज्यके बाहर भी हम राजनीतिसे कोई सम्बन्ध नहीं रखेंगे अथवा उसके विषयमें हमारे अपने कोई विचार नहीं हैं। पथिक आदिके साथ हमारा राजनैतिक सम्बन्ध नहीं है। पर हम उनकी किसी प्रकार भी अवगणना नहीं करना चाहते और हम उन्हें देशद्रोही भी नहीं मानते। किन्तु उनके साथ आपके व्यवहारमें उनकी किसी भी तरहकी हानिका कारण हम नहीं बनना चाहते। मुझे लगता है कि इस प्रकारकी कोई बात हमें निडरतासे कह देनी चाहिए। यदि हम ऐसा नहीं करते तो खादीमें जो शक्ति है वह जाती रहेगी। सरकार हमारे हाथसे खादीका काम लेकर अपने नौकरोंकी मार्फत मनमाने ढंगसे खादीका प्रचार करे तो फिर हम खादीमें उस शक्तिका आरोपण नहीं कर सकेंगे जो हम उसमें आज मानते हैं। मतलब यह कि खादीके लिए हम अनेक प्रकारके अपमान सहनेके लिए तैयार रहें। अपना व्यक्तिगत अपमान भी सहन कर लें किन्तु सिद्धान्तका अपमान हो तो उस स्थितिमें खादीका काम भी नहीं किया जा सकता। सच तो यह है कि इस किस्मकी शर्तोंकी अधीनता स्वीकार करके खादीका काम किया ही नहीं जा सकता। तुम शायद नहीं जानते होगे कि चरखा संघको रजिस्टर करानेका प्रयत्न किया गया था। चरखा संघ कांग्रेसका एक स्वतन्त्र अंग है और यदि उसकी इच्छा हो तो वह कांग्रेससे अलग हो सकता है। अधिकारियोंने उसे इस शर्तपर रजिस्टर करना स्वीकार किया कि वह कांग्रेसके साथ अपना यह आध्यात्मिक सम्बन्ध भी तोड़

दे। हमने चरखा संघको रजिस्टर करनेका इरादा छोड़ दिया और कांग्रेससे अपना यह सम्बन्ध तोड़नेसे इनकार कर दिया।

यह तो पाँच हजार फुटकी ऊँचाईपर बैठा-बैठा लिखा रहा हूँ। इसलिए इसे अच्छी तरह ठोक-बजाकर देख लेना और तब जो मूल्य ठहरे वही मूल्य इसे देना। तुम इसपर अमल करो, मैंने इसे इस इरादेसे नही लिखाया है। तुम्हें अपना कोई मार्ग सोचनेमें सहायता मिल सके इस विचारसे ही लिखाया है। इस सवालपर जमनालालजीसे मेरी थोड़ी-बहुत बात हुई है। वे जल्दी आश्रममें आनेवाले हैं। उस समय तुम उनसे मिल लेना। और तुम सब अपनी समझके अनुसार निर्णय कर लेना। आखिर यह ठीक ही तो कहा गया है "सेठकी सीख दरवाजेतक ही चलती है"।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

४००. दलितोंके लिए सराहनीय दान

श्री वल्लभभाई तारसे सूचित करते हैं कि एक उदार सज्जनने दलित जातियोंकी सेवाके लिए ५०,००० रुपये दान दिये हैं और एक दूसरे सज्जनने २५,००० रुपये। अखबारोंसे मालूम हुआ है कि पहले सज्जन श्री मनसुखलाल छगनलाल हैं। लगता है कि दूसरे सज्जनने अपना नाम देना उचित नही समझा है। मैं इन दोनों सज्जनोंको बधाई देता हूँ। मेरा यह विश्वास दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है कि ऐसा विचारपूर्वक दिया हुआ दान ही सच्चा धार्मिक दान है। यह एक शुभ चिह्न है कि धार्मिक दान करनेकी वृत्ति हमारे समाजमें अभीतक पर्याप्त रूपमें मौजूद है; पर धर्म क्या है, इसे हम शायद ही जानते हैं। मैं कई बार कह चुका हूँ कि आजकल धर्मके नामपर प्राय: अधर्म हो रहा है। इसलिए हमारे सामने दो काम हैं—एक ओर तो लोगोंकी धर्मभावनाका पोषण करना और दूसरी ओर उस भावनाकी अभिव्यक्तिके लिए उचित मार्ग ढूँढ कर बताना। केवल हेतु शुभ होनेसे स्वर्ग नही मिलता। अंग्रेजीमें एक कहावत है—'नरकका रास्ता शुभ हेतुओंसे पटा हुआ है।' इसमें बहुत-कुछ सत्य है। कई चोर शुभ हेतुसे चोरी करते हैं। शुभ हेतुसे असत्य भाषण करनेवाले तो इस संसारमें अनेक लोग है। युधिष्ठिर तो धर्मराज थे; उनसे भी शुभ हेतुके लिए असत्य भाषण करनेकी भूल हो गई, और उसके लिए उन्हें नरक देखना पड़ा। हम देखते हैं कि शुभ हेतुसे हत्याएँतक की जाती हैं। इसलिए स्पष्ट है कि केवल शुभ हेतुसे काम नही चलता। शुभ हेतुके साथ-साथ शुभ कर्म होना भी जरूरी है; और वह शुभ कर्म शुभ ज्ञानसे ही हो सकता है। इसलिए उपर्युक्त दाताओंका अनुकरण करते हुए धार्मिक स्त्री-पुरुष सच्चे धार्मिक कार्योंको ढूँढ़कर उनका पोषण करें तो क्या ही अच्छा हो।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २९-५-१९२७

४०१. गोरक्षा कैसे करें?

नासिक पिंजरापोलके व्यवस्थापक भाई प्रागजी मावजीने एक पत्रमें नीचे लिखे सुझाव[1] भेजे हैं:

इन सुझावोंमें ऐसी कोई नई बात नहीं है जो 'नवजीवन' में न आई हो। यहाँ ये सुझाव यह दिखानेके लिए दिये गए हैं कि गोमाताके सेवक और पिंजरापोलोंके अनुभवी सचालक पहले बताये हुए उपायोंका किस तरह समर्थन करते हैं। इनमें कुछ जानने लायक बातें भी हैं, जैसे मरे हुए जानवर ठेकेदारोंको दे देनेसे वे उनका किस तरह उपयोग करते हैं। यह जानकारी चौंकानेवाली है। मरे हुए पशुओंका धर्मके नामपर खुद उपयोग न करके दूसरोंको दे देनेसे ही इस तरहका अधर्म होता है। हड्डियोंके बारेमें जो सूचना दी गई है, उसमें सुधारकी जरूरत है। हड्डियाँ वैसीकी वैसी गाड देनेसे उनका खाद नहीं बनता, परन्तु उन्हें पीसना पड़ता है। और मांस, अतडियों वगैराको गाड देनेकी जरूरत नहीं। अंतडियोंका उपयोग तो आज चमड़ा सीनेकी डोरी, बाजेके तार और ताँत वगैरा बनानेमें होता है। मांससे चरबी निकलती है। वह मशीनोंमें बहुत काम आती है। इसलिए वैसाका-वैसा गाड़ देनेके लिए बहुत थोडा भाग बचेगा। लेकिन यह तो हुई भविष्यकी बात। जिन चीजोंका उपयोग करनेमें हमें आज धर्मकी कोई बाधा मालूम नहीं होती, उन सबको हम खुद गोशाला और पिंजरापोलोंके द्वारा तैयार करके अधिकसे-अधिक जानवरोंको बचा सकते हैं। और हम यह तत्त्व स्वीकार कर ले, तो सब गोयें हो जायेंगी।

आखिरी सुझावमें गोसेवकोंको दिया हुआ उलाहना विचारने जैसा है। गोरक्षाके उपदेशकोंकी अपेक्षा सेवा द्वारा काम करनेवालों और सेवाकार्यके साथ ज्ञान प्राप्त करनेवालोंकी ज्यादा जरूरत है। यह बात हर गोसेवकके ध्यान देने योग्य है।

मगर इस पत्रके साथ ही मेरे सामने एक अखबारकी कतरन है, जिसमें अनेक प्रश्न पूछे गये हैं। इन प्रश्नोंके गर्भमें यह बतानेका उद्देश्य है कि मेरे बताये हुए विचार धर्मके अनुसार नहीं हैं; क्योंकि लेखकने इन प्रश्नोंकी प्रस्तावनामें मेरे बताये हुए सिद्धान्तोंका अनादर किया है। मेरे सुझाये हुए सिद्धान्त ये हैं: जो धर्म अर्थका सर्वथा विरोधी है, वह धर्म नहीं, बल्कि अधर्म या धर्मका आभास है। लेखककी मान्यता यह है कि यह सिद्धान्त सनातन सूत्रका विरोधी है। मैं खुद ऐसा एक भी विरोधी सनातन सूत्र नहीं जानता। कुदरत तो इस सिद्धान्तका निरन्तर अनुसरण करती है और मैं नहीं जानता कि इस सिद्धान्तका विरोधी धर्म आज किसी भी जगह चल सकता है। 'जिसे दाँत दिये है, उसे चबेना भी देता है', 'हाथीको मन और कीड़ीको कन' ये सब प्रचलित कहावतें भी इसी सिद्धान्तकी गवाही देती हैं। कुदरतने अगर जीवोंके लिए अनाजकी जरूरत पैदा की है, तो उस जरूरतको पूरा करने जितना

१. यहाँ नहीं दिए जा रहे हैं।

अनाज भी पैदा किया है। लेकिन कुदरतकी यह खासियत जरूर है कि जितना आवश्यक है, उतना ही अनाज वह रोज पैदा करती है। परन्तु मनुष्य-जाति उस नियमकी उपेक्षा करके स्वार्थवश होकर जरूरतसे ज्यादा लेती और इस्तेमाल करती है। जिससे अस्तेय और अपरिग्रहके अनिवार्य यमको भंग कर वह अपने हाथों अपने लिये और प्राणि-मात्रके लिए तरह-तरहके दुःख पैदा करती है। शास्त्रोंने ब्राह्मणोंपर ज्ञानका दान करनेका भार रखनेके साथ उन्हें भिक्षा माँगनेका अधिकार दिया और दूसरे वर्णोंपर भिक्षा देनेका भार डाला। इस तरह धर्मके साथ अर्थका मेल किया। पाठक इस तरहके अनेक दृष्टान्त खुद निकाल सकते हैं। धर्ममें जमा-उधारके पलड़े बराबर रहने चाहिए। तभी शुद्ध अर्थ होता है, और उसीसे शुद्ध धर्म भी होता है। जहाँ कोई एक पलड़ा घटे या बढ़े, वहीं अनर्थ और धर्मका लोप हुआ समझिए। इसीलिए गीताकारने योगकी व्याख्या 'समत्व' शब्दसे की है। मामूली आदमी अर्थका यह धार्मिक उपयोग या अर्थ करता ही नहीं। वह तो सदा नफा कमानेकी ही इच्छा रखता है। मेरे धार्मिक अर्थमें न नफेकी गुंजाइश है और न नुकसानकी। और जहाँ नुकसान होता हो, वहाँ धर्मकी रक्षा असम्भव है। इसीलिए हिन्दुस्तानमें १,५०० पिंजरापोल और गोशालाएँ होते हुए भी गायकी रक्षा नहीं होती। इतना ही नहीं, दिन-दिन उसकी हत्या बढ़ती ही जाती है। फिर भी यह मानकर सन्तोष कर लेनेसे गोरक्षाके धर्मका जरा भी पालन नहीं होता कि इन संस्थाओंके मौजूद होनेसे ही गोरक्षा हो जाती है। लेकिन यह साबित किया जा सकता है कि मैंने जो उपाय बताये हैं, उनसे उस धर्मका पालन हो सकता है। यह बात हर धर्मार्थी मनुष्य खुद सोच सकता है कि गाय दूध न देती, तो उसको बचानेका धर्म पैदा ही न होता। दूसरे बहुतसे निर्दोष जानवर हैं, जिनका पालन करनेका धर्म किसीको नहीं सूझा; और सूझता तो व्यर्थ होता। गायका उपयोग है। इसीलिए उसे बचानेका धर्म भी हमारे लिये उत्पन्न हो गया।

अब इस समालोचकके प्रश्नोंका उत्तर संक्षेपमें देता हूँ। उत्तरसे ही प्रश्न समझमें आ जाते हैं, इसलिए प्रश्न अलगसे नहीं देता।

हर गोरक्षिणी संस्थामें ऐसा चर्मालय होना ही चाहिए जो उसके लिए काफी हो अर्थात् जो ढोर मरे उनका प्रारम्भिक उपयोग करना संस्थापकको आना चाहिए। इसलिए यह प्रश्न उठता ही नहीं कि प्रत्येक गोशालामें कितने जानवर होने चाहिए।

मुझे मालूम नहीं कि गोशालाओंमें पशुओंकी मृत्युसंख्या कितनी है। मगर चर्मालयकी आवश्यकता प्रमाणित करनेके लिए यह संख्या जानना जरूरी नहीं। चाहे एक ही ढोर मरे, तो भी जैसे उसके जीते जी उसे घास वगैरा देनेकी क्रिया गोसेवक जानता है, वैसे ही उसके मरनेके बादकी क्रिया उसे जान ही लेनी चाहिए।

गाँवमें मरनेवाले पशुओंपर भी स्वभावतः ऐसी धार्मिक संस्थाका ही अधिकार होना चाहिए। इसमें चमारों, ढोरों और जनता तीनोंकी रक्षा है। जहाँ गोशाला या चर्मालय न हों, वहाँ ढोर मरे तो उसे नजदीकसे-नजदीककी गोशालामें पहुँचा दिया जाये, बशर्ते कि शहरी गोरक्षाका धर्म स्वीकार करते हों या उस ढोरकी लाशपर प्रारम्भिक क्रिया करके बाकीके भाग वहाँ पहुँचा दिये जायें।

मेरे सुझाये हुए चर्मालयके लिए बड़ी पूंजीकी आवश्यकता नहीं। हां, उस शास्त्रको जाननेवाले गोसेवक तैयार करनेमें जो खर्च हो उसकी आवश्यकता है।

मरे हुए जानवरके चमड़ेसे कत्ल किये हुए जानवरका चमड़ा आज तो अच्छा है ही। लेकिन मरे हुए जानवरका चमड़ा सुधारनेके लिए यहांकी सरकारने लड़ाईमें बेशुमार धन खर्च किया। यह क्रिया जर्मन जानते हैं। इस शास्त्रके जाननेवालोंने मुझे कहा है कि मुर्दा जानवरका चमड़ा कत्ल किये जानवरके चमड़े जैसा ही कमाया जा सकता है। मैं खुद यह प्रयोग कर रहा हूँ। कटकमें श्री मधुसूदनदास भी अपने चर्मालय में यह प्रयोग बहुत वर्षोंसे कर रहे हैं और कहते हैं कि वे इसमें सफल हुए हैं। कलकत्ते की सरकारी 'रिसर्च टेनरी' में यह प्रयोग अभी चल रहा है।

आज हमारी दुर्दशा तो यह है कि मुर्दा जानवरोंका ९ करोड़ रुपयेका चमड़ा विदेश जाता है और हम कत्ल किये हुए जानवरोंका चमड़ा अज्ञानवश काममें लेकर उस हत्याके पापमें शरीक होते हैं।

मृत पशुओंके विदेश जानेवाले चमड़ेको रोकना हमारे ही हाथमें है, क्योंकि हम धार्मिक दृष्टिसे चर्मालय चलायें तो इस चमड़ेपर अधिकार करके हम इस देशमें कमसे-कम ९ करोड़ रुपयेकी बचत कर सकते हैं और उससे असंख्य पशुओंका पालन कर सकते हैं।

हड्डियोंका उपयोग मेरे बताये हुए धार्मिक चर्मालयोंमें अवश्य हो सकता है और होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, २९-५-१९२७

४०२. पत्र : मीराबहनको

नन्दी
२९ मई, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्रों और तारका मैंने खासा लम्बा[1] जवाब भेजा था। तुम्हारे तारके बाद मुझे तुम्हारा पत्र नहीं मिला। इस तरह बोलकर लिखवानेमें मैं थके बिना काफी काम निपटा लेता हूँ, क्योंकि यह काम मैं लेटे-लेटे करा सकता हूँ। सम्भव है कुछ दिनोंमें ही हम लोग बंगलोर चले जायें, क्योंकि यहां हवा बहुत चलने लगी है और जलवायु मेरे लिये अधिक ठण्डा मालूम होता है। अभी भी मेरा तेजीसे घूमना ठीक नहीं है। इसलिए तुम अब बंगलोरके पतेसे पत्र लिख सकती हो। बहुत करके पता कुमार पार्कका होगा। 'बंगलोर शहर' लिखना, क्योंकि बंगलोरके छावनी और शहर बिलकुल दो अलग-अलग भाग हैं और 'शहर' न लिखा जाये तो चिट्ठियां

1. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २८-५-१९२७।

पहले छावनी जाती हैं। सारे भारतवर्षमें जहाँ भी छावनी है, यही प्रक्रिया अपनाई जाती है।

जहाँतक स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, कोई नया समाचार नहीं है। मेरा खयाल है कि मैंने तुम्हें यह लिख दिया है कि मैं भाखरी और एक सब्जी फिर लेने लगा हूँ।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३२) से।
सौजन्य : मीराबहन

४०३. पत्र : नरगिस कैप्टेनको

नन्दी हिल्स
२९ मई, १९२७

पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेकी मेरी तत्परताके लिए प्रशंसाकी आवश्यकता नहीं है। इससे केवल मुझे अपने कार्यमें सुविधा होती है। मैं जहाँतक हो सके प्रतिदिन का कार्य निवटानेकी कोशिश करता हूँ, जिससे मेरे मनपर बकाया कामका बोझ न रहे।

आपने जैसा पत्र भेजा है, ऐसे पत्रोंको मैं कदाचित् ही प्रकाशित करता हूँ। नियम यह है कि वे ही पत्र प्रकाशित किये जायें जिनके विषयमें आम चर्चाकी आवश्यकता हो। आपने जो पत्र मुझे लिखा है वह अत्यन्त निजी पत्र है, अतः प्रकाशित नहीं हो सकता। मेरे अपने अभिमानको सन्तुष्ट करनेके सिवाय इस पत्रको छापनेका और कोई कारण नहीं हो सकता, इसलिए फिलहाल आपका विज्ञापन करने या डाक्टर स्कार्पाके नामका अभी 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें उल्लेख करके, और वह भी एक इटालवी पत्रके सम्बन्धमें, उन्हें विडम्बनापूर्ण स्थितिमें डालनेका प्रश्न ही नहीं उठता।

मैं देखता हूँ कि आपका पत्र तीन पत्रोंसे मिलाकर बन पाया है। कृपया पेरीन और खुर्शीदको बता दें कि आप वहाँ उनके आलस्यको बढ़ावा देनेके लिए नहीं हैं। जब वे स्वयं खाना बन्द करके, अपनी जगह आपको खाने दें, तब वे स्वयं काम करना बन्द करके आपको अपनी जगह काम करनेके लिए कह सकती हैं। 'गीता' में एक श्लोक है जिसका अर्थ है — 'जो लोग बिना काम किये खाते हैं, वे चोर हैं।' निस्सन्देह मेरे जैसे रोगियोंको छोड़कर। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरी सेहत सुधर रही है। यहाँ दिन-प्रतिदिन सर्दी बढ़ती जा रही है। यद्यपि अभी बारिश ठीक तरहसे शुरू नहीं हुई है; लेकिन आजकल यहाँ बरसातका मौसम होता है।

आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १४१२९) की फोटो-नकलसे।

४०४. पत्र : आर० बी० ग्रेगको

नन्दी हिल्स
२९ मई, १९२७

प्रिय गोविन्द,

मुझे आपका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पत्र मिला। मैं इससे पहले ही आपको पत्र लिख चुका था। आपने अपने लेखकी शिष्ट आलोचनाके लिए मुझे जो श्रेय दिया है, उसे मैं समुचित नहीं समझता। मैं यह कहना चाहता था कि यद्यपि मुझे हस्तलिखित पत्र पसन्द है, तो भी यह आवश्यक नहीं था कि आप मेरी खातिर अपने पत्रोंको फिरसे हाथसे लिखना आरम्भ कर देते। आपको टाइप करके पत्र लिखना जारी रखना चाहिए, क्योंकि आपका ऐसा विश्वास है और मैं भी जानता हूँ कि उससे समयकी बचत होती है, अतः मैं आपके लेखको बुरा भी नहीं समझता हूँ। वैसे यह और साफ हो सकता है। परन्तु सौभाग्यसे मैंने अपने मित्रोंके लेखके लिए अपने लेख को मापदण्ड बनाया है। इस कारण मैं ऐसे बहुत कम लोगोंको जानता हूँ जिनका लेख मेरे लेखसे बुरा हो। तो भी चूँकि मैं टाइपराइटरोंको पसन्द नहीं करता, इसलिए यदि मेरे लिये अपने हाथसे लिखना सम्भव हो, तो मैं अपने पत्रोंको टाइप करवाने या स्वयं टाइप करनेके बजाय अपाठ्य लेखमें ही लिखना ज्यादा पसन्द करूँगा। इसके पीछे कारण यह है कि यदि मुझे अपने मित्रोंमें कोई दिलचस्पी हो तो मुझे अच्छा एवं सुवाच्य लेख लिखना चाहिए, टाइपराइटर उपेक्षा और आलस्यको छिपानेके लिए है। इसके अलावा मैं इस उक्तिमें विश्वास करता हूँ कि लेखसे लेखकका व्यक्तित्व प्रकट हो जाता है। टाइप करनेसे निश्चय ही समयकी बचत होती है। परन्तु जहाँ मैं मानता हूँ कि समय पैसा है, मैं यह नहीं मानता कि पैसा ही सब कुछ है। इसलिए मैं ऐसे असंख्य अवसरोंकी कल्पना कर सकता हूँ जबकि समयकी बचत करना अनुपयुक्त होगा। टाइपराइटर जो अतिक्रमण कर रहा है उसमें सुन्दर लेखन-कला पूरी तरह नष्ट हो गई है। मुझे नहीं मालूम कि क्या आपने पुरानी हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ देखी हैं जिनमें लोग अपनी आत्मा तकको कृतिमें उँडेल दिया करते थे? परन्तु मैं जिस विषयपर लिखना चाहता हूँ, उससे मुझे निश्चय ही भटकना नहीं जाना चाहिए।

कुछ एक अछूत बालकोंको चुनने एवं उन्हें आदर्श किसान बनानेके आपके सुझाव आपके हृदयकी उदारताके सूचक हैं। परन्तु इससे मालूम होता है कि आप स्थितिसे अनभिज्ञ हैं। आपके सुझावके मुताबिक यदि आधा दर्जन अछूत भी प्रशिक्षित किये जा सकें, तो इससे हम अस्पृश्यताकी समस्याके हलके कोई खास नजदीक नहीं पहुँच सकते। इस बातका निराकरण करनेके लिए हिन्दू मस्तिष्क तत्काल कहेगा कि हम ऐसे प्रत्येक अछूतको जिसने इन छः आदमियोंकी तरह योग्यता प्राप्त कर ली है

छू लेंगे। सम्भवत: आप जानते हैं कि अछूत जातियोंमें बहुतसे सन्त हुए हैं। परन्तु उनकी सन्तोंमें गणना भी इस दलित वर्गको नहीं बचा सकी है। पुराणपन्थी मस्तिष्क फिर दलील देता है कि यह अछूत जातिका सन्त अपने पूर्व जन्मके कर्मके कारण ऐसा बनता है और स्वाभाविक है कि वह हमारा सम्मान-भाजन है। जब दूसरे भी ऐसे बनें, तो वे भी इसी तरह हमारे सम्मानके भाजन हो जायेंगे। कर्म-सिद्धान्तके इसी अनैतिक निष्कर्षसे हर कदमपर युद्ध करना है और हिन्दू मस्तिष्कको भयकर तपस्या और ज्ञान द्वारा ही प्रशिक्षित किया जाना है कि कर्म-सिद्धान्तका प्रयोजन सब तरहके सुधार एवं प्रयत्नको नष्ट करना नहीं है। सारी मानव जातिके लिए इसका अभिप्राय है कि सारे दुष्कर्मोंका हिसाब-किताब रखा जाये और जो ऐसा नहीं करता वह मानव जातिसे सम्बद्ध होने योग्य नहीं है। इसलिए हिन्दू मस्तिष्कको इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाना चाहिए कि हीनतम, अत्यन्त पतित एवं पद-दलित लोगोंको स्वाभाविक रूपसे बराबर माना जाये और उनकी तरफ सहायताका हाथ बढाया जाये, जिससे उन्हें बाकीके लोगों जैसे स्तरपर लाया जा सके। और ऐसा क्यों न किया जाये कि अस्पृश्यताकी बातको किनारे रखकर अत्यन्त होनहार युवकोंको अत्यन्त निपुण किसान बनानेके लिए भेजा जाये और आपके सुझावका प्रयोग किया जाये। निश्चय ही आप यह संकेत नहीं देना चाहते कि अस्पृश्य लोग घमण्डमें आकर मानव-मलको खादके रूपमें इस्तेमाल करनेका खयाल करके खेतीवाड़ीका काम सीखनेकी ओर ध्यान नहीं देंगे। यदि आपकी दलील यही है तो यह गलत होगा कि अछूतोंसे ऐसा काम सँभालनेकी आशा की जाये, जिसे दूसरे लोग अपमानजनक समझते हों। जैसा कि आप जानते हैं कि हमारे आश्रममें अछूत बालक हैं। हम उन्हें सफाईका काम करनेके लिए भी नहीं कहते। पहल तथाकथित उच्च-जातिके लोगों द्वारा ही की जाती है, क्योंकि ऐसे विषयोंपर तथाकथित अछूत झल्ला उठेंगे। मुझे वैसा अनुभव सभी जगह होता है। इसलिए आपके सुझावके पीछे अभिप्राय अस्पृश्यता सम्बन्धी नहीं है, अपितु साधारण पद्धतिपर खेतीके उन्नत तरीकोंके बारेमें है। परन्तु मैंने इस समस्याको कतई सक्रियतासे नहीं सँभाला है, क्योंकि मैं इस सिद्धान्तपर विश्वास करता हूँ कि एक समयमें एक कार्य करना चाहिए। यहाँ बहुत काम बिखरा पड़ा है। इतना ज्यादा आलस्य है, इतना अन्धानुकरण है, इतनी कम एकाग्रता है कि यह आवश्यक है कि एक अत्यन्त साधारण परन्तु लगभग सार्वत्रिक चीजपर पूरा जोर दिया जाये; और यदि उसमें सफलता मिल जाये तो बाकीकी चीजें बादमें हो सकती हैं। कृषि ऐसा उद्योग है जिसमें केवल तभी उन्नति हो सकती है जब इसे राजकीय सहायता मिले। मैं थोरोसे सहमत हूँ कि बुरी तरहसे प्रशासित देशमें, बुरी सरकारका प्रतिरोध करनेवाले नागरिकको सम्पत्तिके अधिकारोंकी अवश्य उपेक्षा कर देनी चाहिए। और स्थायी स्वामित्वके आश्वासनके बिना कृषिके मामलेमें अधिक कुछ करना असम्भव है। मैं इस विषयपर विस्तारसे कुछ नहीं कहना चाहता। मैं इतना काफी कह चुका हूँ कि शेषकी पूर्ति आप स्वयं कर सकते हैं। यद्यपि आपका सुझाव जहाँतक अछूतोंका सम्बन्ध है, मुझे युक्तिसंगत नहीं लगता और इसे पूरा कर पाना भी कठिन है; तथापि सामान्य

योजनाके रूपमें भी आपने जो उद्धरण भेजा है, वह महत्त्वपूर्ण है। जैसे ही 'यंग इंडिया' में स्थान मिलेगा, मेरा इसे छापनेका विचार है जिससे जिन लोगोंकी इस दिशामें जरा भी रुचि हो, वे इस मामलेको हाथमें ले लें।

मुझे विटामिनोंके सम्बन्धमें बड़ा ग्रन्थ नहीं मिला। मुझे 'फूड ऐंड हैल्थ' नामक पुस्तक मिली है। परन्तु वह पुस्तक भी विटामिनोंके सम्बन्धमें काफी सूचना देती है। मैं डॉ० कैलॉगके लेखोंको जानता हूँ। मैंने उनकी पुस्तक पढ़ी है। और यदि यह मेरी अन्य पुस्तकोंकी तरह खो नहीं गई है तो, अवश्य ही आश्रमके पुस्तकालयमें होगी। बहरहाल ऐसा मालूम देता है कि आप डॉ० केलॉगको निजी तौरपर जानते हैं। मैं इसकी प्रतीक्षा करूँगा कि वे क्या कहते हैं। क्या आपने सारा मामला उनके सामने रखा है? और उनसे पूछा है कि क्या वे रोगियोंके लिए दूधकी जगह कोई गुणकारी शाकाहारी चीज बता सकते हैं?

हृदयसे आपका,

श्री आर० बी० ग्रेग
कोटगढ़, शिमला हिल्स

अंग्रेजी (एस० एन; १४१३२) की फोटो-नकलसे।

४०५. पत्र : टी० एन० शर्माको

नन्दी हिल्स
२९ मई, १९२७

प्रिय शर्मा,

मुझे कलकत्तामें आपसे हुई भेंट और अपने आश्रमके सम्बन्धमें आपने जो बातचीत की थी, उसकी याद है। मुझे बड़ा दुःख है कि आपकी पत्नी बीमार है। मैं कुछ ही दिनोंमें इस पहाड़ीसे नीचे उतर आऊँगा और इलाज पूरा करनेके लिए नीचे बंगलोर चला जाऊँगा। मेरे बंगलोरमें रहते हुए आप जब चाहें जरूर आयें। तब हम आपसमें बातचीत करेंगे।

हनुमन्तरावके सम्बन्धमें आपने जो कुछ कहा, वह सब सही है। वे पुरुषोंमें एक रत्न थे। हम आत्मत्याग, अपने आपको मिटा देना, सत्यप्रेम, अहिंसा एवं कर्त्तव्य-परायणतामें दत्तचित्त होकर उनका अनुसरण कर उन्हें अपने बीचमें बनाये रखें।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत टी० एन० शर्मा
१९९, ईस्ट पार्क रोड
मालेश्वरम्
बंगलोर शहर

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३३) की फोटो-नकलसे।

४०६. पत्र : सैम हिगिनबॉटमको

कुमार पार्क
बंगलोर
२९ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

मैसूरके एक पत्रलेखकने मुझे निम्न लेख[1] भेजा है। यह लेख बड़ी उदारतासे सबको वितरित किया जा रहा है। इससे पहले कि मैं इस लेखके बारेमें कुछ कहूँ क्या आप कृपा करके मुझे बतायेंगे कि क्या इसमें आपके कथनका सही विवरण दिया गया है और क्या ये उद्धृत अंश आपके प्रति पूरा न्याय करते हैं?

मुझे आपका पत्र मिला था, जिसमें आपने कृपापूर्वक मेरे स्वास्थ्यके सम्बन्ध में पूछताछ की थी। इसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। मेरी सेहत बराबर सुधर रही है। अभी कुछ समय मेरे यहाँ रहनेकी सम्भावना है। इसलिए यदि आप अपना उत्तर सीधे ऊपर लिखे पतेपर भेज दें तो ठीक रहेगा।

हृदयसे आपका,

डा० सैम हिगिनबॉटम
कृषि संस्थान
इलाहाबाद

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३४) की फोटो-नकलसे।

४०७. पत्र : के० टी० पॉलको

नन्दी हिल्स
२९ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। ऐसी सम्भावना है कि मैं कुछ दिनोंमें नीचे बंगलोर चला जाऊँगा और शेष इलाज वहाँ करवाऊँगा। जब कभी आप आ सकें जरूर आयें। चाहे मैं पहाड़ीपर होऊँ या बंगलोरमें, मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता होगी। जब मैं बंगलोर जाऊँगा तो आपको इस बातका समाचारपत्रोंसे एकदम पता लग जायेगा। वैसे भी आप पहाड़ीपर किसी भी दशामें ऐसे रास्ते तो आ ही नहीं सकते कि रास्तेमें बंगलोर न पड़े।

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

मुझे मालूम है कि कितने ही मित्रोंने मेरे स्वास्थ्यलाभके लिए प्रार्थनाएँ की है। जाने अनजाने मित्रोंकी सारी प्रार्थनाओंके उत्तरमें मेरी यही प्रार्थना रही है कि ईश्वर यदि मुझे बचा ले तो मुझे उन प्रेमयुक्त प्रार्थनाओंके योग्य बनाये।

मेरी सेहत ठीक प्रकारसे सुधर रही है।

हृदयसे आपका,

श्री के० टी० पॉल
थोट्टम
सेलम

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३५) की फोटो-नकलसे।

४०८. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

नन्दी
वैशाख बदी [१४, २९ मई, १९२७][1]

बहनो,

इस सप्ताह तुम्हारा पत्र नही मिला।

क्या तुम्हें मीराबहनका पत्र भी कभी मिलता है? उनके पत्रोंसे पता चलता है कि वे न केवल स्त्रियोंमें बल्कि पुरुषोके बीच भी खूब काम कर रही हैं। उनके पत्रमें एक ऐसी बात है जो मैं तुम्हें भी बता देना चाहता हूँ। वे लिखती हैं कि जिन बहनोंसे वे मिलती हैं, सभी बहुत भली दिखाई देती हैं किन्तु उनमें घोर अज्ञान है। बहुत ही सीधी-सादी और सहज बातोंका ज्ञान भी उन बहनोंको नहीं है। चरखेके सम्बन्धमें बात करनेपर तो वे भौचक्की रह जाती हैं और गरीबोंकी खातिर चरखा कातनेकी बात उनकी समझमें ही नही आती। उनके लिए धर्मका अर्थ है देवदर्शन। सेवा क्या है, इसके सम्बन्धमें वे शायद ही कुछ जानती हैं। उपर्युक्त चित्रमें कुछ बातें जो ऐसी हो सकती हैं जिनका कारण यह हो कि मीराबहन पूरी बात समझी नही। किन्तु स्त्रियोंमें फैले हुए अज्ञानको तो हम सभी जानते हैं। और हम यह भी जानते हैं कि इसका मुख्य कारण पुरुष हैं। इस अज्ञानको दूर करनेका एकमात्र उपाय तो यही है न कि स्त्रियाँ स्वय चेतें? और इसका उत्तरदायित्व तुमपर है। तुम सभी बहन अपनेको यथाशक्ति इस कामके लिए तैयार करो।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६५१) की फोटो-नकलसे।

1. साधन-सूत्रमें वैशाख बदी १३ है जो क्षयतिथि थी।

४०९. पत्र : जुगलकिशोरको

२९ मई, १९२७

मेरी उम्मीद है कि इसी कामसे जितना बौद्धिक और आत्मिक खुराककी तुम्हें हाजत है सब मिल जायगा। यदि इस शास्त्रका प्राथमिक अभ्यास अच्छी तरहसे हो गया है तो उसमेंसे जितना चाहिये उतना उसे मिलनेका मेरे लिये कुछ भी शक नही है। प्रत्येक वस्तुका प्राथमिक अभ्यास हमेशा कठिन और निरस रहता है। संगीत और रसिक शास्त्रका भी वही हाल है। गणित शास्त्रका तो हम सबको परिचय है। इसी तरहसे इस भव्य और बुलंद चर्खाशास्त्रका है: इसको मैं भव्य कहता हूँ क्योंकि जितनी बारीकीसे उसका संशोधन हम करते हैं, उतनी ही नई वस्तु हमको नजर आती है। और जितना कौशल्य किसी और बड़ी चीजमें सफलता पानेके लिये आवश्यक है उतना ही इसमें भी है। इस शास्त्रको बुलंद समझता हूँ क्योंकी उसका संबंध करोड़ोंके साथ है। ऐसा व्यापक संबंध किसानके शास्त्रको छोड़कर और किसी शास्त्रको मैंने नही जाना है। इसलिये मैं चाहता हूँ कि इस काममें तुम्हारी लगन मजबूत हो जाय।

तुम्हारे स्वभावको मैं समझ गया हूँ। जबतक एक चीज तुम्हारी बुद्धि और तुम्हारा हृदय अच्छी तरहसे कबूल न करे तबतक उससे हटते ही रहते हो और यह बिलकुल ठीक है। जो अनुभव मिले मुझको लिखते रहो।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

४१०. पत्र : इम्पीरियल इंडियन सिटिजनशिप एसोसिएशनके मंत्रीको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

मैं आपकी सभाकी हर तरहसे सफलता चाहता हूँ। परम माननीय श्रीनिवास शास्त्री सर्वश्रेष्ठ मुहूर्तमें अपना कठिन उद्देश्य निभानेके कार्यमें लग गये हैं। उनके साथ सारे भारतकी सद्भावना है। यूरोपीय एवं स्वदेशी, दोनों उनके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं समझता हूँ कि यदि कोई भी आदमी यूरोपीयों एवं भारतीय प्रवासियोंके बीच एकता स्थापित कर सकता है तो वह व्यक्ति निश्चय ही श्रीयुत श्रीनिवास

शास्त्री हैं। ईश्वर उन्हें वह समस्त विवेक और शक्ति दे जिसकी उन्हें दक्षिण आफ्रिका-में आवश्यकता पड़ेगी।

हृदयसे आपका,

मंत्री
इम्पीरियल इंडियन सिटिजनशिप एसोसिएशन
पेटिट बिल्डिंग
३५९, हॉर्नबी रोड
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५५) की फोटो-नकलसे।

४११. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय सतीशबाबू,

आपका पत्र मिला। मुझे जो कुछ भी कहना था, कह दिया है। मैं आपका तर्क समझता हूँ, और आपके दृढ़ निश्चयकी कद्र करता हूँ। बहरहाल मैं आपको "भोजन और स्वास्थ्य" पर यह पुस्तक भेज रहा हूँ। केमिस्ट होनेके नाते आप इस पुस्तकको मुझसे ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हैं। मैं निजी तौरपर लेखकके बहुतसे निर्णयोंसे असहमत हूँ। मेरी असहमति पूर्वाग्रहपर आधारित है। मैं उनकी आधारभूत सामग्रीपर साक्ष्यकी कमीके कारण आक्षेप करता हूँ। परन्तु अपनी असह-मतिके समर्थनमें मेरे पास कोई सामग्री नहीं है। मैं विधवाओंकी अपेक्षाकृत स्वस्थ दशाके बारेमें जानता हूँ।

जहाँतक निखिलका सम्बन्ध है, उसे कभी कलकत्ता जानेकी आवश्यकता नहीं है। यदि हेमप्रभादेवी आश्रममें प्रसन्न रह सकें, तो वह वहाँ निखिलके साथ रह सकती हैं और वहाँ उसके स्वास्थ्यकी देखभाल कर सकती हैं या वह पटनामें अथवा वर्धामें अपने आवासका प्रबन्ध करके रह सकती हैं।

मुझे मद्रास तो जाना ही है। मैं वास्तवमें अन्य प्रान्तोंका दौरा भी करना चाहूँगा — बशर्ते कि यह कार्य धीरे-धीरे और आरामसे हो सके, जिसमें विश्रामके लिए पर्याप्त गुंजाइश रहे, और दिनमें या प्रति दो दिनोंमें एकसे ज्यादा सभा न हो। यदि मैं किसी तरह ऐसी व्यवस्था कर भी सकूँ, तो भी मद्रास न जाना तो बड़ा भारी अपराध होगा। क्योंकि वहाँ पहले ही लगभग तीन लाख रुपये इकट्ठे किये जा चुके हैं और यों ही रुके पड़े हैं। जबतक मैं इस रकमको लेनेके लिए स्वयं उपस्थित नहीं होता, लोग इसे देना नहीं चाहेंगे। इसलिए मैं विश्रामके साथ-साथ कार्य भी कर सकता हूँ। जुलाईमें मद्रास प्रान्तमें काफी ठण्डक हो जाती है।

सारा जूनका महीना विश्राम करूँगा। मैसूरका दौरा अधिक सुविधाजनक रहेगा, क्योंकि मैसूर अधिक ऊँचे धरातलपर है। यह समुद्रतलसे ३००० फुटकी ऊँचाईपर पठारका प्रदेश है। यहाँकी जलवायु वर्षके इस समय बड़ी सुहावनी रहती है। मद्रास प्रान्तके कुछ अन्य भाग ऐसे भी हैं, जो काफी ठण्डे रहते हैं। कर्नाटकका मौसम जूनके बाद बहुत ही बढ़िया होता है। इसलिए आपको किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। जैसे-जैसे दौरेका कार्यक्रम आगे बढ़ता जायेगा, मैं सावधानीसे जाँच करता रहूँगा। इससे ज्यादा और क्या हो सकता है कि सदा अनुकम्पाशील और सदा सजग रहनेवाली प्रकृति किसी भी प्रच्छन्न संकटकी चेतावनी समय रहते मुझे दे देगी। और तब सारी असाधारण सतर्कताके बावजूद वह एक दिन अपना दूत भेज देगी; जो रातके चोरकी तरह चुपकेसे सबकी नजर बचाकर ऐसी खुराक देगा जो मुझे चिर निद्रामें सुला देगी।

आपका,
बापू

सतीशचन्द्र दासगुप्त
होम विला
गिरिडीह
(बिहार)

अंग्रेजी (जी० एन० १५७२) की फोटो-नकलसे।

४१२. पत्र: सी० विजयराघवाचारियरको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। या तो जमनालालजीने बहुत बड़ी गलती की है, या भेंट करनेवालोंने। यदि मैं हठ भी करने लगूँ, तो भी जूनके बीचमें दौरा फिरसे आरम्भ कर सकनेकी कोई सम्भावना नहीं है। डाक्टरोंकी बात रहने दीजिए। मुझे अपनेपर ही ऐसा विश्वास नहीं है। नन्दीमें रहनेसे मुझे लाभ हुआ है। परन्तु अभी बीमारीसे बच निकलनेके लिए बहुत-कुछ करना बाकी है। मैं बड़ी जल्दी थक जाता हूँ, और सुभीतेसे चल फिर भी नहीं सकता। मुझे कमसे-कम एक महीना और आराम चाहिए। मैं महसूस करता हूँ कि जुलाईके तीसरे हफ्तेसे पहले मैं बाहर निकलनेका साहस नहीं कर सकूँगा।

राजगोपालाचारी अभी यहाँ नहीं है। वह मेरे लिये आवास खोजने एवं प्रबन्ध करने बंगलोर गये हैं। यहाँका मौसम मेरे लिये जरूरतसे ज्यादा ठण्डा हो गया

है। राजगोपालाचारी प्रमुख जेलर जैसे हैं और जहाँतक इस प्रान्तका सम्बन्ध है, उन्हें ही यहाँ मेरी अन्तिम रूपसे व्यवस्था करनी है। यदि सेलम भी यात्राकी सूचीमें है, तो जहाँतक मेरा बस चलेगा, मैं निश्चय ही आपका आतिथ्य स्वीकार करना चाहूँगा। और यदि सेलम यात्राकी सूचीमें नहीं है, तो आप उसे इस सूचीमें आसानीसे शामिल कर सकते हैं। इसके लिए आपको सेलममें अपने असंख्य मित्रोंसे लाखों निरीह लोगोंके लिए अच्छी खासी रकम जमा करनी होगी।

मुझे बिलकुल पता नहीं था कि कलकत्ताके यूरोपीय एसोसिएशनने ऐसा मूल प्रस्ताव पास किया है, जैसा कि आपने बयान किया है।

हाँ, यद्यपि मैं इसे न्यायसंगत नहीं सिद्ध कर सकता, फिर भी मैं ऐसा महसूस जरूर करता हूँ कि इस जाहिरा अराजकताके पीछे एक ऐसा सुन्दर क्रम विकसित हो रहा है कि हमारा देश सदाके लिए हेय नहीं रहेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत सी० विजयराघवाचारियर
फेयरीफाल्स व्यू
कोडाईकनाल ओब्सर्वेटरी डाकखाना
कोडाईकनाल हिल्स

अंग्रेजी (एस० एन० १२५८६) की फोटो-नकलसे।

४१३. पत्र : खानचन्द ऐदास आर० कोबको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका १५ अप्रैलका पत्र जो पता बदलकर मेरे पास भेज दिया गया था, मिल गया है। इसके लिए मैं आपको एवं दान देनेवाले लोगोंको धन्यवाद देता हूँ। आपने किसी विशेष कार्यका उल्लेख नहीं किया, जिसमें संग्रह किया हुआ धन लगाया जाये। इसलिए जबतक आप इसके विपरीत कुछ और न लिखें तबतक इस धनका उपयोग सत्याग्रहाश्रम प्रबन्धक मण्डलके निर्णयानुसार खादी, अस्पृश्यता या गोरक्षा कार्योंमें से जिस कामके लिए सबसे अधिक आवश्यकता होगी, किया जायेगा। कृपया उत्तरमें एक पंक्ति अवश्य लिखियेगा।

आपका,

श्रीयुत खानचन्द ऐदास आर० कोब

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३९) की माइक्रोफिल्मसे।

४१४. पत्र : तरुणचन्द्र सिन्हाको

नन्दी हिल्स (मैसूर राज्य)
३१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। फिलहाल मैं आपसे केवल इतना ही कह सकता हूँ कि आप मेरे वे पुनर्मुद्रित लेख पढ़ें, जो मैंने 'यंग इंडिया' में लिखे थे। पुनर्मुद्रित लेखोंका शीर्षक है "आत्म-संयम बनाम आत्म-निरति"। यह संग्रह अहमदाबादमें 'यंग इंडिया' के कार्यालयसे मिल सकता है। यदि आपका पुस्तक लेकर पढनेका विचार हो तो आप पुस्तक पढ़ चुकनेके बाद मुझसे पत्र-व्यवहार करें और बतायें कि क्या इस पुस्तकसे आपको कोई सहायता मिली है। इस दौरान मैं केवल यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि ईश्वर आपको सही कार्य करनेके लिए सही निर्देशन एवं मानसिक शक्ति दे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत तरुणचन्द्र सिन्हा
डाकखाना शुशुग
(जि० मैमनसिंह)
बिहार

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३६) की फोटो-नकलसे।

४१५. पत्र : बसन्तकुमार राहाको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। क्योंकि मुझे मालूम नहीं है कि अंग्रेजी पत्र आपने लिखा है या किसीने आपके लिए लिख दिया है, इसलिए मैं इस पत्रका अनुवाद साथमें भेज रहा हूँ।

यह बात नहीं है कि मैं आपके प्रस्तावसे सहमत नही होना चाहता। परन्तु क्योंकि मैं स्वयं गुरुकी खोजमें हूँ; अतः मुझमें किसीका गुरु बननेकी योग्यता नही है। आखिरकार जो किसीका गुरु बनने जा रहा है यदि वह निष्ठावान व्यक्ति है, तो उसमें आत्मविश्वास अवश्य होना चाहिए। अध्यापक और शिष्यका सम्बन्ध कठ-पुतली जैसा नही है, अपितु आत्माका सम्बन्ध है। इसलिए मैं आपको मात्र यह सुझाव

दे सकता हूँ कि यदि आपको निजी प्रयास एवं संघर्षसे सन्तोष न हो, तो आप अपने मनमें गुरुकी कल्पना कर सकते हैं। परन्तु वह गुरु मैं स्वयं सचेतन रूपमें नहीं होऊँगा। क्योंकि जैसी आशा सच्चे गुरुसे की जा सकती है, मैं आपको वही निर्देशन देनेमें नितान्त असमर्थ होऊँगा। आप काल्पनिक चित्रसे जितनी सान्त्वना प्राप्त कर सकें, कर लें। मुझे खेद है कि मैं आपको इससे अधिक और किसी तरहकी सान्त्वना नही दे सकता। बहरहाल सर्वोत्तम कार्य, जो कोई भी व्यक्ति कर सकता है, यह है कि ईश्वरके सामने नतमस्तक हो जाये और अपेक्षित निर्देशनके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करे। ईश्वर प्रकाश एवं शान्तिका एकमात्र स्रोत है।

हृदयसे आपका,

बाबू वसन्तकुमार राहा
बार्न्स जंकशन
जिला जलपाईगुडी (बंगाल)

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३७) की फोटो-नकलसे।

४१६. एक पत्र

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय महोदय,

इसी मासकी २१ तारीखका आपका पत्र मिला। मुझे आशंका है कि व्यापारके सम्बन्धमें आपकी और मेरी धारणाओंमें जमीन-आसमानका ऐसा अन्तर प्रतीत होता है कि अभी इस समय कोई बीचका रास्ता नही खोजा जा सकता; और यों भी मुझे लगता है कि आखिरकार हमारे डिपो आपके किसी उपयोगमें नही आ सकते।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १४१३८) की फोटो-नकलसे।

४१७. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

नन्दी हिल्स
३१ मई, १९२७

प्रिय जयरामदास,

आपका पत्र मिला। मैं आपकी कठिनाइयों एवं संघर्षोंको आज भी वैसे ही समझता हूँ जैसे मैं हमेशा समझता रहा हूँ और इसलिए जब मैं आपको कोई सहायता अथवा निर्देशन देनेमें भी असमर्थ रहा हूँ, तब भी मैं आपसे सहानुभूति व्यक्त करता रहा हूँ। प्रधानको लिखे अपने पत्रमें मेरा आशय है कि निजी तौरपर मेरा आपसी भयके कारण किये गये समझौतोंमें अधिक विश्वास नहीं है। और फिर हम-जैसे शिष्टदेशभक्त जो इकरार करते हैं, उनका जनसमुदायपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जनसमुदाय या तो क्षणिक उत्तेजनावश या शरारत करनेवालोंके निर्देशनमें कार्य करता है। हम जनताके तथाकथित प्रतिनिधि अपनी कल्पनासे हवाई किले बनाते रहते हैं। परन्तु मैं समझता हूँ कि जो इसे इस रूपमें देखता है उसके लिए काल्पनिक भी वास्तविक है और जो वास्तविक है वह उसे काल्पनिक लगता है। उस कुत्तेके लिए छाया भी वास्तविक कुत्ता है जो साफ पानीमें अपना ही स्वरूप देखता है और अपनी ही परछाईंपर एड़ीचोटीका पसीना एक करके भौंकते-भौंकते प्राण दे देता है।

जब व्यापारसे काफी तंग आ जायें और थक जायें तो जरूर आइयेगा और कुछ दिन मेरे साथ बिताइयेगा। मैं एक सप्ताहके अन्दर-अन्दर इस पहाड़ीसे नीचे उतर आऊँगा और कमसे-कम एक महीना बंगलोरमें रहूँगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत जयरामदास दौलतराम
सदस्य, विधान परिषद,
हैदराबाद (सिन्ध)

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४०) की फोटो-नकलसे।

४१८. पत्र: तुलसी मेहरको

[मई, १९२७के अन्तमें][1]

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा खत मिला है। बीमारीका वर्णन पढ़कर मुझको दुःख हुआ है। इतना साहस करनेकी कोई आवश्यकता नही थी। हमारा सब कार्य रागरहित होना चाहिये। और जो कार्य रागरहित होता है वह हमेशा यथाशक्ति ही बनता है और इसलिए स्वास्थ्य नही बिगडता है। तटस्थ भावसे जितना परिश्रम हो सकता हो उतना परिश्रम अवश्य करे। उससे ज्यादह करना वह शरीरको और कामको बिगाड़ना है। मेरा शरीर बिगड़नेका सबब भी वैसा ही था। मैंने महाराष्ट्रके दौरेमें और उसके पश्चात शक्तिका नामकी मर्यादा न रखी। अब उसका दड दस गुना दे रहा हूँ। जो दो महीने अब व्यतीत हुए हैं उसका एक चौथाई हिस्सा भी यदि मैं महाराष्ट्रके दौरेमे ज्यादह दे देता तो कार्यक्रम शातिसे सपूर्ण हो सकता था। और सभव है इस बीमारी से बच सकता था। मेरे सामने तो अब समुद्र का किनारा पड़ा है। तुम्हारी मुसाफरी का तो अब आरभ ही है। मेरा दृष्टान्त लेकर तुम्हारे शात बन जाना चाहिये और शातिसे जितना बन सके उतना किया जाय। शरीर को दुबारा तैयार करनेके लिये दूध-घीकी आवश्यकता समजी जाय तो बगैर सकोच लिया जाय। मैंने तो कहा है ना कि जो साथी दूध-घी छोड़ता है वह अपनी जिम्मेवारीपर खतरेमें पड़ता है और यदि ऐसे त्यागसे शरीरकी रक्षा न कर सके तो शीघ्रतासे दूध घी पर जाना चाहिये।

इस खतका उत्तर मिलनेसे पहले हि दूसरे खत मिलनेकी आशा करता हू।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ६५३१) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजीके महाराष्ट्रके दौरे और बीमार हुए दो मास गुजर जानेके उल्लेखसे।

४१९. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

नन्दी हिल्स
१ जून, १९२७

प्रिय बन्धु,

आप कुछ ही दिनोंमें समुद्री यात्रा करेंगे और इस महीनेके अन्ततक दक्षिण आफ्रिका पहुँच जायेंगे। उस उप-महाद्वीपमें आप जितनी भी देर ठहरेंगे, मेरा ध्यान आपकी तरफ रहेगा और मेरी प्रार्थनाएँ आपके साथ होंगी। यह नियुक्ति मेरे लिये अपूर्व घटना है। मैं एक शब्द भी और नहीं कहूँगा। ईश्वर आपको सुरक्षित एवं सुखी रखे।

जब कभी सम्भव हो मुझे एक आध पंक्ति अवश्य लिख दिया कीजिएगा। मुझे आशा है कि वह महत्त्वपूर्ण पत्र[1] आपको मिल गया होगा, जो मैंने जब हम पिछली बार मिले थे, उसके तुरन्त बाद मद्रासके पतेपर भेजा था।

हृदयसे आपका,

परम माननीय वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री
सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी
सैंडहर्स्ट स्ट्रीट, गिरगाँव
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५६) की फोटो-नकलसे।

४२०. पत्र : एच० हरकोर्टको

नन्दी हिल्स
१ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका १ मईका पत्र मिला, जिसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैंने जो चुनौती दी थी, उसकी शर्तें या आपने चुनौतीका जो उत्तर दिया था[2] उसकी मुझे कोई याद नहीं है। और इस समय विशेषकर जब कि मैं आश्रमसे बहुत दूर यहाँ स्वास्थ्य लाभ कर रहा हूँ, १९२१-२२ के कागजात देखकर अपनी याददाश्तसे चुनौतीकी शर्तोंको फिर याद कर पाना बहुत कठिन है।

१. देखिए "पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", १५-५-१९२७।

२. हरकोर्टने अपने पत्रमें कहा था कि गांधीजी द्वारा सरकारको दी गई चुनौतीका उत्तर उन्होंने (हरकोर्टने) एक टिप्पणीमें दिया था।

मैंने आपकी पुस्तिकाके[1] बारेमें पूछताछ की है। अब मुझे मालूम हुआ है कि वह पुस्तिका मेरे साथियोंमें से एकने देखी थी। परन्तु चूंकि उन्होंने यह पुस्तिका मिलनेके बड़ी देर बाद देखी थी, और मैं अपने कामम इतना व्यस्त था कि कोई पुस्तिका देखनेका मेरे पास समय नहीं रहता था; इसलिए उन्होंने उस पुस्तिकाकी ओर मेरा ध्यान नहीं दिलाया। मुझे खेद है कि यह पुस्तिका बिना प्राप्ति स्वीकृतिके पडी रही। अब मैंने वह मँगवा भेजी है। स्वास्थ्यलाभके दौरान आपकी पुस्तिका देखनेके लिए मेरे पास पर्याप्त अवकाश है। यदि मैं इसको ढूंढ पाऊँगा तो मैं इसे निश्चय ही पढ़ूंगा और आपको इसपर अपने विचार बताऊँगा।

मुझे खेद है कि इन दो विषयोंपर आपको इतनी देरतक असमंजसकी स्थितिमें रहना पड़ा। इस सम्बन्धमें कमसे-कम प्राप्ति-स्वीकृति पानेका आपका पूरा अधिकार था। ऐसी चीजोंको बिना प्राप्ति-स्वीकृतिके रहने देना मेरी प्रकृतिके विरुद्ध है।

हृदयसे आपका,

श्री एच० हरकोर्ट
११९, जिप्सी हिल
लन्दन एस० ई० १९

अंग्रेजी (एस० एन० १२४९४) की फोटो-नकलसे।

४२१. पत्र : जे० पी० भणसालीको

१ जून, १९२७

तुम या कोई अन्य व्यक्ति धार्मिक उद्देश्यसे यदि कोई धर्मकार्य करे तो मैं उसमें अड़चन कैसे डाल सकता हूँ? किन्तु मैं तुम्हे एक सुझाव देना चाहता हूँ। उपवास एक शारीरिक क्रिया है इसलिए हालांकि आत्मविकासकी सिद्धिमें उसका बहुत महत्त्व है तथापि तुलनात्मक दृष्टिसे देखें तो उसका यह महत्त्व अपने आपमें ज्यादा होते हुए भी स्वल्प-सा ही है। उपवास तो एक साधन है और उससे उद्देश्यकी सिद्धि तभी होती है जब मन भी उसके साथ हो। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे उपवासको तुम्हारे मनका समर्थन भी है, अन्यथा तुम इतने दिनोंतक उपवास कर ही नहीं पाते। फिर भी तुम इसपर और गहराईसे विचार कर देखना। तुम उपवास किसी शुद्धिकी खातिर ही तो करते हो न? उपवासके बाद क्या तुम उसके परिणामको जाँचते हो? अथवा परिणामके सम्बन्धमें उदासीन रहते हो? यदि उदासीन रहते हो तो उपवास सहज धर्मका अंग कैसे हो सकता है? 'शुद्धिके लिए उपवास करना',

१. एच० हरकोर्ट और छोटूराम द्वारा लिखित साइडलाइट्स ऑन द क्राइसिस इन इंडिया; हरकोर्ट इंडियन सिविल सर्विसके सदस्य और गुरदासपुरके डिप्टी कमिश्नर थे। छोटूराम पंजाब सरकारके कृषि-मन्त्री थे।

इस प्रकारकी भाषा ही यह बताती है कि उसमें परिणामकी इच्छा निहित है। ऐसी इच्छा करना अनिष्ट नहीं बल्कि इष्ट है। 'फलकी इच्छा' — इस शब्द-प्रयोगका अर्थ करनेमें विवेककी आवश्यकता तो होती ही है। मुमुक्षु बनना हमारा धर्म है। मुमुक्षु अर्थात् मोक्षकी इच्छा करनेवाला। फलकी इच्छाके त्यागका शुद्ध अर्थ तो यही है कि त्यागी उस फलको जानता है। किन्तु वह इसकी चिन्ता नहीं करता कि यह फल उसे स्वयं प्राप्त होगा या नहीं। फलकी इच्छा न करना मनुष्यको धैर्यवान बनाता है और उससे साधनकी शुद्धताकी रक्षामें सहायक होता है।

परन्तु यह तो मैं बहुत अधिक लिख गया। मेरा उद्देश्य तुम्हें सावधान-भर कर देना है। यह मेरा धर्म है। किन्तु करना वही जिसके लिए तुम्हारा दिल गवाही दे।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

सौजन्य : नारायण देसाई

४२२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

नन्दी दुर्ग
ज्येष्ठ शुक्ल २ [१ जून, १९२७][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला। यह खत लिखाते हुए महादेव मुझसे याद दिलाते हैं कि आपने जमनालालजीसे सूचना दी थी कि मैं आपको अंग्रेजीमें खत लिखूं। परंतु ऐसी कोई बात मैं लिखना ही नहीं चाहता हुं जो किसीको बतानेकी आवश्यकता रहे। इसलिये इस पत्रको हिन्दीमें हि लिखवाता हूं।

आपका खत स्टीमर परसे लिखा हुआ मिला है। मैंने दो खत इसके पहले लिखे हैं — जिनीवाके पतेसे। वह मिल गये होंगे। मेरा स्वास्थ्य सुधरता जाता है। पू० मालवीयजीसे मैं खत लिखता रहता हूं। मैं लिखा था वैसे ही उनका इस हफ्तेमें लंबा तार आ गया। उसमें बताते हैं कि स्वास्थ्य है तो अच्छा लेकिन अशक्ति है। आजकल बम्बईमें हैं। मेरा तो यह खयाल है कि मेरे लिये यह कहना कि मैं स्वास्थ्यकी दरकार नहीं करता हूं वह ठीक नहीं है। जितना मैं आवश्यक समजता हूं उतना प्रयत्न स्वास्थ्यरक्षाके लिये ठीक ठीक कर लेता हूं। पू० मालवीयजी ऐसा नहीं करते हैं एसा मैंने बहुत दफा लिखा है और उन्होंने आराम लेनेकी प्रतिज्ञा करनेके बाद भी आराम न लिया। वे वैद्योंके उपचारपर बहुत विश्वास करते हैं और मान

१. वर्षका निर्धारण पत्रके पाठके आधारपर किया है।

लेते हैं कि उनकी गोलिया और भस्मादिकी पुड़ीआ लेकर अच्छा रहते हैं, रह जाते हैं। और उनका आत्मविश्वास इतना जबरदस्त है कि दुर्बल होते हुए भी, बीमार होते हुए भी, कमसे कम ७५ वर्षतक जीनेका निश्चय कर लिया है। ईश्वर उस निश्चयको सफल करे। उनको ज्यादह कौन कह सकता है मैंने तो विनयके साथ जितनी सख्ती हो सकती है उतनी सख्ती विनोद करके लिखी है। वस्तु तो यह है कि प्रत्येक मनुष्यकी बुद्धि कर्मानुसारिणी रहती है। ऐसी बातोमे पुरुषार्थके लिये बहुत ही कम जगह है। प्रयत्न करना कर्त्तव्य है ही और करना चाहिये परन्तु प्रत्येक मनुष्यके लिये एक समय तो आता ही है जब सब प्रयत्न व्यर्थ बनता है और सद्‌भाग्यसे और पुरुषार्थकी रक्षाके कारण ईश्वरने इस आखरी समयका पता किसीको नही दिया है। तब इस अनिवार्य होनारतके लिये हम क्यों चिंता करे? राष्ट्रका कारोबार न मालवीयजीपर निर्भर, न लालाजीपर, न मुझपर। सब निमित्तमात्र रहते हैं और मेरा तो यह भी विश्वास है कि सत्पुरुषका कार्यका सच्चा आरंभ उसके देहान्तके बाद ही होता है। शेक्सपीयरका यह कथन कि मनुष्यका भला कार्य प्राय उसीके साथ जल जाता है और बूरा कार्य उसके पश्चात् रह जाता है ठीक नही है। बूराईको कभी इतना आयु नही रहता है। राम जिन्दा है और उसके नामसे हम पवित्र होते हैं। रावण चला गया और अपनी बुराइयोंको अपने साथ ले चला। कोई दुष्ट मनुष्य भी रावण नामका स्मरण नही करते हैं। रामके युगमें न जाने राम कैसा था। कविने इतना तो बता दिया है कि अपने युगमें रामपर भी आक्षेप रहा करते थे। परतु आज रामकी सब अपूर्णता रामके शरीरके साथ भस्म हो गई, और उसका अवतारी समझकर हम पूजते हैं। और रामका राज्य आज जितना व्यापक है उतना हरगीज रामके शरीरस्थ रहते हुए नही था। यह बात मैं बड़ी तत्वज्ञानकी नही लिख रहा हूं, न हमारे लिये शांति रखनेके कारण। परतु मैं यह दृढतासे कहना ही चाहता हूं कि जिसको हम संत पुरुष मानते हैं उनके देहान्तका कुछ भी दुःख नही मानना चाहिये। और इतना दृढ विश्वास रखना चाहिये कि सत पुरुषका कार्यका सच्चा आरंभ या कहो सच्चा फल उसके देहान्तके बाद ही होता है। अपने युगमे जो उसके बड़े बड़े कार्य माने जाते हैं वह भविष्यमें होनेके परिणामके साथ केवल यत्किंचित है। हा, हमारा इतना कर्त्तव्य है सही कि हम हमारे ही युगमे जिनको हम संत पुरुष मानें उनकी सब साधुताका यथाशक्ति अनुकरण करें।

आपको स्वास्थ्यके लिये मेरी यह सूचना है कि यदि आपका विश्वास एलोपैथीपर नही है—और न होना चाहिये—तो आप जर्मनीमें हुई कुन्हे और जुस्टकी संस्था है उसे देखें। वहां खुली हवा और पानीके उपचार होते हैं और उसमें से सैकड़ो लोकोंने लाभ उठाया है। लंडन और मैन्चेस्टर दोनों जगहपर वेजीटेरियन सोसाइटी है उसका भी परिचय करे। उस समाजमें हमेशा थोडे अच्छे, गंभीर, विजयी और मध्यवर्ती मनुष्य रहते हैं। मूर्खलोक भी और मतान्ध तो देखनेमें आयेंगे ही। आपने स्टीमरपर दूध नही मिलनेका लिखा है। दुबारा अपने साथ होर्लिक्स माल्टेड मिल्क रखें। यह शुद्ध दूधकी भूकी है। दूधके पानीकी बाफ बनाकर जो शेष सूखा भाग

रह जाते हैं उसमें दूधका सब सत्व रहता है ऐसा रसायनशास्त्री लोग कहते हैं। इसका प्रयोग करके देख लीजिये।

आपका,
मोहनदास

मूल (सी० डब्ल्यू० ६१४८) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४२३. एक पत्र

[१ जून, १९२७ के पश्चात्][1]

अकर्ममें भी कर्म देखनेका यह एक बहुत सादा उदाहरण है। और जिनके हाथमें चरखा है या 'गीता' है अथवा 'रामायण' है, उन्हें काम नहीं है यह नहीं कहा जा सकता। और जबतक हमें इस प्रकारका मानसिक सन्तोष नहीं होगा तबतक कुछ-न-कुछ अधीरता मनमें रहेगी ही। इससे तुम्हें छूटना है और मुझे तुमसे ऐसी आशा भी है। तुम्हारे हाथमें सहज रूपसे जो भी काम आ जाये उसे तुम बिजलीकी गतिसे पूरा करना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

४२४. पत्र : मणिलाल नथुभाई दोशीको

[१ जून, १९२७ के पश्चात्][2]

आपका पत्र मिला। ब्रह्मचर्यका पालन तीन प्रकारसे करना है — मनसे, वाणीसे और शरीरसे। जबतक मनमें विकारका लेशमात्र रहेगा तबतक विषयेन्द्रियके जाग्रत होनेकी सम्भावना रहती है। मनके विकारोंका शमन ऐसा काम नहीं, जो एक क्षणमें किया जा सके। यह तो परम पुरुषार्थ और इसलिए युगोंका काम है। जो मनुष्य इस जन्ममें विकारोंको जीत लेता है उसने इन्हें अपने इसी जन्मके प्रयत्नोंसे जीता है, ऐसा माननेकी बजाय यह मानना ज्यादा उचित होगा कि यह उसके अनेक जन्मोंके प्रयत्नोंका परिपाक है। यदि शरीरकी जाग्रत अवस्थामें ब्रह्मचर्यके भंग होनेका अवसर आये तो उस समय आत्मघात करके शरीरका नाश करना धर्म है। इसलिए शरीरके सम्बन्धमें जितनी

१ व २. साधन-सूत्रमें ये पत्र जून १९२७ के पत्रोंके बाद दिये गये हैं।

सावधानी रखी जाये उतनी कम है और जो मनुष्य यह सावधानी नहीं रख सकता उसने तो ब्रह्मचर्यका पहला पाठ भी नहीं सीखा। वाणीकी गिनती शरीरमें की जा सकती है, क्योंकि वाणीका प्रेरक मन है, किन्तु अपने-आपमें वह शारीरिक वस्तु ही है। फिर रहा मन। ज्यों-ज्यों मनुष्य मनको जीतता जाता है, त्यों-त्यों शरीर किसी तरहकी जोर-जबरदस्तीके बिना आसानीसे अंकुशमें रहता है। किन्तु जबतक मनको सम्पूर्ण रूपसे नहीं जीत लिया जाता तबतक स्खलनकी सम्भावना बनी रहती है। स्खलनसे डरना नहीं चाहिए। डर तो मनके विषयमें होना चाहिए। स्खलन मानो कुदरतकी ओरसे इस बातकी चेतावनी है कि मनपर अभी हमारा पूरा नियन्त्रण नहीं हुआ है। जिन्होंने अपने विकारोंको जीता नहीं है ऐसे मनुष्य स्खलन न होने पर ही सन्तुष्ट रहते दिखाई पड़ते हैं और अपने मनमें वे इस बातपर गर्वका अनुभव करते हैं। किन्तु सच पूछो तो यह गर्व उनके पतनका चिह्न है। अमेरिकामें तो ऐसे उपाय ढूँढ लिये गये हैं जिनसे स्खलन नहीं होता और फिर भी मन विकार-युक्त रह सकता है। किन्तु ऐसे मनुष्यको ब्रह्मचारी कहना तो इस शब्दकी हत्या करनेके समान है। इसलिए यह याद रखना चाहिए कि वीर्यकी रक्षा ब्रह्मचर्यका बाहरी रूप है सही, किन्तु यह बात निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती कि जहाँ वीर्य की रक्षा है वहाँ हमेशा ब्रह्मचर्य भी पाया ही जायेगा। हाँ, पूर्ण ब्रह्मचर्यका यह एक आवश्यक अंग है, इसमें कोई शंका नहीं। ये शब्द लिखनेमें मेरा आशय इतना ही है कि प्रामाणिक और सतत प्रयत्न करनेके बावजूद, सावधान रहनेके बावजूद जितने भी उपाय किये जा सकते हैं उन सभी उपायोंके बावजूद यदि स्खलन हो जाये तो उसमें घबरानेकी बात नहीं है। ऐसा मानकर कि यह तो कोई बड़ा अपराध हो गया निराश होनेकी जरूरत नहीं है। उसके सम्बन्धमें हमारा दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि दयालु प्रकृतिने हमें यह चेतावनी दी है और ऐसा समझकर हमें अपने प्रयत्नमें और गहरे उतरना चाहिए। विकार जहाँ छिपकर बैठा हुआ है उसे वहाँसे ढूंढ निकालना चाहिए और उसे बाहर करनेका पहलेसे अधिक प्रयत्न करना चाहिए। प्रयत्नकी सफलता तो प्रयत्नमें है ही। हाँ, यह सावधानी रखनी चाहिए कि हम किसी बहाने अपने मनको धोखा देकर मानसिक विलासका पोषण न करें। और जिन-जिन कार्योंमें, जिन वस्तुओं और जिन व्यक्तियोंके संगसे हमारा पतन होता है, हमारे प्रयत्नमें शिथिलता आती है उनसे हम दूर रहें, फिर भले ही ऐसा करनेसे हमारे धन्धेका नाश होता हो तो हो, धनकी बरबादी होती हो तो हो और समाज हमें मूर्ख कहता हो तो कहे।

परमात्माके दर्शनके लिए विकारशून्य होनेकी आवश्यकता है, और जो विकार तब भी रह जाते हैं उनका नाश दर्शनसे सिद्ध हो जाता है। दर्शन कैसे हो इसका कोई बँधा-बँधाया उपाय नहीं है। कोई तीसरा आदमी हमें उसका रहस्य नहीं बता सकता। सच पूछो तो शास्त्र और शास्त्रज्ञ, दोनों ही, केवल अपने अनुभव हमें सुनाते हैं। हममें अश्रद्धा हो तो वे अपने अनुभवसे हममें श्रद्धा जगाते हैं। किन्तु प्रयत्न तो हमें ही करना है। हमारी ओरसे कोई तीसरा आदमी यह प्रयत्न नहीं कर सकता।

इसलिए मैं तो यही कह सकता हूँ कि आप अपने प्रयत्न एक क्षणके लिए भी छोड़ें नहीं। परमात्माका दर्शन ही परम पुरुषार्थ है। इसलिए इस दुनियामें जिन-जिन वस्तुओंकी प्राप्तिके लिए जितने प्रयत्न मनुष्य इच्छापूर्वक करता है उन सारी वस्तुओंके लिए किये जानेवाले इन सब प्रयत्नोंका जोड़ लगाइए और समझिए कि इन प्रयत्नोंके योगफलसे अगणित गुना प्रयत्न इस दर्शनके लिए हमें करना है। इतना प्रयत्न करनेके बाद भी यदि दर्शन न हो तब जरूर किसीसे पूछनेका सवाल उठता है, तब भले अश्रद्धाके लिए अवकाश हो सकता है। किन्तु जबतक हम उतना प्रयत्न नहीं करते तबतक न तो हम श्रद्धाका त्याग कर सकते हैं और न प्रयत्नका।

मनसुखलालका जो उदाहरण आपने दिया वह यहाँ अप्रस्तुत है। मनसुखलालके पास शास्त्रका ज्ञान बहुत था, वे प्रयत्नशील भी थे, किन्तु वे वासना रहित नहीं हो सके थे। वासना रहित होनेका दावा भी वे नहीं करते थे। इसलिए यदि उन्हें अन्तमें तरबूज-जैसी चीजकी इच्छा हुई तो, इसके कारण न तो हमें निराश होनेकी आवश्यकता है और न इसके कारण मनसुखलालकी निन्दा करनी चाहिए। इस कठिन काल और कठिन संसारमें पड़े-पड़े हमें यह मानकर अपनेको धोखा नहीं देना चाहिए कि चलो हम जल्दी-जल्दी वासनाशून्य हो जायें और जिन्हें हम अच्छा मानते हैं उनसे हमें ऐसी आशा भी नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि यदि हम ऐसी आशा रखते हैं तो इससे उलटा अनुभव होनेपर हमें आघात पहुँचता है या फिर उनकी सज्जनताके विषयमें हमारे मनमें शंका उत्पन्न होती है। यह याद रखना चाहिए कि आत्माकी शक्तिकी कोई सीमा नहीं है। जिसकी वासनाओंका सम्पूर्ण क्षय हो गया है उसे तो लगभग परमात्मपदको प्राप्त हुआ कहा जा सकता है। हमारे सम्पर्कमें आनेवाले किसी सज्जन मनुष्यमें इतनी योग्यता आ गई है, ऐसा मानकर हम अपने पैमानेके द्वारा परमात्माके पैमानेको छोटा न करें। परमात्माके विशाल पैमानेके प्रथम चिह्नपर भी यदि हम किसी मनुष्यको पहुँचा हुआ देखें तो हमें खुशी होनी चाहिए और यह देखकर कि कोई-कोई मनुष्य तो उसके पैमानेके पहले चिह्नतक पहुँच सकता है, हम सबको समझना चाहिए कि यदि हम परिश्रम करें तो आगेके चिह्नोंतक भी पहुँच सकते हैं और ऐसी आशा रखकर हमें अपने प्रयत्नमें निरन्तर संलग्न रहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

४२५. गायकी रक्षा कैसे करें?

श्रीयुत सी० वी० वैद्यकी इन टिप्पणियोंको' प्रकाशित करते हुए मुझे बड़ा हर्ष हो रहा है। जो लोग इन स्तम्भोंमें अनुमोदित गोरक्षाके तरीकोंपर विश्वास करते हैं, उन्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि श्रीयुत सी० वी० वैद्य जैसे मान्यता प्राप्त विद्वान इन तरीकोंसे पूरी तरह सहमत हैं। विद्वान लेखकने पिंजरापोल और गोशालामें जो भेद बताया है, उससे कोई चिन्ता या कठिनाई नहीं होनी चाहिए। मेरा अपना विचार है कि जबतक अलग-अलग हिसाब-किताब रखा जाता है और निरुपयोगी तथा उपयोगमें आनेवाले पशुओंको खिलाने और उनकी व्यवस्था करनेके लिए अलग तरीके अपनाये जाते हैं तबतक किसी एकका नाम दूसरेको दिया जा सकता है। श्रीयुत वैद्य द्वारा अनुमोदित नियम अथवा सरकारी सहायताकी बातसे हमारा ध्यान प्रस्तुत विषयसे नहीं हटना चाहिए, क्योंकि प्रस्तावित तरीकोंके पक्षमें और उन्हें प्रयोगमें व्यावहारिक दिखानेके लिए जनमत तैयार करनेके लिए वैयक्तिक प्रयत्नोंकी बड़ी गुंजाइश है। हम निश्चय ही इतना पीछे हैं कि हमारे पास श्रीयुत वैद्य द्वारा बताई गई पद्धतिपर दुग्धालय और चर्मालय चलानेके लिए पर्याप्त संख्यामें प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता भी नहीं हैं। मेरे पास जो आँकड़े हैं, उनके अनुसार कमसे-कम १,५००० पिंजरापोल और गोशालाएँ हैं, जिनमें बिना और अधिक चन्दा लिये केवल कुशल प्रबन्ध द्वारा इन तरीकोंकी उपयोगिताकी जाँच की जा सकती है। इन तरीकोंको अपनाकर इन संस्थाओंके प्रबन्धमें क्रान्तिपूर्ण परिवर्तन लाया जा सकता है और आज प्रायः निर्जीव पड़ी इन संस्थाओंमें प्राण डाले जा सकते हैं। आजकल इन पिंजरापोलों तथा गोशालाओंकी जिस रूपमें व्यवस्था की जा रही है, उसमें अपनी आत्माको सन्तोष भले ही हो जाये, परन्तु गोरक्षा नहीं हो रही है। विद्वान लेखककी इस स्पष्ट उक्तिका कि वैदिक एवं ब्राह्मण कालमें गोहत्याको प्रोत्साहन दिया जाता था, पण्डित सातवलेकर द्वारा, जिन्होंने पिछले ३५ वर्षोंसे अधिक वैदिक साहित्यका गम्भीर अध्ययन किया है; एवं आचार्य रामदेव द्वारा, जो यह दावा करते हैं कि वह इतिहासकार हैं और उन्होंने भारतवर्षके प्राचीन इतिहासका आलोचनात्मक अध्ययन किया है, बड़ा खण्डन किया जायेगा। परन्तु व्यावहारिक पुरुषों एवं महिलाओंको ऐतिहासिक अंशसे कोई सरोकार नहीं है। सम्भवतः उन्हें मेरी तरह यह आशा करके सन्तोष होगा कि वैदिक कालके हमारे पूर्वजोंका ज्ञान इतनेतक ही सीमित नहीं था कि वे निरीह पशुओंको बलि चढ़ाकर श्रेष्ठ बननेकी चेष्टा करते या गोमांससे अपनी स्वाद तुष्टि करते।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-६-१९२७

१. यहाँ नहीं दी जा रही हैं।

४२६. क्षणिक आनन्द या शाश्वत कल्याण?

एक पत्रलेखकने मेरे पास अखबारकी एक कतरन भेजी है, जिसमें [अमेरिकाकी] नई दुनियामें बच्चोंके अपराधोंसे सम्बन्धित लोमहर्षक घटनाओंका विवरण है। और उन तरीकोंका भी जिक्र है जिनके द्वारा लड़कियाँ अनीतिपूर्ण ढंगसे अपनी विषयवासनाकी तृप्ति करती फिरती हैं।

लिखा है कि एक चार सालके लड़केने अपनी माँको गोली मार दी, इसलिए कि उसने उस लड़केको दियासलाईकी डिब्बीके साथ खेलनेसे मना किया था। जब पुलिसने उसे डाँटा फटकारा तो वह जरा भी न सहमा। 'आप लोगोंको शूटकर दूँगा' उस लड़केने पुलिसवालोंको भी धमकी दी और लाशकी जाँच करनेवाले अधिकारीने उससे सवाल किये तब तो वह उसपर इतना उत्तेजित हो उठा कि पास पड़ा हुआ छुरा लेकर उसे भोंकनेके लिए झपटा। कहा जाता है कि अमेरिकामें शायद ही कोई ऐसा दिन बीतता हो जिस दिन किसी लड़के या लड़की द्वारा किये गये अपराधकी खबर न सुनाई देती हो। यह भी कहा जाता है कि अमेरिकाके कई कालेजोंमें तो आत्महत्याकी अथवा अपराधकी अपनी अलग समितियाँ होती हैं। और इस वर्णनका और भी भयंकर अंश यह व्यक्त करता है कि कई लड़कियाँ — उन कालेजोंमें पढ़नेवाली लड़कियाँ भी जिनमें केवल लड़कियाँ ही पढ़ती हैं — इतनी स्वच्छन्द हो गई हैं कि वे अपनी विषयवासनाको तृप्त करनेके लिए भाग खड़ी होती हैं।

आजकल अखबारवालोंको पाठकोंके लिए सनसनीखेज समाचार देनेके लिए जब ऐसी सच्ची खबरें नहीं मिलती जिनसे कहानियाँ गढ़ सकें, वे मनगढ़न्त कहानियाँ बना लेते हैं। इसलिए ऐसी खबरोंपर जैसी कि मैंने साररूपमें यहाँ दी है, बिना सोचे-समझे विश्वास कर लेना कठिन है। परन्तु यदि हम इन खबरोंमें काफी अत्युक्ति भी मान लें, तो भी इसमें सन्देह नहीं कि अमेरिकाके लड़के-लड़कियों में अपराधोंकी संख्या काफी बढ़ी हुई है, इस हदतक कि हमें उस सभ्यतासे, जो निःसन्देह इस बुराईके लिए जिम्मेदार है, सावधान हो जाना चाहिए। हम यह मान लेते हैं कि बच्चोंमें इन बुराइयोंके होते हुए भी पश्चिम अपने खास ढंगसे प्रगतिशील है। हम यह भी मान लेते हैं कि वहाँके समझदार लोग इस बुराईसे बेखबर नहीं हैं, बल्कि उसे दूर करनेके लिए वे दृढ़तासे प्रयत्न भी कर रहे हैं। फिर भी हमें यह तो तय ही करना होगा कि क्या हमें इस सभ्यताका आँख मूँदकर अनुकरण करना चाहिए? [ठीक तो यह होगा कि] समय-समयपर पश्चिमसे हमारे पास आनेवाली इन भयंकर खबरोंको सुनकर हम जरा ठहर कर इस बातपर विचार करें और अपने आपसे पूछें कि यदि आखिरकार हम अपनी सभ्यताको ही दृढ़तापूर्वक अपनाये रहे तो क्या बेहतर नहीं होगा। और हमें [दो संस्कृतियोंका जो] तुलनात्मक ज्ञान सुलभ है उसके प्रकाशमें अपनी सभ्यताको जाँचकर उसमें से जानी बूझी बुराइयोंको दूर करके उसीको सुधार लेना क्या अच्छा नहीं है? क्योंकि इसमें सन्देह नहीं है कि यदि पश्चिमके

सामने अपना एक बड़ा सवाल खड़ा है, जो उसकी अपनी ही सभ्यताका प्रतिफल है, तो हमारी अपनी सभ्यताकी समस्याएँ भी किसी प्रकार कम गम्भीर नहीं है, जिनको हमें सुलझाना है।

शायद इस सन्दर्भमें इन दोनों सभ्यताओंकी तुलना करना यदि बेकार नहीं तो अनावश्यक ही है। हो सकता है कि पश्चिमने शायद अपनी परिस्थिति और आवोहवाको देखते हुए तदनुसार ही अपनी सभ्यता गढ़ ली हो। और उसी प्रकार हमने भी अपनी परिस्थितिके अनुसार अपनी सभ्यताका विकास किया हो और दोनों ही अपने-अपने दायरेमें अच्छी हों। पर यह तो हम बेखटके कह सकते हैं कि उपरोक्त प्रकारके अपराध और मनमानी हरकतें हमारे यहाँ लगभग असम्भव हैं। मैं समझता हूँ कि यह हमारी शान्तिमूलक शिक्षा और उस आत्मनिग्रहके वातावरणके कारण है, जिसके बीच हमारा लालन-पालन होता है। लेकिन यदि हमें आधुनिक विवेकहीन अमर्यादित आचरणके झोंकोंसे इस प्राचीन सभ्यताको बचाकर जीवित रखना है तो उस कायरतासे, जो बहुधा शान्तिमूलक शिक्षासे आती है और उस हीनताकी भावनासे जो संयम तथा निषेधके परम्परागत वातावरणसे उत्पन्न होती है, किसी न किसी प्रकार छुटकारा पा लेना चाहिए। इधर आधुनिक सभ्यताका सबसे प्रधान लक्षण है मनुष्यका अपनी आवश्यकताओंको अन्धाधुन्ध बढ़ाते जाना, तो प्राचीन पूर्वीय सभ्यताका मुख्य लक्षण है इन आवश्यकताओं या कामनाओंपर कठोर प्रतिबन्ध लगाना और उनको सख्तीसे मर्यादित करना। इस आधुनिक अथवा पाश्चात्य अतृप्तिका मुख्य कारण है [जीवनके] भविष्यमें और इसी कारण ईश्वरीय शक्तिमें सजीव श्रद्धाका अभाव; पूर्वी या प्राचीन सभ्यताके संयमकी जड़ उस श्रद्धा और विश्वासमें है, जो कई बार अनिच्छासे भी, हमें [जीवनकी] भावी स्थिति और ईश्वरीय सत्ताके अस्तित्वमें करना पड़ता है। यदि हम लेना चाहें तो उपरोक्त संक्षिप्त वर्णनसे चेतावनी ले सकते हैं कि पश्चिमके अन्धानुकरणसे हमें बचना चाहिए, जो बहुधा भारतके शहरी जीवनमें और खासकर शिक्षित वर्गोंमें पाया जाता है। आधुनिक आविष्कारोंके कुछ तात्कालिक और शानदार परिणाम जरूर ऐसे हैं, जो इतना चकित कर देनेवाले हैं कि उनके प्रति लोभ संवरण कर सकना कठिन है। लेकिन मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि मनुष्यका सच्चा पुरुषार्थ और विजय तो इसी संवरणकी सफलतामें है। एक क्षणिक आनन्दके बदले इस समय हम अपने शाश्वत कल्याणको गँवा देनेकी जोखिम भरी स्थितिमें हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २-६-१९२७

४२७. 'वेदमें चरखा'

औंधके निवासी पण्डित सातवलेकरने १९२२ में 'वेदमें चरखा' नामक पुस्तिका लिखी थी, और जब मैं यरवदा जेलमें विश्राम कर रहा था, तब उस पुस्तककी एक मानार्थ प्रति मुझे दी थी। तब मैंने इस पुस्तकके पृष्ठोंपर बड़े चावसे सरसरी नजर डाली थी। परन्तु मैंने यह सोचा कि इस तथाकथित उन्नतिके युगमें यह जानकर कि वेदोंमें भी चरखेका उल्लेख है, हमको क्या लाभ होगा। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि हमारे आदिम युगके पूर्व पुरुष जैसे बहुत-से काम अपनी कुटीरोंमें करते थे वैसे ही कातने और बुननेका काम भीं किया करते थे। परन्तु आज हम यह काम नही करते। मैंने जल्दबाजीमें यह निर्णय किया कि पुस्तिकाका अधिक व्यावहारिक महत्त्व नही है और इसे एक किनारे फेंक दिया। अब जब मैं बीमारीके बिस्तरपर बीमार पड़ा हूँ, मुझे यथाशक्ति शान्तिसे अध्ययन करनेका अवसर मिला है। पण्डित सातवलेकरकी एक अन्य पुस्तकने, जिसके सम्बन्धमें मैं आगे कुछ और बताऊँगा मेरा ध्यान उनकी कृतियोंकी ओर आकृष्ट किया है। और उन्होंने इस उपर्युक्त पुस्तककी एक और प्रति मुझे कृपा करके भेजी है। मैंने देखा है कि इसका दूसरा संस्करण निकल चुका है। इस बार मैंने यह पुस्तक और भी ध्यानसे पढ़ी है। मैं देखता हूँ कि लेखक द्वारा वेदोंसे उद्धृत मन्त्र केवल यही तथ्य हमारे सामने प्रस्तुत नही करते कि उन दिनों हमारे पूर्वज कताई एवं बुनाई करते थे अपितु सम्भवतः चरखेको नये रूपमें हमारे सम्मुख रखते हैं। यह लेखक द्वारा उद्धृत 'ऋग्वेद' १०, ५३-६ की ऋचा है, जिसे कतैयों और बुनकरोंका मूलमन्त्र कहा जा सकता है:

> तंतुं तन्वन् रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः
> पथो रक्षधिया कृतान्। अनुल्वणं वयत
> जोगुवामपो मनुर्भव जनय दैव्यं जनम्।। ऋः १०।५३।६

मैं इसका स्वतन्त्र अनुवाद यहाँ दे रहा हूँ:

> धागेको कातकर और चमकदार रंग देकर बिना गाँठोंके बुन लो। और इस तरह बुद्धिमान् लोगों द्वारा प्रशस्त पथकी रक्षा करो। और सुविचार करते हुए भावी सन्ततिको दिव्य-प्रकाशकी ओर ले चलो या (लेखकके अनुवादके अनुसार) दिव्य सन्तान उत्पन्न करो। यह सचमुच कवियोंका काम है।

यदि यह अनुवाद थोड़ा भी सही है और लेखकने अपनी पुस्तिकामें केवल अपना ही अनुवाद नही दिया है, अपितु ग्रिफिथका अनुवाद भी उद्धृत किया है; तो इस मन्त्रसे केवल इतना ही प्रमाणित नही होता कि वैदिक कालमें कताई एवं बुनाईका अस्तित्व था अपितु यह भी प्रमाणित होता है कि यह अभिजात वर्गसे लेकर निम्नतम वर्गके लोगोंका व्यवसाय था। यह विद्वान लोगों द्वारा प्रशस्त मार्गोंमें से एक था

एवं इसकी रक्षा करना कवियोंका कार्य था। जब मैंने अपने कविगुरु' यज्ञके रूपमें नम्रभावसे चरखा भेंट किया था तब मुझे कतई मालूम न था कि इनके पीछे सबसे पुराने कहे जानेवाले वेदका प्रमाण है। जो इस प्राचीन और पवित्र उद्योग एव कलाके पुनरुद्धार कार्यमें लगे हुए हैं, मैं उन सबका इस मन्त्रकी ओर ध्यान दिलाना हूँ। कताई यज्ञ करते हुए वे विचारपूर्वक इस मन्त्रका पाठ करें। इसे अपने मनमें सँजोकर रखें और अपने अग्रिम प्रमाणमें निराशाओ एव पराजयका सामना होनेपर भी अपना विश्वास विचलित न होने दें।

मै इस पुस्तिकासे एक और सुन्दर मन्त्र उद्धृत किये बिना नही रह सकता.

यो यज्ञो विश्वतस्तन्तुभिस्तत एकशतं देवकर्मेभिरायत.।।

इमे वयन्ति पितरा च आययु: प्रवयाप वयेत्यासते तते ।। ऋ १०। १३०। १

यह मन्त्र भी 'ऋग्वेद' १०। १३०। १ से उद्धृत है। इसका अर्थ है:

एक सौ एक कलाकार यज्ञमें काम कर रहे हैं। वह अनगिनत धागोंके द्वारा पृथ्वीतलपर फैला हुआ है। वहाँ बुजुर्ग सरक्षक उपस्थित हैं। वे इन प्रक्रियाओंको ध्यानसे देखते हुए कहते हैं। "यहाँ बुनो, वहाँ इसे ठीक करो।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि कताई और बुनाईको उस प्राचीन कालमें भी यज्ञ माना जाता था। बडे लोग उसकी सावधानीसे रक्षा करते थे। लेखकने पर्याप्त प्रमाण देकर यह सिद्ध किया है कि कताई और बुनाईका काम स्त्री-पुरुष दोनों ही करते थे। वास्तवमें यह उद्योग उतना ही व्यापक था जितना खेती। वह यह भी सिद्ध करते हैं कि उन दिनो सिलाई कला भी अत्यन्त समुन्नत थी। विभिन्न अवसरोंके लिए तथा विभिन्न राज्योके लिए विभिन्न पहनावोंका विधान था। यदि किसान लोग लँगोटी पहनते थे, तो राजवंशके लोगोंकी अपनी पोशाक थी। रगों, झालरों एव सुनहरी किनारियोंका भी वर्णन है। लेखकने यह भी दिखाया है कि कुछ एक सुन्दरतम रूपक कतैयों और बुनकरोंकी भाषासे लिये गये हैं।

सोच-विचार कर लिखी गई इस पुस्तिकासे और उद्धरण देनेका लोभ सवरण मुझे करना ही चाहिए। उसमें एक मन्त्र है जिससे प्रमाणित होता है कि सिपाहियोंको भी यह कार्य करना पडता था। वरके वस्त्र सदा वधू द्वारा तैयार किये जाते थे — जैसी कि आजकल भी असममें प्रथा है।

बहरहाल उसमें एक और चीज है जो लेखकने वैदिक साहित्यके अन्य अन्वेषकोंके अनुसन्धानके लिए छोड़ दी है। जहाँतक वे वेदोका अध्ययन कर सके हैं उन्हें ऊन और रेशमके समान सूतका एक भी पर्यायवाची शब्द नहीं मिला है। इसलिए वे यह कहनेमें असमर्थ हैं कि क्या उन दिनों हमारे पूर्वज केवल ऊनी और रेशमी वस्त्र ही पहनते थे या वे सूती धागेका भी आविष्कार कर चुके थे।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, २-६-१९२७

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

४२८. पत्र : हेलेन हॉसडिंगको

नन्दी हिल्स
२ जून, १९२७

तुम्हारा छोटा-सा मधुर पत्र मिला। लेकिन इस विचारसे कि तुम अभीतक ठीक नहीं हो, उद्विग्नता होती है। यदि तुम्हारा स्वास्थ्यलाभ कर पाना मेरे स्वास्थ्य-लाभपर निर्भर है, तब तो फिर तुम स्वस्थ हो ही चुकी होगी, क्योंकि मैं तुम्हें दो पत्र लिख चुका हूँ। उनमें मैंने तुम्हें लिखा था कि मेरी तबीयत सँभलती जा रही है। आशा है कि वे दोनों पत्र तुम्हें मिल गये होंगे। मैं स्वास्थ्यलाभ कर रहा हूँ, फिर भी मुझे अपना ध्यान रखना और काफी आराम करना जरूरी है। इसलिए मैं अपने पत्र-व्यवहारका अधिकांश काम लेटे-लेटे और बोलकर लिखवाकर करता हूँ। यह टाइप किया हुआ पत्र इसीलिए।

बीमारीके सम्बन्धमें तुम मेरा विचार तो जानती ही हो न? मैं बीमारीको जाने या अनजानेमें किये गये किसी पाप, जिसे मैं पाप कहता हूँ, या प्रकृतिके नियमोंको भंग करनेका परिणाम मानता हूँ। जब हम मानसिक सन्तुलन खो देते हैं, फिर वह कितना ही कम क्यों न खोया हो, तो शरीरमें भयानक उथल-पुथल पैदा हो जाती है और बादमें यह शरीरपर दिखाई देनेवाले दुष्परिणामोंको जन्म देती है। मैं जानता हूँ कि मैं ऐसे विकारों और उद्वेगोंसे, जिन्हें मैं यही नाम दूँगा, मुक्त नहीं हूँ। इसीसे मैं टूट गया। मैं इसके लिए ज्यादा काम और बेहद बोझ आदिको कारण बताकर अपनी अन्तरात्माको दबानेके लिए चिकनी-चुपड़ी बातें करके अपना मन नहीं समझाना चाहता। वरन् इसके विपरीत मैं यह जानता हूँ कि अधिक काम और बेहद बोझ चाहे वे किसी अच्छे उद्देश्यके लिए ही क्यों न हों, उतने ही निन्दनीय हैं जितने कि शराब पीना या सिनेमा देखना आदि हैं। परिणाम दोनों ही दिशाओंमें एक ही होता है। और यदि मुझमें मानसिक सन्तुलन है तो मुझे बिना कभी चूके यह मालूम होते रहना चाहिए कि कब काम किया जाये और कब न किया जाये; और काबू मेरा मनपर भी उतना ही होना चाहिए जितना कि शरीरपर। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि यह बात मुझमें नहीं है। मन बराबर मुझे गलत काम सुझाता है और आगे-आगे दौड़ता है। फिर इसमें अचरज क्या है कि मैं अभीतक पूरी तरह आरोग्यलाभ नहीं कर पाया हूँ। लेकिन यह सारी स्वीकारोक्ति तुम्हें यह बतानेकी भूमिका स्वरूप है कि तुम्हें अपनी बीमारीको गलेसे लगाकर नहीं रखना चाहिए और अपने दार्शनिक चिन्तनकी ऊँचाईसे डाक्टर, मौसम, खाना और अपने अलावा हर चीज और हर व्यक्तिको दोष नहीं देना चाहिए। हमें जो बात जैसी है, वैसी ही कहनी चाहिए।

तुम्हारा,

कुमारी हेलेन हॉसडिंग
जर्मनी

अंग्रेजी (एस० एन० १२५१०) की फोटो-नकलसे।

४२९. पत्र : एम० एम० गिडवानीको

नन्दी हिल्स
२ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपने 'यंग इंडिया' के लिए "द प्रेजेन्ट सिचुएशन" शीर्षकसे अपना लेख भेजा; यह आपकी कृपा है। परन्तु मुझे लगता है कि वह 'यंग इंडिया' के पाठकोंके लिए बहुत उपयोगी नहीं होगा। यह तो मानी हुई बात है कि वह लेख जन-साधारणके शिक्षणकी दिशा बतायेगा। लेकिन प्रश्न तो यह है कि शिक्षण-कार्यका नेतृत्व कैसे किया जाये और उसे कौन करे। 'यंग इंडिया' का प्रकाशन या तो नई विचार-धाराओंको सामने रखनेके लिए या पहले ही स्वीकृत योजनाओं और नीतियोंको कार्यान्वित करनेके लिए व्यावहारिक तरीके प्रकाशमें लानेके लिए होता है। आपको शायद लेखकी जरूरत पड़े, इसलिए मैं उसे वापस भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

प्रोफेसर एम० एम० गिडवानी, एम० ए०
सम्पादक
'सिन्धुदेश' कराची

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४२) की माइक्रोफिल्मसे।

४३०. पत्र : गोसीबहनको

नन्दी हिल्स
२ जून, १९२७

मुझे खुशी है कि आखिरकार मैंने तुमसे लिखवा लिया। मैं तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा करता रहा हूँ और पेरीन द्वारा उसकी सूचना मिल जानेके बादसे तो विशेष रूपसे। मैं स्वीकारोक्तिपर भी प्रसन्न हूँ। लेकिन सही स्वीकारोक्तिकी परिणति अपने तौर-तरीके बदलनेमें होती है। परन्तु देखता हूँ कि तुम अभीतक गुजरातीकी विदुषी नहीं बन सकी हो और ऐसा लगता है कि पितामहने जो बहुत ही अच्छी कापियाँ लिखाईके लिए भेजी थीं उनका भी तुमपर कुछ असर नहीं हुआ है। लेकिन मैं इस विषयमें फैसला नहीं कर सकता। यदि करूँ तो वह तो कुछ ऐसी ही बात होगी कि आप मियाँ फजीहत दूसरेको नसीहत। स्कूलके मास्टर मेरे सामने लिखाईके लिए कापियाँ रखते थे; फिर भी मेरी लिखावट तुम्हारी लिखावटसे भी बुरी है।

मैं समझा था कि ए० इ० की पुस्तक 'द इन्टरप्रेटर' नरगिसने भेजी है। वह तुम्हारे पत्रसे पहले मिल गई थी। मेरा खयाल है कि यही पुस्तक जयजीने मुझे जब मैं यरवदामें था तब भेजी थी। लेकिन खेद है कि तब मैं पुस्तक पूरी पढ़ सकनेसे पहले ही रिहा कर दिया गया था। इसलिए मैं इसे पढ़ूँगा और तुम्हें पुस्तकके सम्बन्धमें अपनी राय बताऊँगा।

हम रविवारको बंगलोर जा रहे हैं। तुम सब लोग वहाँ जरूर आओ। जुलाईमें एक खादी-प्रदर्शनी होनेवाली है। मैं उसके बारेमें मिठूबहनको लिख रहा हूँ। यदि तुम उस प्रदर्शनीके लिए आ सको तो तुम सब स्टाल सँभाल कर बंगलोरकी जनतापर एकदम पूरा-पूरा असर पैदा कर सकोगी।

मुझमें धीरे-धीरे ताकत आती जा रही है।

तुम्हारा,

श्रीमती गोसीबहन
ओमरा हॉल, पंचगनी

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४३) की फोटो-नकलसे।

४३१. पत्र : मीराबहनको

नन्दी हिल्स
३ जून, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। इससे मुझे दुःख और सुख दोनों हो रहे हैं; दुःख इसलिए कि फिलहाल वह आश्रम हर हालतमें मेरी निगाहसे गिर गया है और सुख इसलिए कि तुम इतनी नेक होकर भी इतनी बहादुर हो। तुम खुद अपने और गंगू दोनोंके लिए ढाल बन गईं। तुमने भाँग तैयार करनेकी क्रिया देखनेका निमन्त्रण स्वीकार करके शुरूमें जो गलती की वह बादकी तुम्हारी शीलयुक्त दृढ़ताको देखते हुए बड़ी नहीं रह जाती। तुम्हारा वह निमन्त्रण स्वीकार करना वैसा ही था जैसा कि एक शराब तैयार करनेवाले कारखानेमें ब्रांडी तैयार होते देखनेका निमन्त्रण स्वीकार करना। लेकिन उस निमन्त्रणको स्वीकार कर लेनेमें भी तो महाराजजीको खुश करनेकी तुम्हारी तीव्र उत्कण्ठा एक कारण थी और वह भूल किसी अक्षम्य या अनुचित जिज्ञासावश नहीं हुई थी। तुम्हारा पत्र पढ़कर सबसे पहले यह विचार आया कि मैं तार देकर तुम्हें, वालुंजकर और गंगूको तत्काल आश्रम छोड़ देनेको कह दूँ। फिर मैंने अपने मनमें सोचा कि ऐसा करना गलत होगा, खासकर उस हालतमें जब तुमने एक भद्दी परिस्थितिमें अपनी व्युत्पन्न मति और बहादुरीका प्रमाण प्रस्तुत किया है। इसलिए मैंने तुम्हें पत्र लिखने और अपने विचार तुम्हें बताने और उन परिस्थितियोंमें जैसा तुम्हें उचित मालूम दे, कदम उठाने देनेका फैसला किया।

तुमने जिस दृश्यका वर्णन किया है, उसे मैं उन लोगोंका एक बहुत ही अनुचित और अनैतिक कार्य भी मानता हूँ जिन्होंने तुम्हें प्रलोभनमें फँसानेकी और उस बुरी चीज (भाँग) को करीब-करीब तुम्हारे और बेचारी गंगूके गलेसे नीचे जबरन उतार देनेकी कोशिश की। और फिर तुम्हारा उस गन्दे पानीको बिखेरनेके लिए उनकी ओर अपनी पीठ फेर लेनेका दृश्य जितना कि एक मदिरालयके दृश्यसे मेल खाता है उतना एक ऐसे ब्रह्मचर्य आश्रमके दृश्यसे नहीं, जहाँ ईश्वरकी और मानवकी सेवा लक्ष्य मानी जाती है और जहाँ ब्रह्मचर्यका कड़ा पालन किया जाता है। तुम्हारा उपवास करना तुम्हारे शुद्धीकरणके लिए ठीक था। उसने तुम्हारी गलती, पहली भूलका परिमार्जन कर दिया है और यदि आश्रमके प्रबन्धक उससे कुछ चेतावनी लें तो वह एक नरम चेतावनी है। फिर भी मुझे ऐसा लगता है कि तुम्हें अपना [विरोध-प्रदर्शनका] काम आगे जारी रखना चाहिए इसके लिए राव साहब और आश्रमके अन्य अन्तेवासियोंसे तथा तुम चाहो तो स्वयं महाराजजीसे इस सम्बन्धमें दृढ़तापूर्वक बातचीत करो। अपने पहलेके एक पत्रमे[1] मैंने जहाँ तुम्हें यह लिखा था कि आश्रमको भाँगकी आदतसे छुटकारा दिलानेमें तुम्हारा कोई सरोकार नहीं है, अब तुमने उसके बाद हुई घटनाओंका जो वर्णन किया है, उसे देखते हुए तुम्हारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि या तो आश्रममे भाँगकी इति कर दो या फिर वहाँ अपनी उपस्थिति की इति कर दो। मैं स्त्री, पुरुष दोनोके लिए यह नितान्त असम्भव मानता हूँ कि वे भाँगके नशेमें डूबकर वासनापूर्ण उद्वेगोंसे मुक्त रह सके। वे बाहरी तौरपर शारीरिक नियन्त्रण भले ही रख सकें, यद्यपि भाँगके अपने अनुभवसे तो मुझे ऐसा लगता है कि जब मैं भाँगके नशेमें होता था, उस वक्त कोई भी आदमी या औरत मेरे साथ कोई भी खिलवाड कर सकता था। और अब चूँकि तुम्हारी आँखें खुल गई हैं, तो वे जबतक अपने तरीके सुधारनेको ईमानदारीके साथ तैयार नहीं हो जाते, आश्रमको कोई समर्थन देना तुम्हारे लिये अनुचित होगा। तुम कोई राज्य प्राप्त करनेके लिए भी अथवा इस खयालसे भी कि आश्रम ही एक ऐसा स्थान है जहाँ तुम अपना हिन्दीका पाठ्यक्रम पूरा कर सकती हो, आश्रमको अपना सहयोग न दो। तुम उनसे कह सकती हो कि तुम वहाँ उनपर अपने विचारोंको थोपनेके लिए नहीं हो, लेकिन एक मित्रके नाते तुम्हारे लिए उनका ध्यान एक ऐसी बुराईकी ओर आकर्षित करना लाजिमी हो गया है जिसकी तरफ तुम्हारा ध्यान जबरन खींचा गया। और जबतक वह बुराई खत्म नहीं कर दी जाती, सो भी तुम्हारे लिये नहीं वरन् उसे सचमुच बुराई मानकर, तबतक तुम निजी शिष्टाचार या हिन्दीकी शिक्षाके रूपमें निजी तौरपर अनुग्रह पानेके लिए वहाँ नहीं रह सकती। इसलिए यदि वे लोग भाँगकी बुराईके बारेमें तुमसे सहमति नहीं रख सकते, तो भी तुम उनकी मित्र ही बनी रहोगी, लेकिन शायद फिर आश्रममें नहीं रह सकोगी और न ही यान्दुजकर और गंगू वहाँ रह सकेंगे, क्योंकि वे भी उसी अनुशासनके अधीन हैं जिसके अधीन तुम हो। तुम जिस किसीको यह पत्र पढ़कर सुनाना चाहो, सुना सकती हो। मैंने

१. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २८-५-१९२७।

जो कदम उठानेका सुझाव दिया है, उसके औचित्यके सम्बन्धमें पहले वालुजकरसे बातचीत कर लो, क्योंकि वह एक बुद्धिमान व्यक्ति है। देखो वह क्या कहता है। और यह भी देखो कि गंगू क्या कहती है। वह तो एक सीधे सरल तेजस्वी बच्चे जैसी है। लेकिन बहुधा बच्चोंके मुँहसे ज्ञानकी बात निकल आती है और हो सकता है कि हमारे सुविचारित निर्णयकी अपेक्षा उसका सहज विवेक कहीं अच्छा हो। इस सबके बाद ऐसा लगे कि तुम्हें फिर मेरे सामने सब बात रखनी है, तो तुम जरूर वैसा कर सकती हो। यदि तुम जमनालालजीसे मशविरा करना चाहती हो, तो तुम उन्हें भी लिख सकती हो। मैं तुम्हारा पत्र और अपने इस पत्रकी एक नकल उन्हें भेज रहा हूँ, ताकि तुम्हें अधिक कुछ न कहना पड़े। जल्दबाजीमें, उद्विग्नतामें और निश्चय ही क्रोधमें तो कुछ भी मत करना; लेकिन जो भी कदम उठाना चाहो, विनम्र प्रार्थनाके बाद और खूब सोच-विचार करनेके बाद उठाना।

इस पत्रको बोलकर लिखा देनेके बाद मैं पूरी तरहसे हल्का और शान्त हो गया हूँ। जब इस तरहके तजुर्बे हमें अनायास ही मिल जाते हैं, तो वे ऐसी बहुमूल्य कसौटियाँ होती हैं जो भगवान अन्तरकी सूक्ष्मतर आवाजको सुन सकनेवाले लोगोंको देता है। यदि तुम्हारे पत्रसे, जो तुम्हारा अभिप्राय था उससे अधिक अभिप्राय मैंने निकाल लिया हो और आश्रमके लोगोंके प्रति कुछ अन्याय करनेका दोषी हो गया हूँ, तो तुम मेरी भूल सुधारनेमें संकोच न करना।

मैं आशा करता हूँ कि दो उपवासोंसे तुम्हारे शरीरपर अधिक असर नहीं पड़ा होगा। तुमसे फिर समाचार पानेकी आशा रखता हूँ। हो सकता है कि फिर उपवास करनेके अवसर आयें और मैं शायद तुम्हारे निकट न होऊँ; उस हालतमें जब तुम कमजोर और थकी-थकी महसूस करती होओ, खुद लिखनेकी कोशिश न करना; बल्कि किसी ऐसे व्यक्तिसे जो तुम्हारे पास हो, बोलकर मुझे पत्र लिखवा देना या जो भी कुछ उसे तुम बताओ मुझे उसीके मुताबिक सार लिख दिया जाये। ईश्वर सदैव तुम्हारे साथ रहे।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३३)से।
सौजन्य : मीराबहन

४३२. पत्र : व्यास रावको

नन्दी हिल्स
३ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

मैंने आपकी पुस्तिका 'फाउन्डेशन्स ऑफ स्वराज्य' और घोषणापत्र भी पढ़ लिया है। घोषणापत्रके सम्बन्धमें तो मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि मुझे तथ्य नहीं मालूम, किन्तु पुस्तिकाके सम्बन्धमें मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि मुझे उससे बड़ी निराशा हुई। आप खुद ही अपनी भाषाकी अलंकारितामें खो गये हैं। आपने एक ऐसे आन्दोलनका अध्ययन करनेकी तकलीफ नहीं उठाई, जो अपनी सीमामें किसी भी तरहसे कम महत्त्वका नहीं है; और आपने अपनी कल्पनामें उसकी जो तस्वीर खींच रखी थी, उसे खण्डित करना शुरू कर दिया। आपने आत्मबलकी सम्भावनाओं अथवा चरखेकी सम्भावनाओंको समझनेकी चिन्ता नहीं की है। अन्य अध्याय भी यह साफ जाहिर करते हैं कि जिन प्रश्नोंपर आपने विचार किया है उनका अध्ययन भी आपने बहुत सतही तौरपर ही किया है। आपने मुझे लिखा है कि आपको २५ सालकी सार्वजनिक सेवाका अनुभव है। मेरे लिये यह गहरे खेदका विषय है कि आपको इतने वर्षोंके अध्ययनका इतना कम फल मिल सका। दूसरी पुस्तकके सम्बन्धमें प्रतिष्ठित समाचारपत्रोंसे जो प्रमाणपत्र आपको मिले हैं, कृपया आप उनसे अपनेको प्रशंसित न मानें। मैं दूसरी पुस्तकके बारेमें कुछ नहीं जानता। लेकिन यदि वह भी उसी मसालेपर आधारित है, जो मेरे पास आपके द्वारा छोड़ी गई पुस्तकसे साफ झलकता है, तो वह कुछ बहुत अच्छी नहीं हो सकती। किसी भाषापर अच्छा अधिकार होना बहुधा सहायक होनेकी अपेक्षा जब उस अभिव्यक्तिकी सुविधाके पीछे गहरे चिन्तन और प्रयत्नपूर्वक किये गये शोधकार्यका बल नहीं होता, बाधक बन जाता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत के० व्यास राव
चेगलवाराय मुडाली स्ट्रीट
ट्रिपलीकेन, मद्रास

अंग्रेजी (जी० एन० ८४) की फोटो-नकल तथा एस० एन० १४१४४ से।

४३३. पत्र : रेहाना तैयबजीको

नन्दी हिल्स
३ जून, १९२७

प्रिय रेहाना,

तुमने कितना अद्भुत और काव्यात्मक स्नेहपत्र मुझे भेजा है। मुझे मालूम नहीं कि पिताजीको[1] लिखे मेरे पत्रकी पहुँचके पहले तुमने पत्र रवाना कर दिया था या पिताजीको लिखे मेरे पत्रमें जो मैंने स्मरण कराया था, यह पत्र उससे प्रेरित होकर लिखा गया। मुझे खुद अधिक नहीं लिखना चाहिए; और मुझे बहुत ज्यादा समयतक बोलकर भी नहीं लिखवाना चाहिए। इसलिए मैं तुमसे लम्बी बातचीत नहीं करना चाहता। लेकिन मैं तुम्हें यह तो एकदम बता देना चाहता हूँ कि यदि तुम आश्रममें प्रसन्नतापूर्वक आरामसे रह सकती हो, तो बावजूद इसके कि तुम अपने हाथसे कुछ काम नहीं करोगी, मैं तुम्हें आश्रममें रखना पसन्द करूँगा। हाथसे सूत कातना आखिर एक परीक्षा है; एक प्रतीक है; भीतर जो भाव है उसकी ईमानदारीसे की गई अभिव्यक्ति है; और मैं जानता हूँ कि तुम्हारे भीतर वे सब चीजें हैं। तब अगर तुम अपने किसी प्रकृतिगत दोषके कारणसे नहीं, लेकिन सूत कातनेके लिए शारीरिक कारणोंसे असमर्थ हो तो इससे क्या फर्क पड़ता है। अन्तरकी भावनासे किया हुआ काम असंख्य गुना मूल्यवान् है और बहुतेरे लोगोंकी उस औपचारिक सूत कताईसे अधिक मूल्यवान् है, जिसके पीछे हृदयकी भावना नहीं है। इसलिए तुम जब चाहो आश्रममें अपने ही घरकी तरह आ सकती हो और मुझे, जो तुम्हारी आवाज मुझे दे सकती है, निश्चय ही उस सबका लाभ मिलेगा। यदि तुम्हारी आवाज इतनी अच्छी और मधुर न होती, तो भी मैं आश्रममें तुम्हारा रहना उचित मानता। मैं जिस चीजकी कद्र करता हूँ वह है तुम्हारी भलमनसाहत, जो बिना तुम्हारे बोले भी असर पैदा कर सकती है। वह एक मीठी सुगन्धवाले फूलकी सुगन्ध जैसी है। उसके लिए किसी भी हरकतकी जरूरत नहीं होती, फिर भी वह सुगन्ध सर्वव्यापी और अचूक होती है और फूलको उसके स्थानसे हटा लेनेके बाद भी कुछ देरतक बनी रहती है। तो फिर शरीरके दूर हो जानेके बाद भी भलमनसाहतकी सुगन्ध तो अपेक्षाकृत और भी कितने ज्यादा समयतक बनी रहनी चाहिए। लेकिन इस बातको कि तुम्हें आश्रम अच्छा लगेगा और तुम्हारा शरीर आश्रम जीवनको सह सकेगा या नहीं अच्छी तरह सोच समझ लेना।

१. अब्बास तैयबजी।

क्या तुम मीराको पत्र लिखती हो? यदि नहीं, तो अब उसे लिखना। उसका पता है : भगवद्भक्ति आश्रम, रामपुर, रिवाड़ी (जिला गुड़गांव)।

सबको सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

कुमारी रेहाना तैयबजी
साउथ वुड
मसूरी

अंग्रेजी (एस० एन० ९६०२) की फोटो-नकलसे।

४३४. पत्र : अ० भा० च० संघके मन्त्रीको

नन्दी हिल्स
३ जून, १९२७

मन्त्री
अखिल भारतीय चरखा संघ
मिर्जापुर
अहमदाबाद

महोदय,

जमनालालजीको परिषद्का कार्यकारी अध्यक्ष बनानेके सम्बन्धमें प्रस्तावकी वैधताके कुछ अनिश्चित रहनेकी अवस्थामें मैं अध्यक्षकी हैसियतसे यह प्रक्रिया सुझाऊँगा कि जो भी चीज करवानेकी जरूरत है, उसपर पहले जमनालालजीकी उसी तरहसे सम्मति ले ली जाये मानो वे वैध रूपसे कार्यकारी अध्यक्ष हों और फिर उसके बाद उनका निर्णय मेरे सामने औपचारिक और अन्तिम अनुमोदनके लिए रखा जाये। इससे हर मामलेके गुण-दोषकी आलोचना करके जाँचनेका मेरा काम बच जायेगा।

स्वीकृति मिल जानेकी पूर्वाशामें महाराष्ट्र एजेन्सीको मैं दस हजार रुपये दे देनेके सम्बन्धकी बातका पूरी तरह समर्थन करता हूँ। और उसी तरह निपाणी, बेलगांव, और अन्य जगहोंपर मैंने जो चन्दा पहले ही इकट्ठा किया है, उसे भी कर्नाटक एजेन्सीको दे देनेके सुझावका अनुमोदन करता हूँ।

मैं समझता हूँ कि आपको, जमनालालजी तथा अन्य लोगोंको आगामी प्रदर्शनीके समय या उससे पहले जो भी तारीख सुविधाजनक लगे, उस तारीखको बंगलोरमें परिषदकी बैठक करना बिलकुल उचित बात है।

मैं रविवारको नीचे बंगलोर जा रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि मेरे ठहरनेके लिए जिस राजभवनका प्रबन्ध किया गया है, उसमें बहुत काफी स्थान है।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजी (एस० एन० १९७७८) की माइक्रोफिल्मसे।

४३५. पत्र : एम० एस० केलकरको

नन्दी हिल्स
३ जून, १९२७

प्रिय डाक्टर,

आपके पत्र हमेशा दिलचस्प और शिक्षाप्रद होते हैं। क्या मैं यह मतलब निकालूं कि मेरा गेहूँ या जौ, नमक, सोडा और सब्जियोंको बिलकुल ही त्यागकर केवल दूध, पानी और फलपर ही रहना आप ज्यादा पसन्द करेंगे। क्या मेरा ऐसा सोचना कि आप कच्चे दूधको उबले दूधसे ज्यादा बेहतर मानते हैं, सही है?

हाँ, मुझे जीवाणुशून्य अण्डों और उनके संवर्धन एवं किस्म सुधारनेके सम्बन्धमें आपकी बातकी खूब याद है। मैं स्वयं यहाँ भी पूछताछ करूँगा, लेकिन यदि आपके पास इस विषयपर कुछ साहित्य है, तो मैं उसका अध्ययन करना चाहूँगा। कुछ और विचार किये बिना मैं यह कहनेको तैयार हूँ कि मैं जीवाणुशून्य अण्डोंको जैसा कि आपने उनके बारेमें कहा है, उसी कोटिमें रखूँगा जिसमें दूध है। इसलिए मैं उनके बारेमें और उनकी किस्म सुधारनेके बारेमें आपसे और निर्देश लेना चाहूँगा।

ज्योतिषके महत्त्वके सम्बन्धमें मुझे आप किसी-न-किसी दिन विश्वास दिलाइए; क्योंकि मैं इस बातसे इनकार नहीं करता कि वह एक सच्चा विज्ञान हो सकता है। लेकिन मैं प्रत्येक विज्ञानके अनुसन्धान और प्रयोग मानवताके लिए लाभकारी नहीं मानता।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४५) की फोटो-नकलसे।

४३६. पत्र : गंगूबहनको

३ जून, १९२७

ब्रह्मचर्यादिका पालन आन्तरिक प्रेरणासे और आन्तरिक शक्तिकी वृद्धिसे ही हो सकता है। और इस शक्तिकी वृद्धि अभ्याससे ही हो सकती है। अभ्यास दो प्रकारका होता है। एक तो अच्छे ग्रंथोंका विवेक और विचारपूर्वक पाठन और दूसरा उच्च शिक्षणका अमल करनेका मुहावरा। बगैर अमलका अभ्यास निरर्थक हो जाता है, और मनुष्यमें घमण्ड पैदा कर देता है। इसलिये जो कुछ भी पढ़ा जाय उसका शीघ्रतासे अमल करना चाहिये, जैसा कि ब्रह्मचारिणीको अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह इत्यादिका पालन करना है इसलिये वह सूक्ष्मतम असत्यसे भी बचे — हिंसासे भी मानसिक, वाचिक और कायिकसे भी बचनेका बड़ा प्रयत्न करेगी इस तरहसे संग्रह मात्रका

त्याग करनेकी चेष्टा करेगी। शास्त्रमें हम पढते है शौर्य और सतोष आवश्यक नियम है। शौर्यके लिये दोनों विभाग बाह्य और आन्तरिक समझ लेना और समझ गये वैसे ही उसका पालन करनेका उद्यम करना। ऐसे ही सन्तोष हमें कोई गाली दे, मूर्ख कहे, हमारी कोई निंदा करे, तो भी हम उद्विग्न न बने। यह सतोषका एक लक्षण है। हमको भूख लगी है, खाना नही मिलता, ठड लगी है, पहनना नही मिलता तो भी सतुष्ट रहे। इस तरह जब हम जितना सीखें उसका अमल न करें, तबतक दूसरा कोई शिक्षण लेनेका इन्कार करे। उसी वस्तुको बढानेके लिये जो आवश्यक अभ्यास है उसको अवश्य करे, परतु किसी नई वातका ख्याल भी न करे। यह भी ब्रह्मचर्य धर्म है। क्योकि ब्रह्मचर्य मर्यादाकी परिसीमा है!

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य . नारायण देसाई

४३७. पत्र : श्री० दा० सातवलेकरको

३ जून, १९२७

इस मासका 'वैदिक धर्म' प्राय: खत्म किया। उसमें ब्रह्मचर्यका लेख है उस विषयमें थोडा कहना चाहता हूँ। "ब्रह्मचर्य"का अर्थ आपने केवल वीर्य रक्षा ही किया है और उसी बारेमें मर्दानी व्यवसाय जैसा कि शिकार इत्यादिका उल्लेख किया है। परदेशगमन उपनिवेशोकी स्थापना इत्यादि भी इसमें आता है। मेरा विनय है कि इसमें विचारदोष आते है। एक तो ब्रह्मचर्यका सकुचित अर्थ है जिस ब्रह्मचर्यके लिये आपने आरभमें 'अथर्ववेद'का मन्त्र दिया है — और जिस ब्रह्मचर्यसे मनुष्य मृत्युको तैर जाता है उस ब्रह्मचर्यकी परिसमाप्ति केवल वीर्य रक्षामें नही हो सकती है। और दूसरा दोष अतिव्याप्तिका है। ब्रह्मचर्यके साथ पराक्रम इत्यादिका कोई सबध नही है। ऐसा हम आजकल ससारमें देख रहे है। केवल वीर्यरक्षा ही यदि ब्रह्मचर्यका हेतु है तो मैंने मेरे एक पत्रमें बताया है कि यह कार्य एक शस्त्रक्रियासे ही चन्द मिनिटमें सिद्ध हो सकता है। इस शस्त्रक्रियासे मनुष्य नपुसक नही बनता है, परंतु केवल वीर्यकी रक्षा कर लेता है, और आरामसे कामादि भोग भोग लेता है, ऐसे मनुष्यके पराक्रममें, साहसमें, कोई न्यूनता नही आती है। परंतु मैं तो जानता हूँ कि आप इसको ब्रह्मचर्य नही कहेगे।

आपके ब्रह्मचर्यके लिये केवल कामादि विकारोंका पराजय करना यही साधन है। और वीर्यरक्षा उसका एक बड़ा तो भी गौण फल है। उसका सीधा और प्रधान फल ब्रह्म प्राप्ति है। और वही पराक्रम इस ब्रह्मचर्य मार्गमें ग्राह्य और धर्म्य है। शत्रुका पराजय, परदेश गमन, साहसके बड़े-बड़े कार्य इत्यादि फल प्राप्ति जब हजारों मनुष्योंको गैर ब्रह्मचर्य मिल सकती है तब वे क्यों निर्विकार रूप कष्ट साध्य ब्रह्मचर्यके लिये व्यर्थ प्रयत्न करेंगे, और कोई नही करता है ऐसा मैंने तो खूब देख

लिया है। जर्मन सिपाही, अंग्रेज सिपाही, इत्यादिसे बढ कर ज्यादा पराक्रमी शूरवीर महान योद्धे हम कहांसे पायेंगे? उनके लिये वेश्या गमनका कानूनी प्रबन्ध किया जाता है। सैकड़ों नही पण हजारों निर्दोष युवतियोंको बलिदान इन सिपाहियोंके कामाग्निमें दिया जाता है, और इस बलवान देश रक्षक क्षत्रियोंकी कोई अवज्ञा नहीं करते हैं परंतु सुशिक्षित सभ्य नरनारीयों उन लोगोंपर न्योच्छावर करते हैं क्षत्रिय इत्यादि विशेषणोंका उपयोगमें स्वेच्छासे और मेरा अभिप्राय बतानेके लिये नहीं करता हूं। मेरी दृष्टिसे यह कोई योद्धे नही है! इनको मैं देश रक्षक नही समझता हूं। और इनकी स्तुति करनेसे धर्मकी ग्लानि होती है। परंतु आधुनिक सभ्यतामें इन लोगोके लिये स्तुति वाचक विशेषणका ही प्रयोग होता है।

अब आइये भारतवर्षमें। पठाण, शीख और गुर्खा यह तीन आज बलवान योद्धे माने जाते हैं। तीनोंके लिये वैश्यागमनका वही प्रबंद है जो जर्मनी इत्यादिके लिये। और साम्राज्यमें इन लोगोंका बड़ा स्थान है यह तो आप जानते ही हैं। शास्त्रमें भी देखें तो क्षत्रियोंक्षका व्यभिचार क्षंतव्य माना गया है। यह सब लिखनेका तात्पर्य यह है कि आपका वेदादि शास्त्रीका इतना गहरा अभ्यास है उसका संपूर्ण फल जनताको मिले। अगर ऐसा फल मिलना है तो शास्त्रको आधुनिक अनुभवके साथ मिलाकर खूब सात्विक निरीक्षण करके शुद्ध दोहन करना आवश्यक है। और तो इसके बारे में बहुत लिखना चाहता हूं परंतु इतना ही लिखनेसे आप मेरे कहनेका रहस्य समझ लेंगे। शक्तिका भी बहुत संग्रह मेरे पास नही है। यह भी ज्यादा न लिखनेका कारण है। आपके ज्ञान और सत्यशीलताके प्रति मेरा बड़ा आदर है और इन्होंने मुझे इतना लिखनेको प्रेरा है।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

४३८. पत्र: अ० भा० च० संघके मन्त्रीको

नन्दी हिल्स
४ जून, १९२७

प्रिय महोदय,

आपके ३१ तारीखके पत्रके सिलसिलेमें मैं पहले ही कह चुका हूँ कि परिषदकी सम्मति मिल जानेकी पूर्वाशामें कर्नाटक एजेन्सीको रकमें दे दी जायें, बशर्ते कि जमनालालजी उसपर अपनी सम्मति दे दें।

महाराष्ट्रके सम्बन्धमें जमनालालजी जो कहते हैं, वही किया जाना चाहिए। लेकिन मेरा सुझाव है कि श्रीयुत दास्तानेको पूरी तरह सन्तोष हो जाना चाहिए कि उस निर्णयके पीछे विवेक है। जो काम पहले ही शुरू किया जा चुका है, उसे पक्का करनेमें ही बुद्धिमानी है इस बातपर वे ध्यान देंगे।

सतीशबाबूका पत्र प्रचारित कर दिया जाये। उनके आग्रह करनेसे ऐसा जाहिर होता है कि परिषद की यथासम्भव शीघ्र बैठक करने की जरूरत है।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजी (एस० एन० १९७७९) की माइक्रोफिल्मसे।

४३९. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

नन्दी हिल्स
४ जून, १९२७

मेरे प्यारे भाई,

'क्रॉनिकल' ने जो असंयत उद्‌गार आपतक और आपने मुझतक पहुँचाए हैं, उनसे मुझपर कोई असर नहीं पड़ता है। निश्चय ही आप यह आशा नहीं रखते कि रास्ता पूरी तरह शान्तिपूर्वक तय हो जायेगा। ऐसे नगण्य विरोध तो सामने आते ही रहेंगे। लेकिन मैं जानता हूँ कि आप उनसे विचलित नहीं होंगे। आपको भारतीय जनताके एक बहुत बड़े बहुमतका ठोस समर्थन प्राप्त होगा।

दो तीन दिन पहले मैंने आपको एक छोटा-सा पत्र[1] भेजा था। आशा है कि वह आपको यथासमय मिल गया होगा। ईश्वर आपका मार्ग-निर्देश करे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५८) की फोटो-नकलसे।

४४०. पत्र : एस० डी० नादकर्णीको[2]

नन्दी हिल्स
४ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे खुशी है कि आप तथाकथित अस्पृश्योंके लिए एक स्थानीय सार्वजनिक मन्दिरके[3] प्रवेशद्वार खुलवानेके लिए मित्रोंको राजीकर रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि सोचे हुए प्रस्तावको आगामी बैठक सर्वसम्मतिसे पासकर देगी और यदि बैठकमें लोग उसे पासकर देंगे, तो वे लोग इतने दिनोंसे दबाकर रखे हुए लोगोंके प्रति

१. देखिए "पत्र वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको", १-६-१९२७।

२. कारवारके कार्यकर्ताओंकी तरफसे गांधीजीकी अस्पृश्यों और मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर राय लेनेके लिए लिखे एक पत्रके जवाबमें।

३. विठोबा मन्दिरके नामसे विख्यात।

न्यायकी अपेक्षा स्वयं अपने प्रति अधिक न्याय करेंगे। मेरी राय तो यह है कि हमारे मन्दिरोंको भगवानने त्याग दिया है; और चूँकि हम अपने देशभाइयोंके एक भागके प्रति आसुरी व्यवहार करते हैं, इसलिए भगवानने अपनेको अस्पृश्य, अनुपगम्य और अदृश्य बना लिया है। भगवान हमारे मन्दिरोंमें केवल तभी पुनः प्रवेश करेगा जब हम न केवल मन्दिर वरन् अपने हृदय भी अपने उन देशभाइयो और समान धर्मावलम्बियोंके लिए उन्मुक्त कर देंगे।

यद्यपि 'यंग इंडिया' के लिए आपका यह पत्र मुझे उतने ऊँचे स्तरका नही लगता जैसे कि आपके मेरे पास कुछ पहले कृपापूर्वक भेजे गये पत्र, मैं जितनी जल्दी हो सके इसे प्रकाशित करनेकी सोच रहा हूँ।[1] इसका कारण कुछ और नही तो केवल मुझ पर की गई वे सदाशययुक्त और सद्भावपूर्ण करारी चोटें ही समझिए जो इस उद्देश्यसे की गई हैं कि वे चोटें मेरे सिवा औरोंपर भी लगें और कुछ असर पैदा करें।

मैं आशा करता हूँ कि मेरा सन्देश बैठकके समयतक पहुँच जायेगा। मुझे आपका पत्र कल शाम ही मिला और मैं लौटती डाकसे आपको सन्देश भेज रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

श्री एस० डी० नादकर्णी
कारवार
(उत्तरी कनारा)

अंग्रेजी (एस० एन० १४६१७) की फोटो-नकलसे।

४४१. पत्र : रामदास गांधीको

४ जून, १९२७

संघर्ष तो करना ही पड़ेगा। संघर्ष करनेमें ही पुरुषार्थ है। उसीसे हमारे व्यक्तित्वका निर्माण होता है। इसलिए निडर रहकर संघर्ष करते ही रहो। कभी हिम्मत न हारना और पूरी शक्तिसे संघर्ष करनेके बावजूद यदि शत्रु हमें धराशायी कर दे तो उस समय खिन्न न होना। फिर कमर कसकर सामना करना। यदि हमारी पराजयमें हमारा कोई हाथ न हो तो अपनी ऐसी पराजयमें लज्जित होनेका कोई कारण नहीं है। क्योंकि यह पराजय है ही नहीं। स्वप्नदोष न होने पाये इसके लिए खूब सावधान रहना चाहिए और यदि रातको किसी समय उत्तेजित हो जाओ, आलस्य किये बिना तुरन्त उठ खड़े होना चाहिये। उठकर ठण्डा पानी पी लो, ठण्डे पानीमें बैठ जाओ। गुह्येन्द्रियपर एक लोटा ठण्डा पानी उँडेल दो। बहुत बार इधर-उधर चक्कर लगाने और रामनाम जपनेसे मन शान्त हो जाता है। इसके

१. यंग इंडिया ३०-६-१९२७ में "ऑन बिहाफ ऑफ अनटचेबल्स" शीर्षकसे प्रकाशित।

अतिरिक्त जब हम खाली बैठे हों तब भीष्मादि अखण्ड ब्रह्मचारियोंका ध्यान करें और उनके मनोबलका विचार करें। यदि ये बहुत दूरके लगें तो एन्ड्रचूज, पीयर्सन, किचिन आदिके चरित्रका विचार करें। ये भी दूर मालूम हों तो विनोबा, बालकृष्ण, सुरेन्द्र, छोटेलाल और कृष्णदास ये पाँच तो हमारे पास ही उपस्थित हैं। इनके सिवा भारतके दूसरे लोगोंके दृष्टान्त भी दिये जा सकते हैं और यदि ये ऐसा कर सकते हैं तो मैं भी अवश्य कर सकूँगा, ऐसी धारणा मनमें बाँध लेनी चाहिए। 'गीता' का पाठ तो यहाँ हमेशा होता रहता है; उसके अर्थपर समय-समयपर विचार करते रहनेसे खूब शान्ति मिल सकती है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

४४२. पत्र : शारदाबहन कोटकको

४ जून, १९२७

चोरोंके प्रश्नके सम्बन्धमें तुमने ठीक लिखा है। मैंने सवाल किया उसका यह मतलब न था कि तुम फौरन उसका कोई प्रभावपूर्ण उपाय बताओ। मैंने तो सभी बहनोंको जाग्रत कर देनेकी दृष्टिसे पूछा था। पुरुषोंको स्त्रियोंकी रक्षाके अपने धर्मका पालन करते ही रहना है। किन्तु पुरुषोंका शरीर भी स्त्रियोंके शरीरकी तरह काँचकी चूड़ीके समान ही है — फिर भले पुरुषरूपी ये चूड़ियाँ ज्यादा कठोर हों और ज्यादा चोट सहन कर सकती हों। लेकिन यदि यह चूड़ी टूट जाये तो उस स्थितिमें स्त्रियोंको क्या करना है, इसका विचार तो स्त्रियोंको कर ही लेना चाहिए। स्त्री-पुरुष दोनोंमें एक ही आत्मा है। उसमें जातिभेद, लिंगभेद या देशभेदसे कुछ अन्तर नहीं पड़ता। किसी वीरांगनाकी जाग्रत आत्मा, हीन पुरुषकी सुप्त आत्मासे हजार गुना अधिक तेजस्वी हो सकती है। इसलिए आत्मजागृति और आत्मबल बढ़ानेकी होड़में तो, लूला, लंगड़ा, निर्बल-सबल, स्त्री-पुरुष, बूढ़ा-जवान या बालक कोई भी क्यों न हो, सब समान रूपसे भाग ले सकते हैं। घोर अँधेरी रात भी हमारे चर्म-चक्षुओंके लिए ही बाधारूप है, किन्तु यदि हमारे पास दिव्य-चक्षु हों तो उनका घोर अँधेरी रात, हथियार या मोटी लाठी क्या कर लेगी? और यदि घोर अँधेरी रातको कोई राक्षस जैसा मनुष्य राक्षसी हथियारोंसे सज्जित होकर हममें से किसीके सामने आ खड़ा हो, दूसरे सब व्यक्ति सो गये हों, मर गये हों या भाग गये हों, उस समय यदि रामनाम मुँहपर न आये तो हमारा सुबह-शाम रामनाम जपना तो व्यर्थ ही माना जायेगा। ऐसी विपत्तिके समय हमें रामनाम याद आये और मदद दे सके इसीलिए तो आलस्य युक्त रहने, थके हुए होने या आँखें नींदसे मुँदी जा रही हों उस समय भी हम सवेरे-शाम नियमसे रामनाम लेते हैं। यह सम्भव है कि काफी अभ्यासके

बाद यह नाम हर समय हमारे होठोंपर रहे, इतना ही नहीं किन्तु हृदयमें भी अंकित हो जाये।

रानीपरज स्त्रियाँ हमसे ज्यादा निर्भय हैं। ये स्त्रियाँ रातको भी जहाँ चाहे चली जाती हैं वे अपनी रक्षाके लिए पुरुषोंपर निर्भर नहीं रहतीं। यह सही है कि उन्हें दूसरे प्रकारके भय रहते हैं, पर मैं तो चोर आदिके भयके विषयमें ही लिख रहा हूँ। रानीपरज स्त्रियोंको अपने शीलकी परवाह नहीं होती यह कहना भी ठीक नहीं है। जिन्हें अपने शीलकी परवाह है, वही भयभीत रहती है यह मानना भी उचित नहीं है। आश्रममें इस समय हम जिस भयसे त्रस्त हैं वह शीलभंगका भय नहीं है। हम दुनियामें हो रही शील भंगकी घटनाओंकी गिनती करें तो हमें मालूम होगा कि बलात्कारके उदाहरण गिने-चुने हैं। शीलभंग स्त्री और पुरुष दोनोकी इच्छासे होता है। तथा जिनका मन स्थिर है, विकार रहित है उनका शीलभंग असम्भव है। यह बात दो तरहसे सही है: एक तो शास्त्र कहता है, और उसका यह कथन मानने योग्य भी है कि जिसका मन पूर्णतया पवित्र है उसका मन उसके शरीरकी रक्षा करता है—जिस प्रकार सीताके मनने उसके शरीरकी रक्षा की थी। यह तो तुम्हें मालूम होगा ही कि रावण सीताजीके साथ बलात्कार नहीं कर सका। ऐसा नहीं है कि उसमें पशु-बल न था, किन्तु वह जानता था कि यदि वह सीताजीके शरीरका मलिन स्पर्श करेगा तो उसका शरीर उसी क्षण भस्म हो जायेगा। और इसीलिए उसने अनेक उपायोंसे, प्रपंचोंसे भय दिखाकर सीताजीकी सहमति प्राप्त करनेका प्रयत्न किया। किन्तु सीताजीके मनोबलके सामने भला उसका यह प्रयत्न क्या काम आता? दूसरे, जिस स्त्रीके मनमें विकार नहीं है उस स्त्रीपर बलात्कार हो भी जाये तो उसका शीलभंग नहीं होता। वह निर्लेप रहती है; न तो जगत उसके ऊपर कुछ कटाक्ष कर सकता है और धर्म तो उसे कोई दोष देगा ही नहीं। इसलिए पवित्र-हृदय स्त्रीको शीलभंगका भय तो कभी करना ही नहीं चाहिए; उसे तो यह विश्वास रहना चाहिए कि यदि उसका मन अचल है, तो शरीरकी पवित्रता भंग हो ही नहीं सकती। जंगलमें रहनेवाले लोग शहरवासियोंकी अपेक्षा विकारोंके वशमें कम होते हैं। उन्हें इन विकारोंके वश होनेसे लिए समय ही कम मिलता है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि वह सब सोच-समझकर पवित्र रहते हैं, पर जिस प्रकार हम सहज रूपसे निरामिषाहारी रहते हैं उसी प्रकार वे भी सहज रूपसे पवित्र रहते हैं। जंगलोंमें जहाँ-जहाँ अपवित्रता है वहाँ व्यक्तियोंका पतन दोनोंकी इच्छासे ही होता है।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

४४३. तार: ब्रिटिश भारतीय संघको[1]

[४ जून, १९२७ या उसके पश्चात्]

बिआस[2]
जोहानिसबर्ग

मेरी जोरदार सलाह है कि सम्मिलित कार्रवाई करे।

गांधी

अंग्रेजी (एस० एन० १२३५७) की फोटो-नकलसे।

४४४. पत्र: रामेश्वरदास पोद्दारको

नन्दी दुर्ग, मैसूर
[५ जून, १९२७ से पूर्व][3]

भाई रामेश्वरजी,

आपका पत्र मिला। मेरा स्वास्थ्य अच्छा होता जाता है। चिंताका कोई कारण नही है। शकररावजीके लडकेके देहातकी खबर ठीक दी। मै उनको और उनकी धर्म-पत्नीको आश्वासनका पत्र भेजा है। तुम्हारी शांतिके लिए मै क्या लिखूं? इद्रियोकी निग्रह करनेके लिए ही हमारा जन्म है ऐसा माना जाए यही परम पुरुषार्थ है और उसी कारण दुःखसे साध्य है। सतत प्रयत्न करनेसे हमारे विकारोंको हम जीत सकते हैं। आपका मन किसी न किसी अच्छे कार्यमें रोक देना चाहिए, और इसी तरहसे शरीरको भी। मन निसयमी रहता है तभी विकारवश हो सकता है। 'गीताजी' का अभ्यास बडे परिश्रमसे क्यो न किया जाए? और मूल ग्रंथ समझनेके लिए संस्कृतका अभ्यास क्यो न किया जाए? जब दुकानके काममें रहनेका न रहे या दुकानमें बेकार बैठनेका रहे उस समय चर्खा या तकली क्यो न चलाई जाए? उद्यमसे मनुष्य

१. ३ जून, १९२७को ए० आई० काजी द्वारा दिये गये तारके जवाबमें जो ४ जूनको मिला था। तार इस प्रकार था: "ट्रान्सवालके भारतीयोंका कांग्रेससे अलग होना हमारे उस समुदायकी एकता नष्ट करना है, जिसकी आम सभा इतवारको जोहानिसबर्गमें होनेवाली है, नितान्त आवश्यक है कि आप तत्काल ऐसे कदमके विरुद्ध संघको तार दे दें।"

२. ब्रिटिश भारतीय संघका तारका पता।

३. गांधीजी नन्दी हिल्ससे नीचे बंगलोर ५ जून, १९२७को आये थे।

स्थूल पहाड़को जैसे काटता है इसी तरहसे उद्यमसे विकारके पहाड़ोंको भी अवश्य काट सकता है। इसलिए सतत उद्यम कीजिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २०५) की फोटो-नकलसे।

४४५. "चरखेमें मधुर संगीत"

उपर्युक्त लेख[1] मुझे जैसा मिला है यहाँ मैंने उसे वैसा ही छाप दिया है। भाई करसनदास चितलियाने एक विज्ञापन द्वारा चरखेपर निबन्ध आमन्त्रित किये थे; अपने इस विज्ञापनके उत्तरमें उन्हें जो लेख मिले थे, यह उन्हींमें से एक है। उन्होंने इसे विशेष अच्छा समझकर रख छोड़ा था, और पिछले वर्ष मुझे दिया था। मैंने उसे यह सोचकर रख लिया था कि किसी समय इसे छापूँगा और आज मैं उसे पाठकोंके सामने पेश कर रहा हूँ।

यह लेख २१-९-१९२१ को लिखा गया था। वह जमाना और था और आजका जमाना और है। जमानेके जोशमें उस समय बहुतसे लोग चरखेका गुणगान करते थे। इसलिए यदि 'वनवासी'[2] की दृष्टि 'नवजीवन' पर पड़ती हो और वे इस टिप्पणीको पढ़ें, तो मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि क्या वे आज भी वही बात कह सकते हैं जो उन्होंने १९२१ में कही थी? सन् १९२१ में जिन लोगोंको चरखा प्रिय लगता था; उन्हींको वह अब अप्रिय मालूम होता है। कहीं बनवासी भी उन्हीं लोगोंमें से तो नहीं है? यदि ऐसा हो और वे चाहें तो अब चरखेकी निन्दा भी लिख भेजें। यदि उसकी भाषा अच्छी होगी तो मैं उसे जरूर छाप दूँगा, क्योंकि मैं चरखेके पक्षमें एक भी झूठे प्रमाणपत्रका संग्रह नहीं करना चाहता। यदि चरखेको टिकना होगा तो वह सिर्फ अपनी निजी शक्तिसे ही टिक सकता है। यदि उसमें अपनी शक्ति न हो तो मैं उसकी तारीफमें अनेक कविताएँ लिखवाकर छापूँ तो भी वह आगे नहीं बढ़ सकता। यदि उसमें सचमुच शक्ति होगी तो चरखा चलानेवाले किसी ग्रामीणका ग्रामीण भाषामें दिया हुआ अनुभव भी उसके समर्थनके लिए काफी होगा। और 'नवजीवन' का प्रत्येक पाठक जानता है कि आज तो ग्रामीण भाषामें चरखेका समर्थन हो भी रहा है। चरखा धीरे-धीरे किन्तु बराबर, आगे बढ़ता जा रहा है।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ५-६-१९२७

१. यहाँ नहीं दिया गया है।
२. लेखकने उक्त लेख इसी नामसे लिखा था।

४४६. राष्ट्रीय शिक्षा

ठेठ नैरोबीसे एक भाईने एक पत्र लिखा है जिसका सार यह है:

राष्ट्रीय शिक्षा आगे प्रगति नही कर सकती इसका कारण यह है कि राष्ट्रीय शालाओमें विद्यार्थियो को ऐसा कुछ नही सिखाया जाता जिससे वे आगे चलकर अपने पैरोपर खडे हो सकें। यदि उन्हे खेतीका काम सिखाया जाये तो यह कठिनाई दूर हो सकती है। उन्हें चरखा चलाना तो सिखाना ही चाहिए। राष्ट्रकी तरह शालाओमें भी खेतीको प्रथम और चरखेको दूसरा स्थान प्राप्त होना चाहिए।

इस टीकापर 'नवजीवन' में पहले विचार किया जा चुका है। किन्तु अखबारोमें हुई चर्चाको याद रखनेका रिवाज नही है। इसलिए जब कभी इस तरहके प्रश्न उठते हैं तब उनपर पुन. विचार करना पडता है। यह माननेका कोई कारण नही कि राष्ट्रीय शिक्षा की गति खेतीके कामकी शिक्षाकी व्यवस्था न होनेके कारण मन्द हो गई है। राष्ट्रीय शिक्षाकी गति जिस हदतक मन्द हुई है, उस हदतक उसका कारण शिक्षक हैं। मैं यह बात कई बार कह चुका हूँ और लिख चुका हूँ और यह सिद्ध भी की जा सकती है। मैंने 'नवजीवन' में कई बार लिखा है कि जहाँ शिक्षक चारित्र्यवान्, लगनवाले, श्रद्धाशील और सजग हैं, वहाँ आज भी राष्ट्रीय शालाएँ अच्छी चल रही हैं।

इस तरह यद्यपि राष्ट्रीय शिक्षाकी गति मन्द होनेके लिए शिक्षक जिम्मेदार हैं, तथापि इस बारेमें उन्हे भी दोष नही दिया जा सकता, क्योंकि वे भी तो स्वय प्रतिकूल राजतन्त्रके और गुलामी पैदा करनेवाली शिक्षाके शिकार थे, और इन बुराइयोसे बड़ी मुश्किलसे मुक्त हुए थे। उनसे जितना योगदान किया जा सका, वे उतना देकर शान्त हो गये। राष्ट्रीय शिक्षाकी प्रगति अब तो तभी होगी जब वर्तमान राष्ट्रीय शालाएँ अपने तेजको प्रकट करेंगी और यदि वे टिकनेवाली हैं तो उनमे वह तेज अवश्य प्रकट होगा। सरकारी शालाओमें भी ऐसी शिक्षा कहाँ दी जाती है, जिससे उनके शिक्षित विद्यार्थी आगे चलकर अपने पैरोपर खड़े हो सकें? फिर भी वे तो ज्यो-की-त्यो चल ही रही है, क्योंकि हमारी आँखें तो उनकी चकाचौंधके कारण अंधी हो गई हैं। दूसरे, उस शिक्षामें यह लालच है कि उसे पाकर उनमें से कुछको तो चार या पाँच सौ या उससे ज्यादा रुपयेकी नौकरियाँ मिल सकती हैं। जुए या लॉटरीमें जो होता है वही इसमें भी होता है। किसी-न-किसीको तो हजार दो हजारका इनाम मिलेगा ही; हो सकता है, मुझे ही मिल जाये, हजारो आदमी इसी आशासे उसमें अपना भाग्य आजमानेके लिए तैयार हो जाते हैं। यही बात सरकारी शिक्षाके विषयमें भी है। किन्तु राष्ट्रीय शिक्षामें ऐसा कोई लालच नही है।

अब हम इस सुझावके गुण-दोषोंपर विचार करे। खेती जरूर हमारे देशका एक प्रधान धन्धा है। परन्तु वह जीवित है, नष्ट नही हुआ है। इसलिए उसके

पुनरुद्धारकी आवश्यकता नहीं है। हाँ, उसमें सुधारोंके लिए बहुत स्थान है। परन्तु खेतीमें सुधार करना राष्ट्रीय शिक्षा-शास्त्रीके बूतेके बाहरकी बात है, क्योंकि यह काम राज्यकी सहायताके बिना न तो आगे बढ़ सकता है और न सुचारु रूपसे किया जा सकता है। उसमें लाखों रुपयोंकी जरूरत है। लाखों रुपये तो प्रयोगोंमें ही लग जायेंगे। इसलिए मेरा तो निश्चित मत है कि यह कार्य जबतक स्वराज्य नहीं मिलता तबतक कदापि नहीं किया जा सकता। खेती-सम्बन्धी कानून देशकी आर्थिक स्थितिके अनुकूल होना चाहिए। आज वे ऐसे नहीं हैं। किसानोंको शिक्षा देनेके लिए स्थान-स्थानपर आदर्श फार्म होने चाहिए। किन्तु आज ये फॉर्म यहाँ नहीं है। किसानोंको कुछ खास सुविधाएँ मिलनी जरूरी हैं; वे नहीं हैं। कई बातोमें किसानोंको उनके खेतोंमें जाकर शिक्षा देनेकी व्यवस्था करनी होगी, किन्तु यह व्यवस्था भी आज नहीं की जा सकती। ये सब बातें उन जगहोंमें आज भी मौजूद हैं जहाँ लोकप्रिय और लोक-कल्याणकी दृष्टिसे चलाई जानेवाली सरकारें हैं, जैसे दक्षिण आफ्रिका, आस्ट्रेलिया आदिमें। इसलिए अब राष्ट्रीय शिक्षा-शास्त्रीके हाथोंमें तो वही दूसरा महत्त्वका काम बचता है, जिसे नैरोबीके ये भाई स्वीकार करते हैं — यानी चरखा। और चरखेको लेकर जो संस्थाएँ चलती हैं वे राष्ट्रीय शिक्षा लेनेवाले सभी युवकोंको अपने पैरोंपर खड़ा होने योग्य बना सकती हैं और सबको रोजी भी दे सकती हैं। परन्तु चरखा शास्त्रका शास्त्रीय ज्ञान उतना ही आवश्यक है जितना एक अच्छे नाईके लिए हजामत बनानेका अथवा एक पैमाइश करनेवालेके लिए जमीनोंकी नाप जोख करनेका ज्ञान। इस शिक्षाको प्राप्त करके ऐसे नवयुवक धीरे-धीरे निकल रहे हैं। और ज्यों-ज्यों खादीकी प्रवृत्ति बढ़ेगी, त्यों-त्यों अनायास राष्ट्रीय शिक्षाका क्षेत्र भी विस्तृत होगा।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, ५-६-१९२७

४४७. भाषण : चिकबल्लापुरमें[1]

५ जून, १९२७

मित्रो,

मैं आपके अभिनन्दनपत्र तथा थैलीके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं स्वागत-समितिको तथा चिकबल्लापुरके लोगोंको इस बातके लिए धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने नन्दीमें मेरा निवास इतना आरामदेह बनाया। मेरी हर जरूरतको पहले ही पूरा करनेके लिए अपनी शक्तिभर खुले मनसे खर्च किया है। मैं इस दयाको कभी नहीं भूलूँगा। लेकिन मैं यह भी जरूर कहना चाहूँगा कि मैसूरमें मेरे ठहरनेका एकमात्र कारण यह है कि मैं आपको देशके सबसे ज्यादा गरीब लोगों, आपके

१. बंगलोरके रास्तेपर।

मजदूरोंकी तरफसे अपना सन्देश देना चाहता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि चरखेका सन्देश आपके दिलोंमें स्थायी रूपसे घर कर सकेगा। मैं जब यह सुनूँगा कि आप स्वयं अपना खद्दर तैयार करते हैं और अपनी ही बनाई खादी पहनते हैं तभी सन्तुष्ट होऊँगा। मैं आशा करता हूँ कि चिकबल्लापुरमें आपके यहाँ अस्पृश्यताका नाम भी नहीं है। मैं अस्पृश्यताको हिन्दू-धर्मपर कलंक मानता हूँ। मुझे अपने देशवासियोंके एक अंशको अस्पृश्य मानने और उनसे वैसा व्यवहार करनेके लिए हिन्दू-धर्ममें कोई शास्त्र-प्रमाण नहीं मिलता। मैं आशा करता हूँ कि आप यह बात याद रखेंगे। आपकी सारी कृपाके लिए मैं फिर एक बार आपको धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-६-१९२७

४४८. पत्र : गंगाधर शास्त्री जोशीको

कुमार पार्क
बंगलोर
५ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

डा० गणनाथ सेन द्वारा आयुर्वेदके कुछ पारिभाषिक शब्दोंके अनुवादके सम्बन्धमें आपने उनको लिखे गये अपने पत्रकी एक नकल भेजनेकी कृपा की थी। पता नहीं डा० सेनने आपको उसका जवाब दिया भी था नहीं।

चूँकि आप आयुर्वेदका गहरा अध्ययन करनेवाले व्यक्ति मालूम होते हैं, क्या आप कृपया मुझे बता सकते हैं:

(क) आयुर्वेदीय चिकित्सा किस अर्थमें एलोपैथी चिकित्सासे ज्यादा अच्छी है?

(ख) आयुर्वेदके औषधि शास्त्रमें अथवा उसकी चिकित्सा अथवा शल्य-चिकित्साकी किसी अन्य शाखामें क्या कुछ खास शोधकार्य हो रहा है?

(ग) क्या आपने अथवा आयुर्वेदके किसी अन्य चिकित्सकने औंधके पण्डित सातवलेकर द्वारा सम्पादित 'वैदिक धर्म' के इसी अंकमें उद्धृत हृदयरोग, श्वेत कुष्ठ नाशन सूक्त—'कुष्ठ' नाशन 'सूक्त' में दिये गये नुस्खोंके उद्देश्यकी छानबीन की है अथवा उन नुस्खोंका परीक्षण किया है? यदि आपके पास वह पत्रिका नहीं है, तो मैं खुशीसे उसे आपके पास भेज सकूँगा।

हृदयसे आपका,

डा० गंगाधर शास्त्री जोशी
तिलक महाविद्यालय
पूना

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४७) की फोटो-नकलसे।

४४९. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

ज्येष्ठ सुदी ६ [५ जून, १९२७]

बहनो,

तुम्हारा पत्र मिला।

आज मैं बंगलोर पहुँच गया हूँ। कोई तकलीफ नहीं हुई। डाक्टर देख गये हैं; उनका कहना है कि महीने-भरमें मैं काफी अच्छा हो जाऊँगा।

रमणीकलाल भाईका कथन सत्य है। पुस्तकें तो बहुतेरी पढने लायक हैं। वे चाहे जिस पुस्तकको पसन्द करें। अन्तमें दारोमदार तो इस बातपर रहता है कि पढ़नेवाला उसे कितने उत्साहसे पढ़ता है। जो किताब पढ़ी जाये उसका कोई भाग समझमें न आये तो उसे कोई बहन यों ही न छोड़ दे, बल्कि बार-बार पूछकर समझ ले। एक ही चीज इस तरह समझनेसे और अनेक चीजें समझमें आ जाती हैं। मणि-बहनकी बनाई हुई चूड़ी मुझे बहुत प्रिय लगी है। मैंने सुझाव दिया है कि चूड़ी खादीकी नहीं, बल्कि सूतकी होनी चाहिए। राखी भी चूड़ी ही है और वह सूतकी होती है। सूतकी चूड़ीमे चाहे जितनी कला और चाहे जितने रंगोंका समावेश किया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि अपने पहननेकी चीजमें अपने हाथों भरी गई कलासे जो निर्दोष आनन्द मिलता है, वह लाखोंकी रत्नजटित चूड़ियोंसे नहीं मिलता।

मीराबहनसे कहना कि वह पढ़ना चाहे तो उसे नियमित रूपसे जेकी बहनके पास जाना चाहिए; जब मनमें आये तब जायें, ऐसा नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६५२) की फोटो-नकलसे।

४५०. पत्र : कुमीको

बंगलोर

ज्येष्ठ सुदी ६ [५ जून, १९२७]

चि० कुमी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे दुःखसे मुझे दुःख होता किन्तु उसे सहन करनेको कहनेके सिवा और सान्त्वना क्या दे सकता हूँ। चि० हरिलालका आखिरी पत्र पिछलेसे भी बुरा है। पर ऐसा समझकर कि वह तो रोगी है, वह जो कुछ लिखे उसे भुला देना तुम्हारा और मेरा धर्म है। मैं मानता हूँ कि किसी-न-किसी दिन उसे होश आयेगा। तुम दोनों बहनोंमें से कोई यह तो नहीं मानती न कि मैंने तुम्हारे या उसके विषयमें कहीं बात की है। तुम्हारे ऊपर जो बीता है उसके बारेमें मैंने हरिलालके

सिवा किसी औरसे बातकी हो ऐसा मुझे याद नही है। उसने चंचीके बारेमें जो लिखा है वह तो आश्चर्यमें डालनेवाला है। मैंने तुम सभी बहनोंको अपनी बेटीके समान माना है। हरिदासभाईने चचीकी सगाईके बारेमे मुझसे काफी बात कर ली थी। उससे अधिक सयानी लडकी ढूँढनेपर भी कहाँ मिल सकती थी। मुझे मालूम नही है, पर हो सकता है कि हरिलालके मनमें विवाहकी बात रही हो। यह सही है कि मैं विवाह जल्दी करनेके पक्षमें नही था। किन्तु इतना भी मुझे तुम्हे नही लिखना चाहिए। हरिलालके आक्षेपके बारेमें मुझे अपना बचाव भी नही करना है। पर तुम्हारे मनमें एक क्षणके लिए भी ऐसा विचार आये कि मैंने कोई ऐसा काम किया है जिससे तुम्हारा दुख बढ सकता हो, तो न आने देना। इसलिए इतना लिख दिया है। तुम दोनो बहनें बहादुर हो इस कारण मैं बिलकुल निश्चिन्त हूँ। मनुको आश्रममें लाने और वहाँ रखनेका प्रबन्ध तो कर लिया है। मेरी सलाह है कि उसे तुरन्त भेज दो। यदि चि० बली हरिलालके पत्र पढती रहती हो तो उसे यह पत्र भी पढा देना। पर यदि तुमने उसे हरिलालके पत्र न पढने देनेकी सावधानी रखी हो तो इस पत्रको पढानेकी भी जरूरत नही। यदि उसने हरिलालके पत्र पढे हो तो उससे दुखी न होनेके लिए कहना।

गुजराती (एस० एन० १२१९३) की फोटो-नकलसे।

४५१. भाषण : बंगलोरकी प्रार्थना-सभामें[1]

[५ जून, १९२७के पश्चात्]

मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ कुछ शान्ति और धीरजसे रहें। यानी, जब मैं शामको घूमनेके लिए निकलूँ, आप मुझे झुण्डोमें घेर न लें या मेरे पीछे-पीछे न चलें। मैं एक मरीज हूँ। और मेरी आवाज अभीतक मन्द है। मुझे अपना शारीरिक बल पुन प्राप्त करना है। मैं यहाँ आराम करनेके लिए आया हूँ। अच्छा होनेपर मैसूरकी जनताकी मुझसे जो कुछ थोडी बहुत सेवा बन पडेगी, आशा है कि मैं करूँगा। इसलिए जितने आरामकी मुझे जरूरत है, उतना मुझे आप कर लेने दें और मेरे शान्तिपूर्वक घूमनेमें खलल न डालें। यह तो हुई मेरे विषयकी बात। अब आपके विषयमें यह कहूँगा कि आप सब चाहे किसी भी धर्मके अनुयायी हो, यहाँ आकर प्रार्थनामें सहर्ष शामिल हो सकते हैं। पर इसके लिए एक दो शर्तें हैं। पहली शर्त यह है कि आपको प्रार्थनाके भावसे, प्रार्थनामय हृदयसे, प्रार्थनाकी मनोवृत्ति लेकर यहाँ आना चाहिए। हर व्यक्ति चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, या ईसाई अथवा अन्य किसी भी धर्मका अनुयायी हो प्रार्थनामें शामिल हो सकता है। श्लोकोंके पाठके बाद हम 'रघुपति राघव राजाराम, पतितपावन सीताराम' की धुन गाते हैं। इस धुनमें भी वे सब लोग शामिल हो सकते हैं, जिनकी आवाज अच्छी है ताकि हमारी प्रार्थना

१. महादेव देसाईकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से।

सस्वर हो और वह परमात्माको — अगर हमारी प्रार्थनाओंको सुननेवाला परमात्मा कहीं हो तो — प्रसन्न कर सके। एक शर्त और है। आप जानते ही हैं कि पतित-पावन सीतारामका क्या अर्थ है। इन शब्दों द्वारा हम उस परमात्मासे विनय करते हैं, जो पतित और दलितोंका उद्धारक है। इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आप यहाँ खादी पहनकर आयें, क्योंकि खादी पहननेसे आपका उन पतित और दलित भाइयोंसे एक सम्बन्ध जुड़ जाता है। उनकी सहायता करनेकी आपकी इच्छाके प्रत्यक्ष चिह्न स्वरूप मैं आप सब आबाल-वृद्धसे — सभी मतावलम्बियोसे कहता हूँ कि आप यहाँ खादी पहन कर आयें।

रघुपति राघव राजाराम
पतित पावन सीताराम

प्रार्थनाकी इस धुनको गानेके योग्य बननेके लिए आप कमसे-कम जो-कुछ कर सकते हैं, वह यही है कि आप लोग खादी पहनकर आयें। यह ऐसी प्रार्थना है जिसमें न केवल हिन्दू वरन् मुसलमान, ईसाई आदि सब लोग शामिल हो सकते हैं, क्योंकि यह किसी राजाकी प्रार्थना नहीं, राजाधिराजकी — देवाधिदेव की प्रार्थना है जिसकी हम सब पूजा करते हैं।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, १६-६-१९२७

४५२. तार : मीराबहनको[1]

६ [जून, १९२७][2]

तार मिला। जमनालालजी की सलाह हो, तो वालुंजकर व गंगू के साथ साबरमती जानेका सुझाव [देता हूँ]। अन्य व्यवस्था होनेतक वालुजकर तुम्हें नियमित रूपसे हिन्दी पढ़ायें। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३५)से।
सौजन्य : मीराबहन

१. मीराबहनके तारके जवाबमें जो इस प्रकार था : "३ जूनको पत्र लिखा था। जिसमें अरुचिकर बातोंके प्रकाशमें आनेके कारण आपने आश्रम त्यागकी बातका विचार लिखा था। उसके बाद जल्दी-जल्दी घटनाओंने मोड़ लिया। जो बातें सामने आईं वे तारसे जमनालालजीको लिखी और उन्हें तुरन्त आकर स्थितिकी जाँच पड़ताल करनेकी सिफारिश की। उनके आनेतक इन्तजार करूँगी; उसके बाद यदि मुनासिब हुआ तो मैं तुरन्त यहाँसे चल दूँगी। कृपया तारसे सलाह दीजिए कि कहाँ जाऊँ। सब ठीक। सस्नेह।"

२. देखिए अगला पत्र।

४५३. पत्र : मीराबहनको

६ जून, १९२६

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र बराबर मिल रहे हैं। लेकिन तुम्हारे लिये यह जान लेना ठीक रहेगा कि एक पत्र उसके बाद लिखे गये पत्रके बाद मिला। मैं समझ नही पा रहा हूँ कि उसे दो दिनकी देर कैसे हुई और वह कहाँ रुका रहा। क्या तुम पत्र खुद डाकमें छोड़ती हो, या यह काम कोई और करता है?

तुम जब चाहो जरूर पत्र लिखो। वहाँकी घटनाओंका क्रमिक विकास जाननेमें मेरी दिलचस्पी है। सोमवारके बाद मैं पत्र केवल तभी लिखूँगा जब लिखना जरूरी होगा।

तुमको जो अनुभव हुए हैं उनके बाद भी अगर सब ठीक चलता रहे, तो मुझे खुशी होगी। लेकिन मेरी समझमें नही आता है कि जबकि प्रमुख लोग अपनी बात पर जमते नही हैं और बहानेबाजी करते हैं, ऐसा कैसे हो सकता है। लेकिन तुम्हारे पास मेरा पूरा विस्तारसे लिखा हुआ पत्र है। मैं उसके उत्तरकी प्रतीक्षा करूँगा। भाँगसे अब समझौता नही हो सकता। लेकिन तुम स्वय ही जिस रूपमें परिस्थितियाँ तुम्हारे सामने आयेंगी उन सबका पूरा ध्यान रखते हुए निर्णय कर लोगी।

हम कल वहाँसे बगलोर चले आये। और यद्यपि कुछ थकान है जिसका सबब यात्रा नही है। नन्दीके पास एक जगह मुझे ठहरना पडा, वहाँके लोगोंने मेरे आरामका सब इन्तजाम भी किया था, रक्तचाप बिलकुल नही बढ़ा और न ही मुझे यात्राकी थकानका कोई और असर दिखाई दिया। कल डाक्टर आये थे। उन्होने कहा कि एक महीनेके अन्दर मुझे सामान्य दौरे करने योग्य तो हो जाना चाहिए। हाँ, ताबड़तोड गतिसे दौरा करने योग्य भले ही न हो पाऊँ।

मैंने यहाँका पता पहले ही दे दिया है। कुमार पार्क, बगलोर सिटी।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

यह पत्र समाप्त करते-करते तुम्हारा तार मिला। तारके लिए मानसिक रूपसे मैं तैयार ही था। मैं तार[1] दे चुका हूँ कि यदि जमनालालजीकी राय हो तो तुम्हे वालुजकर और गंगूके साथ साबरमती चले जाना चाहिए और जबतक कोई दूसरी व्यवस्था न हो जाये वालुजकर से हिन्दी सीखनी चाहिए। अब चूँकि गगूका तुमसे

१. देखिए पिछला शीर्षक।

इतना ज्यादा लगाव है, मैं चाहता हूँ कि तुम उसे तबतक अपनी छत्रछायामें रखो जबतक इसकी जरूरत हो। कुछ और जगहोंके बारेमें भी मैं पहले ही तुम्हें लिख चुका हूँ, लेकिन मैं कोई निर्णय लेनेकी जल्दबाजी नहीं करूँगा। यदि वालुजकर व गंगू तुम्हारे साथ न रहे तो अपना हिन्दी अध्ययन समाप्त करनेके लिए कहीं अन्यत्र जमकर रहनेसे पहले कुछ दिन मेरे साथ बिताना तुम्हारे लिये अच्छा हो सकता है। अब तो शायद तुममें इतना आत्मविश्वास आ गया होगा कि आश्रममें भी हिन्दी पूरी तरह सीख सको। मेरी रायमें तुम्हें जरूरत ऐसे व्यक्तिकी है जो तुमसे सिर्फ हिन्दीमें ही बातचीत करे। लेकिन मैं इस मामलेमें बहुत करके तो तुम्हारे मनकी बात देखकर ही कुछ फैसला करूँगा।

तुम्हें इन दिनों अपने जीवनके सबसे मूल्यवान अनुभव हो रहे हैं। 'गीता' के छठे अध्यायके नवें श्लोकका ध्यान करो।

समबुद्धिवाला व्यक्ति अच्छे और बुरे दोनों ही तरहके लोगोंके साथ एक जैसा व्यवहार करता है . . .[1]। उनकी बुरी बातोंका पता चल जानेपर भी हमें उनसे स्नेह करना चाहिए। लेकिन स्नेह और सम-व्यवहार केवल सेवा द्वारा व्यक्त होते हैं, उसीके द्वारा उन्हें व्यक्त होना चाहिए। तुम बुरे हो, लेकिन मैं तुम्हें अब उसी तरहसे स्नेह करता हूँ, जैसे जब तुम्हें अच्छा समझते हुए करता था। संक्षेपमें जीवनका लक्ष्य ऐसी स्थिति प्राप्त लेना है। "रॉक ऑफ एजेज क्लेफ्ट फार मी, लैट मी हाइड माइसेल्फ इन दी"

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३४) से।
सौजन्य : मीराबहन

४५४. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

कुमार पार्क
बंगलोर
६ जून, १९२७

प्रिय चार्ली,

यह पत्र तुम्हें शास्त्रीके दक्षिण आफ्रिका पहुँचनेतक ही मिल पायेगा। यद्यपि एक तरहसे उनके पहुँचनेपर तुमपर कामका जो भारी बोझ पड़ रहा है, वह कुछ हल्का हो जायेगा फिर भी मैं कह सकता हूँ कि प्रारम्भकी अवस्थाओंमें उनके आनेसे तुम्हारी जिम्मेदारियाँ बढ़ जायेंगी, क्योंकि तुम चाहोगे कि वे भारतीय तथा यूरोपीय दोनों ही दूषित तत्त्वोंसे बचाकर रखे जा सकें।

१. सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थ द्वेष्य बन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥

तुम्हारा तार मिला था उसके एक अंश यानी प्रागजीसे सम्बन्धित अंशका जवाब मैं तुम्हे दे चुका हूँ। इस बार तुमने मुझे तार भेजनेमें बहुत ही शानदार किफायत की है, और चावलकी मिलो और उनसे विटामिनोंके नाशसे सम्बन्धित तुम्हारी चेतावनीपर ध्यान देकर मैंने उसके प्रति अपनी प्रशंसा व्यक्त कर ही दी है।

पहले मैं तुम्हारे तारके उस अशपर विचार करना चाहता था जिसमे शास्त्रीजीको दावतोके खर्चके लिए मिलनेवाले भत्तोकी चर्चा है। लेकिन मैंने तुरन्त ही यह ताड़ लिया कि यह तो तुम्हारी घबराहटमें की गई एक भूल है। अगर ऐसा कहनेसे मेरा अभिप्राय ठीक व्यक्त हो रहा है तो मेरा अभिप्राय तुम समझ ही गये हो। वह तार भगवानके भोले भगत चार्लीका नही था वरन् ज्यादा सोच-विचार करनेवाले उस सी० एफ० एन्ड्रयूजका था, जिसके सोच-विचारने उसके दिमागपर इतना बोझ डाल दिया था कि घबराहटके कारण उसके मनमें सभी तरहकी काल्पनिक आशकाएँ पैदा कर दी थी। आखिर हमने शास्त्रीको उनके चरित्र, उनकी विद्वत्ता और उनकी सादगी तथा दस्तूर दिखावेसे उनकी अरुचिके कारण ही तो दक्षिण आफ्रिकाके लिए उन्हें उपयुक्त व्यक्ति माना है। जैसे कि यदि तुम शान-शौकतवाले आदमी बन जाओ और फैशन-परस्त होटलोमें लोगोको दावतें आदि देकर उनके जरिये उन्हे अपनी ओर खीचना चाहो और बेहतरीन कारोमें बैठकर घूमो-फिरो तो दक्षिण आफ्रिकामें तुम्हारा जितना ज्यादा अच्छा असर है वह सब खत्म हो जायेगा, ठीक उसी तरह मुझे पूरा विश्वास है कि यदि शास्त्री अपने लिये नही वरन् अपने उद्देश्यके लिए मित्र हासिल करनेके खयालसे शानदार दावतें देना शुरू कर देंगे, तो उनका सारा असर समाप्त हो जायेगा। आखिरकार क्या यह बेहतर नही होगा कि वे सचमुच ही एक गरीब शोषित देशके प्रतिनिधि दिखाई दें बनिस्वत इसके कि वे एक शक्तिशाली विदेशी और उस खर्चीली सरकारके कारिन्दे दिखाई दें जो अपने भारी खर्चोंके लिए करोड़ो मूक लोगोंको गरीब बनाती है। क्या सरकारका एजेन्ट होनेसे पहले उन्हे उनके भीतर जो मानव है उसका एजेंट नही होना चाहिए? क्या यही ज्यादा ठीक नही है?

मुझे उस विवादकी याद आती है जो १८८९ या ९० में सार्वजनिक समाचार-पत्रोंमें लन्दनके बिशप व उनके महलके खर्चीले रख-रखावके सम्बन्धमें लन्दनमें चल पडा था। मुझे उस सनसनीकी भी याद है जो उस समय पैदा हुई थी जब बिशपने अपना हिसाब-किताब सामने रखा, जिसमें उन्होने खर्चेकी मदमें नौकरोका और एक जोडी गाडी आदिका खर्च भी दिखाया था, जिसका औचित्य उन्होने यह कहकर सिद्ध किया था कि उन्हें राजाओं और लॉर्ड महोदयोके बीच उठना बैठना होता है, और उनके जीवनको प्रभावित करना होता है। यदि मुझे ठीक याद पड़ता है, तो खर्चके इस ब्यौरेके प्रकाशनसे बिशपने अपने बचावमें जो बातें कही थी, उनमे वे और भी ज्यादा उपहासास्पद बन गये थे। कल्पना कीजिए कि ईसा मसीह हीरो और रत्नोमे जड़ी पोशाक पहनें, सोनेके थालोमें परोसे भोजन, चुनिंदा पुरानी मदिराओ और खाद्य-पदार्थोंके साथ इस खयालसे खाते फिरें कि अपने समकालीन भोजन प्रेमियो और करोडपतियोको अच्छा लगे। लेकिन मुझे अब और अधिक कुछ नही कहना चाहिए।

मैं समझता हूँ कि तुम्हारी शिराओंको सन्तुलित बनानेके लिए और तुम्हें ताजगी देनेके लिए मैंने काफी कुछ तुम्हें लिख दिया है।

यद्यपि मैं स्वास्थ्य लाभकी दिशामें प्रगति करता दिखाई दे रहा हूँ, लेकिन दिमाग अब भी कुछ कमजोर ही है और जरासे भी दबावमें विभ्रान्त हो जाता है। अस्तु मैं प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ, हँसता हूँ और सब सहता हूँ। यदि इन तमाम वर्षोंमें उसने मुझे वह सब शक्ति दी जिसकी मुझे जरूरत थी, अब अगर शायद वह मुझे लाचार बेबस बनाकर मेरा अभिमान चूर करना चाहता है, तो करे!

तुम्हारा,

अंग्रेजी (एस० एन० १२३४७) की फोटो-नकलसे।

४५५. पत्र: मणिलाल और सुशीला गांधीको

बंगलोर सिटी
६ जून, १९२७

चि० मणिलाल और चि० सुशीला,

तुम्हारे पत्र अभीतक तो नियमपूर्वक आ रहे हैं। इस नियमका पालन होता रहे तो अच्छा होगा।

जिस स्टीमरसे शास्त्रीजी आ रहे हैं उसीसे यह पत्र भी तुम्हारे पास पहुँचेगा।

'गीता' का अनुवाद इस समय पाँच गुनी गतिसे चल रहा है। इसलिए तुम्हें खूब सामग्री मिलती रहेगी। तुम दोनोंको जो समझमें न आये वह मुझसे पूछ लेना।

मेरी तबीयत सुधर रही है। कल बंगलोरमें आ गया हूँ। नन्दीमें इस समय मेरे लिए ठण्ड ज्यादा पड़ रही है। यहाँ एक महीना तो रहूँगा ही। उसके बाद थोड़ा घूम सकूँगा, ऐसी आशा है।

शास्त्रीजीकी सेवा करना।

सुशीला टाइप बैठाना आदि काम सीख ले और ईश्वरकी कृपासे वह स्वस्थ रहे तो तुम्हें काफी मदद मिलेगी और मैं भी यही चाहता हूँ।

वहाँके एक-एक प्रश्नका बारीकीसे अध्ययन कर लेना तो तुमसे मैं जिस ज्ञानकी आशा रखता हूँ वह तुम्हें प्राप्त हो जायेगा।

अपना खर्च व अपनी टीप-टाप ऐसी न रखना जिससे दूसरोंको तुमसे द्वेष हो। लोगोंकी तुम्हारे साथ निभती नहीं है इसका कारण कहीं यही तो नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ११३३)से।
सौजन्य: सुशीलाबहन गांधी

४५६. सन्देश: श्रीनिवास शास्त्रीके स्वागतमें[1]

नन्दी हिल्स
७ जून, १९२७

मैं कामना करता हूँ कि आपकी सभाको सब तरहकी सफलता मिले। परम माननीय श्रीनिवास शास्त्री अपने कठिन कामकी शुरुआत सबसे अच्छे लोगोंके तत्वावधानमें कर रहे हैं। उनके साथ समस्त भारतकी सद्भावना है और दक्षिण आफ्रिकामें यूरोपीय लोग तथा हमारे देशभाई दोनों ही उनके कामसे आशा लगा रहे हैं। मैं जानता हूँ कि यदि कोई भी व्यक्ति यूरोपीयों और भारतीय प्रवासियोंमें परस्पर सद्भाव पैदा कर सकता है, तो निश्चय ही वे श्रीयुत श्रीनिवास शास्त्री हैं। ईश्वर उन्हें वह सब शक्ति और विवेक दे जिसकी दक्षिण आफ्रिकामें उन्हें जरूरत होगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-६-१९२७

४५७. पत्र: फीरोज पी० एस० तलियारखाँको

कुमार पार्क
बंगलोर
७ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। मैं यहाँ रविवारको नीचे आ गया हूँ। कृपया आप सोमवारके अलावा, जिस दिन मैं मौन रहता हूँ, किसी दिन भी चाहें आइये। मेरे लिए ४ बजेका समय सबसे अच्छा रहेगा। आशा है कि आप पहलेसे अच्छा महसूस कर रहे होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

फीरोज पी० एस० तलियारखाँ
३, रेजिडेन्सी रोड
बंगलोर

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९१७०) से।

१. यह सन्देश इस तारीखको श्रीमती सरोजिनी नायडूकी अध्यक्षतामें बम्बईके सर कावसजी जहाँगीर हॉलमें हुई एक आम सभामें पढ़ा गया था।

४५८. पत्र : रुस्तमजीको

कुमार पार्क
बंगलोर सिटी
७ जून, १९२७

भाईश्री रुस्तमजी,

आपका तीन तारीखका पत्र आज मिला। और आज ही मैंने समाचारपत्रोंमें पढ़ा कि मंचरशाहको[1] चार वर्षकी जेलकी सजा दी गई है, किन्तु उसने अभीतक उपवास छोड़ा नहीं है। भाई मंचरशाहमें गुण तो बहुत हैं पर उसमें हठ भी उतना ही है। जिस प्रकार वह आपका कहना नहीं मानता उसी प्रकार वह मेरा भी नहीं मानता। पिछली बार जब मैं नागपुर गया था तब उसके साथ मेरी काफी बातचीत हुई थी। उसे मैंने बहुत समझाया था कि वह उतावली न करे। पर मुझे लगा कि वह किसीकी बात सुननेवाला व्यक्ति नहीं है। लड़के जब बड़े हो जायें तब माँ-बापको उनसे आशा करना छोड़ देना चाहिए। सब अपने-अपने कर्मोंके अनुरूप आचरण करते हैं। माँ-बापको मित्रोंकी तरह उन्हें सलाह देनी चाहिए और वे न मानें तो शान्त रहना चाहिए। मेरे भी लड़के बड़े हैं। मेरा सबसे बड़ा लड़का मेरे कहनेमें नहीं है। मैं इस बातको सहन करता हूँ और उसका दुख भी नहीं मानता। आपको इस विचारसे लिख रहा हूँ कि इस बातसे आपको कुछ आश्वासन मिल सकेगा। मुझे अफसोस है कि आपको शान्त रहनेकी सलाह देनेके सिवा मैं और कुछ नहीं कर सकता। आप अपने आपको निराधार किसलिए मानते हैं? जो खुदापर भरोसा करता है वह निराधार नहीं है। लेकिन जो मनुष्यका भरोसा रखता है वह तो सचमुच निराधार है।

गुजराती (एस० एन० १२८२०) की फोटो-नकलसे।

१. मंचरशाह अवारी।

४५९. एक पत्र

[८ जून, १९२७ से पूर्व][1]

तुम्हारा प्रेम पवित्र नही है। वह स्त्री विवाहिता है। यदि तुम किसी भी तरह उसकी और उसके पतिकी सेवा करना चाहते हो, तो तुम्हें उस महिलासे हर प्रकारका सम्बन्ध तोड़ देना चाहिए। ऐसा करनेके लिए यदि तुम्हे भड़ौंच भी छोड़ना पड़े तो छोड़ दो। यह तुम्हारा धर्म है। इस समय प्रेमके नामपर जगह-जगह जो अधर्म चल रहा है उससे तुम बचो तो यह बहादुरीका काम माना जायेगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य: नारायण देसाई

४६०. तार: सत्याग्रहाश्रमको

८ जून, १९२७

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती

जमनालालजीको बताइए कि मीराबहनने तारसे सूचित किया है कि महाराज और अन्य लोग काश्मीर भाग गये हैं। फिर भी वे जायें और इस बातको नजरअन्दाज करते हुए कि प्रमुख लोग वहाँ उपस्थित नही हैं, धैर्यपूर्वक मामलेकी जाँच-पड़ताल करें। उन्हे विस्तारसे रिवाड़ीके पतेपर लिख रहा हूँ। यदि जमनालालजी जा चुके हों, तो यह तार डाकसे भेज दें। यही सब फिर तार से सूचित करनेकी जरूरत नहीं है।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३२)से।
सौजन्य: मीराबहन

१. साधन-सूत्रमें यह आठ तारीखको लिखे गये पत्रोंसे पहले दिया गया है।

४६१. पत्र : जमनालाल बजाजको

. . .[1] सुदी ९ [८ जून, १९२७][2]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा तार मिला। तुम्हें भेजा तार[3] आश्रममें मिला होगा। मीरा बहनने [भाँगके] पानीकी[4] घटनाके बारेमें जो लिख भेजा है वह भयानक है। वह सब तो तुमने मालूम कर ही लिया होगा। अतः मैं अब भविष्यके लिए ही सुझाव भेज रहा हूँ। महाराजजी आदि चले गये हैं, तो भी तुम्हें जो जाँच-पड़ताल करनी है सो अच्छी तरह कर लेना। इस घटनासे सम्बन्धित जो भी तथ्य प्रकाशमें आयें उनके बारेमें कुछ तो लिखना ही पड़ेगा। माँ-बापको चेतावनी दी जानी चाहिए। लोगोंको भी चेतावनी दी जानी चाहिए। वहाँ रहनेवाले स्त्री और पुरुष निर्दोष हों और थोड़े समझदार हों तो उन्हें वहाँसे जानेके लिए कहना चाहिए। वहाँके निर्दोष निवासियोंको सहायता देनेके लिए मीराबहनको कुछ समय रोकना हो तो रोक लेना। तुम्हें वहाँ ज्यादा समय रुकनेकी जरूरत नहीं होनी चाहिए। यदि मीराबहनको वहाँसे जाना पड़ता है, तो फिलहाल यह ठीक रहेगा कि वालुजकर और गंगूबहन उसके साथ रहें। गंगू बहनने मीराबहनका साथ ठीक पकड़ा मालूम होता है। लगता है कि गंगूबहन उससे बहुत सीख सकेगी। इस समय प्रश्न यह है कि ये लोग कहाँ जायें? यदि गंगूबहनको उसके पास न रहना हो तो मीराबहन तो कुछ समयके लिए मेरे पास आकर रहना चाहेगी। इससे उसे ज्यादा शान्ति मिलेगी और वह कुछ अपना अध्ययन भी कर सकेगी। किन्तु यदि तुम्हें लगता हो कि गंगूबहन वगैरा उसके साथ ही रहें तो इसके लिए इस समय मुझे साबरमती या वर्धा ही उपयुक्त मालूम होते हैं। तुम्हें कुछ विशेष सूझे तो विचार कर लेना।

मेरी तबीयत सुधरती जा रही है।

गुजराती (एस० एन० १०६०५) की फोटो-नकलसे।

१. तारीख अस्पष्ट है।
२. अगले शीर्षकसे
३. देखिए पिछला शीर्षक।
४. देखिए "पत्र : मीराबहनको", २३-५-१९२७ और ३-६-१९२७।

४६२. पत्र : मीराबहनको

कुमार पार्क
बंगलोर
८ जून, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारा तार और पत्र मिले। मैं अनुद्विग्न हूँ। इस भ्रष्टाचारसे हमें सिर्फ उसी तरह निबटना है जैसे कोई शल्यचिकित्सक उन फोड़ोंसे निबटता है, जो किसी गहरी जमी हुई अन्दरूनी बीमारीके लक्षण-स्वरूप होते हैं। मैंने जमनालालजीको अलगसे पत्र[1] लिखा दिया है। मुझे ऐसा तो लगा ही था कि तुम्हारे पत्रोंसे छेड़छाड़ की जा रही है। लेकिन मैंने उसे भी अच्छा ही माना, क्योंकि यदि उन लोगोंने तुम्हारे पाससे आनेवाले और तुम्हारे पास पहुँचनेवाले पत्रोंको खोल कर देखा है, तो उन्होंने उससे कुछ सीखा ही होगा।

मैंने जमनालालजीको सुझाव दिया है कि यद्यपि प्रमुख लोग चले गये हैं, फिर भी आपको अपनी जाँच जारी रखनी चाहिए और व्याधिके मूल स्रोतकी गहराईसे छानबीन करनी चाहिए। हो सकता है कि वे सीधे-सादे लोग हों; निश्चय ही वे मूर्ख तो हैं। यदि उनकी आँखें खोली जा सकती हों, तो तुम्हें यह करना चाहिए और उन्हें यह सलाह देनी चाहिए कि वे आश्रम छोड़ दें — किसी अन्य बहानेकी आड़में नहीं, वरन् यथासम्भव स्पष्ट रूपसे यह कहकर कि भ्रष्टाचारका पता लगने पर वे आश्रम छोड़ रहे हैं। और तुम जो भी कुछ करो, उसमें जमनालालजीका निर्णय ही अन्तिम हो। वे बहुत ही समझदार हैं, मामलोंकी तहतक पहुँचते हैं, निर्भय और न्यायनिष्ठ हैं; और उन्हें उस संस्थाका और भारतके लोगों तथा भारतकी आम बातोंका तुमसे ज्यादा अनुभव है। इसलिए उनके निर्णयके मुताबिक चलना समझदारीका काम होगा।

यदि अन्तिम रूपसे यही तय हो कि तुम्हें तुरन्त आश्रम छोड़ देना चाहिए, तो मैं तुम्हारे लिये, यदि तुम्हारे साथ बालुजकर और गंगू हैं, तो केवल साबरमती या वर्धा चले जानेकी बात ही सोच सकता हूँ। तुम्हारे आखिरी पत्रके बाद मुझे और भी ऐसा लगता है कि गंगूबहनको तुमसे जबरन् दूर नहीं करना चाहिए। चाहे यह एक संस्थाका मामला हो या एक व्यक्तिका, हमारे आचरणकी संहिता वही है। उसे वैसे ही संरक्षण और देखरेखकी जरूरत है जैसी कि स्वराज्यके पूरे मसलेके लिए; बशर्ते कि उस समय व्यक्तिपर ध्यान देना स्पष्ट कर्त्तव्य हो जाये।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

और अभी मुझे ऐसा लगता है कि गंगूबहनको तुम अनायास मिल गई हो; और शायद तुम्हीं उसकी उद्धारक सिद्ध होओ।

सस्नेह,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३७)से।
सौजन्य : मीराबहन

४६३. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

कुमार पार्क
बंगलोर
८ जून, १९२७

आपका सुन्दर और सख्त पत्र मिला। मुझे यह सोचकर दुःख होता है कि आपको एक ठीक प्रस्ताव बनाकर दे सकने योग्य कोई भी व्यक्ति नही मिला। अस्तु अब आपको प्रस्ताव मिल गया है। मुझे लिखें कि उससे आपका ठीक काम चल रहा है या नहीं।

अनगिनत जाने अनजाने मित्रोंकी दुआओंका शुक्र है कि जो मेरा स्वास्थ्य बेहतर होता दिख रहा है और मैं सशक्त हो रहा हूँ। आशा है कि अगले महीनेतक मैं काफी हदतक अपना काम पुनः करने लगूँगा। मैं अपने स्वास्थ्यकी ठीक हिफाजत कर रहा हूँ। क्योंकि मैं चाहता हूँ कि आप अपने मद्यपान-विरोधी आन्दोलनमें सफलता पायें ताकि मैं वहाँ आ सकूँ और आप जो काम कर रही हैं उसके अच्छे परिणामोंसे लाभ उठा सकूँ। लेकिन आपकी सफलतासे बहुत बड़ी-बड़ी सम्भावनाओंकी आशा है। और यदि ईश्वर तथा उसकी अतिशय नेकीमें मुझे कोई विश्वास न होता तो मैं गन्दी बस्तियोंमें सेवाकार्य करनेवाले आप-जैसे एक अपेक्षाकृत अनजाने कार्यकर्त्तासे देशके ऊँचे और शक्तिशाली लोगोंतक पहुँच पाने और उनके हृदय परिवर्तित करनेकी आशा न करता। ईश्वर आपको ऐसा कर सकनेकी सारी शक्ति दे।

मुझे खुशी है कि आपने पण्डित जवाहरलाल नेहरूको लिखा है और मुझे पूरी आशा है कि वे यह काम कर सकेंगे।

हृदयसे आपका,

कुमारी म्यूरियल लेस्टर
किंग्सले हॉल, पॉविस रोड
बो, ई–३ लन्दन

अंग्रेजी (एस० एन० १२५०८) की फोटो-नकलसे।

४६४. पत्र : बेसिल मैथ्यूजको

आश्रम
साबरमती[1]
८ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

श्री के० टी० पॉलने अभी-अभी आपका पत्र खुद मुझे दिया है।

आपके सवालका[2] मेरा यह जवाब है:

सत्य और प्रेम संयुक्त रूपसे मेरे जीवनके पथ-प्रदर्शक सिद्धान्त रहे हैं। जिस परमेश्वरकी व्याख्या नहीं की जा सकती, यदि कदाचित् उसका कुछ भी निरूपण किया जा सकता हो, तो मैं तो यही कहूँगा कि ईश्वर सत्य है। सिवाय प्रेमके उस तक पहुँच पाना असम्भव है। प्रेमकी पूर्णरूपेण अभिव्यक्ति केवल तभी की जा सकती है जब मनुष्य अपनी खुदीको शून्यमें मिला दे। शून्यवत् होनेकी यह प्रक्रिया ही किसी स्त्री या पुरुष द्वारा किया जा सकनेवाला सर्वोत्तम प्रयत्न है। यही एकमात्र ऐसा प्रयत्न है जो करणीय है और यह केवल उत्तरोत्तर वर्धमान आत्मसंयम द्वारा ही सम्भव बनाया जा सकता है।

सदैव नवयुवकोंकी सेवामें

श्री बेसिल मैथ्यूज
सम्पादक, 'वर्ल्डस यूथ'
३, रू जनरल डफोर, जेनेवा

अंग्रेजी (एस० एन० १२५१४) की फोटो-नकलसे।

४६५. पत्र : हेनरी ए० एटकिन्सनको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती (भारत)[3]
८ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

श्री के० टी० पॉल, आपका पिछली ५ सितम्बरका पत्र मुझे अभी कल ही दे पाये हैं। उन्होंने मुझे बताया कि आप सम्भवतः इस साल सर्दियोंके मौसममें भारत-यात्रा करेंगे। यदि ऐसा हो तो शायद मुझे, मिलनेपर आपके प्रस्तावपर अधिक

१. स्थायी पता।
२. देखिए परिशिष्ट ६।
३. स्थायी पता।

विस्तारसे बातचीत करनेका सौभाग्य प्राप्त हो सके। फिलहाल मैं इतना ही कहूँगा कि एक धार्मिक सभा करनेका विचार मुझे जाने क्यों काफी धार्मिक-जैसा प्रतीत नहीं होता। मैं यह पूरी विनम्रतासे कह रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

डा० हेनरी ए० एटकिन्सन
७०, फिफ्थ ऐवन्यू
न्यूयार्क

अंग्रेजी (एस० एन० १२५१५) की फोटो-नकलसे।

४६६. पत्र: हैरी एफ० वार्डको

आश्रम
साबरमती[1]
८ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपके पिछली ११ मार्चके पत्रके लिए धन्यवाद। आपके लेख मिले हैं। उन्हें मैं जितनी जल्दी हो सकेगा, पढ़ूँगा। जैसा कि शायद आपको मालूम हो गया होगा, अपने दौरेके दौरान मैं अचानक बीमार पड़ गया था और अब मैं स्वास्थ्य लाभके लिए आराम कर रहा हूँ।

मेरी चीन-यात्रा अनिश्चित समय तकके लिए मुल्तवी कर दी गई है।

मुझे आपसे 'नॉनवायलेंट कोअर्सन'[2] पर कोई किताब मिलनेकी कुछ याद नहीं पड़ती। यदि मुझे उसके मिलनेकी जानकारी होती, तो मैं प्राप्ति स्वीकार करता। लेकिन हो सकता है कि जब वह प्राप्त हुई हो मैं उस वक्त सफर कर रहा होऊँ और उसकी प्राप्तिकी जानकारी मुझे न दी गई हो। मैं अब पूछताछ करूँगा। कुछ भी हो आप दूसरी प्रति भेजनेका कष्ट न उठायें; क्योंकि वह पुस्तक दो साल पहले मेरे पास भेजी गई थी, किसने भेजी थी यह अब मुझे याद नहीं आता, और मैंने उसे दिलचस्पीसे पढ़ा था।

कृपया श्रीमती वार्डको मेरी याद दिलायें।

हृदयसे आपका,

हैरी एफ० वार्ड
यूनियन थिओलॉजिकल सेमिनरी
ब्रॉडवे, १२० स्ट्रीट
न्यूयार्क

अंग्रेजी (एस० एन० १२५१६) की फोटो-नकलसे।

१. स्थायी पता।
२. केस द्वारा लिखित।

४६७. पत्र : कुवलयानन्दको

कुमार पार्क
बंगलोर
८ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

इतनी तत्परतासे जवाब देनेके लिए धन्यवाद। मैं मक्खनकी मात्रा बढ़ानेका प्रयत्न करूँगा।

प्राणायामसे कुछ कठिनाई नहीं होती; और मैं नियमत: बिना रुके पूरी गहरी लम्बी श्वास ले पाता हूँ।

आपने शवासनके जो प्रभाव बताये थे, मुझे उनका अनुभव नहीं हुआ। कहीं ऐसा तो नहीं है कि निर्धारित दो मिनटका समय बहुत कम हो। मैं जब पीठके बल सीधा १५ मिनट लेटा करता था, तब तरोताजा महसूस करता था।

सर्वांगासनका भी कोई प्रत्यक्ष प्रभाव मुझे दिखाई नहीं दे रहा है। अभी शरीर और पाँवके बीच जिस कोणपर मैं इस आसनकी मुद्रा धारण करता हूँ क्या उस कोण को बढ़ानेकी या उस कोणपर अधिक समयतक आसन करनेकी जरूरत है?

मैं मालिशकी बात कहना भूल गया था। वह बिना रुकावटके जारी रखी गई है। लेकिन पेटकी तथा दिलकी मालिश कुछ समयसे छोड दी गई है। पेटकी मालिश इस आशंकासे छोड़ दी गई कि लगातार मालिशसे कहीं आँतोकी माँसपेशियाँ कमजोर न पड़ जायें और मालिशसे कहीं आँतोंको यह आदत ही न हो जाये कि ठीकसे साफ पाखानाके लिए हमेशा मालिश करना जरूरी हो जाये। दिलकी मालिश मैंने यह सोचकर छोड़ दी कि अपने आप ही मनने तर्क किया, जो शायद गलत तर्क था, कि मालिशका असर दिलतक नहीं पहुँच सकता है, जो पसलियों और माँसके एक ठोस खोलके अन्दर तिर रहा है। अब चूँकि आपने मालिशकी बात सोची है और पेट की तथा दिलकी मालिशका विशेष रूपसे उल्लेख किया है, मैं मालिश कराना फिर शुरू कर दूँगा। लेकिन अपने अगले पत्रमें आप कृपया मेरे इस सन्देहका जवाब दीजिएगा।

हृदयसे आपका,

श्रीमद् कुवलयानन्दजी
कुंजवन, लोनावाला

अंग्रेजी (एस० एन० १२५९२)की फोटो-नकलसे।

४६८. पत्र : कुमीको

८ जून, १९२७

मैंने तुम्हारा और हरिलालका पत्र पढ़ लिया है। हरिलालके पत्रोंसे न तो मुझे आश्चर्य होता है न दुःख। उसका जन्म उस समय हुआ जिसे मैं कुछ हदतक अपने विषयभोगका काल मानता हूँ। उस समय मैं मांसाहार कर चुका था और सोचता था कि स्वतन्त्र होनेपर और अधिक करूँगा। मेरे साथी भी अच्छे न थे। हालांकि यह मैं उस समय जानता नहीं था। लेकिन इन सभी बातोंका प्रभाव बालकोपर अदृश्य रीतिसे पड़े बिना नहीं रहता। इसलिए हरिलाल आज जिस स्थितिमें है उसके लिए मैं और जिस हदतक इस विषयभोगमें बा की सहमति थी उस हदतक बा, दोनों जिम्मेदार हैं। फिर हरिलालका दोष क्यों निकालें? इसलिए तुम्हें भी दुख माननेके कोई कारण नहीं है। चि० बलीके ऊपर उसने जो आरोप लगाया है वह जरूर बुरा है . . . .[1] मैं स्वयं तो यह मानता हूँ कि हरिलाल अपनी घोर निद्रासे जगेगा और अच्छा बनेगा। हो सकता है बाप होनेके नाते मैं मोहवश ऐसा सोचता हूँ। अथवा मनुष्य होनेके नाते उसे आशीर्वाद देनेकी इच्छा ही मुझसे यह वाक्य लिखवाती हो। चाहे जो भी हो हम तो यही इच्छा करें कि ईश्वर उसे सुबुद्धि दे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

४६९. पत्र : तुलसी मेहरको

कुमार पार्क, बंगलोर
८ जून, १९२७[2]

चि० तुलसी मेहर,

तुम्हारा पत्र मिला। तबीयत अच्छी हो गई है जानकर आनंद हुआ। अब दूधको छोड़नेकी कोई आवश्यकता न समझी जाय। शरीर जनताके लिये है और मोक्षका दवा बन सकता है ऐसा समझकर धर्मानुसार यथाशक्ति रक्षा करना प्रत्येक

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. इस पत्रका कुछ अंश एस० एन० १०६०५ की फोटो-नकलमें मिलता है, इससे लगता है कि सम्भवतः यह पत्र भी उसी दिन लिखा गया था जिस दिन "पत्र : जमनालाल बजाजको", ८-६-१९२७ (एस० एन० १०६०५) लिखा गया था।

सेवक और मुमुक्षुका कर्त्तव्य है। बीमारीमें दुष्ट वासना प्रतिमारूप बनकर खड़ी हो गई और पीछे देवी शक्तिने भी ऐसा ही किया यह अनुभव ठीक है। परंतु इतना समज लिया जाय कि दोनो निजकी मानसिक कृति है। और अच्छा धर्म यह है कि ऐसा अनुभव होनेकी भी हम प्रतिक्षा न करे। ईश्वर साक्षात्कार कोई चमत्कार नही है परंतु कठिन तपश्चर्याका यह शुभ फल है और उसका अनुभव आत्माका अविच्छिन्न आनंद ही सच्ची बात है। दूसरी सब वस्तु मिथ्या मानी जाय। और यही निष्काम सेवाका सच्चा धर्म है। दु.खके समय दु.खका निवारणकी प्रार्थना करना यद्यपि त्याजय नही है तो भी दुःखकी तितिक्षासे बढकर है। हम सुखकी भी इच्छा क्यो करें? दु.ख मिलो या सुख मिलो सब हमारे लिए एक ही बात लेना चाहिये। हम न सुखके लिये कोशिश करे न दु.खका समान तैयार करे। प्रतिक्षण जो कर्तव्य हमारे सामने आ जाता है उसको किसी अवस्थामें करे।

पहले जो मैंने पत्र लिखा वह मिला होगा। महराजके तर्कसे और अन्य अधिकारीके तर्कसे जो मदद मिल रही है वह सतोषकी बात है।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० ६५३०) की फोटो-नकलसे।

४७०. टिप्पणी

नेलौर जिलेमें खादी-कार्य

देशभक्त कोण्डा वेंकटप्पैयाने आन्ध्रके नेलौर जिलेमें हुई खादीकी प्रगतिके सम्बन्धमें निम्नलिखित टिप्पणियाँ[1] भेजी हैं। इन टिप्पणियोमें ऐसी काफी कुछ चीजे हैं जिनका अनुकरण हरेक नगरपालिका और अन्य खादी संस्थाएँ कर सकती हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-६-१९२७

१. यहाँ नहीं दी जा रही है।

४७१. आश्रम चर्मालय

अब मैं पाठकोंको यह सूचित करनेकी स्थितिमें हूँ कि वे सत्याग्रहाश्रम, साबरमतीके चर्मालय विभागसे मरे जानवरोंकी खाल साफ करके कमाया हुआ उम्दा चमड़ा प्राप्त कर सकते हैं। चप्पलें, कमर पेटियाँ इत्यादि चीजें तो यहाँ बनने भी लग गई हैं। पर ये अभी इतनी तादादमें नही बन रही हैं कि जिनसे बाहरसे आनेवाली सभी फरमाइशें पूरी की जा सकें। अलबत्ता तैयार किये गये चमड़ेकी फरमाइशोंको काफी हदतक जरूर पूरा किया जा सकता है। चमड़ा तीन रंगोंका तैयार किया गया है, काला, पीला और कत्थई रंगका। कीमतके खयालसे यह दो प्रकारका है। एक १॥ और दूसरा १। रुपया प्रति रतल। जो लोग इस प्रयोगको सफल बनाना चाहते हों अथवा जो केवल मरे जानवरोंके चमड़ेको ही उपयोगमें लाना चाहें, वे विशेष जानकारीके लिए सत्याग्रहाश्रम, साबरमतीके चर्मालयके व्यवस्थापकसे पत्र-व्यवहार करें। जबतक आश्रम अपने यहाँ बूट, शू, आदि चमड़ेकी बनी अन्य चीजें काफी तादादमें नही बनाने लग जाता, तबतक मैं तो यही सुझाव दूंगा कि ग्राहक आश्रमसे तैयार किया गया चमड़ा मँगा लिया करें और अपनी जरूरतकी वस्तुओंको अपने मोचियों द्वारा बनवा लिया करें। हम खादी खरीदकर जिस तरह कपड़े बनवा लेते हैं, उसी तरह चमड़ा खरीदनेकी आदत डाल लें और अपनी आवश्यकताके अनुसार जरूरतकी चीजें बनवा लें, तो इस तरह तैयार माल उन्हें सस्ता पड़ेगा, सुगमता भी अधिक होगी और कम समय लगेगा। बहुतसे चर्मालय खोलना आसान काम नहीं है। चर्मालयोंको चमड़ेकी चीजें बनानेके कामसे मुक्त रखनेका अर्थ होगा कार्य विभाजनको समुचित रूप देना। यदि हम हलाल किये गये पशुओंकी खालोंकी जगह मरे जानवरोंकी खालें इस्तेमाल करनेके काममें तेजी लाना चाहते हैं तो उपरोक्त सलाह मानना उचित होगा अर्थात् आश्रमके चर्मालयोंको चमड़ेकी वस्तुएँ बनानेके भारसे मुक्त रखना होगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-६-१९२७

४७२. खादी सदस्यता

अपने इस वर्षके कार्यकालमें काग्रेस अध्यक्ष श्रीयुत श्रीनिवास आयगार हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए, यदि वह मानवके प्रयत्नों द्वारा हो सकती हो, तो उसे स्थापित करनेका अपनी शक्तिभर अथक प्रयत्न कर रहे है। और साथ ही कोई अन्य काम करके अपने कार्यकालको विशिष्ट एवं उल्लेखनीय बनानेका पूरा प्रयत्न कर रहे है। जब वे नन्दीमें कृपा करके मुझसे मिलने आये थे, उन्होने मुझसे पूछा कि क्या मैं काग्रेस संस्थाके सभी सदस्योके लिए अनिवार्य रूपसे नित्य खादी पहननेकी शर्तमें कुछ ढील दूंगा। मैंने उनसे कहा कि इसमें रिआयत करनेकी तो कोई बात है ही नही। गौहाटीमें तो मैंने इस मौजूदा शर्तके बारेमें आग्रह किया ही नही था। पर जब मुझसे पूछा गया तो मैंने केवल अपनी राय व्यक्त कर दी थी कि तजुर्बेसे यही बात साफ हो गई है कि या तो खादीकी शर्त बिलकुल ही उठा दी जानी चाहिए या फिर शर्तको थोडा और कडा कर देना चाहिए ताकि खादी न सिर्फ खास मौकोपर पहनना लाजिमी हो, बल्कि आदतन रोज पहनना जरूरी हो। उसके बादसे अबतक तो अपनी इस रायको बदलनेका कोई कारण मुझे नही दिखा है।

परन्तु काग्रेसके सदस्य अगर किसी भी प्रकारका अनुशासन नही चाहते या यदि वे उसे चाहते हुए भी आदतन खादी पहननेकी शर्त नही चाहते और यदि वे खादी सम्बन्धी प्रस्तावका मखौल उड़ायेंगे और जब भी मौका मिलेगा खादीके नियमका उल्लंघन करेंगे तो फिर बेहतर यही है कि यह शर्त जरूर हटा दी जाये। एक लोक-प्रिय संस्थामें बहुसंख्यक लोगोकी रायपर ध्यान देना ही चाहिए। मैं तो हमेशा मानता आया हूँ कि किसी सस्थाके अल्पसंख्यक काफी लोग आचार सम्बन्धी किसी नियमपर जब आपत्ति उठायें तो बहुसंख्यक लोगोंके लिए यह चीज शोभाजनक होगी तथा कांग्रेसके लिए हितकर होगी कि ये लोग अल्पसंख्यक लोगोकी बात मान लें। जहाँ बहुसंख्यक अल्पसंख्यकों द्वारा गहराईसे महसूस की जानेवाली किसी रायकी अपनी संख्याके बल पर पूर्ण अवहेलना करता हुआ आगे बढता है वहाँ हिंसाकी गन्ध आने लगती है। बहुसंख्याका नियम तो सिर्फ वही बिलकुल ठीक ढंगसे चलता है जहाँ विरोधी लोग अपनी बातपर हठपूर्वक जोर नही देते रहे हो और जहाँ वे अच्छे खिलाडियोंकी तरह बहुसंख्यकोंकी बातको मानते हो। कोई भी संस्था जब विभिन्न दलोमें बँट गई हो और वे एक दूसरे दलपर अशिष्टताके साथ रोष प्रदर्शित किया करते हो और येनकेन प्रकारेण अपनी ही बात ऊपर रखनेकी ठाने बैठे हो तो वह सुचारु रूपसे काम नही कर सकती। इसलिए मुझे अध्यक्ष महोदयसे यह साफ-साफ कह देनेमें कोई झिझक नही हुई कि यदि अल्पसंख्यक सदस्य उस शर्तका पालने करनेको राजी न हो तो उन्हें उस शर्तको हटा देनेमें मदद करनी चाहिए।

पर यह बात मेरी व्यक्तिगत रायसे बिलकुल भिन्न है। मुझसे अपनी राय बदलनेके लिए निवेदन करना, जैसा कि पहले अनेक बार किया जा चुका है, मेरे साथ

कमसे-कम कहा जाये, तो अन्याय करना होगा। मुझे खादी सम्बन्धी शर्तके बारेमें तथा कांग्रेसके कामको किस तरह चलाया जाये इसके बारेमें अपनी रायपर तो कायम रहने दिया जाये। मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूँ कि मेरी रायका कांग्रेसके किसी अन्य सदस्यकी रायसे अधिक महत्त्व न हो। मेरी निजी राय तो साफ यही और केवल यही है कि यदि कांग्रेस देशके लाखों भूखों मरनेवाले लोगोंके साथ एक ठोस सम्बन्ध बनाये रखना चाहती है, तो यदि वह उच्च वर्गों और गरीब जनताके बीच सम्बन्ध स्थापित करनेवाली इस एक-मात्र कड़ी खादीको छोड़ देगी तो बड़ी गलती करेगी। लेकिन मैं जानता हूँ कि हमारे देशमें दूसरे प्रकारके विचारों-वाला भी एक दल है, जो खादीको उच्च वर्गके लोगों तथा जनताके बीच सम्बन्ध स्थापित करनेवाली वस्तु नहीं मानता, बल्कि यह समझता है कि खादी तो महात्माकी सनक अथवा धुन है। इस दलके लोगोंकी राय भी उसी सम्मानकी पात्र है जिस सम्मानका मैं अपने मतके लिए दावा करता हूँ। जरूरत इस बातकी है कि कांग्रेस अध्यक्ष और उसके सदस्य इस प्रश्नका निपटारा अच्छे और बुरे गुणोंके आधारपर करें। और अपने दिलसे यह पूछें कि कांग्रेसका हित किसमें है। और तदनुसार फिर निर्भयतापूर्वक निर्णय करें।

आखिरकार यदि खादी बनी रहनेवाली है तो वह ऐसी शक्ति है कि उसके गुणोंको मानना ही होगा। यदि उसका समर्थन करनेके लिए दृढ़प्रतिज्ञ, सच्चे और स्वार्थत्यागी कार्यकर्त्ता मौजूद हैं, यदि सचमुच उसकी कोई सहज उपयोगिता है, तो कांग्रेस भले ही अपनी बुद्धिके अनुसार मतदानकी एक शर्तके रूपमें उसको त्याग दे या वह उसे बिलकुल ही त्याग दे फिर भी वह प्रगति करेगी। कोई भी वस्तु जो देशमें एक सजीव शक्ति बन जायेगी उसे सबसे पहले कांग्रेस ही मान्यता देगी। हाँ, जबतक कि वह वस्तु अपनी शक्तिका परिचय नही दे देती, तबतक कांग्रेस उसकी उपेक्षा भले ही करती रह सकती है। ऐसी कई चीजें हो सकती हैं — और निस्सन्देह हैं भी — जो स्वयंमें अच्छी हैं। परन्तु कांग्रेस जैसी एक विशाल लोकप्रिय संस्था उन्हें महज इसलिए नही अपना सकती कि वे अच्छी हैं। वह तो ऐसी ही चीजोंको अपना सकती है जिन्हें अच्छी होनेके साथ-साथ आम जनताका समर्थन भी प्राप्त हो। यदि उसे यह समर्थन प्राप्त न हो तो कांग्रेस लोगोंकी प्रतिनिधि संस्था ही नही रह जायेगी, बल्कि वह केवल सुधारकों और झक्की लोगोंकी प्रतिनिधि बन जायेगी।

इसलिए कांग्रेसके सदस्योंको चाहिए कि वे मेरी अथवा किसी अन्य व्यक्तिकी रायसे प्रभावित हुए बिना इस प्रश्नपर एक निर्णय कर लें। यदि उनका अपना अनुभव उन्हें यह बताता है कि देशमें खादीको समर्थन नही प्राप्त है, यदि उनका खयाल है कि जनसाधारणको खादीसे सरोकार नहीं है तो वे खादीकी उस अप्रिय शर्तको बिना किसी संकोच हटा दें।

मैंने अपना यह विचार अनेक बार व्यक्त किया है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको ऐसा मानकर कि वह स्वयं कांग्रेस है न केवल हर जरूरी बातका निर्णय करनेका ही अधिकार है, बल्कि वह निर्णय करनेके लिए बाध्य भी है, और इस

बातका जोखिम उठाकर भी निर्णय करना कि कांग्रेसके अलग-अलग आम अधिवेशनमें उसके निर्णय शायद फिरसे बदल दिये जायें। कांग्रेसका विशेष अधिवेशन बुलाना केवल निम्नलिखित तीन परिस्थितियोंमें आवश्यक हो जाता है. (१) जब किसी आवश्यक प्रश्नपर तीव्र मतभेद हो, (२) जब ऐसे ही किसी प्रश्नपर लोकमत जाग्रत और प्रशिक्षित करना जरूरी हो; (३) या प्रस्तुत किये गये किसी प्रश्नपर बहुत व्यापक रूपमें सार्वजनिक प्रदर्शन करना जरूरी हो गया हो। इसके अतिरिक्त अन्य किसी महत्त्वपूर्ण प्रश्नके अथवा किसी अन्य परिस्थितिमें यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अपना स्पष्ट निर्णय न देगी और उसपर अमल नहीं करेगी तो मेरा खयाल है कि वह अपने कर्त्तव्य पालनसे च्युत मानी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-६-१९२७

४७३. विद्यार्थी परिषद

सिन्धकी छठी विद्यार्थी परिषदके मन्त्रीने मुझे एक छपा हुआ परिपत्र भेजा है, जिसमें मुझसे सन्देश माँगा गया है। इसी सम्बन्धमें मुझे एक तार भी मिला है। परन्तु चूँकि मैं एक तरहसे लगभग अनुपगम्य स्थानमें था, इसलिए वह चिट्ठी और तार मुझे इतनी देरसे मिले कि मैं परिषदके लिए कोई सन्देश समयपर नहीं भेज सकता था और मैं ऐसी हालतमें भी नहीं हूँ कि सन्देश, लेख आदि अनेक चीजें भेजनेके लिए की जानेवाली प्रार्थनाओंको स्वीकार कर सकूँ। पर चूँकि मैं समस्त भारतके विद्यार्थी-वर्गके कुछ-न-कुछ सम्पर्कमें रहता हूँ और इसलिए मैं विद्यार्थियोंसे सम्बन्ध रखनेवाली हरएक बातमें दिलचस्पी रखनेका दावा करता हूँ, मैं अपने मन ही मनमें उसकी आलोचना किये बिना न रह सका, जिसकी रूपरेखा इस छपे परिपत्रमें दी गई थी। यह सोचकर कि मेरी वह आलोचना उपयोगी होगी मैं उसमें से कुछ अंश लिखकर विद्यार्थी जगतके सामने पेश करता हूँ। मैं नीचे लिखा अंश उस परिपत्रसे उद्धृत कर रहा हूँ जो छपा भी बुरी तरहसे है, और जिसमें ऐसी गलतियाँ रह गई हैं जो विद्यार्थियोंकी संस्थाके लिए अक्षम्य ही मानी जायेंगी।

> इस परिषदके संगठनकर्त्ता इसे यथासम्भव मनोरंजक और शिक्षाप्रद बनानेका भरपूर प्रयास कर रहे हैं. . .। हम शिक्षा सम्बन्धी व्याख्यानमालाके आयोजनकी बात भी सोच रहे हैं। और हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप भी हमें अपनी उपस्थितिका लाभ देनेकी कृपा करें. . .। हमारे यहाँ सिन्धमें स्त्री-शिक्षाका प्रश्न खास तौरसे विचारणीय है। विद्यार्थियोंकी अन्य जरूरतें भी हमारी निगाहमें हैं। खेल-कूद प्रतियोगिताओंका आयोजन किया जा रहा है। साथ ही वादविवाद प्रतियोगिता भी हो रही है, जिससे परिषद और भी मनोरंजक हो जायेगी। नाटक और संगीतका कार्यक्रम भी रखा है. . .। उर्दू और अंग्रेजीके उपाख्यानोंको भी रंगमंचपर खेला जायेगा।

इस पत्रमें से मैंने ऐसे एक भी वाक्यको नहीं छोड़ा है, जो हमें परिषदके कार्यकी कुछ कल्पना दे सकता हो। फिर भी हमें इसमें एक भी ऐसे कार्यका उल्लेख नहीं दिखाई देता, जो विद्यार्थियोंके लिए स्थायी महत्त्वका हो। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि नाटक-संगीत और खेल-कूद आदिके कार्यक्रम अच्छे बड़े पैमानेपर प्रस्तुत किये गये थे। उपर्युक्त शब्दोंको मैंने उस पत्रसे ज्योंका-त्यों अवतरण चिह्नोंके साथ रख दिया है। मुझे इसमें भी सन्देह नहीं है कि इस परिषदमें स्त्री-शिक्षापर आकर्षक निवन्ध पढ़े गये होंगे। परन्तु जहाँतक इस परिपत्रका सवाल है, उसमें लज्जाजनक देने-लेनेकी उस (दहेज) प्रथाका कहीं भी उल्लेख नहीं है, जिससे विद्यार्थियोंने अभी अपने आपको मुक्त नहीं किया है, और यह प्रथा सिन्धी लड़कियोंका जीवन अनेक प्रकारसे नारकीय जीवन बना रही है और उनके माता-पिताका जीवन घोर यातनामय बनाये हुए है। परिपत्रमें ऐसी कोई बात नहीं है, जिससे पता चलता हो कि परिषद विद्यार्थियोंके चरित्रका प्रश्न भी हल करना चाहती है। वह परिपत्र कुछ ऐसी बात व्यक्त करता है कि परिषद विद्यार्थियोंको निर्भय राष्ट्र-निर्माता बननेका रास्ता सुझानेके लिए कुछ करनेका इरादा रखती है। सिन्ध कितनी ही संस्थाओंको तेजस्वी प्राध्यापक दे रहा है, यह उसके लिए कोई कम गौरवकी बात नहीं है। पर जो जितना ही ज्यादा देते हैं, उनसे ही और भी ज्यादाकी आशा की जाती है। मैं अपने उन सिन्धी मित्रोंका, जिन्होंने गुजरात विद्यापीठमें मेरे साथ काम करनेके लिए मुझे बढ़िया कार्यकर्त्ता दिये हैं, कृतज्ञ हूँ। लेकिन मैं केवल प्रोफेसर और खादी कार्यकर्त्ता ही पाकर सन्तुष्ट होनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ। सिन्धमें साधु वास्वाणी हैं। सिन्ध अपने और भी कितने ही महान् सुधारकोंपर गर्व कर सकता है, परन्तु यदि सिन्धके विद्यार्थी अपने प्रान्तके साधु पुरुषों और सुधारकोंके यशसे ही सन्तुष्ट हो जायेंगे, तो वे भूल करेंगे। उन्हें राष्ट्र-निर्माता बनना है। पश्चिमके निन्दनीय अनुकरणसे शुद्ध और परिमार्जित अंग्रेजी लिख और बोल लेनेसे स्वाधीनताके मन्दिरकी इमारतमें एक भी तो ईंट और नहीं जुड़ेगी। विद्यार्थीवर्ग इस समय ऐसी शिक्षा प्राप्त कर रहा है जो भूखे भारतके लिए बहुत ज्यादा मँहगी पड़ रही है। जिसे बहुत ही थोड़े नाममात्रके लोग प्राप्त करनेकी आशा कर सकते हैं। इसलिए भारत विद्यार्थियोंसे आशा करता है कि वे राष्ट्रको अपना खून-पसीना देकर अथक परिश्रम द्वारा अपनेको उसके योग्य बनायें। राष्ट्रमें जो अच्छी बातें हों उनकी रक्षा करते हुए समाजमें घुसी हुई असंख्य बुराइयोंको निर्भयतापूर्वक दूर करते हुए विद्यार्थियोंको धीमी गतिसे चलनेवाले तमाम सुधारोंके अग्रदूत बन जाना चाहिए।

ऐसी परिषदोंको चाहिए कि विद्यार्थियोंका ध्यान उनके सामनेके तथ्योंकी ओर दिलायें। उनके परिणामस्वरूप विद्यार्थियोंका ध्यान उन बातोंकी ओर जाना चाहिए जिन बातोंपर विचार करनेका अवसर उन्हें विद्यालयोंमें पाश्चात्य पृष्ठभूमिके कारण नहीं मिल पाता है। सम्भव है कि ऐसी परिषदोंमें वे 'शुद्ध राजनैतिक' समझे जानेवाले प्रश्नोंपर बहस न कर सकें। पर वे आर्थिक और सामाजिक प्रश्नोंका अध्ययन और उनपर विचार अवश्य कर सकते हैं, और उन्हें करना भी चाहिए। जो

हमारी पीढ़ीके लिए इतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितना सबसे बड़ा राजनैतिक प्रश्न। राष्ट्रका निर्माण करनेवाला कार्यक्रम राष्ट्रके किसी भी हिस्सेको अछूता नही छोड़ सकता। विद्यार्थियोंको देशके करोड़ों मूक देशभाइयोके बीच काम करना होगा। उन्हे एक प्रान्त, एक शहर, एक वर्ग या एक जातिकी पृष्ठभूमिमें नही, बल्कि समस्त देशकी पृष्ठभूमिमें विचार करना सीखना चाहिए। उन्हे उन करोड़ोका विचार करना होगा, जिनमें अछूत, शराबी, गुण्डे और वेश्याएँ भी शामिल हैं और जिनके अस्तित्वके लिए हममें से हर व्यक्ति जिम्मेदार है। प्राचीन कालमें विद्यार्थी ब्रह्मचारी कहे जाते थे। ईश्वर-भीरु और ईश्वरीय नियमोके अनुसार चलते थे। राजा और बड़े-बूढ़े लोग भी उनका आदर करते थे। देश स्वेच्छापूर्वक उनका भार वहन करता था, और इसके बदलेमें वे देशकी सेवामें सौ गुना शक्तिमान आत्मा, सशक्त मस्तिष्क और बलशाली भुजाएँ अर्पित करते थे। आजकल भी आपद्ग्रस्त देशोमें जहाँ भी विद्यार्थी हैं, वे देशकी आशाके अवलम्ब समझे जाते हैं; और वे प्रत्येक विभागमें स्वार्थत्यागी, समाज सुधारक नेताओके रूपमें सामने आये हैं। मेरे कहनेका यह मतलब हरगिज नही कि भारतमें ऐसे कोई उदाहरण नही ह। वे हैं जरूर, पर बहुत ही थोड़े हैं। म जिस चीजपर जोर दे रहा हूँ वह यह है कि विद्यार्थियोंकी परिषदोको चाहिए कि वे ऐसे व्यवस्थित कार्यको अपना लक्ष्य बनायें जो ब्रह्मचारियोके पदके अनुरूप हों।

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ९-६-१९२७

४७४. हम क्या गँवा रहे हैं ?

'यंग इंडिया' के पाठक श्री ग्रेगके नामसे परिचित हैं। देशको प्रभावित करने वाले कई सवालोका अध्ययन वे बड़े ठोस तरीकेसे और ऐसे उत्साहसे कर रहे हैं, जो भारतके एक देशभक्त बेटेके योग्य है। हाथ-कताईके उनके अध्ययन और प्रयोग बराबर जारी हैं। पिछड़े वर्गोंके बच्चोकी शिक्षामें भी वे प्रयोग कर रहे हैं। इन वर्गोंके कल्याणकार्योमें उनकी दिलचस्पी है। और इस सम्बन्धमें वे कृषिके सवालका भी अध्ययन कर रहे हैं। सत्याग्रहाश्रम, साबरमतीमें आर्थिक और स्वास्थ्यकी दृष्टिसे पाखानेकी इतनी अच्छी तरह सफाई होते देखकर अब वे व्यवस्थित ढगसे इस प्रश्नका अध्ययन कर रहे हैं। एक प्रयोगात्मक फार्मकी स्थापनाका सुझाव रखते हुए एक पत्रमें वे कहते हैं :

> फार्मकी एक विशेषता यह होगी कि वह पाखानेका उपयोग इस तरह खादके रूपमें करेगा जैसे कि सत्याग्रहाश्रममें वहाँ उसे जमीनमें दबाकर किया जाता है। या फिर उस तरह जैसे कि चीन और जापानके किसान करते हैं। जहाँसे पाखाना इकट्ठा करना होगा उस पूरे क्षेत्रके सभी भंगियोंको सावधानीसे संगठित करनेकी और धीरे-धीरे पाखानेको अच्छेसे-अच्छे ढंगसे काममें लाने लायक बनानेका प्रशिक्षण देनेकी जरूरत होगी।

बहुत थोड़े ही समयमें ऐसा फार्म अनाज, पशुओंका चारा, फल या कुछ किस्मोंकी सब्जियोंकी आश्चर्यजनक पैदावार देनेवाला फार्म बन जायेगा और पैदावारकी वे सारी चीजें उसी बस्तीमें बेची जा सकेंगी। ऐसा होनेपर बाजारमें माल लाने ले जानेका खर्च बचाया जा सकेगा और इससे शहर या जिलेके समूचे भंगी-वर्गकी शिक्षा या बेहतरीकी योजनाको और आगे बढ़ानेके लिए खासा अच्छा मुनाफा भी हो जायेगा। पाखानेका ऐसा उपयोग करना एक ऐसी बहुत मूल्यवान खाद सामग्रीकी बेहद बचत करना है, जिसकी न केवल अब अत्यधिक आवश्यकता है बल्कि मेरा विश्वास है कि जो मक्खियोंको पैदा करके और सभी तरहके कीटाणुओं और गन्दगीको फैलाकर बीमारी और उसके फलस्वरूप सारे देशकी आर्थिक क्षतिका कारण बनी हुई है।

श्री ग्रेग आगे लिखते हैं :[1]

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ९-६-१९२७

४७५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

कुमार पार्क
बंगलोर
९ जून, १९२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपके बम्बईसे रवाना हो जानेके बादसे आपको यह चौथा पत्र मैं लिख रहा हूँ। जमनालालजीने मुझे आपका समुद्री तार भेजा है। इसलिए यह पत्र अंग्रेजीमें लिख रहा हूँ। मुझे अभी स्वयं पत्र लिखनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। इसलिए मैं अपनी शक्ति बरकरार रखनेके लिए अपने अधिकांश पत्रोंको, चाहे वे अंग्रेजी या हिन्दी या गुजरातीमें हों, बोलकर लिखवाता हूँ।

आज मालवीयजी मेरे पास हैं। वह अपना स्वास्थ्य सुधारने ऊटी जा रहे हैं। वह आज सुबह ही आये थे और उन्हें आज शामको चले जाना था। परन्तु जब मैंने उन्हें बताया कि परसों मैसूरके महाराजाका जन्मदिन है और उन्हें यह सुझाव दिया कि ऊटीके लिए रवाना होनेसे पहले महाराजाको आशीर्वाद देने उन्हें मैसूर जाना चाहिए तो उन्होंने दीवानको तार भेजा है। उन्होंने आगेकी यात्राका कार्यक्रम मुल्तवी कर दिया है और शायद वे कल मैसूर जायेंगे। निश्चय ही मैं बराबर उनसे पत्र-व्यवहार करता रहा हूँ। और वे तार द्वारा उत्तर देते रहे हैं। वे बड़े कमजोर दिखाई दे रहे हैं परन्तु सभी बातोंके प्रति सदाकी तरह आशावान हैं। उनके शरीरमें कोई रोग

१. श्री ग्रेगके पत्रका शेषांश नहीं दिया जा रहा है।

नही है। यह केवल लगातार थकावट एव परिश्रमके कारण उत्पन्न हुई कमजोरी है। उन्होने वायदा किया है कि वे ऊटीमें लगभग एक महीना विश्राम करेंगे। डा० मंगलसिंह उनके साथ हैं और एक रसोइया तो है ही। गोविन्द वम्वई तक उनके साथ थे। परन्तु चूँकि वे अपने 'क्रो केस' की तारीख नही बढवा सके, इसलिए उन्हे इलाहाबाद जाना पड़ा।

मुझे नही मालूम कि क्या मैंने आपको यह सुझाव दिया था कि आप कु० म्यूरियल लेस्टरसे मिलें, जो लन्दनकी गन्दी बस्तियोमें काम कर रही हैं। वे पिछले साल कुछ समयके लिए भारतमें थी। वे एक महीना आश्रममें रही। वे अत्यन्त उत्साही एवं योग्य कार्यकत्री हैं। वे पूर्ण मद्यनिषेधके हितार्थ काम कर रही हैं और इसके लिए वहाँ जनमत जागृति कर रही हैं। उनका पता है : कु० म्यूरियल लेस्टर, किंगस्ले हॉल, पॉविस रोड, बो ई० ३।

मुझे आशा है कि आपके स्वास्थ्यमें सुधार हुआ होगा और लालाजीका स्वास्थ्य भी अच्छा होगा। मै पिछले रविवारको नन्दीसे नीचे उतर आया था। मेरे स्वास्थ्यकी प्रगति ठीक चल रही है। यहाँ डाक्टरोंकी राय है कि मै अगले महीने थोड़ा बहुत सफर करने लायक हो जाऊँगा।

आपका,
मोहनदास

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८७७) से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४७६. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

कुमार पार्क
बंगलोर
९ जून, १९२७

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र मिला। मैं तो यह सुझाव देना चाहूँगा कि 'यंग इडिया' में जैसा परिवर्तन करनेकी घोषणा है, आप व्यवस्थामें वैसा कोई बदलाव न करे। बेचारा शकरलाल! वह आपके पत्रसे इतना घबरा गया कि उसने हर मामलेको मेरे पास विचारार्थ भेजना शुरू कर दिया। मैंने उसे सान्त्वना दी है और उसको बताया है कि उसे ऐसा करनेकी जरूरत नही है और यह भी कि हर हालतमें उसे पहले तो जमनालालजीसे सलाह लेनी चाहिए और उनकी राय ले लेनेके बाद मामलेको मेरे पास विचारार्थ भेजा जा सकता है, ताकि मुझे मामलेकी सारी बारीकियोपर विचार न करना पड़े। मै अब उसके पत्रका इन्तजार कर रहा हूँ। लेकिन मै जानता हूँ कि यदि उसे आपका इस आशयका पत्र मिले कि कौसिलकी अगली बैठक होनेतक आप इसी व्यवस्थाका अनुमोदन करते हैं तो उसे अधिक तसल्ली हो जायेगी।

आप मजदूरोंके बारेमें और कांग्रेसके सम्बन्धमें जो भी कुछ कहते हैं, उस सबका मैं अनुमोदन करता हूँ। यदि मजदूरोंका संगठन ठीक तरहसे किया जाये और राजनैतिक उद्देश्योंके लिए उनका उपयोग न किया जाये, तो इस प्रवृत्तिको अपने हाथमें लेना कांग्रेसके लिए बहुत वांछनीय होगा। और मेरा खयाल है कि राजेन्द्रबाबूकी सम्मति भी इससे अधिक कुछ और करनेकी नहीं है। लेकिन अभी इस वक्त कांग्रेसमें हमारे पास उस तरहके आदमी नही हैं, जैसे आदमियोंकी एक ठोस संगठनके लिए जरूरत होती है। यह चीज अभी चर्चाके रूपमें ही है।

आशा है कि मैंने भोजन तथा स्वास्थ्यपर जो पुस्तक आपके पास भेजी है, मिल गई होगी। मैं पिछले इतवारको नीचे बंगलोर उतर आया और अब बेहतर महसूस कर रहा हूँ। मैं भोजन भी पहलेसे ज्यादा खाता हूँ। मेरा दौरा मैसूरसे शुरू होगा और वहीपर करीब एक पखवाड़ा लग जायेगा। मैसूर ३,००० फुट ऊँचा एक बड़ा पठार है, इसलिए पूरे मैसूरमें जलवायु बहुत ही मातदिल है।

आपका,
बापू

अंग्रेजी (जी० एन० १५७३) की फोटो-नकलसे।

४७७. पत्र: एम० के० सहस्रबुद्धेको

कुमार पार्क
बंगलोर
९ जून, १९२७

प्रिय सहस्रबुद्धे,

साबरमतीके पतेपर भेजा गया तुम्हारा कार्ड पता बदलकर मेरे पास भेजा गया और मुझे कल ही मिला है। मुझे तुम्हारी खूब याद है और मैं जब अलीबागमें था तब मैंने नर्मदासे तुम्हारे बारेमें बात भी की थी। लेकिन मुझे ऐसा याद नही पड़ता कि मैंने किसीको यह सुझाव दिया हो कि तुम्हें अपनी पढ़ाई छोड़ देनी चाहिए और साबरमती आश्रममें दाखिल हो जाना चाहिए। मुझे नहीं मालूम कि नर्मदा या किसी दूसरेने यह निष्कर्ष कैसे निकाल लिया कि मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी पढाई छोड़ दो। लेकिन अब चूँकि तुमने मुझे पत्र लिख ही दिया है, मैं नही चाहता था कि तुम मुझे लिखो, तो फिर यह भी लिखो कि अभी इस वक्त तुम क्या पढ़ रहे हो और अपनी पढ़ाई समाप्त हो जानेके बाद तुम्हारा क्या करनेका इरादा है ताकि मैं तुम्हारे विषयमें और अच्छी तरह जान सकूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

श्री एम० के० सहस्रबुद्धे
कालम्बा रोड, अलीबाग, (जिला कोलाबा)

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४८) की माइक्रोफिलमसे।

४७८. पत्र : वसुमती पण्डितको

कुमार पार्क
बंगलोर सिटी
ज्येष्ठ सुदी १० [९ जून, १९२७]

चि० वसुमती,

तुम्हारा दूसरा सुन्दर पत्र मिला। डायरी लिखनेका प्रयोग सफल हो गया। अभी रामदासके आनेका तो कुछ पता नहीं है। उसके पत्र आते रहते हैं, किन्तु यहाँ आनेके बारेमें वह कुछ नहीं लिखता। मैं रविवारको ही बंगलोर आ गया था। नन्दीकी तुलनामें यहाँ गर्मी है, पर मेरी तबीयतके लिए डाक्टर उसे अनुकूल मानते हैं। कमसे-कम एक महीना तो यहाँ रहूँगा। बादमें थोड़ा-थोड़ा आसपासके प्रदेशका भ्रमण करूँगा। अभी तो यही आशा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (एस० एन० ९३४४) की फोटो-नकलसे।

४७९. तार : मीराबहनको

११ जून, १९२७

मीराबहन
सत्याग्रहाश्रम
साबरमती

यदि तुम जरा भी उद्विग्न हो, तो तुम्हें चले आना चाहिए। सस्नेह।

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२३८) की नकलसे।
सौजन्य : मीराबहन

४८०. पत्र : एस० टी० शेपर्डको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय श्री शेपर्ड,

आपके ८ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद।

खेद है कि मुझे आपको सूचित करना पड़ रहा है कि पश्चिममें पुस्तक रूपमें 'आत्मकथा' के प्रकाशनका सर्वाधिकार रेव० जॉन हेंगनेस होम्सके कहनेपर कुछ महीने पहले न्ययार्ककी मैकमिलन कम्पनीको दे दिया गया था।

आपका यह खयाल बिलकुल ठीक ही है कि अपने किसी भी लेख आदिका पहले मैंने कभी सर्वाधिकार सुरक्षित नहीं करवाया। लेकिन श्री होम्सने मुझे अपने उस पहलेके नियमसे इस आधारपर अलग हटनेको प्रोत्साहित किया कि सर्वाधिकार न दिये जानेपर कोई भी यूरोपीय प्रकाशक 'आत्मकथा' प्रकाशित करनेकी परवाह ही नहीं करेगा और जब कि उसके प्रकाशनसे पश्चिमको कुछ लाभ होनेकी सम्भावना है।

आपने मेरे बारेमें जो पूछताछ की उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं बराबर स्वास्थ्य लाभकी दिशामें आगे बढ़ रहा हूँ और थोड़ी बहुत हदतक डाक्टरोंसे पत्र-व्यवहार आदि देख सकनेकी अनुमति मिल गई है।

हृदयसे आपका,

श्री एस० टी० शेपर्ड
'टाइम्स ऑफ इंडिया,' कार्यालय
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२८०८) की फोटो-नकलसे।

४८१. पत्र : एच० क्लेटनको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय श्री क्लेटन,

आपके ६ जूनके पत्रके लिए धन्यवाद।

आपने आरोपोंकी कितनी सावधानीसे छानबीन की है, इस बातपर मैंने गौर किया। जैसे ही श्री ठक्करसे इस सम्बन्धमें मुझे पत्र मिलता है, आशा है, मैं आगे भी कुछ लिखूंगा।

अपने पत्रमें आपने समितिकी बैठककी कार्यवाहीके ब्यौरोंका उल्लेख किया है और उसकी एक नकल मुझे भेजनेका अनुग्रह किया है। मैं इस बातकी सावधानी बरतूंगा कि उसका कोई भी अंश प्रकाशित न हो।

हृदयसे आपका,

श्री एच० क्लेटन
कमिश्नर
नगर निगम
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १२९१३) की माइक्रोफिल्मसे।

४८२. पत्र : सैम हिगिनबॉटमको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

तत्काल उत्तर देनेके लिए धन्यवाद देता हूँ।

आपने जिन परिस्थितियोंके बारेमें लिखा है उनको देखते हुए मैं उस प्रकाशनका कोई इस्तेमाल नहीं करूँगा जिसका मैंने अपने पिछले पत्रमें उल्लेख किया था।

यद्यपि मैं आपसे सहमत हूँ कि सब धार्मिक नियमोंका एक आर्थिक पहलू है, और आर्थिक नियम धार्मिक नियमोंके समान ही ईश्वरीय नियम हैं; तथापि इस सिद्धान्तके प्रयोगके सम्बन्धमें मेरा आपसे गहरा मतभेद है। यह आसानीसे सिद्ध किया जा सकता है कि पुनर्जन्मका गरीबीसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मौजूदा जातिप्रथाका इससे अवश्य कुछ सम्बन्ध है। यह भी सिद्ध किया जा सकता है कि स्त्रियोंके प्रति व्यवहारका गरीबीसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि आप समय निकाल सकें तो मैं निश्चय ही आपकी कलमसे दो-एक लेखोंका स्वागत करूँगा, जिनमें पशुओं एवं उनके प्रति व्यवहारके सम्बन्धमें आपके विचार दिये गये हों; और आपके इस विश्वासके समर्थनमें प्रमाण दिया गया हो कि वे तीन चीजें जिनका आपने उल्लेख किया है "मिलकर भारतकी गरीबीका मूल एवं मुख्य कारण हैं।" यदि आप समझते हों कि भारतकी गरीबीके जो मुख्य कारण हैं उनके सम्बन्धमें आपकी राय बदलनेकी गुंजाइश है, तो हम निजी पत्र-व्यवहार द्वारा इन कारणोंपर चर्चा कर सकते हैं। मैं जानता हूँ कि आप हमारे देशके हित-चिन्तक हैं और सत्यके अन्वेषक हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि आपमें भारतकी सेवा करनेकी महान् क्षमता है। इसलिए मैं आपके इस देशके प्रति प्रेमसे और हम दोनोंके बीच जो सामान्य उद्देश्यके हितकी भावना है उसके सम्बन्धमें आपकी गहरी जानकारीसे पूरा लाभ उठानेके लिए अत्यन्त उत्सुक

हूँ। इसलिए मेरी बड़ी आकांक्षा है कि जहाँतक सम्भव हो हम दोनों भारतकी बेहद और बढ़ती हुई गरीबीके बुनियादी कारणके सम्बन्धमें एकमत हों।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२९१५) की माइक्रोफिल्मसे।

४८३. पत्र : अमेरिकी बैप्टिस्ट मिशनके मैनेजरको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय महोदय,

मुझे एक मित्रसे पता चला है कि आपके मिशनको मुर्गीपालनके एक ऐसे तरीकेकी जानकारी है, जिसके अनुसार शुरूसे ही अण्डे जीवाणु शून्य होते हैं। इसकी मुझे कोई खबर ही नहीं थी। लेकिन चूँकि मुझे सूचना देनेवाला व्यक्ति एक चिकित्सक है और अपनी कही बातके बिलकुल ठीक होनेपर जोर देता है, इसलिए मैं आपको, यदि हो सके तो इस सम्बन्धमें मुझे सही जानकारी देनेके लिए लिख रहा हूँ।

आपका विश्वस्त,

मैनेजर
अमेरिकी बैप्टिस्ट मिशन
सांगली

अंग्रेजी (एस० एन० १४१४९) की फोटो-नकलसे।

४८४. पत्र : जे० भीमरावको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। यदि आप 'यंग इंडिया' के स्तम्भ पढ़ेंगे, तो आप पायेंगे कि सर एम० विश्वेश्वरैयाके प्रशासनका रामराज्यके रूपमें उल्लेख एक मजाकके तौर पर हुआ है और सावंतवाड़ीके प्रमुखकी प्रशंसा एक व्यक्तिगत प्रशंसा है। मैं नहीं समझ पाता कि [रियासतके] किसी एक प्रमुखके असन्दिग्ध सद्गुणोंको यदि स्वीकार कर लिया जाता है, तो उसके बलपर रियासतोंके अन्य प्रमुखोंको कुशासन कायम

रखनेमें किस प्रकार मदद मिल सकती है अथवा इससे पूर्ण निरंकुशताका सिद्धान्त कैसे उचित ठहराया जा सकता है। इसलिए मैं नही समझता कि आपने जो मुद्दा उठाया है, उसपर 'यंग इंडिया'के पृष्ठोंमें कुछ विस्तारसे प्रकाश डालनेकी जरूरत है।

हृदयसे आपका,

श्री जे० भीमराव
स्वदेशी पर्फ्यूमरी वर्क्स
जामखंडी हाउस, बंगलोर सिटी

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५०) की माइक्रोफिल्मसे।

४८५. पत्र : उत्तम भिक्षुको

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपके पत्रकी अबतक प्राप्ति स्वीकृति नही दी जा सकी, क्योंकि मैं अभीतक आगन्तुकोंसे मिलनेके लिए अपने आपको तैयार नहीं कर सका था और फिर यह पत्र मेरी फाइलमें दबा पड़ा रहा। अब चूंकि मैं पत्र-व्यवहारपर अधिक प्रयत्नपूर्वक ध्यान दे रहा हूँ, आपके पत्रका भी उत्तर लिख रहा हूँ। इस महीनेके अन्ततक आप जब कभी बंगलोर आयें, मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता होगी। मैं आगन्तुकोंसे ३ बजेसे पहले नही मिलता हूँ। सोमवारके अलावा किसी भी दिन ३ से ४-३० बजेके बीचका समय मुझसे मिलनेके लिए अनुकूल पड़ेगा।

हृदयसे आपका,

श्री उत्तम भिक्षु
नैय्यर बिल्डिंग
लमिंग्टन रोड
बम्बई

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५१) की फोटो-नकलसे।

४८६. पत्र : आर० सुब्रह्मण्यम्को

कुमार पार्क
बंगलोर
११ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आशा है आप यह नहीं चाहते होंगे कि मैं 'यंग इंडिया' में इस विषयपर कुछ लिखूं। क्या आप समझते हैं कि बीमा कम्पनियोंके एजेंट जनताकी सेवाके लिए अपना व्यापार चला रहे हैं? अगर मैं बीमेको जाल समझता हूँ, तो मेरे इस मन्तव्यसे[1] बीमा एजेंटोंकी भावनाओंको ठेस क्यों पहुँचती है? मैंने जो टीका-टिप्पणी की थी उसमें उस अमेरिकीके ऊपर आक्षेप करनेका कोई अभिप्राय नहीं था। यदि वह एजेंट जीवित हो — जैसी कि मुझे आशा है और यदि वह इस अनुच्छेदको पढ़े तो इसपर जी-भरकर वह खुद भी हँसेगा और इसमें अपनी प्रशंसा अनुभव करेगा कि उसने अपनी मीठी वाणीसे फुसलाकर मुझे भी पालिसी दिलवा दी। उसने जो मुझे इस तरह फुसलाया उसमें कोई गलत बात नहीं थी। परन्तु यदि वह अपने आपको एक परोपकारी व्यक्तिके रूपमें पेश करे न कि केवल अपने और अपने मालिकोंके लिए कुछ पैसा बनानेको निकले व्यापारीके रूपमें, तो उसके लिए ऐसा करना गलत होगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत आर० सुब्रह्मण्यम्
सन लाइफ इंश्योरेंस कम्पनी ऑफ कनाडा
मद्रास

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५२) की फोटो-नकलसे।

४८७. पत्र : गोपालदासको

बंगलोर
११ जून, १९२७

भाई गोपालदासजी,

आपका पत्र मिला। मेरे लिए मर्यादित विधवा विवाह दयाधर्मका प्रश्न है। जिस स्थानपर विधवायें पुनर्लग्न करती हैं वहां भी अनीतियां होती हैं — जैसी हमारे यहाँ — यह बात अप्रस्तुत है। सोचनेकी बात एक यह है। किसी स्त्रीपर ऐसी मर्यादा रखनी जो पुरुष अपने लिए नहीं स्वीकारता, क्या ठीक है? एक बालिका

१. ९-६-१९२७के *यंग इंडिया*में धारावाहिक रूपमें प्रकाशित आत्मकथाकी किस्तमें; देखिए *आत्मकथा*, भाग ४, अध्याय ४।

जो विवाह क्या चीज है जानती नही है और जिसका विवाह किया जाता है और पीछे नामका पति मर जाता है ऐसी बालिकाको विधवा माना जाये ? ऐसे ऐसे प्रश्न जो विधवाकी स्थितिमें से उपस्थित होते हैं वे सब धर्मके हैं, दयाके है और उसका निर्णय करनेमें हम किसी और देशकी स्थितिका मुकाबला न करे परन्तु धर्म क्या बताता है उसीको केवल देखें। इसी तरह देखनेपर मुझको तो ऐसा प्रतीत होता है कि जितनी बालविधवायें हैं उन सबका विवाह कर देना हिंदु जातिका कर्तव्य है।

आपका,

मूल (एस० एन० १२८२१) की फोटो-नकलसे।

४८८. पत्र : मीराबहनको

१२ जून, १९२७

चि० मीरा,

तुम्हारे कई पत्र मिले। उन्हें पढकर दुःख होता है। परन्तु यह लाभप्रद है। तुम्हारे वहाँ जानेके पीछे एक प्रयोजन था।

जमनालालजीने सलग्न तार[1] भेजा है। इसलिए मैंने तुम्हें शनिवारको साबरमतीके पतेपर तार[2] भेजा था कि यदि तुम्हें वहाँ ठीक न लगता हो तो यहाँ आ जाओ, क्योंकि मुझे जमनालालजीके तारका यही अभिप्राय मालूम पड़ा। मैं हमेशा यही मानकर चलता हूँ कि तुम स्वाभाविक तरीकेसे काम करोगी और जब भी मैं तुम्हारे सम्बन्धमें तुम्हें पत्र या तार भेजूंगा, उसे अक्षरशः वैसे ही अर्थोमें ग्रहण करोगी। यदि मुझे तुम्हारी आवश्यकताओका और तुम्हें मेरी इच्छाओंका, अनुमान लगाते रहना है तो मैं तुम्हारा पथ-प्रदर्शन नही कर सकता। इसलिए तुम्हें अपनी उन्नतिके लिए जो काम जरूरी मालूम दे, बिलकुल वही करो।

यदि तुम्हें वैसे भी आश्रममें रहना पड़े तो मैं नही समझता कि तुम्हें इस सम्बन्धमें चिन्ता करनेकी जरूरत है कि तुम वहाँ बिना हिन्दी सीखे रह रही हो। गंगूका बड़ा ध्यान रखना है। यदि वह तुम्हारा बहुत ज्यादा समय न लेकर तुम्हारे साथ रहे, तो कोई बात नही। परन्तु क्या करना चाहिए यह तो तुम्ही सबसे ज्यादा अच्छी तरह जानती हो। उसे तुम्हारे अध्ययनमें विघ्न नही डालना चाहिए। बल्कि उलटे वह एक तरहसे तुम्हारी सहायक ही हो सकती है। वह इसलिए कि तुम्हें हमेशा उससे हिन्दीमें ही बातचीत करनी चाहिए। इससे तुम्हें बोलनेका अनिवार्य अभ्यास हो जायेगा। परन्तु यह इस विषयपर मेरा अपना दृष्टिकोण है।

१. दिनांक ११-६-१९२७ का तार जो इस प्रकार था : "मैं और मगनलालजी रिवाड़ी गये। चिन्ताकी कोई बात नहीं। मीराबहन गंगूबहन बालुंजकरजी साबरमती जा रहे हैं। मैं स्वयं उदयपुर जा रहा हूँ। मेरा खयाल है कि आप मीराबहनको बंगलोर बुला लें। उन्हें अपने निर्णयकी सूचना तारसे दें।"

२. देखिए "तार : मीराबहनको", ११-६-१९२७।

जहाँतक तुम्हारे भोजन सम्बन्धी व्रतकी बात है, अतीतके अनुभवोंको ध्यानमें रखते हुए पुनर्विचार किये बिना व्रतको लम्बा मत बनाओ। फिलहाल तुम व्रतकी भावनाके अनुरूप रह सकती हो अर्थात् केवल स्वाद अथवा प्रसन्नताके लिए कुछ मत खाओ। कोई वस्तु यदि स्वास्थ्यके लिये आवश्यक हो या फिर वही चीजें अगले भोजनमें नहीं मिल सकती हों, तो खाद्य-पदार्थोंकी संख्या बढ़ानेमें संकोच मत करो।

इस समय मैं रिवाड़ी आश्रमके बारेमें कुछ नहीं कह रहा हूँ क्योंकि मुझे वहाँकी नवीनतम घटनाओंके बारेमें कुछ पता नही है। कृष्णनन्दजीने कभी नही लिखा। उनका यह सुझाव एक मौलिक सुझाव है कि मुझे भाँग लेनेकी आवश्यकताको समझना चाहिए।

डाक्टरने आज (रविवारको) मेरी परीक्षा की है और वह मेरी प्रगतिसे सन्तुष्ट है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ५२४०) से।
सौजन्य : मीराबहन

४८९. पत्र : सतकौड़ीपति रायको

कुमार पार्क
बंगलोर
१२ जून, १९२७

प्रिय सतकौड़ी बाबू,

मुझे आपका लम्बा और पूरी जानकारी देनेवाला पत्र मिला। कृपया आप क्षमा मत माँगिए। यदि मैं ठोस सेवा नहीं कर सकता तो ऐसा मित्र होनेके नाते, जिसकी पूरी समवेदना आपकी परेशानियोंमें आपके साथ है, आपको कमसे-कम सान्त्वना तो दे ही सकता हूँ। आपने, कभी अवसर पड़नेपर, भविष्यमें मेरे उपयोगके लिए जो ब्योरेवार सूचना दी है; उसे मैं हमेशा याद रखूँगा। परन्तु अपनी कठिनाईपर विजय पानेके लिए जो रकम आप चाहते हैं, वह मैं नही जुटा सकूँगा। इस दौरान मैं इस बातपर जोर दूँगा कि आप अपना ध्यान अपनी वकालत जमानेपर पूरी तरह केन्द्रित करें। मुझे इस समय इससे बच निकलनेका और कोई उपाय नजर नहीं आता। मैं समझता हूँ कि यह बुरी चीज है। परन्तु हमें सदा अपनी मनपसन्दकी या अच्छी चीजें नहीं मिलतीं। स्पष्ट ही इस समय वकालत आपका स्वधर्म है; और इसलिए आपके लिए सर्वोत्तम है। परन्तु क्या आप यह निश्चय नही करेंगे कि चाहे आपकी वकालत कितनी ही क्यों न चले, आप आगेसे विवाहोंपर खर्च नहीं करेंगे? मेरे जीवनमें वह आये या नही परन्तु ऐसा समय आ रहा है

जब आप जैसे लोगोंको फिर वकालत छोड़नी पड़ेगी। घरबार छोड़कर स्वतन्त्रताके सघर्षमें कूदना होगा। इसलिए वकालतको आप अपने लिये न्यासके रूपमें रखिए। परन्तु आपको एवं आपके परिवारके सदस्योंको इस तरह रहना चाहिए जैसे कि हमारे निर्धनतम लोग रहते हैं और इसलिए आप अपनी लड़कियोंका इस प्रकार पालन-पोषण करें कि जब वे बडी हों, तो विवाहके सम्बन्धमें न सोचें। और जब उनके विवाह भी हों, तो उनके विवाहमें किसी तरहका भी कोई खर्च न किया जाये। क्या आप जानते हैं कि गत दो वर्षोंमें मैंने कई युगलोंके विवाह करवाए हैं, जिनमें कि आप कह सकते हैं, दस रुपये भी खर्च नही किये गये। इनमें से दो मेरे सम्बन्धी थे, एक मेरा पुत्र और दूसरी मेरी पौत्री। अन्य मित्रो और सहयोगियोंकी लड़कियाँ या लड़के थे। वे पहले आपकी और मेरी तरह रहते थे। आपको ढाढस बँधानेके लिए मुझे उनके नाम अवश्य बताने चाहिए। वल्लभभाई बैरिस्टर थे, जिनकी बहुत बढ़िया वकालत चल रही थी। उनके पुत्रका विवाह अभी उस दिन आश्रममें हुआ। उसमें साधारण धार्मिक संस्कारके सिवाय और कुछ नहीं किया गया। कोई भोज नही दिया गया और वधूको एक भी गहना नही पहनाया गया। दूसरा मामला दास्तानेका था जो कुछ समय पूर्वतक भुसावलके अग्रणी वकीलोंमें से थे। उनकी कन्या एक सहयोगीको दी गई। उसके गलेमें कुछ गज धागेके सिवाय, जो मेरा काता हुआ था, और कोई गहना नहीं था। दास्तानेने जब अपनी कन्याका विवाह किया, तो उनके कुछ मित्र बिना बुलाए आ गये थे। उन्हें एक या दो दिन तक खाना खिलाना पड़ा। मेरा विचार है कि उनकी संख्या दससे ज्यादा नही थी। उनके और भी बहुतसे मित्र थे, परन्तु दास्तानेने उन्हें विवाहमें सम्मिलित होनेके लिए मनाकर दिया था। जाहिर है कि उन्होंने कोई निमन्त्रणपत्र नही भेजे थे। मैं इस तरहके अन्य दृष्टान्त भी दे सकता हूँ। हमारे स्वतन्त्रताके संघर्षमें ये सामाजिक सुधार सचमुच अत्यन्त आवश्यक हो गये हैं।

यह स्पष्ट है कि खादीसे निर्वाह करनेके बारेमें मैं अपनी बात अच्छी तरह नहीं समझा सका। मैंने यह सुझाव नही दिया था कि आप फिलहाल अपना खुदका खादीका व्यापार शुरू कर दें। मेरा सुझाव था कि आप खादीकी सेवामें आ जायें, और तकनीकी विशेषज्ञ बन जायें, ताकि आपके बिना काम ही न चल सके। परन्तु आपको उस सेवाके जरिए ज्यादासे-ज्यादा प्रतिमास सौ रुपये या १२५ रुपयेसे ज्यादा नही मिल सकते। यह सेवा लाभ देनेवाली कभी नही बन सकती। परिवारके सदस्योंके बारेमें मेरा यह अभिप्राय था कि सभी युवा पुरुषों एवं महिलाओंको खादीके सम्बन्धमें कुछ-न-कुछ अवश्य करना चाहिए, जिससे सबको ऐसा महसूस हो कि वे परिवारकी आमदनी बढ़ानेमें अपना योग दे रहे हैं। कई एक कार्यकर्त्ता अपना जीवन इसी साँचेके अनुरूप ढालनेकी कोशिश कर रहे हैं। परन्तु मैं कहता हूँ कि यह करना आपके लिए जरूरतसे ज्यादा होगा। और यदि यह जरूरतसे ज्यादा हो तो आपपर कोई आक्षेप नही है। चाहने मात्रसे मानसिक समंजनकी स्थिति नही आती। मानसिक समंजनकी स्थिति भी तभी कार्यरूपमें व्यक्त हो सकती है,

जब उस मानसिक समंजनसे हमारा व्यक्तित्व पूरी तरहसे रंग जाये और उसीका एक अंग बन जाये। मैंने सुझाव दे दिये हैं। उन्हें अपने मनकी प्रयोगशालामें स्थान बना लेने दीजिए।

जब आप अपनी वकालत जारी रख रहे हों, मैं चाहूँगा कि चाहे मनोरंजनके रूपमें ही सही, आप कुछ दिन खादी प्रतिष्ठान, सोदपुरमें और कुछ दिन अभय आश्रम, कोमिल्लामें गुजार कर खादीकी प्रक्रियाका अध्ययन करें। उनकी शाखाओंमें जायें और देखें कि वहाँ कामकाज कैसे चल रहा है। और यदि आपको थोड़ा अवकाश मिले तो आप सत्याग्रहाश्रम, साबरमती जायें; वहाँ रहनेवाले प्रत्येक परिवारके इतिहासका अध्ययन करें। वहाँ पुरुषोंके साथ-साथ महिलाएँ क्या कर रही है, यह देखें। उनसे जिरह करें और यह पता लगायें कि क्या वे बदली हुई स्थितिमें सचमुच प्रसन्न हैं। उसके बाद राजगोपालाचारीके आश्रममें जायें, यह देखें कि कर्नाटकमें गंगाधरराव अपने इलाकेमें क्या कर रहे हैं। जब आप इतना कर चुकेंगे तो आपको इस बातका कुछ आभास मिल जायेगा कि मेरा क्या अभिप्राय है। मनके सारे भावोंको शब्दों द्वारा प्रकट करना वास्तवमें बहुत कठिन है। भाषाकी अपनी सीमा है। और इसलिए भाषा विचारोंको व्यक्त करनेका अत्यन्त अक्षम माध्यम है।

अन्तमें यह कहूँगा कि यदि आपका जरा भी मन हो तो आप बंगलोर अवश्य आइये और कुछ दिन मेरे साथ बिताइये। मुझे यहाँ इस महीनेके अन्ततक विश्राम करना है।

आपने सुभाष बोसके बारेमें जो कुछ कहा है, वह मेरे ध्यानमें है। मैं सुभाष बोसपर समाचारपत्रों द्वारा यथासम्भव निगाह रख रहा हूँ। यदि आप उन्हें मिलें तो कृपया कहें कि मैं प्रायः उन्हें याद करता रहता हूँ। उनके छूटनेके तत्काल बाद मैंने उन्हें तार भेजा था। उन्हें तार मिला या नहीं, मैं यह जाननेके लिए उत्सुक हूँ। मैं उनसे कोई उत्तर नहीं चाहता। मैंने इसका जिक्र सिर्फ इसलिए किया है कि आपने यह बड़ा अच्छा किया कि उनके बारेमें मुझे समाचार दिया। इसकी मैं कद्र करता हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १२५८७) की फोटो-नकलसे।

४९०. पत्र : रामेश्वरदास पोद्दारको

बंगलोर

ज्येष्ठ शुक्ल १३ [१२ जून, १९२७][1]

भाई रामेश्वरदास,

आपका पत्र मिला। उद्यमका अर्थ यह किया न जाय कि शरीर न सहन करे ऐसी कोई वस्तु करना परंतु जितना सहज सहन हो सके उतना काम शरीरको और मनको निरतर देते रहना चाहिये। शौचका रोग असह्य है। उसके लिये उपवास ही प्राथमिक उपाय है उसमें कोई शक नही है। परंतु यह उपचार किसी जाननेवालोंके साथ रहकर करना चाहिये। यदि उपचार करना चाहते हो तो एक दो ऐसे उपचार करानेवाले मित्र हैं उनके पास आपको भेजनेका प्रयत्न करूँगा। इस कार्यमें आलस्य नही रखना चाहिये। इसलिये मुझको शीघ्रतासे पत्र देना।

बापूके आशीर्वाद

मूल (जी० एन० २०३) की फोटो-नकलसे।

४९१. पत्र : आश्रमकी बहनोंको

सोमवार, ज्येष्ठ सुदी १३ [१३ जून, १९२७][2]

बहनो,

तुम्हारा पत्र मिल गया था।

मुझे पहले पत्रमें एक समाचार दिया गया था कि प्रार्थनाके समय सब बहनें बारी-बारीसे श्लोक बुलवाती हैं। उसके लिए तुम्हें बधाई देना रह गया था। श्लोकोंका उच्चारण शुद्ध होता होगा। वैसे भगवानका नाम शुद्ध लिया जाये या अशुद्ध, इसका हिसाब ईश्वरके बहीखातेमें नही रखा जाता। वहाँ तो अन्त.करणकी भाषा ही अंकित की जाती है। अगर अन्तःकरण शुद्ध हो, तो तुतली बोलीके भी सौ में सौ अंक मिलते हैं। इस सम्बन्धमें लिखते हुए हमें यहाँ जो मीठे अनुभव हो रहे हैं, उनका हाल लिख दूँ।

१. वर्षका निर्धारण पत्रके पाठके आधारपर किया गया है; देखिए "पत्र: रामेश्वरदास पोद्दारको", ५-६-१९२७ भी।

२. वर्षका निर्धारण नन्दी हिल्सके उल्लेखसे किया गया है। साधन-सूत्रमें ज्येष्ठ सुदी १४ है किन्तु इस वर्ष रविवार और सोमवार दोनोंको ज्येष्ठ सुदी १३ ही थी।

मैसूर कर्नाटकका ही एक भाग है, जहाँसे कि हमें काकासाहब प्राप्त हुए हैं। यहाँकी बहनोंको संगीत और संस्कृत दोनोंका अच्छा ज्ञान है। उनका संगीत नन्दी में सुना। परसों यहाँ दो बहनोंसे संगीत और संस्कृत दोनों सुननेको मिले। दोनों महिलाओंने रामायणका सार संस्कृतमें शुद्ध उच्चारणके साथ गाया। मेरे खयालसे उसमें सौ से ज्यादा श्लोक थे। उच्चारणमें एक भी भूल नहीं देख सका। उनमें से एककी पढ़ाई अभी जारी है। वह अर्थ भी जानती है।

मगर यह सब मैं तुम्हें किसलिए लिखूँ? तुम इस वक्त वहाँ जो काम कर रही हो, उसका मूल्य मेरी निगाहमें संस्कृतके अभ्याससे ज्यादा है। तुम निर्भय बनो, पवित्र रहो, सेविका बनो और एकत्र रहकर काम करने लगो, तो यह शिक्षा दूसरी सब शिक्षाओंसे बढ़कर होगी। उसके साथ संस्कृतादि सीख जाओ, तब तो वह शहदसे भी मीठी हो जायेगी।

मेरे पत्र या उनकी नकल गंगाबहन आदिको पढ़नेके लिए मिलती है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (जी० एन० ३६५३) की फोटो-नकलसे।

४९२. पत्र : विलियम स्मिथको

कुमार पार्क
बंगलोर
१४ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

परसों मैं इम्पीरियल डेरीसे होकर गुजरा। आपके छात्रोंने मुझे आपके कुछ सुन्दर जानवर दिखाये। सर हैरॉल्ड मैनके पत्रोंसे आपके बारेमें एवं मवेशियोंमें आपकी जो रुचि है, उसके बारेमें जाननेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपको मालूम होगा कि मेरी पशुओंकी समस्यामें, और इसीलिए पशु-पालन, दुग्ध-व्यवस्था एवं चर्म-शोधन आदिमें बड़ी रुचि है। जबतक मैं स्वास्थ्यलाभके लिए विश्राम कर रहा हूँ, और अभी मुझे एक पखवाड़ा बंगलोरमें रहना है, यदि मेरी सेहत इजाजत देती रही, तो मैं हररोज डेरी देखने आना चाहूँगा। मैं वहाँ लगभग आधा घण्टा बिताऊँगा, एवं इतने समयमें जितना कुछ भी सीखा जा सके, सीखूँगा। मुझे नहीं मालूम कि क्या आपके लिए यह सम्भव हो सकेगा कि आप किसी अधिकारीको कह दें कि वह मुझे आवश्यक सहायता दे, जिसको मैं बहुत मूल्यवान समझूँगा। मैं इस बातकी भी कद्र करूँगा कि कोई ऐसा साहित्य, जो आप समझते हों मुझे पढ़ना चाहिए मेरे लिये आप मुहैया कर दें। मैंने सर हैरॉल्ड मैन द्वारा भेजे गये विशेषज्ञोंके जरिये साबरमतीमें डेरी प्रयोग पहलेसे ही शुरू कर रखा है। यदि आप मेरे लिए समय निकाल सकें तो इस

विषयपर बातचीत करनेकी आपकी अनुज्ञाको मैं बड़ा महत्त्व मानूँगा। मुझे मालूम है कि आप मेरे लगभग पड़ौसी ही हैं। सैर करते हुए मैं अकसर आपके बंगलेके पाससे गुजरता हूँ। मुझे तीनसे साढ़े चार बजेतक आगन्तुकोंसे मिलनेकी छूट है। और यदि आप किसी दिन उस समय घर हों तो मैं आपसे मिलनेके लिए आपके पास उपस्थित होनेमें अपना मान समझूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री विलियम स्मिथ
इम्पीरियल डेरी एक्सपर्ट,
बंगलोर

अंग्रेजी (एस० एम० १२९१६) की माइक्रोफिल्मसे।

४९३. तार : चित्तरंजन अस्पतालके मंत्रीको[1]

[१५ जून, १९२७ से पूर्व]

उत्सवकी[2] हर तरहसे सफलता की कामना करता हूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
अमृतबाजार पत्रिका, १६-६-१९२७

४९४. पत्र : इंडियन इन्फोर्मेशन सेंटरके मंत्रीको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। आपने जिन परिस्थितियोंका वर्णन किया है, उनमें मैं आपका अब और प्रतिरोध नहीं करूँगा। आप चाहें तो अपने पत्र लेखकोंमें मेरा नाम लिख सकते हैं।

यदि आप अवैतनिक एवं स्वयं नियुक्त माध्यम हैं, तो आप अपना नाम "अवैतनिक भारतीय व्याख्या केन्द्र" क्यों नहीं रख लेते? क्योंकि आपका दावा है कि

१. डा० के० एस० राय।
२. अस्पताल दिवसका उत्सव।

आप भारतके बारेमें केवल सूचना ही नहीं देते, बल्कि यथासम्भव वहाँकी जनताको भारतीय विचारधाराका अर्थ भी स्पष्ट रूपसे समझाते हैं। फिर यह काम आप ऐसे माध्यमके रूपमें नहीं करते, जिसका खर्च भारतसे या भारत द्वारा दिया जाता हो; वरन् स्वतः निर्मित माध्यमके रूपमें करते हैं, क्योंकि यह काम आपको प्रिय है।

हृदयसे आपका,

श्री तारिणीप्रसाद सिन्हा
मन्त्री
द इंडियन इन्फोर्मेशन सैंटर
७, टेविस्टॉक प्लेस, लन्दन डब्ल्यू० सी० १

अंग्रेजी (एस० एन० १२५०२) की फोटो-नकलसे।

४९५. पत्र : जे० फ्रैन्ड लॉजको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मैं उसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं इस पत्रके साथ आपको अपने हस्ताक्षरयुक्त चित्र भेज रहा हूँ। फोटोग्राफरका नाम माहुलीकर, रिची रोड, अहमदाबाद है।

हृदयसे आपका,

श्री जे० फ्रैन्ड लॉज
'सनसेट'
बसलेटन,
फिला

अंग्रेजी (एस० एन० १२५२०) की फोटो-नकलसे।

४९६. पत्र : श्रीप्रकाशको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय श्रीप्रकाश,

आपका पत्र मिला। आप अपनी आशंका दूर कर मनमें विश्वास रखें कि विद्यापीठके बारेमें भेजा हुआ आपका नोटिस 'यंग इंडिया' में प्रकाशित हो जायेगा।

कुछ दिन पहले मुझे जो चेक मिला था मैंने उसकी प्राप्ति-स्वीकृति पहले ही भेज दी है। मैंने आपको २६ मईको पत्र लिखा था। क्या आपने उसके बाद कोई चेक भेजा था?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत श्रीप्रकाश
सेवाश्रम
बनारस छावनी

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५३) की माइक्रोफिल्मसे।

४९७. पत्र : डा० थॉमसनको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय डा० थॉमसन,

मुझे रेवरेंड श्री हिक्लिंगसे मालूम हुआ है कि आपको इसी महीनेकी ११ तारीखको वापस आ जाना था। आशा है कि अब आप वापस आ गये होंगे और श्रीमती थॉमसनको स्वस्थ हालतमें छोड़कर आये होंगे।

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, ऐसा लगता है कि मेरी सेहत धीरे-धीरे सुधर रही है। मैं पहलेसे ज्यादा अच्छी तरह खाने लग गया हूँ और नन्दीमें मैं जितनी सैर करता था अब उससे दुगुनी सैर करता हूँ। लगता है कि रक्तचाप अब १५० पर सामान्य है। यदि आप कदाचित् बंगलोर आ रहे हों, तो मैं जानता हूँ कि आप मुझसे मिलेंगे ही।

परन्तु इस पत्रके लिखनेका वास्तविक प्रयोजन यह पूछना है कि क्या मैं अपने पुत्र देवदासको अब आपके पास भेज दूँ? कुल मिलाकर उसकी सेहत अब बहुत अच्छी हो गई है। सिवाय एक बारके कभी उसकी नाकसे खून नहीं बहा। यदि देवदासने आपकी बातको ठीक तरहसे समझा है, तो उसने मुझे बताया था कि आप वापसीमें उसे देखना चाहेंगे और उसकी परीक्षा और भी बारीकीसे करना चाहेंगे। यदि आपकी ऐसी राय हो तो वह जिस दिन आपको सुविधा हो आपके पास आ सकता है। १९ के बाद उसकी कुछ समयतक लगातार बंगलोरमें जरूरत रहेगी।

हृदयसे आपका,

डा० थॉमसन
चिकबल्लापुर

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५४) की फोटो-नकलसे।

४९८. पत्र : गुलजारीलाल नन्दाको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय गुलजारीलाल,

आपका पत्र और मन्त्रीके लिए तैयार किया हुआ आपका मसविदा मिला। आप चाहें तो पत्र भेज दें। मैं इसमें किसी तरहके परिवर्तन अथवा सुधारका सुझाव नहीं देना चाहता। परन्तु मैं केवल इतना ही कहूँगा कि सारे मामलेके बारेमें मेरा क्या विचार है, और हम किस हदतक मिल-मालिकोंकी सहायतापर निर्भर रह सकते हैं एवं वे मिल-मालिक स्वयं वर्तमान परिस्थितिमें किस हदतक सहायता दे सकते हैं।

जहाँतक १२,५०० रु० का सम्बन्ध है, मुझे आशंका है कि हम तबतक यह रुपया नहीं ले सकते जबतक कि कस्तूरभाई, जो अपना हिस्सा वापस लेनेकी जिद कर रहे हैं जैसा कि शायद उन्हें करना भी चाहिए, दूसरे दाताओंको भी ऐसा ही करनेके लिए न कहें। इसलिए जहाँतक इन रुपयोंका सम्बन्ध है, इसी तरीकेसे काम लिया जा सकता है। अन्तिम निर्णय मिल-मालिकों द्वारा प्रासंगिक विषयों एवं निजी पसन्द तथा नापसन्दगीको ध्यानमें रखते हुए लिया जायेगा। ये कमजोरियाँ हमेशा हमारे साथ रहेंगी और हमें यथोचित धैर्यसे इन कमजोरियोंको सहन करना ही होगा।

परन्तु विचारके लिए अधिक महत्त्वपूर्ण विषय वह सिद्धान्त है जो मिल-मालिकों या सामान्य रूपसे कहें, तो पूँजीपतियोंके साथ हमारे सम्बन्धोंके विषयमें हमारा निर्देशन

करे। फिलहाल हमें इतने भरसे ही सन्तोष कर लेना ठीक होगा कि बदलेकी आशा किये बिना हम उचित काम करते चले। इसलिए हमें पूँजीपतियोंसे किसी आर्थिक सहायताकी आशा नही करनी चाहिए। श्रमिकोको अपनी स्थिति धीरे-धीरे अच्छी बनानी पड़ेगी और बिना किसी बाहरी सहायताके स्वतन्त्र रूपसे अपनी दशा सुधारनी होगी। बाहरी सहायताको दो भागोमें बाँटा जा सकता है: एक तो पूंजीपतियोसे — इस मामलेमें मिल-मालिकोसे — जिनका इससे सीधा सम्बन्ध है, प्राप्त होनेवाली सहायता, दूसरी सामान्य रूपसे सहानुभूति रखनेवाली जनतासे मिलनेवाली सहायता। दूसरी सहायता हमें अधिक शीघ्रतासे और किसी भी तरह अपने हितको खतरेमें डाले बिना मिलेगी। सीधा सम्बन्ध रखनवाले पूँजीपतियोंसे यह सहायता तभी प्राप्त होगी जब श्रमिक अपनी स्थिति पुष्ट कर लें और करीब-करीब अपनी शर्तें मजूर करवाने योग्य हो जायें। केवल तभी हम पूँजीपतियोकी स्वेच्छापूर्वक दी गई सहायता पा सकेगे इससे पहले कतई नही। यदि मेरा निदान सही है तो हमें अपने मामलोका प्रबन्ध इस तरह करना चाहिए कि हम केवल ऐसा कार्य स्वीकार करें जिसे हम बाहरी सहायताकी अपेक्षा किये बिना कर सके। जब आवश्यकताओको बढाना हो तो हम बाहरके स्वतन्त्र व्यक्तियोंके पास जायें और ऐसे बाहरके व्यक्तियोके पास कभी न जायें जिनके निहित स्वार्थ हों। परन्तु जब हमें अन्तिम स्रोत [पूँजीपतियों]से स्वेच्छा-पूर्वक सहायता मिले तो उसे अस्वीकार कर देनेकी जरूरत नही है। हम अपनी कार्य-प्रणालीको सदा ऐसा रूप दें कि हम किसी भी तरहकी बाहरी सहायतापर अपनेको आश्रित न समझें। इसलिए हमारा सारा ध्यान श्रमिकोमें अंदरूनी जागृति पैदा करनेपर होना चाहिए एवं यह काम भी मुख्यत. स्वयं श्रमिको द्वारा जुटाए गए साधनो द्वारा किया जाना चाहिए। मेरे विचारमें श्रमिकोकी सेवा करनेका यह सबसे आसान और छोटा रास्ता है। निस्सन्देह आरम्भिक दशामें इससे बड़ी कठिनाई एवं बड़ी झंझट होगी और स्वयं श्रमिकोंकी ओरसे कोई प्रतिक्रिया नही होगी। परन्तु इसी कारणसे हमें उस रास्तेको अपनानेका आग्रह रखना चाहिए, जिसे हम जानते हैं कि यही सबसे अच्छा रास्ता है। दूसरे तरीकेसे श्रमिक कंगाल एवं उत्साहहीन हो जायेंगे जैसा कि सारे भारतमें नजर आ रहा है। इस सिद्धान्तको लागू करते हुए मैं यह हल सुझाऊँगा कि मिल-मालिकोंके साथ मान एव स्वाभिमानके अनुरूप समझौता जारी रखा जाये। परन्तु इस समय जो सहायता मिल रही है, उसके बिना भी काम चलानेके लिए तैयार रहा जाये। आपको स्कूल चालू रखनेके लिए साधन एवं उपाय अवश्य ढूंढ निकालने चाहिए। देखिये, हमारे अपने क्या साधन-स्रोत है। सारी समस्याको संघके सामने रख दें और उसी समय निजी मित्रोमें चन्देके लिए प्रचार करे और उसके बाद जनतासे भी अपील करे। जनताकी सहायता पा सकनेमें किसी कठिनाईकी पहलेसे ही आशंका मैं नही करता हूँ। और जनतासे जो भी अपील की जाये, वह किन परिस्थितियोंमें करनी पड़ रही है, उनका संक्षेपमें हवाला दिया जाये। इसमें मिल-मालिकोंकी कुछ आलोचना की जायेगी। परन्तु उसके बिना काम नहीं चल सकता। मुझे नहीं मालूम कि मैंने अपना रुख पूर्णतः स्पष्ट कर दिया है

या नहीं। यदि मैं पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर सका हूँ तो कृपया मुझे दुबारा लिखनेमें संकोच मत कीजिएगा।

हृदयसे आपका,

गुलजारीलाल
अहमदाबाद

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५५) की फोटो-नकलसे।

४९९. पत्र: जे० डब्ल्यू० पेटावेलको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

प्रिय मित्र,

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि आप अपनी बातसे हटेंगे नहीं और यदि आप बराबर जोर देते रहे तो, मुमकिन है कि किसी दिन मैं आपसे सहमत हो जाऊँ और तब आप जो-कुछ भी मुझसे करवाना चाहें वही करूँ।

अब मुझे आपकी पुस्तक मिल गई है। आपने जिन अंशोंका उल्लेख किया है, उन्हें मैं पढ़ूँगा।

हृदयसे आपका,

श्री जे० डब्ल्यू० पेटावेल
बागबाजार
कलकत्ता

अंग्रेजी (एस० एन० १४१५६) की माइक्रोफिल्मसे।

५००. पत्र : अखिल भारतीय चरखा संघके मन्त्रीको

कुमार पार्क
बंगलोर
१५ जून, १९२७

आपका पत्र मिला। मैंने कार्य-सूची देखी है। इसमें कुछ और जोड़नेकी बात मैं नहीं सोच सकता। कार्य-सूची मुझे अपने आपमें पूर्ण लगती है।

एजेंसियोंके लिए प्रारूपके नियम मुझे काफी अच्छे लगे हैं। फिलहाल और कोई सुधार मेरे ध्यानमें नहीं आ रहा है। मैं कामपर अपना ध्यान केन्द्रित करके अपने मस्तिष्कपर बोझ नहीं डालना चाहता। परन्तु ये नियम पढ़नेमें ठीक लगते हैं। यदि उन नियमोंसे सम्बन्धित किसी चीजके बारेमें मुझसे सभामें निश्चित रूपसे कुछ पूछा जाये तो मैं अपनी राय दे सकूँगा। कई एक खादी केन्द्रोंको केवल अपनी-अपनी एजेंसियों द्वारा ही केन्द्रीय कार्यालयसे पत्र-व्यवहार करनेके लिए कहनेका अभी समय नहीं आया है। वह एक आदर्श स्थिति होगी जिसपर हमें पहुँचना है। परन्तु यह तभी हो सकता है जब हम अपेक्षाकृत ज्यादा अच्छी तरहसे संगठित हों, और एजेंसियोंके द्वारा कार्य करनेकी आवश्यकताको सामान्य रूपमें स्वीकार कर लिया जाये।

इस समय हम कामकी अस्तव्यस्त हालतमें से सुव्यवस्थित कार्य-प्रणालीका विकास करनेके लिए प्रयत्नशील हैं। इसलिए हमें ऐसे परिवारकी व्यवस्थाके अनुरूप कार्य करना है, जिसमें सभी सदस्य बिना किसी रोकटोकके गृहपतिकी राय लेते हैं। परन्तु एजेंसियोंके द्वारा व्यवहार चलनेकी परम्परा स्थापित करनेके लिए जो भी सूचनाएँ हमें मिलें, उन्हें जहाँ कहीं आवश्यक हो एजेंटोंके पास भेज दिया जाये और हम सब नये पत्र लेखकोंको भी एजेंटोंसे पत्र-व्यवहार करनेको कह दें और तीसरी बात यह है कि हम एजेंटोंको कहें कि यदि वे केन्द्रों द्वारा आमन्त्रित न किये गये हों तो भी अपने अधिकार क्षेत्रके सभी केन्द्रोंमें रुचि लें। इस प्रकार एजेंट अपने और अपने केन्द्रोंके बीच सजीव सम्पर्क स्थापित करें, जिससे कि केन्द्र अपने मामले मुख्य कार्यालयको सौंपनेके बजाय स्वेच्छासे एजेंटोंको ही सौंपें। यदि हम ऊपरसे उनपर दबाव डालकर यह शर्त रखें तो हो सकता है कि इससे हमारे सामने जो उद्देश्य है, वह असफल हो जाये। यह बात भी है कि जहाँ कहीं कोई केन्द्र अनुशासनमें नहीं रहता एवं बाधा उपस्थित करता है और जिद्द करता है कि या तो मुख्यालयसे व्यवहार करेगा या बिलकुल व्यवहार करेगा ही नहीं, ऐसे केन्द्रपर हम एजेंटके द्वारा ही आनेकी शर्त लगा सकते हैं।

जहाँतक कौंसिलका सम्बन्ध है मैं इस मामलेपर ज्यादा ध्यान दिये बिना ही निम्नलिखित सुझाव देता हूँ: कौंसिलकी बैठक हर तीन महीने बाद हो। प्रत्येक

सदस्यको कमसे-कम एक सप्ताहकी स्पष्ट सूचना मिल जानी चाहिए। तारीखको उस दिनसे गिना जाये जबकि प्रत्येक सदस्यको रजिस्टर किये हुए पतेपर सूचना मिल जाये। कार्य-सूचीमें केवल वे विषय होने चाहिए जिनपर विचार किया जाना है। और जहाँ मन्त्रीकी रायमें कागजात भेजने जरूरी हों वह भेज सकता है। कार्य-सूचीके नीचे मन्त्री इस तरहकी सामान्य सूचना दे दे कि कोई भी सदस्य जो कार्य-सूचीके किसी भी विषयके बारेमें मेरी जानकारी पाना चाहे, तो यदि वह मन्त्रीसे प्रार्थना करे, तो उसे वह जानकारी दे दी जायेगी। असाधारण संकटकालीन स्थितिमें सदस्योंकी सहमतिकी मंजूरी तार अथवा डाक द्वारा पत्र-व्यवहार करके ली जा सकती है। इस तरहका जो भी कोई निर्णय हो, वह कौंसिलकी अगली सामान्य बैठकमें पेश किया जाये। जहाँ यह सब भी सम्भव न हो, वहाँ मन्त्री एवं अध्यक्ष अपने उत्तरदायित्व पर मामलोंको निपटा दें और जिन मामलोंमें आर्थिक दायित्व सन्निहित हो, वहाँ ५००० रु० तकका भुगतान कर दें।

आपके लिए यह निश्चय ही सुविधाजनक रहेगा कि आप बैठकसे एक या दो दिन पहले आ जायें। बहरहाल बैठकमें भी एवं बैठकके बाद भी इसके लिए काफी समय होना चाहिए। कमसे-कम जुलाईकी तीन तारीख तक सभी सदस्य हर हालतमें बंगलोरमें होंगे। मैं समझता हूँ कि बैठकमें उतनी देरसे ज्यादा समय तक मुझे उपस्थित रहनेके लिए नहीं कहा जायेगा, जितनी देर मेरा रहना बहुत ही जरूरी न हो। यद्यपि मैं अब भी काफी काम करता हूँ, परन्तु यह काम मेरी अपनी सुविधाके अनुसार थोड़ी-थोड़ी देर बाद काफी विश्राम लेकर किया जाता है। यद्यपि मेरी सेहत धीरे-धीरे सुधर रही है तो भी मेरे ध्यानमें आता है और डाक्टर भी सलाह देते हैं कि काम जितना ही कम संघनित हो उतना ही मेरे लिये अच्छा है। अतः किसी भी हालतमें ऐसा संघनित काम नहीं होना चाहिए।

मद्रास बाढ़ सहायताका पैसा अब स्थानान्तरित किया जा सकता है। छगनलाल और स्वामीको सलाह दी जा रही है। मेरा सुझाव है कि जमा की हुई राशि नहीं छुई जानी चाहिए। परन्तु राशिके देय होनेकी अवधि पूरी होनेपर समंजन कर दिया जाये जिससे सूद जब्त न हो।

जहाँतक मिठूबहनके पत्रका सम्बन्ध है, मैं उसके बारेमें राजगोपालाचारीको लिख रहा हूँ। मेरी रायमें उन्हें प्रदर्शनी समितिसे खर्चा मिलना चाहिए। क्योंकि समिति ही सबसे अच्छी तरह निर्णय दे सकती है कि किसे आना चाहिए और किसे नहीं। चूंकि समितिने इस मामलेमें मिठूबहनको आमन्त्रित किया है, इसलिए सम्भवतः समिति उनसे कहेगी कि उनका खर्च समिति द्वारा उठाया जायेगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी (एस० एन० १९७८१) की माइक्रोफिल्मसे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

सकलातवालाके गांधीजीको लिखे पत्रके कुछ अंश

निम्नलिखित अंश गाधीजीके नाम सकलातवालाकी खुली चिट्ठीमें से लिये गये हैं:

प्रिय साथी गांधी,

हम दोनों इतने अक्खड़ तो है ही कि वजाय शब्दाडम्बरमें उलझकर रह जानेके एक दूसरेको अपनी बात बेधड़क साफ-साफ कह सकनेकी अनुमति दे सकते हैं।

कुछ मौकोंपर आपसे अपनी बातचीतके दौरान मुझे ऐसा लगा कि मजदूरो और किसानोंके सगठनके महत्त्वके सम्बन्धमें आप कोई निश्चित मत नही रखते। आप आग्रहपूर्वक यही कहते रहे कि चरखा आन्दोलन ऐसा सगठन तैयार कर रहा है। मैं जोर देकर इस बातसे इनकार करता हूँ . . . भारतमें सदियोसे लाखो स्त्री-पुरुष लगभग समान परिमाणमें चावल और पानीको इस्तेमाल करते हुए भात बनाते और खाना पकाते चले आ रहे हैं . . . इन सभी क्रियाओंके बलपर निश्चय ही कोई संगठन खड़ा नही हो सका है और कताईका काम भी इस दिशामें खाना पकानेके कामसे कदापि कुछ अधिक नही कर सकता। . . .

सन् १९०० से पूर्व जो नेतागण . . . मुक्तिकी आशाएँ बँधानेके लिए काम करते थे . . . लोकप्रिय नेता थे; जैसे ब्रिटेनके लोगोके लिए ग्लैड्स्टन, जर्मनीके लोगोके लिए विस्मार्क या आयरलैंडके लोगोंके लिए पारनेल या भारतीयोके लिए दादाभाई, फिरोजशाह और सुरेन्द्रनाथ। सन् १९०० तक लोग [इस सबसे] उकता गये और उनके दिलोंमें आग सुलगने लगी। परिवर्तन बहुत तेजीसे और सब जगह आया। केवल वे ही लोग नेता माने गये जिन्होने दिलकी उस सुलगती ज्वाला और पीडित जनताकी विद्रोही भावनाको व्यक्त किया। इनका पहला काम यह था कि इन्होने जनताकी अव्यक्त आवाजको साफ शब्दोमें बेधड़क व्यक्त किया। इन नेताओंने दूसरा काम यह किया . . . कि उन्होने पुरानी व्यवस्थासे काम चलता रहे, इस बातको सर्वथा असम्भव बना दिया। उनका तीसरा काम था पुनर्निर्माण; उन्होने परिश्रमसे तथा धीरे-धीरे नवजीवनका निर्माण किया। आयरलैंडने डी'वैलेराको जन्म दिया। उन्होंने उक्त पहला और दूसरा काम किया और अब उनके देशवासी उनके तीसरे कामको बहादुरीके साथ अंजाम दे रहे हैं। रूसने लेनिनको जन्म दिया। उन्होने पहला और दूसरा काम किया तथा यद्यपि उनका जीवनकाल दीर्घ नही रहा था उन्होंने तीसरे कामके लिए अपने लोगोंको सही रास्तेपर चलाया। टर्कीने कमालको जन्म दिया। उन्होंने पहला और दूसरा काम किया और सौभाग्यसे वे अब भी अपना

तीसरा काम कर पाने योग्य स्वस्थ और स्फूर्तियुक्त बने हुए हैं। चीनने सन-यात् सेनको जन्म दिया। उन्होंने पहला और दूसरा काम पूरा किया और उनकी मृत्युके बाद उनके सुसंगठित और अनुशासित अनुयायी तीसरा काम कर रहे हैं। इटलीमें, यद्यपि विपरीत दिशामें, मुसोलिनी व्यक्तिगत रूपसे वही काम कर रहे हैं। भारतने आज संसारके आगे गांधीको अपना नेता घोषित किया है। आपने पहला काम तो पूरा किया, लेकिन दूसरा काम छोड़ दिया और इसलिए तीसरे कामका तो सवाल ही नहीं उठता। आपके संघर्षके दूसरे दौरमें जो भयानक दोष है उससे हम इतने ज्यादा त्रस्त हैं कि आज हमारी स्थिति पहलेसे भी ज्यादा कठिन हो गई है . . .

आपने समाजके सबसे निम्न वर्गके हमारे देशवासियोंपर किसी अन्य व्यक्तिकी अपेक्षा अधिक गहरा और व्यापक प्रभाव डाला है। अस्तु; आपका वास्तविक उद्देश्य क्या है? यदि आपका उद्देश्य राष्ट्रीय और राजनैतिक कार्यमें अपना हिस्सा अदा करना है, तो आपको लोगोंके साथ बिलकुल बराबरीके ढंगसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और आपका काम उनमें आत्मविश्वासकी भावना पैदा करना होना चाहिए। इस बातको ध्यानमें रखते हुए आपको चाहिए कि आप लोगोंको इस बातकी इजाजत न दें कि वे आपको महात्मा कहें।

इसके बाद एक चीज और है जो मैंने यवतमालमें देखी और जिसने मुझे बहुत ठेस पहुँचाई है। मुझे इसका कुछ थोड़ा-सा सबूत पहले भी मिला था। अस्पृश्यता-निवारणके सिलसिलेमें आपका कार्य इस दृष्टिसे महान है कि उसमें उदात्त भावनाएँ निहित हैं और वह कार्य जैसे कि सामान्यतः चल रहा है सफलताकी दृष्टिसे भी बुरा नहीं है। फिर भी मुझे इस बातपर बड़ी आपत्ति है कि आप मेरे देशके स्त्री-पुरुषोंको अपने पाँव छूने और फिर अपनी अँगुलियोंको अपनी आँखोंमें लगानेकी इजाजत देते हैं। ऐसी स्पृश्यता तो अस्पृश्यतासे भी अधिक निन्दनीय मालूम होती है। आप इन ग्रामीणोंकी मनोवृत्ति और मनोविज्ञानको अगली एक या दो पीढ़ियों तकके लिए भ्रष्ट कर रहे हैं। आप देशको सामूहिक सविनय-अवज्ञाके लिए नहीं बल्कि दासोचित आज्ञा पालनके लिए और यह विश्वास करनेके लिए तैयार कर रहे हैं कि धरतीपर और इस जीवनमें श्रेष्ठतर लोग, महात्मागण हैं। इस देशमें गोरे आदमीकी प्रतिष्ठा तो पहलेसे ही हमारे रास्तेमें एक खतरनाक रुकावट है। राजनैतिक दृष्टिसे आपका यह रवैया विनाशकारी है और मानवताकी दृष्टिसे इसका पतनकी ओर उन्मुख करनेवाला प्रभाव तो मुझे चारित्रिक संकट पैदा करनेवाला जान पड़ता है . . .

मैं आपसे यह चाहता हूँ कि आप वही अच्छे पुराने गांधी बन जायें; आप खादीका साधारण पायजामा और कोट पहनकर बाहर आइए-जाइए तथा हम लोगोंके साथ साधारण ढंगसे काम कीजिए। आइए और हमारे साथ (क्योंकि आप स्वयं अकेले असफल हो गये हैं) हमारे कार्यकर्त्ताओं, हमारे किसानों और हमारे नवयुवकोंको संगठित कीजिए। इसके लिए आध्यात्मिक भावुकताका नहीं, बल्कि एक निश्चित उद्देश्य, एक स्पष्ट और सुनिर्दिष्ट प्रयोजनका और जिनके प्रयोगसे सभी लोगोंको सफलता मिली है, उन उपायोंका सहारा लीजिए।

इसलिए जानेसे पहले मैं चाहूँगा कि आप एक दिन सुबह ऐसे उठें मानों स्वप्नसे जागे हों और कहें 'हाँ' [यह ठीक है।] और तब हममें से कई लोग एक साथ एक गुटमें रह सकेंगे। और भारतीय जीवनकी ऐसी अनेक शोचनीय परिस्थितियोंको समाप्त करनेके काममें लग जायेंगे, जिनके बारेमें हममें से किसीको भी सन्देह नहीं है।

आपका भाई,
शापुरजी सकलातवाला

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-३-१९२७

परिशिष्ट २

श्रद्धानन्द स्मारक

पण्डित मालवीयजी तथा लाला लाजपतराय द्वारा हस्ताक्षरित एक अपीलमें कहा गया है:

यह तय किया गया है कि गुरुकुल काँगडीके लिए ढाई लाख रुपयेकी उस अपीलके अलावा जिसे पंजाब आर्य-प्रतिनिधि सभा पहले ही जारी कर चुकी है, पूरे हिन्दू समाजकी ओरसे दस लाख रुपयेकी केवल एक ही अपील जारी की जानी चाहिए जिसमें से पाँच लाख रुपये स्थायी धर्मस्वकी तरह रखे जाने चाहिए; और उसमें से पाँच लाख रुपयेका इस्तेमाल इस तरह किया जाना चाहिए — ढाई लाख रुपया अछूतोंद्धारके लिए, सवा लाख शुद्धि कार्य जारी रखनेके लिए और सवा लाख हिन्दू संगठनको बढावा देनेके लिए। न्यासी हिन्दू महासभा, सनातन धर्मसभा और आर्य समाज जैसी संस्थाओंसे, जिनमें दिल्लीकी शुद्धिसभा और दलितोद्धार सभा भी शामिल है, एजेन्सियोको चुनेंगे जिन्हें वे समय-समयपर न्यासका लक्ष्य पूरा करनेके लिए उपयोगी समझेंगे। इसमें उन्हें हिसाब-किताब देनेकी सामान्य लागू शर्तें मानकर चलना है; लेकिन संगठनका कार्य केवल हिन्दू महासभा द्वारा ही चलाया जायेगा। स्थायी कोषके ५ लाख रुपयोंका सूद भी उपर्युक्त तीन कार्योंके लिए उसी अनुपातमें खर्च किया जायेगा। यह भी तय किया गया है कि किसी प्रान्तमें इकट्ठा किये गये कुल धनका कमसे-कम आधा भाग उसी प्रान्तमें खर्च किया जायेगा और यह बात स्थायी धर्मस्व कोषके सूदपर भी लागू होती है।

यह भी निश्चय किया गया है कि जिस मकानमें स्वामी श्रद्धानन्दजीकी हत्या की गई थी उसे स्वामी श्रद्धानन्द स्मारक भवनमें बदलनेके उद्देश्यसे अपने कब्जेमें लेनेके लिए कदम उठाये जाने चाहिए।

दान देनेवाले हर व्यक्तिको इस बातकी छूट होगी कि वह उक्त कार्योंमें से किसी एकके लिए अपने दानकी रकम नियत कर सके। दानकी रकमें केवल उसी काम या कामोंमें इस्तेमाल की जायेंगी, दानदाता जिनके लिए उन्हे देगा।

दानकी सभी रकमें प्रबन्धक, पंजाब नेशनल बैंक, दिल्लीके नाम श्रद्धानन्द स्मारक कोषके खातेमें जमा करनेके लिए भेज दी जानी चाहिए। दानकी रकमें भेजनेवालोंसे प्रार्थना की जाती है कि धन जमा कराते समय वे दान देनेवालोंके नाम और पतेका पूरा ब्यौरा बैंकको भेजें और उसमें यह भी लिखें कि किसने कितनी रकम दी है और यदि उसने कुछ निर्देश दिये हों तो वह भी लिखें। उनसे यह भी प्रार्थना की जाती है कि ऐसे ब्यौरेकी एक प्रति मन्त्री, श्रद्धानन्द स्मारक कोष, दिल्लीको भी भेजें।

इस बातका भरोसा दिलानेके लिए कि दानकी रकमें कोषमें जमा हो गई है, श्रद्धानन्द स्मारक कोषके मन्त्री द्वारा दान देनेवालोंको दान की गई रकमकी औपचारिक रसीद भेजी जायेगी। यदि दान देनेवालेको अदायगीके बाद पन्द्रह दिनके अन्दर इस तरहकी रसीद न मिले तो अनुरोध किया जाता है कि दान देनेवाले सज्जन इस बातकी सूचना कोषके मन्त्रीको दे दें।

श्रद्धेय स्वामीजीकी स्मृतिमें हमारा यह कर्त्तव्य है कि दस लाखकी जिस रकमके लिए हिन्दू महासभाने अपील जारी की है, वह अधिकसे-अधिक अगले अप्रैलकी ३० तारीख तक पूरी जमा हो जाये।

हमारी राय है कि पहले हमें अपना सारा प्रयत्न अखिल भारतीय स्मारक बनानेमें ही लगाना चाहिए। जब तक अखिल भारतीय स्मारक कोषकी पूरी रकम जमा नहीं हो जाती तबतक स्थानीय अथवा क्षेत्रीय स्मारक बनानेके सारे प्रयास स्थगित रखे जायें।

कोषको उक्त तीन भागोंमें विभाजित कर देनेसे हर व्यक्ति रकम देनेकी अपनी मद चुन सकता है और अपने सबसे ज्यादा प्रिय कार्यके लिए उदारतासे चन्दा दे सकता है। यह आशा की जाती है कि स्मारक समिति चन्दा जमा करनेका सारा काम जिस तारीखसे पहले पूरा करनेकी आशा करती है, चन्दा देने वाले लोग उस तारीखका ध्यान रखेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३-३-१९२७

१. अन्तिम अनुच्छेद सम्पादकीय टिप्पणीके रूपमें दिया गया था।

परिशिष्ट ३

डाक्टरोंकी राय[1]

श्री गांधीको हल्का-सा लकवा हो चुका है। उनको एक सप्ताहतक अपना सामान्य पत्रव्यवहार करनेकी इजाजत नही दी जानी चाहिए और बोलने तथा यात्रा करनेका कार्यक्रम अनिश्चित अवधि तकके लिए स्थगित कर दिया जाना चाहिए। उन्हें पूर्ण विश्राम मिलना चाहिए और अनिश्चित कालतक नियमित दिनचर्यासे मुक्तिकी व्यवस्था की जानी चाहिए। हमारी राय है कि श्री गाधी गर्मीके मौसममें अपनी यात्रा तथा भाषणोंके कार्यक्रमको रद कर दें।

डब्ल्यू० जे० वेन्लेस

लगातार अधिक कामके फलस्वरूप रक्तचापके अधिक बढ़ जानेसे श्री गाधीके मस्तिष्ककी नसके फट जानेका खतरा उपस्थित है। उन्हें आगे आनेवाले कुछ समय तक किसी ठंडे स्थानमें पूर्ण विश्राम करना चाहिए। हमारी यह भी सलाह है कि जबतक उनकी दशामें निश्चित रूपसे सुधार नही हो जाता तबतक के लिए वे अपने प्रस्तुत सारे कार्यक्रम रद कर दें।

जी० वी० ऐंकलीकर, एम० डी० और
सी० आर० कोकटनूर, एम० डी०

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-३-१९२७

परिशिष्ट ४

खादी किसके लिए है?

'कुदालीपर झुका हुआ मनुष्य'

शताब्दियोंके बोझसे लदा हुआ वह अपनी कुदालीपर झुका हुआ है और जमीनकी ओर देखता है। युगोंकी शून्यता उसके चेहरेपर झलकती है और संसारका बोझ उसकी पीठपर है। उसे आनन्द और निराशाके प्रति संज्ञाविहीन किसने बना दिया? उसे किसी बातका दु:ख नही और उसके मनमें कोई आशा नही। वह संज्ञाविहीन और जड़ है। बैल उसका बन्धु है। किसके कराल दाढ़ोंने उसका ललाट विकृत कर दिया? किसने उसके बुद्धिके प्रकाशको फूंक मारकर बुझा दिया?

१. ये वक्तव्य "व्हाट डॉक्टर्स से" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित किये गये थे।

सब देशोंके पूँजीपतियो! शासको! क्या यह भयंकर दिखनेवाला किसान, जिसे आपने बदशकल बना दिया है — जिसकी आत्मा मर चुकी है — आपके हाथकी कृति है? क्या आप इसे ईश्वरके आगे प्रस्तुत करेंगे? आप इसकी रीढ़ सीधी कैसे करेंगे? आप इसे फिरसे अमर कैसे बनायेंगे? इसमें आशाका सचार कैसे करेंगे? इसे ज्ञान कैसे देंगे, इसमें फिरसे संगीत और सपनोंका संचार कैसे करेंगे?

एडवर्ड मरखाम

[अंग्रेजीसे]
यंग इंडिया, ३१-३-१९२७

परिशिष्ट ५

'बापूके पत्र मीराके नाम' की भूमिकासे

पाठकोंको पृष्ठभूमिकी और भी स्पष्ट कल्पना हो जाए, इसके लिए मैं अपने जीवनकी उन घटनाओंकी रूपरेखा संक्षेपमें समझाऊँगी, जो मुझे बापू तक ले आईं। चूंकि मै एक अंग्रेज देहाती घरमें पली थी, इसलिए ग्रामीण जीवनसे खूब परिचित थी। इसके सिवाय, मुझे शुरूसे ही प्रकृतिके प्रति माता-पितासे गहरा प्रेम मिला था। पन्द्रह वर्षकी उम्रमें मैंने पहले-पहल बीथोवनका संगीत सुना। तत्काल मुझमें दैवी शक्तिके प्रति जीवन्त श्रद्धा जाग्रत हो गई और मेरे लिए ईश्वरकी प्रार्थना एक सत्य वस्तु बन गई। बीथोवनके संगीतके कारण मैं रोमाँ रोलाँके पास पहुँची और रोमाँ रोलाँके जरिए बापूके पास। ये सब कोई आसान मंजिलें नही थीं बल्कि मुझे इस बीच अशान्ति, अन्धकार, आशा और निराशा — सबमें से गुजराना पड़ा, तब कही मेरी अशान्त आत्मामें सत्यका शुद्ध प्रकाश प्रकट हुआ और उसने मुझे उद्दिष्ट स्थान तक पहुँचाया।

कोई शक्ति मुझे बराबर आगे धकेल रही थी। थोड़े दिन तक तो मै इसे समझ ही नहीं सकी। लेकिन रोमाँ रोलाँसे परिचय होने तक यह शक्ति मेरे लिए प्रत्यक्ष होने लगी थी, विलेन्यूमें हमारी पहली-पहली मुलाकातोंके समयसे ही मुझे किसी असाधारण और मधुर सुखका अनुभव होने लगा था। मुझे ऐसा लगा कि कुछ होने जा रहा है। पर इसकी तनिक भी कल्पना नही थी कि वह है क्या? मै इतना ही जानती थी कि जो-कुछ होगा अच्छा होगा। जब रोमाँ रोलाँने मुझसे बापूके बारेमें बात की और यह कहा कि उन्होंने एक छोटी-सी पुस्तक बापूके बारेमें लिखी है और वह छप रही है, तब भी मैं इससे अधिक नही समझ सकी कि मुझे वह पुस्तक जरूर पढ़नी चाहिए। फिर वह दिन आया, जब पुस्तक प्रकाशित हुई। मैं पेरिसके लैटिन क्वार्टरमें, जहाँ मै उन दिनों ठहरी हुई थी, प्रकाशककी दुकानपर गई। दुकानकी सारी खिड़की एक छोटी-सी किताबसे भरी हुई थी, जिसका मुखपृष्ठ नारंगी रंगका था और उसपर काली स्याहीसे 'महात्मा गाधी' छपा हुआ था। मैंने एक प्रति खरीदी, उसे अपने मकानपर ले गई और पढ़ने लगी। मै उसे छोड़ न सकी। पढ़ती

रही, पढ़ती रही; और ज्यों-ज्यों पढती गई, त्यों-त्यों मेरे हृदयका प्रभात अधिकाधिक उज्ज्वल होता गया। और जब मैंने इसे खत्म किया उस समय सत्यका सूर्य मेरी आत्मामें अपनी किरणें उँडेल रहा था। उसी क्षणसे मैंने जान लिया कि मेरा जीवन बापूको समर्पित है। जिस चीजकी मैं प्रतीक्षा कर रही थी वह आ गई है, और वह यही है।

मैं सीधी लन्दन पहुँची और पी० एण्ड ओ० के दफ्तरमें जाकर हिन्दुस्तानका जहाजी टिकट खरीद लिया। साहित्य भी जितना मुझे मिल सका, ढूँढ़ निकाला और पढ डाला; बापूकी रचनाएँ पढी, टैगोरकी रचनाएँ पढी, 'भगवद्गीता'के फ्रेंच अनुवाद पढे और 'उपनिषदो' तथा 'वेदो'में झाँककर भी देखा। लेकिन बहुत जल्दी मेरी समझमें आने लगा कि मेरा यह सोच लेना बेवकूफी है कि इस तरह मैं जल्दीसे बापूके पास पहुँच सकती हूँ। मैं आध्यात्मिक और शारीरिक दृष्टिसे बिलकुल अयोग्य थी और मुझे पहले अपनेको कठोर तालीम देनेकी जरूरत मालूम हुई। इसलिए मैं पी० एण्ड ओ० के दफ्तरमें वापिस गई और टिकट बदलवाकर साल भर बादके लिए जगह सुरक्षित करवा ली।

अब मैं सम्पूर्ण और व्यवस्थित ढंगसे काम करने लगी।

पहले मैंने साबरमती आश्रमके नियमोका पूरी तरह अध्ययन किया। उसके बाद एक-एक करके अपने खानेकी चीजें बदलने लगी, यहाँ तक कि मेरा भोजन शुद्ध शाकाहार हो गया। मैंने पलथी मारकर जमीनपर बैठना शुरू कर दिया। आरम्भमें लगातार दस मिनट ही बैठ सकती थी, परन्तु सतत अभ्याससे मैं बिलकुल आरामसे बैठने लगी। मैंने उर्दू पढना शुरू कर दिया। और पीजना, कातना और बुनना भी सीख ही लिया। यह मजबूरन ऊनपर ही करना पड़ा, लेकिन इससे मेरा अभ्यास अच्छा हो गया। साथ-साथ साहित्यका अध्ययन भी जारी रहा। इस तालीमके दिनो अखबारोमें खबर आई कि बापूने हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए २१ दिनका उपवास शुरू कर दिया है। जैसे-जैसे दिन बीतने लगे, अखबारोने कहना शुरू कर दिया कि बापू शायद बचेंगे नही। मैं व्यथित मनसे ईश्वरसे प्रार्थना करती थी। धीरे-धीरे दिन गुजरते गये। लेकिन मैंने अपनी तालीममें कभी ढिलाई न आने दी। क्योंकि मैं जानती थी कि बापूका शरीर चला जाये, तो भी मुझे उनका काम करनेके लिए हिन्दुस्तान जरूर जाना है। २१ दिन एक युगकी तरह बीते। परन्तु अन्तमें यह समाचार आया कि बापूका उपवास सकुशल टूट गया है।

उस वक्त तक मैंने बापूको एक शब्द भी नही लिखा था। लेकिन उपवासके सफलतापूर्वक समाप्त होनेपर मेरा हृदय आनन्द और कृतज्ञतासे इतना भर गया कि मुझे लिखना ही पड़ा।

[अंग्रेजीसे]
बापूज लैटर्स टु मीरा

परिशिष्ट ६

बेसिल मैथ्यूजका गांधीजीको पत्र

वाई० एम० सी० ए० की विश्व समिति द्वारा निर्देशित "फ्रैन्ड्स ऑफ बॉयज" की विश्व शाखा

४ जनवरी, १९२७

श्रीमन्,

हमने सभी देशोंके तरुणोंके पास एक सामान्य प्रश्नावली भेजी थी जिसमें हमने यह पूछा था: "आपकी रायमें जीवित व्यक्तियोंमें सबसे महान कौन है?" करीब पचाससे अधिक देशोंके प्रशिक्षित शिक्षाशास्त्रियों और युवकोंके नेताओंने लड़कोंके मनमें क्या है इस बातकी विश्वव्यापी छानबीनमें हमारी मदद की। एशिया, यूरोप, अमेरिका और आफ्रिकाके बहुसंख्यक देशोंके सैकड़ों तरुणोंके उत्तरोंसे यह पता चला कि "वे आपको जीवित व्यक्तियोंमें सबसे महान मानते हैं।"

हम युवकोंके नेताओंके लिए एक पत्रिका "द वर्ल्ड्स यूथ" प्रकाशित कर रहे हैं जो ५९ देशोंमें भेजी जाती है। उनके लिए तथा वे जिनकी सेवा करते हैं, उनके लिए यह अपरिमित महत्त्वकी बात होगी कि वे उस सिद्धान्तके सम्बन्धमें जिसने आपके जीवनका मार्गदर्शन किया है इस पत्रिकाके माध्यमसे एक निजी सन्देश सीधे आपसे प्राप्त करें। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि यह कोई पत्रकारिताका विज्ञापन नहीं है। हम आपसे यह प्रार्थना इसलिए कर रहे हैं कि हम सचमुच यह विश्वास करते हैं कि आपके सन्देश भेजनेसे संसार-भरके सभी दृढ़तर, निर्मलतर और बहादुर नवयुवकोंको हमारी और आपकी आशाके अनुरूप प्रगति करनेमें बहुत ज्यादा मदद मिलेगी।

हमें विश्वास है कि आपका १०० या ज्यादा शब्दोंका भावमय वक्तव्य हजारों लड़कोंके जीवनपर गहरा प्रभाव डालनेवाला होगा। उसपर लड़कोंकी जो भी प्रतिक्रिया होगी उसकी सूचना हम आपको सहर्ष देंगे। हम मानते हैं कि लड़कोंकी प्रतिक्रिया जाननेमें आपकी भी दिलचस्पी होगी।

आपका विश्वस्त,
बेसिल मैथ्यूज

अंग्रेजी (एस० एन० १२४७६) की फोटो-नकलसे।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्लीमें सुरक्षित कागजात।

साबरमती संग्रहालय : पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय : जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'अमृत बाजार पत्रिका' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'आज' : बनारससे प्रकाशित हिन्दी दैनिक।

'नवजीवन' (१९१९-१९३२) : गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' : बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'मॉडर्न रिव्यू' : कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी मासिक।

'यंग इंडिया' (१९१९-१९३२) : गांधीजी द्वारा सम्पादित और अहमदाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'लीडर' : इलाहाबादसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट' : पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' : नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' : मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी : स्वराज्य आश्रम, बारडोली।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लैटर्स' (अंग्रेजी) : जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'इम्मार्टल महात्मा' (अंग्रेजी) : सम्पादक, वामन पी० कवाड़ी; यशनन्द पब्लिकेशन्स लिमिटेड, बम्बई, १९४८।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' : सम्पादक, काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो — ४ : मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक, मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाई पटेलने' (गुजराती): सम्पादक, मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी): सम्पादक, एलिस एम० बार्न्स, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'लाला लाजपतराय: एक जीवनी': सम्पादक, अलगूराय शास्त्री, लोक सेवक मण्डल, १९५७।

'लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री': सम्पादक, टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(२१ जनवरीसे १५ जून, १९२७ तक)

२१ जनवरी: गांधीजी चम्पारन पहुँचे।

२२ जनवरी: चम्पारन आन्दोलनकी याद दिलाते हुए मोतीहारीमें भाषण।

२३ जनवरी: वल्लभभाईको लिखे अपने पत्रमें उनसे काठियावाड़ राजनीतिक परिषदकी अध्यक्षता स्वीकार करनेको कहा।
वेतियाके अपने भाषणमें वे कताईको शिक्षा-पाठ्यक्रममें शामिल करने, गोरक्षा और अस्पृश्यता-निवारणके सम्बन्धमें बोले।

२४ जनवरी: घनश्यामदास बिड़लाको लिखे अपने पत्रमें 'शुद्धि' के सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किए।

२५ जनवरी: मुजफ्फरनगरमें गांधीजी प्रान्तीय खद्दर भण्डार, नगरपालिका आयुर्वेदिक औषधालय, रामकृष्ण मिशन तथा अस्पृश्योंका स्कूल देखने गये।
'फ्री प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको दी अपनी भेंटमें उन्होंने अमेरिका आनेके निमन्त्रणको स्वीकार न करनेका कारण समझाया।
विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण।

२६ जनवरी: बेगूसरायकी सार्वजनिक सभामें भाषण।

२७ जनवरी: खड़गपुर और जमुईमें भाषण।

२८ जनवरी: बिलौंटी और आराकी सभाओंमें बोले।

२९ जनवरी: ससराम और मोहानीमें भाषण दिए।

३० जनवरी: पटनामें बिहार विद्यापीठमें दीक्षान्त भाषण।

१ फरवरी: कलकत्ता पहुँचे।

२ फरवरी: गांधीजीने मध्य-प्रान्त और बरारका अपना दौरा प्रारम्भ किया।
तुमसरमें भाषण।

३ फरवरी: नागपुरमें देशबन्धु स्मारक कोषके लिए अपील।

४ फरवरी: चाँदामें भाषण।

५ फरवरी: यवतमालमें शापुरजी सकलातवालासे भेंट की।
नगरपालिका द्वारा दिये मानपत्रके उत्तरमें भाषण।

६ फरवरी: अमरावती पहुँचे।
अकोलामें अस्पृश्यतापर भाषण।

८ फरवरी: खामगाँवमें राष्ट्रीय पाठशालाके अध्यापकोंके समक्ष भाषण।

९ फरवरी: पाचोरामें तिलक स्वराज्य कोषपर भाषण।

१० फरवरी: जलगाँवमें गांधीजी विद्यार्थियोंके कताई प्रदर्शनमें शामिल हुए, महिलाओंकी सभामें बोले, पिंजरापोल देखने गये और चैतन्य मण्डलके सदस्योंसे मिले।
सार्वजनिक सभा और अस्पृश्योंकी सभामें भाषण।

११ फरवरी: जलगाँवसे कारसे रवाना हुए और भुसावल पहुँचे।
१२ फरवरी: अमलनेरमें भाषण।
१३ फरवरी: धूलियाकी छः सभाओंमें भाषण।
१६ फरवरी: नासिकमें भाषण।
१८ फरवरी: अहमदनगरकी राष्ट्रीय पाठशाला देखने गये।
अहमदनगरकी विशाल सभामें भाषण।
१९ फरवरी: शोलापुरमें नगरपालिका द्वारा दिये गये मानपत्रका उत्तर दिया।
आदिवासियोंकी बस्ती देखने गये।
कताई-बुनाई मिल देखने गये।
२० फरवरी: शोलापुरकी सार्वजनिक सभामें भाषण।
२१ फरवरी: शोलापुरसे गुलबर्गाको रेलगाड़ीसे रवाना हुए।
२२ फरवरी: गांधीजीने सरना बासप्पा मन्दिर, गुलबर्गामें हिन्दुओं और मुसलमानोंके समक्ष भाषण दिया।
२५ फरवरी: साँगलीमें विलिंग्डन कालेजमें विद्यार्थियोंकी सभामें भाषण।
२८ फरवरी: लांजेमें भाषण।
१ मार्च: रत्नागिरीमें महिलाओंकी सभामें भाषण।
२ मार्च: महाद पहुँचे।
३ मार्च: सासविनके वैश्य विद्याश्रममें भाषण।
४ मार्च: रे मार्केट, पूनामें भाषण। आधी रातके समय विद्यार्थियोंके समक्ष बोले।
६ मार्च: अकोलामें मणिलाल-सुशीलाके विवाहमें शामिल हुए।
७ मार्च: अकोलासे अहमदाबादके लिए रेलगाड़ीसे रवाना हुए।
८ से १४ मार्च: साबरमती आश्रम, अहमदाबादमें रहे।
१५ मार्च: माण्डवीके एक गाँवमें भाषण।
१६ मार्च: वेड़छीकी रानीपरज परिषदमें भाषण।
१७ मार्च: 'यंग इंडिया'के अपने लेख "नहीं और हाँ"में गांधीजीने सकलातवालाकी खुली चिट्ठीका उत्तर दिया।
१९ मार्च: गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वारमें दीक्षान्त भाषण।
२० मार्च: हरिद्वारकी राष्ट्रीय शिक्षा परिषदमें भाषण।
२१ मार्च: हरिद्वारसे बम्बईको रवाना।
२३ मार्च: सान्ताक्रूज, बम्बईमें भाषण।
२४ मार्च: पूनामें महाराष्ट्रके दौरेके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे भेंट। बम्बईके 'बॉम्बे क्रॉनिकल'के प्रतिनिधिसे भेंट।
घाटकोपरके सार्वजनिक जीवदया खातामें भाषण।
२५ मार्च: कोल्हापुरकी सात सभाओंमें बोले।
मोटरसे निपाणी गये।
रातभर बेचैन रहे।

२६ मार्च: शाम डा० वेन्लेसने गांधीजीकी जाँच-पड़तालकी और पूर्ण विश्राम करनेकी सलाह दी।

२७ मार्च: दिन-भर रक्तचाप बढ़ा रहा।

२८ मार्च. डाक्टरोने एकमत होकर यह राय दी कि ग्रीष्मकालीन सारा कार्यक्रम रद कर दिया जाये।

'यंग इंडिया'के अपने लेखमें गोरक्षाकी शर्तोंपर प्रकाश डाला।

१ अप्रैल: बेलगाँव पहुँचे।

२ अप्रैल: अम्बोली पहुँचे।

३ अप्रैल: डा० जीवराज मेहताने गांधीजीकी जाँच-पड़ताल की और किसी पहाड़ी स्वास्थ्य-वर्धक स्थानपर जानेकी सलाह दी।

७ अप्रैल: 'यंग इंडिया'के अपने लेख "मैं क्या करूँ?" में घोषणा की: "निस्सन्देह सत्याग्रहकी नीव भी राष्ट्र-निर्माणकी नीवके समान आत्मशुद्धि, आत्मसमर्पण और आत्मत्याग है।"

८ अप्रैल: अमृतलालको लिखे अपने पत्रमें उन्होंने बताया कि "आजकल मेरा मन खादी आदि रचनात्मक कामोंके सिवाय अन्य कामोमें नहीं लगता है।

९ अप्रैल: थोड़ा टहले।

१० अप्रैल. काफी दूर पैदल चले।

१४ अप्रैल: 'यंग इंडिया'के अपने लेख "बुद्धि बनाम श्रद्धा"में लिखा: "आदमी केवल शरीर ही नही है, बल्कि उससे कई गुना ऊँची चीज है।"

१७ अप्रैल: सावन्तवाड़ीके प्रमुखसे बातचीत।

१८ अप्रैल: अम्बोलीसे नन्दी हिल्सको रवाना हुए।

१९ अप्रैल: नन्दी हिल्स पहुँचे।

२० अप्रैल: मैसूर राज्यके महा शिक्षा-निरीक्षकसे भेंट की।

२१ अप्रैल: 'यंग इंडिया'के अपने लेख "सत्य एक है"में लिखा: "मै प्रत्येक देशकी स्वाधीनताको उसी अर्थमें और उतने ही अंशोंमें सत्य मानता हूँ जिस अर्थमें और जितने अशोमें प्रत्येक मनुष्यकी स्वाधीनताको।"

२५ अप्रैल: सतीशचन्द्र दासगुप्तको लिखे अपने पत्रमें गांधीजीने लिखा "बिना सोचे-समझे या बिना डाक्टरोकी रायके किसी सक्रिय काममें नही जुट जाऊँगा।"

२६ अप्रैल: आर० बी० ग्रेगको लिखे अपने पत्रमे उन्होने बताया कि "सूर्यसे पके फलों अथवा गिरीवाले फलोंपर आगका इस्तेमाल किये बिना निर्वाह करनेसे पाशविक वासनाका सचेतन मनसे शमन हो जाता है।

२ मई: डाक्टरोने गांधीजीकी जाँचकी और उनका रक्तचाप सामान्य पाया गया।

८ मई: 'नवजीवन'के अपने लेख "गाय बनाम भैंस"में "शहरोमें चर्मालय और दुग्धालयका प्रयोग धार्मिक तथा सामाजिक दृष्टिसे" करनेकी सलाह दी।

१० मई: सकलातवालाको लिखे अपने पत्रमें उन्होंने यह विचार प्रकट किया कि "भारतमें श्रमिक वर्ग अब भी अत्यन्त असंगठित है।"

११ मई: फूलचन्द शाहको लिखा कि "मेरी आज्ञाके बिना सत्याग्रह न करें।"

१२ मई: 'यंग इंडिया' में लिखी "टिप्पणियों" के उपशीर्षक "मशीनी धान कुटाईसे हानि" में गांधीजीने "पश्चिमके इन्द्रजालमें हदसे ज्यादा सम्मोहित हो जाने" के लिए भारतीयोंकी भर्त्सना की।

१९ मई: 'यंग इंडिया' के अपने लेख "नागपुरका सत्याग्रह" में उन्होंने इस बातसे इनकार किया कि उन्होंने कभी नागपुरमें सविनय अवज्ञा करनेकी सम्मति दी थी तथा सब लोगोंको चेतावनी दी कि उनकी लिखितमें अनुमति लिये बिना किसी भी आन्दोलनके साथ उनका नाम न जोड़ा जाये।

२२ मई: 'नवजीवन' के अपने लेख "नौकरीसे अलग किया जाये" में उन्होंने बताया: "अहिंसा धर्म न तो कायरोंका धर्म है और न मूर्खोंका। वह तो ऐसे लोगोंका धर्म है जो चौबीसों घंटे जाग्रत रहते हैं।"

२६ मई: 'यंग इंडिया' में "अपील: भारतीय जनताके नाम" में उन्होंने कहा: "यदि हम स्वाधीन और स्वाभिमानी राष्ट्र बनना चाहते हैं तो . . . गरीबसे-गरीब बहनकी आबरू भी हमारे लिये उतनी ही मूल्यवान और प्रिय होनी चाहिए जितनी अपनी सगी बहनकी होती है।"

२८ मई: गुलजारीलाल नन्दाको लिखे अपने पत्रमें गांधीजीने बताया कि "'भगवद्-गीता' एकमात्र सन्दर्भ कोष" है।

५ जून: नन्दी हिल्ससे नीचे आये। चिकबल्लापुरमें भाषण।
बंगलोर पहुँचे।

१२ जून: सतकौड़ीपति रायको लिखा कि सामाजिक सुधार हमारे स्वतन्त्रता संघर्षके अत्यन्त आवश्यक अंग हो गये हैं।

१५ जून: दक्षिण आफ्रिकी संघ विधान सभामें भारतीय विधेयकोंपर बहस शुरू हुई। गुलजारीलाल नन्दाको लिखे अपने पत्रमें गांधीजीने कहा कि मजदूरोंको "स्वतन्त्र रूपसे अपनी दशा सुधारनी चाहिए" और मिल-मालिकोंके साथ "मान एवं स्वाभिमान" के अनुरूप समझौता वार्ता जारी रखी जाये।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

य

ह